



# तुलसी-ग्रंथावली

भाग १, खंड १

संपादक

माताप्रसाद गुप्त

एम० ए०, डी० लिट०

हिंदुस्तानी एकेडेमी

चत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

## प्रकाशकीय

तुलसी के विषय में की गई डा० माताप्रसाद गुप्त की बहुमूल्य खोजों से तथा उनके ग्रंथ 'तुलसीदास' से हिंदी-संसार भली-भाँति परिचित है। अब उन्होंने तुलसी की समस्त-रचनाओं का वैज्ञानिक ढंग से पाठ-निर्धारण प्रारंभ किया है। कहने की आवश्यकता नहीं कि अधिक प्रचलन के कारण तुलसी के संस्करणों में प्रचिप्तांशों की भरमार है और संशोधित तथा प्रामाणिक पाठ के प्रकार में खाने की अत्यंत आवश्यकता है। हिंदुस्तानी एकेडेमी से तुलसी-ग्रंथावली दो भागों में प्रकाशित हो रही है। पहले भाग के दो खंड हैं। पहले खंड में ग्रंथावली के विद्वान संपादक ने पाठ-संबंधी समस्याओं का व्यापक विवेचन तथा समाधान किया है। दूसरे खंड में श्रीरामचरितमानस का पाठ प्रस्तुत किया गया है, और उसमें, पद-टिप्पणियों में, अथर्वक के उपलब्ध सभी महत्वपूर्ण पाठांतर दे दिए गए हैं। इसका एक सस्ता संस्करण अलग से भी प्रकाशित है। कहना न होगा कि यह अपने ढंग का हिंदी में प्रथम प्रयास है।

तुलसी-ग्रंथावली के दूसरे भाग में तुलसी की अन्य रचनाओं के संशोधित पाठ होंगे तथा पाठ-संबंधी समीक्षा होगी।

पूज्य गुरु

श्री डा० धीरेन्द्र वर्मा, एम्० ए०, डी० लिट्० (पेरिस)

की सेवा में

सादर और सम्मेल

अर्पित





## प्रस्तावना

गोस्वामी तुलसीदास का 'राम चरित मानस' भारतीय साहित्य का एक सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ मात्र नहीं है, बल्कि उत्तर भारत की वर्तमान संस्कृति की सत्र से प्रमुख आधार-शिला है। पिछले तीन सौ वर्षों में भारतीय विचार धारा को जितना इस कृति ने प्रभावित किया है, उतना किसी अन्य ने नहीं। समाज के सभी अंगों को इसने अभूतपूर्व बल और जीवन प्रदान किया है। परिणामस्वरूप इस ग्रंथ की अप्रतिम लोकप्रियता भी प्राप्त हुई है—देश में मुद्रणकला के प्रचार के साथ इस के सहस्राधिक संस्करण तो प्रकाशित हुए ही हैं, इसके पूर्व भी इसकी अगणित हस्तलिखित प्रतियों ने भारतीय जनसमुदाय की मानसिक और आध्यात्मिक पिपासा दूर की है।

इतने विभिन्न संस्करणों और प्रतियों के पाठों में यदि अंतर मिलता है तो वह स्वाभाविक है। जब-तब विद्वानों ने इन विभिन्न पाठों की सहायता से ग्रंथ का संपादित पाठ प्रस्तुत किया है, और उनमें इन प्रयासों से निरसदेह उपकार हुआ है—ग्रंथ की पाठ विकृति रुक गई है, और सामान्य पाठकों में भी ग्रंथ के प्रामाणिक पाठ के जानने और समझने की उत्कठा जागृत हो गई है। फिर भी ग्रंथ के पाठ की जो मुख्य समस्या है, वह बनी हुई है—और वह यह है कि इन विभिन्न पाठांतरों के बीच में से होते हुए स्वतः रचयिता के पाठ के अधिक से अधिक निकट किस प्रकार पहुँचा जा सकता है, और जो पाठांतर बाहुल्य मिलता है उसमें अधिक से अधिक सतोपजनक रूप में समाधान किस प्रकार किया जा सकता है।

गोस्वामी तुलसीदास का विशेष अध्ययन प्रस्तुत संपादक का पिछले उन्नीस वर्षों का विषय रहा है, और इस संपूर्ण अवधि में गोस्वामी जी की कृतियों—और विशेष रूप से 'राम चरित मानस' के पाठ के विषय में उपर्युक्त समस्या उसके सामने रही है। ऐसा नहीं है कि अन्य संपादकों के सामने यह समस्या नहीं रही है, किंतु उन्होंने इसे जिस प्रकार सुलझाया है उससे प्रस्तुत संपादक को सतोप नहीं हुआ है। इसीलिए उसे प्रस्तुत प्रयास की आवश्यकता प्रतीत हुई है।

‘रामचरितमानस’ का पाठ प्रायः निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है

(१) संपूर्ण ग्रंथ के लिए किसी एक प्रति का पाठ लेकर—अधिक से अधिक लिखावट की भूलों का मार्जन करते हुए

(२) किन्हीं विशेष काव्यों के लिए किन्हीं विशेष प्रतियों के पाठ और शेष के लिए किसी अन्य प्रति या संपादित संस्करण का पाठ लेते हुए,

(३) संपूर्ण ग्रंथ के लिए एक से अधिक प्रतियों या संपादित संस्करणों के पाठ लेकर जहाँ पर जो पाठ ठीक ज्ञात होता है उसको ग्रहण करते हुए, और

(४) संपूर्ण ग्रंथ के लिए समस्त बहिर्साक्ष्य और अतर्साक्ष्य का विश्लेषण करके निकाले हुए व्यापक सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए।

ये सभी प्रणालियाँ काम की हैं, किंतु किन परिस्थितियों में किससे सतोपजनक परिणाम निकल सकता है यह सचेत में समझ लेना चाहिए।

पहली प्रणाली से प्राप्त पाठ तभी सतोपजनक होगा जब कि आधारभूत प्रति स्वतः कवि लिखित हो, अथवा उस प्रति की कोई ऐसी प्रतिलिपि हो जिसे सतर्कता के साथ मूल प्रति के अनुसार तैयार किया गया हो। किंतु यह कहने में मुझे सकोच नहीं है कि निश्चित रूप से इस प्रकार की कोई प्रति अभी तक नहीं ज्ञात हो सकी है और इसलिए इस प्रणाली या आश्रय ग्रहण करने पर भय यह हो सकता है कि संपादित पाठ कवि के पाठ से दूर जा पड़े।

दूसरी प्रणाली से प्राप्त पाठ भी तभी सतोपजनक होगा जब कि विभिन्न काव्यों की प्रतियाँ कवि लिखित या उनकी समकक्ष हों, अन्यथा नितनी शाखाओं की प्रतियाँ होगी, उतनी ही शाखाओं के पाठ मूल पाठ में मिला मिलेंगे।

तीसरी प्रणाली के द्वारा कवि के पाठ के अधिक से अधिक निकट तथा पहुँचा जा सकता है जब कि ठीक पाठ का निश्चय केवल अपनी मरुचि या कल्पना या आश्रय लेने हुए न किया जाये, बल्कि प्रमुख रूप से बहिर्साक्ष्य और अतर्साक्ष्य का आश्रय लेते हुए किया जाय, और अपनी मरुचि या कल्पना को इन दोनों का सयोजक और

अनुवर्ती बनाया जावे। इस बात को किंचित् और स्पष्ट करने की आवश्यकता है।

वहिसाक्ष्य से तात्पर्य है वह प्रकाश जो पाठ-समस्या पर विभिन्न प्रतियों से प्राप्त होता है। अतर्साक्ष्य से तात्पर्य है वह प्रकाश जो पाठ-समस्या पर कवि की विचार-धारा, प्रसंग की आवश्यकता तथा कवि की भाषा और शाब्दिक प्रयोग आदि की प्रवृत्तियों से पड़ता है। और, अपनी मुरुचि या कल्पना को इन दोनों का संयोजक और अनुवर्ती बनाने का आग्रह यह है कि उसे इन दोनों—अर्थात् वहिसाक्ष्य और अतर्साक्ष्य—की परिधियों के केंद्र में रखते हुए ऐसे सिद्धांतों का अनुसरण किया जावे जो दोनों के अंतर को यथासंभव दूर कर सकें। किंतु, इतना सत्र होने पर तीसरी प्रणाली ही चौथी प्रणाली बन जाती है। यदि इन प्रणालियों में इतनी सतकता से कार्य न लिया गया तो प्रथम का पाठ कवि का न होकर संपादक का हो सकता है।

प्रथम तीन प्रणालियों पर प्रयास किए जा चुके हैं—उदाहरण के लिए आबणकुंज, अयोध्या की प्रति के अनुसार प्रस्तुत किए गए बाल कांड के, और राजापुर की प्रति के अनुसार प्रस्तुत किए गए अयोध्या कांड में कुछ संस्करण, रघुनाथदास, बदन पाठक और कोदव राम के संपूर्ण ग्रंथ के संस्करण—जिनका परिचय आगे मिलेगा—पहली प्रणाली के हैं, श्री विजयानंद त्रिपाठी का 'भारती भटार' का संस्करण, और श्री नंददुलारे वाजपेयी का 'कल्याण' के 'मानसाङ्क' के रूप में प्रकाशित गीता प्रेस का संस्करण दूसरी प्रणाली के हैं, और काशी से प्रकाशित भागवतदास खत्री का संस्करण तीसरी प्रणाली का है। चौथी प्रणाली पर अभी तक कोई संस्करण नहीं प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत संपादक का प्रयास इसी चौथी प्रणाली का है। कवि की स्वहस्तलिखित या उसकी समकक्ष प्रतियों के अभाव में यही एकमात्र प्रणाली रह जाती है जिसकी सहायता से कवि के पाठ के अधिक से अधिक निरुद्ध पहुँचने का प्रयास किया जा सकता है।

इस प्रणाली पर जो कार्य प्रस्तुत संपादक ने किया है, वह इतना निश्चित है कि उसको एक स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता हुई है। 'रामचरितमानस का पाठ' नाम से वह ग्रंथ प्रेम में है, और शीघ्र प्रकाशित होगा। यह संस्करण उसी में प्रस्तुत किए गए पाठानुसंधान के अनुसार है। यहाँ पर केवल कुछ

‘रामचरितमानस’ का पाठ प्रायः निम्नलिखित प्रकार से प्रस्तुत किया जा सकता है

(१) संपूर्ण ग्रंथ के लिए किसी एक प्रति का पाठ लेकर—अधिक से अधिक लिखावट की भूलों का मार्जन करते हुए

(२) किन्हीं विशेष क़ादों के लिए किन्हीं विशेष प्रतियों के पाठ और शेष के लिए किसी अन्य प्रति या संपादित संस्करण का पाठ लेते हुए,

(३) संपूर्ण ग्रंथ के लिए एक से अधिक प्रतियों या संपादित संस्करणों के पाठ लेकर जहाँ पर जो पाठ ठीक ज्ञात होता है उसको ग्रहण करते हुए, और

(४) संपूर्ण ग्रंथ के लिए समस्त वहिर्साक्ष्य और अतर्साक्ष्य का विश्लेषण करके निकाले हुए व्यापक सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए।

ये सभी प्रणालियाँ काम की हैं, किंतु किन परिस्थितियों में किससे सतोपजनक परिणाम निकल सकता है यह सक्षेप में समझ लेना चाहिए।

पहली प्रणाली से प्राप्त पाठ तभी सतोपजनक होगा जब कि आधारभूत प्रति स्वतः कवि लिखित हो, अथवा उस प्रति की कोई ऐसी प्रतिलिपि हो जिसे सतर्कता के साथ मूल प्रति के अनुसार तैयार किया गया हो। किंतु यह कहने में मुझे संकोच नहीं है कि निश्चित रूप से इस प्रकार की कोई प्रति अभी तक नहीं ज्ञात हो सकी है, और इसलिए इस प्रणाली का आश्रय ग्रहण करने पर भय यह हो सकता है कि संपादित पाठ कति क पाठ से दूर जा पड़े।

दूसरी प्रणाली से प्राप्त पाठ भी तभी सतोपजनक होगा जब कि विभिन्न क़ादों का प्रतियाँ कवि लिखित या उनकी समरूप हो, अथवा जितनी शाखाओं की प्रतियाँ होगी, उतनी ही शाखाओं के पाठ मूल पाठ में आ मिलेंगे।

तासरी प्रणाली में द्वारा कति के पाठ के अधिक से अधिक निम्न तथ्य पंच्य जा सकता है जब कि ‘ठीक’ पाठ का निश्चय केवल अपनी मुग्धि या कल्पना का आश्रय लेते हुए न किया जाये, बल्कि प्रामाण्य रूप से वहिर्साक्ष्य और अतर्साक्ष्य का आश्रय लेते हुए किया जाये, और अपनी मुग्धि या कल्पना को इन दोनों का संयोजक और

अनुवर्ती बनाया जावे। इस बात को किंचित् और स्पष्ट करने की आवश्यकता है।

वहिसाक्ष्य से तात्पर्य है वह प्रकाश जो पाठ-समस्या पर विभिन्न प्रतियों से प्राप्त होता है। अतर्साक्ष्य से तात्पर्य है वह प्रकाश जो पाठ-समस्या पर कवि की विचार-धारा, प्रसंग की आवश्यकता तथा कवि की भाषा और शब्दिक प्रयोग आदि की प्रवृत्तियों से पड़ता है। और, अपनी मूर्ति या कल्पना को इन दोनों का संयोजक और अनुवर्ती बनाने का आग्रह यह है कि उसे इन दोनों—अर्थात् वहिसाक्ष्य और अतर्साक्ष्य—का परस्पर के केंद्र में रखते हुए ऐसे सिद्धांतों का अनुसरण किया जाये जो दोनों के अंतर को यथासंभव दूर कर सकें। निरुद्धता सब होने पर तीसरी प्रणाली ही चौथी प्रणाली बन जाती है। यदि इन प्रणालियों में इतनी सतर्कता से कार्य न लिया गया तो ग्रंथ का पाठ कवि का न होकर संपादक का हो सकता है।

प्रथम तीन प्रणालियों पर प्रयास किए जा चुके हैं—उदाहरण के लिए श्रावणकुंज, अयोध्या की प्रति ने अनुसार प्रस्तुत किए गए बाल कांड के, और राजापुर की प्रति के अनुसार प्रस्तुत किए गए अयोध्या कांड के कुछ संस्करण, रघुनाथदास, बदन पाठक और कोदक राम के संपूर्ण ग्रंथ के संस्करण—जिनका परिचय आगे मिलेगा—पहली प्रणाली है, श्री विजयानंद त्रिपाठी का भारती भटार का संस्करण, और श्री नन्दलाल बाजपेयी का 'कल्याण' के 'मानसाङ्क' के रूप में प्रकाशित गीता प्रेस का संस्करण दूसरी प्रणाली के हैं, और काशी से प्रकाशित भागवतदास सत्री का संस्करण तीसरी प्रणाली का है। चौथी प्रणाली पर अभी तक कोई संस्करण नहीं प्रस्तुत किया गया है। प्रस्तुत संपादक का प्रयास इसी चौथी प्रणाली का है। कवि की स्वहस्तलिखित या उसकी समकक्ष प्रतियों के अभाव में यही एकमात्र प्रणाली रह जाती है जिसकी सहायता से कवि के पाठ के अधिक से अधिक निरुद्ध पहुँचने का प्रयास किया जा सकता है।

इस प्रणाली पर जो कार्य प्रस्तुत संपादक ने किया है, वह इतना निरुद्ध है कि उसको एक स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में प्रस्तुत करने की आवश्यकता हुई है। 'रामचरितमानस का पाठ' नाम से वह ग्रंथ प्रेम में है, और शीघ्र प्रकाशित होगा। यह संस्करण उसी में प्रस्तुत किए गए पाठानुसंधान के अनुसार है। यहाँ पर केवल कुछ

त्यंत स्थूल बातों का उल्लेख किया जा रहा है। इन समस्त बातों का विवरण उक्त 'रामचरितमानस का पाठ' नामक ग्रंथ में मिलेगा।

'राम चरित मानस' की जो प्रतियाँ अभी तक देखने में आई हैं, पाठसाम्य की दृष्टि से चार शाखाओं में विभक्त की जा सकती हैं। इन चारों शाखाओं की जिन प्रतियों का आधार लेकर यह कार्य रचा गया है, उनका उल्लेख नीचे किया जा रहा है। प्रस्तुत पुस्तक की अदृष्टिप्रणियों में पाठान्तरों का निर्देश करते हुए उन शाखाओं और प्रतियों के लिए जिन संकेतों और संकेत-संख्याओं का उपयोग किया गया है, वे नीचे उनके साथ बाएँ सिरे पर हैं।

प्र० : प्रथम शाखा

(१) : सं० १७२१ वि० की प्रति—जो भारत कला भवन, काशी में है। इसका अयोध्या कांड प्राप्त नहीं है। पाठ में सशोधन स्वच्छंदता-पूर्वक किया गया है।

(२) : सं० १७६२ वि० की प्रति—जो नागरी प्रचारिणी सभा काशी के भूतपूर्व पुस्तकाध्यक्ष स्वर्गीय पं० शंभुनारायण चौबे के संग्रह में थी, और उन्हीं से उपयोग के लिये प्रस्तुत संपादक को प्राप्त हुई थी। यह उपर्युक्त सं० १७२१ वि० की प्रति की प्रतिलिपि मात्र प्रमाणित हुई है।

द्वि० : द्वितीय शाखा

(३) : छकननाल की प्रति—जो सं० १६१६ से १६२१ वि० के बीच महामहोपाध्याय स्वर्गीय पं० सुधाकर द्विवेदी के पिता पं० कृपालु द्विवेदी की लिखी हुई है, और उन्हीं के वंशधरों के पास है। इस प्रति में भी पाठ-सशोधन स्वच्छंदता-पूर्वक किया गया है।

(४) : रघुनाथदास की प्रति—जो यद्यपि इस समय अप्राप्त है, किंतु जिसके अनुसार सं० १६२६ वि० में काशी से ग्रंथ का एक संस्करण प्रकाशित हुआ था। भागवतदास राय के संस्करण की तुलना में उस संस्करण के पाठभेद उपर्युक्त पं० शंभुनारायण चौबे ने अपने 'रामचरितमानस के पाठभेद' शीर्षक एक अत्यंत उपयोगी लेख में प्रकाशित किए थे। प्रस्तुत कार्य में इन्हीं प्रकाशित पाठभेदों की सहायता ली गई है।

(५) : यंदन पाठक की प्रति—जो यद्यपि इस समय अप्राप्त

किंतु जिसके अनुसार सं० १६४६ वि० में काशी से प्रकाशित 'म चरित मानस' के एक अन्य संस्करण के भी पाठभेद उपर्युक्त प्रकार चौबे जी ने प्रकाशित किए थे। प्रस्तुत कार्य में इन्हीं प्रकाशित ठभेदों की सहायता ली गई है।

(५अ) : मिर्जापुर की दो प्रतियाँ—एक सं० १८७८ वि० की लेखक के संग्रह में है, और दूसरी सं० १८८१ की प्रति जो कोतवाली गढ़, मिर्जापुर के बाबू कैलाशनाथ के पास है। इनका पाठ प्रायः एक है—केवल दूसरी प्रति का बाल कांड अप्राप्य है।

### च० : च ती य शाखा

(७) : कोद्वराम की प्रति—जो इस समय अप्राप्य है, किंतु उसके अनुसार सं० १६५३ वि० में और पुनः सं० १६६५ वि० में श्री वेङ्कटेश्वर प्रेस, बम्बई से 'राम चरित मानस' के संस्करण प्रकाशित हुए थे। प्रस्तुत कार्य में सं० १६६५ वि० के संस्करण का उपयोग किया गया है।

### च० : चतुर्थ शाखा

(६) : सं० १७०४ वि० की प्रति—जो श्री काशिराज के संग्रह में है।

(६अ) : सं० १६६१ वि० की बाल कांड की प्रति—जो श्रावण-कुंज, अयोध्या में है। यह प्रति सं० १६६१ वि० की मानी जाती आ रही है—मैंने स्वतः अथ तक अपने ग्रंथों और लेखों में इस तिथि का उल्लेख किया है, किंतु यह वास्तव में '६' की संख्या को '६' में परिवर्तित करके इस प्रकार कवि के जीवन काल की बनाई गई है। इस प्रति में भी पाठ-संशोधन स्वच्छंदता-पूर्वक किया गया है।

यहाँ पर यह बतला देना आवश्यक होगा, कि एक तो १६६१ तथा १७०४ की प्रतियों में निकटतम पाठसाम्य है, और वे न केवल एक शाखा की हैं वरन् एक ही मूल प्रति की दो प्रतिलिपियाँ हैं, यह भली-भाँति प्रमाणित हुआ है। दूसरे, इन दोनों का प्रतिलिपि-संबंध प्रथम शाखा की १७२१-१७६२ की प्रतियों से भी प्रमाणित हुआ है, और वह इस प्रकार का है कि १६६१ तथा १७०४ की प्रतियाँ जिस मूल की प्रतिलिपियाँ हैं वह अथवा उसका कोई पूर्वज और १७२१ की प्रति अथवा उसका कोई पूर्वज किसी ऐसी आदिम मूल प्रति:



प्रति-निषिद्ध थी जो निश्चित रूप के कवि निश्चित नहीं करी जा सकती है।

(८) - बाल काठ की एक प्रति—जो स० १६०५ वि० की है, और हिंदू सभा, मुँगरा बादशाहपुर, जिला जौनपुर के पुस्तकालय में है।

अयोध्या काठ की सुप्रसिद्ध राजापुर की प्रति—जिसमें अत मे कोई पुष्पिका नहीं दी हुई है।

अरण्य काठ की एक प्रति—जो मिर्जापुर-निवासी श्री हरिदास दलाल के पास है, और जो यद्यपि पुष्पिका में स० १६४१ वि० की बताई गई है, किंतु प्रामाणिक रूप से उक्त तिथि की नहीं मानी जा सकती है।

सुंदर काठ की एक प्रति—जो प्रस्तुत संपादक को बहोरिखपुर, परगना मुँगरा, जिला जौनपुर के स्वर्गीय प० धनजय शर्मा से प्राप्त हुई थी, और जिसकी पुष्पिका में दी हुई स० १८६४ की तिथि के '८' को '६' बना कर प्रति को कवि के जीवन-काल की बनाया गया है।

लका काठ की दो प्रतियाँ—जो प्रस्तुत संपादक को उपर्युक्त स्व० धनजय शर्मा से प्राप्त हुई थीं, और जिनमें से एक की पुष्पिका में दी हुई स० १८६७ वि० की तिथि के '८' को '६' बना कर प्रति को वास्तविक समय से २०० वर्ष और पूर्व की बनाया गया है, और दूसरी की पुष्पिका में दी हुई स० १८०२ की तिथि के '८' को '७' बना कर प्रति को वास्तविक से १०० वर्ष और पूर्व की बनाया गया है।

उत्तर काठ की एक प्रति—जो प्रस्तुत संपादक को उपर्युक्त स्व० धनजय शर्मा से प्राप्त हुई थी, और जिसकी पुष्पिका में दी हुई स० १८६३ वि० की तिथि के '८' को '६' बनाकर उसे २०० वर्ष और प्राचीन बनाया गया है।

ऊपर की शाखाओं में परस्पर पाठ विषयक कितना अंतर है, इसका अनुमान इसी से किया जा सकता है कि प्रथम शाखा की (१)-(२) और चतुर्थ शाखा की ऊपर बताई गई उसकी निकटतम प्रतियों (६)।(६अ) भी प्रायः १००० स्थलो पर पाठभेद है प्रथम और तृतीय शाखाओं में भी पाठभेद प्रायः इतना ही है, और प्रथम और द्वितीय शाखाओं में पाठभेद प्रायः इसका आधा ही होगा। इस अंतर का समाधान किस प्रकार किया जा सकता है, और इस विशाल पाठभेद के बीच से कवि के पाठ को किस प्रकार निकाला जा सकता है, अथ के पाठ निर्धारण की संयोजक समस्या यही है।

इन विभिन्न शाखाओं के पाठों की वहिसर्पिण्य और अंतर्साध्य के अनुसार सम्यक् परीक्षा के अनंतर ज्ञात हुआ है कि यद्यपि विभिन्न शाखाओं के सब के सब पाठभेद किसी समाधान-क्रम में नहीं रखे जा सकते, फिर भी एक महत्वपूर्ण संख्या इनमें ऐसे पाठभेदों को है जो एक समाधान-क्रम में रखे जा सकते हैं, और यह है पाठ-संस्कार-क्रम, जिससे यह मानना पड़ेगा कि इस पाठभेद का एक मुख्यतम कारण किसी के द्वारा किया गया पाठ-संस्कार का प्रयास है। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट होगी। बाल कांड में पाठभेद के मुख्य स्थल ३५७ हैं। इनमें से २७८ स्थलों पर जो पाठभेद हैं, उसमें किसी प्रकार का क्रम या शृंखला नहीं है, किंतु शेष ७६ पर वह पाठ-संस्कार-क्रम दिखाई पड़ता है। प्रथम शाखा का पाठ इस दृष्टि से सब से पूर्ण का पाठ ज्ञात होता है। उसकी तुलना में उपर्युक्त ७६ में से ३८ स्थल ऐसे हैं जिनका उत्कृष्टतर पाठभेद द्वितीय, तृतीय, तथा चतुर्थ शाखाओं में, २३ स्थल ऐसे हैं जिनका उत्कृष्टतर पाठभेद तृतीय और चतुर्थ शाखाओं में, और १८ स्थल ऐसे हैं, जिनका उत्कृष्टतर पाठभेद केवल चतुर्थ शाखा में मिलता है। प्रायः इसी ढंग की विशेषता शेष कांडों के पाठभेदों में भी दिखाई पड़ती है।

यहाँ जो 'उत्कृष्टतर' शब्द का प्रयोग किया गया है, उसके विषय में इतना ही और कहने की आवश्यकता है कि उत्कृष्टतर होने के साथ-साथ यह कवि प्रयोगसम्मत भी है, और इसलिए यह पाठ-संस्कार स्वतः कवि-कृत ज्ञात होता है। फलतः इस दृष्टि से देखने पर ऊपर की प्रथम, द्वितीय, तृतीय, और चतुर्थ शाखाएँ—यद्यपि किंचित् विकृत रूप में—ग्रंथ के पाठ-संस्कार की क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ स्थितियों भी प्रस्तुत करती हैं।

इस स्थिति-क्रम के स्वीकृत किए जाने पर पाठ-निर्णय के विषय में नीचे लिखे स्थूल परिणाम आवश्यक हो जाते हैं :—

(क) जिन स्थलों पर प्रथम शाखा और चतुर्थ शाखा में पाठ एक ही मिलता है, किंतु बीच की शाखाओं में उससे भिन्न मिलता है, वहाँ पर बीच की स्थितियों के लिए भी वही पाठ स्वीकृत किया जाना चाहिए जो प्रथम और चतुर्थ शाखाओं में मिलता है, और अन्य पाठों को अस्वीकृत करना चाहिए। इस विषय में इतना और देख लेना होगा कि जिन स्थलों पर प्रथम शाखा और चतुर्थ शाखा का इस प्रकार

का पाठसाम्य केवल (१)-(२) तथा (६)।(६अ) का पाठसाम्य है वहाँ पर वह केवल दोनों समूहों में ऊपर बताए गए धनिष्ठ प्रतिनिधि संवध के कारण तो नहीं है।

(ख) जिन स्थलों पर प्रथम शाखा और चतुर्थ शाखा एक दूसरे से भिन्न पाठ देती है, वहाँ पर सामान्यतः प्रथम शाखा का पाठ एक छोर का और चतुर्थ शाखा का दूसरे छोर का मानना होगा।

(ग) जिन स्थलों पर चतुर्थ शाखा का पाठ बीच की किसी शाखा से इस प्रकार मिलने लगता है कि पूर्ववर्ती पाठ उसके और चतुर्थ शाखा के बीच में नहीं मिलता, वहाँ पर यह मानना होगा कि उक्त भिन्न पाठ संस्कार-क्रम में उक्त स्थिति से प्रारम्भ होता है।

प्रस्तुत संस्करण में ऊपर की चारों शाखाएँ ही नहीं चारों स्थितियों के भी पाठों का नियोजित रूप प्रस्तुत किया गया है। मूल में चतुर्थ स्थिति का पाठ देते हुए, पाठभेद वाले स्थलों पर पाद-टिप्पणियों में चारों स्थितियों के पाठ दिए गए हैं। प्रत्येक स्थिति के लिए स्वीकृत पाठ उक्त शाखा का सकेताक्षर देते हुए दिया गया है, और अस्वीकृत पाठ प्रतियों का निर्देश करते हुए चौकोर कोष्ठों में दिया गया है। जहाँ पर किसी स्थिति का पाठ पूर्ववर्ती स्थिति का स्वीकृत पाठ ही है, वहाँ पर उक्त पाठ के स्थान पर उक्त पूर्ववर्ती स्थिति की शाखा का सकेताक्षर मात्र दिया गया है। निम्नलिखित उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जावेगी।

मूल में पाठ दिया गया है —

चिदानंद सुखधाम सिव विगत मोह मद काम । (बाल० ७५)

यह पाठ चतुर्थ स्थिति का है। पादटिप्पणी में 'काम' शब्द के पाठ के विषय में निम्नलिखित सूचनाएँ हैं।

प्र० : काम [(२) : मान] द्वि०, वृ० : प्र० । च० : प्र० [(६) (६अ) : मान]।

इस सूचना का आशय यह है कि प्रथम स्थिति के लिए 'काम' पाठ स्वीकृत किया गया है, (२) में 'मान' पाठ अवश्य मिलता है, किंतु (२) का यह पाठ स्वीकृत नहीं किया गया है, क्योंकि वह जिस प्रति की प्रतिलिपि है, उस (१) में पाठ 'काम' है। द्वितीय तथा तृतीय स्थितियों में भी प्रथम स्थिति का स्वीकृत पाठ ही है। चतुर्थ स्थिति में भी 'काम'

पाठ स्वीकृत किया गया है, क्योंकि पूर्व की स्थितियों का यह पाठ चतुर्थ शाखा की एक प्रति में मिलता है, यद्यपि उसकी सब से प्रमुख और प्राचीन प्रतियों (६) तथा (६अ) में 'भान' पाठ मिलता है। यदि प्रथम स्थिति का स्वीकृत और द्वितीय और तृतीय स्थितियों का एकमात्र पाठ 'काम' चतुर्थ स्थिति की किसी भी प्रति में न मिलता, तो 'भान' पाठ को इस दृष्टि से देखने की आवश्यकता होती कि वह पाठ-संस्कार की भावना से कवि द्वारा प्रस्तुत किया गया तो नहीं है। (६) और (६अ) एक ही मूल की प्रतिलिपियाँ हैं, इसलिए इन दोनों का प्रमाण भी वस्तुतः एक ही प्रति का प्रमाण हो जाता है, और यह अनुमान किया जा सकता है कि मूल की भूल दोनों प्रतियों में आ सकती है।

इन पाठभेदों का कवि की विचारधारा, प्रसंग तथा कवि-प्रयोग आदि के अनुसार विवेचन मेरे 'रामचरितमानस का पाठ' नामक उक्त ग्रंथ में मिलेगा।

इस प्रसंग में इतना ही और कहने की आवश्यकता है कि प्रथम तीन शाखाओं के प्रायः समस्त स्थलों के पाठभेद पादटिप्पणी में दिए गए हैं, किंतु चतुर्थ शाखा की (८) संख्यक प्रतियों के उन स्थलों पर के पाठभेद नहीं दिए गए हैं जिनके विषय में (६) (६अ) का पाठ अन्य शाखाओं के पाठ से अभिन्न है, क्योंकि (८) संख्यक प्रतियाँ—जिनमें राजापुर की भी प्रति है—बड़ी असावधानी के साथ लिखी गई हैं, और—फदाचित् राजापुर की प्रति के अतिरिक्त—सभी बहुत पीछे की भी हैं। इसी प्रकार चतुर्थ शाखा की किसी प्रति में पाई जाने वाली ऐसी अतिरिक्त प्रक्तियाँ भी नहीं दी गई हैं जो उस शाखा की ही अन्य प्रतियों में नहीं पाई जाती—ऐसा प्रक्तियाँ (८) संख्यक कुछ प्रतियों में तो हैं ही, (६) में भी कुछ कांठों में हैं, और स्पष्ट रूप से प्रक्षिप्त हैं।

प्रेरुक्त अक्षर-विन्यास के विषय में इतना ही कहना है:—

१—प्रतियों में 'व' का प्रयोग 'ख' तथा 'प' दोनों के स्थान पर किया गया है; दोनों को इस संस्करण में अलग अलग कर दिया गया है;

२—प्रतियों में अनुस्वार के बिंदु का ही प्रयोग सानुनासिक के लिए भी हुआ है। संस्करण में शिरोरेखा के ऊपर लगने वाली मात्राओं के साथ ही ऐसा हुआ है, अन्यथा अनुस्वार के लिए बिंदु और सानुनासिक के लिए चंद्रबिंदु रखा गया है।

३—प्रतियो मे 'ये' केवल कुछ प्रयोगों मे मिलता है, यथा 'येहि', तथा 'आयेसु' मे, अन्यथा 'ए' ही प्रयुक्त हुआ है, सस्करण मे भी प्राय इसी प्रकार मिलेगा ।

४—प्रतियो का आद्य 'अै' स स्करण में कहीं-कहीं पर बना रहने दिया गया है, अन्यथा सामान्यत उसका रूप 'ऐ' कर दिया गया है ।

५—प्रतियो मे अत्य 'ऐ' और 'औ' कभी-कभी 'अइ' और 'अउ' की भाँति प्रयुक्त हुए हैं, यथा 'करै' और 'करी' मे, किंतु प्राय 'अइ' अत्य रूप मिलते हैं, 'ऐ' अत्य नहीं, सस्करण मे भी प्राय यह बात मिलेगी ।

६—प्रतियो मे 'अ्र' के स्थान पर भी यद्यपि सामान्यत 'ल' रूप मिलता है, किंतु कभी कभी 'अ्र' रूप भी मिलता है, यथा 'श्री' और 'श्रुति' मे । सस्करण मे भी यह बात मिलेगी ।

अक्षर विन्यास के विषय मे एकरूपता लाने के लिए प्रस्तुत सस्करण मे कोई व्यापक प्रयास नहीं किया गया है इसलिए तत्सवधी विषमता मिलेगी ।

आभार स्मरण शेष है । उपर्युक्त समस्त प्रतियों के स्वामियो का मैं आभारी हूँ, जिन्होंने अपनी प्रतियो का उपयोग करने की मुझे सुविधाएँ प्रदान की । उनकी कृपा के बिना यह कार्य असंभव था । विशेष आभारी मैं काशी के श्री राय कृष्णदास जी का हूँ, जिन्होंने न केवल भारत कला भवन की १७२१ की प्रति वरन् ५० शमुनाथ चौबे की १७६२ की प्रति और छक्कननाल की स्व० सुधाकर द्विवेदी के उत्तराधिकारियो की प्रति भी मुझे सुलभ कर दी थी ।

किंतु सब से अधिक श्रद्धेय डा० धीरेन्द्र वर्मा, अध्यक्ष, हिंदी विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय का कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने मेरे सभी अन्वेषण कार्यों की भाँति इस कार्य मे भी मुझे प्रोत्साहन प्रदान किया है ।

इस सस्करण के मुद्रक हिंदी साहित्य प्रेस, प्रयाग का भी मैं आभारी हूँ, जिसने इस सस्करण को भरसक शुद्ध छापने का यत्न किया है ।

माताप्रसाद गुप्त

श्री गणेशाय नमः

श्री बानकीवल्गमो विजयते

# श्री राम चरित मानस

प्रथम सोपान

वालकांड

श्लो०—वर्णानामर्थसमाना रसानां चंदसामपि ।  
मंगलानां च कर्त्तारौ वंदे वाणी विनायकौ ॥  
भवानीश्वरौ वंदे श्रद्धाविश्रामरूपिणौ ।  
याम्या विना न पश्यन्ति सिद्धाः स्वातःस्थभीश्वरं ॥  
वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणं ।  
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चंद्रः सर्वत्र वंद्यते ॥  
सीतारामगुणमामपुण्याख्यविहारिणौ ।  
वन्दे विशुद्ध विज्ञानौ कवीश्वरकपीश्वरौ ॥  
उद्धरस्थिनिसंहारकारिणीं केशहारिणीं ।  
सर्वश्रेयस्करिणीं सीतां नतोऽहं रामवल्लभां ॥  
यन्मायावशवत्ति विश्वमस्मिल ब्रह्मादिदेवाधुराः ॥  
यत्सत्त्वाद्मृषैव भाति सत्त्वं रज्जौ यथाहेर्ममः ।  
यत्सादृश्यमेकमेव हि भग्नोभेस्तितोर्षावनां  
वन्देऽहं तमशेषस्य परं रामाख्यमीश हरि ॥

नानापुण्यनिगमागमसम्भन यद्-  
रामायणे निगदितं क्वचिदन्यतोऽपि ।  
स्वानःमुखाय तुलसी ग्धुनाधगाथा-  
॥ पानिबंधमतिमंजुनमाननोति ॥

गो०—जो सुमिरत मिथि होइ गान्नायक करिय वदन ।  
 करौ अनुग्रह सोइ नुद्धिरामि गुन गुन मदन ॥  
 मूक होइ वाचाल पगु नहै गिरिवर गहन ।  
 जामु टुप्यो सो दयाल उगै सफल कनिगलदहन ॥  
 नील सगेरुह स्थाम तरन अग्न चाग्नि नयन ।  
 करौ सो मम उर घाम सदा धीर मागर मयन ॥  
 उद इदु सम देह उमागमन दरनाश्रय ।  
 जाहि दीन पर नेह करौ टुपा रदन मयन ॥  
 बंदौ गुर पद कज टुगामिनु नर रूप हरि ।  
 महा मोह तम पुन चामु नवन रविकर निहर ॥

बंदौ गुर पद पदुम पागा । मुनि मयास सरस अनुरागा ॥  
 अमिअँ मूरि मय चूरनु चारु । समन सरल भर हन परिआरु ॥  
 सुकृत समु तन विमल विभूती । मजुल मगल मोद प्रगुनी ॥  
 जन मन मजु मुकुर मल हरनी । किरै तिलतु गुन गन नम कश्नी ॥  
 श्री गुर पद नख मनि गन जोती । सुमिरत दिव्य दृष्ट हिय होनी ॥  
 दलन मोह तम सो सुनकामू । बडे भाग उर आवै चामू ॥  
 उषरहि विमल विलोचन ही क । मित्रहि दोष दुख भव रजनी के ॥  
 सूक्तहि रामचरित मनि मानिक । गुपुत प्रगट जहँ जो जेहि खानिक ॥

दो०—जथा मुअजन अजि दग साधक सिद्ध सुजान ।

कौतुक देखहि सैल बन मूलल भूरि निधान ॥ १ ॥

गुर पद रज मृदु मजुल अजन । नयन अमियँ दग दोष विमजन ॥  
 तेहि करि विमल विनेक विलोचन । बरनौ रामचरित भव मोचन ॥  
 बंदौ प्रथम महीसुर चरना । मोह बनित समय सब हरना ॥  
 सुजन समाज सरल गुन खानी । करौ प्रनाम सप्रेम सुजानी ॥

साधु सरिस सुभचरित<sup>१</sup> कपासू । निरस, विसदगुन मय फल जासू ॥  
जो सहि दुख परधिदुरावा । बंदनीय जेहिं जग जसु पावा ॥  
मुद मंगल मय संत समाजू । जो जग जगम तीरथराजू ॥  
राम भगति जहँ सुरसरि धारा । सरसइ ब्रह्म विचार प्रचारा ॥  
विधि निषेध मय कलि मल हरनी । करम कथा रबिनदिनि बरनी ॥  
हरि हर कथा विराजति वेनी । सुनत सकल<sup>२</sup> मुद मंगल देनी ॥  
बटु विस्वास अचल निज धरमा । तीरथ साजरे समाज सुकरमा ॥  
सबहि सुलभ सब दिन सब देसा । सेवत सादर समन कलेसा ॥  
अकथ अलौकिक तीरथराऊ । देह सद्य फल प्रगट प्रभाऊ ॥

दो०—सुनि समुझहिं जन मुदित मन मज्जहिं अति अनुराग ।

सहहिं चारि फल अद्यत तनु साधु समाज प्रयाग ॥ २ ॥

मज्जन फलु पेखिअ ततकाला । काक होहिं पिक बकउ मराला ॥  
सुनि आचरजु करै जनि कोई । सतसंगति महिमा नहिं गोई ॥  
पालमीक नारद घटजोनी । निज निजमुखनि कही निज होनी ॥  
जलचर थलचर नभचर नाना । जे जइ चेतन जीव जहाना ॥  
मति कीरति गति भूति मलाई । जइ जेहि जतन जहँ जेहिं पाई ॥  
सो जानम सतसंग प्रभाऊ । लोकहुँ बेद न आन उपाऊ ॥  
बिनु सतसंग बिबेक न होई । राम कृपा बिनु सुलभ न सोई ॥  
सतसंगति मुद मंगल मूला । सोइ फल सिधि सब साधन फूला ॥  
सठ सुधारहिं सतसंगति पाई । पारस परस<sup>४</sup> कुषाबु सोहाई ॥  
विधि बस सुजन कुसंगति परहीं । फनिमनि सम निज गुन अनुसरहीं ॥  
विधि हरि हर कवि कोविद बानी । कहत साधु महिमा सकुचानी ॥  
सो मोसन कहि जात न कैसे । साक बनिक मनि गुन गन जैसे ॥

१—प्र०: चरित सुभ सरिस । [दि०: चरित सुभ चरित] । तु०: प्र० । च०:  
सरिस सुभचरित

२—प्र०: सकल [(२) सुख] । दि०, तु०, च०: प्र०

३—प्र०: साज । दि०: प्र० [(४) राज] । [तु०: राज] । च०: ० [(८) राज]

४—प्र०: परस । दि०: प्र० [(३) परसि] । [तु०: परसि] । च०: प्र० [(८) परसि]



दो०—बंदौ संत समान चित हित अनहित नहिं कोउ ।

अजलित सुम सुमन जिमि सम सुगंध कर दोउ ॥

संत सरल चित जगत हित जानि सुभाउ सनेहु ।

बाल विनय सुनि करि कृपा राम चरन रति देहु ॥ ३ ॥

बहुरि बंदि खलगन सनिभायें । जे बिनु काज दाहिनेहु<sup>१</sup> बायें ॥

पर हित हानि लाभ जिन्ह केरे । उजरे हाथ विपाद बसेरें ॥

हरि हर जस राकेस राहु से । पर अकाज भट सहसराहु से ॥

जे परदोष लखहि सहसा<sup>२</sup>खी । पर हित घृत जिन्हके मन माखी ॥

तेज कृसानु रोष महिपेसा । अघ अवगुन धन धनी धनेसा ॥

उदै केतु सम हित सबही के । कुंभरुन सम सोवत नीके ॥

पर अकाज लगि तनु परिहरही । जिमि हिम उपल कृपी दलि गरही<sup>३</sup> ॥

बंदौ खल जस सेप सरोपा । सहस बदन बरनै पर दोषा ॥

पुनि प्रनवौ पृथुराज समाना । पर अघ सुनै सहस दस काना ॥

बहुरि सक सम विनवौ तेही । संतत सुरानीक रहित जेही ॥

बचन बज्र जेहि सदा पिआरा । सहस नयन पर दोष निहारा ॥

दो०—उदासीन अरि भीत हित सुनत जरहिं खल रीति ।

जानि पानि जुग जोरि जनु विनती करै समीति ॥ ४ ॥

मै अपनी दिसि कीन्ह निहोरा । तिन्ह निज ओर न लाउव भोरा ॥

बायस पलिअहि अति अनुरागा । होहिं निरामिष कबहुं<sup>३</sup> किकागा ॥

बंदौ संत असउजन<sup>४</sup> चरना । दुखप्रद उभय बीच कछु चरना ॥

बिछुरत एक मान हरि लेई । मिलत एक दुख दारुन देई ॥

उपजहिं एक संग जग माहीं । जलज जोंक जिमि गुन बिलगाहीं ॥

सुधा सुग सम साधु असाधु । जनक एक जग जलधि अगाधु ॥

१—प्र०: दाहिनेहु । दि०, वृ०: प्र० । [च०: दाहिनेहु]

२—[प्र०: गलही] । दि०: गरही । वृ०, च०: दि०

३—प्र०: कबहि । दि०: कबहुं । वृ०, च०: दि०

४—प्र०: असजन । दि०: प्र० । [वृ०: असजन] । च०: प्र० [(८) असजन]

मन अनमल निज निज करतूती । लहत सुजस अपलोक विमूती ॥  
सुधा सुधामर सुरसरि साधू । गरल अनल कलि मल सरि व्याधू ॥  
गुन अवगुन जानत सब कोई । जो जेहि भाव नीरु तेहि सोई ॥

दो०—मलो मलाई पे लहै लहे निचाइहि नीचु ।

सुधा सराहिअ अमरता गरल सराहिअ मीचु ॥ ५ ॥

सल अघ अगुन साधु गुन गाहा । उमय अपार उदाधि अवगाहा ॥  
तेहि तें कछु गुन दोष बखाने । सम्ह त्याग न बिनु पहिचाने ॥  
मलेउ पोत्र सब विधि उपजाए । गनि गुन दोष वेद बिलगाए ॥  
कहहि बे<sup>१</sup> इनिहास पुराना । विधि प्रपचु गुन अवगुन नाना ॥  
दुख सुख पाप पुन्य दिन राती । साधु असाधु सुजाति कुजाती ॥  
दानव देव कैव अरु नीचू । अमिअ सुजीवनु माहुरु मीचू ॥  
माया ब्रह्म जीव जगदीसा । लच्छि अलच्छि रंक अचनीसा ॥  
कासी मग सुरसरि क्रमनासा<sup>२</sup> । मरु मालव<sup>३</sup> महिदेव गवासा ॥  
सरग नरक अनुराग बिरागा । निगमागम गुन दोष विभागा ॥

दो०—जड चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार ।

सत हंस गुन गहहि<sup>३</sup> यय परिहरि बारि बिकार ॥ ६ ॥

अस भिषेक जव देइ घिघाता । तन तजि दोष गुनहि मनु राता ॥  
काल सुभाउ करम बरिआई । भलौ प्रकृति बम चुकै मलाई ॥  
सो सुधार हरिजन जिमि लेही । दलि दुख दोष बिमल जस देही ॥  
खलौ करहि भल पाइ सुसंगू । मित्रै न मलिन सुमात्र अभगू ॥  
लखि सुवेष जग बंचक जेरु । बेधप्रताप पूजिअहि तेरु ॥  
उपगहि अंन न होइ निबाह । कालनेमि जिमि रावन राह ॥  
किणहु कुबेप साधु सनमानू । जिमि जग जामवत हनुमानू ॥

१—प्र० कमनासा । दि० प्र० [(३)(४)(५) कविनासा] । तृ० क्रमनासा । च०  
तृ०[(६) कविनासा]

२—प्र० माणव । दि० प्र०, तृ० प्र० । च० ० [(६)(६थ) मारव]

३—प्र० गहहि । दि० गहहि । तृ०, च० डि०

हानि कुसग सुसंगति लाह । लोकहुँ वेद विदित सब काह ॥  
 गगन चढ़ै रज पवन प्रसंगा । कीचहि मिलै नीच जल संग ॥  
 साधु असाधु सदन सुक सारी । सुमिरहि राम देहि गनि गारी ॥  
 धूम कुसंगति कारिख होई । निखिद्य पुरान मंजु मसि सोई ॥  
 सोई जल अनल अनिल सघाता । होई जलद जग जीवन दाता ॥

दो०—ग्रह भेषज जल पवन पट पाइ कुजोग सुजोग ।  
 होहिं कुबस्तु सुबस्तु जग लखहिं सुलच्छन लोग ॥  
 सम प्रकास तम पाख दुहुँ नाम भेद बिधि कीन्ह ।  
 ससिपोषक सोपक<sup>१</sup> समुक्ति जग जस अपजस दीन्ह ॥  
 जड़ चेतन जग जीव जत सकल राम मय जानि ।  
 बंदौं सब के पद कमल सदा जोरि जुग पानि ॥  
 देव दनुज नर नाग खग प्रेत पितर गंधर्व ।  
 बंदौ किन्नर रजनिचर कृपा करहु अब सर्व ॥ ७ ॥

आकर चारि लाख चौरासी । जाति जीव जल थल नम बासी ॥  
 सीय राम मय सब जग जानी । करौं प्रनाम जोरि जुग पानी ॥  
 जानि कृपा करि किंकर मोह । सब मिलि करहु छाँड़ि छल छोह ॥  
 निज बुधि बल भरोस मोहिं नाहीं । नातें बिनय करौ सब पाहीं ॥  
 करन चहौं रघुपति गुन गाहा । लघु भति मोरि चरित अवगाहा ॥  
 सूक्त न एकौ अग उपाक । मन मति रक मनोरथ राक ॥  
 मति अति नीच ऊँचि रुचि आखी । चहिअ अमिअं जग जुरै न छाखी ॥  
 छमिहहि सज्जन मोरि दिठार्ई । सुनहहिं चाल बचन मन लाई ॥  
 जौ बालक कह तोतरि बाता । सुनाहं मुदित मन पितु अरु माता ॥  
 हँसहहिं कूर कुटिल कुबिचारी । जे पर दूषन भूषन धारी ॥

१—प्र०: पोषक सोपक । दि ०: प्र० [(३)(४) सोपक पोषक । दृ०, च०: प्र० [(६)  
 (६अ) सोपक पोषक]

निज कवित्त केहि लाग न नीका । सरस होउ अथवा अति फीका ॥  
जे पर भनिति सुनत हरपाहीं । ते वर पुरुष बहुत जग नाहीं ॥  
जग बहु नर सर सरि सम भाई । जे निज वाढ़ि बढ़हि जल पाई ॥  
सज्जन सज्जन<sup>१</sup> सिंधु सम कोई । देखि पूर विंधु वाढ़ै जोई ॥  
दो०—भाग छोट अमिलापु बड़ करौ एक विस्वास ।

पैहहि सुख सुनि सुजन जन<sup>२</sup> खल करिहहि उपहास ॥ ८ ॥

खन परिहास होइ हित मोरा । आक कहहि कलकंठ कठोरा ॥  
हसहि बर दादुर<sup>३</sup> चातक ही । हँसहि मलिन खल विमल बनकही ॥  
कविन रमिक न राम पद नेह । तिन्ह कहँ सुखद हास रस एह ॥  
भाषा भनिति मोरि मति भोरी । हँसिने जोग हँसे नहि खोरी ॥  
प्रभु पद प्रीति न सामुझि नीकी । तिन्हहि कथा सुनि लागिह फीकी ॥  
हरि हर पद रति मति न कुतारकी । तिन्ह रुहँ मधुर कथा रघुवर की ॥  
राम भगनि मृपिन जिअ जानी । सुनहहि सुजन सरहि सुबानी ॥  
कवि न होउँ नहि बचन<sup>४</sup> प्रवीनू । सकल कला सब विद्या हीनू ॥  
आखर अरथ अलङ्कति नाना । छंद प्रवध अनेक विधाना ॥  
भाव भेद रस भेद अपारा । कविन दोष गुन विविध प्रकाश ॥  
कविन विवेक एक नहि मोरे । सत्य कहौ लिखि कागद<sup>५</sup> कोरे ॥

दो०—भनिति मोरि सज गुन रहित भिम्ब बिदित गुन एक ।

सो विचारि सुनिहहि सुमति जिन्हकें विमल विवेक ॥ ९ ॥

येहि महुँ रघुपति नाम उदाग । अति पावन पुरान श्रुति सारा ॥  
मंगल भवन अमंगल हारो । उमा सहिन जेहि जपत पुरागो ॥

१—प्र०: नरनि । दि०: मरुत । [न०: सुहन] । च०: दि० [(न): सुहन] ।

२—प्र०: जन । दि०: प्र० । [न०: नर] । च०: प्र० [(६) (२७): सब] । \*

३—प्र०: दादुर । दि०: प्र० [(१): दादुर] । [न०: दादुर] । च०: प्र० [(१): दादुर] ।

४—प्र०: बचुर । दि०, न०: प्र० । च०: बचन ।

५—प्र०: कागद । दि०: प्र० [(४) (५) (७): कागद] । [न०: वाद] । च०: प्र० [(१): कागद] ।

भर्नित बिचर मुकवि कृ। जोऊ। राम नाम बिनु मोह न मोऊ ॥  
 बिबुधनी सब भेति संघरी। मोह न वगन बिग बा नरी ॥  
 मय गुन रहित मुकवि कृन बानी। राम नाम जग अति जगरी ॥  
 सादर कहहि मुनिहि नृप नाही। मनुष्य गरिम सन गुनपात्री ॥  
 जदवि कविन राम पदी नाही। राम प्रताप प्रगट वेहि नही ॥  
 मोह भोग मोह मन जाया। जेहि न मुगग बटलनु पाय ॥  
 घुमी तज महज करघाई। अगम प्रमग मुगंन वगई ॥  
 भर्निन भदेस बन्नु भलि वानी। रामकथा जग मगन कानी ॥

छ०—मंगल कनि कलि मन हरनि तुनपी कथा रघुनाथ की।  
 गनि कूर कविना गरिन की उषे गरिन पान पाय की ॥

प्रभु मुजग संगनि भर्निन भनि होईहि मुजग मन पाउनी।  
 भव अग गति मसान की सुधिरन मुदागनि पाउनी ॥  
 दो०—प्रिय लागिहि अनि सगहि राम भर्निन राम जग सग।

दारु बिचारु कि करे कोऊ बदिप मनय प्रमग ॥  
 स्थाम सुगम पय विसद अति गुनद कहि मय पान।  
 गिरा आभ्यरे सिय राम जग गावहि मुनिहि सुजान ॥ १० ॥  
 मनि मानिक मुकुता छवि जैसी। अहि गिरि गजसिर सोह न तैमी ॥  
 नृप किरिट तरुनी तनु पाई। लहहि सरत मोमा अधिकई ॥  
 तैसेहि सुकवि कावत बुध कहहीं। उपजहि अनन अनत धरि लहहीं ॥  
 भगति हेतु बिधि भवन बिहई। सुमिरत सारद आरति पाई ॥  
 राम चरित मर बिनु अन्हवाएँ। सो सम जाइ न काटि उपाय ॥  
 कबि कोविद अस हृदय विचार। गावहि हरि जस कलिमल हारी ॥  
 कीन्हे प्राकृत जन गुन गाना। सिर धुनिगिरा लगति पछिनाना ॥  
 हृदय सिधु मति सीप सपाना। स्वानी सारद कहहि सुजाना ॥

१—प्र०: रघुनी। दि०, वृ०, च०: रघु-१४।  
 २—प्र०: आभ्य। [ दि०: गिरा ]। वृ०: प्र०। च०: प्र०। (२): ज्ञान।  
 ३—प्र०: लगति। दि०, वृ०: प्र०। च०: [ (३) (४): लगन, (२): लागि ]।

जौं बरखै बर बारि बिचारू । होहिं कवित मुकुता मनि चारू ॥

दो०—जुगुति वेधि पुनि पोहिअहिं रामचरित बर ताम ।

पहिरहिं सज्जन विमल उर सोभा अति अनुराग ॥११॥

जे जनमे कलिकाल कराला । करतब बायस बेप मराला ॥  
चलत कुपंथ वेद मग छाँड़े । कपट कलेवर कलि मल भौंड़े ॥  
बंचक भगत कहाइ राम के । किंकर कंचन कोह काम के ।  
तिन्ह महुँ प्रथम रेख जग मोरी । धौग घरमध्वज धंधक १ धोरी ॥  
जौं अपने अवगुन सब कहऊँ । बाढ़ै कथा पार नहिं सहऊँ ॥  
तार्ते मैं अति अलप बखाने । थोरैहि २ महुँ जानिहहिं सयाने ॥  
समुझि विविध विधि बिनती ३ मोरी । कोउ न कथा सुनि देखि खोरी ॥  
एतेहु पर करिहहिं ते असंका ४ । मोहितें अधिक जे ५ जड़ मतिरंका ॥  
कवि न हाँउ नहिं चतुर कहावौं । मति अनुरूप राम गुन गावौं ॥  
कहँ रघुपति के चरित अपारा । कहँ मति मोरि निरत संसारा ॥  
जेहि मारुत गिरि मेरु उड़ाहीं । कहहु तूल केहिं लेखे माहीं ॥  
समुझत अमिति राम प्रमुताई । करत कथा मन अति कदराई ॥

दो०—सारद सेष महेस विधि आगम निगम पुगन ।

नेति नेति कहि जासु गुन करहिं निरंतर गान ॥१२॥

सब जानत प्रमु प्रमुना सोई । तदपि कहे बिनु रहा न कोई ॥  
तहाँ वेद अस कारन राखा । भजन प्रभाढ भौंति बहु भाखा ॥  
एक अनीह अरूप अनामा । अज सच्चिदानंद परधामा ॥

१—प्र०: बंधक । दि०, तु०: प्र० । च०: प्र० [ (६) बंधक ] ।

२—प्र०: थोरैहि । [ दि०, तु०: थोरे ] । च०: प्र० [ (६अ) थोरे ] ।

३—प्र०: बिनती अब । दि०: प्र० [ (३) (५अ) विधि बिनती ] । तु०, च०: विधि बिनती ।

४—प्र०: जे असंका । दि०: प्र० [ (४) (५) जे संका । [ तु०: जे संका ] । च०: ते अमंका ।

५—प्र०: ते । दि०, तु०: प्र० । च०: जे ।

व्यापक बिस्वरूप भगवाना । तेहिं घरि देह चरित कृत नाना ॥  
 सो केवल भगतन्ह हित लागी । परम कृपान प्रनत अनुरागी ॥  
 जेहिं जन पर ममता अति छोहू । जेहिं<sup>१</sup> करुना करि कोन्ह न कोहू ॥  
 गई बहोर गरीब निवाजू । सरल सबल साहिव रघुराजू ॥  
 बुध बरनहिं हरिजस अस जानी । कहिं पुनीत सुफल निज बानी ॥  
 तेहि बल मै रघुपति गुन गाथा । कहिहौ नाइ राम पद माथा ॥  
 मुनिन्ह प्रथम हरि कीरति गाई । तेहि मग चलत सुगम<sup>२</sup> मोहि भाई ॥

दो०—अति अपार जे सरित बर जौ नृप सेतु कराहिं ।

चढ़ि पिपीलिकौ परम लघु बिनु श्रम पारहि जाहिं ॥१३॥

एहि प्रकार बल मनहि देखाई । करिहौ रघुपति कथा सुहाई ॥  
 व्यास आदि कविपुंगव नाना । जिन्ह सादर हरि सुजस बखाना ॥  
 चरन कमल बंदौ तिन्ह केरे । पूरहुं सकल मनोरथ मेरे ॥  
 कलि के कबिन्ह करौ परनामा । जिन्ह बरने रघुपति गुन प्रामा ॥  
 जे प्राकृत कवि परम सयाने । भाषा जिन्ह हरि चरित बखाने ॥  
 भए जे अहहिं जे होइहहिं आगे । प्रनवौ सबहिं<sup>३</sup> कपट छल<sup>४</sup> त्यागे ॥  
 होहु प्रसन्न देहु बरदानू । साधु समाज भनिति सनमानू ॥  
 जो प्रबध बुध नहिं आदरही । सो श्रम बादि चाल कवि करही ॥  
 कीरति भनिति भूति भलि सोई । सुरसरि सम सब कहैं हित होई ॥  
 राम सुकीरति भनिति भदेसा । असमजस अस मोहि अँदेसा ॥  
 तुम्हरी कृपाँ सुलभ सोउ मोरें । सिअनि सुहावनि टाट पटोरें<sup>५</sup> ॥

१—प्र० : जेहि । द्वि० : प्र० । [नृ० तेहि] । च० : प्र० ।

२—[प्र० : सुगम] । द्वि०, नृ०, च० : सुगम ।

३—प्र० : सबनि । द्वि०, नृ० . प्र० । च० : सबहिं ।

४—प्र० : छल । द्वि० : प्र० । [नृ० : सब] । च० : प्र० [ (६) (६ क) सब ] ।

५—प्र० : इसके अनंतर (५) तथा (७) में निम्नलिखित अर्द्धांजी और है :

बरहु अनुग्रह अम जिय जानी । दिमन जसहि अनुहरइ सुधानी ।

दो०—सरल कवित कीरति विमल सोइ आदरहिं मुजान ।

सहज बयर बिसराइ रिपु जो मुनि करहिं बखान ॥

सो न होइ बिनु विमल मति मोहिं मति बल अति थोर ।

करहु कृपा हरि जस कहौ पुनि पुनि करौ निहोर १ ॥

कचि कोबिद रघुवर चरित मानस मंजु मराल ।

बाल बिनय मुनि मुरुचिलखि मोषर होहु कृपाल ॥

सो०—बंदौं मुनिपद कंजु रामायन जेहिं निरमण्ड ।

सखर सुकोमल मंजु दोष रहित दूषन सहित ॥

बंदौं चारिउ वेद भव बारिधि बोहित सरिस ।

जिन्हहिं न सपनेहुं खेद बरनत रघुवर बिसद जसु ॥

बंदौं विधि पद रेनु भवसागर जेहिं कीन्ह जहँ ।

संत सुधा ससि धेनु प्रगटे खल बिष बारुनी ॥

दो०—बिबुध विष बुध ग्रह चरन बंदि कहौं कर जोरि ।

होइ प्रसन्न पुरवहु सकल मंजु मनोरथ मोरि ॥१४॥

पुनि बंदौं सारद सुरसरिता । जुगल पुनीत मनोहर चरिता ॥

मज्जन पान पाप हर एका । कहत सुनत एक हर अबियेका ॥

गुर पितु मातु महेस भयानी । मनबौ दीनबंधु दिनदानी ॥

सेवक स्वामि सखा सिय पी के । हित निरुपधि सब विधि तुलसी के ॥

कलि बिलोकि जग हित हरं गिरिजा । साबर मंत्र जाल जिन्ह सिरिजा ॥

अनमिल आखर अरथ न जापू । प्रगट प्रभाउ महेस प्रतापू ॥

सो० महेस १ मोहिं पर अनुकूला । करिहिं ४ कथा मुद मंगल मूला ॥

सुमिरि सिवा सिव पाइ पसाऊ । बरनौं राम चरित चित चाऊ ॥

१—प्र० : कहौं निहोरि । दि० : प्र० [(४) (५) कहहुं निहोर] । वृ० : करउं निहोर ।

च० : वृ० ।

२—[प्र० : सोइ] । दि० : सो [(४) (५) सोइ] । वृ०, च० : दि० ।

३—प्र० : महेस । दि० : प्र० । [वृ० : उमेस] । च० : प्र० [(६) (६ अ) उमेस] ।

४—प्र० : करहिं । [दि० : करउ] । वृ० : करउ । च० : करहिं [(८) करहिं] ।



भनिति मोरि सित्र कृपा बिमानो । ससि समाज मिलि मनहुं सुराती ॥  
 जे एहि कथहिं सनेह समेता । कहिहहिं सुनिहहिं समुक्ति सचेता ॥  
 होइहहिं राम चरन अनुरागी । कलि मल रहित सुमंगल भागी ॥

दो० —सपनेहु साँचेहु मोहिं पर जौं हर गौरि पसाउ ।

तौ फुर होउ जो कहेउँ सब भाषा भनिति प्रभाउ ॥१५॥

बदौ अवधपुरी अति पावनि । सरजू सरि कलि कलुष नसावनि ॥  
 प्रनवौ पुर नर नारि बहोरी । ममता जिन्ह पर प्रभुहिं न थोरी ॥  
 सिय निदरु अघ ओघ नसाए । लोक बिसोक बनाइ वसाए ॥  
 बदौ कौसल्या दिसि प्राची । कीरति जासु सकल जग माची ॥  
 प्रगटेउ जहँ रघुपति ससि चारू । बिस्व सुखद खल कमल तुसारू ॥  
 दसरथ राउ सहित सब रानी । सुकृत सुमंगल भूरति मानी ॥  
 करौ प्रनाम करम मन बानी । करहु कृपा सुन सेवक जानी ॥  
 जिन्हहिं बिरचि बड़ भएउ बिघाता । महिमा अवधि राम पितु माता ॥

सो०—बदौ अवध सुआल सत्य प्रेम जेहि राम पद ।

बिछुरत दीनदयाल प्रिय तनु त्रिनइव परिहरेउ ॥१६॥

प्रनवौ परिजा सहित बिदेह । जाहि रामपद गूढ सनेह ॥  
 जोग भोग महु राखेउ गोई । राम बिलोकत प्रगटेउ सोई ॥  
 प्रनवौ प्रथम भरत के चरना । जासु नेम व्रत जाइ न धरना ॥  
 राम चरन परज मन जासु । लुबध मधुष इव तजै न पासु ॥  
 बदौ लक्ष्मिन पद जलजाता । सीतल सुमग भगत सुखदाना ॥  
 रघुपति कीरति चिमल पताका । दढ समान भएउ जस जाका ॥  
 सेव सहस्रसीस जगकारन । जो अवतरेउ भूमि भय टारन ॥  
 सदा सो सानुकूल रह मोपर । कृपासिंधु सौमित्रि गुनाकर ॥  
 रिपुसूदन पद कमल नमामी । सूर सुसील भरत अनुगामी ॥  
 महावीर बिनवौ हनुमाना । राम जासु जस आपु वखाना ॥

सो०—प्रनवौ पवनकुमार खल वन पावक ज्ञान धन१ ।

जासु हृदय आगार बसहि राम सर ,चाप धर ॥१७॥

कपिपति रीझ निसाचर राजा । अंगदादि जे कीस समाजा ॥  
बंदौ सब के चरन सुहाये । अधम सरीर राम जिन्ह पाए ॥  
रघुपति चरन उपासक जेते । खग मृग सुर नर असुर समेते ॥  
बंदौ पद सरोज सब केरे । जे बिनु काम राम के चेरे ॥  
सुक सनकादि भगत मुनि नारद । जे मुनिवर विज्ञान बिसारद ॥  
प्रनवौ सवहि धरनि धरि सीसा । कहहु कृपा जन जानि मुनीसा ॥  
जनकसुता जगजननि जानकी । अतिसय प्रिय करुनानिधान की ॥  
ताके जुग पद कमल मनावौ । जासु कृपा निरमल मति पावौ ॥  
पुनि मन बचन करम रघुनायक । चरन कमल बंदौ सब लायक ॥  
राजिव नयन धरे धनु सायक । भगत विपति भजन सुखदायक ॥

दो०—गिरा अरध जल बीचि सम कहिअत२ भित्त न भित्त ।

यदौ सीताराम पद जिन्हहि परम प्रिय खिन्न ॥१८॥

बंदौ नाम राम रघुवर को । हेतु कृसानु भानु हिमकर को ॥  
विधि हरि हर मय बेद प्रान सो । अगुन अनुपम गुननिधान सो ॥  
महामंत्र जोइ जपत महेसू । कासी मुकुति हेतु उपदेसू ॥  
महिमा जासु जान गनराऊ । प्रथम पूजिअत नाम प्रभाऊ ॥  
जान आदिकवि नाम प्रतापू३ । मएउ सुद्ध करि उलटा जापू ४ ॥  
सहस नाम सप्त सुनि सिव बानी । अपि जेई पिअ संग भवानी ॥  
हरपे हेतु हेरि हर ही को । किए भूपनु तित्त भूपन ती को ॥  
नाम प्रमाउ जान सिव नीको । कालकूट फलु दीन्ह अमी को ॥

१—प्र० : पर । दि०, : धन । तु०, च० : दि० ।

२—प्र० : देखिअत । दि०, तु० : प्र० । च० : कहिअत ।

३—प्र० : प्रभाऊ । दि० : प्रतापू । तु०, च० : दि० ।

४—प्र० : कहि उलटा नाऊँ । दि० : करि उलटा जापू । तु०, च० : दि० ।

दो०—बरपा रितु रघुपति भगति तुलसी सालि सुदास ।  
राम नाम बर बरन जुग सावन भादौ मास ॥१६॥

आखर मधुर मनोहर दोऊ । बरन बिलोचन जन जिअँ जोऊ ॥  
सुमिरत सुलभ सुखद सब काहू । लोक लाहु परलोक निवाहू ॥  
कहत सुनत सुमिरत सुठि नीकै । राम लखन सम प्रिय तुलसी के ॥  
बरनत बरन प्रीति बिलगाती । ब्रह्म जीव सम सहज सँधाती ॥  
नर नारायन सरिस सुभ्राता । जग पालक बिसेषि जन त्राता ॥  
भगति सुतिअ कल करन विमूषन । जग हित हेतु बिमल बिधु पूषन ॥  
स्वाद तोष सम सुगति सुधा के । कमठ सेष सम धर बसुधा के ॥  
जन मन मजु कंज मधुकर से । जीह जसोमति हरि हलधर से ॥

दो०—एकु छत्र एकु मुकुट मनि सब बरनन्हि पर जोउ ।  
तुलसी रघुबर नाम के बरन बिराजत दोउ ॥२०॥

समुझत सरिस नाम अरु नामी । प्रीति परसपर प्रभु अनुगामी ॥  
नाम रूप दुइ ईस उपाधी । अकथ अनादि सुसाधुकि साधी ॥  
को बड़ छोट कहत अपराधु । मुनि गुन भेद समुझिहहि साधू ॥  
देविअहि रूप नाम आधीना । रूप ज्ञान नहि नाम बिहीना ॥  
रूप बिसेषि नाम बिनु जाने । करतल गत न पाहिँ पहिचाने ॥  
सुमिरिअ नाम रूप बिनु देखे । आवन हृदय सनेह बिसेषे ॥  
नाम रूप गतिअ अकथ कहानी । समुझत सुखद न पानि बखानी ॥  
अगुन सगुन बिच नाम सुसासी । उमय प्रबोधक चतुर दुमासी ॥

१—प्र० : समुझत । दि० : १० : प्र० : १० : सुमिरत ।

२—प्र० : १६ । दि० : प्र० : १० : मन । प्र० : १० ।

३—प्र० : बड़ मजु । दि० : मजु बड़ [(१) बड़ मजु] । प्र० : प्र० : दि० ।

४—प्र० : बिराजत । दि० : बिराजत । प्र० : १० : दि० ।

५—प्र० : गुन । दि० : प्र० : १० : मनि । प्र० : १० ।

दो०—राम नाम मनि दीप घरु जोह देहरी द्वार ।

तुलसी भीतर बाहरहुँ<sup>१</sup> जौ चाहसि उजिआर ॥२१॥

नाम जोहँ जपि जागहिं जोगी । बिरति बिरचि प्रपंच बियोगी ॥

ब्रह्ममुखहि अनुभवहिं अनूपा । अकव अनामय नाम न रूपा ॥

जानी<sup>२</sup> चहहिं गूढ़ गति जेऊ । नाम जोह जपि जानहिं<sup>३</sup> तेऊ ॥

साधक नामु जपहिं लय<sup>४</sup> लाएँ । होहिं सिद्ध अतिमादिक पाएँ ॥

जपहिं नामु जन आरत भारी । मिटहिं कुसकट होहिं सुखारी ॥

राम भगत जग चारि प्रकारा । सुकृती चारिउ अनघ उदारा ॥

चहुँ चतुर कहुँ नाम अधारा । ज्ञानी प्रमुहि बिसेपि पिआरा ॥

चहुँ जुग चहुँ श्रुति नाम प्रभाऊ । कलि बिसेपि नहिं आन उपाऊ ॥

दो०—सकल कामनाहीन जे राम भगति रस लीन ।

नाम पेम<sup>५</sup> पीयूष हृद तिन्हहुँ किए मन मीन ॥२२॥

अगुन सगुन दुइ ब्रह्म सरूपा । अकथ अगाध अनादि अनूपा ॥

मोरे<sup>६</sup> मत बड़ नामु दुहँ ते । किए जेहि जुग निज बस निज बूते<sup>७</sup> ॥

प्रीति<sup>८</sup> सुजन जनि जानहिं जन की । कहेउँ प्रतीति प्रीति रुचि मन की ॥

एकु दारुगत दोसअ एकू । पावक सप्त जुग ब्रह्म बिबेकू ॥

उभय अगम जुग सुगम नाम तैं । कहेउँ नामु बड़ ब्रह्म राम तैं ॥

व्यापकु एकू ब्रह्म अविनासी । सन चेतन घन आनँद रासी ॥

अस प्रमु हृदयँ अद्यत अविकारी । सकल जीव जग दीन दुखारी ॥

१—प्र०: बाहरी । दि० : प्र० । [ तु०: बाहिरउ ] । च०: प्र० [(६) (६अ) बाहरहुँ ] ।

२—प्र०: जानी । दि०: प्र० [ (५) जाना ] । [ तु०: जाना ] । च०: प्र० ।

३—प्र०: जानहिं । दि०, तु०: प्र० । [ च०: (६) (६अ) जानहुँ, (८) जानत ] ।

४—प्र०: ली । दि०: लय । तु०, च०: दि० ।

५—प्र०: पेम । [ दि०, तु०: प्रम ] च०: ० [(६अ) सुप्रेम, (८) प्रभाव ] ।

६—प्र०: हमरे । दि०: मोरे [(५अ) हमरे ] । तु०, च०: दि० ।

७—प्र०: नि बूते [(८) निहबूते ] । दि०, तु०, च०: प्र० ।

८—प्र०: प्रीति । दि०: प्र० [ (४) (५) (५अ) प्रीति ] । तु०: प्र० । च०: प्र०-[(८) प्रीति ] ।

## श्री राम चरित मानस

नाम निरूपन नाम जतन तैं । सोउ प्रगटत जिमि मोल रतन तैं ॥  
दो०—निरगुन तैं एहि भाँति बड़ नाम प्रभाउ अपार ।

कहउँ नामु बड़ राम तैं निज बिचार अनुसार ॥२३॥  
राम भगत हित नर तनु घारी । सहि संकट किए साधु सुखारी ॥  
नामु सप्रेम जपत अनयासा । भगत होहिं मुद मंगल बासा ॥  
राम एक तापस तिअ तारी । नाम कोटि खल कुमति सुघारी ॥  
रिषि हित राम सुकेतु सुता फी । सहित सेन सुत कीन्हि बिबाकी ॥  
सहित दोष दुख दास दुगासा । दलइ नामु जिमि रवि निसि नासा ॥  
भंजेउ राम आपु भव चापू । भव भय भंजन नाम प्रतापू ॥  
दंडक वनु प्रभु कीन्ह सुहावन । जन मन अमित नाम किए पावन ॥  
निसिचार निकर दले रघुनन्दन । नामु सकल कलि कलुष निकंदन ॥  
दो०—सवरी गोध सुसेवकन्हि सुगति दीन्हि रघुनाथ ।

नाम उधारे अमित खल वेद विदित गुन गाथ ॥२४॥  
राम सुकंठ विभीषन दोऊ । राखे सरन जान सबु कोऊ ॥  
नाम गरीब अनेक निवाजे । लोक वेद बर विरिद बिराजे ॥  
राम भालु कपि कटकु बटोरा । सेतु हेतु अमु कीन्ह न थोरा ॥  
नामु लेत भवसिंधु सुखाही । करहु बिचार सुजन मन माही ॥  
राम सकल कुल<sup>१</sup> रावनु मारा । सीय सहित निज पुर पगु धारा ॥  
राजा रामु अवध रजधानी । गावत गुन सुर मुनि बर बानी ॥  
सेवक सुमिरत नामु मप्रीती । बिनु अम प्रबल मोह दलु जीती ॥  
फिरत सनेह<sup>२</sup> मगन सुख अपने । नाम प्रसाद सोच नहिं सपने ॥  
दो०—ब्रह्म राम तैं नामु बड़ बर दायक बर दानि ।

रामचरित सत कोटि महँ लिय महेश जिअ जानि ॥२५॥  
नाम प्रसाद समु अविनासी । साजु अमंगल मंगल रासी ॥  
सुक सनकादि साधु मुनि जोगी । नाम प्रसाद ब्रह्म सुख मोगी ॥

नारद जानेउ नाम प्रतापू । जग प्रिय हरि हरिहेर प्रिय आपू ॥  
 नामु जपत प्रभु कीन्ह प्रसादू । भगत सिरामनि मे प्रहलादू ॥  
 ध्रुव सगलानि जपेउ हरि नाऊँ । पाएउ<sup>१</sup> अचल अनूपम ठाऊँ ॥  
 सुमिरि पवनसुत पावन नामू । अपने बस करि राखे रामू ॥  
 अपतु<sup>२</sup> अजामिलु गजु गनिकाऊ । मए मुकुत हरि नाम प्रभाऊ ॥  
 कहौ कहौ लगि नाम बड़ाई । रामु न सकहि नाम गुन गाई ॥  
 दो०--नामु राम को कलपतरु कलि फल्यान निवासु ।

जो सुमिरत मयो<sup>३</sup> मोंग तेँ तुलसी तुलसीदासु ॥२६॥

चहुँ जुग तीनि काल तिहुँ लोका । मए नाम जपि जीव बिसोका ॥  
 वेद पुरान संत मत एहू । सकल सुकृत फल राम सनेहू ॥  
 ध्यान प्रथम जुग मख बिधि दूजे । द्वापर परितोषत<sup>४</sup> प्रभु पूजे ॥  
 कलि केवल मल मूल मलीना । पाप पयोनिधि जन मन मीना ॥  
 नाम कामतरु काल कराला । सुमिरत समन सकल जग जाला<sup>५</sup> ॥  
 राम नाम कलि अभिमत दाता । हित परलोक लोक पितु माता ॥  
 नहि कलि करम न भगति बिवेकू । राम नाम अवलंबन एकू ॥  
 कालनेमि कलि कपट निधानू । नाम सुमति समरथ हनुमानू ॥  
 दो०--राम नाम नर केसरी कनककसिपु कलिकालु ।

जापक जन प्रहलाद जिमि पालिहि दलि सुरसालु ॥२७॥

भायँ कुमायँ अनख आलस हूँ । नाम जपत मंगल दिसि दस हूँ ॥  
 सुमिरि सो नाम राम गुन गाथा । करौ नाइ<sup>६</sup> रघुनाथहि माथा ॥

१—प्र० : थापेउ । दि० : पाएउ । तृ०, च० : दि० ।

२—प्र० : अपतु । दि०, तृ० ॥ प्र० । च० : प्र० [(६) (८) : अपरु] ।

३—प्र० : मयो । दि० : प्र० । [तृ० : मय] । च० : प्र० [(८) : मय] ।

४—प्र० : परितोषन । दि० : प्र० । तृ० : परितोषत । च० ॥ तृ० ।

५—प्र० : सकल समन बँजाला । दि० : समन सकल जगजाला । [तृ० : सुखद सुखम सब बाजा] । च० : दि० ।

मोरि-सुधारहि सो भव भौती । जासु कृपौ नहिं कृपा अघाती ॥  
 राम सुस्वामि कुसेवकु मो सो । निज दिसि देखि दयानिधि पोसो ॥  
 लोकहुँ बेद सुसाहिब रीती । विनय सुनत पहिचानन प्रीती ।  
 गनी गरीब ग्राम नर नागर । पढित मूढ़ मलीन उजागर ॥  
 सुकवि कुकवि निज मत अनुहारी । नृपहि सगाहत सब नर नारी ॥  
 साधु सुजान सुसील नृपाला । ईस अस भव परम कृपाला ॥  
 सुनि सनमानहि सगहि सुबानी । भनिति भगति नति गति पहिचानी ॥  
 यह प्राकृत महिपाल सुभाऊ । जानसिरोमनि कोसलराऊ ॥  
 रीभन राम सनेइ निमोर्ते । को जग मंद मलिन मतिरे मोर्ते ॥

दो०-सठ सेवक की प्रीति रुचि रखिहहि राम कृपालु ।  
 उपल किए जनजान जेहि सचिव सुमति कपि भालु ॥  
 हौ हु कहावत सब कहत राम सहत उपहास ।  
 साहिब सोतानाय से सेवक तुलसीदास ॥२८॥

अति बड़ मोरि छिछरै सोरी । सुनि अघ नरकहुँ नाक सरोरी ॥  
 समुझि सहम मोहिं अपडर अपने । सो सुधि राम कीन्हि नहिं सपने ॥  
 सुनि<sup>३</sup> अवलोकि सुचित चल चाही । भगति मोरि<sup>४</sup> मति स्वामि सराही ॥  
 कहत नसाइ होइ हिअ नीकी । रीभन राम जानि जन जी की ॥  
 रहति न प्रभु चित चूक किए की । करत सुरति सय बार हिप की ॥  
 जेहि अघ बघेउ व्याध जिमि बाली । फिरि सुकंठ सोइ कीन्हि कुचाली ॥  
 सोइ करतूत विभीषन केरी । सपनेहुँ सो न राम हिअ हेरी ॥

१-प्र० : जान [ (२) जानि ] । दि०, तृ०, च० : प्र० ।  
 २-प्र० : मन । दि०, नृ० : प्र० । च० : मनि ।

३-[प्र० : श्रुति] । दि० : सुनि । तृ०, च० : दि० ।

४-प्र० : मोरि । दि० : प्र० [ (३) (४) : मोरि ] । [तृ० : मोरि] । च० :  
 प्र० [(दि०) (५) : मोरि] ।

ते भरतहि भेंटत सनमानें । राजसर्मा<sup>१</sup> रघुवीर बताने ॥  
 दो०—प्रमु तरु तर कपि डार पर ते किण् आपु समान ।  
 तुलसी कहै<sup>२</sup> न राम से साहिव सीलनिधान ॥  
 राम निकार्ई रावरी है सब ही को नीक ।  
 जौ यह सौंची है सदा तौ नीको तुलभीक ॥  
 एहि विधि निज गुन दोष कहि मनहि बहुरि मिठ नाइ ।  
 वरनौ रघुवर विसद जमु मुनि फलि कलुष नमाइ ॥२८॥  
 जागवलिक जो कथा मुझाई<sup>३</sup> । भरद्वाज मुनिवरहिं सुनाई<sup>४</sup> ॥  
 कहिहौं सोइ सवाद बखानी । मुनहु सकल सज्जन सुपु मानी ॥  
 समु कीन्ह यह चरित सुहावा । बहुरि कृपा करि उमहि सुनावा ॥  
 सोइ सिव कागमुसुंढिहि दीन्हा । राम भगति अधिकारी चीन्हा ॥  
 तेहि सन जागवलिक पुनि पावा । तिन्ह पुनि भरद्वाज प्रति गावा ॥  
 ते श्रोता बकता समसीला । सबदरसी<sup>५</sup> जानहि हरि लीला ॥  
 जानहि तीनि काल निज ज्ञाना । करतल मन आमलक समाना ॥  
 औरै जे हरिमगत सुजाना । कहहि सुनहि समुझहि विधि नाना ॥  
 दो०—मैं पुनि निज गुर सन सुनी कथा सो सूकरत्येत ।  
 समुझी नहि तसि बालपन तव अति रहेउं अचेन ॥  
 श्रोता बकता ज्ञाननिधि कथा राम कै गूढ़<sup>६</sup> ।  
 किम समुझौं मैं जीव जड़ कलि मल प्राप्त विमूढ़ ॥३०॥  
 तद्वि कही गुर बारहि बाग । समुझि परी कछु मति अनुसार ॥

१—[प्र० : राम सर्मा ] । डि० : राजसर्मा । तृ० : डि० । च० : प्र० [(६)  
 (६५) : ( रामसर्मा ) ।

२—प्र० : कही । डि० : प्र० [ (५५) : बहूँ ] । तृ० : कहै । च० : तृ० ।

३—प्र० : सुनाई, सुहाई । [ डि० : सुनाई, सुनाई ] । तृ० : सुनाई,  
 सुनाई । च० : तृ० ।

४—प्र० : सबदरसी । डि० : प्र० [(३) (४) । समदरसी ] । [ तृ० : समदरसी ]  
 च० : प्र० ।



भाषावद्ध करवि मै सोई । मोरे मन प्रबोध जेहि होई ॥  
 जस कलु बुधि बिबेक बन मेरे । तस कहिहौं हिअैं हरि के प्रेरे ॥  
 निज सदेह मोह अम हरनी । करौ कथा भव सरिता तरनी ॥  
 बुध विश्राम सकल जन रंजनि । रामकथा कलि कलुष विभंजनि ॥  
 राम कथा कलि पन्नग भरनी । पुनि बिबेक पावक कहूँ अरनी ॥  
 रामकथा कलि कामद गई । सुजन सजीवनि मूरि सुहाई ॥  
 सोई बसुधा तन सुधा तरगिनि । मयमंजनि अम भेक मुअंगिनि ॥  
 असुर सेन सम नरक निकदिनि । साधु बिबुध कुल हित गिरिनिदिनि ॥  
 सत समाज पयोधि रमा सी । विस्मभार भर अचल छमा सी ॥  
 जम गन मुँह मसिजग जमुना सी । जीवन मुकुति हेतु अनु कासी ॥  
 रामहि प्रिय पावनि तुलसी सी । तुलसिदास हित हिअ हुलसी सी ॥  
 सिध प्रिय मेकल सैल सुता सी । सकल सिद्धि सुख संपति रासी ॥  
 सदगुन सुर गन अब अदिति सी । रघुवर भगति प्रेम परमिति सी ॥  
 दो०—रामकथा मदाकिनी चित्रकूट चित चारु ।

तुलसी सुमग सनेह बन सिअ रघुवीर बिहारु ॥३१॥  
 रामचरित चिन्तामनि चारु । संत सुभति तिय सुभग सिंगारु ॥  
 जग मगल गुनग्राम राम के । दानि मुकुति घन घरम धाम के ॥  
 सदगुर ज्ञान विराग जोग के । त्रिबुध बैद भव भीम रोग के ॥  
 जनिन जनक सिय राम पेम के । बीज सकल व्रत धाम नेम के ॥  
 समन पाप सताप सोरु के । प्रिय पालक परलोक लोक के ॥  
 सचिव सुमट भूषति विचार के । कुंमज लोभ उदधि अपार के ॥  
 काम कोह कलि मल करि गन के । केहरि सावरु जन मन बन के ॥  
 अतिथि पूज्य प्रियतम पुरारि के । कामद घन दारिद दवारि के ॥  
 मत्र महामनि विषय व्याल के । मेयत कठिन कुअंक माल के ॥  
 हरन मोह तम दिनकर कर से । सेवक सालि पाल जलघर से ॥  
 अभिमत दानि देवतखार से । सेवन सुलम सुखद हरिहर से ॥

सुद्धि सरद नम मन उडुगन से । राम भगत जन जीवन धन<sup>१</sup> से ॥  
सकल सुकृत फल मूरि भोग से । जग हित निरूपधि साधु लोग से ॥  
सेवक - मन मानस मराल से । पावन गंग तरंग माल से ॥

दो०—कुपथ कुरत कुचालि कलि कपट दंभ पाखंड ।

दहन राम गुन ग्राम जिमि ईधन अनल प्रचंड ॥

रामचरित राक्षस कर सरिस सुखद सब काहु ।

सज्जन कुमुद चक्रोर चिन हित विसेपि बड़ लाहु ॥३२॥

कीन्हि प्रल जेहि भौंति भवानी । जेहि विधि संकर कहा बखानी ॥

सो सब हेतु कहव मै गाई । कथा प्रबंध बचित्र बनाई ॥

जेहि यह कथा सुनी नहि होई । जनि आचरजु करै सुनि सोई ॥

कथा अलौकिक सुनहि जे ज्ञानी । नहि आचरजु करहि अस जानी ॥

रामकथा कै मिति जग नाही । असि प्रतीति तिन्हके मन माहीं ॥

नाना भौंति राम अवतारा । रामायन सत कोटि अपारा ॥

फलप भेद हरि चरित सुहाए । भौंति अनेक मुनीसन्ह गाए ॥

करिअ न संसय अस उर आनी । सुनिअ कथा सादर रति मानी ॥

दो०—राम अनत अनत गुन अमिति कथा विस्तार ।

सुनि आचरजु न मानिहहि जिन्हके विमल विचार ॥३३॥

एहि विधि सब ससय करि दूरी । सिर धरि गुर पद पकज घूरी ॥

पुनि सबहीं विनवौरे कर जोरी । करत कथा जेहि लाग न खोरी ॥

सादर सिवहि नाइ अब माथा । बरनौ विसद राम गुन गाथा ॥

संघत सोरह से एकतीसा । करौ कथा हरिपद धरि सीसा ॥

नौमी भौमवार मधु भासा । अवधपुरी यह चरित प्रकासा ॥

जेहि दिन राम जनम श्रुति गावहि । तीरथ सकल तहाँ चलि आवहि ॥

असुर नाग खग नर मुनि देवा । आइ कहि रघुनायक सेवा ॥

१—प्र० : धन । दि०, वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) धर ] ।

२—प्र० : प्रनवी । दि० : प्र० । वृ० : विनवी । च० : वृ० ।

जनम महोत्सव रचहिं सुजाना । कहि राम कल कीरति गाना ॥  
 दो०—मज्जहिं सज्जन बृंद बहु पावन सरजू नीर ।

जपहिं राम धरि ध्यान उर सुंदर स्याम सरीर ॥३४॥

दरस परस मज्जन अरु पाना । हरै पाप कह वेद पुराना ॥  
 नदी पुनीत अमित महिमा अति । कहि न सकै सारदा बिमल मति ॥

राम धामदा पुरी सुहावनि । लोक समस्त बिदित अति पावनि ॥  
 चारि खानि जग जीव अपारा । अवध तजे तनु नहिं संसारा ॥

सब बिधि पुरी मनोहर जानी । सकल सिद्धिप्रद मंगल खानी ॥  
 बिमल कथा कर शीन्ह अरंभा । सुनत नसाहिं काम मद दंभा ॥

राम चरित मानस पहि नामा । सुनत सबन पाइअ बिताया ॥  
 मन करि विषय अनल धन जरई । होइ सुखी जौ येहिं सर परई ॥

राम चरित मानस मुनि भावन । बिरचेउ संभु सुहावन पावन ॥  
 त्रिविध दोष दुख दारिद दावन । कलि कुचालि कुलि कलुष नसावन ॥

रवि महेस निज मानस राखा । पाइ सुसमउ सिवा सन माखा ॥  
 ताते राम चरित मानस बर । धरेउ नाम हिअैं हेरि हरपि हर ॥

कहौ कथा सोइ सुखद सुहाई । सादर सुनहु सुजन मन लाई ॥  
 दो०—जस मानस जेहि बिधि भएउ जग प्रचार जेहि हेतु ।

अब सोइ कहौ प्रसंग सब सुमिरि उमा वृषकेतु ॥३५॥

समु प्रसाद सुमति हिअैं हुलसी । राम चरित मानस कवि तुलसी ॥  
 करै मनोहर मति अनुहारी । सुजन सुचिन्त सुनि लेहुं सुधारी ॥

सुमति भूमि थल हृदय अगाध । वेद पुरान उदधि धन साधू ॥  
 बरपहिं राम सुजस बर बारी । मधुर मनोहर मंगलकारी ॥

लीला मगुन जो कहहिं बखानी । सोइ स्वच्छता करै मल हानी ॥  
 प्रेम भगनि जो बरनि न जाई । सोइ मधुरना सुनीतलनाई ॥

सो जल मुकून सालि हित होई । राम भगन जन जीवन सोई ॥

मेघा महिगत सो जल पावन । सकलिले सवन भग चलेउ सुहावन ॥  
भरेउ सुमानस सुथल थिराना । सुखद सीत रुचिरे चारु विराना ॥

दो०—सुठि सुंदर संवाद वर विरचे बुद्धि विचारु ॥

तेइ एहि पावन सुभग सर घाट मनोहर चारु ॥३६॥

सप्त प्रबंध सुभग सोपाना । ज्ञान नयन निरपन मन माना ॥  
रघुपति महिमा अगुन अवाधा । बरनव सोइ वर वारि अगाधा ॥  
राम सीअ जस सलिल सुधा सम । उपमा बीचि ५ घिलास मनोरम ॥  
पुरइनि सघन चारु चौपाई । जुगुति मंजु मनि सीप सहार्ई ॥  
छंद सोरठा सुंदर दोहा । सोइ बहु रंग कमल फुल सोहा ॥  
अरथ अनूप सुभाव सुभाषा । सोइ पराग मकरद सुवासा ॥  
सुकृत पुंज मजुल अलि माला । ज्ञान विराग विचार मराला ॥  
ध्यान अवरेव कबित गुन जाती । मीत मनोहर ते बहु माँती ॥  
अरथ धरम कामादिक चारी । कहव ज्ञान विज्ञान विचारी ॥  
नव रस जप तप जोग विरागा । ते सब जलचर चारु तड़ागा ॥  
सुकृती साधु नाम गुन गाना । ते विचित्र जल विहग समाना ॥  
संत सभा चहुँ दिसि अँबरार्ई । थढ़ा रितु बसंत सम गार्ई ॥  
भगति निरूपन विविध विधाना । धमा दया दम ६ लता बिताना ॥  
सम जम ७ नियम ८ फूल फल ज्ञाना । हरिपद रति रस ९ वेद भस्त्राना ॥

१—[प्र० : सकल] । द्वि० : सकलिल । तृ०, च० : द्वि० ।

२—[प्र० : रुचि] । द्वि० : वर । तृ०, च० : द्वि० ।

३—प्र० : विचार । द्वि० : प्र० । [तृ०, च० : विचारि] ।

४—प्र० : चारु । द्वि० : प्र० । [तृ०, च० : चारि] ।

५—प्र० : विमल । द्वि० : बीचि । तृ० : द्वि० । च० : द्वि० [(६) : बीच] ।

६—प्र० : दम । द्वि० : प्र० । [तृ० : द्रुम] । च० : प्र० [(८) : द्रुम] ।

७—प्र० : सम जम । द्वि० : प्र० । [तृ० : सज्जम] । च० : प्र० [(८) : सम दम] ।

८—प्र० : नियम । [द्वि० : नेम] । तृ० : प्र० । च० : प्र० [(८) : नेम] ।

९—प्र० : रतिरस । द्वि०, तृ० : प्र० । च० : प्र० [(६) (६अ) : रस वर] ।

श्रीरौ कथा अनेक प्रसंगा । तेइ सुक पिक् बहु वरन बिहंगा ॥  
 दो०—पुलक चाटिका बाग बन सुख सुबिहग बिहार ।  
 माली सुमन सनेह जल सीवन लोचन चारु ॥ ३७ ॥  
 जे गावहि यह चरित सँभारे । तेइ एहि ताल चतुर रखवारे ॥  
 सदा सुनहि सादर नर नारी । तेइ सुर बर मानस अधिकारी ॥  
 अति खल जे बिपई बग कागा । एहि सर निकट न जाहि अभागा ॥  
 संयुक्त भेक सेवार समाना । इहाँ न बिषय कथा रस नाना ॥  
 तेहि कारन आवत हिअँ हारे । कामो काक बलाक बिचारे ॥  
 आवत एहि सर अति कठिनाई । रामकृपा बिनु भाइ न जाई ॥  
 कठिन कुसग कुपथ कराला । तिन्ह के वचन बाध हरि ठ्याला ॥  
 गृह फारज नाना जजाला । तेइ अति दुर्गम सैल बिसांला ॥  
 बन बहु विषम मोह मद माना । नदी कुतर्क भयंकर नाना ॥  
 दो०—जे श्रद्धा सबल रहित नहिं संतन्ह कर साथ ।

तिन्ह कहँ मानस अगम अति जिन्हहिं न प्रिय ग्युनाथ ॥ ३८ ॥  
 जौं करि कष्ट जाइ पुनि कोई । जातहिं नींद जुड़ाई होई ॥  
 जड़ता जाइ विषम उर लागा । गणहुँ न मज्जन पाव अभागा ॥  
 करि न जाइ सर मज्जन पाना । फिरि आवै समेत अभिमाना ॥  
 जौं बहोरि फोड पूछन आवा । सर निंदा करि ताहि बुझावा ॥  
 सकल विघ्न व्यापहिं नहिं तेही । राम सुकृपा बिलोकहिं जेही ॥  
 सोइ सादर सर<sup>१</sup> मज्जनु करई । महा घोर त्रयताप न जाई ॥  
 ते नर यह सर तजहिं न काऊ । जिन्ह केँ रामचरन मल भाऊ<sup>२</sup> ॥  
 जो नहाइ चह एहिं सर भाई । सो सतसग करौ मन लाई ॥  
 अस मानस मानस चप चाही । भइ कबि बुद्धि बिमल अवगाही ॥

१—प्र० : मज्जन सर । दि० : प्र० । तृ० : सर मज्जनु । च० : तृ० [ (८) : सरि  
 . मज्जनु ] ।

२—प्र० : चाऊ । दि० : प्र० [ (३)(५५) : भाऊ ] । तृ० : भाऊ । च० : तृ० ।

मण्ड हृदयै आनंद उछाह । उमगेउ प्रेम प्रमोद प्रवाह ॥  
 चली सुमग कविता सरिता सोर । राम विमल जस जल भरिता सोर ॥  
 सरजू नाम सुमंगल मूला । लोक वेद मत मंजुल कूला ॥  
 नदी पुनीत सुमानस नंदिनि । कलि मल तिन तरु मूल निकंदिनि ॥  
 दो०—श्रोता त्रिविध समाज पुर ग्राम नगर दुहुँ कूल ।

संत सभा अनुपम अवध सकल सुमंगल मूल ॥३६॥  
 राम भगति सुरसरितहि जाई । मिली सुक्रीरति सरजु सुहाई ॥  
 सानुज राम समर जसु पावन । मिलेउ महानदु सोन सुहावन ॥  
 जुग बिच भगति देवधुनि धारा । सोहति सहित सुविरति विचारा ॥  
 त्रिविध ताप त्रासक तिमुहानी । राम सरूप सिधु समुहानी ॥  
 मानस मूल मिली सुरसरिही । सुनत सुजन मन पावन करिही ॥  
 बिच बिच कथा बिचित्र विभागा । जनु सरि तीर तीर बनु वागा ॥  
 उमा महेस बिवाह बराती । ते जलचर अगनित बहु भाँती ॥  
 रघुवर जनम अनंद बघाई । भँवर तरंग मनोहरताई ॥

दो०—बालचरित चहुँ बंधु के बनज विपुल बहु रंग ।

नृप रानी परिजन सुकृत रुधुकर बारि बिहंग ॥४०॥  
 सीअ स्वयंवर कथा सुहाई । सरित मुहावनि सो छवि छाई ॥  
 नदी नाव पटु प्रश्न अनेका । केवट कुसल उतर सविचेका ॥  
 सुनि अनुकथन परसपर होई । पथिक समाज सोह सरि सोई ॥  
 धोर धार भृगुनाथ रिसानो । घाट सुबद्ध राम घर बानी ॥  
 सानुज राम बिवाह उछाह । सो सुम उमग सुखद सब काह ॥  
 कहत सुनत हरपेहि पुलकाही । ते सुकृती मन मुदित नहाही ॥

१—प्र० : सो । दि० : प्र० । [ नृ० : सी ] । च० : प्र० [ (न) : सी ] ।

२—प्र० : सो । दि० : प्र० । [ नृ० : भी ] । च० : प्र० [ (न) : सी ] ।

३—प्र० : सुवध (पदमे में 'सुवद्ध') । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : सुवधु ] । नृ०, च० : प्र० ।

राम तिलक हित मंगल साजा । परब जोग जनु जुरे<sup>१</sup> समाजा ॥  
 कोई कुमति केई केरी । परी जासु फटु बिपति घनेरी ॥  
 दो०—समन अमित उतपात सब भरत चरित जप जाग ।

कनि अघ खल<sup>२</sup> अवगुन कथन ते जल मन बग काग ॥४१॥

कीरति सरित छहैं रितु रूरी । समय सुहागनि पार्वनि भूी ॥  
 हिम हिमसेलसुता सिब व्याह । सिसिर सुखद प्रभु जनम उद्याह ॥  
 बरनब राम बिगह समाजू । सो मुद मंगल मय रितुराजू ॥  
 प्रीपम दुसह राम बन गमनू । पथ कथा खर आतप पगनू ॥  
 बरपा घोर निसाचर रारी । सुरकुल सालि सुमंगलकारी ॥  
 राम राज सुख विनय बढ़ाई । विसद सुखद सोइ सरद सुहाई ॥  
 सती सिरोमनि सिअ गुन गाथा । सोइ गुन अमल अनूपम पाथा ॥  
 भरत सुभाउ सो सीतलताई । सदा एक रस बरनि न जाई ॥  
 दो०—अवलोकनि बोलनि मिलनि प्रीति परसपर हास ।

भाग्य भलि चहुँ भु की जल माधुरी सुभास ॥४२॥  
 आर्गत विनय दीनता मोरी । लघुता ललित सुबारि न खोरी<sup>३</sup> ॥  
 अदभुत सलिल सुनत गुनकारी । आस पिआस मनोमल हारी ॥  
 राम सुपेसहि पोषत पानी । हरत सकल कलि कलुष गलाती ॥  
 भव अम सोपक तोषक तोषा । समन दुरित दुख दारिद दोषा ॥  
 काम कोह मद मोह नसावन । विमल बिबेक बिशग बढ़ावन ॥  
 सादर मउजन पान किए तैं । मित्रहि<sup>४</sup> पाप परिताप हिए तैं ॥  
 जिन्ह एहि बारि न मानस घोए । ते कायर कलिकाल बिगोए ॥  
 तृपित निरखि रवि कर भव बारी । फिरिहि मृग जिमि जीव दुखारी ॥

१—प्र० जुऐ। द्वि० नृ० प्र०। च० जुर ।

२—प्र० खल। द्वि० प्र०। (५ अ) अघरल । नृ० प्र०। ३० दघ न ।

३—प्र० नखोरी। द्वि० प्र०। (तु० नखोरी) । च० प्र०। ( ) बहोरा ।

४—[ प्र० मित्रि ] । द्वि० मित्रि । नृ० ३० द्वि०

दो०—मति अनुहारि सुवारि गुन गन गनि मन अन्हवाइ ।

सुमिरि भवानी संकरहि कह कवि कथा सुहाइ ॥

अब रघुपति पद पंकरह हिअँ घरि पाइ प्रसाद ।

कहौ जुगल मुनिबर्ज कर मिलन सुमग सवाद ॥४३॥

भरद्वाज मुनि बसहि प्रयागा । निन्हाह राम पद अनि अनुसागा ॥

तापस सम दम दया निधाना । परमारथ पथ परम सुजाना ॥

माघ मकरगत रवि जब होई । तीरथपतिहि आव सब कोई ॥

देव दनुज कितर नर श्रेनी । सादर मज्जहि सकल त्रिवेनी ॥

पूजहि माधव पद जलजाता । परसि अपयबटु हरपहि गाता ॥

भरद्वाज आश्रम अति पावन । परम रम्य मुनिवर मन भावन ॥

तहाँ होइ मुनि रिपय समाजा । जाहिं जे मज्जन तीरथराजा ॥

मज्जहिं प्रात समेत उद्याहा । कहहिं परसपर हरि गुन गाहा ॥

दो०—ब्रह्म निरूपन धर्म विधि बरनहिं तत्त्व विभाग ।

कहहिं भगति भगवंत कै सजुत ज्ञान विराग ॥४४॥

एहि प्रकार भरि माघ नहाही । पुनिसय निज निज आश्रम जाही ॥

प्रति संवन अति होइ अनदा । मकर मज्जि गवनहिं मुनिवृंदा ॥

एक बार भरि मकर नहाए । सब मुनीस आश्रमन्ह सिधाए ॥

जागबलिक मुनि परम विवेकी । भरद्वाज राखे पद टेकी ॥

सादर चरन सरोज पखारे । अति पुनीत आसन बैठारे ॥

करि पूजा मुनि मुजसु बखानी । बोले अति पुनीत मृदु बानी ॥

नाथ एक संसउ बड़ मोरें । करगत वेदतत्त्व सबु तोरें ॥

कहत सो मोहिं लागत मय लाजा । जौं न कहौं बड़ होइ अकाजा ॥

दो०—सत कहहिं असि नीति प्रसु श्रुति पुरान मुनि गाव ।

होइ न बिमल बिके उर गुर सन किए दुराव ॥४५॥



अस विचारि प्रगटो निज मोह । हरहु नाथ करि जन पर द्योह ॥  
 राम नाम कर अमित प्रभावा । सन पुरान उपनिषद् गात्र ॥  
 सतत जपत सभु अबिनासी । सिव भगवान ज्ञान गुन रासी ॥  
 आकर चारि जीव जग अहहीं । काभी भरत परम पद लहहीं ॥  
 सोपि राम महिमा मुनिगाथा । सिव उपदेसु करत करि दाया ॥  
 रामु कउन प्रभु पूर्वी तोहीं । रहिअ बुझाई कृपानिधि मोहीं ॥  
 एक राम अवधेसकुमारा । निन्ह कर चरित विदित संसारा ॥  
 नारि बिरह-दुखु लहेउ अपारा । भएउ<sup>१</sup> रोष रन रावन मारा ॥  
 दो०—प्रभु सोइ रामु कि द्रव्य कोउ जाहि जयत त्रिपुरारि ।

सत्य धाम सर्वज्ञ तुम्ह कहहु विवेकु विचारि ॥४६॥  
 जैसें मिटे मोर<sup>२</sup> अमु मारी । कहहु सो कथा नाथ विस्तारी ॥  
 जागबलिक घोले मुसुकाई<sup>३</sup> । तुम्हहिं विदित रघुपति प्रभुताई ॥  
 राम भगत तुम्ह कम मन बानी । चतुराई— तुम्हारि मै जानी ॥  
 चाहहु सुने राम गुन गूढ़ा । कीन्हिहु प्रश्न मनहुं अति मूढ़ा ॥  
 तात सुनहु सादर मनु लाई । कहौ राम के कथा सुहाई ॥  
 महा मोहु महिपेसु बिसाला । रामकथा कालिका कराला ॥  
 रामकथा ससि किरन समाना । सत चकोर करहिं जेहि पाना ॥  
 ऐसेइ ससय कीन्ह भवानी । महादेव तब कहा बखानी ॥  
 दो०—कहौ सो मति अनुहारि अन उभा सभु सवाद ।

भएउ समय जेहि हेतु जेहि<sup>४</sup> सुनु मुनि मिटहि<sup>५</sup> विषाद ॥४७॥  
 एक बार त्रेता जुग माहीं । सभु गए कुमज रिपि पाहीं ॥

१—प्र० मर्ण । दि० भएउ तु०, च० । ३० ।

२—प्र० मोह । दि०, तु० प्र० । ३० मोर

३—अ० मुसुकाई [ (२) मुसुकार ] । दि०, तु०, च० प्र० ।

४—[प्र० कर ] । [ दि० सो ] । तु० बरि । च० नृ० ।

५—प्र० मिटि । दि० प्र० । तु०, ३० प्र० [ (६) मिटिदि ।

सग सती जगजननि भवानो । पूजे रिपि अखिलेस्वर जानी ॥  
 रामकथा मुनिवर्ज बखानी । सुनो महेस परम सुखु मानी ॥  
 रिपि पूछी हरि भगति सुहाई । कही संभु अधिकारी पाई ॥  
 कहत सुनत रघुपति गुन गाथा । कछु दिन तहां रहे गिरिनाथा ॥  
 मुनि सन विद्या-मांगि त्रिपुरारी । चले भवन सँग दच्छकुमारी ॥  
 तेहि अवसर भजन महि भारा । हरि रघुवस लीन्ह अवतारा ॥  
 पिता वचन तजि राजु उदासी । दहकवन बिचरत अविनासी ॥

दो०--हृदय विचारत जात हर केहि बिधि दरसनु हीइ ।

गुपुत<sup>१</sup> रूप अवतरेउ प्रभु गएँ जान सब कोइ ॥

सो०--सकर, उर अति छोभु सती न जानइ मरमु सोइ ।

। तुलसी दरसन लोभु मन डरु लोचन लालची ॥४८॥

रावन मरनु मनुज कर जौंचा । प्रभु बिधि वचन कीन्ह चह सौंचा ॥  
 जौ नहि जाउँ रहै पछतावा । करत विचारु न बनत बनावा ॥  
 एहि बिधि भए सोच बस ईसा । तेहीं समय जाइ दससीसा ॥  
 लीन्ह नीच मारीचहि सगा । भएउ तुरत सोइ कपट कुरंगा ॥  
 करि छलु मूढ हरी बैदेही । प्रभु प्रभाउ तस विदित न तेही ॥  
 मृग वधि बंधु सहित प्रभु<sup>२</sup> आए । आश्रमु देखि नयन जलु छाप ॥  
 बिरह विकल नर इव<sup>३</sup> रघुराई । खोजत विपिन फिरत दोउ भाई ॥  
 कबहूँ जोग बियांग न जाकैं । देखा प्रगट बिरह<sup>४</sup> दुखु ताकैं ॥

दो०--अति विचित्र रघुपति चरित जानहि परम सुजान ।

जे मतिमद विमोह बस हृदय धरहि कछु आन ॥४९॥

१—प्र० . गुपुत । [ दि० : गुप्त ] । वृ० . प्र० । [ च० : गुप्त ] ।

२—प्र० . प्रभु । दि० , वृ० : प्र० । च० . प्र० [ (६) (६अ) : हरि ।

३—प्र० : इव नर । दि० : प्र० [ (४) (५) : (५अ)नर इव ] । वृ० : नर इव । च० : वृत्त

४—प्र० : दुसरी दि० , वृ० : प्र० । च० : बिरह ।

संभु समय तेहि रामहि देखा । उपजा हिय अति१ हरपु विसेखा ॥  
 भरि लोचन छवि सिंधु निहारी । कुसमउ जानि न कीन्हि चिन्हारो ॥  
 जय सच्चिदानंद जगपावन । अस काह चलेउ मनोज नसावन ॥  
 चले जात सिव सती समेता । पुनि पुनि पुलकत कृपानिकेता ॥  
 सती सो दसा संभु कै देखी । उर उपजा संदेहु विसेखी ॥  
 संकरु जगतबंध जगदीसा । सुर नर मुनि सब नायहि२ सीसा ॥  
 तिन्ह नृपसुतहि कीन्ह परनामा । कहि सच्चिदानंद परधामा ॥  
 भए मगन छवि तामु विलोकी । अजहुँ प्रीति उर रहति न रोकी ॥

दो०—ब्रह्म जो व्यापक बिरज अज अकल अनीह अभेद ।

सो कि देह धरि होइ नर जाहि न जानत वेद ॥५०॥

विष्णु जो सुर हित नर तनु धारी । सोउ सर्वज्ञ जथा त्रिपुरारी ॥  
 खोजै सो कि अज्ञ इव नारी । ज्ञान धाम श्रीपति असुरारी ॥  
 संभु गिरा पुनि मृषा न होई । सिव सर्वज्ञ जान सबु कोई ॥  
 अस संसय मन भएउ अपारा । होइ न हृदय प्रबोध प्रचारा ॥  
 जद्यपि प्रगट न कहेउ भवानी । हर अंतरजामी सब जानी ॥  
 सुनहि सती तव नारि सुमाऊ । संसय अस न धरिअ तन३ काऊ ॥  
 जासु कथा कुंभज रिपि गाई । भगति जासु मैं मुनिहि सुनाई ॥  
 सोइ मम इष्टदेव रघुबीरा । सेवत जाहि सदा मुनि धीरा ॥

छं०—मुनि धीर जोगी सिद्ध संतत विमल मन जेहि ध्यावही ।

कहि नेति निगम पुगन आगम जासु कीरति गावहीं ॥

सोइ राम व्यापक ब्रह्म भुवन निधाय पति मायाधनो ।

अवतरेउ अपने भगत हित निज तंत्र नित रघुकुलमनी ॥

१—प्र० ॥ तेहि । दि० : छति । नृ०, च० : दि० ।

२—प्र० : नाहि । दि०, नृ० : प्र० । : च० प्र० [ (३) (६अ) : नावनी ] ।

३—प्र० : मन । दि० : प्र० [ (०) : उर ] । [ नृ०, च० : मन ] ।

सो०—लाग न उर उपदेसु जर्दाप कहेउ सिव बार बहु ।

बोले बिहँसि महेसु हरि माया बलु जानि जिय ॥५१॥

जौ तुम्हरे मन अति सदेह । तौ किन जाइ परीछा लेह ॥

तब लगि बैठ अहौ बट छाहीं । जप लगि तुम्ह देहहुं मोहि पाहीं ॥

जैसे जाइ मोह भ्रम भारी । करेहु सो जननु त्रिवेकु विचारी ॥

चली सती सिव आयसु पाई । काइ? विचारु कगै का भाई ॥

इहाँ? समु अस मन अनुमाना । दच्छसुता कहूँ नहिं कल्याणा ॥

मोरेहु कहें न ससय जाहीं । बिधि बिपरीत भलाई नाहीं ॥

होइहि सोइ जो राम रचि राखा । को करि? तर्क बढ़ावै साखा ॥

अस कहि लगे जपन<sup>४</sup> हरि नाम । गई सती जहँ प्रभु सुख धाम ॥

दो०—पुनि पुनि हृदय विचारु करि धरि सीता कर रूप ।

आगे होइ चली पथ तेहि जेहि आवत नरमूप ॥५२॥

लखिमन दीख उमा कृत वेपा । चकित भए भ्रम हृदय बिसेपा ॥

कहि न सकन कह्यु अति गभीरा । प्रभु प्रमाउ जानन मतिधीरा ॥

सती कपटु जानेउ सुरस्वामी । सक्दरसी सब अतरजामी ॥

सुमिरत जाहि मिटै अज्ञाना । सोइ सर्वज्ञ राम भगवाना ॥

सती कीन्ह चह तहौ दुराऊ । देखहु नारि सुभाव प्रमाऊ ॥

निज माया बलु हृदय बखानी । बोले बिहसि राम मृदु बानी ॥

जोरि पानि प्रभु कीन्ह पनाम । पिता समेत लीन्ह निज<sup>५</sup> नाम ॥

कहेउ बहोरि कहाँ वृषकेतू । विपिन अकेलि फिरहु केहि हेतू ॥

दो०—राम बचन मृदु गूढ़ सुनि उपजा अति सकोचु ।

सनी समीत महेस पहि चली हृदय बड़ सोचु ॥५३॥

१—प्र० : कर । दि०, तृ० : प्र० । च० : कहि [ (न) : जरे ] ।

२—प्र० : इहाँ । दि० : प्र० । [ तृ० : उहाँ ] । च० : प्र० ।

३—[ प्र० : कै ] । दि० : करि । तृ०, च० : दि० ।

४—प्र० : जपन लगे । दि०, तृ० : प्र० । च० : लगे जपन ।

५—प्र० : हरि । दि० : प्र० [ (४) (७) : निज ] । तृ० : निज । च० : तृ० ।

मै संकर कर कहा न माना । निज अज्ञानु राम पर आना ॥  
जाइ उतरु अब देइहौ काहा । उर उपजा अति दारन दाहा ॥  
जाना राम सती दुख पावा । निज प्रमाउ कछु प्रगटि जनाग ॥  
सती दीख कौतुकु मग जाता । आगें राम सहित श्री आता ॥  
फिरि चितवा पाछें प्रभु देखा । सहित बहु सिअ सुदर बेला ॥  
जहँ चितवहि तहँ प्रभु आसीना । सेवहि सिद्ध मुनीस प्रवीना ॥  
देखे सिध त्रिधि विष्णु अनेका । अमित प्रमाउ एक तें पका ॥  
वदत चरन करत प्रभु सेवा । निविध बेप देखे सब देवा ॥  
दो०-सती विधात्री इदिरा देखी अमित अनूप ।

जेहि जेहि बेप अजादि सुर तेहि तेहि तन अनुरूप ॥५४॥  
देखे जहँ तहँ रघुपति जेते । सक्तिन्ह सहित सकल सुर तेते ॥  
जीव चराचर जे ससारा । देखे सकल अनेक प्रकारा ॥  
पूजहि प्रभुहि देव बहु बेपा । राम रूप दूसर नहि देला ॥  
अवलोकै रघुपति बहुतेरे । सीता सहित न बेप घनेरे ॥  
सोइ रघुपति सोइ लक्ष्मिन सीता । देखि सती अति भई समीता ॥  
हृदय कप तन मुधि कछु नाही । नयन मूँदि बेठी मग माहीं ॥  
बहुरि विलोकै नयन उघारी । कछु न दीख तहँ दच्छुमारी ॥  
पुनि पुनि नाइ रामपद सीसा । चली तहाँ जहँ रहे गिरीसा ॥  
दो०-गई समीप महेस तन हँसि पूछी दुसलात ।

लीन्हि परीक्षा कवन बिधि कहहु सत्य सन यात ॥५५॥  
सती समुक्ति रघुनीर प्रमाऊ । मयस सिब सन कीन्ह दुराऊ ॥  
कछु न परीक्षा लीन्हि गुसाई । कीन्ह प्रनामु तुम्हारिहि नाई ॥  
जो तुम्ह कहा सो मूषा न होई । मोरे मन प्रतीति अति सोई ॥  
तब संकर देखेउ घरि घ्याना । सती जो कीन्ह चरित सब जाना ॥

बहुरि राम मायहि सिरु नावा । प्रेरि सतिहि जेहिं भूँठ कहावा ॥  
हरि इच्छा भावी बलवाना । हृदय विचारत संभु सुजाना ॥  
सती कीन्ह सीता कर बेपा । सिव उर भएउ बिपाद बिसेपा ॥  
जौ अव करौ सती सन प्रीती । मिटै भगति पथु होइ अनीती ॥  
दो०—परम प्रेम नहिं जाइ तजि१ किए प्रेम बड़ पापु ।

प्रगटि न कहत महेसु कलु हृदय अधिक सतापु ॥५६॥  
सय संकर प्रभु पद सिरु नावा । सुमिरत रामु हृदय अस आवा ॥  
एहि तन सतिहि भेट मोहिं नाहीं । सिव संकल्पु कीन्ह मन माहीं ॥  
अस विचारि सकरु मतिधीरा । चले भवन सुमिरत रघुवीरा ॥  
चलत गगन भै गिरा सुहाई । जय महेस भलि भगति द्वाई ॥  
अस पन तुम्ह बिनु करै को आना । राम भगत समरथ भगवाना ॥  
सुनि नमगिरा सती उर सोचा । पूछा सिवहि समेत सकोंचा ॥  
कीन्ह कवन पन कहहु कृपाला । सत्यधाम प्रभु दीनदयाला ॥  
जदपि सती पूछा बहु भौंती । तदपि न कहेउ त्रिपुरमाराती ॥  
दो०—सती हृदय अनुमान किअ सबु जानेउ सर्वज्ञ ।

कीन्ह कपटु मैं सभु सन नारि सहज जड़ अज ॥  
सो०—जलु पय सरिस बिकाइ देखहु प्रीति कि रीति भलि ।

बिलग होइ२ रसु जाइ कपटु खटाई परत ही३ ॥५७॥  
हृदय सोचु समुझत निज करनी । चिंता अमित जाइ नहिं बरनी ॥  
कृपासिंधु सिव परम अगाधा । प्रगट न कहेउ मोर अपराधा ॥  
सकर रुख अवलोकि भवानी । प्रभु मोहिं तजेउ हृदय अकुलानी ॥  
निज अघ समुझि न कलु कहि जाई । तपै अवाँ इव उर अधिकारी ॥

१—प्र० : प्रेम तनि जाइ नहि । दि०, नृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) (६अ) : पुनो न जाइ तनि ] ।

२—प्र० : होन । दि० : होइ [ (५अ) : होन ] । नृ०, च० : दि० ।

३—प्र० : ही । दि०, नृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) (६अ) : पुनि ] ।

सतिहि ससोच जानि बृषकेतू । कही कथा सुंदर सुख हेतू ॥  
 बरनत पंथ विविध इतिहासा । बिस्वनाथ पहुँचे कैलासा ॥  
 तहँ पुनि समु समुझि पन आपन । बँठे बट तर फरि कमलासन ॥  
 संकर सहज सरूपु सँगारा । लागि समाधि अखड अपारा ॥  
 दो०—सती बसहि कैलास तब अधिक सोचु मन माहि ।

मरमु न कोऊ जान कलु जुग सम दिवस सिराहि ॥५८॥

नित नव सोचु सती उर भारा । कब जैहौं दुख सागर पारा ॥  
 मैं जो कीन्ह रघुपति अपमाना । पुनि पति बचन मृपा करि जाना ॥  
 सो कलु मोहिं विधाता दीन्हा । जो कलु उचित रहा सोइ कीन्हा ॥  
 अब बिधि अस बूझिअ नहिं तोहीं । संकर विमुख जिआवसि मोहीं ॥  
 कहि न जाइ कलु हृदय गलानी । मन महुँ रामहिं सुमिरि सयानी ॥  
 जौं प्रभु दीनदयालु कहावा । आरति हरन चेद जसु गावा ॥  
 तौ मैं बिनय करौ कर जोरी । छूटी बेगि देह यह मोरी ॥  
 जौ मोरें सिव चरन सनेह । मन क्रम बचन सत्य ब्रतु प्छ ॥  
 दो०—तौ सबदरसी सुनिअ प्रभु करौ सो बेगि उपाइ ।

होइ मरनु जेहि बिनहिं अम दुसह बिपति बिहाइ ॥५९॥  
 एहि बिधि दुखित प्रजेसकुमारी । अकथनीय दारुन दुखु भारी ॥  
 बीते संवत सहस सतासी । तजौ समाधि मभु अविनासी ॥  
 राम नाम सिव सुमिरन लागे । जानेउँ सती जगतपति जागे ॥  
 जाइ संभु पद बंदनु कीन्हा । सनमुख संकर आसनु दीन्हा ॥  
 लगे कहन हरिकथा रसाला । दच्छ प्रजेस भए तेहि काला ॥  
 देखा बिधि बिचारि सब लायक । दच्छहिं कीन्ह प्रजापति नायक ॥  
 बड़ अधिकार दच्छ जब पावा । अति अमिमान हृदयँ तब आवा ॥  
 नहिं कोउ अस जनमा जग माहीं । प्रभुता पाइ जाहि मद नाही ॥

दो०—दृच्छ लिप मुनि बोलि सब करन लगे बड़ जाग ।

नेवते सादर सकल सुर जे पावत मय भाग ॥६०॥

किन्नर नाग सिद्ध गधर्वा । बबुन्ह समेत चले सुर सर्वा ॥

विष्णु विरंचि महेसु विहाई । चले सकल सुर जान बनाई ॥

सती विलोके वशेम विमाना । जात चले सुंदर विधि नाना ॥

सुरसुंदरी कार्हि कल गाना । सुनत अवन छूटहि मुनि ध्याना ॥

पूछेउ तब सिब कहेउ बखानी । पिता जज्ञ मुनि कछु हरषानी ॥

जौ महेसु मोहिं आयसु देहीं । कछु दिन जाइ रहौ मिस पहीं ॥

पति परित्याग हृदय दुखु भारी । कहै न निज अपराध बिचारी ॥

बोली सती मनोहर बानी । मय सकोच प्रेम रस सानी ॥

दो०—पिता भवन उत्सव परम जौ प्रसु आयसु होइ ।

तौ मैं जाउँ कृपायतन सादर देखन सोइ ॥६१॥

कहेहु नौक मोरेहुं मन भावा । यह अनुचित नहिं नेवत पठावा ॥

दृच्छ सकल निज सुता बोलाई । हमरें बयर तुन्हौ बिसराई ॥

ब्रह्मसर्मा हम-सन दुखु माना । तेहि तैं अजहुं करहि अपमाना ॥

जौ विनु बोले जाहु भवानी । रहै न सीलु सनेहु न कानी ॥

जदपि मित्र प्रसु पितु गुर गेहा । जाइअ विनु बोलेहु न सँदेहा ॥

तदपि विरोध मान जहँ कोई । तहाँ गएँ कल्याण न होई ॥

भौति अनेक संसु समुझावा । भावी बस न जानु उर आवा ॥

कह प्रसु जाहु जो विनहिं बुलाएँ । नहिं भलि बात हमारे भाएँ ॥

दो०—कहि देखा हर अतन बहु रहै न दृच्छकुमारि ।

दिप मुख्य गन संग तव बिदा कीन्ह त्रिपुरारि ॥६२॥

पिता भजन जब गई भवानी । दृच्छ त्रास काहु न सनमानी ॥

१—प्र० : कृपायतन । दि० : कृपायतन । ल०, च० : दि० ।

१—प्र०, हमारेदि । दि० : प्र० [ (१५) : हमारे ] । ल०, च० : दि० ।



सादर भलेहि मिनी एक माता । भगनी मिली बहुत मुसुकाता ॥  
 दच्छ न कछु पूछी कुसलाता । सतिहि बिलोकि जरे सब गाता ॥  
 सती जाइ देखेउ तब जागा । कतहुँ न दीख समु कर भागा ॥  
 तब चित चढेउ जो सकर कहेऊ । प्रभु अपमान समुझि उर दहेऊ ॥  
 पाबिल दुख न हृदय अस १ व्याप । जस यह भएउ महा परितापा ॥  
 जद्यपि जग दारुन दुख नाना । सब तें कठिन जाति अपमाना ॥  
 समुझि सो सतिहि भएउ अतिक्रोधा । बहु विधि जननी कीन्ह प्रबोधा ॥  
 दो०-सिय अपमानु न जाइ सहि हृदय न होइ प्रबोध ।

सकल समहि दृष्टि हटकि तब बोली बचन सकोध ॥६३॥  
 सुनहु समासद सकल मुनिदा । कही सुनी जिन्ह सकर निंदा ॥  
 सो फलु तुरत लहय सब काहें । भली भाँति पछिताव पिताहैं ॥  
 सत समु श्रीपति अपवादा । सुनिअ जहाँ तहँ असि मरजादा ॥  
 काटिअ १ तासु जीभ जो बसाई । अवन मूँदि न त चलिअ पराई ॥  
 जगदातमा महेसु पुरारी । जगत जनक सब के हितकारी ॥  
 पित्रा मदमति निंदत तेही । दच्छ सुक संभव यह देही ॥  
 तजिहौं तुरत देह तेहि हेतू । उर धरि चंद्रमौलि दृषकेतू ॥  
 अस पहि जोग अगिनितनु जारा । भएउ सकल मय हाहाकारा ॥  
 दो०-सती मरनु सुनि संभुगन लगे करन मय खीस ।

जज्ञ बिषंस बिलोकि भृगु रच्छा कीन्ह मुनीस ॥६४॥  
 सगानार सब संहर पाए । बीरभद्रु करि कोपु पठाए ॥  
 जज्ञ बिषंस जाइ तिन्ह कीन्हा । सकलसुगन्ध १ विधिवन फलुदीन्हा ॥  
 भै जग विदित दच्छगति सोई । जसि कछु संभु विमूख के होई ॥

१-प्र० ॥ अम हृदय न । दि०, वृ० : प्र० । च० : न हृदय अम ।

२-प्र० : पाणिप । [ दि० : बादिप ] । मृ०, च० : प्र० ।

३-[प्र० : गुणिप ] । दि० : सुगन्ध । मृ०, च० : दि० ।

यह इतिहास सकल जगजानी । तौं मै संक्षेप बखानी ॥  
 सती मरठ हरि सन बरु मौंगा । जनम जनम सिव पद अनुरागा ॥  
 तेहि कारन हिमगिरि गृह जाई । जनभी पारवती तनु पाई ॥  
 जब तें उमा सैन गृह जाई । सकल सिद्धि संपति तहँ छाई ॥  
 जहँ तहँ मुनिन्ह सुआथमु कीन्हे । उचित वास हिमभूषर दीन्हे ॥  
 दो०—सदा सुमन फल सहित सब द्रुम नव नाना जाति ।

प्रगटी सुंदर सैल पर मनिआकर बहु भौंति ॥ ६५ ॥  
 सरिता सब पुनीत जलु बहहीं । स्वग मृग मधुप सुखी सब रहहीं ॥  
 सहज बरु सब जीवन्ह<sup>१</sup> त्यागा । गिरि पर सकल करहि अनुरागा ॥  
 सोह सैल गिरिजा गृह आएँ । जिमि जनु राम भगति के पाएँ ॥  
 नित नूतन मंगल गृह तासू । ब्रह्मादिक गावहिं जसु जासू ॥  
 नारद समाचार सब पाए । कौतुक हीं गिरि गेह सिघाए ॥  
 सैलराज बड़ आदर कीन्हा । पद पधारि बर<sup>२</sup> आसनु दीन्हा ॥  
 नारि सहित मुनिपद सिरु नावा । चरन सलिल सबु<sup>३</sup> भवनु सिचावा ॥  
 निज सौभाग्य बहुत विधि<sup>४</sup> बरना । सुना बोलि मेली मुनि चरना ॥  
 दो०—त्रिकालज्ञ सर्वज्ञ तुम्ह गति सर्वत्र तुम्हारि ।

कहहु सुता के दोष गुन मुनिवर हृदय विचारि ॥ ६६ ॥  
 कह मुनि विहसि गूड़ मृदु बानी । सुता तुम्हारि सकल गुनखानी ॥  
 सुंदर महज सुसील सयानी । नाम उमा आचिका भवानी ॥  
 सब लच्छन संपन्न कुमारी । होइहि सतत पिअहि पिआरी ॥  
 सदा अचल एहि कर अहिवाता । इहि तें जसु पैहहिं पितु माता ॥  
 होइहि पूज्य सकल जग माहीं । एहि सेवत कछु दुर्लभ नाही ॥

१—प्र० : जीवन्ह । [ दि० : जीवन ] । नृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) : जीवर ] ।

२—प्र० : वर । दि० : वर [ (५४) : वर ] नृ०, च० : दि० ।

३—प्र० : मनु [ (१) में शब्द स्या दुष्ठा है ] । दि०, नृ०, च० : प्र० ।

४—प्र० : विधि । दि०, नृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) (६४) : गिरि ] ।

एहि कर नामु सुमिरि संसारा । त्रिय<sup>१</sup>चंद्रिहहि पतिव्रत असि धारा ॥  
 सैल सुलच्छन सुता तुम्हारी । सुनहु जे<sup>२</sup> अब अवगुन दुइ चारी ॥  
 अगुन अमान मातु पितु हीना । उदासीन सब संसय छांन ॥  
 दो०—जोगी जटिल अकाम मन नगन अमंगल बेप ।

अस स्वामी एहि कहँ मिलिहि परी हस्त असि रेख ॥६७॥  
 मुनि मुनि गिरा सत्य जिअ जानी । दुखु दंपतिहि उमा हरपानी ॥  
 नारद हूँ यह भेदु न जाना । दसा एक समुझ्य बिलगाना ॥  
 सकल सखी गिरिजा गिरि मैना । पुलक सरीर भरे जल नैना ॥  
 होइ न मृषा देवरिषि भाखा । उमा सो बचनु हृदय धरि राखा ॥  
 उपजेउ सिव पद कमल सनेह । मिलन कठिन भा मन<sup>३</sup> संदेह ॥  
 जानि कुअवसरु प्रीति दुराई । सखि उछंग बैठी<sup>४</sup> पुनि जाई ॥  
 झूठि न होइ देवरिषि बानी । सोचहि दंपति सखी सयानी ॥  
 उर धरि धीर कहै गिरिराज । कहहु नाथ का करिअ उपाज ॥  
 दो०—कह मुनीस हिमवंत सुनु जो विधि लिखा लिलार ।

देव दनुज नर नाग मुनि कोउ न मेटनिहार ॥६८॥  
 तदपि एक मै कहौ उपाई । होइ करै जौ दैउ सहाई ॥  
 जस बरु मैं बरनेउँ तुम्ह पाहीं । मिलिहि उमहि तस संसय नाही ॥  
 जे जे घर के दोष बखाने । ते सब सिव पहिं मै अनुमाने ॥  
 जौ बिवाहु संकर सन होई । दोषी गुन सम कह<sup>५</sup> सबु कोई ॥  
 जौ अहि सेज सयन हरि करहीं । बुध कलु तिन्हकर दोषु न धरहीं ॥

१—प्र० : त्रिय । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : त्रिअ ] । [ तृ० : त्रिअ ] । च० : प्र०  
 [ (८) : त्रिअ ]

२—प्र० : जो । दि० : प्र० । तृ० : जे । च० : तृ० ।

३—प्र० : भा मन । दि० : प्र० [ (१अ) : मन भा ] । [ तृ० : मन भा ] । च० : प्र०  
 [ (६) (६अ) : मन भा ] ।

४—प्र० : मत्ती उछंग बैठी । दि०, तृ० : प्र० । च० : सखि उछंग बैठी ।

५—[ प्र० : समान ] । दि० : सम कह । तृ०, च० : दि० ।

नु कृपानु सर्व रस खाहीं । तिन्ह कहैं मंद कहत कोउ नाही ॥  
मथरु अमुम सलिल सब बहहीं । सुगसरि कोउ अपुनीत न कहहीं ॥  
मरथ कहूँ नहिं दोषु गोसाईं । रवि पावक सुरसरि की नाई ॥  
१०—जौ अस हिसिपा करहि नर जड़ २ विवेक अमिमान ।

परहि कलष मरि नरक महुँ जीव कि ईस समान ॥ ६६ ॥  
सरि जल कृत बारुनि जाना । कबहुँ न सत करहिं तेहि पाना ॥  
सरि मिलें सो पावन जैमें । ईस अनीसहि अंतरु तैसें ॥  
सु सहज समरथ भगवाना । येहि विवाहें सब विधि कल्याना ॥  
गराथ पै अहहिं महेसू । आसुतोष पुनि किऐं कलेसू ॥  
१ तपु करै कुमारि तुम्हारी । भाविउ मेटि सकहिं त्रिपुरारी ॥  
यपि बर अनेक जग माहीं । येहि कहैं सिव तजि दूसर नाही ॥  
रथयक प्रनतारति मंजन । कृपासिधु सेवक मनरंजन ॥  
च्छित फल विनु सिव अवराधे । लहिअ न कोटि जोग जप साधे ॥  
१०—अस कहि नारद सुमिरि हरि गिरिजहि दीन्हि असीस ।

होइहि येहि कल्यान अव १ समय तजहु गिरीम ॥ ७० ॥  
हि अस ब्रह्ममूयन मुनि गएऊ । आगिल चरित सुनहु जम गएऊ ॥  
निहि एकात पाइ कह मैना । नाथ न मै समुक्के ४ मुनि बैना ॥  
१ धरु वरु कुलु होइ अनूपा । करिअ विवाहु सुता अनुरूपा ॥  
त कन्या वरु रहौ कुशौरी । कंन उमा मम प्रान पिथारी ॥  
१ न मिनिहि बरु गिरिजहि जोगू । गिरि जड़ सहज कहिहिं सबु लोगू ॥  
१ विचारि पति करहु विवाह । जेहि न बहोरि होइ उर दाह ॥

—प्र०: वर । दि०: प्र० [(१): वई] । १०: कहूँ । च०: वृ० ।

—प्र०: जी सैसदि इमिवा करहिं नर । दि०: जौ अम इमिवा करहिं नर जड़ ।  
वृ०, च०: दि० ।

—प्र०: अर कन्यान सर । दि०: प्र० । १०: यदि कल्यान अव । च०: वृ० ।

—प्र०: वृक्के । दि०: समुक्के । [वृ०: समुगड] । च०: दि० ।

अस कहि परी चरन धर सीसा । बोले सहित सनेह गिरीमा ॥  
 बरु पावक प्रगटे ससि माहीं । नारद बचनु अन्यथा नाहीं ॥  
 दो०—प्रिया सोचु परिहरहु सब<sup>१</sup> सुमिरहु श्रीमगवान ।  
 पारवती<sup>२</sup> निरमपउ जेहि सोइ करिहि कल्याण ॥७१॥  
 अब जौं तुम्हहि सुता पर नेह । तौ अस जाइ सिखावनु देह ॥  
 करइ सो तपु जेहि मिलहि महेसू । आन उपाइ न मिटिहि कलेसू ॥  
 नारद बचन सगर्भ सहेतू । सुंदर सब गुन निधि वृषकेतू ॥  
 अस बिचारि तुम्ह<sup>३</sup> तजहु असका । सबहि भौंति सकरु अक्लंका ॥  
 सुनि पति बचन हरषि मन माहीं । गई सुरत उठि गिरिजा पाही ॥  
 उमहि बिलोकि नयन भरे बारी । सहित सनेह गोद बैठारी ॥  
 बारहि बार लेति उर लाई । गदगद कठ न कछु कहि जाई ॥  
 जगत मातु सर्वज्ञ भवानी । मातु सुखद बोली मृदु बानी ॥  
 दो०—सुनहि मातु मैं दीख अस सपन सुनावौ तोहि ।  
 सुंदर गौर सुविप्रवर अस उपदेसेउ मोहि ॥७२॥  
 करहि जाइ तपु सैलकुमारी । नारद कहा सो सत्य बिचारी ॥  
 मातु पितहि पुनि येह मत भावा । तपु सुखप्रद दुख दोष नभावा ॥  
 तप बल रचै प्रपंचु बिधाता । तप बल बिष्णु सकल जगन्नाता ॥  
 तप बल संभु करहि संघारा । तपबल सेपु धरै महि भारा ॥  
 तप अघार सब सृष्टि भवानी । करहि जाइ तपु अस जिअँ जानी ॥  
 सुनत बचन बिसमित महतारी । सपन सुनापउ गिरिहि हँकारी ॥  
 मातु पितहि बहु विधि समुझाई । चली उमा तप हित हरपाई ॥  
 प्रिय परिवार पिता अरु माता । भए<sup>४</sup> बिकल मुख आव न बाता ॥

१—प्र०: अब । दि०: सब [ (५अ): अब ] । १०, च०: दि० ।

२—प्र०: पारवती । दि०: प्र० [ (३)(४) ५: पारवतिदि ] । १०: प्र० । च०: प्र०  
 [ (६) (६अ): पारवतिदि ] ।

३—प्र०: सब । दि०: तुम्ह [ (५अ): सब ] । १०, च०: दि० ।

४—प्र०: भएउ । दि०: भए [ (५अ): भएउ ] । १०, च०: दि० ।

दो०—वेदसिरा मुनि आइ तब सबहि कहा समुझाइ ।  
 पारवती महिमा सुनत रहे प्रबोधहि पाइ ॥७३॥  
 उर धरि उमा प्राणपति चरन । आइ बिपिन लागी तपु करना ॥  
 अति सुकुमार न तनु तप जोगू । पति पद सुमिरि तजे सनु भोगू ॥  
 नित नच चरन उपज अनुरागा । बिसरी देह तपहि मनु लागा ॥  
 संवत सहस मूल फल खाए । सागु खाइ सत वरष गँवाए ॥  
 कछु दिन भोजनु बारि बतासा । किए कठिन कछु दिन उपवासा ॥  
 बेलपाति<sup>१</sup> महि परै सुखाई । तीनि सहस सबत सोइ खाई ॥  
 पुनि परिहरे सुखानेउ परना । उमहि नामु तब भएउ अपरना ॥  
 देखि उमहि तप खीन सरीरा । ब्रह्म गिरा भे गगन गँभीरा ॥  
 दो०—भए मनोरथ सकल तब सुनु गिरिजाकुमारि ।

परिहरु दुसह कलेस सब अब मिलिहहि त्रिपुरारि ॥७४॥  
 अस तपु काहुँ न कीन्ह भवानी । भए अनेक धीर मुनि ज्ञानी ॥  
 अब उर धरहु ब्रह्म वर वानी । सत्य सदा संतत सुचि जानी ॥  
 आवै पिता बोलावन जवहीं । हठ परिहरि घर जाएहु तवहीं ॥  
 मिलहि तुम्हहि जवर सप्त रिपीसा । जानिहु<sup>२</sup> तब प्रमान बागीसा ॥  
 सुनत गिरा बिधि गगन बखानी । पुलक गात गिरिजा हरपानी ॥  
 उमा चरित सुंदर मैं गावा । सुनहु सभु कर चरित सुहावा ॥  
 जय तैं सती आइ तनु त्यागा । तब तैं सिव मन भएउ बिरागा ॥  
 जपहि सदा रघुनायक नामा । जहँ तहँ सुनिहि राम गुन ग्रामा ॥  
 दो०—चिदानंद सुखधाम सिव विगत मोह मद काम<sup>४</sup> ।

बिचरहि महि धरि हृदयँ हरि सकल लोक अभिराम ॥७५॥

१—[ प्र० : बलपाति ] । दि० : बलपाति [ (५अ) बेलपान ] । [ वृ० : बेलपात ] ।

च० : दि० [ (६) (६अ) बेलवानी ] ।

२—प्र० : नवहि अब । दि० : प्र० [ (४) (५) तुम्हहि जव ] । वृ० : तुम्हहि जव । च० वृ०

३—प्र० : जानिहु । [ दि०, वृ०, च० : जानिहु ] ।

४—प्र० : काम [ (२) : मान ] । दि०, वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) (६अ) : मान ] ।

कनहुँ मुनिन्ह उपदेमहि ज्ञाना । कनहुँ रामगुन कहि ब्रह्माना ॥  
जइपि अकाम तदपि भगवाना । भगन बिह दुस दुसितमुमाना ॥  
एहि, बिधि गणउ फालु बहु बोती । निन नइ होइ रामपद भीनी ॥  
नेमु प्रेमु संकर कर देखा । अविचल हृदय भगति कै रेखा ॥  
प्रगटे राम कृतज्ञ कृपाला । रूप मील निधि तेज बिमाना ॥  
बहु प्रकार संकरहि सगहा । तुम्ह बिनु अस व्रनु को निरवाहा ॥  
बहु बिधि राम सिबहि समुझावा । पारवती कर जनम मुनावा ॥  
अति पुनीत गिरिजा के करनी । बिस्तर सहित कृपानिधि बरनी ॥  
दो०—अथ बिननी मम सुनहु गिय जाँ मो पर निज नेहु ।  
जाइ विवाहहु सैलजहि यह मोहि माँगे देहु ॥७६॥  
कह सिब जइपि उचिच अस नाही । नाथ बचन पुनि मेटि न जाहीं ॥  
सिर धरि आपसु करिअ तुम्हारा । परम धामु यह नाथ हमारा ॥  
मातु पिता प्रभु गुर के बानी । बिनहि बिचार करिअ सुम जानी ॥  
तुम्ह सब भौति परम हितकारी । अज्ञा सिर पर नाथ तुम्हारी ॥  
प्रभु तोपेउ सुनि सकर बचना । भक्ति खेक धर्म जुत रचना ॥  
कह प्रभु हर तुम्हार पन रहेऊ । अम उर राखेहु जो हम कहेऊ ॥  
अंतरधान भए अस भाखी । संकर सोइ मूर्ति उर राखी ॥  
तबहि सप्तरिपि सिब पहि आप । बोले प्रभु अति बचन सुहाए ॥  
दो०—पारवती पहि जाइ तुम्ह प्रेम परिच्छा लेहु ।  
गिरिहि प्रेरि पठएहु भवन दूर करेहु संदेहु ॥७७॥  
रिपिन्ह गौरि देखी तहँ कैसी । मूर्तिवत तपस्या जैसी ॥

१—प्र० : प्रभु गुर । दि० : प्र० [(२) (१) (५) : गुर प्रभु] । [१० : गुर प्रभु] । च० : प्र०  
[ (२) (२४) : गुर प्रभु ] ।

२—प्र० : बार । दि० : प्रेरि [ (१५) : बार ] । व०, च० : दि० ।

३—प्र० : पठएहु । दि० : प्र० [ (३) (५) (७) : पठएहु ] । [ व० : पठएहु ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : मूर्तिवत । दि०, व०, च० : प्र० [ (२) (२४) : मूर्तिवत ] ।

बोले मुनि सुनु सैलकुमारी । करहु कवन कारन तपु मारी ॥  
 केहि अवाधहु का तुम्ह चहह । हम सन सन्य मरनु सव<sup>१</sup> कहह ॥  
 सुनत रिपिन्ह के वचन मवानी । बोली गूढ़ - मनोहर बानी ॥  
 कहत मरनु मनु अति सकुचाई । हंसिहहु सुनि हमारि जटनाई ॥  
 मनु हठ परा न सुनै सिखावा । चहत वारि पर भीति उठावा ॥  
 नारद कहा सत्य सोइ<sup>२</sup> जाना । निनु पखन्इ हम चहहि उड़ाना ॥  
 देखहु मुनि अविवेक हमारा । चाहिअ निबहि मदा<sup>३</sup> भरतारा ॥  
 दो०—सुनत वचन बिहँसे रिपय गिरि समव तव देहु ।

नारद कर उपदेसु सुनि कहहु बनेउ किमु गेहु ॥७८॥  
 दच्छ सुतन्ह<sup>४</sup> उपदेसेन्हि जाई । तिन्ह फिरि भवन न देखा आई ॥  
 चित्रकेतु कर घर उन पाला । कनककसिपु कर पुनि अस हाला ॥  
 नारद सिप जे सुनिहि नर नारी । अवसि होहि तजि भवन मिखारी ॥  
 मन कपटी तन सज्जन चोन्हा । आपु सरिस सगही चह कीन्हा ॥  
 सेहिकें वचन मानि बिस्वासा । तुम्ह चाहहु पति सहज उदासा ॥  
 निर्गुन निलज कुबेष कपाली । अमुल अगेह दिगवरु ठयाली ॥  
 कहहु कवन सुखु अस वर पाएँ । मल मूलिहु ठग केँ बौराएँ ॥  
 पंच कहें सिव सनी बिबाही । पुनि अवडेरि मराएन्हि ताही ॥

दो०—अब सुख सोवत सोचु नहिं भीख माँगि भव खाहिं ।

सहज एकाकिन्ह केँ भवन कबहुँ कि नारि खटाहिं ॥७९॥

१—प्र० : सव । दि० : प्र० [ (१) ( ) (१) : स्नि ] । वृ० : प्र० [ (१) : तुम्ह ]  
 [ (१) (१५) में हम ऊढ़ानी के अनिम दो उन्द, शयली ऊढ़ानी, तथा उनके  
 बाद की ऊढ़ानी के पहले दो उन्द टूटे हुए हैं ] ।

२—प्र० : सत्य हम । दि० : प्र० । वृ० : सत्य सोइ । च० : वृ० ।

३—प्र० : सिवहि सदा । दि० : प्र० [ (०) (४) (१) : मदा स्तवहि ] । वृ० : प्र० ।  
 [ च० : सदा निबहि ] ।

४—प्र० : दच्छ सुनिह । दि०, वृ०, च० : दच्छ सुनिह ।



अजहूँ मानहु कहा हमारा । हम तुम्ह कहूँ बरु नीक विचारा ॥  
 अति सुंदर सुचि सुखद सुसीला । गावहिं वेद जासु जसु लीला ॥  
 दूषन रहित सकल गुन रासी । श्रीपति पुर बैकुण्ठ निवासी ॥  
 अस बरु तुम्हहि मिलाउय आनी । सुनत बिहसि कह बचन भवानी ॥  
 सत्य कहेहु गिरिभव तनु एहा । हठ न छूट छूटै बरु देहा ॥  
 कनकौ पुनि पपान तैं होई । जारेहुँ सहजु न परिहर सोई ॥  
 नारद बचन न मै परिहरऊँ । बसौ भवन उजरौ नहिं डरऊँ ॥  
 गुर के बचन प्रतीति न जेही । सपनेहुँ सुगम न सुख सिधि तेही ॥  
 दो०—महादेव अवगुन भवन बिपु सकल गुनघाम ।

जेहि कर मनु रम जाहि सन तेहि तेही सन काम ॥८०॥  
 जौ तुम्ह मिलतेहु प्रथम मुनीसा । सुनतिउँ सिल तुम्हारि धरि सीसा ॥  
 अथ मैं जन्मु संभु हित हारा । को गुन दूषन करै विचारा ॥  
 जौ तुम्हें हठ हृदय बिसेपी । रहि न जाइ बिनु किए बरेपी ॥  
 तौ कौतुकिअन्ह आलसु नाही । बर कन्या अनेक जग माहीं ॥  
 जनम कोटि लगि रगरि हमारी । बरौ संभु नतु रहौ दुआरी ॥  
 तजौ न नारद कर उपदेस । आपु कहहिं सत बार महेस ॥  
 मैं पा परौ कहै जगदंबा । तुम गृह गवनहु भएउ बिलबा ॥  
 देखि प्रेम बोले मुनि ज्ञानी । जय जय जगदंबिके भवानी ॥  
 दो०—तुम्ह माया भगवान सिव सकल जगत पितु मातु ।

नाइ चरन सिर मुनि चले पुनि पुनि हरपत गातु ॥८१॥  
 जाइ मुनिन्ह हिमवंतु पठाए । करि बिनती गिरजहि गृह त्याए ॥  
 बहुरि सप्तरिषि सिव पहिं जाई । कथा उमा के सकल सुनाई ॥  
 भए मगन सिव सुनत सनेहा । हरषि सप्तरिषि गवने मोहा ॥

१—प्र० : बचन कह बिहसि । दि० : प्र० । नृ० : बिहसि कह बचन । च० : नृ० ।  
 २—प्र० : ॥ दि० : प्र० । नृ० : हित । च० : नृ० ।  
 ३—प्र० : रगरि । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (४) (२) : रगर ] ।

।मनु थिरु करि तत्र संभु सुजाना । लगे करन रघुनायक ध्याना ॥  
 तारकु असुर भएउ तेहि काला । भुज प्रताप बल तेज बिसाला ॥  
 तेहि<sup>१</sup> सब लोक लोकपति जीते । मए देव सुख सपति रीते ॥  
 ।अजर अमर सो जीति न जाई । हारे सुर करि बिबिध लराई ॥  
 सब विरधि सन<sup>२</sup> जाइ पुकारे । देखे विधि सब देव दुखारे ॥  
 दो०—सब सन कहा बुझाई विधि दनुज निघन, तब होइ ।

सभु सुक संभूत सुत एहि जीते रन सोइ<sup>३</sup> ॥८२॥  
 मोर कहा सुनि करहु उपाई । होइहि ईस्वर करिहि सहाई ॥  
 सती जो तजी दच्छ मख देहा । जनमी जाइ हिमाचल गेहा ॥  
 तेहि तपु कीन्ह सभु पति लागी ।<sup>४</sup>सिव समाधि बैठे, सबु त्यागी ॥  
 जदपि अहै असमजस भारी । तदपि बात एक सुनहु<sup>५</sup> हमारी ॥  
 पठवहु कामु जाइ सिव पाही । करै छोसु सकर मन माहीं ॥  
 तब हम जाइ सिवहि सिर नाई । करवाउव विग्राहु बरिआई ॥  
 एहि विधि भलेहि देव हित होई । मत अति नीक रुहे सबु कोई ॥  
 अस्तुति<sup>६</sup> सुरन्ह कीन्ह अस<sup>७</sup> हेतू । प्रगटेउ निषण्णान भलकेतू ॥

दा०—सुरन्ह कही निज विपति सब सुनि मन कीन्ह विचार ।

संभु विरोध न कुशल मोहि बिहंसि कहेउ अस<sup>८</sup> मार ॥८३॥

तदपि करव मैं काजु तुम्हारा । श्रुति कह परम धरम उपकारा ॥  
 परहित लागि तजै जो<sup>९</sup> देही । सतत सत प्रससहि<sup>१०</sup> तेही ॥  
 अस कहि चलेउ सबहि, सिरु नाई । सुमन धनुष कर सहित<sup>११</sup> सहाई ॥

१—प्र० तेहि । दि० प्र० । [तु० ते] । [च० तेद] ।

२—प्र० पति । दि० प्र० । [तु० मन] । च० न० ।

३—प्र० अस्तुति । दि०, तु०, च० प्र० [ (६अ) प्रस्तुति ] ।

४—प्र० अम । दि०, तु०, च० प्र० [ (६अ) अपि ] ।

५—प्र० जे । दि० प्र० । तु० नो । च० तु० ।

६—प्र० : नेत । दि० : प्र० । तु० सतिव । च० : तु० ।

चलत मार अस हृदयँ बिचारा । सिव बिरोध ध्रुव मरनु हमारा ॥  
 तब आपन प्रभाउ बिस्तारा । निज बस कीन्ह सखल संसारा ॥  
 कोपेउ जबहि बारिचरकेतू । छन महुँ मिटे सकन श्रुतिसेतू ॥  
 ब्रह्मचर्ज तन सजम नाना । धीरज धर्म ज्ञान विज्ञाना ॥  
 सदाचार जप जोग बिरागा । समय विवेक कटकु सब भागा ॥

छं०—भागेउ बिनेकु सहाइ सहित सो सुभट सजुग महि मुरे ।  
 सदग्रंथ पर्वन कदरन्हि महुँ जाइ तेहि अवसर दुरे ॥  
 होनिहार का करतार को रखवार जग खरभरु परा ।  
 दुइ माघ केहि रतिनाथ जेहि कहूँ कोपि कर धनु सरु घरा ॥

दो०—जे सजीव जग चर अचर नारि पुरुष अस नाम ।  
 ते निज निज मरजाद तजि मए सकल बस काम ॥८५॥  
 सबके हृदयँ मदन अभिलाषा । लता निहारि नबहि तरुसाखा ॥  
 नदी उमगि अबुधि कहूँ घाई । सगम बरहि तलाय तलाई ॥  
 जहँ असि दसा जड़न्ह कै बरनी । को कहि सकै सचेतन करनी ॥  
 पमु पच्छी नम जल थल चारी । मए कामबस समय बिसारी ॥  
 मदन अघ व्याकुल सब लोका । निसि दिन नहि अगलोकहि नोका ॥  
 देव दनुज नर विन्नर ब्याला । प्रेन पिताच भूत बैताला ॥  
 एन्ह कै दसा न कहेउँ बखानी । सदा काम के चरे जानी ॥  
 सिद्ध बिरक्त महा मुनि जोगी । तेपि काम बम मए बियोगी ॥

छंदु—भए कामरस जोगीस तापस पावँरनि की को कहै ।  
 देखहि चराचर नारिमय जे ब्रह्ममय देखन रहे ॥  
 अबना बिलोकहि पुरुषमय जगु पुरुष सब अबलामय ।  
 दुइ टंड भरि ब्रह्माड भीतर काम कृन कौतुक अय ॥  
 सो०—घरी न काहँ घीर सब के मन मनसिज हरे ।  
 जेहि रामे रघुवीर ते ठबरे तेहि काल महुँ ॥८५॥

उमय घरी अस कौतुक भएऊ । जब लागि काम संभु पहिं गएऊ ॥  
 सिवहि बिलोकि ससंकेउ मारू । भएउ यथार्थित सब संसारू ॥  
 भए तुरत जग जीव सुखारे । जिमि मद् उतरि गए मनवारे ॥  
 रुद्रहि देखि मदन भय माना । दुराघरष दुर्गम भगवाना ॥  
 फिरत लाज कछु करि नहिं जाई । भरनु ठानि मन रचेसि उपाई ॥  
 भगटेसि तुरत रुचिा गिराजा । कुप्रमित नव तहराजि<sup>१</sup> विराजा ॥  
 बन उपवन बापिका तडागा । परम सुभग सब दिसा बिभागा ॥  
 जहँ तह जनु उमगाउ अनुरागा । देखि मुएहुं मन मनसिज जागा ॥  
 छं०—जागै मनोभव मुएहुं मन बन सुभगना न परै कही ।

सीतल सुगध सुमंद मारुन मदन अनल<sup>२</sup> सखा सही ॥

बिरसे सरन्हि बहु कंज गुंजत पुंज मंजुल मधुकरा ॥

कलहंस पिकु सुरु सरस रव करि गान नाबहिं अपसरा ॥

दो०—सकल कला करि कोटि विधि हारेउ मेन समेत ।

चली न अचल समाधि सिव कोपेठ हृदयनिकेत ॥८६॥

देखि रसाल बिटपघर साखा । तेहि पर चढ़ेउ मदन मन माखा ॥

सुमनचाप निज सर संधाने । अति रिसि ताकि श्रवन लागि ताने ॥

छाँड़े बिषम बिगिख उर लागे । छूटि समाधि संभु तप जागे ॥

भएउ ईस मन छोभु बिसेखी । नयन उघारि सकल दिसि देखी ॥

सौरभ पल्लव मदन बिलोका । भएउ कोप कंपेउ त्रैलोका ॥

तप सिव तीसर नयन उघारा । चितवत कामु भएउ जरि धारा ॥

हाहाकार भएउ जग भारी । डरपे सुर भए असुर सुखारी ॥

समुक्ति काम सुरु सोचहिं भोगी । भए अकंटक साधक जोगी ॥

दं०—जोगी अकंटक भए पति गति मुनति रति मुरखित भई ।

रोदनि बदनि बहु भौंति करुना करत संकर पहिं गई ॥

<sup>१</sup>—प्र० : जाति । [ दि० : मखा ] । नृ० : प्र० । च० : राजि [ (च) : राज ] ।

<sup>२</sup>—[ प्र० : अनिल ] । दि०, ट०, च० : अनन ।

अति प्रेम करि बिनती विविधि विधि जोरि कर सनमुख रही ।

प्रभु आसुतोष कृपाल सिव अबला निरखि बोले सही ॥

दो०—अब तैं रति तर नाथ कर होइहि नामु अवनगन

बिनु बपु व्यापिहि सगहि पुनि सुनु निज मिलन पसग ॥८७॥

जन जदुबन कृष्ण अवतारा । होइहि हरन महा महिमारा ॥

कृष्णतनय होइहि पति तोरा । बचनु अन्यथा होइ न मोरा ॥

रति गवनी सुनि सगर बानी । कथा अपर अब कहौ बखानी ॥

देवन्ह समाचार सब पाए । ब्रह्मादिक वैकुण्ठ सिंहाए ॥

सन सुर बिन्दु विरचि समेता । गए जहाँ सिव कृपानिकेना ॥

पृथक पृथक तिन्ह कीन्हि प्रससा । भए प्रसन्न चन्द्रअवतसा ॥

बोले कृपासिंधु कृपकेतू । कहहु अमर आए केहि हेतू ॥

कह बिधि तुम्ह प्रभु अतरजामी । तदपि मगति बस बिनयौ स्वामी ॥

दो०—सकल सुन्ह केँ हृदयँ अस ' सकर परम उद्याहु ।

निज नयनन्हि देखा चहहि नाथ सुम्हार त्रिआहु ॥८८॥

यह उत्सव देखिय भरि लोचन । सोइ कछु करहु मदनमदमोचन ॥

काम जारि रति कहें बर दीन्हा । कृपासिंधु यह अति भन कीन्हा ॥

सासति करि पुनि करहि पसाऊ । नाथ प्रभुन्ह वर सहज सुमाऊ ॥

पारमती तपु कीन्ह अपारा । करहु तासु अब अगीकारा ॥

सुनि बिधि बिनय समुझि प्रभु बानी । ऐमेइ होउ कहा सुखु मानी ॥

तब देवन्ह दुदुभी बजाई । बरपि सुमन जय जय सुरसाई ॥

अवसरु जानि ससरिपि आए । तुरतहि विधि गिरि भवन पठाए ॥

प्रथम गए जहँ रही भवानी । बोले मधुर बचन चल सानी ॥

दो०—कहा हमार न सुनेहु तब नारद केँ उपदेस ।

अब मा मूठ तुम्हार पनु जारेउ कामु महेस ॥८९॥

सुनि बोली मुसुकाइ भवानी । उचित कहेहु मुनिवर विजानी ॥

तुम्हरे जान कामु अब जारा । अब लागि समु रहे सविकारा ॥

हमरें जान सदा सिव जोगी । अजु अनवद्य अकाम अभोगी ॥  
जों मैं सिव सेएउँ अस जानी । प्रीति समेत करम मन बानी ॥  
तौ हमार पन सुनहु मुनीसा । करिहहि सत्य कृपानिधि ईसा ॥  
तुम्ह जो कहा<sup>१</sup> हर जारेउ मारा । सोइ<sup>२</sup> अति बड़ अविबेकु तुम्हारा ॥  
तात अनल कर सहज सुमाऊ । हिम तेहि निकट जाइ नहिं काऊ ॥  
गएँ समीप सो अवसि नसाई । अस मनमथ महेस कै नाई ॥  
दो०—हिअँ हरपे मुनि बचन सुनि देखि प्रीति बिस्यास ।

चले भवानिहि नाइ सिर गए हिमाचल पास ॥६०॥  
सबु प्रसंग गिरिपतिहि सुनावा । मदन दहन सुनि अति दुखु पावा ॥  
बहुरि कहेउ रति कर वरदाना । मुनि हिमवंत बहुत सुखु माना ॥  
हृदयँ विचारि संभु प्रसुनाई । सादर मुनिवर लिए बोलाई ॥  
सुदिनु सुनखतु सुधरी सोचाई । बेगि वेद विधि लगन भराई ॥  
पत्री ससरिपिन्ह सो दीन्ही । गहि पद बिनय हिमाचल कीन्ही ॥  
जाइ विधिहि तिन्ह दीन्ह सो<sup>३</sup> पाती । बौंचत प्रीति न हृदयँ समाती ॥  
लगन बौंचि अज<sup>४</sup> सबहि सुनाई । हरपे मुनि सब<sup>५</sup> सुर समुदाई ॥  
भुमन दृष्टि नम बाजन बाजे । मंगल कलस दसहुँ दिसि साजे ॥  
दो०—लगे सबौरन सकल सुर बाहन विविध बिमान ।

होहिं सगुन मंगल सुमद<sup>६</sup> करहिं अपवरा मान ॥६१॥  
सिवाहि संभुगन करहिं सिंगारा । जटा मुकुट अहि मौरु सँवारा ॥  
कुंडल ककन पहिरे व्याला । तन विमूति षट केहरि व्याला ॥

१—प्र० : कहा । दि०, वृ०, च० : प्र० [(६) (६अ) : कहेहु] ।

२—[ प्र० : सो ] । दि०, वृ०, च० : मोर [ (८) : सो ] ।

३—प्र० : तिन्ह दीन्ही । दि० : प्र० [ (५अ) : तिन्ह दीन्ही सो ] । वृ० : तिन्ह दीन्ही सो । च० : वृ० [ (८) : दीन्ही सो ] ।

४—[ प्र० : अस ] । [ दि० : विधि ] । वृ० : अज । च० : वृ० [ (८) : अज ] ।

५—प्र० : सब । दि० : प्र० । [ वृ० : वर ] ।

६—प्र० : सुमद । [ दि० : सुभग ] । [ वृ० : सुवद ] । च० : प्र० [ (८) : सुभग ] ।

ससि ललाट सुंदर सिर गंगा । नयन तीनि उपवीत मुजंगा ॥  
 गरल कंठ उर नर सिर माला । असिव बेप सिवधाम कृपाला ॥  
 कर त्रिसूल अरु डमरु बिराजा । चले बसहँ चढ़ि बाजहिं बाजा ॥  
 देखि सिवहि सुरत्रिय मुसुकाहीं । बर लायक दुलहिनि जग नाहीं ॥  
 बिष्णु बिरंचि आदि सुरब्राता । चढ़ि चढ़ि बाहन चले बराता ॥  
 सुर समाज सब भौंति अनूषा । नहिं बरात दूलह अनुरूपा ॥  
 दो०—बिष्णु कहा अस बिहँसि तब बोलि सकल दिसिराज ।

बिलग बिलग होइ चलहु सब निज निज सहित समाज ॥६२॥  
 बर अनुहारि बरात न भाई । हँसीं करैहहु पर पुर जाई ॥  
 बिष्णु बचन सुनि सुर मुसुकाने । निज निज सेन सहित बिलगाने ॥  
 मन हीं मन महेस मुसुकाहीं । हरि के व्यंग्य बचन नहिं जाहीं ॥  
 अति प्रिय बचन सुनत प्रिय करे । भृंगिहि प्रेरि सकल गन टेरे ॥  
 सिव अनुसासन सुनि सब आप । प्रमु पद जलज सीस तिन्ह नाप ॥  
 नाना बाहन नाना बेपा । बिहँसे सिव समाज निज देखा ॥  
 कोउ मुखहीन विपुल मुख काहू । विनु पद कर कोउ बहु पद बाहू ॥  
 विपुल नयन कोउ नयनविहीना । रिष्ट पुष्ट कोउ अति तन खीना ॥  
 छ०—तन खीन कोउ अति पीन पावन कोउ अपावन गति धरें ।

भूपन कराल कपाल कर सब सद्य सोनित तन भरें ॥  
 सर स्वान सुधर<sup>१</sup> सकाल मुख गन बेप अगनित फो गनै ।  
 बहु जिनिस प्रेन पिताव जोगि जमात बरनत नहिं बनै ॥

सी०—नाचहिं गावहिं गीत पाम तरंगी भूत सब ।  
 देखन अति विपरीत बोलहिं बचन बिचित्र विधि ॥६३॥  
 जप्त दूलहु ससि बनी बराता । कौतुक बिबिध होहिं मग जाता ॥  
 इहाँ हिमाचल रचेउ बिगना । अति बिचित्र नहिं जाइ बखाना ॥

सैल सकल जहँ लगि जग माहीं । लघु बिसाल नहिं बरनि सिराहीं ॥  
 वन सागर सब नदी तलावा । हिमगिरि सब कहुँ नेवन पठावा ॥  
 कामरूप सुंदर तनु घारी । सहित समाज<sup>१</sup> सहित वर नारी ॥  
 गए सकल तुहिनाचल<sup>२</sup> गेहा । गावहिं मंगल सहित सनेहा ॥  
 प्रथमहिं गिरि बहु गृह सँवराए । जथा जोगु जहँ तहँ सब छाए ॥  
 पुर सोभा अवलोकि सुहाई । लागै लघु बिरचि निपुनाई ॥  
 छं०—लघु लागि बिधि की निपुनता अवलोकि पुर सोभा सही ।

वन बाग कूप तड़ाग सरिता सुभग सब सक को कही ॥

मंगल विपुल तोरन पताका केतु गृह गृह सोहहीं ।

बनिता पुरुष सुंदर चतुर छवि देखि मुनि मन मोहहीं ॥

दो०—जगदंबा जहँ अवतरी सो पुर बरनि कि जाइ ।

रिद्धि सिद्धि संपत्ति सुख नित नूतन अधिकाइ ॥६४॥

नगर निकट बरात सुनि आई । पुर खरभरु सोभा अधिकाई ॥

करि बनाव सजि<sup>३</sup> बाहन नाना । चले लेन सादर अगवाना ॥

हिअँ हरपे सुर सेन निहारी । हरिहि देखि अति भए सुखारी ॥

सिव समाज जब देखन लागे । बिडरि चले बाहन सब भागे ॥

धरि धीरज तहँ रहे सयाने । बालक सब लै जीव पराने ॥

गएँ भयन पूछहिं पितु माता । कहहिं वचन भय कंपित गाता ॥

कहँअ काह कहि जाइ न बाता । जम कर धार किधौ वरिआता ॥

बरु बौराह बसहँ<sup>४</sup> असवारा । व्याल कपाल बिमूषन द्वारा ॥

छं०—तन छार व्याल कपाल भूषन नगन जटिल भयंकरा ।

सँग मूत प्रेत पिसाच जोगिनि विकट मुख रजनीचग ॥

१—प्र० : सहित समाज । दि० : प्र० । [तु० सरल समाज] । च० : प्र० ।

२—प्र० : गए सकल तुहिनाचल । दि० : गए मन्त्र तु हिमाचल । नृ० : प्र० ।  
 च० : प्र० [ (न) : गवने सरल हिमाचल ] ।

३—प्र० : सजि । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (न) : सब ] ।

४—प्र० : बरद । दि०, नृ० : प्र० । च० : बसहँ ।



जो जिअत रहिहि बरात देखत पुन्य बड़ तेहि कर सही ।

देखिहि१ सो उमा बिवाह घर घर बात असि लरिअन्ह२ कही ॥

दो०—समुझि महेस समाज सब जननि जनक मुसुआहिं ।

बाल बुझाए विविध विधि निढर होहु डरु नाहिं ॥६५॥

ले अगवान बरातहि आए । दिए सत्रहि जनवास सुहाए ॥

मयना सुभ आरती सँवारी । संग सुमंगल गावहिं नारी ॥

कंचन थार सोह बर पानी । परिधन चञ्जी हरहि हरपानी ॥

बिकट बेप रुद्रहि जव देखा । अबलन्ह३ उर भय भएउ बिसेखा ॥

भागि भवन पैठी अति त्रासा । गए महेसु जहाँ जनवासा ॥

मयना हृदय भएउ दुखु मारी । लीन्ही बोलि गिरीसकुमारी ॥

अधिक सनेह गोद बैठारी । स्याम सरोज नयन भरे४ बारी ॥

जेहि विधि तुम्हहि रूपु अस दीन्हा । तेहि जड़ बरु बाउर कस कीन्हा ॥

छं०—कस कीन्ह बरु बौराह विधि जेहि तुम्हहि सुंदरता दर्ई ।

जो फलु चहिअ सुरतरुहि सो बरवस बबूरहि लागई ॥

तुम्ह सहित गिरि तें गिरौ पावक जरौ जलनिधि महुँ परौ ।

घरु जाउ अपजसु होउ जग जीवत बिबाहु न हो करौ ॥

दो०—भई बिकल अवला सकल दुखित देखि गिरिनारि ।

करि बिलापु रोदति बदनि सुता सनेहु सँभारि ॥६६॥

नारद कर मै काह बिगारा । भवनु मोर जिन्ह बसन उजारा ॥

अस उपद्रसु उमहि जिन्ह दीन्हा । बौरे बरहि लागि तपु कीन्हा ॥

सौंचेहुँ उन्हकें मोह न माया । उदासीन धनु घासु न जाया ॥

पर घर घालक लाज न भीरा । बॉझ कि जान प्रसव कै पीरा ॥

१—[ प्र० : देखिहि ] । दि० : देखिहि । नृ०, च० : दि० ।

२—[ प्र०, दि० : लरिअन्हि ] । नृ० : लरिअन्ह । च० : नृ० ।

३—प्र० : अबलन्ह । दि० : प्र० । [ नृ० : अनलन्हि ] । च०, प्र० [(न) : अवल] ।

४—प्र० : भरे [ (२) : मरि ] । [ दि०, नृ० : भरि ] । च० : प्र० [ (न) : मरि ] ।

जननिहि बिकलं बिलोकि भवानी । बोलीं जुत विवेक मृदु बानी ॥  
अस विचारि सोचहि मति माता । सो न टरै जो रचै विधाता ॥  
करम लिखा औ बाढर नाह । तौ कत दोसु लगाइअ काह ॥  
तुम्ह सन मिटहि कि विधि के अंका । मातु व्यर्थ जनि लेहु कलंका ॥

छं०—जनि लेहु मातु कलंकु करुना परिहरहु अवसर नहीं ।

दुखु सुखु जो लिखा लितार हमरें जाय जहँ पाउव तहीं ॥

सुनि उमा बचन विनीत कोमल सकल अवला सोचहीं ।

बहु भौति विधिहि लगाइ दूपन नयन बारि विमोचहीं ॥

दो०—तेहि अवसर नारद सहित अरु रिपिसप्त समेत ।

सभाचार सुनि तुहिनगिरि गवने तुरत निकेत ॥१७॥

तव नारद, समही समुझावा । पूरव कथा प्रसंगु सुनावा ॥

मयना सत्य सुनहु मम बानी । जगदंबा तव सुता भवानी ॥

अजा अनादि सक्ति अविनासिनि । सदा संभु<sup>१</sup> अरधंग निवासिनि ॥

जग संभव पालन लय कारिनि । निज इच्छा लीला बपु धारिनि ॥

जनमी प्रथम दच्छ गृह जाई । नामु सती सुंदर तनु पाई ॥

तहँहुँ सती संकरहि विवाहीं । कथा प्रसिद्ध सकल जग माहीं ॥

एक बार आवत सिव संग । देखेउ रघुकुल कमल पतंगा ॥

भण्ड मोहु सिव कहा न कीन्हा । अमवस बेपु सीय कर लीन्हा ॥

छं०—सिय बेपु सती जो कीन्ह तेहि अपराध संकर परिहरी ।

हर बिह जाइ बहोरि पितु केँ जज्ञ जोगानल जरी ॥

अव जनमि तुम्हरेँ भवन निज पति लागि दारुन तपु किया ।

अस जानि संसय तजहु गिरिजा सर्वदा संकर प्रिया ॥

दो०—सुनि नारद केँ बचन तव सब कर मिट्य बिपाद ।

धन महुँ व्यापेउ सकल पुर घर घर यह संवाद ॥१८॥

१—[ प्र० : विनि ] । दि०, व०, च० : जनि ।

२—[ प्र० : संग ] । दि०, व०, च० : संभु ।

तव मयना हिमबंतु अनंदे । पुनि पुनि पारबती पद पदे ॥  
 नारि पुरुष सिमु जुवा सयने । नगर लोग सब अति हरपाने ॥  
 लागे होन पुर मंगल गाणा । सजे सबहिं हाटक घट नाना ॥  
 भांति अनेक भई जेनारा । सूप साम्ब जस कहुँ व्यवहारा ॥  
 सो जेवनार कि जाइ बखानी । बसहिं भवन जेहि मातु भवानी ॥  
 सादर बोले सकल बराती । बिप्नु बिरंचि देव सन जाती ॥  
 विविध पाँति बैठी जेवनारा । लागे परसन निपुन सुभारा ॥  
 नारि वृंद सुर जेवत जानी । लागीं देन गारी मृदु बानी ॥

छ०—गारी मधुर स्वर देहि सुंदरि व्यग्र बचन सुनावही ।  
 भोजन करहिं सुर अति बिलंब विनोद सुनि सचु पावही ॥  
 जेवत जो बदेठ अनद सो मुख कोटिहूँ न परै पक्षी ।  
 अँचवाइ दीन्हे पान गवने बास जहँ जाको रखी ॥

दो०—बहुरि मुनिन्ह हिमवत कहूँ लगन सुनाई आइ ।  
 समय बिलोकि विवाह कर पठए देव बोलाइ ॥१२॥

बोली सकल सुर सादर लीन्हे । सबहि जथोचित आसन दीन्हे ॥  
 बेदी वेदबिधान संवारी । सुभय सुमंगल गावहिं नारी ॥  
 सिंघासन अति दिव्य मुहावा । जाइ न बरनि बिरचि बनावा ॥  
 बेठे सिर बिप्रन्ह सिठ नाई । हृदय सुमिरि निज प्रभु रघुनाई ॥  
 बहुरि मुनीसन्ह उमा बोलाई । करि सिंगारु सखी लैर आई ॥  
 देखत रूप सकल सुर मोहे । बरनै छबि अस जग कबि को है ॥  
 जगदंबिका जानि भवभामा । सुरन्ह मनहिं मन कीन्ह प्रनामा ॥  
 सुदरता मरजाद भवानी । जाइ न कोटिहूँ बदन बखानी ॥

१—प्र० : सिद्ध । दि०, गृ०, च० : कहु ।

२—प्र० : लै । दि०, गृ०, च० : प्र० [ (६अ) : लेख ] ।

३—[ प्र० : कोटि रङ्ग ] । दि० : कोटि । गृ०, च० : दि० ।

द्यं०—कोटिहुं<sup>१</sup> बदल नहिं वनै बरनत जग जननि सोमा महा ।  
सकुचहि कहत श्रुति सेप सारद मंदमति तुलसी कहा ॥  
द्यवि खानि मातु भवानि गवनी मध्य मंडप सिव जहाँ ।  
अवलोकि सकहिं न सकुत्व पति पद कमल मन मधुकर तहाँ ॥

दो०—मुनि अनुसासन गनपतिहिं पूजेउ संमु भवानि ।  
कोउ मुनि संसय करै जनि सुर अनादि जिअँ जानि ॥१००॥  
जसि बिबाह कै विधि श्रुति - गाई । महामुनिन्ह सो सब करवाई ॥  
गहि गिरीस कुस कन्या पानो । भवहि समरपी जानि भवानी ॥  
पानिप्रहन जर कीन्ह महेसा । हिअँ हरपे तब सकल सुरेसा ॥  
वेद मंत्र मुनिबर उच्चरहीं । जय जय जय संकर सुर करहीं ॥  
बाजन बाजहिं विविध विधाना । सुमन वृष्टि नम भै विधि नाना ॥  
हर गिरिजा कर भण्ड बिबाह । सकल भुवन भरि रहा उद्याह ॥  
दासी दास तुरग रथ नागा । धेनु बसन मनि वस्तु विभागा ॥  
अन्न कनक भाजन भरि जाना । दाइज दीन्ह न जाइ बलाना ॥

द्यं०—दाइज दियो बहु भौंति पुनि कर जोरि हिममूषर बह्यो ।  
का देउँ पूरननाम संकर चरन पंकज गहि रख्यो ॥  
सिव कृपासागर समुर कर, संतोषु सब भौंतिहिं क्रियो ।  
पुनि गहे पद पाथोज मयना प्रेम परिपूरन हियो ॥

दो०—नाथ उमा मम प्राण प्रियरे गृह किंकरी करेहु ॥  
जमेहु सकल अपराध अब होइ प्रसन्न बर देहु ॥१०१॥  
बहु विधि संमु सामु समुझाई । गवनी भवन चरन सिरु नाई ॥  
जननी उमा बोलि तब लीन्ही । लैरे उद्यम सुंदर सिख दीन्ही ॥

१—[ प्र० : कोटि बड्ड ] । दि० : कोटिहुं । नृ०, च० : दि० ।

२—प्र० : प्रिय । दि० : प्र० [ (०-प्र) : मम ] । नृ०, च० : प्र० [ (दक) : मम ] ।

३—प्र० : लै । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (दक) : लेइ ] ।

करेहु सदा संकर पद पूजा । नारि धरमु पतिटेउ न दूजा ॥  
 वचन कहत भरे<sup>१</sup> लोचन वारी । बहुरि लाइ उर लीन्हि कुमारी ॥  
 कल विधि सृजो नारि जग माहीं । पराधीन सपनेहु सुख नाही ॥  
 भे अति प्रेम बिरुन महतारी । धीरजु कीन्ह कुसमै विचारी ॥  
 पुनि पुनि मिलति पति गहि चरना । परम प्रेमु कछु जाइ न वरना ॥  
 सय नारिन्ह मिलि भेंटि भवानी । जाइ जननि उर पुनि लपटानी ॥  
 छ०—जननिहि बहुरि मिलि चलीं उचित असीस सब काह दई ।

फिरि फिरि बिनोकति मातु तन तत्र<sup>२</sup> सखी लेसिब पहि गई ॥

जाचक सकल सतोपि सकल उपा सहित मन<sup>३</sup> चले ।

सन अमर हरपे सुमन बरषि निसान नभ बजे मने ॥

दो०—चले सग हिमवतु तब पहुँचावन अति हेतु ।

विविध भाति परितोपु करि बिदा कीन्ह बृपकेतु ॥१०२॥

तुरत भवन आए गिरिराई । सकल सैल सर लिए बोलाई ॥

आदर दान बिनय बहु माना । सब कर बिदा कीन्ह हिमवाना ॥

जबहि सभु कैलासहि आए । सुर सब निज निज लोक सिधाए ॥

जगत मातु पितु सभु भवानी । तेहि सिंगारु न कहो बगवानी ॥

करहि विविध विधि भोग बिलासा । गनन्ह समेत बसहि केलासा ॥

हर गिरिजा बिहार नित नयऊ । पहि विधि विपुल काल चलि गएऊ ॥

तत्र<sup>४</sup> जनमेउ<sup>५</sup> पटवदन कुमारा । तारकु असुरु समर जेहि मारा ॥

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना । पन्मुख<sup>६</sup> जन्मु सकल जग जाना ॥

१—प्र० भरे । द्वि० प्र० [ (४) भर, (१) (५अ) भरि ] । [ वृ० भरि ] ।

च० प्र० [ (८) भरि ] ।

२—प्र० तत्र । द्वि०, वृ० प्र० । च० तब ।

३—[ प्र० भवने ] । द्वि० भवन [ (४) भवने ] । [ वृ० भवने ] ।

च० द्वि० ।

४—प्र० तत्र । द्वि०, वृ०, च० तब ।

५—प्र० जनमेउ । द्वि० प्र० [ (४) (५) जनमे ] । [ वृ० जनमे ] । च० प्र० ।

६—प्र० पन्मुख । द्वि० प्र० । [ वृ० पन्मुख ] । च० प्र० ।

द्य०—जगु जान पन्मुख जन्मु कर्मु प्रतापु पुरुषारथु महा ।  
तेहि हेतु मै वृषकेतु सुत कर चरित संखेपहि कहा ॥  
यह उमा संसु बिबाहु जे नर नारि कहहि<sup>१</sup> जे गावहीं ।  
कल्यान काज बिबाह मगल सर्वदा सुख पावहीं ॥

दो०—चरित सिंधु गिरिजारमन वेद न पावहिं पारु ।

वरनै तुलसोदासु क्रिमि अति मति मंद गँवारु ॥१०३॥

सभु चरित मुनि सरस सुहावा । भरद्वाज मुनि अति सुख पाया ॥  
बहु लालसा कथा पर बाढ़ी । नयनन्हि<sup>२</sup> नीरु रोमावलि ठाढ़ी ॥  
प्रेम बिचस मुख आच न बानी । दसा देखि हरपे मुनि ज्ञानी ॥  
अहो धन्य तव जन्मु मुनीसा । तुम्हहिं प्रान सम प्रिय गौरीसा ॥  
सिव पद कमल जिन्हहि रति नाही । रामहि ते सपनेहुं न सुहाहीं ॥  
बिनु छल विस्वनाथ, पद नेह । राम भगत कर लच्छन पहू ॥  
सिव सम को रघुपति व्रत धारी । बिनु अब तबी सती असि नारी ॥  
पनु करि रघुपति भगति देखाई । को सिव सम रामहि प्रिय भाई ॥  
दो०—प्रथमहिं कहि मै सिव चरित बूझा मरमु तुम्हार ।

मुचि सेवक तुम्ह राम के रहित समस्त बिकार ॥१०४॥

मै जाना तुम्हार गुन सीला । कहौ सुनहु अब रघुपति लीला ॥  
सुनु मुनि आजु समागम तोरें । कहि न जाइ जस मुख मन मोरें ॥  
रामचरित अति अमित मुनीसा । कहि न सकहिं सत कोटि अहीसा ॥  
तदपि जयाश्रुत कहौ बखानी । सुमिरि गिरापति प्रभु धनुपानी ॥  
सारद दारुनारि सम स्वामी । राम सूत्रधर अतरजामी ॥  
जेहि पर कृपा करहिं जनु जानी । कबि उर अनिर नचावहिं बानी ॥  
प्रनवौ सोइ कृपाल रघुनाथ । बरनौ बिसद तासु गुन गाथा ॥  
परम रम्य गिरिवर केलासू । सदा जहाँ सिव उमा निवामू ॥

१—प्र० : बहहि । दि० : प्र० [ (५) : सुनहि ] । [ तु० : सुनहि ] । च० : प्र० ।

—प्र० : नयनन्हि । [ दि० : नयन ] । [ तु० : नयन ] । च० : प्र० ।

दो०—सिद्ध तपोधन जोगि जन सुर किन्नर मुनिवृन्द ।

बसहिं तहाँ सुकृती सकल सेवहिं सिव सुखकंद ॥१०५॥

हरि हर विमुख धर्म रति नाही । ते नर तहें सपनेहुं नहि जाहीं ॥

तेहि गिरि पर बट बिटप बिसाला । नित नूतन सुंदर सब बाला ॥

त्रिविध समीर सुसीतल छाया । सिब विश्राम बिटप श्रुति गाया ॥

एक बार तेहि तर प्रभु गएऊ । तरु बिलोकि उर अति सुख भएऊ ॥

निज कर दासि नाग रिपु छाला । बैठे सहजहिं संभु कृपाला ॥

कुंद इंदु दर गौर सरीरा । भुज प्रलंब परिधन मुनि चीरा ॥

सरुन अरुन अंबुज सम चरना । नख दुति भगत हृदय तम हरना ॥

भुजग भूति भूपन त्रिपुरारी । आननु सरद चंद छविहारी ॥

दो०—जटा मुकुट सुरसरित सिर लोचन नलिन बिसाल ।

नीलकंठ लावण्यनिधि सोह बाल विधु भाल ॥१०६॥

बैठे सोह काम रिपु कैसैं । धरे सरीर सांत रसु जैसैं ।

पारवती मल<sup>१</sup> अवसरु जानी । गई संभु यहि मातु भवानी ॥

जानि प्रिया आदरु अति कीन्हा । बाम बाग आसनु हर दीन्हा ॥

बैठीं सिब समीप हरपाई । पूरव जन्म कथा चिन आई ॥

पति हिअैं हेतु अधिक अनुमानी<sup>२</sup> । विहँसि उमा बोली मृदु बानी<sup>३</sup> ॥

कथा जो सकल लोक हितकारी । सोइ पृथ्वी चह सैलकुमारी ॥

विश्वनाथ मम नाथ पुरारी । त्रिभुवन महिमा बिदित तुम्हारी ॥

चर अरु अचर नाग नर देवा । सकल करहिं पद पंकज सेवा ॥

दो०—प्रभु समरथ सर्वज्ञ सिब सकल कला गुन धाम ।

जोग ज्ञान वैराग्य निधि प्रकृत कल्पनरु नाम ॥१०७॥

१—प्र० मल [ (-) : मल । दि०, १०, च० : प्र० ।

२—प्र० : अनुमानी । [ दि० : (३) (१) (५) : अनुमानी, (५) : अनुमाना ] ।  
मृ. : अनुमानी । च० : वृ० ।

३—प्र० : मृदु बानी । [ दि० : (३) (५) (१५) : हर वाली, (५) : दिव बानी ] ।  
वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) (६५) : दिव बानी ] ।

जौं मो पर प्रसन्न सुखरासी । जानिअ सत्य मोहि निज दासी ॥  
 तौ प्रभु हरहु मोर अज्ञाना । कहि रघुनाथ कथा विधि नाना ॥  
 जामु भवनु सुरतरु तर होई । सह कि दरिद्र जनिन दुखु सोई ॥  
 ससिमूपन अस हृदयँ विचारी । हरहु नाथ मम मति भ्रम भारी ॥  
 प्रभु जे मुनि परमारथ वादी । कहहि राम कहुँ ब्रह्म अनादी ॥  
 सेप सारदा वेद पुराना । सकल कहि रघुपति गुन गाना ॥  
 तुम्ह पुनि राम राम दिन राती । सादरं जपहु अनंग आराती ॥  
 राम सो अवधनृपति सुख सोई । की अज अगुन अलखगति कोई ॥  
 दो० — जौं नृप तनय तौ ब्रह्म किमि नारि बिरह मति मोरि ।

देखि चरित महिमा सुनत भ्रमति१ बुद्धि अति मोरि ॥१०८॥

जौं अनीह व्यापक बिमु कोऊ । कहहु बुझाइ नाथ मोहि सोऊ ॥  
 अज्ञ जानि रिस उर जनि घरहु । जेहि विधि मोह मिटै सोइ करहु ॥  
 मैं बन दीखि राम प्रभुताई । अति भय विकलन तुम्हहि सुनाई ॥  
 तदपि मलिन मन बोधु न आथा । सो फलु मलो भौंति हम पावा ॥  
 अजहँ कछु संसठ मन मोरें । करहु कृपा बिनबौं कर जोरें ॥  
 प्रभु तब मोहि बहु भौंति प्रबोधा । नाथ सो समुझि करहु जनि क्रोधा ॥  
 तब कर अस विमोह अब नाही । राम कथा पर रुचि मन माहीं ॥  
 कहहु पुनीत राम गुन गाथा । भुजगराज मूपन सुरनाथा ॥  
 दो० — बंदौं पद धरि धरनि सिरु बिनय करौं कर जोरि ।

बरनहु रघुवर बिसद जसु श्रुति सिद्धांत निचोरि ॥१०९॥

जदपि जोषिता नहि अधिकारी२ । दासी मन क्रम बचन तुम्हारी ॥  
 गूढ़ौ तत्त्व न साधु दुरावहि । आस्त अधिकारी जहँ पावहि ॥  
 अति आरति पूछौ सुर राया । रघुपति कथा कहहु करि दाया ॥  
 प्रथम सो कारन कहहु विचारी । निर्गुन ब्रह्म सगुन बपु धारी ॥

१—[ प्र०, दि० : भ्रमन ] । तु० : भ्रमति । च० : तु० ।

२—प्र० : अनधिकारी । दि०, तु० : प्र० । च० : नहि अधिकारी ।



पुनि प्रभु कहहु राम अवतारा । बान चरित पुनि कहहु उदारा ॥  
 कहहु जथा जानकी विवाही । राज तजा सो दूषन काही ॥  
 बन बनि कीन्हे चरित अपारा । कहहु नाथ जिमि रावन मारा ॥  
 राज बैठि कीन्ही बहु नीला । सकल कहहु संहर मुनसीला ॥  
 दो०—बहुरि कहहु करनायकन कीन्ह जो अचरज राम ।

प्रजा सहित रघुवम मनि किमि गयने निज धाम ॥ ११० ॥  
 पुनि प्रभु कहहु सो तत्त्व ब्रह्मानी । जेहि विज्ञान मगन मुनि जानी ॥  
 भगति ज्ञान विज्ञान<sup>१</sup> बिरागा । पुनि सब मानहु सहित विमागा ॥  
 श्रीराम रहस्य अनेक । कहहु नाथ अति विमल विधेका ॥  
 जो प्रभु में पूछा नहिं होई । सोउ दयाल राखहु जनि गोई ॥  
 तुम्ह त्रिभुवन गुर वेद बखाना । आन जीव पावैर का जाना ॥  
 प्रसन्न उमा कै<sup>२</sup> सहज मुहाई । छल बिहीन सुनि सिच मन भाई ॥  
 हर हिअँ रामचरित सब आए । प्रेम पुलक लोचन जल आए ॥  
 श्री रघुनाथ रूप उर आवा । परमानंद अमित सुख पावा ॥  
 दो०—मगन ध्यान रस दड जुग पुनि मन बाहेर कीन्ह ।

रघुपति चरित महेस तत्र हरपित बरनै लीन्ह ॥ १११ ॥  
 भूठेउ सत्य जाहि बिनु जाने । जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने ॥  
 जेहि जाने जग जाइ हेराई । जागे जथा सपन भ्रम जाई ॥  
 बंदौ बाल रूप सोइ रामू । सब सिधि सुलभ जपत जिमु नामू ॥  
 मगल भवन अमगल हारी । द्रवौ सो दसरथ अजिर बिहारी ॥  
 करि प्रनाम रामहि त्रिपुरारी । हरपि सुधा सम गिरा उचारी ॥  
 धन्य धन्य गिरिराज कुमारी । तुम्ह समान नहिं कोउ उपकारी<sup>३</sup> ॥  
 पूछेहु रघुपति कथा प्रसंगा । सकल लोक जग पावनि गंगा ॥

१—प्र० : विज्ञान । दि०, तृ०, च० : प्र० [ (६) (६अ) में शब्द छूटा हुआ है ] ।

२—प्र० : कै । दि० : प्र० [ (४) (५) : कर ] । [ तृ० : कर ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : उपकारी । [ दि० : अधिकारी ] । तृ०, च० : प्र० ।

तुम्ह रघुवीर चरन अनुरागी । कीन्हिहु प्रसन्न जगत हित लागी ॥

दो०—राम कृपा तैं पारवति१ सपनेहुँ तव मन माहिं ।

सोक मोह संदेह भ्रम मम विचार कछु नाहिं ॥११२॥

तदपि असंका कीन्हिहु सोई । कहत सुनत सब कर हित होई ॥

जिन्ह हरि कथा सुनी नहिं काना । श्रवन रघु अहि भवन समाना ॥

नयनन्हि संत दरस नहिं देखा । लोचन मोरपख कर लेखा ॥

ते सिर कटु तुंगरि सम तूला । जे न नमत हरि गुर पद भूला ॥

जिन्ह हरि भगति हृदयँ नहिं आनी । जीवत सब समान तेड प्रानी ॥

जो नहिं करै राम गुन गाना । जीह सो दादुर जीह समाना ॥

कुलिस कठोर निटुर सोइ छाती । सुनि हरि चरित न जो हरपाती ॥

गिरिजा सुनहु राम कै लीला । सुरहित दनुज विमोहन सीला ॥

दो०—रामकथा सुरधेनु सम सेवत सब सुखदानि ।

सैंत समाज सुर लोक सब को न सुनै अस जानि ॥११३॥

रामकथा सुंदर करतारी । संसय बिहग उड़ावनिहारी ॥

रामकथा कलि विटप कुठारी । सादर सुनु गिरिराज कुमारी ॥

राम नाम गुन चरित सुहाए । जनम करम अगनिन श्रुति गाए ॥

जथा अनंत राम भगवाना । तथा कथा कोरति गुन नाना ॥

तदपि जथाश्रुत जसि मति मोरी । कहिहौं देखि प्रीति अति तोरी ॥

उमा प्रसन्न तव सहज सुहाई । सुखद सन समत मोहि भाई ॥

एक बात नहिं मोहि सोहानी । जदपि मोहवस कहेहु भवानी ॥

तुम्ह जो कहा राम कोउ आना । जेहि श्रुति गाव घरहिं मुनि ध्याना ॥

दो०—कहहिं सुनहिं अस अधम नर प्रसे जे मोह पिसाच ।

पाखंडी हरिपद विमुख जानहिं झूठ न साच ॥११४॥

अज्ञ अक्रोविद अंध अभागी । काई विषय मुकुर मन लागी ॥

लपट कपटी कुटिल बिसेयी । सपनेहु संन समा नहि देखी ॥  
 कहहिं ते वेद असंमत बानी । जिन्हकें<sup>१</sup> सुभ लाभ नहि हानी ॥  
 मुकुर मलिन अरु नयन त्रिहीना । गगन रूप देखहि किमि दीना ॥  
 जिन्हकें अगुन न सगुन बिनेका । जलपहि कल्पित बचन अनेका ॥  
 हरि माया बस जगत अमाही । तिन्हहिं कहत कछु अघटिन नाही ॥  
 बाबुल भूत बियस मतवारे । ते नहि बोलाहि बचन त्रिवारे ॥  
 जिन्ह कृत महा मोह मद पाना । निन्ह कर कहा करिअ नहि फाना ॥  
 सो०—अस निज हृदयें विचारि तजु ससय भजु रामपद ।

सुनु गिरिराजकुमारि अम तम रवि कर बचन मम ॥११५॥  
 सगुनहिं अगुनहिं<sup>\*</sup> नहिं कछु भेदा । गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा ॥  
 अगुन अरूप अलख अज जोई । भगत प्रेम बस सगुन सो होई ॥  
 जो गुन रहित सगुन सोइ कैसैं । जलु हिम उपल बिलग नहि जैसैं ॥  
 जासु नाम अम तिमिर पतगा । तेहि किमि कहिअ विमोह प्रसंगा ॥  
 राम सच्चिदानंद दिनेसा । नहिं तहैं मोह निसा लव लेसा ॥  
 सहज प्रकास रूप भगवाना । नहिं तहैं पुनि बिज्ञान बिहाना ॥  
 हरप विषाद ज्ञान अज्ञाना । जीव धर्म अहमिति अभिमाना ॥  
 राम ब्रह्म व्यापक जग जाना । परमानंद परेस<sup>२</sup> पुराना ॥  
 दो०—पुरुष प्रसिद्ध प्रकास निधि प्रगट परावर नाथ ।

रघुकुल मनि मम स्वामि सोइ कहि सिव नाएउ माथ ॥११६॥  
 निज अम नहिं समुझहिं अज्ञानी । प्रभु पर मोह धरहिं जड़ प्रानी ॥  
 जथा गगन घन पटल निहारी । भौंपिउ भानु कहहिं दुविचारो ॥  
 चितव जो लोचन अंगुलि लाएँ । प्रगट जुगल ससि तेहि कैं माएँ ॥  
 उमा राम विषइक अस मोहा । नम तम धूम धूरि जिमि सोहा ॥  
 विषय करन सु जीव समेता । सकल एक तैं एक सचेता ॥

१—प्र० . तिन्हहिं ॥ दि०, तृ० : प्र० [ च० : बिन्हकें ] ।

२—[ प्र० . पुरष ] । दि० : परेस । तृ०, च० : दि० ।

सब कर परम प्रकासक जोई । राम अनादि अवधपति सोई ॥  
जगतं प्रकास्य प्रकासक रामू । मायाधीस ज्ञान गुन धामू ॥  
जासु सत्यता तें जड़ माया । भास सत्य इव मोह सहाया ॥  
दो०—रजत सीप महें भास जिमि जथा भानुकर वारि ।

जदपि मृषा तिहें काल सोइ भ्रम न सकै कोउ टारि ॥११७॥  
एहि विधि जग हरि आश्रित रहई । जदपि असत्य देत दुख अहई ॥  
जौं सपने सिर फाटे कोई । बिनु जागें न दूरि दुख होई ॥  
जासु कृपाँ अस भ्रम मिटि जाई । गिरिजा सोइ कृपालु रघुराई ॥  
आदि अंत फोड जासु न पावा । मति अनुमानि निगम अस गावा ॥  
बिनु पद चलै सुनै बिनु काना । कऱ बिनु करम करै बिधि नाना ॥  
आनन रहित सकल रस भोगी । बिनु बानी बकता बड़ जोगी ॥  
तन बिनु परस नयन बिनु देखा । ग्रहै ध्यान बिनु बास असेपा ॥  
असि सब मौंति अलौकिक करनी । महिमा जासु जाइ नहिं बरनी ॥  
दो०—जेहि इमि गावहिं वेद बुध आहि धरहिं मुनि ध्यान ।

सोइ दसरथ सुत भगत हित कोसलपति भगवाने ॥११८॥  
फासी भरत जंतु अवलोकी । जासु नाम बल करौं बिसोकी ॥  
सोइ प्रभु मोर चराचर स्वामी । रघुबर बस<sup>१</sup> उर अंतरजामी ॥  
बिषसहै जासु नाम नर कहहीं । जनम अनेक रचित अघ दहहीं ॥  
सादर सुमिरन जे नर करहीं । भव बारिधि गोपद इव तरहीं ॥  
राम सो परमात्मा भवानी । सहै भ्रम अति अविहित तब बानी ॥  
अस संसय आनत उर माहीं । ज्ञान विराग सकल गुन जाहीं ॥  
सुनि सिव के भ्रम मंजन बचना । मिटि गै सब कुतरक कै रचना ॥  
भइ रघुपति पद प्रीति प्रतीती । दारुन असंभावना बोली ॥  
दो०—पुनि पुनि प्रभु पद कमल गहि जोरि पंकरुह पानि ।  
बोली गिरिजा बचन बर मनहुं प्रेम रस सानि ॥११९॥

ससि कर सम मुनि गिरा तुम्हारी । गिय मोह सरदातप भारी ॥  
 तुम्ह कृपाल सबु ससउ हरेऊ । रामस्वरूप जानि मोहि परेऊ ॥  
 नाथ कृपौ अब गण्ट बिषादा । सुख भइउ प्रभु चान प्रसादा ॥  
 अत्र मोहि आपनि किंकरि जानी । जदपि सहज जइ नारि अयानी ॥  
 प्रथम जो मैं पृथा सोइ कहइ । जो मो पर प्रसन्न प्रभु अहइ ॥  
 राम ब्रह्म चिन्मय अविनासी । सर्व रहित सब उर पुर वासी ॥  
 नाथ परेउ नर तनु केहि हेतू । मोहि समुझाड कहहु वृषकेतू ॥  
 उमा वचन सुनि परम विनीता । रामकथा पर भीति पुनीता ॥  
 दो०—हिथैं हरपे कामारि तब सरर सहज सुजान ।

बहु बिधि उमहि प्रससि पुनि बोले कृपानिधान ॥

सो०—सुनु सुभ कथा मवानि रामचरितमानस विमल ।

कहा सुमुडि बलानि सुना बिहगनायक गरुड ॥

सो सबाद उदार जेहि बिधि मा आये कहव ।

सुनहु राम अवतार चरित परम सुंदर अनघ ॥

हरि गुन नाम अपार कथा रूप अगनित अमित ।

मै निज मति अनुसार कहौ उभा सादर सुनहु ॥१२०॥

सुनु गिरिजा हरि चरित सुहाए<sup>१</sup> । विपुल बिसद निगमागम गाए<sup>१</sup> ॥

हरि अवतार हेतु जेहि होई । इदमित्थ कहि जाइ त सोई ॥

राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी । मत हमार अस सुनहि सयानी ॥

तदपि सत मुनि वेद पुराण । जस कछु कहहिं स्वमति अनुमाना ॥

तस मै सुमुखि सुनावौ तोही । समुझि परे जस कारन मोही ॥

जय जय होइ धरम कै हानी । बाढ़हिं असुर अघम<sup>२</sup> अभिमानी ॥

कहिं अनीति जाइ नहिं बरनी । सोदहिं बिष धेनु सुर धरनी ॥

तब तब प्रभु धरि बिबिध सरिरा । हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ॥

१—प्र० सुहाए, गाए । [ दि० - सुभाष, गाथा ] । वृ०, च० प्र० ।

२—[ प्र० अधरस ] । दि, त०, च० - अधम [ (६) (६अ) : अधम ] ।

दो०—असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु ।

जग बिस्तारहिं विसद जस रामजन्म कर हेतु ॥१२१॥  
 सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं । कृपासिंधु जनहित तनु धरहीं ॥  
 राम जन्म के हेतु अनेका । परम विचित्र एक तें एका ॥  
 जन्म एक दुइ कहौ बखानी । सावधान सुनु सुमति भवानी ॥  
 द्वारपाल हरि के प्रिय दोऊ । जय अरु बिजय जान सब कोऊ ॥  
 बिम साप तें दूनों भाई । तामस असुर देह तिन्ह पाई ॥  
 कनककसिपु अरु हाटकलोचन । जगत बिदित सुरपति मद मोचन ॥  
 बिजई समर बीर बिल्याता । धरि बराह बपु एक निपाता ॥  
 होइ नरहरि दूसर पुनि मारा । जन प्रह्लाद सुजस बिस्तारा ॥  
 दो०—भए निसाचर जाइ तेइ महाबीर बलवान ।

कुभकरन रावन सुमट सुर . बिजई जग जान ॥१२२॥  
 मुकुत न भए हते भगवाना । तीनि जन्म द्विज बचन प्रवाना ॥  
 एक बार तिन्हकें हित लागी । धरेउ सीर भगत अनुरागी ॥  
 कस्यप अदिति तहाँ पितु माता । दसरथ कौसल्या बिल्याता ॥  
 एरु कल्प पहिं विधि अवतारा । चरित पवित्र किए ससारा ॥  
 एक कल्प सुर देखि दुखारे । समर जलंधर सन सब हारे ॥  
 समु कीन्ह संग्राम अपारा । दनुज महा बल मरै न मारा ॥  
 परम सती असुराधिप नारी । तेहि बल ताहि न जितहिं पुरारी ॥

दो०—छेल करि टारेउ तासु व्रत प्रभु सुर कारज कीन्ह ।

जब तेहिं जानेउ मरम तब साप कोप करि दीन्ह ॥१२३॥  
 तासु साप हरि कीन्ह प्रवाना । कौतुकनिधि कृपाल भगवाना ॥  
 तहें जलधर रावन भएऊ । रन हति राम परम पद दएऊ ॥

१—[ प्र० - महा ] । दि०, तु०, च० : नहीं ।

२—[ प्र० : दो-ह ] । दि० : बा-ह । तु०, च० : दि० [ (६) (२५) : दा-ह ] ।

एक जन्म कर कारन एहा । जेहि लागि राम घरी नर देहा ॥  
 प्रति अवतार कथा प्रभु केरी । मुनु मुनि बरनी कबिन्ह धनेगी ॥  
 नारद साप दीन्ह एक बारा । कल्प एक तेहि लागि अवतारा ॥  
 गिरिजा चकिन भई मुनि बानी । नारद बिष्णु भगत पुनि जानी ॥  
 कारन कवन साप मुनि दीन्हा । का अपराध रमापति कीन्हा ॥  
 यह प्रसंग मोहि कहहु पुगरी । मुनि मन मोह आचरज भारी ॥  
 दो०—बोले बिहँसि महेस तब जानी मूढ़ न कोइ ।

जेहि जस रघुपति कहि जव सो तम तेहि छन होइ ॥

सो०—कहौ राम गुन गाथ भरद्वाज सादर सुनहु ।

भव भजन रघुनाथ भजु तुलसी तजि मान मद ॥१२४॥  
 हिम गिरि गुहा एक अति पावनि । वह समीप सुरसरी मुहावनि ॥  
 आश्रम परम पुनीत मुहावा । देखि देवरिषि मन अति भावा ॥  
 निरखि सैल सरि विपिन विभागा । भएउ रमापति पद अनुरागा ॥  
 मुमिरत हरिहि साप गति बाधी । सहज बिमल मन लागि समाधी ॥  
 मुनि गति देखि सुरेस टेरांना । कामहि बोलि कीन्ह सनमाना ॥  
 सहित सहाय जाहु मम हेतू । चलेउ हरिणि हिय जलचरकेतू ॥  
 सुनासीर मम महुँ असि प्रासा । चहत देवरिषि मम पुर बासा ॥  
 जे कामी लोलुप जग माहीं । कुटिल काक इव सर्वाहि डेराहीं ॥  
 दो०—सूख हाड़ लै भाग सठ स्वान निरखि मृगराज ।

छीनि लेइ अनि जानि जड़ तिमि सुरपतिहि न लाज ॥१२५॥

तेहि आश्रमहि मदन जब गएऊ । निज माया बसंत निरमएऊ ॥  
 कुसुमित विविध बिटप बहु रगा । कूजहि कोकिल गुंजहि भृंगा ॥  
 चनी मुहावनि त्रिविध बयारी । काम कृसानु बढ़ावनि हारी ॥  
 रमादिक सुरनारि नवीना । सकल असमसर कला प्रवीना ॥

करहि- गान बहु तान तरंगा । बहु विधि क्रीड़हि पानि पतगा ॥  
देखि सहाय मदन हरपाना । कहेसि पुनि प्रपच विधि नाना ॥  
काम कला कलु मुनिहि न व्यापी । निज भयँ डरेउ मनोभव पापी ॥  
सीम की, चाँपि सकै कोउ तासू । बड़ रखवार रमावति जासू ॥  
दो०—सहित सहाय समीत अति मानि हारि मन मैन ।

गहेसि जाइ मुनि चरन कहि सुठि आरत मृदु बैन ॥१२६॥  
भएउ न नारद मन कलु रोपा । कहि प्रिय बचन काम परितोपा ॥  
नाइ चरन सिरु आएसु पाई । गएउ मदन तब सहित सहाई ॥  
मुनि सुसीलता आपनि करनी । सुरपति सभों जाइ सब बरनी ॥  
मुनि सबकें मन अचरजु आवा । मुनिहि प्रसंसि हरिहि सिरु नावा ॥  
तब नारद गवने सिब पाहीं । जिता काम अहमिति मन माहीं ॥  
मार चरित सकरहि सुनाए । अति प्रिय जानि महेस सिखाए ॥  
बार बार बिनबौं मुनि तोहीं । जिमि यह कथा सुनाएहु मोहीं ॥  
तिमि जनि हरिहि सुनाएहु कवहूँ । चलेहुँ प्रसंग दुराएहु तबहूँ ॥

दो०—समु दीन्ह उपदेस हित नहि नारदहि सुहान ।

भरद्वाज फौतुक सुनहु हरि इच्छा बलवान ॥१२७॥  
राम कीन्ह चाहहि सोई होई । करै अन्यथा अस नहि कोई ॥  
समु बचन मुनि मन नहि भाए । तब विरचि के लोक सिधाए ॥  
एक बार कर तल बर बीना । गावत हरि गुन गान प्रवीना ॥  
छीरसिधु गवने मुनिनाथा । जहँ बस श्रीनिवास श्रुतिमाथा ॥  
हरपि मिले उठि रमानिकेता । बैठे आसन रिषिहि समेता ॥

१—प्र० कहि सुठि आरत मृदु बैन । दि०, ल० : प्र० । च० : प्र० [ (६८) : यहि सुठि आरत बैन, (८) : तब यहि सुभ आरत बैन ] ।

२—[ प्र० सुनावहु ] । दि० ॥ सुनाएहु । ल०, च० : दि० [ (६) (६८) ॥ सुनावहु ] ।

३—प्र०, मिने उठि । [ दि० : उठे प्रभु ] । ल०, च० : प्र० [ (८) , उठेरि ] ।



## श्री राम चरित मानस

बोले बिहसि ' चराचराया । बहुते दिनन्हि<sup>१</sup> कीन्हि मुनि दाया ॥  
 काम चरित नारद सब भाखे । जवपि प्रथम बरजि सिव राखे ॥  
 अति प्रचंड रघुपति कै माया । जेहि न मोह अस को जग जाया ॥  
 दो०—रुख बदन करि बचन मूढु बोले श्रीभगवान ।

तुम्हरे सुमिरन तें मिटहिं मोह मार मद मान ॥१२८॥  
 सुनु मुनि मोह होइ मन ताकें । ज्ञान विराग हृदय नहि जाकें ॥  
 ब्रह्मचरज ब्रतरत मति धीरा । तुम्हहि कि करै मनोभव पीरा ॥

नारद कहेउ सहित अभिमाना । कृपा तुम्हारि<sup>२</sup> सकल भगवाना ॥  
 करुनानिधि मन दीख विचारी । उर अंकुरेउ गर्व तरु भारी ॥  
 बेगि सो मै डारिहौ उखारी । पन हमार सेवक हितकारी ॥

मुनि कर हित मम बौखुह होई । अवसि उपाय करवि मै सोई ॥  
 तब नारद हरिपद मिर नाई । चले हृदयँ अहमिति अधिकाई ॥  
 श्रीपति निज माया तब प्रेरी । सुनइ कठिन करनी तेहि केरी ॥

दो०—विरचेउ मगु महुँ नगर तेहि सत जोजन विस्तार ।  
 श्रीनिवास पुर तें अधिक रचना बिबिध प्रकार ॥१२९॥  
 बसहिं नगर सुंदर नर नारी । जनु बहु मनसिज रति तनु धारी ॥

तेहि पुर बसै सीलनिधि राजा । अगनित हय गय सेन समाजा ॥  
 सत मुरेस सम बिभव विलासा । रूप तेज बल नीति<sup>३</sup> निवासा ॥  
 विस्वमोहिनी तामु कुमारी । श्री विमोह जिमु<sup>४</sup> रूप निहारी ॥

सोइ हरिमाया सब गुन खानी । सोभा तामु कि जाइ बखानी ॥  
 करै स्वयंवर सो नृपवाला । आए तहँ अगनित महिपाला ॥

१—[प्र०. दिनन] । द्वि० दिनन्हि । तृ० द० । [च० (६) दिन (२३) दिनन, (८) दिन] ।  
 २—[प्र० : साज] । द्वि० नीति । [तृ० : मीव] । तृ० : दि० ।  
 ३—प्र० : निमु । [द्वि०. (२) (४) (५) अदि, (८) तेहि] । तृ०, च० : प्र० ।

मुनि कौतुकी नगर तेहिं गणऊ । पुरवासिन्ह सत्र<sup>१</sup> पृथक् भएऊ ॥  
मुनि सब चरित भूप गृह आए । करि पूजा नृप मुनि वेठाए ॥  
दो०—आनि देखाई नारदहि भूपति 'राजकुमारि ।

कहहु नाथ गुन दोष सब एहि कें हृदयें विचारि ॥१३०॥  
देखि रूप मुनि त्रिति बिसारी । बढी बार लगि रहे निहारी ॥  
लच्छन तामु विलोकि मुलाने । हृदय हरष नहिं प्रगट बखाने ॥  
जो एहि बरै अमर सोइ होई । समर भूमि तेहि जीत न कोई ॥  
सेवहि सकल चराचर ताही । बरे सीलनिधि 'कन्या जाही ॥  
लच्छन सब विचारि उर राखे । कछुक यनाइ भूप सन भापे ॥  
सुता सुलच्छन कहि नृप पाहीं । नारद चले सोच मन माहीं ॥  
करो जाइ सोइ जतन विचारी । जेहि प्रकार मोहि बरे कुमारी ॥  
जप तप कछु न होइ तेहिं<sup>२</sup> काला । हे<sup>३</sup> त्रिधि मिले कवन विधि घाला ॥  
दो०—एहि अवसर चाहिअ परम सोभा रूप बिसाल ।

जो विलोकि रीझै कुथरि तन मेले जयमाल ॥१३१॥  
हरि सन माँगौ सुदरताई । होइहि जात गहरु अति भाई ॥  
मोरे हित हरि सम नहिं कोऊ । एहि अउसर सहाय सोइ होऊ ॥  
बहु विधि त्रिन्य कीन्हि तेहिं काला । प्रगटेउ प्रभु कौतुकी कृपाला ॥  
प्रभु विलोकि मुनि नयन जुटाने । होइहि काजु हिणै हरपाने ॥  
अति आरति कहि कथा सुनाई । करहु कृपा करि होहु सहाई ॥  
आपन रूप देहु प्रभु मोही । आन भाँति नहिं पावौ ओही ॥  
जेहि विधि नाथ होइ हित मोरा । करहु सो वेगि दास मैं तोरा ॥  
निज माया बल देखि बिसाला । हिअ हँसि बोले दीनदयाला ॥

१—प्र० सत्र। दि० प्र०। [तृ० मन]। च० प्र०।

२ प्र० तेहिं। दि० प्र०। [तृ० मन]। च० प्र०।

३—य है। दि०, दे [२३] है। न० दि०। च० दि० [(२) (२३) है] ।

दो०—जेहि बिधि होइहि परम हित नारद मुनहु तुम्हार ।

सोइ हम करब न आन कछु बचन न मृषा हमार ॥१३२॥  
 कुपथ माँगु रुज व्याकुल रोगी । वैद न देख मुनहु मुनि जोगी ॥  
 एहि बिधि हित तुम्हार मैं ठएऊ । कहि अस अंतरहित प्रभु भएऊ ॥  
 माया बिसस भए मुनि मूढ़ा । समुझी नहि हरि गिरा निगूढ़ा ॥  
 गवने तुरत तहाँ रिपिराई । जहाँ स्वयंवर भूमि बनाई ॥  
 निज निज आसन बैठे राजा । बहु बनाव करि सहित समाजा ॥  
 मुनि मन हरप रूप अति मोरें । मोहि तजि आनहि बरिहि न मोरें ॥  
 मुनि हित कारन कृपानिधाना । दीन्ह कुरूप न जाइ बखाना ॥  
 सो चरित्र लखि काहुँ न पावा । नारद जानि सबहिँ सिर नावा ॥  
 दो०—रहे तहाँ दुइ रुद्र गन ते जानहिँ सब भेउ ।

बिप्र बेप देखत फिरहिँ परम कौतुकी तेउ ॥१३३॥  
 जेहि समाज बैठे मुनि जाई । हृदयँ रूप अहमिति अधिकारि ॥  
 तहँ बैठे महेस गन दोऊ । बिप्र बेप गति लखै न कोऊ ॥  
 करहिँ कूटि नारदहि सुनाई । नीकि दीन्ह हरि सुंदरसाई ॥  
 रीझिहि राजकुअरि छवि देखी । इन्हहि बरिहि हरि जानि बिसेखी ॥  
 मुनिहि मोह मन हाथ पराएँ । हँसहिँ संभुगन अति सचु पाँएँ ॥  
 जदपि मुनाह मुनि अटपटि बानी । समुझि न परै बुद्धि भ्रम सानी ॥  
 काहुँ न लखा सो चरित बिसेखा । सो सरूप नृप कन्या देखा ॥  
 मर्कट बदन भयकर देही । देखत हृदयँ क्रोध भा तेही ॥  
 दो०—सखी सग लै कुअरि तब चलि जनु राजमराल ।

देखत फिरै महीप सब कर सरोज जयमाल ॥१३४॥  
 जेहि दिसि बैठे नारद झूली । सो दिसि तेहिँ न बिलोकी मूली ॥  
 पुनि पुनि मुनि उकसहिँ अकुलाहीं । देखि दसा हरगन मुसुकाहीं ॥

धरि नृप तनु तहँ गएउ कृपाला । कुअरि हरपि मेलेउ जयमाला ॥  
 दुलहिनि लै गए१ लेच्छनिवासा । नृप समाज सब भएउ निरासा ॥  
 मुनि अति विकल मोह मति नाठी । मति गिरि गई छूटि जनु गौठी ॥  
 तब हरगन बोले मुमुकाई । निज मुख मुकुर बिलोकहु जाई ॥  
 अस कहि दोउ भागे भयँ भारी । बदन दीख मुनि वारि निहारी ॥  
 बेपु बिलोकि क्रोध अति बाढ़ा । तिन्हहि सराप दीन्ह अति गाढ़ा ॥  
 दो०—होहु निसाचर जाइ तुम्ह कपटी पापी दोउ ।

हँसेहु हमहि सो लेहु फल बहुरि हँसेहु मुनि कोउ ॥१३५॥

पुनि जल दीख रूप निज पावा । तदपि हृदयँ संतोष न आवा ॥  
 फरकत अधर कोप मन माहीं । सपदि चले कमलापति पाहीं ॥  
 दैहीं साप कि मरिहौ जाई । जगत मोरि उपहास कराई ॥  
 बीचहि पंथ मिले दनुजारी । संग रमा सोइ राजकुमारी ॥  
 बोले मधुर वचन सुरसाई ॥ मुनि कहँ चले बिकल की नाई ॥  
 सुनत वचन उपजा अति क्रोधा । माया बस न रहा - मन बोधा ॥  
 पर सपदा सकहु नहि देखी । तुम्हरेँ इरिषा कपट बिसेखी ॥  
 मथत सिंधु रुदहि बौराएहु । सुरन्ह प्रेरि बिष पान कराएहु ॥

दो०—असुर सुरा बिष सकरहि आपु रमा मनि चारु ।

स्वारथ साधक कुटिल तुम्ह सदा - कपट ड्रवहारु ॥१३६॥  
 परम स्वतंत्र न सिर पर कोई । भावै मनहि करहु तुम्ह सोई ॥  
 मलेहि मंद मंदेहि मल करहु । बिसमय हरप न हिअ कछु धरहु ॥  
 डहकि डहकि परिचेहु सब काहु । अति असक मन सदा उछाहु ॥  
 कर्म सुमामुम तुम्हहि न बाधा । अब लागि तुम्हहि न काहँ साधा ॥  
 भले भवन अब वायन दीन्हा । पावहुगे फल आपन कीन्हा ॥

बंचेहु मोहि अगनि धरि देहा । सोइ तनु भारहु माप मम पहा ॥  
 कपि आठुति तुम्ह कीन्हि हमारी । करिहि कीस सहाय तुम्हारी ॥  
 मम अपनार कीन्ह तुम्ह मारी । नारि बिरहं तुम्ह होष दुमारी ॥  
 दो०—साप सीस धरि हरपि हिअं प्रभु बहु बिननी कीन्हि ।

निज माया कै प्रबलना करपि कृपानिधि लीन्हि ॥१३७॥  
 जब हरि माया दूरि निचारी । नहिं तहं रमा न राजकुमारी ॥  
 तब मुनि अति सभौन हरि चरना । गहे पाहि प्रनतारनि हरना ॥  
 मृषा होउ मम साप कृपाला । मम इच्छा कह दीन दयाला ॥  
 मैं दुर्वचन कहे बहुतेरे । कह मुनि पाप मिटिहिं किमि मेरे ॥  
 जपहु जाइ सकर सत नामा । होइहि हृदयें तुरत विश्रामा ॥  
 कोउ नहिं सिव समान प्रिय मोरें । असि परतीति तजहु जनि मोरें ॥  
 जेहिपर कृपा न करहिं पुरारी । सो न पाव मुनि भगति हमारी ॥  
 अस उर धरि महि बिचारहु जाई । अथ न तुम्हहि माया निअराई ॥  
 दो०—बहु बिधि मुनिहि प्रबोधि प्रभु तब भए अंतरधान ।

सत्य लोक नारद चले करत राम गुन गान ॥१३८॥  
 हर गन मुनिहि जात पथ देखी । बिगत मोह मन हरप पितेखी ॥  
 अति सभौत नारद पहिं आप । गहि पद आरत बचन मुनाए ॥  
 हर गन हम न विप्र मुनिराया । बड़ अपराध कीन्ह फल पाया ॥  
 साप अनुग्रह करहु कृपाला । बोले नारद दीनदयाला ॥  
 निसिचर जाइ होहु तुम्ह दोऊ । बैभव बिपुल तेज बल होऊ ॥  
 भुज बल बिस्व जितन तुम्ह जहिआ । धरिहि बिष्णु मनुज तनु तहिआ ॥  
 समर मरन हरि हाथ तुम्हास । होइहु मुकुत न पुनि संसारा ॥  
 चले जुगल मुनि पद सिर नाई । भये निसाचर कालहि पाई ॥

दो०—एक कल्प एहि हेतु प्रभु लीन्ह मनुज अवतार ।

सुर रंजन सज्जन सुखद हरि भंजन भुवि भार ॥१३६॥  
एहि विधि जनम करम हरि केरे । सुंदर सुखद बिचित्र घनेरे ॥  
कल्प कल्प प्रति प्रभु अवतारही । चारु चरित नाना विधि करही ॥  
तब तब कथा सुनीसन्ह गार्ई १ । परम पुनीत प्रबंध बनाई २ ॥  
बिबिध प्रसंग अनूप बखाने । कहहि न मुनि आचरजु सयाने ॥  
हरि अनंत हरिकथा अनंत । कहहि मुनिहि बहुविधि सब संता ॥  
रामचंद्र के चरित सुहाए । कल्प कोटि लागि जाहि न गाए ॥  
यह प्रसंग मै कहा भवानी । हरि मार्ग मोहहि मुनि जानी ॥  
प्रभु कौतुकी प्रनत हितकारी । सेवत सुनभ मरुल दुखहारी ॥  
सो०—सुर नर मुनि कोउ नाहि जेहि न मोह माया प्रबल ।

अस बिचारि मन माहि भजिअ महामाया पतिहि ॥१४०॥  
अपर हेतु सुनु सैलकुमारी । कहौ बिचित्र कथा बिस्तारी ॥  
जेहि ३ कारन अज अगुन अरुथा । ब्रह्म भएउ कोसनपुर भूषा ॥  
जो प्रभु बिपिन फिरत तुम्ह देखा । बधु समेत धरे मुनि जेपा ॥  
जामु चरित अवलोकि भवानी । सती सरीर रहिहु बौरानी ॥  
अजहुं न छाया मिटति तुम्हारी । तामु चरित सुनु भ्रम रुज हारी ॥  
लीला कीन्ह जो तेहि अवतारा । सो सब कहिहौ मति अनुसार ॥  
भरद्वाज मुनि संकर बानी । सकुचि सप्रेम उमा मुसुकानी ॥  
लगे बहुरि बरनै वृषकेतू । सो अवतार भएउ जेहि हेतू ॥  
दो०—सो मै तुम्ह सन कहौ सब सुनु मुनीस मन लाइ ।

रामकथा कलिमल हरनि मंगल करनि सुहाइ ॥१४१॥

१—प्र० : तब तब कथा सुनीसन्ह गार्ई । दि० : प्र० । तृ० : तब तब कथा बिचित्र सुहाई । च० : प्र० ।

२—प्र० : परम पुनीत प्रबंध बनाई । [ दि० : परम बिचित्र प्रबंध बनाई ] । तृ० : परम पुनीत मुनामन्द गर्ई । च० : प्र० ।

३—[ प्र० : केहि ] । दि० : जेहि । तृ०, च : नि ।

स्वार्यम् मनु अरु सतरूपा । जिन्हतें भै नर सृष्टि अनूपा ॥  
 दंपति धरम आचरन नीका । अजहँ गाव श्रुति जिन्हकै लीका ॥  
 नृप उत्तानपाद सुत तासू । प्रभु हरि भगत भएउ सुन जासू ॥  
 लघु सुत नाम प्रियव्रत ताही । बेद पुरान प्रसंसहिं जाही ॥  
 देवहूति पुनि तासु कुमारी । जो मुनि कर्दम कै प्रिय नारी ॥  
 आदि देव प्रभु दीन दयाला । जठर धरेउ जेहिं कपिल कृपाला ॥  
 सांख्य सात्वत जिन्ह प्रगट बखाना । तत्त्व विचार निपुन भगवाना ॥  
 तेहिं मनु राज कीन्ह बहु काला । प्रभु आयसु सब विधि प्रतिपाला ॥  
 सो०-होइ न विषय विराग भवन बसत आ चौथ पनु ।

हृदय बहुत दुख लाग जनम गएउ हरि भगति बिनु ॥ १४२ ॥  
 बरबस राज सुनाह तब२ द्वीन्हा । नारि समेत गवन बन३ कीन्हा ॥  
 तीरथ वर नैमिष बिल्याता । अति पुनीत साधक सिधि दाता ॥  
 यसहिं तहाँ मुनि सिद्ध समाजा । तहँ हिअँ हरषि चलेउ मनु राजा ॥  
 पथ जात सोहहिं मतिधीरा । ज्ञान भर्गात जनु धरे सरीरा ॥  
 पहुँचे जाइ धेनुमति तीरा । हरषि महाने निरमल नीरा ॥  
 आप मिलन सिद्ध मुनि जानी । धरम धुरंधर नृपरिषि जानी ॥  
 जहँ जहँ तीरथ रहे सुहाए । मुनिन्ह सकल सादर करवाए ॥  
 कृत सरीर मुनि पट परिधाना । सत४ समाज निठ सुनहिं पुगना ॥  
 दो०-द्वादस अक्षर मंत्र पुनि जपहिं सहित अनुशास ।

यामुदेव पद पंकरूह दंपति मन अति लाग ॥ १४३ ॥  
 करहिं अहार सक फल कदा । सुमिरहिं ब्रह्म सच्चिदानंदा ॥  
 पुनि हरि हेतु करन तप लागे । बारि आधार मूल फल त्यागे ॥

१-प्र० : मर । [ डि० : २६ ] । १०, १० : प्र० ।

२-प्र० : तब । [ डि० : (३) (१) (-) पुनि, (५७) नृप ] । [ १० : २५ ] । १० :  
 प्र० [ (-) : नृप ] ।

३-[ प्र० : १५ ] । डि० : २८ । १०, १० : डि० ।

उर अभिलाष निरंतर होई । देखिअ नयन परम प्रभु सोई ॥  
अगुन अखंड अनंत अनाशी । जेहि चिन्हहि परमारथवादी ॥  
नेति नेति जेहि वेद निरुपा । निज नर<sup>१</sup> निरुपाधि अनूपा ॥  
सभु विरचि बिन्दु भगवाना । उपजहि जासु अस ते नाना ॥  
ऐसेउ प्रभु सेवक बस अहई । भगत हेतु लीला तनु गहई ॥  
जौ यह बचन सत्य श्रुति भाषा । तौ हमार पूजिहि अभिलाषा ॥  
दो०—एहि बिधि बीते बरष पट सहस बारि आहार ।

सबत सप्त सहस पुनि रहे समीर अधार ॥१४४॥  
बरष सहस दस त्यागेउ सोऊं । ठाढे रहे एक पद दोऊ ॥  
बिधि हरि हर तप देखि अपारा । मनु समीप आए बहु बारा ॥  
मौगहु पर बहु भांति लोभाप । परम धीर नहि चलिहि चलाप ॥  
अस्थि मात्र होइ रहे सरीरा । तदपि मनाग मनहि नहि पीरा ॥  
प्रभु सर्वज्ञ दास निज जानी । गति अनन्य तापम नृप रानी ॥  
मौगु मौगु धुनि<sup>२</sup> मइ नम्रवानी । परम गंभीर कृपामृत सानी ॥  
मृतक जिआवनि गिरा सुहाई । अन्न रंघ होइ उजव आई ॥  
हृष्ट पुष्ट तन भए सुहाए । मानहु अगहि भवन ते आए ॥  
दो०—सवन सुधा सम बचने सुनि पुलक प्रकुलित ग्यात ।

बोले मनु करि दंडवत प्रेम न हृदयें समात ॥१४५॥  
सुनु सेवक सुरतक सुरधेनू । बिधि हरि हर बंदित पद रेनू ॥  
सेवत सुलभ सकल सुखदायक । प्रनतपाल सचराचर नायक ॥  
जौ अनाथ हित हम पर नेहू । तौ प्रसन्न होइ यह घर देहू ॥  
जो सरूप बस सिव मन माहीं । जेहि कारन मुनि जनन कराहीं ॥  
जो मुसुंडि मन मानस हसा । सगुन अगुन जेहि निगम प्रसेसा ॥

१—प्र० : निज नर । दि० : प्र० [ (४) चिदानंद ] । नृ०, च० : प्र ।

२—प्र० : धुनि । दि० : प्र० । [ नृ० : नर ] । च० : प्र० [ (६) (६अ) : नर ] ।



देखहिं हम सो रूप भरि लोचन । कृपा काहु प्रननारनि मोचन ॥  
 दंपति बचन परम प्रिय लागे । मृदुल विनीत प्रेम रम पागे ॥  
 भगतवदन प्रभु कृपानिधाना । विस्ववास प्रगटे भगवाना ॥  
 दो०—नील सरोरुह नील मनि नील नीरधर<sup>१</sup> म्याम ।

लाजहिं तनु सोभा निराख कोटि कोटि सत काम ॥१४६॥  
 सरद मयक वदन छवि सीधो । चारु कपोल चिबुक दर भीषा ॥  
 अधर अरुन रद सुंदर नासा । बिधु कर निकर विनिन्दक हासा ॥  
 नव अबुज अंबक छवि नोकी । चितवनि ललित भावनी जी की ॥  
 भृकुटि मनोज चाप छविहारी । तिलक ललाम्पटल दुतिकारी ॥  
 कुंडल मकर मुकुट सिर आजा । कुटिल केस जनु मधुप समजा ॥  
 उर श्रीवत्स रुचिर बनमाला । पदिक हार भूपन मनि जाला ॥  
 केहरि कंधर चारु जनेऊ । बाहु विभूषन सुंदर तेऊ ॥  
 करि कर सरिस सुभग भुज दंडा । कटि निपंग कर सर कोदंडा ॥  
 दो०—तड़ित विनिन्दक पीत पट उदर रेख बर सीनि ।

नाभि मनोहर लेति जनु जमुन भँवर छवि छीनि ॥१४७॥  
 पद राजीव वरनि नहि जाहीं । मुनि मनमधुप यसहिंजिन्ह<sup>२</sup> माहीं ॥  
 धाम भाग सोभति अनुकूला । आदिसक्ति छविनिधि जगमूला ॥  
 जासु अस उपजहिं गुन खानो । अगनिन लच्छि उमा ब्रह्मानी ॥  
 भृकुटि बिलास जासु जग होई । राम बांम दिसि सीता सोई ॥  
 छविसमुद्र हरि रूप बिलोकी । एकटक रहे नयनपट रोकी ॥  
 चितवहिं सादर रूप अनूपा । तृप्ति न मानहिं मनु सतरूपा ॥  
 हरप विवस तन दसा भुलानी । परे दंड इव गहि पद पानी ॥  
 सिर परसे प्रभु निज कर कंजा । तुरत उठाय करुनापुंजा ॥

१—[प्र० : नीरनिधि ] । त्रि० : नीरधर । त्र०, च० : द्वि० ।

२—[ प्र० : जेन्ह ] । द्वि० : जिन्ह । त्र० : द्वि० । च० : (६) (६) जेन्ह, (८) तेन्ह ।

दो०—बोले कृपानिधान पुनि अति प्रसन्न मोहि जानि ।

माँगहु बर जोइ भाव मन महादानि अनुमानि ॥१४८॥  
 सुनि प्रभु वचन जोरि जुग पानी । धरि धीरजु बोले मृदु बानी ॥  
 नाथ देखि पद कमल तुम्हारे । अब पूरे सब काम हमारे ॥  
 एक लालसा बढ़ि उर माहीं । सुगम अगम कहि जाति मो नाही ॥  
 तुम्हहि देत अति सुगम गोसाई । अगम लाग मोहि निज कृपनाई ॥  
 जथा दग्ध बिबुधतरु पाई । बहु सपनि माँगत सकुचाई ॥  
 तासु प्रभाउ जान हिअर सोई । तथा हृदय मम संसय होई ॥  
 सो तुम्ह जानहु अंतरजामी । पुरवहु मोर मनोरथ स्वामी ॥  
 सकुच विहाइ माँगु नृप मोही । मोरें नहि अदेय कछु तोही ॥  
 दो०—दानि सिरोमनि कृपानिधि, नाथ कहौ सतिभाउ ।

चाहौ तुम्हहि समान सुन प्रभु सन कवन दुराउ ॥१४९॥  
 देखि प्रीति सुनि वचन अमोले । एवमस्तु करुनानिधि बोले ॥  
 आपु सरिस खोजौ कहैं जाई । नृप तव तनय होब मैं आई ॥  
 सतरूपहि बिलोक कर जोरे । देबि माँगु बर जो रुचि तोरें ॥  
 जो बर नाथ चतुर नृप माँगा । सोइ कृपालु मोहि अति प्रिय लागा ॥  
 प्रभु परंतु सुठि होति दिठाई । जदपि भगत हित तुम्हहि सुहाई ॥  
 तुम्ह ब्रह्मादि जनक जगस्वामी । ब्रह्म सफल उर अंतरजामी ॥  
 अस समुझन मन संसय होई । कहा जो प्रभु प्रवान पुनि सोई ॥  
 जे निज भगत नाथ तव अहहीं । जो सुख पावहि जो गति लहहीं ॥  
 दो०—सोइ सुख सोइ गति सोइ भगति सोइ निज चरन सनेहु ।

सोइ विवेक सोइ रहनि प्रभु हमहि कृपा करि देहु ॥१५०॥

१—प्र० : बोली । दि० : बोले । नृ०, च० : दि० ।

२—प्र० : जान दिअ । [दि०, नृ० : न जानहि] । च० : (६) (६अ) जानहि,  
 (८) जानत ] ।

३—[ प्र० : भगति ] । दि० : भगत । उ० : दि० । [च० : (६) (६अ) भगति,  
 (८) में शब्द छूटा हुआ है ] ।

मुनि मृदु गूढ़ रुचिर वचन रचना । कृपासिन्धु बोले मृदु वचना ॥  
 जो कष्ट रुचि तुम्हारे मन माही । मैं गो दीन्ह सब समय नाही ॥  
 मातु बिप्रेक जलौकिक तोरें । कष्टहु न मिटिहि अनुग्रह मोरें ॥  
 यदि चान मनु कहेउ तुम्होरी । अवर एक विनती प्रभु मोरी ॥  
 सुत विषय तव पद गनि होऊ । मोहि बड़ मुद कही किा कोऊ ॥  
 मनिबिनु कनि जिमि जलबिनु मीना । ममजीवन मिनिरे तुम्हहि अधीना ॥  
 अस बर भोगि चरन गहि रहेऊ । एवमस्तु करुनानिधि रहेऊ ॥  
 अर तुम्ह मम अनुसासन मानी । बसहु जाइ मुपति रजयानी ॥  
 सो०—तहैं करि भोग तिसालर तात गएँ कलु काल पुनि ।

होइहु अवध मुआल तब मैं होय तुम्हार सुन ॥१५१॥  
 इच्छामय नर बेप सँवारे । होइहौ प्रगट निकेत तुम्हारें ॥  
 असन्ह सहित देह धरि ताता । करिहौ चरित भगत सुख दाता ॥  
 जे५ मुनि सादर नर बड़भागी । भव तरिहहि ममता मद त्यागी ॥  
 आदिसत्ति जेहि जग उपजाया । सोउ अवतरिहि मोरि यह माया ॥  
 पूरव मैं अभिलाष तुम्हारा । सत्य सत्य पन सत्य हमारा ॥  
 पुनि पुनि अस कहि कृपा निधाना । अतरधान भए भगवाना ॥  
 दपति उर धरि भगतकृपाला । तेहि आश्रम निवसे कलु काला ॥  
 समय पद तनु तजि अनयासा । जाइ कीन्ह अमरायनि बासा ॥  
 दो०—यह इतिहास पुनीत आत उमहि कही कृपरेतु ।

भरद्वाज सुनु अपर पुनि राम जनम कर हेतु ॥१५२॥  
 धुनु मुनि कथा पुनीत पुरानी । जो गिरिजा प्रति सभु बलानी ॥

१—प्र० वर । [दि० वर] । [न० वर] । २० प्र० [ ( ) वर ] ।

२—प्र० २ वि० । १५ प्र० [ (५) (५) - १ वि० ] । [ १० वि० ] । २० १०  
 [ ( - ) वि० ] ।

३—[ प्र० • गिलास ] । दि० विसाल । १०, २० वि० ।

४—प्र० जे वि०, १० प्र० । [ २० (२) (२) जे वि० ( - ) वि० ] ।

विश्व विदित एक कैकय देस । सत्यकेतु तहँ वैसे नरेसु ॥  
 धरम धुरंधर नीति निधाना । तेज प्रताप सील बलवाना ॥  
 तेहि के भए जुगल सुत बीरा । सब गुन घाम महा रनधीरा ॥  
 गजधनी जो जेठ सुन आही । नाम प्रतापमानु अस ताही ॥  
 अपर सुतहि अरिर्मर्दन नामा । भुज बल अतुल अचल संग्रामा ॥  
 भाइहि भाइहि धरम समीती । सकल दोष छल बरजिन प्रीती ॥  
 जेठे सुतहि राज नृप दीन्हा । हरि हित आपु गवन वन शीन्हा ॥  
 दो०—जब प्रतापरवि भएउ नृप फिरी दोहाई देस ।

प्रजा पाल अति वेद विधि कनहुँ नहीं अप लेस ॥१५३॥  
 नृप हितकारक सचिव सयाना । नाम धरमरुचि सुक समाना ॥  
 सचिव सयान बंधु बलबीरा । आपु प्रतापपुंज रनधीरा ॥  
 सेन संग चतुरंग अपारा । अमिन सुभट सब समर जुम्भारा ॥  
 सेन विलोकि राउ हरपाना । अरु बाजे गहगहे निसाना ॥  
 विजय हेतु कटगई बनाई । सुदिन साधि नृप चलेउ बजाई ॥  
 जहँ तहँ परी अनेक सराई । जीते सकल भूप बरिआई ॥  
 सप्त दीप भुज बल बस कीन्हे । लै लै दंड धौंड़ि नृप दीन्हे ॥  
 सकल अवनि मंडल तेहि काला । एक प्रतापमानु महिपाला ॥  
 दा०—स्वयस विश्व करि बाहु बल निज पुर कीन्ह प्रवेसु ।

अरथ धरम कामादि सुख, सेवै समय नरेसु ॥१५४॥  
 भूप प्रतापमानु बल पाई । कामधेनु भै मूर्ति सुहाई ॥  
 सप्त दुल्ल बरजित प्रजा सुसारी । धरमसील सुंदर नर नारी ॥  
 सचिव धरमरुचि हरि पद प्रीती । नृप हित हेतु सिखव नित नीती ॥  
 गुर सुर संन पितर महिदेवा । करै सदा नृप सब कै सेवा ॥  
 भूप धरम जे वेद बसाने । सकल करै सादर सुख माने ॥  
 दिन प्रति देह विविध विधि दाना । सुनै साख बर वेद पुराना ॥  
 नाना बाणी कूप तड़ागा । सुमन बाटिका सुंदर बागा ॥

त्रिप्रभवन सुरभवन सुहाए । सब तीरथन्ह विचित्र बनाए ॥  
दो०—जहँ लगि कहे पुरान श्रुति एक एक सब जाग ।

बार सहस सहस नृप किए सहित अनुराग ॥१५५॥  
हृदयँ न कह्यु फल अनुसधाना । मूप बिबेकी परम मुज ना ॥  
करै जे धरम करम मन बानी । बामुदेव अर्पित नृप जानी ॥  
चढ़ि बर बाजि बार एक राजा । मृगया कर सब साजि समाजा ॥  
बिन्ध्याचल गँभीर बन गएऊ । मृग पुनीत बहु मारत भएऊ ॥  
फिरत बिपिन नृप दीख बराह । जनु बन दुरेठ ससिहि प्रसि राह ॥  
बड़ बिधु नहिं समात मुख माहीं । मनहु कोष बस उगिलत नाहीं ॥  
कोल कराल दसन छवि गाई । तनु बिसाल पीवर अधिकई ॥  
घुरुघुरात हय आरो पाएँ । चकित बिलोक्त कान उठाएँ ॥  
दो०—नील महीषार सिलर सम देखि बिसाल बराहु ।

चपरि चलेउ हय सुदुकि नृप हौंकि न होइ निबाहु ॥१५६॥  
आगत देखि अधिक रव बाजी । चलेउ बराह मरुत गति भाजी ॥  
तुरत कीन्ह नृप सर सधाना । महि मिलि गएउ बिलोकन बाना ॥  
तकि तकि तीर महीस चलावा । करि छल सुअर सरीर बचाया ॥  
प्रगटत दुरत जाइ मृग भागा । रिस बस भूपर चलेउसँग लागा ॥  
गएउ दूरि धन गहन बराह । जहँ नाहिन गज बाजि निबाह ॥  
अति अकेल बन विपुल फलेसु । तदपि न मृग मग तजै नोसु ॥  
कोल बिनोकि मूप बड़ धीरा । मागि पैठ गिरि गुहों गँभीरा ॥  
अगम देखि नृप अति पछिताई । फिरेउ महाबन परेउ भुलाई ॥  
दो०—खेद खिन्न लुद्धित तृपित राजा बाजि समेत ।

खोजन ठाकुल सरित सर जल बिनु मएउ अचेन ॥१५७॥  
फिरत बिपिन आश्रम एक देखा । तहँ बस नृपति कपट मुनि बेपा ॥

जासु देस नृप लीन्ह छड़ाई । समर सेन तजि गएउ पराई ॥  
 समय प्रतापमानु कर जानी । आपन आति असमय अनुमानी ॥  
 गएउ न गृह मन बहुत गलानी । मिला न राजहि नृप अभिमानी ॥  
 रिस उर गारि रंक जिमि राजा । विपिन बसैं तापम कै साजा ॥  
 तासु समीप गवन नृप कीन्हा । यह प्रनापरवि तेहिं तम चीन्हा ॥  
 राउ तृपित नहिं सो पहिचाना । देखि सुषेप महामुनि जाना ॥  
 उतरि तुरग तें कीन्ह प्रनामा । परम चतुर न कहेउ निज नामा ॥  
 दो०—भूपति तृपित बिलोकि तेहिं सरवर दीन्ह देखाइ ।

मञ्जन पान समेत हय कीन्ह नृपति हरपाइ ॥१५८॥  
 गै श्रम सकल मुखी नृप भएऊ । निज आश्रम तापम लै गएऊ ॥  
 आसन दीन्ह अस्त रवि जानी । पुनि तापस बोलेउ मृदु बानी ॥  
 को तुम्ह कस बन फिरहु अकेलें । सुंदर जुवा जीव परहेलें ॥  
 चक्रवर्ति के लच्छन तोरें । देखत दया लागि अति मोरें ॥  
 नाम प्रतापमानु अवनीसा । तासु सचिव मै सुनहु मुनीसा ॥  
 फिरत अहेरें परेउँ भुलाई । बड़ें भाग देखेउँ पद आई ॥  
 हम कहें दुर्लभ दरस तुम्हारा । जानन हौ कहु भल होनिहारा ॥  
 कह मुनि नात भएउ अधियारा । जोजन सत्तरि नगरु तुम्हारा ॥

दो०—निमा घोर गंभीर बन पंथ न सुनहु सुजान ।

यमहु आजु अस जानि तुम्ह जाएहु होत बिहान ॥

तुलसी जसि भवितव्यता तैसी मिलै सहाइ ।

आपुनु आवइ ताहि पहिं ताहि तहों लै जाइ ॥१५९॥

मलेहिं नाथ आयसु घरि सीसा । बौधि तुरग तरु बैठ महीसा ॥

नृप बहु भाँति प्रसंसेउ ताही । चरन बंदि निज भाग्य सराही ॥

पुनि बोलेउ मृदु गिरा सुहाई । जानि पिता प्रभु करौ ढिठाई ॥

मोहि मुनीस मुन सेवरु जानी । नाथ नाम निज कहहु बखानी ॥

तेहि न जान नृप नृपहि सो जाना । मूप मुन्द सो कष्ट सयाना ॥  
 बैरी पुनि छत्री पुनि राजा । छल बन कीन्द चहै निज काजा ॥  
 समुझि राजसुख दुसित अगती । अगो अनल इव सुनग दाती ॥  
 सरल बचन नृप के सुनि राना । बयर सैभारि हृदय मगाना ॥  
 दो०-कष्ट बोरि बानो मृदुल बोलेउ जुगुति ममेत ।

नाम हमार मिथारि अथ निर्धन रहित निकेन ॥१६०॥  
 कह नृप जे बिज्ञान निधाना । सुह मारिसे गलित अभिमाना ॥  
 सदा रहहि अपनपौ दुराए । सत्र बिधि कुसन कुपेय बनाए ॥  
 तेहि तें कहहि सत्र श्रुति टेरें । पगम अकिंचन धिय हरि करें ॥  
 सुह सम अधन भित्तिारि अगेहा । होत बिरचि मिबहि मंदेहा ॥  
 जोसि सोसि सब चरन नमामी । मो पर कृपा करिअ अथ दशमी ॥  
 सहज प्रीति नृपति के देखी । आपु बिषय बिस्वास बिसेयी ॥  
 सब प्रकार राजहि अपनाई । बोलेउ अधिक सनेह जनाई ॥  
 सुनु सति माउ कहौ मदिपाला । इहाँ बसन बीते बहु काला ॥  
 दो०-अथ लगि मोहि न मिलेउ कोउ मै न जनायौ काहु ।

लोकमान्यता अनल सम कर तप कानन दाहु ॥

सो०-नुलसी देखि सुनेषु भूलहि मूढ़ न चतुर नर ।

सुदर केकहि पेशु बचन सुधा सम असन अहि ॥१६१॥  
 तातें गुप्त रहो जग माहीं । हरि तजि किमपि प्रयोजन नाही ॥  
 प्रभु जानत सत्र बिनहि बनाए । कहहु कवन सिधि लोक रिभाए ॥  
 सुह सुचि सुमति परम प्रिय मोरें । प्रीति प्रतीति मोहि पर तोरें ॥  
 अब जौ तात दुरावौ तोही । दारुन दोष घटे अति मोही ॥  
 जिमि जिमि तापसु कथै उदासा । तिमि तिमि नृपहि उपज बिस्वासा ॥

देखा स्वयं कर्म मन बानी । तब बोला तापस बग१ ध्यानी ॥  
नाम हमार एकतनु माई । सुनि नृप बोलेउ पुनि सिरु नाई ॥  
कहहु नाम कर अरथ बखानी । मोहि मेवक अति आपन जानी ॥  
दो०—आदि सृष्टि उपजी जबहि तब उपपति भै मोहि ।

नाम एकतनु हेतु तेहि देह न धरी बहोरि ॥१६२॥  
जनि आचरजु कहु मन माहीं । सुत तप तैं दुर्लभ कछु नाहीं ॥  
तप बल तैं जग सृजै बिधाता । तप बल बिष्णु भए परित्राता ॥  
तपबल संभु कहि संघारा । तप तैं अगम न कछु संसारा ॥  
भएउ नृपहि सुनि अति अनुसगा । कथा पुरातन कहै सो लागा ॥  
करम धरम इतिहास अनेका । करै निरूपन बिरति विवेका ॥  
उदमव पालन प्रलय कहानी । कहेसि अमित आचरज बखानी ॥  
सुनि महीष तापस बस भएऊ । आपन नाम कहन तब लागू ॥  
कह तापस नृप जानौं तोही । कीन्हेहु कपट लाग भल मोही ॥  
सो०—सुनु महीष असि नीति जहँ तहँ नाम न कहहि नृप ।

मोहि तोहि पर अति प्रीति सोइ चतुरता बिचारि२ तब ॥१६३॥  
नाम तुम्हार प्रतापदानेसा । सत्यकेतु तब पिता नरेसा ॥  
गुर प्रसाद सब जानिअ राजा । कहिअ न आपन जानि अकांजा ॥  
देखि तात तब सहज सुधार्ई । प्रीति प्रतीति नीति निपुनार्ई ॥  
उपजि परी ममता मन मोरें । कहौं कथा निज पूर्व तोरें ॥  
अब प्रसन्न मैं संसय नाहीं । माँगु जो भूप भाव मन माहीं ॥  
सुनि सुबचन भूपति हरपाना । गहि पद बिनय कीन्हि विधि नाना ॥  
कृपासिंधु मुनि दरसन तोरें । चारि पदारथ करतल मोरें ॥  
प्रसुहि तथार्थ प्रसन्न बिलोकी । माँगि अगम बर होउँ असोकी ॥

१—प्र० : दम । द्वि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : वरु ] । [नृ० : वरु] । च० : प्र० [ (८) : वरु ] ।

२—प्र० : विचारि । द्वि० : प्र० । [नृ० : देखि] । च० : प्र० [ (८) : जानि ] ।



दो०—जरा मन दुख रहित तनु समर जिने जनि१ कोठ ।

एषध्वत्र रिपुहीन महि राज कल्प सन होउ ॥१६४॥

कट तापस नृप ऐमेइ होऊ । कारन एक कठिन मुनु सोऊ ॥

काली तुअ पद नाइहि सीसा । एक विप्र तुन छादि महीमा ॥

तप बल धर सदा बरिआरा । निहकें कोप न कोउ रमवाग ॥

जौ बिपन्ह वम करहु नरेसा । तो तुअ वम बिधि बिन्दु महेमा ॥

बल२ न ब्रह्मरुल सन बरिआई । सत्य कहाँ दोउ भुजा उठाई ॥

विप्र स्नाप विनु सुनु महिपाला । तोर नास नहि कवनेहु काला ॥

हरगोउ राउ वचन सुनि तासू । नाथ न होइ मोर अर नासू ॥

तत्र प्रसाद प्रभु कृपानिधाना । मोकहु सर्व काल कल्याणा ॥

दो०—एवमस्तु कहि कपट मुनि बोला पुटिल बहोरि ।

मिलव हमार मुनाव निज कहहु त हमहि न खोरि ॥१६५॥

तातेँ मै तोहि परजौ राजा । कहैं कथा तत्र परम अकाजा ॥

छटैं श्रवण यह परत कहानी । नास तुम्हार सत्य मन बानी ॥

यह प्रगटैं अथग द्विज भाषा । नास तोर सुनु मानुषनापा ॥

आन उगयैं निधन तब नाही । जौ हरि हर कोपहि मन माही ॥

सत्य नाथ पद गहि नृप भाषा । द्विज गुर कोप कहहु को राला ॥

राखै गुर जौ कोप बिधाता । गुर प्रियेव नहि कोउ जग ब्राना ॥

जौ न चलव हम कहैं तुम्हारे । होउ नास नहि सोच हमारैं ॥

एरुहि डर डरपत मन मोरा । प्रभु महिदेव स्नाप अनि घारा ॥

दो०—होहि विप्र बस कवन बिधि कहहु कृपा करि सोउ ।

तुम्ह तजि दीनदयाल निज हितू न देखौ कोउ ॥१६६॥

सुनु नृप बिबिध जतन जग माहीं । कष्टसाध्य पुनि होहि कि नाही ॥

१—प्र० : जनि । दि० : प्र० [ (५३) : जिनि ] । वृ० : प्र० । [च० : जिनि] ।

२—प्र० : बने । दि० : बल । वृ० : च० : दि० ।

अहे एक अति सुगम उपाई । तहाँ परंतु एक कठिनाई ॥  
 मम आधीन जुगुति नृप सोई । मोर जाव तव नगर न होई ॥  
 आजु लगे अरु जय तें भएउं । काहू के गृह ग्राम न गएऊं ॥  
 जौं न जाउं तव होइ अकाजू । बना आइ असमंजस आजू ॥  
 सुनि महीम बोलेउ मृदु बानी । नाथ निगम असि नीति बखानी ॥  
 बड़े सनेह लघुन्ह पर करहीं । गिरि निज सिरन्हि सदा तृन घरहीं ॥  
 जलधि' अगाध मौलि यह फेनू । संतत घरनि घरत सिर रेनू ॥  
 दो०—अस कहि गहे नरेस पद स्वामी होहु कृपाल ।

मोहि लागि दुख सहिअ प्रसु सज्जन दीनदयाल ॥१६७॥  
 जानि नृपहि आपन आधीना । बोला तापस कपट प्रवीना ॥  
 सत्य कहौं मूपति सुनु तोही । जग नाहिंन दुर्लभ फलु मोही ॥  
 अवसि काज मैं करिहौं तोरा । मन क्रम बचन भगत तैं मोरा ॥  
 जोग जुगुति जपर मंत्र प्रमाऊ । फलै तबहि जब करिअ दुराऊ ॥  
 जौं नरेस मैं करौं रसोई । तुम्ह पहसहु मोहि जान न कोई ॥  
 अन्न सो जोइ जोइ भोजन करई । सोइ सोइ तव आयसु अनुसरई ॥  
 पुनि तिन्हकें गृह जेवै जोऊ । तव बस होइ भूप सुनु सोऊ ॥  
 जाइ उपाय रबहु नृप एहू । संवत भरि संकलप करेहू ॥  
 दो०—निन नूतन द्विज सहस सत बरेहु सहित परिवार ।

मै तुम्हरे संकलप लागि दिनहिं करवि जैबनार ॥१६८॥  
 एहि विधि भूप कष्ट अति थोरें । होइहहिं सकल विप्र बस तोरें ॥  
 करिहहिं विप्र होम मख सेवा । तेहि प्रसंग सहजेहिं बस देवा ॥  
 और एक तोहि कहौं लखाऊ । मैं एहि वेष न. आउव काऊ ॥

१—[प्र० : जल ] । [ दि० : जल ] । वृ : जलधि । च० : नृ० ।

२—प्र० : प्रम । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (६क) : मन ] ।

३—प्र० : जय । दि० : प्र० । [ वृ० : तप ] । [ च० : (६) (६क) तप, (=) जो ] ।

तुम्हरे उपरोहित कहूँ राया । हरि आनन्य मै करि निज माया ॥  
 तपबल तेहि करि आपु समाना । रखिहौ इहाँ बरष पारवाना ॥  
 मै धरि तासु बेप सुनु राजा । सब बिधि तोर सवारन काजा ॥  
 गै निमि बहुत सयन अब कोजै । मोहि तोहि भूप भेंट दिन तीजै ॥  
 मै तपबल तोहि तुरग समेता । पहुँचैहौ सोवनहि निरुता ॥  
 दो०—मै आउच सोइ बेपु घरि पहिचानेहु तब मोहि ।

जब एकांत बोलाइ सब कथा सुनावौ तोहि ॥१६८॥  
 सयन कीन्ह नृप आयसु मानी । आसन जाइ बैठ छलजानी ॥  
 श्रमित भूप निद्रा अति आई । सो किमि सोच सोच अधिकारी ॥  
 कालकेतु निसिचर तहँ आवा । जेहिं सूकर होइ नृपहि मुलावा ॥  
 परम मित्र तापस नृप केरा । जानै सो अति कष्ट घनेरा ॥  
 तेहि के सत सुत अरु दस भाई । खल अति अजय देव दुखदाई ॥  
 प्रथमहिं भूप समर सब मारे । बिप्र सन सुर देखि दुखारे ॥  
 तेहि खल पाछिल बयरु सँभारा । तापस नृप मिलि मंत्र बिचारा ॥  
 जेहि रिपुबन्ध सोइ रचेन्हि उपाऊ । भावीबस न जान कह्यु राऊ ॥  
 दो०—रिपु तेजसी अकेल अपि लघु करि गनिअ न ताह ।

अजहु देत दुख रवि ससिहि सिर अवमेपिन राहु ॥१७०॥  
 तापस नृप निज सखहि निहारी । हरपि मिलेउ उठि मएउ सुखारी ॥  
 मित्रहि कहि सन कथा सुनाई । जातुधान बोला सुख पाई ॥  
 अब साधेउँ रिपु सुनहु नरेसा । जौ तुम्ह कीन्ह मोर उपदेसा ॥  
 पारहरि सोच रहहु तुम्ह सोई । बिनु औषध बिआधि बिधि खोई ॥  
 कुल समेत रिपु मूल बहाई । चौथे दिवस मिलन मै आई ॥  
 तापस नृपहि बहुत परितोषी । चला महरा कपटी अति रोषी ॥  
 भानुप्रतापहि बाजि समेता । पहुँचाएसि छन मोंक निरुता ॥  
 नृपहि नारि पति सयन कराई । हयग्रहँ बाँधेसि बाजि बनाई ॥

दो०—राजा के उपरोहितहि हरि लै गएउ बहोरि ।

लै राखेसि गिरिखोह महुँ माया करि मति मोरि ॥१७१॥  
 आपु बिरचि उपरोहित रूपा । परेउ जाइ तेहि सेज अनूपा ॥  
 जागेउ नृप अनभएँ बिहाना । देखि भवन अति अचरजु माना ॥  
 मुनि महिमा मन महुँ अनुमानी । उठेउ गर्वहि जेहि जान न रानी ॥  
 कानन गएउ बाजि चढ़ि तेहीं । पुर नरनारि न जानेउ केहीं ॥  
 गएँ जाम जुग भूपति आवा । घर घर उरसव बाज बधावा ॥  
 उपरोहितहि देख जव राजा । चकित बिलोक मुमिरि सोइ काजा ॥  
 जुग सम नृपहि गए दिन तीनी । कपटी मुनि पद रहि मति लीनी ॥  
 समय जानि उपरोहित आवा । नृपहि मसैं सब कहि समुझावा ॥  
 दो०—नृप हारपेउ पहिचानि गुरु अमवस रहा न चेत ।

बरे तुरत सत सहस बर विप्र कुटुंब समेत ॥१७२॥  
 उपरोहित जेवनार बनाई । धरस चारि बिधि जसि श्रुति गाई ॥  
 मायामय तेहि कीन्ह रसोई । बिजन बहु गन सकै न कोई ॥  
 विविध मृगन्ह कर आमिष रोंधा । तेहि महुँ विप्र मौनु खल सोंधा ॥  
 भोजन फहुँ सब विप्र बोलाए । पद पसारि मादर बैठाए ॥  
 परसन जगहि लाग महिपाला । भै अकासबानी तेहि काला ॥  
 बिप्रशृंग उठि उठि गृह जाइ । है बाढ़ हानि अन्न जनि खाइ ॥  
 भएउ रसोई मृमुर मौस । सब द्विज उठे मानि बिस्वास ॥  
 भूप बिकल मति मोहँ सुलानी । भावी बस न आव मुख चानी ॥

दो०—बोले विप्र सकोप तब नहिँ कलु कीन्ह बिचार ।

जाइ निसाचर हांहु नृप भृङ्ग सहित परिवार ॥१७३॥  
 धनबंधु तैं विप्र बोलाई । घाले लिए सहित समुदाई ॥  
 ईस्वर राखा धरम हमारा । जैहसि तैं समेत परिवारा ॥

सबन मध्य नास तव होऊ । जर्नदाता न रहिहि तुल कोऊ ॥  
 नृप सुनि साप बिकल अति त्रासा । भै बहोरि नर गिरा अकासा ॥  
 विप्रहु साप बिचारि न दीन्हा । नहिं अपराध भूप कछु कीन्हा ॥  
 चकित बिप्र सब सुनि नम्रवानी । भूप गएउ जहँ भोजन खानी ॥  
 तहँ न असन नहिं बिप्र सुआरा । फिरेउ राउ मन सोच अपारा ॥  
 सब प्रसंग महिसुर-ह सुनाई । त्रसित परेउ अवनी अकुलाई ॥  
 दो०—भूपति भावी मिटै नहिं जदपि न दूषन तोर ।

किऐ अन्यथा होइ नहिं बिप्र साप अति घोर ॥१७४॥  
 अस कहि सब महिदेव सिधाए । समाचर पुरलोग-ह पाए ॥  
 सोचहिं दूषन दैवहिं देही । बिचन हस काग क्रिय जेही ॥  
 उपरोहितहि भवन पहुँचाई । असुर तापसहि खबरि जनाई ॥  
 तेहिं खल जह तहँ पत्र पठाए । सजि सजि सेन भूप सब धाए ॥  
 घेरेन्हि नगर निसान बजाई । विविध भौंति नित होइ लराई ॥  
 जूझे सकल सुभट करि करनी । बहु समेत परेउ नृप धरनी ॥  
 सत्यकेतु कुल कोउ नहिं बाँचा । बिप्र साप किमि होइ असौँचा ॥  
 रिपु जिति सब नृप नगर बसाई । निज पुर गवने जय जनु पाई ॥  
 दो०—भरद्वाज सुनु जाहि जब होइ बिधाता वाम ।

धुरि मेरु सम जनक जम ताहि ढाल सम दाम ॥१७५॥  
 काल पाइ सुनि सुनु सोइ राजा । भएउ निसाचर सहित समाजा ॥  
 दस सिर ताहि बीस भुजदंडा । रावन नाम बीर बरिधडा ॥  
 भूप अनुज अरिमर्दन नामा । भएउ सो कुमकरन बल धामा ॥  
 सचिव जो रहा घरम रूचि जासू । भएउ बिमात्र बहु लघु तासू ॥  
 नाम बिभीषन जेहि जगु जाना । बिष्णु भगत बिज्ञान निधाना ॥  
 रहे जे सुत सेऊक नृप केरे । भए निसाचर घोर घनरे ॥

कामरूप खल जिनस अनेका । कुटिल भयंकर विगत विवेका ॥  
 कृपा रहित हिंसक सब पापी । बरनि न जाइ<sup>१</sup> विस्व परितापी ॥  
 दो०—उपजे जदपि पुनस्त्य कुल पावन अमल अनूप ।

तदपि महीसुर स्नाप बस भए सकल अघ रूप ॥१७६॥  
 कीन्ह विविध तप तीनिहुँ भाई । परम उग्र नहिं वरनि सो जाई ॥  
 गण्ड निकट तप देखि विधाता । माँगहु वर प्रसन्न मै ताता ॥  
 करि धिन्ती पद गहि दससीसा । बोलेउ बचन सुनहु जगदीसा ॥  
 हम काहू के मरहिं न मारे । बानर मनुज जाति दुइ बारे ॥  
 एवमस्तु तुम्ह बड़ तप कीन्हा । मै ब्रह्मा मिलि तेहि वर दीन्हा ॥  
 पुनि प्रभु कुंभकरन पहिं गएऊ । तेहि बिलोकि मन बिसमय भएऊ ॥  
 जौ पहिं खल नित करब अहारू । होइहि सब उजारि संसारू ॥  
 सारद प्रेरि तासु मति फेरी । माँगिसि नींद मास पट केरी ॥  
 दो०—गण विभीषन पास पुनि कहेउ पुत्र वर माँगु ।

तेहि माँगैउ भगवंत पद कमल अमल अनुरागु ॥१७७॥  
 तिन्हहि देइ वर ब्रह्म सिधाए । हरपित ते अपने गृह आए ॥  
 मयतनुजा मंदोदरि नामा । परम सुंदरी नारि ललामा ॥  
 सोइ मय दीन्ह रावनहिं आनी । होइहि जातुधानपति जानी ॥  
 हरपित भएउ नारि भलि पाई । पुनि दोउ बंधु बिआहेसि जाई ॥  
 गिरि त्रिकूट एक सिंधु मझारी । विधि निर्मित दुर्गम अति मारी ॥  
 सोइ मय दानव बहुरि सँवारा । कनक रचित मनिमवन अपारा ॥  
 भोगावति जसि अहिकुल बासा । अमरावति जसि सक निवासा ॥  
 तिन्हतैं अधिक रम्य अति बंका । जग बिरुथात नाम तेहि लंका ॥  
 दो०—खाई सिंधु गँभीर अति चारिहुँ दिसि फिरि आव ।  
 कनक कोट मनि सचित दृढ़ वरनि न जाइ वनाव ॥

हरि प्रेरित जेहि फलप जोइ जानुपानरनि होइ ।  
 राख प्रतापी अतुल बन दन समेन१ वन सोइ ॥१७८॥  
 रहे तहाँ निसिचर भट भरे । ते सब मुन्द मर मर ॥  
 अब सँ रहहि सक के प्रेर । रच्छक कोटि जन्दरनि के ॥  
 दसमुख कनहु राखि असि पाई । सेना साजि गढ़ घेरि जई ।  
 देखि बिरट भट बढ़ि पटकई । जच्छ जीन लै गप पराई ॥  
 फिर सब नगर दसानन देसा । गणउ सोच गुन भएउ विगेसा ॥  
 सुदर सहज अगम अनुमानी । कीन्हि रहाँ गवन रजधानी ॥  
 जेहि जस जोग बाँटि गृह दीन्है । सुखी सकल रननीच कीन्है ॥  
 एक बार२ उवेर पर३ भावा । पुष्पक जान जीति लै आया ॥  
 दो०—कौतुक ही कैलास पुनि लीन्हिस जाइ उठाइ ।  
 मनहुँ तौलि निज बाहु बल बना बहुत मुख पाइ ॥१७९॥  
 सुख सपति सुन सेन सहाई । जय प्रताप बल बुद्धि बढ़ाई ॥  
 निन नृपन सब बाढ़त जाई । जिमि प्रति लाम लोम अधिकारि ॥  
 अतिबल पुमकरन अस गाता । जेहि कहु नहि प्रतिभट जग जाता ॥  
 करै पान छोड़ि पट मासा । जागन होइ तिहँ पुर गासा ॥  
 जो दिन प्रति अहार कर गोई । बिस्व बेगि सब चौपट होई ॥  
 समर धीर नहि जाइ बखाना । तेहि सम अमित वीर बलवाना ॥  
 बारिदनाद जेठ सुत तासू । भट भट प्रथम लीक जग जासू ॥  
 जेहि न होइ रन सनमुख कोई । सुरपुर नितहि परावन होई ॥  
 दो०—कुमुख अरुपन कुलिसरद धूमकेतु अतिकाय ।  
 एक एक जग जीति सक ऐसे सुभट निकाय ॥१८०॥  
 कामरूप जानहि सब माया । सपनेहुँ जिन्ह के घरम न दाया ॥

१—[प्र० वनमभा] दि० ब० १ म० १ । १०, १० दि० ।  
 २—प्र० बार । दि० प्र० [ ( ) बेर ] । १०, १० प्र० ।  
 ३—प्र० १२ । दि० प्र० [ ( ) बड़ ] । १०, १० प्र० ।

दसमुख बैठे सभी एक बारा । देखि अमित आपन परिवारा ॥  
 सुन ममूह जन परिजन नाती । गनै को पार निमाचर जाती ॥  
 सेन विनोकि सहज अभिमानी । बोला 'बवन क्रोध मद सानी ॥  
 सुनहु सकल रजनीचर जूया । हमरे बैरी बिबुध बहूया ॥  
 ते सनमुख नहि कहि लाराई । देखि सकल रिपु जाहि पराई ॥  
 नेन्ह कर मरन एक विधि होई । कहौ बुझाइ सुनहु अब सोई ॥  
 द्विज भोजन मख होम सराधा । सकै जाइ कहु तुम्ह बाधा ॥

दो०—छुधा द्यौन बल हीन सुर सहजेहि मिलिहहि आई ।

तन मारिहौ कि छाड़िहौ भली भौति अपनाइ ॥१८१॥

मेघनाद 'कहु पुनि हँकरावा । दोन्ही सिख बलु बयर बढ़ावा ॥  
 जे सु समर धीर बलवान । जिन्हके लखि कर अभिमाना ॥  
 तिन्हहि जीति रन आनेसु बाँधी । उठि सुन पितु अनुसासन काँधी ॥  
 पहि विधि सबही अज्ञा दीन्ही । आपुन चलेउ गद्दा कर लीन्ही ॥  
 चनत दसासन डोलन अवनी । गर्जन गर्भ सबहि सुररवनी ॥  
 रावन आवन सुनेउ सकोहा । देवन्ह तकेउ मेरु गिरि खोहा ॥  
 दिगपालन्ह के लोक मुहाए । सुने सकल दसानन पाए ॥  
 पुनि पुनि सिंधनाद करि मारी । देइ देवतन्ह गारि पचारी ॥  
 रनमद मत फिर लग धावा । प्रतिमट खोजन कनहु न पावा ॥  
 रवि सति पवन बरुन धनधारी । अग्नि काज जन सब अधिकारी ॥  
 निखर सिद्ध मनुज सुर नागा । हठि सगही के पंधहि लगा ॥  
 ब्रह्म सृष्टि जहँ लगि तनुधारी । दसमुख बसवर्ती नर नारी ॥  
 आयसु करहि सकल भयभीता । नहि आई नित चरन चिन्ता ॥

१—प्र० : धवन । द्वि० : प्र० । तृ० : सबहि । च० : नृ० ।

२—प्र० : पचारी । [ द्वि० : प्रचारी ] । [ तृ० : प्रचारी ] । च० : प्र० [ (३)

(२) : प्र० । ]



दो०—भुजबल विस्व मस्य करि रामोसि कोउ न मगत्र ।  
 मडलीकमनि रावन राव नै निज मन ॥  
 देव जच्छ गर्भ नर किरर नाग तुमारि ।  
 जीति घरी निज बाहु बल बहु सुदर पर नारि ॥१८२॥  
 इद्रजीत सन जो कह्यु कहेऊ । सो सब अनु पहिलेहि करि रहेऊ ॥  
 प्रथमहि जिन्ह कह्यु आयसु दीन्हा । तिन्ह कर चरित सुनहु जो कीन्हा ॥  
 देखत भीमरूप सब पापी । निसिचर निजर देव परितापी ॥  
 कहि उपद्रव असुर निराया । नाना रूप धरहि करि माया ॥  
 जेहि विधि होइ धर्म निर्मूना । सो सग कहि वेद प्रतिहूना ॥  
 जेहि जेहि देस धेनु द्विज पावहि । नगर गाउँ पुर आगि लगावहि ॥  
 सुभ आचरन कतहु नहि होई । देव मित्र गुर मान न कोई ॥  
 नहि हरि भगति जज्ञ जप ज्ञाना । सपनेसु सुनिअ न वेद पुराना ॥  
 छं०—जप जोग बिरागा तप मख भागा धवन मुने दससीस ॥  
 आपुन उठि धावै रहे न पावे धरि सब पालै स्वीस ॥  
 अस भ्रष्ट अचारा भा ससारा धर्म मुनिअ नहि काना ॥  
 तेहि बहु विधि गैसे देस निरासै जो कह वेद पुराना ॥  
 सो०—बान न जाइ अनीति घोर निराचर जो कहि ।  
 हिसा पर अति प्रीति तिन्ह के पावहि कबनि मिति ॥१८३॥  
 बाढ़े खल बहु चार जुआरा । जे लपट पर धन पर दारा ॥  
 मानहि मातु पिता नहि देवा । साधुन्ह सन करवावहि सेवा ॥  
 जिन्ह के यह आचरन भवानी । ते जानहु निसिचर सम प्रानी ॥  
 अतिसय देखि धर्म के हानी । परम समोत धरा अकुलानी ॥

१—[प्र० जमय सीस सीस, वान पुरान] । दि०, न०, १० मोला सीस,  
 वान पुराना [ (५) (६अ) साम सीस, वान पुरान ] ।

२—प्र० ना-हु । दि०, न० च० प्र० [ (५) (६अ) जानेहु ] ।

३—[प्र० सब] । दि०, न० च० सम [ (५) (६अ) सर ] ।

—प्र० हानी । दि०, न०, च० प्र० [ (६) (६अ) वानो ] ।

गिरि सरि सिंधु भार नहि मोही । जम मोहि गरुड एक परद्रोही ॥  
सकल धर्म देखै विपरीता । कहि न सकै रावन भय भीता ॥  
धेनु रूप धरि हृदयँ विचागी । गई तहाँ जहँ सुर मुनि भारी ॥  
निज संताप सुनायसि रोई । काहू तें कछु काज न होई ॥

छं०—सुर मुनि गंधर्वा मिलि करि सर्वा गे विरंचि के लोका । -

सँग गो तनु धारी भूमि विचारी परम विकल मय सोका । ॥

ब्रह्मा सब जाना मन अनुमाना मोर कछु न बसाई । ॥

जा करि तैं दासी सो अविनासी हमरउ तोर सहाई । ॥

सो०—धरनि धरहि मन धीर कह विरंचि हरिपद मुमिरु ।

जानत जन की पीर प्रभु भजिहि दारुन विपति ॥१८४॥

बैठे सुर सब करहि विचारा । कहँ पाइअ प्रभु करिअ पुकारा ॥

पुर बैकुंठ जान कह कोई । फोउ कह पयनिधि बस प्रभु सोई ॥

जाकँ हृदयँ भगति जसि प्रीती । प्रभु तहँ प्रगट सदा तेहि रीती ॥

तेहि समाज गिरिजा मैं रहेऊँ । अवसर पाइ बचन एक कहेऊँ ॥

हरि व्यापक सर्वत्र समाना । प्रेम तैं प्रगट होहि मैं जाना ॥

देस काल दिसि बिदिसिहु माहीं । कहहु सो कहाँ जहाँ प्रभु नाहीं ॥

अग जगमय सब रक्षित विरागी । प्रेम तैं प्रभु प्रगटै जिमि आगी ॥

मोर बचन सबकें मन माना । साधु साधु करि ब्रह्म बखाना ॥

दो०—मुनि विरचि मन हरप तन पुलकि नयन बह नीर ।

अस्तुति करत जोरि कर सावधान मति धीर ॥१८५॥

छं०—जय जय सुरनायक जनसुखदायक प्रनतपाल भगवंता ।

गो द्विज हितकारी जय असुरारी सिंधुमुता प्रिय कंता । ॥

१—[प्र० : क्रमशः सोर, सोरु ] । दि०, नृ०, च० : लोका, मोका [ (६) (६५) : लोका, मोका ] ।

२—[प्र० : क्रमशः बसाई, सहसाई ] । दि०, नृ०, च० : प्र० [(६) (६५) ब्रमा, महा ] ।

३—[प्र० : क्रमशः भगवंत, प्रिय कंता ] । दि०, नृ०, च० : भगवन्त, प्रिय कंता [(६) (६५) : भगवंत, प्रिय कंता ] ।

पालन सुर धानी अदभुत करनी मरम न जाने कोई १ ।  
 जो सहज टूपाला दीनदयाला करौ अनुग्रह सोई १ ॥  
 जय जय अचिनासी सब घट बासी ठापाक परमानंदार ॥  
 अचिगत गोतीत चरित पुनीत मायारहित मुकुंदार ॥  
 जेहि लागि बिरागी अति अनुरागी बिगत मोह मुनिट्ट दार ॥  
 निसियासर ध्यावहिं गुन गन गावहिं जयति सच्चिदानंदार ॥  
 जेहिं सृष्टि उपाई त्रिविध बनाई सग सहाइ न दूजा ४ ।  
 सो करहु अघारी बित हमारी जानिअ भगति न पूजा ५ ॥  
 जो भव भय भजन मुनिपन रंजन गंजन ६ बिपति बरूथा ७ ।  
 मन बच क्रम बानी छाड़ि सयानी सरन सकल सुर जूथा ७ ॥  
 सारद श्रुति सेवा रिपय असेपा जा कहूँ कोउ नहिं जाना ८ ।  
 जेहि दीन विश्वारे बेद पुकारे द्रवौ सो श्री भगवाना ८ ॥  
 भव बारिधि मदर सय विधि सुंदर गुनमदिर सुखपुजा ६ ।  
 मुनि सिद्ध सकल सु परम भथातुर नमत नाथ पद कजा ६ ॥  
 दो०- जानि समय सुर भूमि सुनि बचन समेन सनेह ।  
 गगनगिरा गभीर भइ हरनि सोऊ सदेह ॥ १८६ ॥

- १—[प्र० प्रमद को, सोई] । ६०, १०, १० कोई, सोई [(६) (६५) कोई, सोई] ।  
 —[प्र० प्रमद परमानंद सु] । ६० १० च० परमानंद, सुकुंदार [(६)  
 (६५) परमानंद, सुकुंदार] ।  
 —१० सुबि, मधिगन] । ६०, १०, १० मुनिबूझ, सद्योपान  
 [(६) (६५) मुनिबूझ, मधिगन] ।  
 ४—[प्र० न कोउ नदूना] । ६०, १०, १० नदूना ।  
 ५—[प्र० न पू । ६०, १०, १० प्र० [(६) न बखु पू ।]  
 ६ प्र० गंजन । ६० १० च० प्र० [(६) गंजन] ।  
 ७—[प्र० प्रमद रूप, लख] । ६० १० १० बरूथा जूथा [(६) (६५) बरूथ,  
 जूथ] ।  
 ८—[प्र० प्रमद जान, भगवान] । ६०, १०, १० जान, भगवान [(६) (६५) -  
 जान, भगवान] ।  
 १० प्रमद . पुन, वर] । ६०, १०, १० पुन, वर [(६) (६५) पुन, वर] ।

जनि डरपहु मुनि सिद्ध मुरेसा । तुम्हहि लागि धरिहौ नर बेसा ॥  
 अंसन्ह सहित मनुज अवतारा । लेहौं दिनकर वस उदारा ॥  
 कश्यप अदिति महा तप कीन्हा । तिन्ह कहुं मै पूरव बर दीन्हा ॥  
 ते दसरथ कौसल्या रूपा । कोसलपुरी प्रगट नर भूषा ॥  
 तिन्हकें गृह अवतरिहौ जाई । रघुकुल तिलक सो चारिउ भाई ॥  
 नारद अचन सत्य सब करिहौ । परम सक्ति समेत अवतरिहौ ॥  
 हरिहौ सकल भूमि गरुआई । निर्मय होहु देव समुदाई ॥  
 गगन ब्रह्मवानी सुनि काना । सुरत फिरे<sup>१</sup> मुर हृदय जुझाना ॥  
 उब ब्रह्मा धरनिहि समुझावा । अभय भई भरोस जिअ आवा ॥  
 दो०—निज लोकहि बिरचि गे देवन्ह इहै सिखाइ ॥

वानर तनु धरि धरि महि<sup>२</sup> हरि पद सेवहु जाइ ॥१८७॥  
 गए देव सब निज निज धामा । भूमि सहित मन कहु विश्रामा ॥  
 जो कह्यु आयसु ब्रह्मा दीन्हा । हरपे देव बिलंब न कीन्हा ॥  
 वनचर देह धरी छिति माहीं । अतुलित बल प्रतापनिन्ह पाहीं ॥  
 गिरि तरु नख आयुष सब बीरा । हरि मारग चितवहिं मति धीरा ॥  
 गिरि कानन जहँ तहँ भरि<sup>३</sup> पूरी । रहे निज निज अनीक रचि<sup>४</sup> रूरी ॥  
 यह सब रुचिर चरित मैं भाषा । अब सो सुनहु जो बीचहि राषा ॥  
 अवधपुरी रघुकुलमनि राऊ । वेदविदित तेहि दसरथ नाऊ ॥  
 धर्म धुरंधर गुननिधि जानी । हृदयें भगति मति सारंगपानी ॥  
 दो०—कौसल्यादि नारि प्रिय सब आचरन पुनीत ।

पति अनुकूल प्रेम दृढ़ हरि पद कमल चिन्तित ॥१८८॥

१—[प्र० : फिरेड ] । डि०, नृ०, च० : फिरे [ (१) (२अ) : फिरेड ] ।

२—प्र० : धरि धरि महि । डि० : प्र० [ ( ) धरि धरनि महुं, (२) धरि धरि धरनि ] [ न० : धरि धरि धरनि ] । च० : प्र० [ (२) (२अ) . धरि धरनि महुं ।

३—प्र० : भरि । [ डि० : महि ] । नृ०, च० : प्र० ।

४—[ प्र० : रचि ] । डि० : रचि [ (१) : रचि ] । न०, च० : डि० ।

एक बार मूपति मन माहीं । भै गलानि मोरे गुन नाहीं ॥  
 गुर गृह गएउ तुरत महिपाला । चरन लागि करि विनय बिसाला ॥  
 निज दुख सुख सब गुरहि मुनाएउ । कहि बसिष्ठ बहु विधि समुझाएउ ॥  
 धरहु धीर होइहहिं सुत चारी । त्रिमुवन बिदित भगन भयहारी ॥  
 शृंगी रिपिहि बसिष्ठ बोलावा । पुत्रकाम मुम जग्य करावा ॥  
 भगति सहित मुनि आहुति दीन्हे । प्रगटे अगिनि नरु कर लोन्हे ॥  
 जो बसिष्ठ कछु हृदयँ विचारा । सकल काजु भा सिद्ध तुम्हारा ॥  
 येह हवि बाँटि देहु नृप जाई । जथा जोग जेहि भाग बनाई ॥  
 दो०-तव अदृश्य भए पावक सकल समहि समुझाइ ।

परमानंद भगन नृप हरप न हृदयँ समाइ ॥१८६॥  
 तबहिं राय प्रिय नारि बोलाई । कौसल्यादि तहाँ चलि आई ॥  
 अर्द्ध भाग कौसल्याहि दीन्हा । उभय भाग आधे कर कीन्हा ॥  
 कैकेई कहँ नृप सो दएऊ । रह्यो सो उभय भाग पुनि भएउ ॥  
 कौसल्या कैकेई हाथ धरि । दीन्ह सुमित्रहि मन प्रसन्न करि ॥  
 एहि विधि गर्भ सहित सब नारी । भई हृदय हरपित सुख मारी ॥  
 जा दिन तैं हरि गर्भहि आए । सकल लोक सुख सपति छाप ॥  
 मंदिर महें सब राजहिं रानी । सोमा सील तेज की खानी ॥  
 सुख जुत कलुक काल चलि गएऊ । जेहि प्रभु प्रगट सो अवसर भएऊ ॥  
 दो०-जोग लगन गृह बार तिथि सकल भए अनुकूल ।

चर अरु अचर हरप जुत राम जनम सुख मूल ॥१८७॥  
 नौमी तिथि मधु मास पुनीता । सुकल पच्छ अभिजित हरि प्रीता ॥  
 मध्य दिवस अति सीत न घामा । पावन काल लोक विश्रामा ॥  
 सीतल मंद सुरभि बह बाऊ । हरपित सुर सतन्ह मन चाऊ ॥  
 बन कुसुमित गिरिगन मनिआरा । अवहिं सकल सरितामृतधारा ॥  
 सो अवसर बिरचि जब जाना । चले सकल सुर साजि बिमाना ॥  
 गनन विमल सकुल सुर जूथा । गावहिं गुन गधर्व बरूथा ॥

बरपहिं सुमन मुअंजलि साजी । गहगहि गगन दुंदुभी बाजी ॥  
अस्तुति करहिं नाग मुनि देवा । बहु विधि लावहिं निज निज सेवा ॥  
दो०—सुर समूह विनती करि पहुँचे निज निज धाम ।

जग निवास प्रभु प्रगटे अखिल लोक विश्राम ॥१६१॥

छ०—भए प्रगट कृपाला परम दयाला कौसल्या हितकारी ।  
हरपित महतारी मुनिमनहारी अदभुत रूप विचारी ॥  
लोचन अभिरामं तनु घन स्यामं निज आयुष मुज चारी ।  
मूपन वनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी ॥  
कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि विधि करौं अनंता १ ।  
माया गुन ज्ञानातीत अमाना वेद पुरान भनंता १ ॥  
करुना सुख सागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता १ ।  
सो मम हित लागी जनअनुरागी भएउ प्रगट श्रीकंता १ ॥  
ब्रह्मांडनिकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति वेद कहे ।  
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति धिर नरहै ॥  
उपजा जव ज्ञाना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत विधि कीन्ह चहै ।  
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै ॥  
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा २ ।  
कीजै सिमु लीला अति प्रिय सीला यह सुख परम अनूपा २ ॥  
मुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरमूपा २ ।  
‘येह चरित जे गावहिं हरपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा २ ॥

दो०—विप्र धेनु सुर सत हित लीन्ह मनुज अवतार ।

निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार ॥१६२॥

१—[प्र० ॥ व्रमशः अर्जुन, भर्जुन, मंजु, श्रीकंता ] । दि० ॥ अर्जुन, भनता, मंता, श्रीकंता ।

नृ०, च० ॥ दि० [ (६) (६७) ॥ अनन, भर्जुन, मंन, श्रीकंता ] ।

२—[प्र० ॥ व्रमशः रूप, अनूप, भूप, कृप ] । दि० ॥ रूपा, अनूपा, भूपा, कृपा । नृ०,  
च० ॥ दि० [ (१) (१७) ॥ रूप, अनूप, भूप, कृप ] ।

सुनि सिमु रुदन परम प्रिय यानी । संग्रम चलि आई सब रानी ॥  
 हरपिन जहँ तहँ धाई दासी । आनंद मगन सकन पुग्यामी ॥  
 दसरथ पुनजन्म सुन काना । मानहुँ ब्रह्मानंद समाना ॥  
 परम प्रेम मन पुलक सरीरा । चारुत उठन करत गति धीरा ॥  
 जाकर नाम सुनन सुभ होई । मारें गृह आवा प्रभु सोई ॥  
 परमानंद पूरि मन राजा । कहा बुलाइ बजावहु बाजा ॥  
 गुर बसिष्ठ कहँ गएउ हँकारा । आप द्विजन्ह सहित नृपद्वारा ॥  
 अनुपम बालक देखिन्हि जाई । रूप रासि गुन कहि न सिराई ॥  
 दो०—नंदीमुख सराध करि जानकरम सय कीन्ह ।

हाटक धेनु बसन मनि नृर विग्रह कहँ दीन्ह ॥१६३॥  
 ध्वज पताक तोरन पुर छावा । कहि न जाइ जेहि भौति बनावा ॥  
 सुमनवृष्टि अकास तें होई । ब्रह्मानंद मगन सय लोई ॥  
 बृद बृंद मिलि चलीं लोगाई । सहज सिंगार किए उठि घाई ॥  
 कनक कलस मंगल भरि थारा । गावन पैठहि भूप दुआरा ॥  
 करि आरती नेवछावरि करहीं । बार बार सिमु चरनन्हि परहीं ॥  
 मागय सूत बदिगन गायक । पावन गुन गावहिं रघुनायक ॥  
 सर्वस दान दीन्ह सब काहे । जेहि पावा राखा नहिं ताहें ॥  
 मृगमद चदन कुंकुम कीचा । मची सकल बीधिन्ह बिच बीचा ॥  
 दो०—गृह गृह बाज बधाव सुभ प्रगटेउ प्रभु सुखकंद ॥

हरपवन सब जहँ तहँ नगर नारि नर बृंद ॥१६४॥  
 कैकयमुता सुमित्रा दोऊ । सुंदर सुत जनमत भै ओऊ ॥  
 वोह सुख संपति समय समाजा । कहि न सके सारद ॥ अहिराजा ॥

१—प्र० : सब लोई । [ दि० : (२) (५) नर लोई, (४) (५) सब लोई ] । [तृ० : सब लोई] । च० : प्र० [ (८) : सबलोई ] ।

२—प्र० : प्रगटेउ प्रभु सुखकंद । [ दि० : प्रभु प्रगटे सुखकंद ] । तृ० : प्र० । [ च० : (६) (६) प्रगटेउ सुखकंद, (८) प्रगट भण सुखकंद ] ।

—प्र० : सारद । दि०, तृ० : प्र० । [च० : सारद] ।

अवधपुरी सौहे एहि भौंती । प्रभुहि मिलन आई जनु राती ॥  
 देखि भानु जनु मन सकुचानी । तदपि बनी सध्या अनुमानी ॥  
 अगर धूप जनु बहु अँघिआरी । उहै अबीर मनहुँ अरुनारी ॥  
 मंदिर मनि समूह जनु तारा । नृप गृह फलस सो हँदु उदारा ॥  
 भवन बेद धुनि अति मृदु बानी । जनु खग मुखर समयँ जनु सानी ॥  
 कौतुक देखि पतंग मुलाना । एक मास तेहँ जात न जाना ॥  
 दो०—मासदिवस कर दिवस भा मरम न जानै कोइ ।

रथ समेत रवि थाकेउ निसा कवन विधि होइ ॥१६५॥  
 यह रहस्य काहँ नहिँ जाना । दिनमनि चने करत गुनगाना ॥  
 देखि महोत्सव सुर मुनि नागा । चले भवन बरत निज भागा ॥  
 औरौ एक कहौ निज चोरी । मुनु गिरिजा अति दृढ़ मति तोरी ॥  
 काकमुसुडि सग हम दोऊ । मनुज रूप जानै नहिँ कोऊ ॥  
 परमानंद प्रेम सुख फूले । बीधिन्ह फिरहिँ मगन मन भूले ॥  
 यह सुम चरित जान पै सोई । कृपा राम के जापर होई ॥  
 तेहि अवसर जो जेहिँ विधि आवा । दीन्ह भूप जो जेहिँ मन भावा ॥  
 गजरथ तुरग हेम गो हीरा । दीन्हे नृप नाना विधि बीरा ॥  
 दो०—मन सतोष सबन्धि कैं जहँ तहँ देहिँ असीस ।

सकल तनय चिरजीवहु तुलसिदास के ईस ॥१६६॥  
 कछुक दिवस बीते एहिँ भौंती । जात न जानिअ दिन अरु राती ॥  
 नामकरन कर अवसरु जानी । भूप बोलि पठए मुनि ज्ञानी ॥  
 करि पूजा भूपति अस भाखा । घरिअ नाम जो मुनि गुनि राखा ॥  
 इन्हकें नाम अनेक अनूपा । मै नृप कहव स्वमति अनुरूपा ॥  
 जो आनंदसिंधु सुखरासी । सीकर तें त्रैलोक सुपासी ॥



सो मुखधाम राम अस नामा । अखिल लोक दायक विश्रामा ॥  
 विसव भरन पोषन कर जोई । ताकर नाम भरत अस होई ॥  
 जाके सुमिरन तें रिपु नासा । नाम सत्रुहन वेद प्रकासा ॥  
 दो०—लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार ।

गुरु वसिष्ठ तेहि राखा लखिमन नाम उदार ॥१६७॥  
 धरे नाम गुर हृदयें विचारी । वेद तत्त्व नृप तव सुत चारी ॥  
 मुनि धन जन सरबस सिव प्राणा । बाल केलि रस तेहिं मुख माना ॥  
 बारेहि तें निज हित पति जानी । लखिमन राम चरन रति मानी ॥  
 भरत सत्रुहन दूनौ भाई । प्रभु सेवक जसि प्रीति बड़ाई ॥  
 स्याम गौर सुंदर दोड जोरी । निरखहि छवि जननीं तुन तोरी ॥  
 चारिउ सील रूप गुन धामा । तदपि अधिक सुखसागर रामा ॥  
 हृदयें अनुग्रह इंदु प्रकासा । सूचत किरन मनोहर हासा ॥  
 कबहुँ उद्यंग कबहुँ बर पलना । मातु दुलारे कहि प्रिय ललना ॥  
 दो०—व्यापक ब्रह्म निरंजन निर्गुन विगत विनोद ।

सो अज प्रेम भगति बस कौसल्या केँ गोद ॥१६८॥  
 काम कोटि छवि स्याम सरीरा । नील कंज बारिद गंभीरा ॥  
 अरुन चरन पंकज नखजोती । कमलदलन्हि बैठे जनु मोती ॥  
 रेल कुलिस ध्वज अंकुस सोहे । नूपुर धुनि मुनि मुनि मन मोहे ॥  
 कटि किकिनी उदर त्रय रेखा । नाभि गंभीर जान जेहिं देखा ॥  
 भुज बिसाल भूपनजुत भूरी । हिय हरिनख अति सोभा रूरी ॥  
 उर मनिहार पदिक की सोभा । विप्रचरन देखत मन लोभा ॥  
 कंबु कंठ अति चिबुक सुहाई । आनन अमित मदन छवि छाई ॥  
 दुइ दुइ दसन अधर अरुनारे । नासा तिलक को बरने पारे ॥

सुंदर श्रवन सुचारु कपोला । अति प्रिय मधुर तोतरे बोला ॥  
चिक्कन कच कुंचित गमुआरे । बहु प्रकार रचि मातु सँवारे ॥  
पीत भृगुलिआ तनु पहिराई । जानु पानि बिचरनि मोहि भाई ॥  
रूप सकहि नहि कहि श्रुति सेवा । सो जानै सयनेहुँ जेहि देखा ॥  
दो०—मुख संरोह मोह पर ज्ञान गिरा गोतीत ।

दंपति परम प्रेम बस कर सिसु चरित पुनीत ॥१६६॥  
एहि बिधि राम जगत पितु माता । कोसलपुर बासिन्ह सुख दाता ॥  
जिन्ह रघुनाथ चरन रति मानी । तिन्हकी यह गति प्रगट भवानी ॥  
रघुपति विमुख जठन कर कोरी । कवन सकै भव बंधन छोरी ॥  
जीव चराचर बस कै राखे । सो माया प्रभु सों भय भाखे ॥  
मृकुटि बिलास नचावै ताही । अस प्रभु छौंड़ि भजिअ कहु काही ॥  
मन क्रम बचन छाड़ि चतुराई । भजत कृपा करिहहि रघुराई ॥  
एहि बिधि सिसु बिनोद प्रभु कीन्हा । सकल नगर बासिन्ह सुख दीन्हा ॥  
लै उज्जग कबहुँक हलरावै । कबहुँ पालने घालि झुलावै ॥  
दो०—प्रेम मगन कौसल्या निस दिन जात न जान ।

सुन सनेह बस माता बालचरित कर गान ॥२००॥  
एक बार जननी अन्हवाए । करि सिंगार पलना पौढ़ाए ॥  
निज कुल इष्टदेव भगवाना । पूजा हेतु कीन्ह अस्नाना ॥  
करि पूजा नैवेद्य चढ़ावा । आपु गई जहँ पाक बनावा ॥  
बहुरि मातु तहयों चलि आई । भोजन करत देखि सुत जाई ॥  
गै जननी सिसु पहि मयभीता । देखा बाल तहों पुनि सूता ॥  
बहुरि आई देखा सुन सोई । हृदय कंठ मन धीर न होई ॥  
इहाँ उहाँ दुह बालक देखा । मतिभ्रम मोर कि आन बिसेपा ॥

देखि राम जननी अकुलानी । प्रभु हैंसि दीन्ह मधुर मुमुकानी ॥  
दो०—देखरावा मातहि निज अदभुत रूप अखंड ।

रोम रोम प्रति लागे कोटि कोटि ब्रह्मंड ॥२०१॥  
अगनित रवि सीस सिव चतुरानन । बहु गिरि सरित सिंधु महि कानन ॥  
काल कर्म गुन ज्ञान सुभाऊ । सोउ देखा जो सुना न काऊ ॥  
देखी माया सब विधि गाढ़ी । अति समीत जोरे कर ठाढ़ी ॥  
देखा जीव नचावै जाही । देखो भगति जो छोरे ताही ॥  
तन पुलकित मुख बचन न आवा । नयन मूँदि चरन्हि सिरु नावा ॥  
विसमयवंत देखि महतारी । मए बहुरि सिंसु रूप खरारी ॥  
अस्तुति करि न जाइ भय माना । जगतपिता मैं सुत करि जाना ॥  
हरि जननी बहु विधि समुझाई । यह जनि कतहुँ कहसि सुनु माई ॥  
दो०—बार बार कौसल्या बिनय करै कर जोरि ।

अब जनि कबहुँ व्यापै प्रभु मोहि माया तोरि ॥२०२॥  
बालचरित हरि बहु विधि कीन्हा । अति अनंद दासन्ह कहँ दीन्हा ॥  
कल्लुक काल बीते सब भाई । बड़े भए परिजन सुखराई ॥  
चूड़ाकरन कीन्ह गुरु जाई । बिश्वन्ह पुनि ददिना बहु पाई ॥  
परम मनोहर चरित अपारा । करत किरत चारिउ सुकुमारा ॥  
मन क्रम बचन अगोचर जोई । दसरथ अजिर बिचर प्रभु सोई ॥  
भोजन करत बोल जव राजा । नहि आवत तजि बाल समाजा ॥  
कौसल्या जव बोलन जाई । दुमुकु दुमुकु प्रभु चलहि पराई ॥  
निगम नेति सिव अंत न पावा । ताहि धरै जननी हठि धावा ॥  
धूसर धूरि भरे तनु आए । मूपति बिहँसि गोद बैठाए ॥  
दो०—भोजन करत चपल चित इत उत अवसरु पाइ ।

भाजि१ चले क्लिक्तर२ मुख दधि ओदन लपटाइ ॥२०३॥

१—प्र० : भाजि । [ दि० : भाजि ] । वृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : क्लिक्तर । दि० : प्र० [(५) (५अ) : क्लिक्तर] । [वृ० : क्लिक्तर] । च० : प्र० ।

बालचरित अति सरल सुहाय । सारद सेप संसु श्रुति गाए ॥  
जिन्ह कर मन इन्ह सन नहिं राता । ते जन बंचित किए विधाता ॥  
भए कुमार जबहिं सब आता । दीन्ह जनेऊ गुर पितु माता ॥  
गुर गृह गए पढ़न रघुराई । अलप काल विद्या सब पाई ॥  
जाकी सहज स्वास श्रुति चारी । सो हरि पद यह कौतुक भारी ॥  
विद्या विनय निपुन गुन सीला । खेलहिं खेल सकल नृपलीला ॥  
करतल बान धनुष अति सोहा । देखन रूप चराचर मोहा ॥  
जिन्ह बीधिन्ह विहरहिं सब भाई । अकित होहिं सब लोग लुगाई ॥  
।दो०-कोसलपुर बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल ।

प्राणहुँ तें प्रिय लागत सब कहूँ राम कृपाल ॥२०४॥  
बंशु सखा सँग लेहिं बुलाई । बन मृगया नित खेलहिं जाई ॥  
पावन मृग मारहिं जिअँ जानी । दिन प्रति नृपहिं देखावहिं आनी ॥  
जे मृग राम बान के मारे । ते तनु तजि सुरलोक सिधारे ॥  
अनुज सखा सँग भोजन करहीं । मातु पिता अज्ञा अनुसरहीं ॥  
जेहिं विधि मुखी होहिं पुर लोगा । करहिं कृपानिधि सोइ संजोगा ॥  
बेद पुरान सुनहिं मन लाई । आपु कहहिं अनुजन्ह समुझाई ॥  
मातकाल उठि कै रघुनाथा । मातु पिता गुर नावहिं माथा ॥  
आयसु मौंगि करहिं पुर काजा । देखि चरित हरपै मन राजा ॥  
दो०-व्यापक अकल अनीह अज निर्गुन नाम न रूप ।

मगत हेतु नाना विधि करत चरित्र अनूप ॥२०५॥  
यह सब चरित कहा मैं गाई । आगिलि कथा सुनहु मन लाई ॥  
विस्वामित्र महामुनि ज्ञानी । बसहिं विपिन सुम आश्रम जानी ॥  
जहँ जप जज्ञ जोग मुनि करहीं । अति मारीच मुचाहुहिं ढरहीं ॥  
देखत जज्ञ निसाचर धावहिं । करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं ॥  
गाधितनय मन बिंठा व्यापी । हरि विनु मरहिं न निसिचर पापी ॥  
तब मुनिवर मन कीन्ह बिचारा । प्रसु अवतरेउ हरन महिभारा ॥

एह मिस देसौ१ पद जाई । करि बिनती आनौ दोउ मारै ॥  
 ज्ञान विराग सकल गुन अयना । सो प्रभु मै देखव भरि नयना ॥  
 दो०—बहु विधि करत मनोरथ जान लागि नहिं बार ।

करि गज्जन सख क जन गए भूष दग्धा ॥२०६॥  
 मुनि आगमन मुना जव राजा । मिलन गण्ड ल विर समाजा ॥  
 करि दंडवत मुनिहि सनमानी । निज आगम धैर्यरनि आनी ॥  
 चरण पक्षारि कीन्हि अति पूजा । मो सन आनु घन्य नहिं दूजा ॥  
 विविध भौति भोजन करवाया । मुनिवर दृश्य हरि अनि पाया ॥  
 पुनि चरननि मेले सुन चारी । राम देखि मुनि देह विगारी ॥  
 भए मगन देसन मुख सोभा । जनु चकोर पूरन ससि सोभा ॥  
 तब मन हरपि बचन कह राऊ । मुनि अस कृपा न कीन्हिहु काऊ ॥  
 केहि कारन आगमन तुम्हारा । कहहु सो कसत न लावै बारा ॥  
 अमुर समूह सतावहिं मोही । मै जावन आपउं नृप तोही ॥  
 अनुज समेत देहु रघुनाथ । निसिचर बध मै होव सगाथा ॥  
 दो०—देहु मूष मन हरपित तजहु मोह अज्ञान ।

धर्म मुजस प्रभु तुम्हको२ इन्ह कहु अति कल्याण ॥२०७॥  
 मुनि राजा अति अप्रिय बानी । हृदय कष मुखदुति कुमुलानी ॥  
 चौथेपन पाएउं सुन चारी । विष बचन नहिं कहेहु विचारी ॥  
 माँगहु भूमि धेनु धन कोसा । सर्वस देउं आजु सह रोसा ॥  
 देह प्रान तैं प्रिय कह्यु नाही । सोउ मुनि देउं निमिष एक माहीं ॥  
 सत्र सुत प्रियरे प्रान की नाई । राम देत नहिं बने गुसाई ॥  
 कहैं निसिचर अति घोर कठोरा । कहैं सुदर सुत परम किसोरा ॥

१—प्र० : एह मिस देसौ पद । द्वि० : प्र० [ (४) (१) (५) प्र० ] पहि मिस मै देनै पद ] [ नृ० : यहि मिस देसौ प्रभु पद ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : तुम्हको । [ द्वि० नृ० : तुम्हकहु ] । च० : प्र० [ (८) : तुम्हकहु ] ।

३—प्र० : प्रिय । [ (३) (४) (५) प्रिय मोहि , (१) प्रिय मन ] । [ नृ० : प्रिय

मुनि नृप गिरा प्रेम रस सानी । हृदय हरष माना मुनि ज्ञानी ॥  
तब बसिष्ठ बहु विधि समुझावा । नृप सदेह नास कहें, पाया ॥  
अति आदर दोउ तनय-बोनाए । हृदय लाइ बहु मौनि सिखाए ॥  
मेरे प्राण नाथ मुन दोऊ । तुम्ह मुनि पिता आन नहिं कोऊ ॥

दो०—सौपे भूष रिपिहि मुत बहु विधि देइ असीस ।

जननी भवन गए प्रभु चले नाइ पद सीस ॥

सो०—पुरुष सिंह टोउ बीर हरषि चने मुनि मय हृगन ।

कृपाभिधु मति धीर अखिल बिस्व कारन करन ॥२०८॥

अरुन नयन उर बाहु विमाला । नील जलज तनु स्याम तमाला ॥  
कटि पट पोत कपे बर माया । रुचिर चाप मायक दुहुं हाया ॥  
स्याम गौर सुदर दोउ भाई । बिम्बाभिन्न महानिधि पाई ॥  
प्रभु ब्रह्मन्व देव मैं जाना । मोहि निति पिता तजेउ भगवाना ॥  
चने जात मुनि दीन्ह देखाई । मुनि ताड़का क्रोध करि धाई ॥  
एकहि वान प्राण हरि लोन्हा । दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा ॥  
तब रिपि निज नाथहि जिअ चीन्ही । रिद्यानिधि कहु बिद्य दीन्ही ॥  
जा तें लाग न छुधा पित्रासा । अतुलित बल तनु तेज प्रकासा ॥

दो०—आयुध सर्व समर्पि कै प्रभु निज आश्रम आनि ।

कद मूल फल भोजन दीन्ह भगतिर हित जानि ॥२०९॥

प्रात कहा मुनि सन रघुआई । निर्भय जज्ञ काहु तुम्ह जाई ॥  
होम करन लागे मुनि भारी । आपु रहे मख की रखवारी ॥  
सुन मारीच निसाचर कोही । ले सहाय धावा मुनि द्रोही ॥  
बिनु फर वान राम तेहि मारा । सत आजन गा सागर पारा ॥

१-प्र०० निति । द्वि० प्र० [ ( ) १२३ ] । [ नृ० : द्वि३ ] । च० प्र० ।

२-प्र० भगन । [ द्वि०, नृ० मान ] । च० : प्र० [ ( = ) भगन ] ।

३-[ प्र० शरी ] । द्वि०, नृ०, च० : रोही ] ( = ) ( ६४ ) कोही ]

पावकमर मुवाहु पुनि मारा १ । अनुन निगानर कटु मपारा ॥  
 मारि अमुर द्विज निमय कारी । अमृतुनि कटि देर मुनि म्हागी ॥  
 तहँ पुनि कलुरु दिग्गम शुगगा । गे कीन्ह बिरह प दाग ॥  
 भगति हेतु बहु कथा पुगगा । कहै बि। जगति प्रभु जाग ॥  
 तम मुनि सादर कदा मुझई । चरित एक प्रभु देगि प जाई ॥  
 धनुष जन मुनिर शुशुलनाथा । हगि नने मुनिवर के साथी ॥  
 आश्रम एक दीव मग माहीं । लग मृग जीव जतु तहँ नाहीं ॥  
 पूजा मुनिहि सिला प्रभु देती । सकल कथा मुनि कही बिगोती ॥  
 दो०—गीतम नारि साव बम उपन देह धरि धीर ।

चरन कमल रज चाहनि टपा करहु शुभीर ॥२१०॥

छ०—परसन पद पावन माक नमावन प्रगट भई तब पुन सही ।  
 देखन शुभावक जन सुखदायक सन्मुख होइ कर जोरि रही ॥  
 अति प्रेम अधीरा पुलक मरीरा मुख नहि आवैं वचन कही ।  
 आनख बड़भागी चरनन्हि लागी जुग नयनन्हि जलधार बही ॥  
 धीरजु मनु कीन्हा प्रभु कहु कीन्हा शुपति टपों भगति पाई ।  
 अति निर्मल बानी अमृतुति ठानी ज्ञानगन्ध जब शुभाई ॥  
 मै नाहि अपावन प्रभु जगपावन रागनरिपु जन मुनदाई ।  
 राचीव बिलोचन भय भय मोचन पाहि पाहि सरनहि आई ॥  
 मुनि माप जो कीन्हा अति मल कीन्हा परम अनुग्रह मै माना ।  
 देखेउं भरि लोचन हरि भव मोचन इह लाधु संकर जाना ॥  
 बिनती प्रभु मोरी मै मति भोरी नाथ न माँगों वर आना ।  
 पद कमल पागा रस अनुगगा मम मन मधुर करे पाना ॥  
 जहि पद सुभसारता परम पुनीता प्रगट भई मिय सोस धरी ।  
 सोई पद पदज जेहि पूजन अज मम निर धरेउ कृपाल तरी ॥

एहि भौंति सिघारी गौतमनारी बार बार हरि चरन परी ।

जो अति मन भावा सो कर पाग गै पति लोक अनद भरी ॥

दो०—अस प्रभु दीन बहु हरि करन रहित 'दयाल ।

तुलसीदास मठ तेहि' मजु छाडि कपट जंगल ॥२११॥

चले राम लक्ष्मिन मुनि संग । गए जहाँ जग पावनि गगा ॥

गाधिसूनु सब कथा सुनैई । जेहि प्रकार सुसरि महि आई ॥

तब प्रभु रिपिन्ह समेत नहाए । विविध दान महिदेवान्ह पाए ॥

हेरपि चले मुनि वृंद सहाया । वेगि विदेह नगर निश्रया ॥

पुग रग्यना राम जब देखो । हरपे अनुज समेन बितेपी ॥

बारी कूप मरित सर नाना । सलिल सुधा सम मनि सोपाना ॥

गुंजन मजु मत्त रस भृगा । कृजन फल बहु बरन बिहंगा ॥

बरन बरन बिकसे बनजाता । त्रिविध समीर सदा सुखदाता ॥

दो०—सुनन आटिका बाग वन बिजुल विहग निवास ।

फूलत फलन सुपल्लवत सोहत पुग चहुँ पास ॥२१२॥

बनइ न बानन नगर निरुई । जइ जाइ मन तहै लोभाई ॥

बाढ बनार विचित्र अंगरी । मनिमय अनुविधि स्वर मंगरी ॥

धनिक, बनिक, बर धनइ समाना । बैठे सफल वस्तु लै नाना ॥

चौहट सुरंग गली सुहाई । सनन रहेहि मुग र निचाई ॥

मंगलमय मंदिर सब केरे । विचित्र अनु रतिनाथ चिनेरे ॥

पुग नर, नारि सुमग सुचि सा । धरमसोल ज्ञानी गुनवता ॥

अनि अनूप जहँ अनरु निवास । विधरहि विबुध बिलोकि बिलास ॥

१—प्र० : व० । दि० : प्र० [ (५) (-) (१३) : नादि ] । [ वृ० : तादि ] । च० : प्र० [ (२) : नादि ] ।

२—प्र० : अनु विरि स्वर । [ दि० : विधि अनु स्वर ] । वृ० : प्र० । [ च० : (६) (६ अ) विरि अनु स्वर, (२) विधि निरुद्वार ] ।



होत चरित चिन् कोट बिलोकी । सकल भुवन सोभा जनु रोकी ॥  
दो०—धवल धाम मुनि पुरट पट सुषटित नाना भंति ।

सिय निवास सुंदर सदन सोभा किमि कहि जाति ॥२१३॥  
सुभग द्वार सब कुलिस कपाय । भूप भीर नट मागघ भांटा ॥  
बनी बिसाल बजि गज माला । हय गय रथ संकुल सब काला ॥  
सूर सचिव सेनप बहुतेरे । नृपूर गृह सरिस सदन सत्र केरे ॥  
पुर बाहिर सर सरित समीपा । उतरे जहँ तहँ विपुल महीपा ॥  
देखि अनूप एक अंबराई । सब सुपास सब भौति मुहाई ॥  
कौसिक कहेउ मोर मनु माना । इहाँ रहिअ रघुवीर मुजाना ॥  
भजेहि नाथ कहि कृपानिकेता । उतरे तहँ मुनि वृंद समेता ॥  
बिस्वामित्र महामुनि आए । समाचार मिथिलापति पाए ॥

दो०—सग सचिव सुचि मूरि भट मूसुर वार गुर ज्ञाति ।  
चने मिलन मुनिनाथ कहि मुदित राउ एहि भाति ॥२१४॥  
जीन्ह प्रनामु चरन धरि माथा । दोन्हि असीस मुदित मुनिनाथा ॥  
विप्र वृंद सब सादर बंदे । जानि भाग्य बड राउ अनंदे ॥  
कुसल प्रश्न कहि बारहि बारा । बिस्वामित्र नृपहि धैठारा ॥  
तेहि अवसर आए दोउ भाई । गए रहे देखन फुलवाई ॥  
स्याम गौर मृदु वपस झिपोरा । लोचन सुखद बिस्म चिन चोरा ॥  
उठे सकल जब रघुपति आए । बिस्वामित्र निकट धैठाए ॥  
भग सब सुखी देखि दोउ आता । बारि बिनोचन पुलकित गाता ॥  
मूरति मधुर मनोहर देखी । भएउ विदेहु विदेहु बिसेपी ॥  
दो०—प्रेम मगन मनु जानि नृपु करि बिबेकु धरि धीर ।

बोलेउ मुनि पद नाइ सिरु गदगद गिरा गंभीर ॥२१५॥  
कहहु नाथ सुंदर दोउ बालक । मुनिकुल तिलक कि नृपकुल पालक ॥

ब्रह्म जे निगम नेति कहि गावा । उभय बेप धरि की सोइ आवा ॥  
 सहज विराग रूप मनु मोरा । थकित होत जिमि चद चकोरा ॥  
 ता सैं प्रभु पृथ्वी सतिभाऊ । कहहु नाथ जनि करहु दुराऊ ॥  
 इन्हहि विलोकरु अति अनुरागा । बरबस ब्रह्ममुखहि मन त्यागा ॥  
 कह मुनि चिहंसि कहेहु नृप नीका । बचन तुम्हार न होइ अलीका ॥  
 ये प्रिय सब हे जहा लागि प्रानी । मनु मुसुहाहि रामु सुनि बानी ॥  
 रघुबलमनि दसरथ के जाए । मम हित लागि नरेस पठाए ॥  
 दो०—रामु लखनु दोउ बंधु बर रूप सील बन धाम ।

मख राखेउ सबु साखि जगु जिने१ असुर संग्राम ॥२१६॥

मुनि१ तव चरन१ देखि कह राऊ । कहि न सकौ निज पुन्य प्रभाऊ ॥  
 सुदर स्याम गौर दोउ आता । आनंदहुँ के आनंददाता ॥  
 इन्ह के प्रीति परसपर पावनि । कहि न जाइ मन भाव सुहावनि ॥  
 सुनहुँ नाथ कह मुदित विदेह । ब्रह्म जीव इव सहज सनेह ॥  
 पुनि पुनि प्रभुहि चितव नरनाह । पुलक गात उर अधिक उछाह ॥  
 मुनिहि प्रसंसि नाइ पद सीसू । चलेउ लवाइ नगर अवनीसू ॥  
 सुदर सदन सुखद सब काला । तहाँ वासु ले दीन्ह मुआला ॥  
 करि पूजा सब बिधि सेवकाई । गएउ राउ गृह बिडा कराई ॥

दो०—रिषय सग रघुवंसमनि करि भोजनु बिधामु ।

बैठे प्रभु आता सहित दिवमु रहा भरि जामु ॥२१७॥  
 लपन हृदय लालसा बिसेखी । जाइ जनकपुरु आईअ देखी ॥  
 प्रभु भय बहुरि मुनिहि सनुचाहीं । प्रगट न कहहि मनहि मुमुकाहीं ॥  
 राम अनुज मन की गति जानी । भगत बखलना दिअँ हुलसानी ॥  
 परम विनीन सकुचि मुमुकाई । बोले गुर अनुसासन पाई ॥

१—प्र० : निते । डि० . प्र० । [ वृ० : नीति ] । च० . प्र० [ (८) . गति ] ।

२—[ प्र० . मुनि ] । डि० : मुनि । वृ० . च० डि० ।

३—[ प्र० : चरित ] । डि० : रत्न । वृ० . च० : डि० ।

नाथ लपनु पुरु देवा चरही । प्रभु मकोच छर प्रगट न कहही ॥  
 जौ राउर आयसु मै पावौ । नगर देखाइ तुगत नै आवौ ॥  
 मुनि मुनीसु रह बचन सप्रोती । फस न राम तुह राखहु नोती ॥  
 धरम सेनु पालक तुह तात्र । प्रेम बिसस सेरक सुख दाता ॥  
 दो०—जाइ देखि आवहु नगर मुख निधान दोउ भाइ ।

फाहु सुकल सर क नयन सुर बदन देखाइ ॥२१८॥  
 मुनि पद रमन यदि दोउ आना । चने लोक लोचन मुख दाता ॥  
 बानक वृद्ध देखि अति सोभा । लगे सग लोचन मनु लोभा ॥  
 पीत वसन परिकर कटि भाथा । चारु चाप सर सोहन हाथा ॥  
 सन अनुदात सुचदन खौगी । स्थामल गौर मनोहर जोरी ॥  
 केहरि फघर बाहु बिसाला । उर अति रचिर नाग मनि माला ॥  
 सुभग शोन सरसीरुह लोचन । वदन मयंक ताप त्रय मोचन ॥  
 कानन्हि फनरुहून छत्रि देहीं । चिरत चिरहि चोरि अनु लेहीं ॥  
 चित्रवनि चारु मृदुटि नर बीरी । तिनक रेख सोभा अनु बँकी ॥  
 दो०—रुचि चोतनी सुभग मिर मेचक उचित फेस ।

नख सिख सुदर बनु दोउ सोभा सकल सुरेस ॥२१९॥  
 देवन नगर मूप सुन आप । सभाचार पुरवासिन्ह पप ॥  
 धाप धाम काम सर त्यागी । मनहु रंक निधि लूटन लागी ॥  
 निम्बि सहज सुदर दोउ भाई । होहि सुखी लोचन फल पाई ॥  
 जुगती मरन भरोखन्हि लागी । निखहि राम रूप अनुग ॥  
 कहहि पसपर बचन सप्रोती । सखइ न कोटि काम छत्रि जोती ॥  
 सुर नर असुर नाग मुनि माहीं । सोभा असि कहूँ मुनिअति नाहीं ॥  
 बिपु चारिभुज बिधि मुखचारी । बिगट भेष मुखपत्र पुरारी ॥  
 अपर देउ अस कोउ न आहां । येह छवि सखी पटतरिअ जाही ॥  
 दो०—बय तिसोर सुबमा सदन स्थाम गौर मुख धाम ।  
 अग अग पर चरिअहि कोटि कोटि सत काम ॥२२०॥

केहु सखी अस को तनु धारी । जो न मोह येहु रूप निहारी ॥  
 कोउ सप्रेम बोली मृदु बानी । जो मै सुना सो मुनहु सयानी ॥  
 ए दोऊ दसरथ के दोय । बाल मरालन्हि के कल जोय ॥  
 मुनि कौसिक मख के रखगरे । जिन्ह रन अजिर निसाचर मारे ॥  
 स्वाम गात कल कंज बिलोचन । जो मारीच मुमुज मृदु मोचन ॥  
 कौसल्यामुनि सो सुख खानी । नामु रानु धनु सायक पानी ॥  
 गौर किमोर वेपु बर काछें । कर सर चाप राम के पाछें ॥  
 लखिननु नामु रानु लखु आना । मुनु सखि तासु भूमिमा माना ॥  
 दो०—विप्र कजु करि वधु दोउ मग मुनि वधू उधारि ।

आर देखत चप मख मुनि हरषी सब नारि ॥२२१॥  
 देखि राम छवि कोउ एक कहई । जोगु जानकिहि येहु बर अहई ॥  
 जौ सलह इन्हहि देख नरनाह । पन पारहरि हठि करै बिबाह ॥  
 कोउ कह ए भूपान पहिचाने । मुनि समेत रादर सनमाने ॥  
 मख परंतु धनु राउ न तजई । बिधि बम हठि अविशे कहि भजई ॥  
 कोउ कह जौ भन अहै बिबाता । सन कहु मुनिअ उचित फलदाता ॥  
 तौ जानकिहि मिलिहि बर एह । नाहिन आलि इहाँ संदेह ॥  
 जौ बिधि बम अस बने सँजोगू । तौ कृतकृत्य होइ सब लोगू ॥  
 सखि हमरें आरति अनि तातें । कबहुँक ए आवाहैं येहि नातें ॥  
 दो०—नाहि त हमकहुँ मुनहु सखि इन्ह कर दरसन दूरि ।

येह सगु तब होइ जब पुन्य पुराकृत भूरि ॥२२२॥  
 बोली अपर केहु सखि नीरा । येहि बिबाह अति हित सबहीं का ॥  
 कोउ कह संक चाप कठोरा । ये स्यामल मृदु गात किसोरा ॥  
 सबु असमजस अहइ सयानी । येह मुनि अपर कहै मृदु बानी ॥  
 सखि इह कह कोउ कोउ अस कहहीं । बड़ प्रभ उ देखत लखु अहहीं ॥  
 परमि जासु पद पंऊज घूरी । तरी अहल्या कृन अघ भूरी ॥  
 सो कि रहिहि बिनु सिवधनु तोरें । येह प्रतीति परिहरिअ न भोरें ॥

जेहि विरंचि रचि सीय सँवारी । तेहि स्थायल बह रचेउ विवारी ॥  
तासु भवन सुनि सब हरपानी । गेसेद होउ कहहि मृदु बानी ॥

दो०—हिअ हरपहि वापहि सुमन सुमुखि मुलोचनि वृद्ध ।

जहि जहाँ जहँ बधु दोउ तहँ तहँ परमनद ॥२२३॥  
पुर पूरव दिमि गे दोउ माई । जहँ धनु मस हित भूमि बनाई ॥  
अनि बिग्नार चारु गच दारी । विमल वेदिका रचिर मँवारी ॥  
चहुँ दिसि फचन मन बिसाला । गचे जहाँ वैठहि महिपाला ॥  
तेहि पावै समीप चहुँ पासा । अपर मंच मंडली बिनासा ॥  
कलुक ऊँचि सब भौति सुहाई । वैठहि नगर लोग जहँ जाई ॥  
तिन्हकें निकट बिसाल सुहाए । धरल धाम बहु बान बनाए ॥  
जहँ धैठे देखहि सब नारी । जथाजोग निज कुल अनुहारी ॥  
पुर बालक कहि कहि मृदु बचना । सादर प्रभुहि देखावहि रचना ॥  
दो०—सब सिमु येहि सिमु प्रेम बस परसि मनोहर गान ।

तन पुलकहि अति हरप हिअ देखि देखि दोउ आत ॥२२४॥  
सिमु सब राम प्रेनवस जाने । प्रीति समेत निकेन बखाने ॥  
निज निज रुचि सन लेहि बोलाई । सहित सनेह जाहि दोउ भाई ॥  
रामु देखावहि अनुग्रहि रचना । कहि मृदु मधुर मनोहर बचना ॥  
लव निमेष महु सुवन निछाया । रचै जासु अनुपासन माया ॥  
भगति हेतु सोइ दीनदयाला । चिनवत चकिन धनुष मख साला ॥  
कौतुकु देखि चले गुर पाहीं । जानि बिलबु आस मन माहीं ॥  
जासु त्रासु डर कहुँ डर होई । मजन प्रभाउ देखावत सोई ॥  
कहि वातै मृदु मधुर सुहाई । किए बिदा बालक घरिआई ॥  
दो०—समय सप्रेम विनीत अति सकुच सहित दोउ भाइ ।

गुर पद पकज नाइ सिर बैठे आयसु पाइ ॥२२५॥

निसि प्रवेस मुनि आयेसु दीन्हा । सबहीं संध्या बंदनु कीन्हा ॥  
 कहत कथा इतिहास पुरानी । रुचिर रजनि जुग जाम सिरानी ॥  
 मुनिवर सयन कीन्हि तब जाई । लगे चरन चापन दोउ भाई ॥  
 जिन्ह के चरन सरोरुह लागी । करत विविध जप जोग विरागी ॥  
 तेह दोउ बंधु प्रेम जनु जीते । गुर पद कमल पलोदत प्रीते ॥  
 बार बार मुनि अज्ञा दीन्ही । रघुवर जाइ सयन तब कीन्ही ॥  
 चापन चरन लपनु उर लाएँ । समय सप्रेम परम सच्चु पाएँ ॥  
 पुनि पुनि प्रभु कह सोबहु ताता । पौढ़े घरि उर पद जलजाना ॥  
 दो०—उठे लपनु निसि विगत मुनि अरुनसिखा धुनि कान ।

गुर ते पहिलेहि जगतपति जागे रामु सुजान ॥२२६॥  
 सरल सौच करि जाइ नहाए । नित्य निवाहि मुनिहि सिर नाए ॥  
 समय जानि गुर आयेसु पाई । लेन प्रभुन चले दोउ भाई ॥  
 भूप बागु वर देखेउ जाई । जह वसन रिख रही लोभाई ॥  
 लागे बिट्ठ मनोहर नाना । बरन बरन बर बेलि बिताना ॥  
 नन पल्लव फल सुमन सुहाए । निज संपति सुररुख लजाए ॥  
 चातक कोकिल कीर चकोरा । कूजन बिहग नटत कल मोरा ॥  
 मध्य बाग सरु सोह सुहावा । मनि सोपान विचित्र बनावा ॥  
 विमल सलिलु सरसिज बहुरंगा । जल खग कूजन गुंजन भृंगा ॥  
 दो०—बागु तड़ागु बिलोकि प्रभु हरपे बंधु समेत ।

परम रम्य आरामु येहु जो रामहि सुख देत ॥२२७॥  
 चहुँ दिसि चितै पूछि मालीगन । लगे लेन दल फूल मुदित मन ॥  
 तेहि अवसर सीता तहँ आई । गिरिजा पूजन जननि पठाई ॥  
 संग सखी सब मुमग सयानी । गावहि गीत मनोहर बानी ॥  
 सर समीप गिरिजाग्रह सोहा । बरनि न जाइ देखि मनु मोहा ॥

मज्जनु करि सर सखिन्ह समेता । गई मुदित मन गौरि निकेता ॥  
 पूजा कीन्हि अधिक अनुरागा । निज अनुरूप सुमग बरु माँगा ॥  
 एक सखी सिय सगु बिहाई । गई रही देखन • फुलवाई ॥  
 तेहिं दोउ बधु बिलोके जाई । प्रेम बिवस सीता पहि आई ॥  
 दो०—तासु दसा देखी सखिन्ह पुलक गात जलु नयन ।

कहु कारनु निज हरष कर पृथहि सब मृदु वयन ॥२२८॥  
 देखन बागु कुँअर दुइ<sup>१</sup> आए । बग किसार सब भाँति सुहाए ॥  
 स्याम गौर किमि कहो बखानी । गिरा अनयन नयन त्रिनु बानी ॥  
 सुनि हरषी सब सखी सयानी । सिय हिअँ अनि उतकठा जानी ॥  
 एक कहइ नृपसुन तेइ<sup>२</sup> आली । सुने<sup>३</sup> जे मुनि सँग आए माली ॥  
 जिन्ह निज रूप मोहनी डारी । की-हे स्ववस मगर नर नारी ॥  
 बरमन छबि जहँ तहँ सब लोगू । अबसि देखिअहि देखन जोगू ॥  
 तासु बचन अति सियहि सोहाने । दरम लागि लोचन अटुलाने ॥  
 चली अग्र करि प्रिय सखि सोई । प्रीति पुरातन लखै न कोई ॥  
 दो०—सुमिरि सीय नारद बचन उपजी प्रीति पुनीत ।

चकिन बिलोकि सकल दिसि जनु सिसु मृगी समीत ॥२२९॥  
 कफन किकिनि नृपुर धुनि सुनि । कहत लपन सन राम हृदयँ गुनि ॥  
 मानहु मदन दुंदुभी दीन्ही । मनसा बिस्व बिजय कहुं की-ही ॥  
 अस कहि फिरि चितए तेहि आरा । सिय मुख ससि भए नयन चकोरा ॥  
 भए बिलोचन चारु अचंचल । मनहुँ सजुचि निर्मम तजे दृगचल ॥  
 देखि सीय सोमा सुख पावा । हृदयँ सराहत बचनु न आवा ॥  
 जनु बिरचि मग निज निमुनाई । बिरचि बिसर कहँ प्रगटि देखाई ॥  
 सुदरता यहु सुदर करई । छबि गहँ दीप सिखा जनु बरई ॥  
 सन उपमा कचि रहे जुठागी । कहि पटतरो बिदेहकुमारी ॥

१—प्र० दुइ । [दि०, वृ० ] । २० प्र० ।

२—प्र० ते । [दि० प्र० । [वृ० सो ] २० प्र० [ ( ) त ] ।

दो०—सिय सोभा हिअँ बरनि प्रभु आपनि दया विचारि ।

घोले सुचि मन अनुज सन बचन समय अनुहारि ॥२३०॥

तात जनकननया येह सोई । धनुषजज जेहि कारन होई ॥

पूजन गौरि सखी लै आई । करत प्रकास फिरहिं फुलवाई ॥

जासु विलोकि अलौकिक सोभा । सहज पुनीत मोर मनु छोमा ॥

सो सबु कारनु जान विधाता । फरकहिं सुभद्र' अग सुनु आता ॥

रघुवासन्ह कर सहज सुभाऊ । मनु दुपंथ पगु धरै न काऊ ॥

मोहि अतिसय प्रीति मन केरी । जेहि सपनेहुँ पनारि न हेरी ॥

जिन्ह कै लहहिं न रिपु रन पीठी । नहिं पावहिं परतिअ मनु डीठी ॥

मंगन लहहिं न जिन्ह कै नाहीं । ते नरवर थोरे जग माहीं ॥

दो०—करत बतकही अनुज सन मनु सिय रूप लोभान ।

सुख सरोज मकरंद छवि करै मधुग इव पान ॥२३१॥

चितवति चकित चहँ दिसि सीता । कहँ गए नृपकिसोर मनु चिता ॥

जहँ बिज्ञोक मृग सावक नयनी । जनु तहँ बरिस कमल सित श्रेणी ॥

लता ओट तब सखिन्ह लखाए । स्थामल गौर किसोर सुहाए ॥

देखि रूप लोचन ललचाने । हरपे जनु निज निधि पहिचाने ॥

धके नयन रघुवति छवि देखें । पलकन्हिहँ परिहरी निमेषें ॥

अधिक सनेह देह भै भोरी । सरद ससिहि जनु चिनव चकोरी ॥

लोचन मग रामहिं उर आनी । दीन्है पलक कपाट सयानी ॥

जब सिय सरिन्ह प्रेमवस जानी । कहि न सकहिं कछु मन सकुचानी ॥

१—प्र० : सुभद्र । [ दि०, न० : सुभग ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : मनु दुपंथ पगु धरै न काऊ । [ दि० : भूति न देखि कुमाल पाऊ ] । न०, च० : प्र० ।

३—प्र० : पारहिं । दि० : प्र० [ (४) : लारहिं ] । [ न० : लारहिं ] । च० : प्र० [ (५) : लारहिं ] ।

४—प्र० : गिरा । दि० : प्र० । [ न० : चोरा ] । च० : प्र० [ (६) : चोरा ] ।



दो०—लता भवन तें प्रगट मे तेहि अवसर दोड भाइ ।

निकसे जनु जुग बिमल बिबु जलद । पटल बिलगाइ ॥२३२॥  
 सोभा सीय सुभग दोड बोरा । नील पीत जतजात<sup>१</sup> सरीस ॥  
 मोरपंख<sup>२</sup> सिर सोइत नोकें । गुच्छ वीच बिचरे कुसुमकली कें ॥  
 भाल तिलक श्रमचिंदु सुहाए । श्रवन सुभग भूपन छवि द्याए ॥  
 चिकट भृकुटि कच घूँघुरवारे । नव सरोज लोचन रतनारे ॥  
 चारु चिबुक नासिका कपोला । हास बिलास लेत मनु मोला ॥  
 मुख छवि कहि न जाइ मोहि पाहीं । जो बिलोकि बहु काम लजाहीं ॥  
 उर मनिमाल कंधु कल ग्रीवा । काम कलम कर भुज बल सीया ॥  
 सुमन समेत वाम कर दोना । साँवर कुँभर सखी सुठि लोना ॥  
 दो०—केहरि कटि पट पीत धर सुपमा सील निधान ।

देखि भानुकुल भूपनहि बिसरा सखिन्ह अवान ॥२३३॥  
 धरि धीरज एक आलि सयानी । सीता सन बोली गहि पानी ॥  
 महुरि गौरि कर ध्यानु करेह । मूप किसोर देखि किन लेह ॥  
 सकुचि सीय तव नयन उधारे । सनमुख दोड रघुसिंध निहारे ॥  
 नलसिख देखि राम कै सोभा । सुमिरि पिता पनु मनु अति धोभा ॥  
 परबस सखिन्ह लखी जर सीता । भएउ गहरु सब कहहि समीना ॥  
 पुनि आउव एहि बेगिआँ<sup>४</sup> काली । अस कहि मनबिहसी एक आली ॥  
 गूढ़ गिरा सुनि सिध सकुचनी । भएउ बिलबु मातुभय मानी ॥  
 धरि बढ़ि धीर राम उर आने । फिरी अपनपउ<sup>५</sup> पितु वस जाने ॥

१—प्र०, दि०, न०, च० : गतात [ (३) (६३) जननाम ] ।

२—प्र० : मोरपंख । दि० : प्र० [ (१) : वारपंख ] । [ न० : वारपंख ] । च० : प्र० [ (=) : वारपंख ] ।

३—प्र० : गुच्छ वीच बिचरे । [ दि०, न०, : गुच्छे बिच बिच ] । च० : प्र० [ (२) : गुच्छे बिच बिच ] ।

४—प्र० : बेगिआ । दि० : प्र० [ (३) बरिआ, (४) (५) बरिआ ] । [ न० : बरिआ ] । च० : प्र० ।

५—प्र० : फिरी अपनपउ । [ दि० : गिरी अपनपउ ] । न०, च० : प्र० ।

दो०—देखन मिस मृग बिहग तरु फिरै बहोरि बहोरि ।

निरखि निरखि रघुबीर छत्रि बाढ़ै प्रीति न थोरि ॥२३४॥

जानि कठिन सिव चाप विसूरति । चली राखि उर स्यामल मूरति ॥

प्रभु जय जात जानकी जानी । सुख सनेह मोभा गुन<sup>१</sup> खानी ॥

परम प्रेम मय मृदु मसि कीन्ही । चारुचिच भीती<sup>२</sup> लिखि लीन्ही ॥

गई<sup>३</sup> भवानी भवन बहोरी । बंद चरन बोलीं फर जोरी ॥

जय जय गिरिवरराज किसोरी । जय महेस मुख चंद चकोरी ॥

जय गजवदन पडानन माता । जगत जननि दामिनि दुसि गाता ॥

नहिं तव आदि अंत<sup>४</sup> अवसाना । अमित प्रभाउ बेदु नहिं जाना ॥

भव भव विभव पराभव कारिनि । विश्व विमोहनि स्वचस विहारिनि ॥

दो०—पति देवता सुतीय महुँ मातु प्रथम तव रेख ।

महिमा अमित्र न सकहि कहि सहस सारदा सेप ॥२३५॥

सेवत तोहि सुलभ फल चारी । वरदायनी पुरारि<sup>५</sup> पिआरी ॥

देवि पूजि पद कमल तुम्हारे । सुर नर मुनि सब होहिं सुखारे ॥

मोर मनोरथु जानहु नीकें । बसहु सदा उर पु<sup>६</sup> सबही कें ॥

कीन्हेउँ प्रगट न कारन तेहीं । अस कहि चरन गहे<sup>७</sup> बैदेहीं ॥

विनय प्रेम बस भई भवानी । खसी मान मूरति मुसुकानी ॥

सादर सिध प्रसाद सिर धरेऊ । बोलीं गौरि हरष हिअं भरेऊ<sup>८</sup> ॥

सुनु सिय सरय असीस हमारी । पूजिहि मनकागना तुम्हारी ॥

१—प्र० : गुन । [ दि० : कै ] । नृ०, च० : प्र० [ (न) : कै ] ।

२—प्र० : चिन्ता भीती । [ दि० : चित्र भीति ] । नृ०, च० : प्र० [ (द) दिन्वित्र भीति; (न) : चित्र मान्त्र ] ।

३—प्र० : गई । [ दि०, नृ० : गय ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : वरदायनी पुरारि । दि० : प्र० । [ नृ० : वरदायिनि त्रिपुरारि ] । च० : प्र० [ (न) : वरदायिनि त्रिपुरारि ] ।

५—प्र० : गहे । दि० : प्र० । [ नृ० : गही ] । च० : प्र० ।

६—प्र० : भरेऊ । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (रघ) : भयउ ] ।

नारद बचनु सदा सुचि साचा । सो वर मिलिहि जाहि मन राचा ॥

छ०—मनु जाहि राचेउ मिलिहि सो बह सहज सुंदर मावगे ॥

करुनानिधान मुजान सील सनेह जानन रावगे ॥

येहि भौति गौरि असीस मुनि मिय सहिन हिर्य हरषी अली ॥

तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली ॥

सो०—जानि गौरि अनुकूल सिय हिर्य हगु न जाइ कहि ।

मजुल मगल मूल वाम अग फरकन लगे ॥२३६॥

हृदय सहाहत सीय लोनाई । गुर समीप गवने ठोउ भाई ॥

राम कहा सबु कौसिक पाहीं । सरल सुमाउ लुथा छल नाही ॥

सुमन पाइ मुनि पूजा कीन्ही । पुनि असीस दुहु भाइन्ह दीन्ही ॥

सुफल मनोरथ होहु तुम्हारे । राम लवन मुनि भर सुखारे ॥

करि भोजनु मुनिवर विजानी । लगे कहन कछु कथा पुरानी ॥

विगत दिवसु गुर आयेसु पई । सध्या करन चले दोउ भाई ॥

प्राची दिसि ससि उएउ सुहावा । सियमुख सरिस देखि सुख पावा ॥

बहुरि बिचार कीन्ह मन माहीं । सीय बदन सम हिमकर नाही ॥

दो०—जनम सिंधु पुनि बंधु बिपु दिन मलीन सकलकु ।

सिय मुख समता पाव किमि चदु बापुरो रंकु ॥२३७॥

घटै बढै विरहनि दुखदाई । प्रसै राहु निज सधिहि पाई ॥

कोक सोकप्रद पकज द्रोही । अवगुन बहून चद्रमा तोही ॥

बैदेही मुख पटतर दीन्हे । हाइ दोपु बढ अनुचिन कीन्हे ॥

सिय मुखछवि बिबुव्याज बखानी । गुर पहि चले निसा बढि जानी ॥

करि मुनि चरन सरोज प्रनामा । आयेसु पाइ कीन्ह विश्रामा ॥

विगत निसा रघुनायकु जागे । बहु बिलोकि कइन अस लागे ॥

उएउ अरुनु अवलोकहु ताता । पकज कोक लोक सुख दाता ॥

बोले लखन जोरि जुग पानी । प्रमु प्रमाउ सूचक मृदु बानी ॥

दो०-अस्तोदय सकुचे कुमुद उदगन जोति मलीन । •

जिमि तुम्हार आगमन सुनि भए नृपति बलहीन ॥२३८॥  
नृप सब नखत करहिं उजिआरी । टारि न सकहिं चाप तम भारी ॥  
कमल कोक मधुकर खग नाना । हरपे सकल निसा अवसाना ॥  
पेसेहिं प्रभु सब भगत तुम्हारे । होइहिं दूटैं धनुष सुखारे ॥  
उएउ भानु बिनु श्रम तम नासा । दुरे नखत जग तेजु प्रकासा ॥  
रवि निज उदयठायज रघुगया । प्रभु प्रनापु सब नृपन्ह देखाया ॥  
तब मुज बल महिमा उदघाटी । प्रगटी धनु विवटन परिपाटी ॥  
बधु बचन सुनि प्रभु मुसुकाने । होइ सुचि सहज पुनीत नहाने ॥  
नित्य क्रिया करि गुर पहिं अए । चरन सरोज सुभग सिर नाए ॥  
सतानदु तब जनक बोलाए । कौशिक मुनि पहिं तुरत पठाए ॥  
जनक विनय तिन्ह आनिं सुनाई । हरपे बोलि लिप दोउ भाई ॥  
दो०-सतानंद पद बंदि प्रभु बैठे गुर पहिं जाइ ।

चलहु तात मुनि कहेउ तब पठवा जनक बोलाइ ॥२३९॥  
सौय स्थयवर देखिअ जई । ईसु काहि धौं देइ बड़ाई ॥  
लेखन कहा जसमाजनु सोई । नाथ कृपा तब जापर होई ॥  
हरपे मुनि सब सुनि वर बानी । दीन्हि असीस सबहिं सुखु मानी ॥  
पुनि मुनिवृंद समेत कृपाला । देखन चले धनुष मख साला ॥  
रंगभूमि आए दोउ भाई । अति सुधि सब पुरवासिन्ह पाई ॥  
चले सकल गृह काज विसारी । बाल जुवान जरठ नरनारी ॥  
देखी जनक भोर भै मारी । सुचि सेवक सब लिप हैंकारी ॥  
तुरत सकल लोगन्ह पहिं जाह । आसन उचित देहु सब काह ॥  
दो०-कहि मृदु बचन बिनीत तिन्ह बैठारे नर नारि ।

उत्तम मध्यम नीच लघु निज निज थल अनुहारि ॥२४०॥

१-प्र० : मार । दि० : आनि । [ नृ० : आर ] । च० : दि० ।

२-[ प्र०, दि० : जरठ ] । नृ०, च० : जरठ [ (८) : जरठ ] ।

राजकुँअर तेहि अवसर आए । मनहुँ मनोहरता तन द्याए ॥  
 गुन सागर<sup>१</sup> नागर बर बीरा । सुदर स्यामल गौर सरीरा ॥  
 राज समाज बिराजत रुरे । उडगन महु जनु जुग त्रिधु पूरे ॥  
 जिन्ह कें रही भावना जेसी । प्रभु मूरति तिन्ह देखी तेपी ॥  
 देखहि भूप महा रनधीरा । मनहुँ चोर रसु धरे सरीरा ॥  
 डरे कुटिल नृप प्रभुहि निहारी । मनहुँ भयानक मूरति भारी ॥  
 रहे असुर छलद्योनिष देषा । तिन्ह प्रभु प्रगट काल सम देखा ॥  
 पुरबासिन्ह देखे दोउ भाई । नरभूपन लोचन मुखदाई ॥  
 दो०—नारि त्रिलोकहिं हरषि हिअ निज निज रुचि अनुरूप ।

जनु सोहत सिंगार घरि मूरति परम अनृप ॥२४१॥  
 बिदुषन्ह प्रभु बिराटमय दीसा । बहु मुख कर पग लोचन सीसा ॥  
 जनक जाति अवलोकहिं कैसैं । सजन सगे प्रिय लागहिं जेसैं ॥  
 सहित विदेह त्रिलोकहिं रानी । सिसु सम प्रीति न जाइ<sup>२</sup> बखानी ॥  
 जोगिन्ह परम तत्त्वमय भासा । सात सुद्ध सम सहज प्रकासा ॥  
 हरिमगतन्ह देखे दोउ आता । इष्टदेव इव सब सुख दाता ॥  
 रामहि चित्तय भायें<sup>३</sup> जेहि सीया । सो सनेहु सुखु नहिं कथनीया ॥  
 उर अनुभवति न कहि सकु सोऊ । कवन प्रकार कहै कबि कोऊ ॥  
 पहि<sup>४</sup> त्रिधि रहा जाहि जस भाऊ । तेहि तम देखेउ कोसलराऊ ॥  
 दो०—राजत राज समाज महु कोसलराज कसोर ।

सुदर स्यामल गौर तन बिस्व बिलोचन चोर ॥२४२॥  
 सहज मनोहर मूरति दोऊ । कोटि काम उपमा लघु सोऊ ॥  
 सरद चंद निंदक मुख नीके । नीरज नयन भावने जी के ॥

१—[ प्र० \* सागर ] । दि० सागर नागर । न०, च० दि० ।

२—प्र० नि । दि० १२ [ (५४) जान ] । १०, च० दि० ।

३—प्र० भाई । दि० प्र० [ (४) भाय ] । [ नृ०, भाय न० प्र० ] ( ) भाय ।

४—प्र० ते । दि० चदि । लृ० योह । च० नृ० [ ( ) जदि ] ।

चितवनि चारु मार मनु-हरनी । भावति हृदयँ जात नहिं बरनी ॥  
 कल कपोल श्रुति कुंडलं लोला । चिबुक अधर सुंदर मृदु बोला ॥  
 कुमुदबंधु कर निंदक हासा । मृकुटी विकट मनोहर नासा ॥  
 भाल बिसाल तिलक भूलकाहीं । कच बिलोकि अलिश्रवलि लजाहीं ॥  
 पीत चौतनी 'सिरन्हि सुहाई । कुमुमकलीं बिच बीच बनाई ॥  
 रखै रुचिर कंबु कल ग्रीवा । जनु त्रिभुवन सुपमा की सीवा ॥  
 दो०—कुंजर मनि कठा कलित उरन्हि तुलसिका माल ।

वृषभ कंघ केहरि ठवनि बलनिधि बाहु बिसाल ॥२४३॥  
 कटि तूनीर पीत पट बाँधे । कर सर धनुष बाण वर काँधे ॥  
 पीत जज्ञ उपवीत सुहाए । नखसिख मंजु महा छवि छाए ॥  
 देखि लोग सब भए सुखारे । एकटक लोचन चलत न तारे ॥  
 हरपे जनकु, देखि दोउ भाई । मुनि पद कमल गहरे तब जाई ॥  
 करि यिनती निज कथा सुनाई । रगअवनि सब मुनिहि देखाई ॥  
 जहँ जहँ जाहिँ कुँअर वर दोऊ । तहँ तहँ चकित चितव सबु कोऊ ॥  
 निज निज रुख रामाँह सबु देखा । कोउ न जानै कछु मरमु बितेपा ॥  
 भलि रचना मुनि नृप सन कहेऊ । राजा मुदित महा सुखु लहेऊ ॥  
 दो०—सब मंचन्ह तैं मंचु एकु सुंदर बिसद बिसाल ।

मुनि समेत दोउ बबु तहँ बैठारे महिपाल ॥२४४॥  
 प्रसुहि देखि सब नृप हिअँ हारे । जनु राकेस उदय भएँ तारे ॥  
 अस प्रतीति सब के मन माहीं । राम चाप तोरव संक नाही ॥  
 बिनु भजेहु भवधनुषु बिसाला । मेलिहि सीय राम उर माला ॥  
 अस विचारि गवनहु घर भाई । जसु प्रतापु बलु तेजु गँवाई ॥  
 बिहसे अपर मूष सुनि बानी । जे अवित्रेक अंध अभिमानी ॥  
 तोरेहुँ धनुषु व्याहु अंगवाहा । बिनु तोरे को कुँअरि बिआहा ॥

१—प्र० : चलन न तारे । [ दि० : (३) (४) चलन न तारे, (५) (५) टरै न तारे ] ।

[ वृ० : टरन न तारे ] । च० : प्र० [ (५) : टरै न तारे ] ।

एक बार कालहुँ किन होऊ । सिय हित समर जितव हम सोऊ ॥  
येह सुनि अवर महिप<sup>१</sup> मुसुकाये । धरममील हरिभगत सयाने ॥  
सो०-सीय विश्राहवि राम गरबु दूरि करि नृपन्ह कोर ।

जीति को सक समाम दसरथ के रन बाँकुरे ॥२४५॥  
व्यर्थ मरहु जनि गाल बजाई । मनमोदकन्हि कि भूल बनाई<sup>१</sup> ॥  
सिख हमार सुनि परम पुनीता । जगदंबा जानहु जियँ सीता ॥  
जगतपिना रघुपतिहि बिचारी । भरि लोचन छवि लेहु निहारी ॥  
सुंदर सुखद सकल गुन रासो । ए दोउ बधु समु उर बासी ॥  
सुधासमुद्र समीप बिहाई । मृगजलु निरखि मरहु कत धाई ॥  
फरहु जाइ जा कहुँ जोइ भाया । हम तौ आजु जनम फलु पाया ॥  
अस कहि भले भूप अनुरागे । रूप अनूप बिलोमन लागे ॥  
देखहि सुर नभ चढ़े विमाना । बरषहि सुमन कहिँ कल गाना ॥  
दो०-जानि सुअवसर सीय तब पठई जनक बोलाइ ।

चतुर सखी सुंदर सकल सादर चली लवाइ ॥२४६॥  
सिय सोभा नहिँ जाई बलानी । जगदंबिका रूप गुन खानी ॥  
उपमा सकल मोहि लघु लागी । प्राकृत नारि अंग अनुरागी ॥  
सिय बरनिय तेइ<sup>४</sup> उपमा देखि । कुकवि कहाइ अजसु को लेई ॥  
जौ पटारिअ तीअ सम सीया । जग अति जुवति कहाँ कमनीया ॥  
गिरा मुखर तन अरघ भवानी । रति अति दुखित अतनुपति जानी ॥  
त्रिष बारुनी बंधु प्रिय जेही । कहिअ रमा सम किमि बैदेही ॥  
जौ छवि सुधा पयोनिधि होई । परम रूपमय कच्छपु सोई ॥

१-प्र० : अर महिष । डि० . प्र० । [ वृ० . अपर भू । ] । च० : प्र० ।  
२-[प्र० . के ] । डि० , वृ० , च० : को ।

३-प्र० : बतार । डि० : प्र० [ ( ) : बुतार ] । [ वृ० : बुतार ] । च० : प्र० [ ( ) :  
न जाई ] ।

४-प्र० : सिय बरनिय तेइ । डि० : प्र० । [ वृ० : सीय बरनिय तेइ ] । च० : प्र०  
[ ( ) : सिय बरनिय तेइ ] ।

सोभा रजु मंदरु सिंगारु । मथै पानि पंकज निज मारु ॥  
दो०-एहि विधि उपजै लच्छि अब सुंदरता सुख मूल ।

नदपि सकोच समेत कवि कहहिं सीय समतूल ॥२४७॥

चलीं सग लै सखीं सयानी । गावन गीत मनोहर बानी ॥  
सोह नवल तनु सुंदर सारी । जगतजननि अतुलित छवि भारी ॥  
भूपन सकल सुदेस सुहार । अंग अंग रचि सखिन्ह बनाए ॥  
रंगभूमि जन सिय पगु घारी । देखि रूप मोहे नर नारी ॥  
हरपि सुरन्ह दूंदुभी बजाई । बरपि प्रेसून अपहरा गाई ॥  
पानि सरोज सोह जयमाला । अवचट चितए सकल भुआला ॥  
सीय चकित चित रामहि चाहा । मए मोहवस सब नरनाहा ॥  
मुनि समीप देखे दोउ भाई । लगे ललकि लोचन निधि पाई ॥

दो०-गुरजन लाज समाजु बड़ देखि सीय सकुचानि ।

लागि१ बिलोकन सखिन्ह तन रघुबीरहि उर आनि ॥२४८॥

राम रूपु अरु सिय छवि देखें । नरनारिन्ह परिहरीं निमेषें ॥  
सोवहिं सकल कहत सकुचाहीं । विधि सन बिनय करहिं मन माहीं ॥  
हरु विधि बेगि जनक जड़ताई । मति हमारि२ असि देहि सुहाई ॥  
बिनु विचार पनु तजि नरनाहू । सीय राम कर करै बिआहू ॥  
जगु भल कहिहि भाव सब काहू । हठ कीन्हें अतहु उर दाहू ॥  
येहि लालसों मगन सबु लोगू । बरु साँवरो जानकी जोगू ॥  
तब धंदीजन जनक बोलाए । विरिदावली कहत चलि आए ॥  
कह नृपु जाइ कहहु पन मोरा । चले भाट हिअ हरपु न थोरा ॥

१-प्र० : लागि । द्वि० : प्र० । [नृ० : लगी] । च० : प्र० [ (न) : लगी] ।

२-प्र० : देवी, निमेष । द्वि० : प्र० । [नृ० : देवी, निमेषी] । च० : प्र० [ (न) : देवी, निमेषी] ।

३-प्र० : हमारि । द्वि०, नृ० : प्र० । च० : प्र० [ (द३) : हमार] ।



एक बार कालहुँ किन होऊ । सिय हित समर जितव हम सोऊ ॥  
 येह सुनि अवर महिष<sup>१</sup> मुसुनाने । धरममोल हरिभगत सयाने ॥  
 सो०-सीय बिआहवि राम गरबु दूरि करि नृपन्ह कोर ।

जीति को सक सपाम दसथ के रन बोंकुने ॥२४५॥  
 व्यर्थ मरहु जनि गाल उजाई । मनमोदन्हि कि मूल बनाईर ॥  
 सिख हमार सुनि परम पुनीता । जगदंबा जानहु जिअँ सीना ॥  
 जगतपिना रघुपतिहि विचारी । भरि लोचन छवि लेहु निहारी ॥  
 सुदर सुखद सकल गुन रासी । ए दोउ बधु समु उर बासी ॥  
 सुधासमुद्र समीप बिहाई । मृगजलु निरखि मरहु कत धाई ॥  
 करहु जाइ जा कहँ जोइ भावा । हम तौ आजु जनम फलु पावा ॥  
 अस कहि भले भूप अनुरागे । रूप अनूप बिनोदन लागे ॥  
 देखहिं सुर नभ चढ़े बिमाना । बरपहिं सुमन कहिं कल गाना ॥  
 दो०-जानि सुअवसर सीय तब पठई जनक बोलाई ।

चतुर सखी सुंदर सकल सादर चली लवाई ॥२४६॥  
 सिय सोभा नहिं जई बखानी । जगदबिअ रूप गुन खानी ॥  
 उपमा सकल मोहि लघु लागी । प्राकृत नारि अंग अनुरागी ॥  
 सिय बरनिअ तेइ<sup>२</sup> उपमा देई । कुनवि कहाइ अजसु को लेई ॥  
 जौ पटारिअ तीअ सम सीया । जग असि जुवति कहँ कमनीया ॥  
 गिरा मुखर तन अरध भगानी । रति अति दुखित अतनुपति जानी ॥  
 त्रिप बारुनी बधु प्रिय जेही । कहिअ रमा सम किमि बेदेही ॥  
 जौ छवि सुधा पयोनिधि होई । परम रूपमय कच्छपु सोई ॥

१-प्र० अवर महिष । दि० प्र० । [वृ० अपर भू ।] । १० प्र० ।

२-[प्र० के ] । दि०, वृ०, च० को ।

३-प्र० बनाई । दि० प्र० [ ( ) ] तुलसी । [ वृ० तुलसी ] । १० प्र० [ ( ) ]

न बार ] ।

४-प्र० सिय वरानेय ते । दि० प्र० । [ वृ० सीय वरनि तैर ] । च० प्र० [ ( ) ] नियहि वरनि जनि ] ।

सोभा रजु मंदरु सिंगारु । मथै पानि पंकज निज मारु ॥

दो०—एहि विधि उपजै लच्छि जव सुंदरता सुख मूल ।

नदपि सकोच समेत कवि कहहिं सीय समनूल ॥२४७॥

चनी संग लै सखीं सयानी । गावन गीत मनोहर बानी ॥

सोह नवल तनु सुंदर सारी । जगतजननि अतुलित छवि भारी ॥

मूपन सकल सुदेस सुहार । अंग अंग रचि सखिन्ह बनाए ॥

रंगमूमि जव सिय पगु घारी । देखि रूप मोहे नर नारी ॥

हरपि सुगन्ध दूंदुभी बजाई । वरपि प्रेसून अपहरा गाई ॥

पानि सरोज सोह जयमाला । अवचट चितए सकल मुआला ॥

सीय चकित चित रामहि चाहा । मए मोहवस सब नरनाहा ॥

मुनि समीप देखे दोउ भाई । लगे ललाकि लोचन निधि पाई ॥

दो०—गुरजन लाज समाजु बड़ देखि सीय सकुचानि ।

लागि१ बिलोक्कन सखिन्ह तन रघुवीरहि उर आनि ॥२४८॥

राम रूपु अरु सिय छवि देखें । नरनारिन्ह परिहरीं निमेषें ॥

सोबहिं सकल कहत सकुचाहीं । विधिसन विनय करहिं मन माहीं ॥

हरु विधि बेगि जनक जड़ताई । मति हमारि२ असि देहि सुहाई ॥

बिनु विचार पनु तजि नरनाह । सीय राम कर करै विश्राह ॥

जगु मल कहिहि भाव सत्र काह । हठ कीन्हें अतहु उर दाह ॥

येहि लालसों मगन सबु लोगू । बरु साँवरो जानकी जोगू ॥

तव वंदीजन जनक बोलाए । गिरिदावली कहत चलि आए ॥

कह नृपु जाइ कहहु पन मोरा । चले माट हिय हरपु न योरा ॥

१—प्र० : लगी । द्वि० : प्र० । [नृ० : मगी] । च० : प्र० [ (८) : लगी ] ।

२—प्र० : देवे, निमेष । द्वि० : प्र० । [नृ० : देवी, निमेषी] । च० : प्र० [ (८) : देवी, निमेषी ] ।

३—प्र० : उमारि । द्वि०, नृ० : प्र०, । च० : प्र० [ (८) : हमार ] ।

दो०—बोले बन्दी बचा वर मुनहु मदन महिपान ।  
 पन बिदेह कर कटहि एम मुना उठाइ विमान ॥२४२॥  
 रावनु वानु महाभट भरे । देखि मगमा गरहि मित्रे ॥  
 सोइ पुरारि वाडहु कटोरा । राग समा आनु जेइ तोम ॥  
 त्रिभुवा जय समेन बंदेही । बिगटि बिचार वरे एठि तेही ॥  
 मुनि पन सकल मूप अभिनाये । भटमानी अनिमय मा माये ॥  
 परिकर बोधि उठे अरुनाई । चने इच्छेइन्ह सिा नाई ॥  
 तमकि ताकि तकि मियपनु घरही । उठे न फोटि भोनि वनु करही ॥  
 जिन्हके कलु बिचार मन माही । चाप समीप महीप न जोही ॥  
 दो०—तमकि घरहि धनु मूढ नृप उठे न चनहि लजाइ ।  
 मनहु पाइ भट बाहु वनु अविनु । अधिनु गरमाइ ॥२५०॥  
 मूप सहस दस गरहि पारा । लगे उठावन टर न टारा ॥  
 हने न सभु सरासनु कैमें । कामी बचनु सनी मनु जेसैं ॥  
 सय नृप मए जोगु उपहासी । जेसैं विनु बिगग संन्यासी ॥  
 फीरति निजय बीरता भारी । चने चप कर बरसत हारी ॥  
 श्रीहत मय हारि हिअँ राजा । बैठे निज निज जाइ समाजा ॥  
 नृपन्ह बिलोकि जनकु अरुलाने । बोले बचन रोप अनु साने ॥  
 दीप दीप के भूपति नाग । आप मुनि हम जो वनु ठाना ॥  
 देव दनुज धरि मनुज सीरा । विपुन बीर आप रनधीरा ॥  
 दो०—कुँअरि मनोहर बिजय बड़ि फीरति अति कमनीय ।  
 पार्वनहार विरचि अनु रचेउ न धनु दमनीय ॥२५१॥  
 कहहु फहि येहु लामु न भावा । काहुँ न सकर चापु चढ़ावा ॥  
 रहौ चढ़ाउव तोरव भाई । तिलु मरि भूमि न सके छंडाई ॥

१—प्र० नागि । २—प्र० [ १० तमकि ] । ३—प्र० [ (२) तमकि ] ।  
 ४—प्र० रुने छ'ई । ५—प्र० [ (४) (५) (१५) रुनेउ छ'ई ] । ६०, ७० प्र०  
 [ (६) रुने उठाई, (७) बाहु छ'ई ] ।

अब जनि कोउ माखै भट मानी । वीर बिहीन मही मैं जानी ॥  
 सजहु आस निज निज ग्रहँ जाहू । लिखा न विधि वैदेहि विवाहू ॥  
 सुकृतु जाइ जौं पनु परिहरऊँ । कुँआरि कुँआरि रहौ का करऊँ ॥  
 जौं जनतेउँ विनु भट मुवि भाई । तौ पन करि होतेउँ न हँसाई ॥  
 जनक वचन मुनि सब नर नारी । देखि जानकिहि भए दुखारी ॥  
 माखै लपनु फुटिल मैं भौहैं । रदपट फरकत नयन रिसौहैं ॥  
 दो०—कहि न सकत रघुवीर डर लगे वचन जनु वान ।

नाइ राम पद कमल सिरु बोले गिरा प्रमान ॥२५२॥  
 रघुसिंह महुँ जहँ कोउ होई । तेहि समाज अस कहै न कोई ॥  
 कही जनक जसि अनुचित्त बानी । विद्यमान रघुकुल मनि जानी ॥  
 सुनहु मानुकुल पंकज मानू । कहाँ सुभाउ न कछु अभिमानू ॥  
 जौं तुम्हारि अनुसासन पावौं । कंदुक इव ब्रह्मांड उठावौं ॥  
 काचे घट जिमि डारौं फोरी । सकौं मेरु मूलक जिमि तोरी ॥  
 छव प्रताप महिमा भगवाना । कोरे वापुरो पिनाकु पुराना ॥  
 नाथ जानि अस आयेसु होऊ । कौतुक करौ बिलोकिअ सोऊ ॥  
 कमल नाल जिमि चाप चढ़ावौं । जोजन सत प्रमान लै धावौं ॥  
 दो०—तोरीं ध्वजकण्ड जिमि तव प्रताप बल नाथ ।

जौं न करौं प्रभु पद सपथ कर न घरौं धनु भाथ ॥२५३॥  
 लपन सकोप वचन अवै बोले । दगमगानि महि दिग्गज बोले ॥  
 सकल लोक सब भूप डेराने । सिय हिअ हरपु जनक सकुचाने ॥  
 गुर रघुपति सब मुनि मन माहीं । मुदित भए पुनि पुनि पुलकाहीं ॥  
 सयनहि रघुपति लपनु नेवारे । प्रेम समेत निकट बैठारे ॥

१—प्र० : जिमि । [दि० : इव] । नृ०, च० : प्र० [ (ः) : इव ] ।

२—प्र० : सो । दि० : प्र० [ (ः) (ः) (ः) : वा ] । [ नृ० : वा ] । चू० : प्र० [ (ः) : वा ] ।

३—प्र० : इव । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (ः) : जे ] ।

त्रिस्वामित्र समय मुभ जागी । गोले अति सनेहमय बानी ॥  
 उठहु गम भजहु मय चापा । मेण्डु तान जनक परिनापा ॥  
 मुनि गुर बचन चरन सिर नावा । हगु त्रिपादु न कहु उर आग ॥  
 ठाढ़े भाए उठि सहज सुमाणे । ठगनि जुवा मृगराजु लनने ॥  
 दो०—उदित उदयगिरि मच पर रघुवर जाल पतग ।

त्रिकसे सन सरोज सय हरपे लोचन मृग ॥२५४॥  
 नृपन्ह केरि आसा निसि नासी । बचन नखत अयली न प्रफासी ॥  
 मानी महिष कुमुद सकुचाने । कपट्री मूष डलूक लुकाने ॥  
 भए बिसोक कोक मुनि देवा । परिसहि सुमन जनावहि सेवा ॥  
 गुर पद बंदि सहित अनुरागा । राम मुनिन्ह सन आयेसु मागा ॥  
 सहजहि चले सकल जग स्वामी । मच मजु बर कुजर गामी ॥  
 चलत राम सय पुर नर नारी । पुलक पूरि तन भए मुखारी ॥  
 बंदि पितर मुरर सुदृत सँभारे । जौ कहु पुन्य प्रमाड हमारे ॥  
 तौ सिवधनु मृनाल की नाई । तोरहुँ रामु गनेस गोसाई ॥  
 दो०—रामहि प्रेम समेत लखि सखिन्ह सधीष बेलाइ ।

सीता मातु सनेह बस प्रबन कहै त्रिलसाइ । २५५॥  
 सखि सब कौतुकु देखनिहारे । जेठ कहावन हितू हमारे ॥  
 कोउ न बुझाइ कहै नृप पाहीं । ये बालक असिरे हठ मलि नाहीं ॥  
 रावन बान छुआ नहि चापा । हारे सकल मूष करि दापा ॥  
 सो धनु राजकुँवर कर देही । बाल मराल कि मरर लेहीं ॥  
 मूष सयानप सकल सिरानी । सखिविधिगतिकहुजाति नजानी ॥  
 बोली चतुर सखी मृदु बानी । तेजवन लघु गनिअ न रानी ॥

१—प्र० सुभाए । दि० प्र० । [तु० सुभाए ] न० प्र० । [ (२) ॥ १० ] ।

२—प्र० मुर । दि० तु०, च० प्र० [ (६अ) सन ] ।

३—प्र० बसि । [ दि० अस ] । तु० प्र० । [ च० अस ] ।

४—प्र०, कहु जाति । [ दि० कहु जाइ ] । तु०, च० प्र० [ (६अ) कहि जाति ] ।

कहँ कुंभज कहँ सिंधु अपारा । सोखेउ सुजसु सकल संसारा ॥  
रविमंडल देखत लघु लागा । उदयँ तासु तिभुवन तम भागा ॥  
दो०—मंत्र परम लघु जासु बस विधि हरि हर सुर सर्व ।

महा मत्त गजराज कहँ वस कर अंकुस खर्व ॥२५६॥  
काम कुसुम धनु सायक लीन्हे । सकल भुवन अपने वस कीन्हे ॥  
देखि तजिय संसउ अस जानी । मंजव धनुष राम सुनु रानी ॥  
सखी वचन सुनि भै परतीती । मिटा/बिपादु बढी अति प्रीती ॥  
तब रामहि बिलोकि वैदेही । समय हृदयँ बिनवति जेहि तेही ॥  
मनही मन मनाव अकुलानी । होहु प्रसन्न महेस भवानी ॥  
करहु सुकल आपनि सेवकाई । करि हितु हरहु चाप गरुघाई ॥  
रत्ननायक भरदायक देवा । आहु लगे कीन्हेउँ<sup>१</sup> तुअ<sup>२</sup> सेवा ॥  
बार बार बिनती सुनि मोरी । करहु चाप गुरुता अति थोरी ॥  
दो०—देखि देखि रघुवीर तन सुर मनाव धरि धीर ।

भरे बिजोचन प्रेम जल पुलकावली सरीर ॥२५७॥  
नीकँ निरखि नयन भरि सोभा । पितु पनु सुमिरि बहुरि मनुँ छोभा ॥  
अहह तात दारुनि हठ ठानी । समुझत नहिँ कछु लाभु न हानी ॥  
सचिव समय सिख देइ न कोई । बुध समाज बड़ अनुचित होई ॥  
कहँ धनु कुलिसहुँ चाहिँ कठोरा । कहँ स्यामल मृदु गात किसोरा ॥  
विधि केहि भौंति धरौ उर धीरा । सिरिस सुमन कन बेधिय हीरा ॥  
सकल सभा कै मति भै मोरी । अब मोहि संमुचाप गति तोरी ॥  
निज जड़ता लोगन्ह पर डारी । होहि हरुअ रघुपतिहि निहारी ॥  
अति परिताप सीय मन माहीं । लव निमेष जुग सय<sup>४</sup> सम जाहीं ॥

१—प्र० : ददी अति । [दि० : (०) (४) (५) यदि मन, (५) यदि अति] । नृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : कीन्हेउ । दि० : कीन्हेउ [ (५) : कीन्हेउ ] । नृ०, च० : दि० [ (५) : कीन्हे तव ] ।

३—प्र० : तुअ । दि० : प्र० [ (५) : तव ] । नृ०, च० : प्र० [ (५) : तव ] ।

४—प्र० : सय । [ दि०, नृ० : सय ] । च० : प्र० [ (५) : सय ] ।

दो०—प्रभुहि चितै पुनि चितव१ महि राजत लोचन लोल ।

खेलत मनसिज मीन जुग जनु बिधुमंडल डोलं ॥२५८॥  
गिरा अलिनि मुख पंकज रोकी । प्रगट न लाज निसा अवलोकी ॥  
लोचन जलु रह लोचन कोना । जैसे परम कृपन कर सोना ॥  
सकुषी व्याकुलता बड़ि जानी । धरि धीरजु प्रतीति उर आनी ॥  
तन मन बचन मोर पनु साचा । रघुपति पद सरोज चितु२ राचा ॥  
तौ भगवानु सकल उर बासी । करिहिं मोहिं रघुवर कै दासी ॥  
जेहि कै जेहि पर सत्य सनेह । सो तेहि मिलै न कछु संदेह ॥  
प्रभु तन चितै प्रेम पनु ठाना । कृपानिधान रामु सबु जाना ॥  
सियहि बिलोकि तकेउ धनु कैसें । चितव गरु३ लघु व्यालहि जैसे ॥  
दो०—लपन लखेउ रघुवंस मनि ताकेउ हर कोदंड ।

पुलकि गात बोले बचन चरन चापि ब्रह्मड ॥२५९॥  
दिसि कुंजरहु कमठ अहि कोला । घरहु धरनि धरि धीर न बोला ॥  
रामु चहहिं संकर धनु तोरा । होहु सजग सुनि आयेसु मोरा ॥  
चाप समीप रामु जब आए । नर नारिन्ह सुर सुकृत मनाए ॥  
सब कर संसउ अरु अज्ञानू । मद महीपन्ह कर अभिमानू ॥  
भृगुपति केरि गरब गरुआई । सुर मुनिबरन्ह केरि कदराई ॥  
सिय कर सोचु जनक पबिताबा । रानिन्ह कर दारुन दुख दावा ॥  
संसु चाप बड़ बोहितु पाई । चढ़े जाइ सब संगु बनाई ॥  
राम बाहु बल सिंधु अपारु । चहत पारु नहिं कोउ कड़हारु ॥  
दो०—राम बिलोके लोग सब चित्र लिखे से देखि ।

चितई . सीय कृपायतन जानी बिकल बिसेपि ॥२६०॥

१—प्र० : चितइ पुनि चितव । [ दि० : चितइ पुनि चितव ] । नृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : चितु । दि० : प्र० [ (४) (१) (५) ] । नृ० : मन ] । च० : प्र० [ (२) : मन ] ।

३—प्र० : गरु । दि० : प्र० [ (४) (१) (५) ] : गरु । [ नृ० : गरु ] । च० : प्र० [ (२) : गरु ] ।

देखी विपुल विकल<sup>१</sup> वैदेही<sup>२</sup> । निमिष विहात क्लृप्त सम तेही ॥  
 तृपित बारि बिनु जो तनु<sup>३</sup> त्यागा । मुँ कँरै का सुधा तड़ागा ॥  
 दार<sup>४</sup> वरपा सबरे कृषी सुखाने । समय चुकै पुनि का पछिताने ॥  
 अस जियँ जानि जानकी देखी । प्रभु पुलके लखि प्रीति बिसेषी ॥  
 गुरहि प्रनामु मनहि<sup>५</sup> मन कीन्हा । अति लाघवँ उठाइ धनु लीन्हा ॥  
 दमकैउ दामिनि जिमि जय लएऊ । पुनि नम धनु<sup>६</sup> भंडल सम मएऊ ॥  
 लैत चढ़ावत सँचत गाढ़े<sup>७</sup> । काहुँ न लखा देख सबु ठाढ़े ॥  
 तेहि छन राम मध्य धनु तोरा । मरेउ भुवन धुनि घोर कठोरा ॥  
 छं०—मरे भुवन घोर कठोर रव रवि याजि तजि मारगु चले ।  
 चिकरहि दिग्गज डोल महि अहि कौल कूरम कलमले ॥  
 मुराअमुर मुनि कर कान दीन्हे सकल विकल विचारहीं ।  
 कोदंड खंडेउ राम तुलसी जयति वचन उचारहीं ॥

सो०—संकर चापु जहाजु सागरु रघुवर बाहु बलु ।

बूढ़ सो<sup>८</sup> सकल समाजु चढ़ा<sup>९</sup> जो प्रथमहि मोह बस ॥२६१॥  
 प्रभु दोउ चाप खंड महि डारे । देखि लोग सब भए सुखारे ॥  
 क्रीसरूप पयोनिधि पावन । प्रेम बारि अवगाह सुहावन ॥  
 रामरूप राकेसु निहारी । बंदत शीचि पुलकावलि भारी ॥  
 बाजे नभ गहगहे निसाना । देवग्रधू नाचहि करि गाना ॥  
 ब्रह्मादिक मुरा सिद्ध मुनीसा । प्रभुहि प्रसंसहि देहि असीसा ॥  
 बरिसहि सुमन रंग बहु माला । गावहि किन्नर गीत रसाला ॥  
 रही भुवन मरि जय जय वानी । धनुष भंग धुनि जात न जानी ॥

१—प्र० : विपुल विकल । [दि० : विपुल अनिष्टि] । नृ०, च० : प्र० ।

२—[प्र० : को] । दि०, नृ०, च० : का ।

३—प्र० : मव । दि० : प्र० [(१) : जव] । [नृ० : जव] । च० : प्र० [(२) : जी] ।

४—प्र० : वृत्त नो । [दि० : (२) (१) वृत्त, (१) वृत्ते, (५३) वृत्तेउ] । [नृ० : वृत्ते] ।

च० : [(२) : वृत्ते] ।

५—प्र० : नद । दि० : प्र० [(१) : नद, (५५) नदेंउ] । [नृ० : नदें] । च० : प्र० [(६) (२) : नदें] ।



मुदित कहहिं जहँ तहँ नर नारी । भंजेउ राम संभुधनु भारी ॥  
दो०—बंदी मागव सूत गन चिरिद बजहिं मनिधीर ।

करहिं निछावरि लोग सब हय गय धन मनि चीर ॥२६२॥  
झौंझि मृदंग संख सहनार्द । भेरि ढोल दुंदुभी सुहाई ॥  
बाजहिं बहु बाजने सुहाए । जहँ तहँ जुवतिन्ह मंगल गाए ॥  
सखिन्ह सहित हरपीं सबरे रानी । सूखन धानु परा जनु पानी ॥  
जनक लहेउ सुखु सोचु बिहाई । पैरत थकै थाह जनु पाई ॥  
श्रीहत भए भूष धनु टूटै । जैसे दिवस दीप छपि छूटै ॥  
सीय सुखहि बरनिप्र केहि माँती । जनु चातकी पाइ जनु स्वाती ॥  
रामहिं लखनु बिलोक्त कैसेँ । ससिहि चकोर किसोरकु जैसेँ ॥  
सतानंद तब आयेसु दीन्हारै । सीता गमनु राम पहिं कीन्हारै ॥  
दो०—संग सखी सुदरि चतुर गावहिं मंगलचार ।

गवनी बाल मराल गति सुपमा अंग अपार ॥२६३॥  
सखिन्ह मध्य सिय सोहति कैसी । छवि गन मध्य महाछवि जैसी ॥  
कर सरोज जयमाल सुहाई । बिस्व बिजय सोभा जेहि छाई ॥  
तन सकोचु मन परम उद्याह । गूढ़ प्रेमु लखि परै न काह ॥  
जाइ समीप राम छवि देखी । रहि जनु कुँअरि चित्र अवरेखी ॥  
चतुर सखी लखि कहा बुझाई । पहिराबहु जयमाल सुहाई ॥  
सुनत जुगल कर माल उठाई । प्रेम बिबस पहिराइ न जाई ॥  
सोहत जनु जुग जलज सनाला । ससिहि सभोत देत जयमाला ॥  
गावहिं छवि अवलोकि सहेली । सिय जयमाल राम उर मेली ॥  
सो०—रघुवर उर जयमाल देखि देव बरिसहिं सुमन ।

सकुचे सकल भुआल जनु बिलोकि रवि कुमुद गन ॥२६४॥

१—प्र० : दुंदुभी सुहाई । दि० : प्र० । [तु० : दुंदुभी बजाई] । च० : प्र० ।

२—प्र० : अति । दि०, तु० : प्र० । च० : सब ।

३—प्र० : तमसः डी-भी, बी-ती । दि० : प्र० [ (४) (५) (५क) : दीन्हा, बीन्हा ] ।

तु० : प्र० । च० : बी-ती, बी-ती ।

पुं अरु व्योम वाजने वाजे । खल भए मलिन साधु सब राजे १ ॥  
 मुं किलर नर नाग मुनीसा । जय जय जय कहि देहिं असीसा ॥  
 नाचहि गावहिं विबुध बधूटी । बार बार कुसुमांजलि छूटी ॥  
 जहँ तहँ विप्र वेद धुनि करहीं । वरी विरिदागलि उच्चरहीं ॥  
 महि पातालु नाकु २ असु व्यापा । राम बरी सिय भजेउ चापा ॥  
 करहिं आरती पुर नर नारी । देहिं निद्यागरि बित्त विसारी ॥  
 सोहनि ४ सीय राम के जोरी । छवि सिंगारु मनहुं एक ठोरी ॥  
 सखी कहहिं प्रभु पद गहु सीता । करति न चरन परस अति भीता ॥  
 दो०-गौतम तिअ गति सुरति करि नहिं परसति पग पानि ।

मन बिहसे रघुवसमनि प्रीति अलौकिक जानि ॥२६५॥  
 तब सिय देखि भूप अभिलाषे । कूर कपूत मूढ़ मन मापे ॥  
 उठि उठि पहिरि सनाह अमागे । जहँ तहँ गाल बजावन लागे ॥  
 लेहु छड़ाइ सीय कह कोऊ । धरि बाँधहु नृप बालक दोऊ ॥  
 तोरें धनुष चाँड़ नहिं सरई । जीवत हमहिं कुँअरि को बरई ॥  
 जे बिदेहु कलु करै सहाई । जीतहु समर सहित दोउ भाई ॥  
 साधु भूप बोले सुनि बानी । गज समाजहि लाज, लजानी ॥  
 बलु प्रतापु बीरता बड़ाई । नाक पिनाकहि संग सिघाई ॥  
 सोइ सूरता कि अथ कहूँ पाई । असि बुधि तौ बिधि मुहुँ मसि लाई ॥  
 दो०-देखहु रामहि नयन भरि तजि इरपा मदु कोहु ५ ।

लपन रोपु पावकुं प्रखलु जानि सलम जानि होहु ॥२६६॥  
 बैनतेय बलि जिमि चह कागू । जिमि सनु ६ चहहि नागअरि भागू ॥

१-प्र० : राजे । दि० : प्र० । [ वृ० : गात्र ] । च० : प्र० [ (=) : गात्र ] ।

२-प्र० : कुसुमांजलि । [ दि० : कुसुमांजलि ] । वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (-) : कुसुमांजलि ] ।

३-प्र० : नाक । [ दि० : व्योम ] । वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (=) : नम मई ] ।

४-प्र० : सो. नि । दि० : प्र० । [ वृ० : मोहन ] । च० : प्र० ।

५-प्र० : बोहु । [ दि०, वृ० : मोहु ] । च० : प्र० : [ (=) : मोहु ] ।

६-प्र० : मनु । [ (-), मिश्र ] । दि०, वृ०, च० : प्र० ।

जिमि चह कुसल अहारन कोही । सब संवदा चहै सिय द्रोही ॥  
 लोभलोलुप कल<sup>१</sup> कीरति चहई । अकलंकता कि कामी लहई ॥  
 हरि पद विमुख परां गति<sup>२</sup> चाहै । तस तुम्हार लालचु नरनाहा ॥  
 कोलाहलु सुनि सीय सक्ानी । सखी लेवाइ गई जहँ रानी ॥  
 राम सुभाष चले गुर पाहीं । सिय सनेहु बानन मन माहीं ॥  
 रानिन्ह सहित सोच बस सीया । अब धौ विधिहि काह करनीया ॥  
 भूप बचन सुनि इन उत तरुही । लपनु राम दर बलि न सकही ॥  
 दो०—अरुन नयन भृकुटी कुटिल चिनयत नृपन्ह सरोप ।

मनहुँ मत्त गज गन निगलि सिंध किमोरहि<sup>३</sup> चोप ॥२६७॥  
 खरभर देखि बिकल पुर नारी<sup>४</sup> । सब मिलि देहिं महीपन्ह गारी ॥  
 तेहि अवसर सुनि सिवधनु भगा । आउप भृगुकुल कमल पतंगा ॥  
 देखि महीप सकल सकुचाने । बाज भगट जनु लग लुकाने ॥  
 गौर सरीर भूति भलि आजा । माल बिसाल त्रिपुंड विराजा ॥  
 सीस जटा ससि बदन सुहावा । रिस बस कछु अरुन होइ आवा ॥  
 भृकुटी कुटिल नयन रिस<sup>५</sup> राते । सहजहुँ चितवन मनहुँ रिसाते ॥  
 वृषभ कंध उर बाहु बिसाला । चारु जनेउ माल<sup>६</sup> मृगदाला ॥  
 कटि मुनिबसन तून दुइ बाँधे । धनु सर कर कुडार फल काँधे ॥  
 दो०—सांत वेपु करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप ।

धरि मुनि तनु जनु वीर रसु आएउ जहँ सब भूप ॥२६८॥

१—प्र० : लोभलोलुप वन । [ दि०, नृ० : लोभी लोलुप ] । च० : प्र० [ (-) लोभी लोलुप ] ।

२—प्र० : परा गति । [ दि० : सुगति जिनि ] । [ नृ० : परम गति ] । [ च० : (६७) परम गति, (-) परम पद ] ।

३—प्र० : किमोरहि । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (६७) : किमोरहि ] ।

४—प्र० : पुर नारी । [ दि०, नृ० : नर नारी ] । च० : प्र० [ (-) : नर नारी ] ।

५—प्र० : रिस । [ दि० : रिमि ] । नृ० : प्र० । [ च० : रिसि ] ।

६—प्र० : जनेउ माल । दि० : प्र० [ (३) (४) (-) : जनेऊ मालि ] । नृ०, च० : प्र० ।

देखत भृगुपति बेपु कराला । उठे सकुन भय विह्वल भुआला ॥  
 पिनु समेत कहि कहि निज नामा । लगे करन सब दड प्रनामा ॥  
 जेहि सुभायें चितवहि हितु जानी । सो जाने जनु आई सुटानी ॥  
 जनक बहोरि आई सिरु नावा । सीय वालाड प्रनामु करावा ॥  
 आसिप दीन्हि सखी हरपानी । निज समाज लै गई सयानी ॥  
 बिस्वामित्र, मिले पुनि आई । पद सरोज मेले दोउ भाई ॥  
 रामु लपनु दसरथ के ढोटा । दीन्हि असीस देखि भल जोटा ॥  
 रामहि चिते रहे थकि लोचन । रूपु अपार मार मद मोचन ॥  
 दो०—बहुरि बिलोकि बिदेह सन कहहु काह अति भीर ।

पूछत जानि अजान जिमि व्यापेउ कोपु सरीर ॥२६६॥  
 समाचार कहि जनक सुनाए । जेहि कारन महीप सब आप ॥  
 सुनन बचन फिरि अनत निहारे । देखे चाप खड महि डारे ॥  
 अति रिस बोले बचन कठोरा । कहु जइ जनक धनुष कै तोरा ॥  
 बेगि देखाउ मूढ़ न त आजू । उलटै महि जहँ लगि तब राजू ॥  
 अति डरु उतरु देत नृप नाही । कुटिल मूप हरपे मन माहीं ॥  
 सुर मुनि नाग नगर नर नारी । सोचहि सकल त्रास डर भारी ॥  
 मन पाँचिताति सीय महतारी । बिधि अत्र सर्वेरी बान विगारी ॥  
 भृगुपति कर सुभाउ सुनि सीता । अरध निनेप कलप सम बीता ॥  
 दो०—समय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीर ।

हृदयें न हरपु, बिषादु कह्यु बोले श्री रघुवीरु ॥२७०॥  
 नाथ समु धनु मजनिहारा । होइहि केउ एक दास तुम्हारा ॥

१—प्र० : आ३ । दि० : प्र० [ ( ) ] आखु । च० : प्र० ।

२—प्र० : फिरि । दि० : प्र० । [ वृ० : तब ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : वै । दि० : प्र० [ (अ) : केहे ] । [ वृ० : का ] । च० : प्र० [ (२) : कर ] ।

४—[ प्र० : लदि ] । दि०, वृ०, च० : लगि ।

५—प्र० : अत्र मँवरी । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : मँवरी मव ] । वृ०, च० : प्र

आयेगु तार करिअ किं मंही । मुनि रिसाइ बोले मुनि कोही ॥  
 सेरहु सो जो करै सेवकाई । अरि कम्पी करि करिअ लराई ॥  
 मुनहु राम जेहि सिय भनु तोग । सहसबाहु सम सो रिपु मोग ॥  
 सो बिलगाउ बिहाइ समाजा । न त मारै जैहहि सब राजा ॥  
 सुनि सुनि मनन लखनु मुमुक्षाने । घेने परसुगहि अपमाने ॥  
 बहु धनुही तोरी लगिकाई । कबहुँनभसि<sup>१</sup> रिसक्रीन्दिगोसाई ॥  
 गेहि धनु पर ममना केहि ऐतू । मुनि रिमाइ कह भृगुतुलकेतू ॥  
 दो०—रे नृप बालक काल बस बोलन तोहि न संमार ।

धनुही सम निपुणारि धनु विदित सकल समार ॥२७१॥  
 लखन कहा हंसि हपरें जाना । सुनहु देव सर धनुष समाना ॥  
 का क्षति लासु जून धनु तोर । देखा राम नपर के भोरे ॥  
 छुनन दूट गुरुपतिहु न दोख । मुनि बिनु काज करिअ कन रोख ॥  
 बोले चितै पशु की ओरा । रे सठ मुनेहि सुमाउ न मोरा ॥  
 बालरु बालि बघौं नहिं तोही । केवल मुनि जड़ जानहि<sup>२</sup> मोही ॥  
 बाल ब्रह्मचारी अति कोही । बिम्ब विदित छत्रिप कुन द्रोही ॥  
 भुज बल भूमि भूत्र त्रिनु शीन्ही । त्रिभुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ॥  
 सहसबाहु भुज छेरनिहारा । परसु बिलोखु महीप कुमार ॥  
 दो० मातु पितहे जनि सोच बस करसि<sup>३</sup> महीप<sup>४</sup> किसोर ।

गर्मन्ह के अर्मक दलन परसु मोर अनिघोर ॥२७२॥  
 विहसि लखनु बोले मृदु बानी । अहो मुनीसु महा भटमानी ॥  
 पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू । चहत उड़ावन पूँकि पहारू ॥

१—प्र० तुम्ह । दि० प्र० । नृ० मति । च० नृ० ।

२—प्र० नए । दि० प्र० [ (५३) नथन ] । वृ०, च० प्र० [ (६३) तवन ] ।

३—प्र० जानहि । दि० प्र० [ (५) जानेरि ] । वृ०, च० प्र० [ (८) जानेनि ] ।

४—प्र० करसि । [ दि० करहि ] । वृ०, च० प्र० ।

४—प्र० महीस । दि० महीप । वृ०, च० दि० [ (८) न भू ] ।

इहाँ कुम्हड़वतिआ कोउ नहीं । जे तरजनी देखि मरि जाहीं ॥  
देखि कुठारु सरासन बाना । मै कछु कहा सहित अभिमाना ॥  
भृगुकुल समुझि जनेउ प्रिनोकी । जो कछु कहहु सहौ रिस रोकी ॥  
सुर महिसुर हरिजन अरु गार्द । हमरें तुल टन्ह पर न सुराई ॥  
बघे पापु अपक्रोरति हारें । मारतहँ पाँ परिग्र तुम्हारें ॥  
कोटि कुलिस सम वचनु तुम्हारा । व्यर्थ धरहु धनु नान कुठारा ॥

दो०—जो प्रिनोकि अनुचिन कहेउँ छमहु महा मुनि धीर ।

मुनि सोप भृगुनंम मनि गेले गिरा गंभीर ॥२७३॥

कौसिक सुनुटु मरु येहु बालकु । कुटिल कालवम निज कुलपालकु ॥  
भानु वम राकेम कलरू । निपट निरकुमु अबुबु असकू ॥  
काल कनलु होइहि धन माहीं । कहौ पुकारि खांरि मोहि नाहीं ॥  
तुम्ह हटकहु जौं चहहु उबारा । कहि प्रगपु वनु रोपु हमारा ॥  
लपन कहेउ मुनि सुजम तुम्हारा । तुम्हहिं अद्य को बरने पारा ॥  
अपने मुख तुम्ह आपनि कग्नी । नार अनेक भति बहु बरनी ॥  
नहिं संतोपु तौ पुनि कछु कहहू । जनि रिस रोकि दुसह दुख सहहू ॥  
बीरव्रती तुम्ह धीर अछोभा । गारी देन न पावहु सोभा ॥

श्लो०—सूर सभर करनी करहिं कहिं न जनावहिं आपु ।

प्रियमान रन पाइ रिपु कायर करहिं प्रलापु ॥२७४॥

तुम्ह तौ कालु होंक जनु लावा । बार बार मोहि लागि बोलावा ॥  
सुनत लखन के वचन कठोरा । परसु सुवारि धरेउ कर घोरा ॥  
अन जनि देइ दोसु मोहि लोगू । कटुनादी बालकु बघ जोगू ॥  
बाल बिलोकि बहुत मै बाँचा । अब येहु मरनिहार भा साचा ॥  
कौसिक कहा छमिअ अपराधू । बाल दोष गुन मनहिं न साधू ॥

कर कुठार में अरुन कोही । आगे अपराधी गुर द्रोही ॥  
उतर देत छाड़ौ बिनु मारें । केवल कौसिक सील तुम्हारे ॥  
न त एहि काटि कुठार बठोरें । गुहि उरिन होतेउ श्रम थोरें ॥  
दो०—गाधिसूनु कह हृदयैं हँसि मुनिहि हरिआइ<sup>१</sup> सूम् ।

अयमय खोंड<sup>२</sup> न ऊलमय अजहु न बूम अबूम ॥२७५॥  
फहेउ लखन सुनि सोलु तुम्हारा । को नहि जान बिदित समारा ॥  
माता पितहि उरिन भए नीकें । गुर रिनु रहा सोनु बड़ जी कें ॥  
सो जनु हमरेहि माथें काढ़ा । दिन चलि गएउ व्याज बहु वाढ़ा ॥  
अब आनिअ व्यवहरिआ बोली । तुरत देउ मै धेनी खोली ॥  
सुनि कहु वचन कुठार सुधारा । हाय हाय सब सभा पुफारा ॥  
भृगुवर परसु देखावहु मोही । बिप बिचारि बचौ नृप द्रोही ॥  
मिले न कबहुं सुभट रन गाढे । द्विज देवना घाहि के बाढे ॥  
अनुचित कहि सब लोग पुरारे । रघुपति सैनहि लखनु नेवारे ॥  
दो०—लखन उतर आहुति सरिस भृगुवर कोपु कृसानु ।

बड़त देखि जल सम वचन बोले रघुकुल भानु ॥२७६॥  
नाथ कहु बालक पर छोह । सूघ दूधमुख करिअ न कोह ॥  
जौ पै प्रभु प्रभाउ कहु जाना । तौ कि बराबरि करै श्रयाना ॥  
जौ लरिका कहु अचगारि करही । गुर पितु मातु मोद मन भारही ॥  
करिअ कृपा सिधु सेवकु जानी । तुम सम सील धीर मुनि जानी ॥  
राम वचन सुनि कहुक जुडाने । कहि कहु लखन महुरि मुमुकाने ॥

१—प्र०. वर । दि०, व०, च० : प्र० [ (६) अ : एर ] ।  
२—[ प्र० : अरान ] । [ दि० : अरन ] । व० : अरन । च० : व० [ (८) ]

अरन ] ।  
३—प्र० : गाधिसूनु । दि० : प्र० । [ व० : गाधिसूनु ] । च० : प्र० [ (८) . गाधि  
सुन ] ।

४—प्र० : हरिओर । दि० : हरिओर । व०, च० : दि० ।  
५—प्र० : लाट । दि० : प्र० [ (४) . मट ] । व०, च० : प्र० [ (४) . ल : ] ।

हँसत देखि नखसिख रिस व्यापी । राम तोर आता बड़ पापी ॥  
 गौर सरीर स्याम मन माहीं । कालकूट मुख पयमुख नाहीं ॥  
 सहज टेढ़ अनुहरै न, तोही । नीचु मीचु सम देख न मोही ॥  
 दो०—लखन कहेउ हँसि सुनहु मुनि कोषु पाप कर मूल ।

जेहि बस जन अनुचित करहि चरहि<sup>१</sup> त्रिस्व प्रतिकूल ॥ २७७ ॥  
 मैं तुम्हार अनुचर मुनिराया । परिहरि कोष करिअ अत्र दाया ॥  
 दूट चाप नहिं जुरिहि रिसाने । बैठिअ होइहिं पाय पिगने ॥  
 जौं अति प्रिय तौ करिअ उपाई । जोरिअ कोउ बड़ गुनी बोलाई ॥  
 बोलत लखनहि जनकु डेराहीं । मष्ट करहु अनुचित भल नाहीं ॥  
 थर थर काँपहिं पुर नर नारी । छोट कुमार खोट अति<sup>२</sup> भारी ॥  
 भृगुपति सुनि सुनि निरभय बानी । रिस तनुं जरै होइ बल हानी ॥  
 बोले रामहि देइ निहोरा । बचौं विचारि बंधु लघु तोरा ॥  
 मन मेलीन तनु सुंदर कैसें । विष रस भा कनक घटु जैसें ॥  
 दो०—सुनि लखिमनु बिहसे बहुरि नयन तरेरे राम ।

गुर समीप गवने सकुचि<sup>३</sup> परिहरि बानी बाम ॥ २७८ ॥  
 अति विनीत मृदु सीतल बानी । बोले रामु जोरि जुग पानी ॥  
 सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना । बालक बचनु करिअ नहिं काना ॥  
 घरै बालंकु एक सुभाऊ । इन्हहिं न बिदुष बिदूषहिं काऊ ॥  
 तेहिं नाहीं दखु, काज बिगारा । अपराधी मैं नाथ तुम्हारा ॥  
 कृपा कोपु बधु बंधु<sup>४</sup> गोसाईं । मो पर करिअ दास की नाई ॥  
 कहिअ बेगि जेहिं बिधि रिस जाई । मुनिनायक सोइ करौ<sup>५</sup> उपाई ॥  
 कह मुनि राम जाइ रिस कैसें । अजहुँ अनुज तव चितव अनैसैं ॥

१—प्र० : चरहि । [ दि० : होइ ] । [ त० : परहि ] । च० : प्र० [ (८) : जेइ ] ।

२—प्र० : भनि । दि०, त०, च० : प्र० [ (६) : बट ] ।

३—प्र० : मकुचि ] । [ दि० : बहुरि ] । त०, च० : प्र० ।

४—[ प्र० : बंधे ] । दि० : बंधु । त०, च० : दि० [ (६) : बंधे ] ।

५—प्र० : करौ । [ दि० : करिअ ] । च० : प्र० [ (८) : कखु ] ।



एहि कै कंठ कुठारु न दीन्हा । तौ मै काह कोषु करि कीन्हा ॥  
दो०—गर्भ सहि अबनिष रवनि सुनि कुठार गति घोर ।

परमु अक्षत देगौ जिअत बैरी मूष स्तितोर ॥२७६॥  
बहे न हाथु दहै रिस धानी । भा कुठार कुठिन नृपचाती ॥  
भएउ वाम बिधि फिरेउ सुभाऊ । मोरे हृदयँ कृपा कसि काऊ ॥  
अजु दया<sup>१</sup> दुनु दुमह सहाया । सुनि सौमित्रि बिहसि सिरु नाया ॥  
बाउ कृपा मूर्ति अनुरूला । बोलन वचन भरत जनु पूला ॥  
जौ पै कृपा जगहिं गुणि गाता । मोयु भएँ तनु रामु निषाता ॥  
देखु जनकु हठि बालकु येह । कीन्ह चहत जटु जमपुर गेह ॥  
बेगि परहु किन ओखिन्ह ओटा । देखत छोट सोट नृप डोग ॥  
बिहसे लखनु कहा मन माहीं । मूँदँ ओखि कतहुं कोउ नाहीं ॥  
दो०—परसुरामु तत्र राम प्रति बोले उर अनि मोधु ।

समु सगसनु तोरि सठ परसि हमार प्रमोधु ॥२८०॥  
बंधु यहै कटु समत तोरे । तू छल विनय परसि कर जोरे ॥  
करु परितोषु मोर समामा । नाहि त छाडु कहाउव रामा ॥  
छलु तजि करहिं समर सिद्धोही । बबु सहित न त मारौ तोही ॥  
भृगुपति बकहिं कुठारु उठाए । मन मुसुकाहिं रामु सिर नाए ॥  
गुनहु लखन कर हम पर रोषु । कतहु सुधाइहु तैं बड़ दोषु ॥  
टेढ़ जानि सका रुबर काह । बरु चंद्रमहि असे न राह ॥  
राम कहैउ रिस तजिअ मुनीसा । कर कुठारु आगे यह सीसा ॥  
जेहि रिस जाइ करिअ सोइ स्वामी । मोहि जानिअ आपन अनुगामी ॥  
दो०—प्रमुहि सेवकहिं समरु कस तजहु विप्रवर रोषु ।

वेपु मिलोकैं कहेसि कछु बालक हँसै नहिं दोषु ॥२८१॥

१—प्र, दि०, १०, १० न्या [ (६) देव ] ।

२—प्र० संगमन । दि०, १० १० प्र० [ (१) सच बदे ] ।

—प्र० १११ हूँ । दि०, १०, १० प्र० [ (६) : शानक ]

देखि कुठारु वान धनु धारी । भै लरकहि रिस वीरु विचारी ॥  
 नामु जान पै तुम्हहि न चीन्हा । वंस सुमायँ उत्तर तेहिं दीन्हा ॥  
 जौं तुम्ह औतेहु मुनि की नाई । पद रत्र सिर सिमु धरत गोसाई ॥  
 छमहु चूरु अनजानत केरी । चहिय बिप्र उर कृपा घनेरी ॥  
 हमहिं तुम्हहिं सरवरि कस नाथा । कहहु न कहौं चरन कहँ माथा ॥  
 राम मात्र लघु नाम हमारा । परसु सहित बड़ नाम तुम्हारा ॥  
 देव एकु गुनु धनुष हमारे । नव गुन परम पुनीत तुम्हारे ॥  
 सब प्रकार हम तुम्ह सन हारे । छमहु विप्र अपराध हमारे ॥  
 दो०—बार बार मुनि बिप्रवर कहा राम सन राम ।

बोले भृगुपति सरूप हसि तहँ बंधु सम वाम ॥२८२॥  
 निपटहिं द्विज करि जानहि मोही । मैं जस बिप्र सुनावौं तोही ॥  
 चाप सुबां सर आहुति जानू । कोपु मोर अति घोर कृपानू ॥  
 समिधि सेन चतुरंग सुहाई । महा महीप भये पसु आई ॥  
 मैं येहिं परसु काटि बलि दीन्हे । समर जय जग कोटिन्ह कीन्हे ॥  
 मोर प्रमाउ बिदित नहिं तोरें । बोलसि निदरि बिप्र कै मोरें ॥  
 भंजेउ चापु दापु बह बाढ़ा । अहमिति मनहु जीति जगु ठाढ़ा ॥  
 राम कहा मुनि कहहु विचारी । रिस अति बड़िलघु चूक हमारी ॥  
 लुखतहिं टूट पिनाकु पुराना । मैं केहि हेतु करौं अभिमाना ॥  
 दो०—जौं हम निदरहिं बिप्र बदि सत्य सुनहु भृगुनाथ ।

तौ अस को जग सुमदु जेहि भयवस नावहिं माथ ॥२८३॥  
 देव दनुज मृषति भट नाना । समबल अधिक होउ बलवाना ॥  
 जौं रन हमहि प्रचारै कोऊ । लरहिं मुखेन कालु किन होऊ ॥  
 धत्रिय तनु धरि समर मकाना<sup>२</sup> । कुल कलंकु तेहि पाँवर आना<sup>६</sup> ॥

१—प्र० : जग । दि०, तु०, च० : प्र० [(६५) : जय] ।

२—प्र० : डेराना । दि० : मराना । तु०, च० : दि० ।

३—प्र० : आना । दि० : प्र० । [ तु०, च० : जना ] ।

फहों सुभाउ न कुनहि प्रसमी । कानहु दरहि न रन खुवमी ॥  
 निप्र बस के आसि प्रमुनाई । अमय होइ जो तुम्हहि दराई ॥  
 मुनि मृदु गूढ़ वचन रघुपति के । उपरे पटन परामुर मति के ॥  
 राम राममति कर धनु लेह । खंचहु मिटै मोर सदेह ॥  
 देत चापु आबुहि चलि गएऊ । परसुराम मन निममय भएऊ ॥

दो०—जाना राम प्रभाउ तन पुलक प्रफुरिलत गात ।  
 जोरि पानि बोले वचन हृदयें न प्रेसु अमातर ॥२८४॥

जय रघुवस वनज वन मानू । गहन दनुज कुन दहन टसानू ॥  
 जय सुर निप्र धेनु हितसारी । जय मद मोह कोह अम हारी ॥  
 विनय सील करना गुन सागर । जयति वचन रचना अतिनागर ॥  
 सेनक सुखद सुभग सन अगा । जय सीर छनि कोटि अनगा ॥  
 करौ काहर मुख एक प्रसमा । जय महेम मन मानस हसा ॥  
 अनुचित बहुत कहैअ अज्ञाता । धमहु धमा मंदिर दोउ आता ॥  
 कहि जय जय जय रघुकुल वेतू । भृगुपति गए बनहि तप हेतू ॥  
 अपभयें फुटिल महीप डेराने । जहँ तहँ कायर गँवहि हराने ॥  
 दो०—देवन्ह दीन्ही दुदुभी प्रसु पर बरपहि फूल ।  
 हरपे पुर नर नारि सन मिटी ४ मोहमय छल ॥२८५॥

अति गहगहे वाजने वाजे । सरहि मनोहर मगल साजे ॥  
 जूथ जूथ मिलि सुमुखि सुनयनी । काहि गान कल कोकिल बयनी ॥  
 सुसु निदेह कर बरनि न जाई । जन्म दरिद्र मनहुँ निधि पाई ॥  
 विगत त्रास भई सीय सुखारी । जनु बिधु उदयें चकोरकुमारी ॥

१—प्र० अमातर । [दि० समात] । उ०, च० प्र० [१] समात ।  
 २—प्र० वाह । [दि० वहा] । उ०, च० प्र० ।  
 ३—प्र० बड़ा । दि०, उ०, च० प्र० [६] वचन ।  
 ४—प्र० मिटी । दि० प्र० । [उ० मिटा] । च० प्र० [८] मिटा ।  
 ५—प्र० भई [२] भव । [दि० भव] । उ०, च० प्र० ।

जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा । प्रभु प्रसाद धनु भंजेउ रामा ॥  
मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाई । अब जो उचित सो कहिअ गोसाईं ॥  
कह मुनि सुनु नरनाथ प्रवीना । रहा विबाहु चाप थापीना ॥  
दूटत ही धनु मएउ विबाह । सुर नर नाग विदित सब काहूँ ॥  
दो०—तदपि जाइ तुम्ह करहु अब जथा बंस व्यवहारु ।

बूमि विप्र कुलवृद्ध गुर वेद विदित आचारु ॥२८६॥  
वृत्त अवधपुर पठबहु जाई । आनहि नृप दसरथहि बोलाई ॥  
मुदित राउ कहि भलेहि कृपाला । पठए दूत बोलि तेहिं काला ॥  
बहुरि महाजन सकल बोलाए । आइ सबन्हि सादर सिर नाप ॥  
हाट घाट मंदिर सुरबासा । नगरु सर्वारहु चारिहु पासा ॥  
हरपि चले निज निज गृह आए । पुनि परिचारक बोलि पठाए ॥  
रचहु विचित्र बितान बनाई । सिर धरि बचन चले सचु पाई ॥  
पठए बोलि गुनी तिन्ह नाना । जे बितान बिधि कुसल सुजाना ॥  
बिधिहि धंदि तिन्ह कीन्ह अरंभा । बिरचे कनक केदलि के खंभा ॥  
दो०—हरित मनिन्ह के पत्र फल पदुमराग के फूल ।

रचना देखि विचित्र अति मनु बिरंचि कर मूल ॥२८७॥  
बेनु हरित मनिमय सब कीन्हे । सरल सपरव ? पहिं नहिं चीन्हे ॥  
कनक कलित अहिबेलि बनाई । लखि नहिं परै सभरन सोहाई ॥  
तेहि कें रचि पचि बंध बनाए । बिच बिच मुकुता दाम सुहाए ॥  
मानिक मरकत कुलिस विरोजा । चीरि कोरि पचि रचे सरोजा ॥  
किए भृंग बहु रंग बिहंगा । गुंजहिं कूजहिं पवन प्रसंगा ॥  
सुरप्रतिमा खंमन्ह गढ़ि काढ़ी । मंगल द्रव्य लिए सब ठाढ़ी ॥  
चौकैं भौंति अनेक सुराई । सिंधुर मनि नव सहज सुहाई ॥

भूप भरतु पुनि लिए बोलाई । हय गय स्यदन साजहु जाई ॥  
 चलहु बेगि रघुवीर बराता । सुनत पुलक पूरे दोउ आता ॥  
 भरत सकल साहनी बोलाए । आयेसु दीन्ह मुदित उठि घाए ॥  
 रचि रुचि जीन तुरग तिन्ह साजे । बरन बरन बर बाजि बिराजे ॥  
 सुमग सरल सुठि चचल करनी । अय इव जरत घरत पग धरनी ॥  
 नाना जाति न जाहि बखाने । निदरि पवनु जनु चहत उडाने ॥  
 तिन्ह सब खेल भए असवारा । भरत सरिस बय र राजकुमारा ॥  
 सब सुदर सब भूपन घारी । कर सर चाप तून कटि भारी ॥  
 दो०—छरे छबीले खेल सब सूर सुजान नवीन ।

जुग पदचर असवार प्रति जे असि कला प्रवीन ॥२६८॥  
 बाधे विरिद वीर रन गाढ़े । निरुसि भए पुर बाहेर ठाढ़े ॥  
 फेहि चतुर तुरग गति नाना । हरपहिं सुनि सुनि पवन निसाना ॥  
 रथ सारथिह विचित्र बनाए । ध्वज पाक मनि भूपन लाए ॥  
 चबैन चारु किंकिनि धुनि करहीं । भानुजान सोभा अपहरहीं ॥  
 सौवन्दन अगनित हय होते । ते तिन्ह रथन्ह सारथिन्ह जोते ॥  
 सुदर सफल अलटुत सोहे । जिन्हहि विलोकत मुनि मन मोहे ॥  
 जे जल चलहि अलहि की नई । टाप न बूढ बेग अधिकारी ॥  
 अल सल सब साज बनाई । रथी सारथिन्ह लिए बोलाई ॥

दो०—चढ़ि चढ़ि रथ बाहेर नगर लागी जुरन बरात ।  
 होत सगुन सुदर सबहि जो जेहि फारज जात ॥२६९॥  
 फलित करिअन्हि परी अँवारी । वहि न जाहि जेहि मौति सँवारी ॥

१-प्र० रचि रचि । २-प्र० [४] रचि रचि । ३-प्र० रचि रचि । ४-प्र० [५] रचि रचि ।

५-प्र० बय । ६-प्र० [४] मर । ७-प्र० [५] मर । ८-प्र० [६] मर ।

९-प्र० बडु । १०-प्र० सव । ११-प्र० [५] सव । १२-प्र० [६] सव ।

१३-प्र० मावव । १४-प्र० [५] (५) मावव । १५-प्र० [६] (६) मावव ।

चले मत्त गज घंट विराजी । मनहुँ सुमग सावन घन राजी ॥  
 वाहन अपर अनेक विधाना । सिविका सुमग सुखासन जाना ॥  
 तिन्ह चढ़ि चले विप्र वर वृंदा । जनु तनु धरै सकल श्रुति छदा ॥  
 मागघ सूत बंदि गुननायक । चले जान चढ़ि जो जेहि लायक ॥  
 बेसर ऊँट वृषभ बहु जाती । चले वस्तु भरि अगनित मांती ॥  
 कोटिन्ह काँवरि चले कहारा । विविध वस्तु को चरनै पारा ॥  
 चले सकल सेवक समुदाई । निज निज साजु समाजु बनाई ॥  
 दो०—सब के उर निर्भर हरपु पूरित पुलक सरीर ।

कबहि देखिवे नयन भरि रामु लषनु दोउ बीर ॥३००॥  
 गजहिं गज घंटा धुनि घोरा । रथ रव बाजि हिंसर चहुँ ओरा ॥  
 निदरि घनहि घुर्मरहि निसाना । निज पराई कछु सुनिअन काना ॥  
 महा भीर भूपति कैं द्वारें । रज होइ जाइ पपानु पवारें ॥  
 चढ़ी अटारिन्ह देखहिं नारी । लिप आरती मगल थारी ॥  
 गावहिं गीत मनोहर नाना । अति आनंदु न जाइ बखाना ॥  
 तब सुमंत्र दुइ स्यदन साजी । जोते रवि हय निंदक बाजी ॥  
 दोउ रथ रुचिर भूप पहिं आने । नहिं सोरद पहिं जाहिं बखाने ॥  
 राज समाजु एक रथ साजा । दूसर तेज पुंज अति आजा ॥  
 दो०—तेहिं रथ रुचिर बसिष्ठ कहुं हरषि चढ़ाइ नरेषु ।

आपु चढ़ेउ स्यदन सुमिरि हर गुर गौरि गनेषु ॥३०१॥  
 सहित बसिष्ठ सोह नृप कैमें । सुगुर संग पुरंदर जैसे ॥  
 करि कुलतीनि वेद त्रिषि राऊ । देखि सबहि सब भौंति बनाऊ ॥  
 सुमिरि रामु गुर आयेसु पाई । चले महीपति संख बनाई ॥  
 हरपे त्रिवुध बिलोकि वराता । वरपहिं सुमन सुमंगल दाता ॥  
 भएउ कुलाहल हय गय गाजे । वश्ये वरात बाजने बाजे ॥

सुग नर नारि सुमगन गाई । सरस राग बाजहि सहनाई ॥  
 घंट घटि धुनि बरनि न जाही १ । सरो कगहि पाइऊ २ कटगही १ ॥  
 करहि बिदूषक कौतुक नाना । हास तुम्ह न कन मान मुजाना ॥  
 दो०—तुम्ह ननावहि कुँअर बर अरुनि मृदग निसान ।

नागर नट चिनहि चकिन टगहि न तात बैमान ॥३०२॥  
 बने न धरनन घनी बराता । होहि सगुन सुंदर सुम दाना ॥  
 चारा चापु चाम डिभि लेई । मनहु सल्ल मगल कहि देई ॥  
 दाहिन काग सुखेन सुगना । ननुल दरमु सब काहू पावा ॥  
 सानुल्ल बह त्रिनिघ बयारी । सघट सजाल आव बग नारी ॥  
 लोवा फिरि फिरि दरमु देखावा । सुग्भी सनमुख सिमुहि पिआवा ॥  
 मृग माला फिरि दाहिनि आई । मगल मन जनु ठीन्हि देखाई ॥  
 छेमकरी कह छेम त्रिसेषो । स्यामा बाम सुन्दर पर देखी ॥  
 सनमुख आएउ ठधि अर मीना । कर पुस्तक दुड निम प्रमीना ॥  
 दो०—मगलमय पट्यानमय अभिमत फल दातार ।

जनु सब साचे होन हित भए सगुन एक धार ॥३०३॥  
 मंगल सगुन सुगम सब ताके । सगुन ब्रह्म सुंदर सुत जाके ॥  
 राम सरिस बरु दुलहिनि सीता । समथी दसरथु जनहु पुनीता ॥  
 सुनि अस ब्याहु सगुन सब नाचे । अरु कीन्हे विरचि हम साँचे ॥  
 येहि बिधि कीन्ह बरात पथाना । हय गय गाजहि हने निसाना ॥  
 आवत जानि भानु उल कतू । सरितन्हि जनक बैधाए सेतू ॥  
 बीच बीच बर बापु बनाए । सुरपुर सरिस सपदा छए ॥  
 असन सयन बर बसन सुहाए । पावहि सब निज निज मन भाए ॥

१—प्र० ब्रह्म गही, कटगही । दि० प्र० [वृ० नारि, कटगही] । च० प्र०  
 [८] जाई, कटगही ।

२—प्र० पाइऊ । दि० प्र० [(५) (५) (५) पायऊ] । [वृ० पायऊ] । च०  
 प्र० [(८) पायऊ] ।

निन नूतन मुम लखि अनुकूने । सकल वरान्निह मंदिर मूने ॥  
 दो०—आवन जानि बरात बरे सुनि गहगहे निमान ।

सजि गज रथ पदचर तुरग लेन चले अगमान ॥३०४॥

कनक कलस कनर कोपर थारा । भाजन ललित अनेक प्रकारा ॥  
 भरे सुधा सम सब पकवाने । भानि भोनि नहि जाहि बसाने ॥  
 फल अनेक वर वस्तु सुहाई । हरपि भेंट हिन मूप पठाई ॥  
 मूपन बमन महा मनि नाना । स्वगमृग हय गय बहुप्रिधि जाना ॥  
 मगल सगुन सुगंध सुहाए । बहुत भोनि महिपाल पठाए ॥  
 दधि चिउरा उपहार अपारा । भरि भरि कांवरि चले कहारा ॥  
 अगवानन्ह जब दीखि बराता । उर आनदु पुनक भर गाता ॥  
 देखि बनाव सहित अगमाना । मुदित वरान्निह हने निमाना ॥  
 दो०—हरपि परसपर मिलन हित कलुष चले बगमेल ।

जनु आनद समुद्र दुइ मिलत विहाइ सुनेल ॥३०५॥  
 बापि सुमन सुर सुंदरि गावहि । मुदित देव दुंदुभी बजावहि ॥  
 वस्तु सकल राणी नृप आगे । त्रिनय कीन्हि तिन्ह अनि अनुरागे ॥  
 प्रेम समेत राय सनु लीन्हा । भे बकसीस जाचन्हि दीन्हा ॥  
 करि पूजा मान्यता बड़ाई । जनगासे कहु चले लेगाई ॥  
 बसन विचित्र पौवड़े परही । देखि धनदु धन मदु परिहरही ॥  
 अति सुंदर दीन्हेउ जनगासा । अहँ सय कहु सय भाति सुपासा ॥  
 जानी सिध बरात पुर आई । कलु निज महिमा प्रगटि जनाई ॥  
 हृदय सुमिरि सब सिद्धि बोलाई । मूप पहुनई करन पठाई ॥  
 दो०—सिधि सब सिध आयेसु अरुनि गई जहां जनवास ।

लिऐ संपदा सकल सुख सुरपुर भोग विलास ॥३०६॥

१—प्र० : व० । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (६अ) - भरि ] ।

२—प्र० : बरानो । दि०, प्र० [ (५अ) : वरान्निह ] । वृ०, वरान्निह । च० : वृ० ।



निज निज पास बिलोकि बराती । मुर सुख सकल सुनम सत्र भती ॥  
 विभक्त भेद बहुत कोउ न जाना । सफलजनक कर कहि बखाना ॥  
 सिय महिमा रघुनाथक जानो । हरपे हृदय हेतु पहिचानी ॥  
 पितु आगमनु सुनत दोउ भाई । हृदय न अतिमानंदु अमाई ॥  
 सनुचन्ह कहि न सकत गुर पाहीं । पितु दरसन लालचु मन माहीं ॥  
 बिस्वामित्र विनय बड़ि देखी । उपजा उर सतापु निसेखी ॥  
 हरपि वधु दोउ हृदय लगाए । पुलक अग अरक जल छाए ॥  
 चले जहाँ दसरथु जनगसैं । मनहुँ सरोवर तरेउ पिआसैं ॥  
 दो०—भूष बिलोके जबहिं मुनि आयत सुतन्ह समेत ।

उठै हरपि सुख सिंधु महु चले थाह सो लेत ॥३०७॥

मुनिहि दडरत कीन्ह महीसा । बार बार पद रज धरि सीसा ॥  
 कौसिक राउ लिये उर लाई । कहि असीस पूँछी दुसलाई ॥  
 पुनि दडवत करत दोउ भाई । देखि नृपति उर सुख न समाई ॥  
 सुत हिअ लाइ दुसह दुख मेटे । मृतक सरीर प्राण जनु भेंटे ॥  
 पुनि बसिष्ठ पद सिर तिन्ह नाए । प्रेम मुदित मुनिवर उर लाए ॥  
 विप्र वृंद वदे दुहुँ भाई । मनभावती असीसै पाई ॥

भात सहानुज कीन्ह प्रनामा । लिए उठाइ लाइ उर रामा ॥  
 हरपे लखनु देखि दोउ भ्राता । मिले प्रेम परिपूरित गाथा ॥  
 दो०—पुरजन परिजन जातिजन जाचक मंत्री मीत ।

मिले जथाविधि संगहि प्रभु परम कृपालु विनीत ॥३०८॥

रामहि देखि बरात जुझानी । प्रीति कि रीति न जाति बखानी ॥  
 नृप समीप सोहहिं सुत चारी । जनु धन धरमादिक रनु धारी ॥  
 सुतह समेत दसरथहि देखी । मुदित नगर नर नारि बिसेधी ॥

सुमन बरिसि मुर हनहिं निसाना । नाक नटी नाचहिं करि गाना ॥  
 सतानहु अरु गिग सचिव गन । मागध सूत प्रिदुष वदोजन ॥  
 सहित मरत राउ सनमाना । आयेसु माँगि फिरे अगमाना ॥  
 प्रथम बरात लगन तें आई । ता तें पुर प्रमोदु अधिकारी ॥  
 ब्रह्मानहु लोग सब लहहीं । बढहुं दिशस निसि विधि सन कहहीं ॥

दा०—रामु सीय सोभा अवधि सुकृत अवधि दोउ राज ।

जहँ तहँ पुरजन कहहिं अस मिलि नर नारि समाज ॥३०६॥

जनक मुकृत मूरति बेदेही । दसरथ सुम्न रामु धरें देही ॥  
 इन्ह सम फाहुं न सिग अवराधे । काहुं न इन ममान फल लाधे ॥  
 इन्ह सम कोउ न भएउ जग माहीं । हे नहि कतहुं होनेउ नाही ॥  
 हम सब सकल मुकृत कै रासी । भए जग जनमि जनमपुर बासी ॥  
 जिन्ह जानसी राम छत्रि दखी । को सुकृती हम सरिम बितेपी ॥  
 पुनि देखन रघुनीर विश्राह । लेव भली विधि लोचन लाह ॥  
 कहहिं परसपर कीजिल वयनीं । येहि बिग्राह बड़ लाभु मुनयनी ॥  
 बड़ें भाग विधि बात बनाई । नयन अतिथि होइहहिं दोउ भई ॥  
 दो०—नारहिं बार सनेह बम जनक बेलाउत सीय ।

लेन आइहहिं बहु दोउ कोटि काम कमनीय ॥३१०॥

विविध भौति होइहि पहुनाई । भिय न काहि अस साभुर माई ॥  
 तत्र तत्र राम लखनहि निहारी । होइहहिं मत्र पुरलोग सुखारी ॥  
 सखि जस राम लपन कर जोटा । तेसइ मूष संग दुइ दोटा ॥  
 रयाम गौर सब अग सुहाए । ते सब कहहिं देखि जे आए ॥  
 कहा एक में आजु निहारे । जनु बिरचि निज हाथ सँवारे ॥  
 भरतु राम ही नी अनुहारी । सहसा लखि न सकहिं नर नारी ॥  
 लखनु सत्रुसुदनु एक रूपा । नम्व सिख तें सब अग अनूपा ॥  
 मन भावहि मुख बरनि न जाहीं । उपमा बहूँ त्रिभुवन कोउ नाही ॥

छदु—उपमा न कोउ कह दास सुलसी कतहुँ कनि कोबिद कहैं ।

बल विनय बिद्या सील सोभा सिंधु इन्हसे एइ अहैं ॥

पुर नारि सकल पसारि अचल बिधिहि बचन सुनावहीं ।

व्याहियहुँ चारिउ भाइ एहि पुर हम सुमगल गावहीं ॥

सो०—रुहहि परसपर न रि बारि बिलोचन पुलक तन ।

सखि सनु करम पुरारि पुन्य पयोनिधि भूप दोउ ॥३११॥

येहि बिधि सफल मनोरथ करहीं । आनंद उमगि उमगि उर भरहीं ॥

जे नृप सीय स्वयंवर आए । देखि बधु सब तिन्ह सुख पाए ॥

कहत राम जसु बिसद बिसाला । निज निज गेह<sup>१</sup> गए महिपाला ॥

गएँ बीति कछु दिन येहि भाती । प्रमुदित पुरजन सकल बराती ॥

मंगल मूल लगन दिनु आवा । हिमरितु अगहन मास सुहावा ॥

ग्रह तिथि नखतु जोगु बर वारू । लगन सोधि बिधि कीन्ह बिचारू ॥

पठै दोन्हि नारद सन सोई । गनो जनक के गनकन्ह जोई ॥

सुनी सकल लोगन येह बाता । कहहिं जोतिषी अपर<sup>२</sup> बिधाता ॥

दो०—धेनुधूरि बेला बिसल सरल सुमगल मूल ।

बिग्रह कहेउ विदेह सन जानि सगुन अनुकूल ॥३१२॥

उपरोहितहि कहेउ नरनाहा । अब बिलन कर कारनु काहा ॥

सतानंद तब सचिव बोलाए । मगल कलस साजि सब ल्याए ॥

सख निशान पवन बहु बाजे । मगल फलस सगुन सुभ साजे ॥

सुभग सुआसिनि गावहिं गीता । करहिं वेद धुनि विप्र पुनीता ॥

लेन चले सादर येहि गौंती । गए जहा जनरास बराती ॥

फोसलपति कर देखि समाजू । अति लघु लाग तिन्हहिं सुरराजू ॥

मएउ समउ अब धारिअ पाऊ । येह सुनि परा निशानहि घाऊ ॥

१—प्र० नेद । दि० प्र० । [नृ० मगर] । २० प्र० [ (३) (२५) भवन ] ।

२—प्र० अपर । दि०, प्र० [ (१५) मग ] । [नृ० विप्र] २० प्र० [ (२) (२५) भारि ] ।

गुरहि पूँछि करि कुलविधि राजा । चले संग मुनि साधु समाजा ॥  
दो०—भाग्य विभव अवधेस कर देखि देव ब्रह्मादि ।

लगे सराहन सहस मुख जानि जनम निज वादि ॥३१३॥

सुरन्ह सुमंगल अवसर जाना । वरपहि सुमन बजाइ निमाना ॥  
सिव ब्रह्मादिक विबुध बरूथा । चढे विमानन्हि नाना जूथा ॥  
प्रेम पुलक तन हृदयँ उछाह । चले बिलोकन राम विश्राह ॥  
देखि जनकपुरु सुर अनुरागे । निज निज लोक सबहि लघु लागे ॥  
चितवहि चकित विचित्र विताना । रचना सकल अलौकिक नाना ॥  
नगर नारि नर रूप निधाना । सुघर सघरम सुशील सुजाना ॥  
तिन्हँ देखि सब सुर सुरनारी । भए नखत जनु बियु उजियारी ॥  
विधिहि भएउ आचरजु बिसेपी । निज करनी कछु कतहुँ न देखी ॥  
दो०—सिव समुझाए देव सब जान आचरज भुलाहु ।

हृदयँ विचारहु धीर धरि सिय रघुवीर विश्राहु ॥३१४॥

जिन्ह कर नामु लेत जग माहीं । सकल अमंगल मूल नसाहीं ॥  
करतल हाँहि पदारथ चारी । तेइ सिय रामु कहेउ कामारी ॥  
एहि विधि संभु सुरन्ह समुझावा । पुनि आगे वर बसहु चलावा ॥  
देवह देखे दसरथु जाता । महामोद मन पुलकित गाता ॥  
साधु समाजु संग महिदेवा । जनु तनु घरे करहि सुर सेवा ॥  
सोहत साथ सुभग सुत चारी । जनु अपवराग सकल तनुधारी ॥  
मरकत कनक वरन बर जोरी । देखि सुरन्ह भै प्रीति न थोरी ॥  
पुनि रामहि बिलोकि हिअँ हरपे । नृपहि सराहि सुमन तिन्ह वरपे ॥  
दो०—राम रूप नख सिख सुभग बारहि बार निहारि ।

पुलक गात लोचन सजल उमा समेत पुरारि ॥३१५॥

फेकि कंठ दुति स्यामल अंगा । तड़ित बिनिंदक बसन सुरंगा ॥

१—प्र० : सुर । दि० : प्र० । [तु० : सुत] । च० : प्र० (६) (६अ) : सुर ] ।

२—[प्र० : वर जोरी] । दि० : वरन तन जोरी । तु० : वरन वर जोरी । च० : तु० ।

व्याह विभूषन विविध बनाए । मंगलमय<sup>१</sup> सब भाँनि मुहाए ॥  
 सरद बिमल पियु बदन मुहादन । नयन नयन राजीव लजावन ॥  
 सकल अलौकिक सुंदरताई । कहि न जाइ मनहीं मन भाई ॥  
 बधु मनोहर सोहहि सगा । जात नचावन चपल तुरगा ॥  
 राजकुँआर वर बाजि देखावहि । वंसप्रमग<sup>२</sup> विरिद सुनावहि ॥  
 जेहि तुरंग पर राम विराजे । गति बिलोकि सगनायकु लाजे ॥  
 कहि न जाइ सब भाँनि मुहावा । बाजि बेपु जनु काम बनावा ॥  
 छ०—जनु बाजि बेपु बनाइ मनसिजु राम हित अनि सोहई ।

आपने बय बल रूप गुन गति सफल भुवन विमोहई ॥

जगमगत जैनु जरार<sup>३</sup> जोति मुमोति मनि मानिक लागे ।

किंकिनि ललाम लगामु ललित बिलोकु सुर नर मुनि ठगे ॥

दो०—प्रभु मनसहि लयलीन मनु चलत चालि<sup>४</sup> छवि पाव ।

भूषित उडगन तडित धनु जनु वर बरहि नचाव ॥३१६॥

जेहि वर बाजि राम असवारा । तेहि सारंगी न बरने पारा ॥

सकर राम रूप अनुरागे । नयन पंचदस अति प्रिय लागे ॥

हर हित सहित रामु जय जोहे । रमा समेत रमापति मोहे ॥

निरखि राम छवि विधि हरपने । आठै नयन जानि पछिताने ॥

सुरसेनष उर बहुत उवाह । विधि तैं देवद सुलोचन लाह ॥

रामहि चिनय सुरेसु सुजाना । गौतम सापु परम हित माना ॥

देव सकल सुरपतिहि सिहाहीं । आजु पुरंदर सम कोउ नाही ॥

मुदित देव गन रामहि देखी । नृप समाज दुहुँ हरपु बिसेधी ॥

छ०—अति हरपु राज समाजु दुहु दिसि दुंदुभी बाजहि घनी ।

बरपहि सुमन सुर हरपि कहि जय जयति जय रघुउल्लमनी ॥

१—प्र० : मंगल मय सर । द्वि०, तृ०, च० : प्र० [द्विअ] मंगल सर सर ।

२—प्र० : नराय । द्वि० प्र० [तृ० : जनाय] च० : प्र० ।

३—प्र० : चालि । द्वि० : प्र० [ (५) (५अ) : बाजि ] । [ तृ० : राति ] । च० : प्र० [ ( ) : बाजि ] ।

एहिं भौंति जानि बरात आवत वाजने बहु वाजहीं ।

रानी सुआसिनि बोलि परिछनि हेतु मंगल साजहीं ॥

दो०—साजि आरती अनेक विधि मंगल सकल सँवारि ।

चलीं मुदित परिछनि करन गज गामिनि वर नारि ॥३१७॥

बिबुबदनीं सब सब मृगलोचनि । सब निज तन छत्रि रति महु मोचनि ॥

पहिरे वरन वरन वर चीरा । सकल विमूपन सजें सरीरा ॥

सकल सुमंगल अंग बनाएँ । करहिं गान बलकंठि लजाएँ ॥

कंकन किंकिन नूपुर वाजहिं । चाल बिलोकि कामगज लाजहिं ॥

वाजहिं वाजन विविध प्रकारा । नभ अरु नगर सुमंगल चारा ॥

सबी सारदा, रमा मवानी । जे सुनिअ सुचि सहज सयानी ॥

कपट नारि वर बेप बनाई । मिलीं सकल रनवासहिं जाई ॥

करहिं गान कल मंगल बानी । हरष बिषस सब काहुं न जानी ॥

छं०—को जन केहि आनंद बस सब ब्रह्म बर परिछनि चलीं ।

फल गान मधुर निसान बरपहिं सुमन सुर सोभा भली ॥

आनंदकंदु बिलोकि दूलहु सकल दिअ हरषि भई ।

अंभोज अंवरु अंबु उमगि सुअंग पुलकवलि छई ॥

दो०—जो सुखु भा सिय मातु मन देखि राम वर बेपु ।

सो न सकहिं कहि कल सत सहस, मारदा सेपु ॥३१८॥

नयन नीरु हटि मंगल जानी । परिछनि करहिं मुदित मन रानी ॥

बेद बिहित अरु कुल आचारू १ । कीन्ह भली विधि कुल व्यवहारू २ ॥

पंच सवद घुनि ३ मंगल गाना । पट पोंवड़े परहिं विधि नाना ॥

करि आरती अरघु तिन्ह दीन्हा । राम गवनु मंडप तत्र कीन्हा ॥

दमरधु सहित समाज विराजे । विभव बिलोकि लोरुपति लाजे ॥

१—प्र० : क्रमशः आचारू, व्यवहारू । द्वि० : प्र० । [च० : व्यवहारू, आचारू] ।

[च० : (६) (६अ) व्यवहारू, व्यवहारू, (८) व्यवहारू, विस्मारू] ।

२—प्र० : धुनि । द्वि० : प्र० [ (०) : धुनि ] । च०, च० : प्र० ।

समर्थ मनये सुर मगहिं कृत्वा । मति पदो मतिभू अनुकूल ॥  
 नम यम नम कोटारन होई । तबनि पर कहु मुनि न कोई ॥  
 परिं विधि राम मटवहि त्याप । मग्य देह अमन बैठा ॥

छं०—बैठारि आसन आगनी करि निनि पर मुगु पारी ।

मनि समन भूपन भूमि नगहि नरि मग्य मारी ॥

ब्रह्मादि सुर कर बिन बैन बनइ बीपुट देवरी ।

अधनेकि शुभुन कृष्ण रवि दवि मुनन तं न लेगही ॥

दो०—नाऊ धारी भट नर मन निहारि पार ।

मुनिन अर्मगहि नर मि एगु न हरे मग ॥३१२॥

मिले जनपु दगाथु अनि प्रीती । करि भीरु लोकि कर सीनी ॥

मिलन मल दोड राज बिगजे । अना भोति भोति कवि न जे ॥

लही न कतहु एहि रिम मानी । इन्ह मन पद उभा दर दानी ॥

सामध देभि देव अनुरागे । गुमन रागि जगु गागन लागे ॥

जगु बिरचि उपजावा जय ते । देवे सुने क्यह पदु तब ते ॥

सरल भोति सम साजु समानु । मन मनपी देने हम आजु ॥

देवगिरा सुनि सुंदरि सांची । श्रीनि अनीकिरु दुहु दिमि माची ॥

देन पौवड़े गरगु सुहाण । माटु जनहु मटवहि त्याप ॥

छं०—महपु विनोकि विवित्र रचना रचिरा । मुनि मन हरे ।

निज पानि जनक मुनन सब कहु आनि निधमन धरे ॥

बुल इष्ट सरिस बसिपु पूजे विनय करि आसिप टारी ।

फीसकहि पूजन परम श्रीति कि रीति ली न परे दही ॥

दो०—वामदेव आदिक विषय पूजे मुनिन महोम ।

दिप दिव्य आसन सरहिं सब सन टाही असीत ॥३२०॥

बहुरि कीन्हि कोसलपति पूजा । जानि ईस सन भाउ न दूजा ॥

कीन्हि जोरि कर विनय बढ़ाई । कहि निज भाग्यविभव बहुताई ॥

पूजे भूति सकल बराती । समधी सम सादर सब भोनी ॥

आसन उचिन दिए सब काहैं । कहाँ काह मुस एक उद्याह ॥  
 सकल बरात जनक सनमानो । दान मान विनयी वर बानी ॥  
 विधि हरि हरु दिसिपति दिनगऊ । जे जानहिं रघुवीर प्रभाऊ ॥  
 कपट विर । वर । वेपु बनाएँ । कौतुक देखहिं अति सचु पाएँ ॥  
 पूजे जनक देव सम जाने । दिए मुआसन विनु पहिचाने ॥  
 छ०—पहिचान को केहि जान सरहि अपान सुधि मोरी भई ।

आनदकंदु बिलोकि दूनहु उमय दिमि आनंदमई ॥

सुर लखे राम सुजान पूजे, मानसिक आसन दए ।

अबलोकि सीलु मुभाउ प्रभु को विबुध मन प्रमुदित भए ॥

दो०—रामचंद्र मुख चंद्र छवि लोचन चारु चकोर ।

करत पान सादर सकल प्रेमु प्रमोदु न थोर ॥३२१॥

समउ बिलोकि बसिष्ठ बोलाए । सादर सतानंदु सुनि आए ॥

बेगि कुञ्जोरि अव आनहु लाई । चले मुदित मुनि आयेसु पाई ॥

रानी सुनि उपरोहित बानी । प्रमुदित सखिन्ह समेन सयानी ॥

विप्रबधूँ कुल वृद्ध दोलाई । करि कुल रीति सुमंगन गाई ॥

नारि वेप । जे सुर वर वामा । सकल सुभायँ सुंदरी स्यामा ॥

तिन्हहिं देखि सुखु पावहिं नारी । विनु पहिचानि१ प्रान२ तें प्यागी ॥

बार बार सनमानहिं रानी । उमा रमा सारद मम जानी ॥

सीय सँगारि समाजु बनाई । मुदित मंडपहि चलीं लेवाई ॥

छं०—चलि ल्याइ सीतहि सखी सदर सजि सुमंगल भामिनी ।

नवमत्तरे साजे सुंदरी सब मत्त, कुंजरगामिनी ॥

कल गान सुनि मुनि ध्यान त्यागहिं कामकोविल लाजही ।

मंजीर नृपुर कलित कंकन तास गति वर बाजही ॥

१—प्र० : पहिचानि । दि० : प्र० [ (२) (४) : पहिचान ] । [ वृ० : पहिचान ] ।

२—प्र० : प्रान । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (३) (६६) : प्रानहु ] ।

३—प्र० : सत्त । [ दि० : सत्त ] । [ वृ० : मत्त ] च० : प्र० [ (२) : सत्त ] ।



दो०—सोहति बनिता वृंद महुँ सहज मुहावनि सीय ।

छवि ललना गन मध्य जनु सुपग तिअ कर्मनाय ॥३२२॥  
 सिय सुंदरता बगनि न जाई । लघु मनि बहुत मनोहरताई ॥  
 आवत दीखि बरातिन्ह सीता । रूप रसि सब भौंति पुनीता ॥  
 सबहि मनहि मन किए प्रनामा । देखि राम भए पूरन कामा ॥  
 हरपे दसरथु सुतन्ह समेता । कहि न जाइ उर अनंदु जेना ॥  
 सुर प्रनामु करि बरसहि फूला । मुनि असीस धुनि मगनमूला ॥  
 गान निसान कोलाहलु भारी । प्रेम प्रमोद मगन नर नारी ॥  
 येहि बिधि सीय मंडणहि आई । प्रमुदिन सांति पढ़हि मुनिगई ॥  
 तेहि अबरसर कर बिधि व्यवहारू । दुहुँ कुनगुर सब कीन्ह अचारू ॥

छ०—आचारु करि गुर गौर गनपति मुदित विप्र पुजानहीं ।

सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुख पावहीं ॥

मधुपर्क मंगल द्रव्य जो जेहि समय मुनि मन महुँ चहैं ।

भरे कनक कोपर कलस सो तब लिपि परिचारक रहैं ॥

कुलरीति प्रीति समेत रवि कहि देन सब सादर किए ।

येहि भौंति देव पुजाइ सीनहि सुभग सिवासनु दिऐ ॥

सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेम काहु न लखि परै ।

मन बुद्धि बर बानी अगोचर प्रगट कचि कैसें करै ॥

दो०—होम समय तनु धरि अनजु अति सुख आहुति लेहिं ।

विप्र वेप धरि वेद सब कहि बिबाह बिधि देहि ॥३२३॥

जनक पाठमहिषी जग जानी । सीय मातु किमि जाइ बखानी ॥

सुजसु सुकृत सुख सुंदरताई । सब समेटि बिधि रची बनाई ॥

समठ जानि मुनिवरन्ह बुलाई । सुनन सुग्रासनि सादर ल्याई ॥

जनक बाम दिसि सोह सुनयना । हिमगिरि संग बनी जनु मयना ॥

कनक कलस मनि कोपर रूरे । सुचि सुगघ मंगल जल पूरे ॥  
निज कर मुदित राय अरु रानी । घरे राम के आगे आनी ॥  
पदहि वेद मुनि मंगल बानी । गगन सुमन भरि अवसर जानी ॥  
वरु दिलोकि दंपति अनुरागे । पाय पुनत पखारन लागे ॥  
छं०-लागे पखारन पाय पंकज प्रेम तनु पुलकावली ।

नम नगर गान निसान जय धुनि उमगि जनु चहुँ दिसि चली ॥  
जे पद सरोज मनोज अरि उर सर सदैव विराजहीं ।  
जे सकल सुमिरत विमलता मन सकल कलि मन भाजहीं ॥  
जे परसि मुनिवनिता लही गति रही जो पातरुभई ।  
मरुंदु जिन्हको संमु सिर सुचिना अवधि सुर वरनई ॥  
हरि मधुप मन मुनि जोगिजन जे सेइ अभिमान गति लहैं ।  
ते पद पखारत भाग्यमाजनु जनकु जय जय सब कहैं ॥  
वा कुँअरि कातन जोरि साखोच्चारु दोठ कुल गुरु करैं ।  
मयो पानिगहन विज्ञाकि विधि सुर मनुज मुनि आनंद भैं ॥  
सुखमूल दूलहु देखि दंपति पुनक तनु हुलस्यो हियो ।  
करि लोक वेद विधानु कन्यादानु नृप मूपन कियो ॥  
हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दर्द ।  
तिमि जनक रामहि सिय समरपी बिष्व कल कीरति नई ॥  
क्यों करै बिनय विदेहु कियो विदेहु मूरति सौवरी ।  
करि होमु निधिवन गींठि जोरी होन लागीं भांवरी ॥  
दो०-जय धुनि वदी वेद धुनि मंगलगान निसान ।

मुनि हरषहि वरषहि विवुष सुरतरु सुमन सुजान ॥ ३२४ ॥  
कुँअरु कुँअरि कल भाँवरि, देहीं । नयन लामु सब सादर लेहीं ॥  
जइ न वरनि मनोहरि जोरी । जो उपना कह्यु कहौ सो थोरी ॥  
राम सीय सुंदर परिधाहीं । जगमगाति मनि खमन्ह माहीं ॥  
मनहुँ मदन रति धरि बहु रूपा । देखत राम विवाहु अनूपा ॥

दो०—सोहति चनिता वृंद महुँ सहज सुहावनि सीय ।

धवि ललना गन मध्य जनु सुपग तिअ कमनीय ॥३२२॥  
 सिय सुंदरता वगनि न जाई । लबु मनि बहुत मनोहरताई ॥  
 आवत दीखि बरातिन्ह सीता । रूप रसि सब भौंति पुनीता ॥  
 सबहि मनहि मन किए प्रनामा । देखि राम भए पूरन कामा ॥  
 हरपे दसरथु सुतन्ह समेता । कहि न जाइ उर आनँदु जेना ॥  
 सु। प्रनामु करि बरसहि फूला । मुनि असीस धुनि मंगलपूला ॥  
 गान निसान कोलाहलु भारी । प्रेम प्रमोद मगन नर नारी ॥  
 येहि बिधि संय मंडपहि आई । प्रमुदिन सांति पढ़हि मुनिराई ॥  
 तेहि अवसर कर बिधि व्यवहारु । दुहुँ कुनगुर सब कीन्ह अचारु ॥

छ०—आचारु करि गुर गौर गनपति मुदित विप्र पुजावहीं ।

सुर प्रगटि पूजा लेहिं देहिं असीस अति सुख पावहीं ॥

मधुपर्क मंगल द्रव्य जो जेहि समय मुनि मन महुँ चहैं ।

भरे कनक कोपर कलस सो तब लिए१ परिचारक रहै ॥

कुलरीति प्रीति समेत रवि कहि देन सबु सादर किए ।

येहि भौंति देव पुजाइ सीनहि सुभग सिधासुनु दिप ॥

सिय राम अवलोकनि परसपर प्रेमु काहु न लखि परै ।

मन बुद्धि ब। बानी अगोचर प्रगट कवि कैसें करै ॥

दो०—होम समय तनु धरि अनजु अति सुख आहुति लेहिं ।

विप्र वेप धरि वेद सब कहि बिग्रह बिधि देहि ॥३२३॥

जनक पाठमहिषी जग जानी । सीय मातु किमि जाइ बखानी ॥

सुत्रमु सुश्रुत सुख सुंदरताई । सब समेटि बिधि रची बनाई ॥

समउ जानि मुनिवरन्ह बुलाई । सुनन मुआसनि सादर ल्याई ॥

जनक वाम दिसि सोह सुनयना । हिमगिरि संग बनी जनु मयना ॥

कनक कलस मनि कोपर रूरे । सुचि सुगघ मंगल जल पूरे ॥  
निज कर मुदित राय अरु रानी । घरे राम के आगे आनी ॥  
पढ़हि वेद मुनि मंगल बानी । गगन सुमन भरि अवसर जानी ॥  
वरु विलोकि दंपति अनुरागे । पाय पुनत पखारन लागे ॥  
छं०-लागे पखारन पाय पंकज प्रेम तनु पुलकावली ।

नभ नगर गान निसान जय धुनि उमगि जनु चहुं दिसि चनी ॥  
जे पद सरोज मनोज अरि उर सर सदैव विराजहीं ।  
जे सकृत सुमिरत विमलता मन सकल कलि मन भाजहीं ॥  
जे परति मुनिवनिना लही गति रही जो पातरुमई ।  
मरुंदु जिन्हको संसु सिर सुचिना अयधि सुर वरनई ॥  
करि मधुप मन मुनि जोगिजन जे सेइ अभिमन गति लहे ।  
ते पद पखारत भाग्यभाजनु जनकु जय जय सब कहैं ॥  
चार कुँअरि कातन जोरि साखोचवारु दोउ कुल गुरु करैं ।  
भयो पानिगहन विलोकि विधि मुर मनुज मुनि आनंद भरैं ॥  
सुखमूल दूलहु देखि दंपति पुलक तनु हुलस्यो हियो ।  
करि लोक वेद विधानु कन्यादानु नृप भूषन कियो ॥  
हिमवंत जिमि गिरिजा महेसहि हरिहि श्री सागर दई ।  
तिमि जनक रामहि सिय समरपो बिभन कल कीरति नई ॥  
क्यों करै विनय विदेहु कियो- विदेहु मूरति सौवरी ।  
करि होमु विधिवत गींठि जोरी होन लागी भांवरी ॥  
दो०-जय धुनि बंदी वेद धुनि मंगलगान निसान ।

सुनि हरपहि वरपहि विनुष सुरतरु सुमन सुजान ॥ ३२४ ॥  
कुअरु कुअरि पल भावरि, देहीं । नयन लासु सब सादर लेहीं ॥  
जइ न बरनि मनोहरि जोरी । जो उपना कछु कहौ सो थोरी ॥  
राम सीय सुंदर परिआहीं । जगमगाति मनि खंभन्ह माहीं ॥  
मनहुं मदनु रति धरि बहु रूपा । देखत राम बिबाहु अनूपा ॥

दरस लालसा सकुच न थोरी । प्रगटत दुरत बहोरि बहोरी ॥  
 भए मगन सब देखनिहारे । जनक समान अपान बिसारे ॥  
 प्रमुदित मुनिन्ह भागरी फेरी । नेग सहित सब रीति निचेरी ॥  
 रामु सीय सिर सेंदुर देहीं । सोभा कहि न जाति बिधि केहीं ॥  
 अरुन पराग जनजु भरि नीकें । ससिहि मूष अहि लोभ अमी कें ॥  
 बहुरि बसिष्ठ दीन्ह अनुसासन । बरु दुलहिनि बेठे एक आसन ॥

छ०—बेठे बरासनु रामु जानकि मुदित मन दसरथु भए ।

तनु पुलक पुनि पुनि देखि अण्णे सुकृन् सुरतरु फल नए ॥  
 भरि सुवन रहा उछाहु राम बिबाहु भा सबही कहा ।  
 केहि भाति बरनि सिरात रसना एकु येहु मगलु महा ॥  
 तत्र जनक पाइ बसिष्ठ आयेसु व्याह साजु संचारि के ।  
 माडवी श्रुतिकीरति उर्भिना कुँअरि लई हकारि के ॥  
 कुसकेतु कन्या प्रथम जो गुन सील सुख सोभामई ।  
 सब रीति नीति समेत करि सो व्याहि नृप भग्नहि दर्ई ॥  
 जानकी लघु भगिनी सकल सुदरि सिंगेमनि जानि के ।  
 सो जनक दीन्ही व्याहि लखनहि सकल विधि सनमानि के ॥  
 जेहि नामु श्रुतिकीरति सुलोचनि सुमुखि सब गुन आगरी ।  
 सो दर्ई विपुमूदनहि भूपति रूप सील उजागरी ॥  
 अनुरूप बर दुलहिनि परसपर लखिसनुचि हिअ हरपही ।  
 सब मुदित सुदरता सराहहि सुमन सुर गन बरपही ॥  
 सुदगी सुदर बरन्ह सह सत्र एक मढप राजही ।  
 जनु जीम उर चारिउ अवस्था बिमुन्ह सहित बिराजही ॥

दो०—मुदित अवधपति सञ्चल सुन बनुन्ह समेत निहारि ।

जनु पाए मरिपाल मनि भियन्ह सहित फन चारि ॥३२५॥

जसि रघुवीर व्याह त्रिधि घरनी । सकल कुँधर व्याहे तेहि करनी ॥  
 कहि न जाइ कलु दाइज भूमी । रहा कनक मनि मडपु पूरी ॥  
 कपल बमन बिचित्र पट्टेरे । भोति भोति बहु मोल न थोरे ॥  
 गज रथ तुरग दास अरु दासी । धेनु अलकन कामदुहा सी ॥  
 बभ्रु अनेक करिअ मिमि लेखा । कहि न जाइ जानहि जिन्ह देखा ॥  
 लोकपाल अवलोकि सिहाने । लोन्ह अन्धपति सन सुपु माने ॥  
 दीन्ह जाचकन्हि जो जेहि माया । उबरा सो जनगसेहि आवा ॥  
 तब फर जोरि जनकु मृदु बानी । बोले सब बरात सनमानी ॥

छ०—सनमानि सकल बरात आदर दान विनय बड़ाइ के ।

प्रमुदित महा मुनिवृद्ध वदे पूजि प्रेम लड़ाइ के ॥  
 सिह नइ देव मनाइ सन सन कहत कर सपुट किए ।  
 सुर साधु चाहत भउ सिधु कि तोष जन अजलि दिए ॥  
 कर जोरि जनकु बहोरि बधु समेत कोसलराय सों ।  
 बोले मोहहर बयन सानि सनेह सील सुभाय सों ॥  
 सनमध राजन रावरेँ हम बड़े अब सन बिधि भए ।  
 एहिं राज साज समेत सेरकु जानिबी बिनु गथ लए ॥  
 ये दारिका पेरिचारिका करि पालिनी करुनामई १ ।  
 अपराधु छमियो बोलि पठए बहुत हौं दोटयो दर्ई २ ॥  
 पुनि भानुमूलभूषन सकल सनमाननिधि समधी किए ।  
 कहि जाति नहिं बिनती परसपर प्रेम परिपूरन हिए ॥  
 वृंदाका गन सुमन बरिसहिं राउ जनवासेहि चले ।  
 दुदुमी जय धुनि वेद धुनि नभ नगर कौतूहल भले ॥  
 तब सखी भगल गान करत मुनीस आयेसु पाइ के ।  
 दूलाह दुलहिनिन्ह सहित सुदरि चली कोहबर रयाइ के ॥

१—प्र० करुनामद । दि०, दू०, च० प्र० [ (६) (६अ) करुनामई ] ।

२—प्र० दर्ई । दि० प्र० । [ ६० कर्ई ] । च० प्र० [ (१) (१थ) कर्ई ]

येहि विधि सबही भोग्यु कीन्हा । जगद महित आचमनु कीन्हा ॥  
दो०—देह पन पूजे जनक दमभु महिन ममाज ।

जनरासेहि मरने मुदिन सफल भूष सिताज ॥३२६॥  
नित नूतन मंगल पुर माही । निमिष सग्मिदिन जागिनि जाही ॥  
बड़े भोर भूषतिमनि जागे । जाचक गुनगन गागन लागे ॥  
देखि पुँअर वर बधुन्द समेन । किमि कहि जात मोदु मन जेना ॥  
प्रातःकिया करि गे गुर पाही । मरा प्रमंदु प्रेसु मन गाही ॥  
करि प्रनामु पूजा कर जोरी । बोले गिरा जगिअर जनु बोरी ॥  
सुधरी कृपां सुनहु मुनिराज । भगउं आजु मै पूनछाज ॥  
अब सर विप्र बोलाइ गोसाईं । देहु धेनु सब भीनि बनाई ॥  
सुनि गुर करि महिषान वडाई । पुनि पठ्य मुनिवृंद बोलाई ॥  
दो०—बामदेव अरु देवरिषि बानगीरि जागलि ।

आए मुनिर निकर सर कौसिकादि तस्तालि ॥३३०॥  
दह प्रनाम सरहि नृप कीन्हे । पूजि सप्रेम बगसन दीन्हे ॥  
चारि लच्छ वर धेनु मँगाई । काम सुरभि सममेल सुहाई ॥  
सत्र विधि सकल अलाटत कीन्ही । मुदित महिष महिदेव्ह दीन्ही ॥  
करत बिनय बहु त्रिधि नरनाह । लहेउं आजु जग जीवन लाह ॥  
पाइ असीस महीसु अन्दा । लिए बोलि पुनि जाचक वृदा ॥  
कनक बसन मनि हय गय स्यदन । दिप बूझि रचि रत्रिबुल नदन ॥  
चले पढ़त गावत गुणगाथा । जय जय जय दिनकर बुल नाथा ॥  
एहि विधि राम विवाह उदाह । सके न चरनि सइसमुख जाह ॥  
दो०—बार बार कौसिक चरन सीसु नाइ कह राउ ।

येहु सबु सुख मुनिराज तब कृपा कटाच्छ प्रमाउ ॥३३१॥  
जनक सनेहु सीलु करतूती । नृपु सब राति सराह विभूती ॥

दिन उठि विदा अववपति माँगा । राखहि जनकु सहित अनुगगा ॥  
 नित नूतन आदरु अधिकारै । दिन प्रति सहस भौंति पहुनाई ॥  
 नित नव नगर अनंदु उछाह । दसरथ गवनु सोहाइ न काह ॥  
 बहुत दिसस बीते एहि भाँती । जनु सनेह रजु बंधे बराती ॥  
 कौसिक सतानंद तब जाई । कहा विदेह नृपहि समुभाई ॥  
 अर दसरथ कहुं आयेसु देह । जघपि छाड़ि न सकहु सनेह ॥  
 भलेहि नाथ कहि सचिव बोलाए । कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए ॥  
 दो०—अरधनाथु चाहत चनन भीतर कहहु जनाउ ।

भय प्रेमवध सचिव सुनि विप्र सभासद राउ ॥३३२॥  
 पुरवासी सुनि चलिहि बराता । पूँछत<sup>१</sup> बिकल परसपर बाता ॥  
 सत्य गवनु सुनि सब बिलखाने । मनहु साँझ सरसिज सकुचाने ॥  
 जहँ 'जहँ' आवन बसे बराती । तहँ तहँ सिद्ध चला बहु भाँती ॥  
 विविधि भाँति मेवा परवाना । भोजन साजु न जाइ बखाना ॥  
 भरि भरि बसह अपार कहारा । पठई<sup>२</sup> जनक अनेक सुसारा ॥  
 सुरग लाल रथ सहस पचीसा । सकल सँवारे नख अरु सीसा ॥  
 मत्त सहस दस सिंघुर साजे । जिन्हहि देखि दिसिकुंजर लाजे ॥  
 कनक बसन मनि भरि भरि जाना । महिषी धेनु वस्तु विधि नाना ॥  
 दो०—दाइज अमित न सकिअ कहि दीन्ह विदेह बहोरि ।

जो अवलोकन लोकपति लोकर सपदा थोरि ॥३३३॥  
 सबु समाजु येहि भाँति बनाई । जनक अवधपुर दीन्ह पठाई ॥  
 चलिहि बरात सुनत सब रानो । बिरल भीनगन जनु लघु पानी ॥  
 पुनि पुनि सीय गोद करि लेहीं । देइ असीस सिखावनु देहीं ॥  
 होएहु सतत पिअहि पियारी । चिर अहिवातु असीस हमारी ॥

१—प्र० : वृक्ष । डि०, न० : प्र० । च० : पृष्ठ ।

२—प्र० : क्रमशः पठई सुसारा । [ दि०, न० : पठए, सुसारा ] । च० : प्र० [ (८) : पठए, सुसारा ] ।



सासु ससुर गुर सेवा करेह । पति रुख लखि आयेसु अनुसरेह ॥  
 अति सनेह बस सखी सयानी । नारि घरमु सिखवहिं मृदु बानी ॥  
 सादर सकल कुँअरि समुझाई । रागिन्ह बार बार उर लाई ॥  
 बहुरि बहुरि भेहिं महतारी । कहहि त्रिचि रची कन नारी ॥  
 दो०—तेहिं अन्सर भाइन्ह सहिन रामु भानुकुल वेतु ।

चले जनक मंदिर मुदित निदा करावन हेतु ॥३३४॥  
 चारिउ भाइ सुभायँ सुहाए । नगर नारि नर देखन घाए ॥  
 कोउ कह चलन चतुर्हि आजू । कीन्ह निदेह निदा कर साजू ॥  
 लेहु नयन भर रूपु निहारी । प्रिय पाहुने भूपसुत चारी ॥  
 को जाने केहिं सुकृत सयानी । नयन अतिथि कीन्हे विधि आनी ॥  
 मरपीलु जिमि पात्र पिउपा । सुरतरु लहै जनम कर भूवा ॥  
 पाव नारकी हरिपदु जैसँ । इन्ह कर दरसनु हम कहुँ तेसँ ॥  
 निरखि राम सोभा उर धरह । निज मन फनि मूरति मनि करह ॥  
 येहि विधि सगहि नयन फलु देता । गए कुँअर सब राजनिकेता ॥  
 दो०—रूप सिंधु सत्र बधु लखि हरपि उठौ रनिवासु ।

करहिं निष्ठावर आरती महा मुदित मन सासु ॥३३५॥  
 देखि राम छनि अनि अनुरागी । प्रेम विनम पुनि पुनि पद लागी ॥  
 रही न लाज प्रीति उर छाई । सहज सनेहु बरनि किमि जाई ॥  
 भइन्ह सहित उबटि अन्हवाए । छ रम गसन अति हेतु जेनाए ॥  
 बोले रामु सुअवसर जानी । सील सनेह सकुचमय बानी ॥  
 राउ अवधपुर चहत सिधाए । निदा होत हम इहाँ पठाए ॥  
 मातु मुदित मन आयेसु देह । बालक जानि करन नित नेह ॥  
 सुनत बचन मिलखेउ रनिवासु । बोलि न सगहिं प्रेम बस सासु ॥

हृदय लगाइ कुँअरि सब लीन्हीं । पतिन्ह सौपि चिनती अति कीन्हीं ॥

छं०—करि चिनय सिय रामहि समरपी जोरि कर पुनि पुनि कहै ।

बलि जाउँ तात सुजान तुम्ह कहूँ निदित गति समकी अहै ॥

परिवार पुरजन मोहि राजहि प्रानप्रिय सिय जानिनी ।

तुलसीसु सोल सनेह लखि निज किंऊरो करि मानिनी ॥

सो०—तुम परिपूरन काम जान सिरोमनि भाव प्रिय ।

जन गुन गाहक राम दोष दलन करुनायतन ॥३३६॥

अस कहि रही चरन गहि रानी । प्रेम पंरु जनु गिरा समानी ॥

सुनि सनेह सानी वर बानी । बहु बिधि राम सासु सनमानी ॥

राम बिदा मागा१ कर जोरी । कोन्ह प्रनम बहोरि बहोरी ॥

पाइ असीस बहुरि सिरु नाई । भाइन्ह सहित चले रघुराई ॥

मंजु मधुर मूरति उर आनी । भई सनेह सिथिल सन रानी ॥

पुनि धीरजु घरि कुँअरि हँऊरी । बार बार भेटहि महतारी ॥

पहुँचावहि फिर मिलहि बहोरी । दूढी परसपर प्रीति न थोरी ॥

पुनि पुनि मिलति सखिन्ह बिलगाई । बाल दृष्ट्य जिमि धेनु लवाई ॥

दो०—प्रेम विषम नर नारि सन सखिन्ह सहित रनिवासु ।

मानहुँ कीन्ह बिदेहपुर करुना बिरह निवासु ॥३३७॥

सुक सारिका जानकी ज्याए । कनक पिंजरन्हि राखि पढ़ाए ॥

ब्याकुल कहहि कहाँ बेदेही । सुनि धीरजु परिहरै न केही ॥

भए विमल खग मृग एहि भौंती । मनुज दसा कैसें कहि जाती ॥

यधु समेत जनकु तब आए । प्रेम उमगि लोचन जन छाए ॥

सीय विनोकि धीरता भागी । रहे कहावत परम निरागी ॥

लीन्हि राय उ लाइ जानकी । मिथी महा मरजाद ज्ञान की ॥

समुभावन सन सचिव सयाने । कीन्ह विचारु अनवसरु जाने ॥

बारहिं बार सुना उर लाई । सजि सुंदर पालनी मँगई ॥  
 दो०—प्रेम विषस परिवार सनु जानि मुलान नरेम ।

कुँअरि चढ़ाई पालन्हि सुमिरे सिद्ध गनेस ॥३३८॥  
 बहु विधि मूष सुना समुझई । नारि घरु कुनरीति सिखाई ॥  
 दासी दास दिए बहुतेरे । मुचि सेरु जे प्रिय सिध केरे ॥  
 सीय चलन व्याकुल पुरवासी । होहि सगुन सुम मगलरासी ॥  
 भूसुर सचित्र समन समाजा । सग चने पहुँचावन राजा ॥  
 समय बिलोकि बाजने बाजे । रथ गज बाजि बरातिन्ह साजे ॥  
 दसरथ विप्र बोलि सत्र लीन्हे । दान मान परिपूरन कीन्हे ॥  
 चरन सरोज धूरि धरि सीसा । मुदित गहीपति पाइ असीसा ॥  
 सुमिरि गजाननु कीन्ह पयाना । मगल मूल सगुन भए नाता ॥

दो०—सुर प्रसून वरपहिं हरपि परहिं अपदरा गान ।

चने अवधपति शबघपुर मुदित बजाइ निसान ॥३३९॥  
 नृप करि विनय महाजन केरे । सादर सकल माँगने टेरे ॥  
 भूपन वसन बाजि गज दीन्हे । प्रेम पोषि ठाढ़े सन कीन्हे ॥  
 बार बार बिरिदावलि भाषी । फिरे सकल रामहिं उर राखी ॥  
 बहुरि बहुरि फोसलपति कहहीं । जनकु प्रेम बस फिरे न चहहीं ॥  
 पुनि कह भूपति बचन सुहाए । फिरिअ महीस दुरि बड़ि आए ॥  
 राउ बहोरि उत्तरि भए ठाढ़े । प्रेम प्रवाह बिलोचन बाढ़े ॥  
 तब त्रिदेहु बोले कर जोरी । बचन सनेह सुधा जनु बोरी ॥  
 करौ कवन बिधि विनय बनाई । महाराज मोहि दीन्हि बडाई ॥  
 दो०—श्रीसलपति समधी सजन सनमाने सत्र भाति ।

मिनन परसपर त्रिनय अति प्रीति न हृदय समति ॥३४०॥  
 मुनि मंडलिहि जनक सिरु नावा । आसिरबादु सबहि सन पावा ॥  
 सादर पुनि भेंटे जामाता । रूप सील गुननिधि सब आता ॥  
 जोरि पकरुह पानि सुहाए । बोले बचन प्रेम जनु जाए ॥

राम करौं केहि भौंति प्रसंसा । मुनि महेस मन मानस हंसा ॥  
 करहि जोग जोगी जेहि लागी । कोहु मोहु ममता महु त्यागी ॥  
 व्यापकु ब्रह्म अलखु अविनासी । चिदानंदु निरगुनु गुनरासी ॥  
 मन समेत जेहि जान न बानी । तरकि न सकहि सकल अनुमानी ॥  
 महिमा निगमु नेति कहि कहई । जो तिहुँकाल एकरस अहई ॥  
 दो०—नयन विषय मो कहुं भएउ सो समस्त सुख मूल ।

सबुइ सुलभ<sup>१</sup> जग जीव कहँ भएँ ईसु अनुकूल ॥३४१॥  
 सबहिं भौंति मोहि दीन्हि बड़ाई । निज जनु जानि लीन्ह अपनाई ॥  
 होहि सहस दस सारद सेषा । करहि<sup>२</sup> कलष कोटिक भरि लेखा ॥  
 मोर भाग्य राउर गुन गाथा । कहि न सिराहि सुनहु रघुनाथा ॥  
 मैं कछु कहाँ एक बल मोरे । तुम्ह रोम्हहु सनेह सुठि थोरे ॥  
 बार बार माँगौं कर जोरे । मनु परिहरै चरन जनि मोरें ॥  
 सुनि बर वचन प्रेम जनु फेपे । पूरन कामु रामु परितोपे ॥  
 करि बर विनय समु र सनमाने । पितु कौंसिक बसिष्ठ सम जाने ॥  
 विनडी बहुत<sup>३</sup> भरत सन कीन्ही<sup>४</sup> । मिलि सप्रेम पुनि आसिष दीन्ही<sup>४</sup> ॥  
 दो०—मिले लखन रिपुमूदनहि दीन्हि असीस महीस ।

भए परसपर प्रेम बस फिरि फिरि नाबहिं सीस ॥३४२॥  
 बार बार करि विनय बड़ाई । रघुपति चले संग सब भाई ॥  
 जनक गहे कौंसिक पद जाई । चरनु रेनु सिर नयनन्हि लाई ॥  
 सुनु मुनीस बर दरसन तोरें । अगमु न कछु प्रतीति मन मोरें ॥  
 जो सुखु मुजसु लोरुपति चहहीं । करत मनोरथ सकुचन अहहीं ॥

१—प्र० : सबुइ सुलभ । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (२) (इय) : सबद लाग ] ।

२—प्र० : करहि । दि०, वृ०, च० : प्र० [(२अ) : करहि ] ।

३—[प्र० : बहु] । दि० : बहुत । वृ० : दि० । च० : दि० [(६) (२अ) : बहुरे ] ।

४—प्र० : कमल : कीन्ही, दीन्ही । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : (६) (इय) कीन्हा, दीन्हा ; (२) कीन्हे, दीन्हे ] ।

सो सुख सुखसु सुलसु मोहि स्वामी । सब सिधि<sup>१</sup> तब दरसन अनुगामी ॥  
 कीन्हि जिनय पुनि पुनि सिरु नाई । फिरे महीसु आसिपा पाई ॥  
 चली बरात निसान बचाई । मुदिन छोट बड़ सन समुदाई ॥  
 रामहि निरखि ग्राम नर नारी । पाइ नयन फलु होहि सुगारी ॥  
 दो०—बीच बीच बर बास करि मग लोगन्ह सुख देत ।

अनघ सभीष पुनीत दिन पहुँची आइ जनेन ॥३४३॥  
 हुने निमान पनर बर बाजे । भेरि सख धुनि हय गय गाजे ॥  
 भौंकि भेरि<sup>२</sup> डिडिमी मुहाई । सरस राग बाजहि सहनाई ॥  
 पुंजन आवत अफनि बराता । मुदित सकल पुनरावलि गाता ॥  
 निज निज सुठर सदन सँवारे । हाट बाट चौहट पुग द्वारे ॥  
 गलीं सकल अरगजा सिचाई । जहँ तहँ चौकै चारु पुराई ॥  
 बना बचारु न जाइ बलाना । तोरन केतु पतारु चिताना ॥  
 सफल पृगफल कदलि रसाना । रोपे बकुल कदव तमाला ॥  
 लगे सुमग तरु परसत धरनी । मनिमय आलवाल कन करनी ॥  
 दो०—बिबिध भौति मगल फलस गृह गृह रचे सँवारि ।

सुर ब्रह्मादि सिंहाहिं सब रघुवर पुरी निहारि ॥३४४॥  
 मूप भरनु तेहि अवसर सोहा । रचना देखि मदन मनु मोहा ॥  
 मगल सगुन मनोहरताई । रिधि सिधि सुख सपदा सुहाई ॥  
 जनु उद्याह सन सहज सुहाए । तनु धरि धरि दसरथ गृह आए<sup>३</sup> ॥  
 देखन हेतु रागु बैदेही । कहहु लालसा होइ न केही ॥  
 जूय जूय मिलि चलीं सुआसिनि । निब छबि निदरहि मदनप्रिलासिनि ॥  
 सकल सुमगल सजे आरती । गावाहिं जनु बहु जेप भारती ॥

१—प्र० सिधि । दि० प्र० [(३) (४) विधि] । [तु० विधि] । च० प्र० [(८) विधि] ।

२—प्र० भेरि । [दि० (३) (४) (५) बीन, (५) वारि] । तु० प्र० । च० [(६) बीर, (१५) बीर] ।

३—प्र० द्वाए । दि० द्वाए । तु०, च० दि० ।

भूपति भवन कोलाहलु होई । जाइ न बरनि समउ सुखु सोई ॥  
कौसल्यादि राम महतारी । प्रेम बिबस तन दसा बिसारी ॥  
दो०—दिए दान बिग्रह विपुल पूजि गनेस पुरारि ।

प्रमुदित परम दरिद्र जुनु पाइ पदारथ चारि ॥ ३४५ ॥  
मोद<sup>१</sup> प्रमोद बिबस सब माता । चलहि न चरन सिथिल भए गाता ॥  
राम दरस हित अति अनुगामी । परिछनि साजु सजन सब लागी ॥  
बिबिध बिधान बाजने बाजे । मंगल मुदित सुमित्रा साजे ॥  
हरद दूध दधि पल्लव फूला । पान पूगफल मंगल मूला ॥  
अच्छत अंकुर रोचन लाजा । मंजुर<sup>२</sup> मंजरि तुलसि विराजा ॥  
छुहे पुरट घट सहज सुहाए । मदन सकुन<sup>३</sup> जुनु नीड़ बनाए ॥  
सगुन सुगंध न जाहि बखानी । मंगल सकल सजहि सब रानी ॥  
रची आरती बहुत बिधाना । मुदित करहि कल मंगल गाना ॥  
दो०—कनक थार भरि मंगलन्हि कमल करन्हि लिए मातु ।

चली मुदित परिछनि करन पुलक पल्लवित गातु ॥ ३४६ ॥

धूप धूम नमु मेचकु भएऊ । सावन घन घमंडु जुनु ठएऊ ॥  
सुरतरु सुमन माल सुर बरपहि । मनहु बलाक अवलि मनु करपहि ॥  
मंजुन मनिमय बंदनवारे । मनहुँ पाकरिषु चाप सँवारे ॥  
प्रगटहि दुरहि अटन्हि पर भामिनि । चारु चपल जुनु दमकहि दामिनि ॥  
हुँदुभि धुनि घन गरजनि घोरा । जाचक चातक दादुर मोरा ॥  
सुर सुगंध सुचि बरपहि बारी । सुखी सकल ससि पुर नर नारी ॥  
समय जानि गुर आयेसु दीन्हा । पुर प्रवेशु रघुकुल मनि कीन्हा ॥  
सुभिरि संसु गिरिजा गनराजा । मुदित महीपति सहित समाजा ॥

१—प्र० : मोद । दि० : प्र० [ (४) (१) : प्रेम ] । [ त० : प्रेम ] । च० : प्र० ।

२—[ प्र० : मंगल ] । [ दि० : मंगल ] । त० : मंजरि । च० : त० ।

३—[ प्र० : मनुच ] । दि० : सकुन [ (५३) : सकुच ] । त० : दि० । च० : दि० [ (६) (६३) : सनुच ] ।

दो०—होहिं सगुन वरषहिं सुमन सुर दुंदुभी वज्रइ ।

विबुधबधु नाचहिं मुदिन मंजुल मंगल गाइ ॥३४७॥  
 मागध सूत बंदि नट नागर । गावहिं जसु तिहुं लोक उजागर ॥  
 जयधुनि विमल वेद वर बानी । दस दिसि मुनिअ मुमंगल सानी ॥  
 विपुल बाजने बाजन लागे । नम सुर नगर लोग अनुरागे ॥  
 बने घरासी वरनि न जाहीं । महा मुदित मन मुख न समाहीं ॥  
 पुरवासिन्ह तब राउ जोहारे । देखत रामहि भय सुखारे ॥  
 करहिं निछावरि मनि गन चीरा । वारि विलोचन पुलक सरीरा ॥  
 आरति करहिं मुदित पुर नारी । हरषहिं निरखि कुँअर बर चारी ॥  
 सिबिका सुमग ओहार उधारी । देखि दुलहिनिन्ह होहिं सुखारी ॥  
 दो०—येहि विधि सबही देत सुखु आए राज दुआर ।

मुदित मातु परिछनि करहिं बधुन्ह समेत कुमार ॥३४८॥  
 करहिं आरती वारहिं बारा । प्रेसु प्रमोदु कहै को पारा ॥  
 भूपन मनि पट नाना जाती । करहिं निछावरि अगनित भौंती ॥  
 बधुन्ह समेत देखि सुन चारी । परमानंद मगन महतारी ॥  
 पुनि पुनि सीय राम छवि देखी । मुदित सफल जग जीवन लेखी ॥  
 सखी सीय मुख पुनि पुनि चाही । गान करहिं निज सुरत सराही ॥  
 वरषहिं सुमन छनहिं छन देवा । नाचहिं गावहिं लावहिं सेवा ॥  
 देखि मनोहर चारिउ जोरी । सारद उपमा सकल वैदोरी ॥  
 देत न बनहिं निपट लघु लागी । एकटक रही रूप अनुरागी ॥  
 दो०—निगम नीति कुल रीतिकरि अरघ पाँवड़े देत ।

बधुन्ह सहित सुत परिछि सब चलीलवाइ निरेत ॥३४९॥  
 चारि सिंघासन सहज सुहाए । जनु मनोज निज हाथ बनाए ॥  
 तिन्ह पर कुँअरि कुँअर बैठारे । सादर पाय पुनीत पखारे ॥  
 धूप दीप नैवेद वेद विधि । पूजे वर दुलहिनि मंगल निधि ॥  
 वारहिं वार आरती करहीं । व्यजन चक्र चामर सिर ढरहीं ॥

वस्तु अनेक निष्ठावरि होहीं । मरी प्रमोद मातु सन सोहीं ॥  
पावा परम तत्त्व जनु जोगी । अमृत लहेउ जनु संतत रोगी ॥  
जनम रंकु जनु पारस पावा । अंधहि लोचन लामु सुहावा ॥  
मूक बदन जनु सारद छार्द । मानहे समर सूर जय पाई ॥  
दो०—येहि सुख तैं सत कोटि गुन पावहिं मातु अनंदु ।

भाइन्ह सहित बिआहि घर आए रघुकुल चंदु ॥

लोक रीति जननी करहिं वरदुलहिनि सकुचाहिं ।

मोदु विनोदु विलोकि बड़ रामु मनहिं मुसुकाहिं ॥२५०॥

देव पितर पूजे विधि नीकीं । पूजीं सकल बासना जी कीं ॥

सबहि बंदि मागहिं वरदाना । भाइन्ह सहित राम कल्याणा ॥

अंतरहित सुर आसिष देहीं । मुदित मातु अंचल मरि लेहीं ॥

मूपति बोलि बराती लीन्हे । जान बसन मनि मूपन दीन्हे ॥

आयेसु पाइ राखि उर रामहि । मुदित गए सब निज निज धामहि ॥

पुर नर नारि सकल पहिराए । घर घर बाजन लगे बघाए ॥

जाचक जन जाचहिं, जोइ जोई । प्रमुदित राउ देइ सोइ सोई ॥

सेवरु सकल बजनिआं नाना । पूरन किए दान सनमाना ॥

दो०—देहिं असीस जोहारि सन गावहिं गुन गन गाथ ।

तब गुर मूसुर सहित गृह गवनु कीन्ह नरनाथ ॥३५१॥

जो बसिष्ठ अनुसासन दीन्ही । लोक बेद विधि सादर कीन्ही ॥

मूसुर भीर देखि सब रानी । सादर उठीं माग्य बड़ जानी ॥

पाय पखारि सकल अन्हवाए । पूजि मलीं विधि मूप जैवाए ॥

आदर दान प्रेम परिषे । देत असीस सकल मन तोषे ॥

बहु विधि कीन्ह गाधिसुत पूजा । नाथ मोहि सम धन्य न दूजा ॥

१—प्र० : जनु । द्वि० : प्र० [ (४) (५) (६) : विमि ] । [ वृ० : उस ] च० : प्र० ।

२—प्र० : सकल । द्वि० : प्र० [ वृ० : चने ] च० : प्र० [ (६) (६) : चने ] ।

३—प्र० : मन तोषे । द्वि० : प्र० [ (४) : परिषे ] । वृ०, च० : प्र० ।



कीन्हि प्रसता भूपति भूरी । रनिन्ह सहित लीन्हि पग धूरी ॥  
 भीतर भवन दीन्ह बर बासू । मनु जोगवन रह नृपु रनिवासू ॥  
 पूजे गुर पद कमल बहोरी । कीन्हि विनय उर प्रीति न थोरी ॥  
 दो०—बधुन्ह समेत कुमार सन रनिन्ह सहित महीसु ।

पुनि पुनि बदत गुर चरन देत असीस मुनीसु ॥३५२॥  
 विनय कीन्हि उर अति अनुरागे । सुन संपदा राखि सब आगे ॥  
 नेगु भौंणि मुनिनाथकु लीन्हा । आसिरपादु बहुत निधि दीन्हा ॥  
 उर धरि रामहि सीय समेता । हरिष कीन्ह गुर गवनु निजेता ॥  
 बिष बधूँ सन भूप बोलाई । चैल ? चारु भूपन पहिराई ॥  
 बहुरि बुलाई सुआसिनि लीन्हीं । रुचि रिचारि पहिरावनि दीन्हीं ॥  
 नेगी नेग जोग सब लेहीं । रुचि अनुरूप भूपमनि देहीं ॥  
 प्रिय पाहुने पूज्य जे जाने । भूपति भली भौंति सनमाने ॥  
 देव देखि रघुबीर बिबाह । बरपि प्रसून प्रससि उच्चाह ॥

दो०—चलै निसान बजाइ सुर निज निज पुर सुख पाइ ।

कहत परसपर राम जसु प्रेसु न हृदय समाइ ॥३५३॥

सन बिधि सनहि समदि नरनाह । रहा हृदयँ भरि पूरि उच्चाह ॥  
 जहँ रनिवासु तहाँ पगु धारे । सहित बधूटिन्ह कुँअर निहारे ॥  
 लिप गोद करि मोद समेता । को कहि सके भएउ सुख जेता ॥  
 बधूँ सप्रेम गोद बेठारी । बार बार हिअँ हरपि दुलारी ॥  
 देखि समाजु मुदित रनिवासू । सब के उर अनन्दु कियो बासू ॥  
 कहेउ भूप जिमि भएउ बिबाह । सुनि सुनि हरपु होइ सब काह ॥  
 जनकराज गुन सीलु बडाई । प्रीति रीति सपदा सुहाई ॥  
 बहु बिधि भूप माट जिमि बरनी । रानी सब प्रमुदित सुनि करनी ॥

दो०—सुतह सेमेत नहाइ नृप बोलि बिप्र गुरु ज्ञाति ।

भोजनु कीन्ह अनेक विधि घरी पंच गइ राति ॥३५४॥  
मगल गान करहिं बर मामिनि । भै सुख मूल मनोहर जामिनि ॥  
अंचे पान सत्र काहूँ पाए । सग सुगंध मृपिन छवि छाए ॥  
रामहिं देखि रजायेसु पाई । निज निज मगन चले सिर नाई ॥  
प्रेसु प्ररोदु बिरोदु बड़ाई । समउ समाजु मनोहरताई ॥  
कहि न सकहि सन सारदसेसु । वेद विरंचि महेसु गनेसु ॥  
सो मै कहौं कवन विधि वरनी । मूमिनागु सिर धरे कि धरनी ॥  
नृप सत्र भौंति सबहि सनमानी । कहि मृदु वचन बोलाई रानी ॥  
बधूँ लरिकिनीं पर घर आई । राखेहु नयन पलक की नाई ॥

दो०—लरिका श्रमित उनीद बस सयन कराबहु जाइ ।

अस कहि गै विश्राम गृह राम चरन चितु लाइ ॥३५५॥  
भूप वचन सुनि सहज सुहाए । जटित<sup>१</sup> कनक मनि पलंग डसाये ॥  
सुमग सुरमि पय फेनु समाना । कोमल कलित सुपेती नाना ॥  
उपनहन बर वरनि<sup>२</sup> न जाहीं । सग सुगंध मनि मदिर माहीं ॥  
रतन दीप सुठि चारु चँदोवा । कहत न चने जान जेहिं जोवा ॥  
सेज रुचिर रचि राम उठाए । प्रेम समेत पलंग पौढ़ाए ॥  
अजा पुनि पुनि भाइन्ह दीन्हीं । निज निज सेज सयन तिन्ह कीन्हीं ॥  
देखि स्थाम मृदु मंजुल गाता । कहहिं सप्रेम वचन सत्र माता ॥  
मारग जात भयावनि भारी । केहि विधि तात ताड़िका भारी ॥

दो०—घोर निसाचर विकट भट समर गनहिं नहिं काहु ।

मारे सहित सहाय किमि खल<sup>१</sup> मारीच सुबाहु ॥३५६॥  
मुनि प्रसाद बलि तात तुम्हारी । ईस अनेक करवै टारी ॥

१—प्र० : जटित । द्वि० प्र० [ (४) (५) (५अ) जटित ] । [ तृ० : जरित ] । [ च० :  
(६) (६अ) जरित, (८) जन्ति ] ।

२—[प्र० : वरनि] । द्वि० तृ०, च० : वर वरनि ।

मख रखवारी करि दुहुँ भाई । गुर प्रसाद सर्व विद्या पाई ॥  
 मुनि तिथि तरी लगत पंग धूरी । कीरति रही सुवन भरि पूरी ॥  
 कमठ पीठि पनि कूट कठोरा । नृप समाजु महुँ सिक्खनु तोरा ॥  
 विश्व विजय जमु जानकि पाई । आप भवन ठ्याहि सब भाई ॥  
 सकल अमानुष करमु तुम्हारे । केवल कौसिक कृपा सुधारे ॥  
 आजु सुफल जग जनमु हमारा । देखि तात विधु बदन तुम्हारा ॥  
 जे दिन गए तुम्हहि बिनु देखैं । ते बिरंचि जनि पारहि लेखैं ॥  
 दो०—राम प्रतोषी मातु सब कहि विनीत बर बचन ।

सुमिरि समु गुर बिप्र पद किए नींद बस नयन ॥ ३५७ ॥  
 निंदउहँ बदन सोह सुठि लोना । मनहु सौंभ सरसीरुह सोना ॥  
 घर घर करहि जागरन नारी । देखि परसपर मगल गारी ॥  
 पुरी बिराजति राजति रजनी । रानी कहहि बिलोकहु सजनी ॥  
 सुंदरि धधूँ सासु लै सोई । फनिरुह जनु सिरमनि उर गोई ॥  
 प्रात पुनीत फाल प्रभु जागे । अरुनचूड़ बर बोलन लागे ॥  
 बदि मागधन्दि<sup>२</sup> गुन गन गाए । पुरजन द्वार जोहारन आए ॥  
 बदि निप्र सुर गुर पितु माता । पाइ असीस मुदित सब आता ॥  
 जननिरुह सादर बदन निहारे । भूपति सग द्वार पगु धारे ॥  
 दो०—कीन्ह सौच सन सहज सुचि सरित पुनीत नहाइ ।

प्रात क्रिया करि तात पहि आए चारिउ भाइ ॥ ३५८ ॥  
 भूप मिलोकि लिए उर लाई । बैठे हरपि रजायेसु पाई ॥  
 देखि रामु सन समा जुड़ानी । लोचन लाभु अवधि अनुमानी ॥  
 पुनि वसिष्ठ मुनि कौसिकु आए । सुभंग आसनन्हि मुनि बैठाए ॥  
 सुनन्ह समेत पूजि पग लागे । निरस्ति रामु दोउ गुर अनुरागे ॥

१—प्र० : ४५ । दि० : प्र० । [ नृ० : नपुन्ह ] ४ च० : प्र० ।

२—प्र० : बदि मागधन्दि । [ दि०, नृ० : बदा मागध ] ४ च० : प्र० । (२) : बदी मागध ।

कहहिं वसिष्ठ धरम इतिहासा । सुनहिं महीसु सहित रनिवासा ॥  
मुनि मन अगम गाधिसुत करनी । मुदित वसिष्ठ विपुल विधि वरनी ॥  
बोले बामदेउ सब साँची । कीरति कलित लोक तिहुँ माँची ॥  
सुनि आनंद भएउ सब काह । राम लखन उर अतिहि १ उछाह ॥  
दो०—मंगल मोद उछाहु नित जाहि दिवस येहि माँति ।

उमगी अवध अनंद भरि अधिक अधिक अधिकति ॥ ३५२ ॥  
सुदिन सोधिरे कल कंकन छोरे । मंगल मोद विनोद न थोरे ॥  
नित नव सुख सुर देखि सिहाही । अवध जनम जाचहि विधि पाही ॥  
बिस्वामित्रु चलन नित चहही । राम सप्रेम विनय बस रहही ॥  
दिन दिन सयगुन भूपति भाऊ । देखि सराह महा मुनिराऊ ॥  
माँगत बिदा राउ अनुरागे । सुनह समेत ठाढ़ भे आगे ॥  
नाथ सकल संपदा तुम्हारी । मैं सेवकु समेत सुत नारी ॥  
करवि सदा लरिकन्ह पर छोह । दरसन देत रहब मुनि मोह ॥  
दीन्हि असीस विष बहु माँती । चले न प्रीति रीति कहि जाती ॥  
राम सप्रेम संग सब भाई । आयेसु पाइ फिरे पहुँचाई ॥  
दो०—राम रूप भूपति भगति व्याहु उछाहु अनदु ।

जात सराहत मनहिं मन मुदित गाधिकुल चंदु ॥ ३६० ॥  
बामदेव रघुकुल गुर ज्ञानी । बहुरि गाधिसुन कथा बखानी ॥  
सुनि मुनि सुजसु मनहिं मन राऊ । बरनत आपन पुन्य प्रभाऊ ॥  
बहुरे लोग रजायेसु भएऊ । सुनह समेत नृपति गृह गएउ ॥  
जहँ तहँ राम व्याहु सब गावा । सुजस पुनोत लोक तिहुँ द्यावा ॥  
आप व्याहि राम घर जब तैं । बसे अनंद अवध सब तब, तैं ॥  
प्रसु बियाह जस भएउ उछाह । सकहिं न बरनि गिरा अहिनाह ॥  
कधि कुल जीवनु पावन जानी । करन पुनोत हेतु निज बानी ॥

१—प्र० : अतिहि । दि० : प्र० । [ तु० : अधिक ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : साधि । दि० : प्र० । तु० : सोधि । च० : तु० ।

તેહિં તેં મેં કલુ કહા ચસાની । કરન પુનીત દેનુ નિત્ર યની ॥

છં૦—નિત્ર ગિરા પાંચનિ કરન કારન રામ જમુ તુનસી કથો ॥

રઘુનીર ચરિત અપાર મારિયિ પારુ કચિ કૌને લમી ॥

હવચીત બપાહ હદ્યાહ મગલ મુનિ જે સાદા ગાયહી ॥

બેદેહિ રામ પ્રસાદ તે જન સર્વદા મુખુ પાયહી ॥

સો૦—સિય રઘુવીર વિગાદુ જે સર્વેમ ગાયદિં મુર્દાહ ॥

તિન્હ ફહું સદા હદ્યાદુ મંગલાયનન રામ જમુ ॥૩૬૧॥

इति भीमद्रामचरितमानसे सकल कलिकलुष विपरिणते

प्रथमः खोपानः समाप्तः ॥

श्री गणेशाय नमः

श्री ज्ञानकीवल्लभो विजयते

# श्री रामचरित मानस

द्वि ती य सो पा न

अयोध्या कांड

श्लो०—वामांके च विभाति भूधरमुता देवापगा मस्तके ।

भाले बालविधुर्गले च गरलं यम्योरसि व्यालराट् ॥

सौर्यं भूतिविभूषणः सुरवरः सर्वाधिपः सर्वदा ।

शर्वः सर्वगतः शिवः शशिनिभः श्रीशंकरः पातु माम् ॥

प्रसन्नतां या न गतामिपेकतस्तथा न मस्ते वनवासदुःखतः ।

मुखाम्बुजश्री रघुनंदनस्य मे सदास्तु सा मंजुलमंगलप्रदा ॥

नीलांबुजदशमज्जकोमलांगं सीतासमारोपिनवामभागम् ।

पाणौ महासायकचारुचापं नमामि रामं रघुवंशनाथम् ॥

दो०—श्री गुर चरन सरोज रज निज मनु मुकुट सुधारि ।

वरनौ रघुवर विमल जसु जो दायकु फल चारि ॥

जय ते रामु व्याहि घर आए । निज नव मंगल मोद बघाप ॥

भुवन चारिदस भूधर भारी । मुकुट मेघ बरपहिं सुख चारी ॥

रिधि सिधि संपति नदी सुहाई । उमगि अबध अबुधि कहैं आई ॥

मनिगन पुर नर नारि सुजाती । सुचि अमोल सुंदर सब भौंती ॥

कहि न जाइ कछु नगर विमूढी । जनु एतनिअ विरंचे करतूती ॥

सब त्रिधि सब पुरलोग सुखारी । रामचंद मुख चंदु निहारी ॥

मुदित मातु सब सखी सहेली । फलित विजोकि मनोरथ बेली ॥

राम रूपु गुन सीलु सुभाऊ । प्रमुदित होइ देखि सुनि राऊ ॥

दो०—सबकें उर अभिलापु अस कहहि मनाइ महेसु ।

आपु अद्यत जुबराज पदु रामहि देउ नरेसु ॥१॥

एक समयँ सब सहित समाजा । राजसभा रघुराजु बिराजा ॥

सकल सुकृत मूरति नरनाहूँ । राम सुजस सुनि अतिहि उद्याहूँ ॥

नृप सब रहहि कृपा अभिलापेँ । लोभ्य करहि प्रीति रुख राखेँ ॥

तिभुवन तीनि काल जग माहीं । भूरिभाग दमरथ सम नाहीं ॥

मगल मूल राम सुत जासु । जो बछु कहिअ थोर सबु तासू ॥

राय सुभाय मुकुरु कर लीन्हा । वदन बिलोकि मुकुटु सम कीन्हा ॥

सवन समीप भए सित वेंसा । मनहुँ जरठपनु अस उपदेसा ॥

नृप जुबराजु राम कहूँ देह । जीवन जनम लाहु किन लेहू ॥

दो०—येह बिचारु उर आनि नृप सुदिनु सुअवसरु पाइ ।

प्रेम पुलकि तन मुदित मन गुरहि सुनाएउ जाइ ॥२॥

कहइ भुआलु सुनिअँ मुनिनायक । भएरामु सब बिधि सत्र लायक ॥

सेवक सचिव सकल पुरवासी । जे हमरे अरि मित्र उदासी ॥

सबहि रामु प्रिय जेहि बिधि मोही । प्रभु असीस जनु तनु धरि सोही ॥

मित्र सहित परिवार गोसाई । करहि छोडु सत्र रौरिहि नाई ॥

चे गुर चरन रेनु सिर धरहीं । ते जनु सकल बिभव बस करहीं ॥

मोहि सम यहु अनुभएउ न दूजें । सबु पाएउँ रज पावनि पूजें ॥

अन अभिलापु एऊ मन मोरें । पूजिहि नाथ अनुग्रह तोरें ॥

मुनि प्रसन्न लखि सहज सनेह । कहेउ नरेस रजायेसु देह ॥

दो०—राजन राउर नामु जसु सत्र अभिमत दातार ।

फन अनुगामी महिपमनि मन अभिलापु तुम्हार ॥३॥

सब त्रिधि गुर प्रसन्न जिअँ जानी । बोलेउ राउ रहँसि मृदुबानी ॥

नाथ रामु करिअहि जुबराजू । कहिअ कृपा करि करिअ समाजू ॥

मोहि अद्यत येहु होइ उद्याह । लहहि लोग सब लोचन लाह ॥

प्रभु प्रसाद सिव सवइ निवाहीं । येह लालसा एक मन माहीं ॥  
पुनि न सोचु तनु रहउ कि जाऊ । जेहि न होइ पार्थे पछिताऊ ॥  
सुनि मुनि दसरथ बचन सुहाए । मंगल मोद मूल मन भाए ॥  
सुनु नृप जासु विमुख पछिताहीं । जासु भजन विनु जरनि न जाहीं ॥  
भएउ दुम्हार तनय सोइ स्वामी । रामु पुनीत प्रेम अनुगामी ॥

दो०—वेगि बिलंबु न करिय नृप साजिअ सनुइ समाजु ।

सुदिनु सुमंगलु सबहि जब रामु होहि जुवराजु ॥४॥

मुदित महीपति मंदिर आए । सेवक सचिव सुमंत्रु बोलाए ॥  
कहि जय जीव सीस तिन्ह नाए । मूप सुमंगल बचन सुनाए ॥  
प्रमुदित मोहि कहेउ गुर आजू । रामहि राय देहु जुवराजू ॥  
जौ पाँचहि मत लागइ नीका । करहु हरपि हिय रामहिं टीका ॥  
मंत्री मुदित सुनत प्रिय बानी । अभिमत विरव परेउ जनु पानी ॥  
बिनती सचिव करहिं कर जोरी । जिअहु जगपति बरिस करोरी ॥  
जग मंगल भल काजु बिचारा । वेगिअ नाथ न लाइअ बारा ॥  
नृपहि मोदु सुनि सचिव सुभाषा । वदत बौड़ जनु लही सुसाखा ॥  
दो०—कहेउ मूप मुनिराज कर जोइ जोइ आयेसु होइ ।

राम राज अभिपेक हित वेगि करहु सोइ सोइ ॥५॥

हरपि सुनीस कहेउ मृदु बानी । आनहु सकल सुनीरथ पानी ॥  
औषध मूल फूल फल पाना । कहे नाम गनि मंगल माना ॥  
चामर चरम वसन बहु माँती । रोम पाट पट अर्गनित जाती ॥  
मनिगन मंगल वस्तु अनेक । जो जग जोगु मूप अभिपेका ॥  
वेद विहित कहि सकल बिधाना । कहेउ रचहु पुर विविध बिताना ॥  
सफल रसाल पूगफल केरा । रोपहु बीयिन्ह पुर चहुँ फेरा ॥  
रचहु मंजु मनि चौकई चारू । कहहु वनावन वेगि वजारू ॥  
पूजहु गनपति गुर कुलदेवा । सव विधि करहु भूमिसुर सेवा ॥



दो०—ध्वज पताक तोरन फनस सजहु सुगग रथ नाग ।

सिर घरि मुनिवर बचन सनु निन निज काजहि लाग ॥६॥

जो मुनीस जेहि आपेसु दीन्हा । सो तेहि काजु प्रथम जनु कीन्हा ॥

चित्र साधु सुर पूजन राजा । करत राम हित मगन काजा ॥

सुनत राम अभिषेक सुहावा । बाज गहागह अवध दघारा ॥

राम सीय तन सगुन जनाए । करन्हि मंगन अग सुहाए ॥

पुलकि सप्रेम परसपर कहही । भक्त आगमनु सुनक अहरी ॥

मए बहुत दिन अति अवसेरी । सगुन प्रनीति भेंट प्रिय केरी ॥

भरत सरिस प्रिय को जग माहीं । इहइ सगुन फलु दूसर नाहीं ॥

रामहि बधु सोचु दिन रानी । अर्दान्ह कमठ हृदउ जेहि भौंती ॥

दो०—एहि अवसर मगलु परम सुने रहसेउ रनिवासु ।

सोभत लखि त्रिषु वदत जनु बारिधि बोचि तिलासु ॥७॥

प्रथम जाइ जिन्ह बचन सुनाए । मूपन बमन मूरि तिन्ह पाए ॥

प्रेम पुलकि तन मनु अनुरागी । मगल कलस सजन सत्र लागी ॥

चौकई चारु सुमित्रा पूरी । मनमय त्रिविध भौंति अति खरी ॥

आनंद मगन राम महतारी । दिए दान बहु चित्र हँकारी ॥

पूजी प्रामदेवि सुर नागा । कहे बहोरि देन बलि भागा ॥

जेहि विधि होइ राम कल्याणू । देहु दया करि सो वारदानू ॥

गावहि मगल कोकिल बधनी । त्रिषु वदनी मृग सावक नयनी ॥

दो०—राम राज अभिषेकु सुनि हिय हरपे नर नारि ।

लगे सुमंगल सजन सब विधि अनुकूल विचारि ॥८॥

तब नरनाह बसिष्ठ बोलाए । राम धाम सिख देन पठाए ॥

गुर आगमनु सुनत रघुनाथा । द्वार आई पद नाएउ माथा ॥

सादर अरघ देइ घर आने । सोरह भौंति पूजि सनमाने ॥

गहे चरन सिध सहित बहोरी । बोले रामु कमल कर जोरी ॥  
 सेवक सदन स्वामि आगमनू । मंगल मूल अमंगल दमनू ॥  
 तदपि उचित जनु बोलि सप्रीती । पठइअ काज नाथ असि नीती ॥  
 प्रभुता तजि प्रभु कीन्ह सनेह । भएउ पुनोत आजु येहु गेह ॥  
 आयमु होइ सो करौ गोसाई । सेवकु लहई स्वामि सेरकाई ॥  
 दो०—मुनि सनेह साने वचन मुनि रघुवरहि प्रसंस ।

राम कसन तुम्ह कहहु अस हंस बंस अवतंस ॥१॥  
 बरनि राम गुन सीलु मुभाऊ । बोले प्रेम पुलकि मुनिराऊ ॥  
 मूप सजेउ अभिपेक समाजू । चाहत देन तुम्हहि जुबगजू ॥  
 राम फाहु सब संजम आजू । जौ बिधि कुसल निबाहइ काजू ॥  
 गुरु सिख देइ राय पहि गएऊ । राम हृदय अस बिसमउ भएऊ ॥  
 जनमे एक संग सब भाई । भोजन सयन केलि लरिकाई ॥  
 करनपेध उपवीत विआहा । संग सग सब भए उछाहा ॥  
 विमल बस येहु अनुचित एकू । बंधु बिहाइ बड़ेहि अभिपेकू ॥  
 प्रभु सप्रेम पछितानि सुहाई । हरउ भगत मन कै कुटिलाई ॥  
 दो०—तेहि अवसर आए लखनु मगन प्रेम आनंद ।

सनमाने प्रिय वचन कहि रघुकुज कैरव चंद ॥१०॥

बाजहिं बाजन विविध विधाना । पुर प्रमोदु नहिं जाइ बखाना ॥  
 भरत आगमनु सकल मनावहिं । आवहु१ बेगि नयन फलु पावहिं ॥  
 हाट बाट घर गली अथाई । कहहिं परसपर लोग लोगाई ॥  
 कालि लगन भलि केतिक वारा । पूजहिं बिधि अभिलापु हमारा ॥  
 कनक सिंघासन सोय समेता । बैरहिं रामु होइ चित चैता ॥  
 सकल कहहिं कब होइहि काली । विघन बनावहिं२ देव कुचाली ॥

१—प्र० : आवहु । द्वि० : प्र० [ (५) (५५) : आवहिं ] । तृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : बनावहिं । [ द्वि०, तृ० : मनावहिं ] । च० : प्र० [ (८) : मनावहिं ]

तिन्हहिं सोहाइ न अवध बधावा । चोरहिं चंद्रिनि राति न भावा ॥  
 सारद बोलि विनय मुर करही । चारहिं चार पाय लइ परही ॥  
 दो०—विपति हमारि बिलोकि बड़ि मातु करिअ सोइ आजु १ ।

राम जाहिं बन राजु तजि होइ सकल मुर काजु ॥११॥  
 मुनि मुर विनय ठाढ़ि पद्यताली । भइउं सरोज बिपिन हिम राती ॥  
 देखि देव पुनि कहहिं निहोरी । मातु तोहि नहिं थोरिउं सोरी ॥  
 मिसमय हरष रहित रघुराऊ । तुम्ह जानहु सब रामु प्रभाऊ ॥  
 जीव करम बम मुख दुख भागी । जाइअ अवध देव हित लागी ॥  
 बार बार गहि चरन संकोची । चली बिचारि बिनुष २ मति पोची ॥  
 ऊँच निवासु नीचि करतूती । देखि न सफहिं पराइ चिभूती ॥  
 आगिल काजु बिचारि बहोरी । करिहहिं चाह कुसल कधि मोरी ॥  
 हरपि हृदयँ दसरथपुर आई । जनु ग्रहदसा दुसह दुखदाई ॥  
 दो०—नामु मथरा मंदमति चेरी कैरै केरि ।

अजस पेढारी ताहि करि गई गिरा मति केरि ॥१२॥  
 दीख मथरा नगर बनावा । मंजुल मगल बाज बधावा ॥  
 पूछेसि लोगन्ह काह उद्याह । राम तिलक मुनि भा उर दाह ॥  
 करै बिचारु कुबुद्धि कुजाती । होइ अकाजु कवनि बिधि राती ॥  
 देखि लागि मधु कुटिल किराती । जिमि गवँतकइ लेउं केहि भाँति ॥  
 भरत मातु पहिं गइ बिलखानी । काअनमनि हसि कह हँसिरानी ॥  
 उतरु देइ नहिं लेइ उसाँसू । नारि चरित करि दारइ आँसू ॥  
 हँसि कह रानि मालु बड़ तोरें । दीन्हि लखन सिख असमन मोरें ॥  
 तबहुँ न बोल चेरि बड़ि पाणिनि । छाड़इ स्वास कारि जनु सौँपनि ॥  
 दो०—सभय रानि कह कहसि किन कुसल रामु महिपालु ।

लखनु मरतु रिपुदवनु मुनि मा कुबरी उर सालु ॥१३॥

१—[प्र० : काजु] । दि०, वृ०, च० : आजु [ (६) : काजु ] ।

२—[प्र० : विविध] । दि० : विबुध । वृ० : दि० । [च० : विविध] ।

कत सिख देइ हमहिं कोउ माई । गालु करब केहि कर बलु पाई ॥  
 रामहि छाडि कुसल केहि आजू । जिन्हहि जनेसु देइ जुबराजू ॥  
 भएउ कौसिलहि त्रिधि अति दाहिन । देखन गरन रहत उर नाहिन ॥  
 देखहु कस न जाइ सब सोभा । जो अग्लोकि मोर मनु छोभा ॥  
 पृथु त्रिदेम न सोचु तुम्हारे । जानित हहु बस नाहुं हमारे ॥  
 नीद बहुत प्रिय सेज तुराई । लखहु न भूप कपट चतुराई ॥  
 सुनि प्रिय बचन मलिन मनुजानी । भुक्की रानि अउ रहु अरगानी ॥  
 पुनि अस कहुँ कहसि घरफोरी । तउ घरि जीम बड़ावो तोरी ॥  
 दो०—काने खोरे कूरे कुटिल कुचाली जानि ।

तिअ त्रिसेपि पुनि चेरि कहि भरत मातु मुसुकानि ॥१४॥  
 भियबादिनि सिख दीन्हिउँ तोही । सपनेहु तो पर कोपु न मोही ॥  
 सुदिनु सुमगलशायकु सोई । तोर कहा फुर जेहि दिन होई ॥  
 जेठ रामि सेवक लघु भाई । यह दिनकर कुन रीति सुहाई ॥  
 राम तिलकु जौ सौंचेहु काली । देउँ माँगु मनमावन आली ॥  
 कौसल्या सम सब महतारी । रामहि सहज सुभाय पिआरी ॥  
 मो पर करहि सनेहु त्रिमेपी । मै करि प्रीति परीक्षा देखी ॥  
 जौ त्रिधि जनमु देइ करि छोह । होहुँ राम सिर पूत पतोह ॥  
 प्रान तैं अधिकु रामु प्रिए मोरें । तिन्हकें तिलक ब्योमु कम तोरें ॥  
 दो०—भरत सपथ तोहि सत्य कहु परिहरि कपट दुराड ।

हरप सभय तिसमउ करसि कारन मोहि सुनाउ ॥१५॥  
 एरुहि वार आस सउ पूजी । अब कछु कहव जीम करि दूजी ॥  
 फोरइ जोगु कपारु अमागा । भलेउ कहत दुख रोरहि लागा ॥  
 कहहि भूठि फुरि बात बनाई । ते प्रिय तुम्हहि करइ मैं माई ॥  
 हमहुँ कहवि अउ ठकुरसोहाती । नाहि त मौन रहन दिनु राती ॥  
 करि कुरूप त्रिधि परबस कीन्हा । बवासो लुनिअ लहिअ जो दीन्हा ॥  
 कोउ नृप होउ हमहि न हानी । चेरि छाडि अब होव कि रानी ॥

जारह जोगु सुभाउ हमारा । अनमल देखि न जाइ तुम्हारा ॥  
 ता तें फलुक वात अनुसारी । धमिअ देवि बड़ चूरु हमारी ॥  
 दो०-गूढ़ कपट प्रिय वचन सुनि तीय अधरबुधि रानि ।

सुर माया बस बैरिनिहि मुहद जानि पतिआनि ॥१६॥  
 सादर पुनि पुनि पूँछति ओही । सखीं गान मृगी जनु मोही ॥  
 तसि मति फिगी अहइ जसि भाबी । रहसी चेरि घात जनु काबी ॥  
 तुम्ह पूँछहु मै कहत टेराऊँ । धरेहु मोर परफोरी नाऊँ ॥  
 सजि प्रतीति बहु विधि गाढ़ि द्योली । अबध साइसाती तय योली ॥  
 प्रिय सिय रामु कहा तुम्ह रानी । रामहि तुम्ह प्रिय सो फुरि बानी ॥  
 रहा प्रथम अय ते दिन बीते । समउ फिरे रिपु होहि विरीते ॥  
 मानु कमल कुल पोपनिहारा । बिनु जल<sup>१</sup> जारि करै सोइ धारा ॥  
 जरि तुम्हारि चह सबति उखारी । रूँधहु करि उपाउ धर बारी ॥  
 दो०-तुम्हहि न सोचु सोहाग बल निज बस जानहु राउ ।

मन मलीन मुह मीठ नृपु राउर सरल सुभाउ ॥१७॥  
 चतुर गभीर राम महतागी । बीचु पाइ निज वात सँवारी ॥  
 पठए भातु भूप ननिआरें । राम मातु मन जानन रीरें ॥  
 सेवहि सकल सजति मोहि नीकें । गरबित भरत मातु बल पी कें ॥  
 सालु तुम्हार कौसिलहि माई । कपट चतुर नहिं होइ जनाई ॥  
 राजहि तुम्ह पर प्रेमु विसेयो । सबति सुभाउ सकइ नहिं देखो ॥  
 रचि प्रपचु मूषहि अपनार्इ । राम तिलक हित लगन धराई ॥  
 येहु कुल उचिन राम कहूँ टीका । सबहि सोहाइ मोहि सुठि नीका ॥  
 आगिल वात समुझि डर मोही । देउ दैउ फिरि सो फनु ओही ॥  
 दो०-रचि पचि कोटिक कुटिलपन कीन्हैसि कपट प्रवेधु ।

फहिसि कथा सत सबति कै जेहिं विधि बाढ़ विरोधु ॥१८॥

मावी बम प्रनीति उर आई । पूँछ रानि पुनि सपथ देवाई ॥  
 का पूँछहु तुम्ह अग्रहुँ न जाना । निज हित अनहित पमु पहिचाना ॥  
 मण्ड पाय्य दिनु सनत समाजू । तुम्ह पाई सुधि मोहि सन आजू ॥  
 खाइय पहिरिअ राज तुम्हारे । सत्य कहें नहि दोषु हमारे ॥  
 जौ असत्य कछु कहव बनाई । तौ बिधि देडहि हमहि सजाई ॥  
 रामहि तिलकु कालि जौ मण्ड ॥ तुम्ह कहे निरति बीजु निधि बण्ड ॥  
 रेख खँवाड कहौ बलु माखी । मामिनि मण्डु दूर कह माखी ॥  
 जौ सुन सहित कहु सेवकाई । तौ घर रहहु न आन उपाई ॥  
 दो०—कटू बिननहि दीन्ह दुख तुम्हहि कौसिलई देन ।

भरतु यदि गृह सेइहहि लपनु राम के नेन ॥१६॥  
 कैकयसुता सुनत कटु बानो । कहि न सकइ ब्रह्म सहमिसुबानी ॥  
 तन पसेउ रुदली जिमि कौपी । कुंगी दसन जीम तन चोपी ॥  
 कहि कहि कोटिक कष्ट कहानी । धोरजु घरहु प्रमोधिसि रानी ॥  
 कीहिसि कठिन पढ़ाइ कुपाठ । जिमि न नवइ फिरि उठठ कुपाठ ॥  
 फिरा करमु प्रिय लागि कुराली । बरिहि सराहद मानि मराली ॥  
 सुनु मथरा बात कुरि १ तोरी । दहिनि आँखि नित फरकइ मोगी ॥  
 दिन प्रति देखौ रांति कुम्पने । कहौ न तोहि मोह बस अपने ॥  
 काह करौ सखि सूप सुभाऊ । दाहिन बाम न जानौ काऊ ॥  
 दो०—अपने चलत न आजु लागि अनमल काहुक कीन्ह ।

केहि अघ एरुहि बार मोहि दैअ दुसह दुखु दीन्ह ॥२०॥  
 नेहर जनमु भरव वरु जाई । जियन न करनि सबति सेवकाई ॥  
 अरि बस दैउ जियावत जाही । मरनु नीक तेहि जीव न चाही ॥  
 दीन बचन कह बहु बिधि रानी । सुनि कुरी तिअ माया ठानी ॥  
 अस कस कहहु मानि मन उना । सुख सोहायु तुम्ह कहे दिन दूना ॥

जेहि राजर अति जनमन ताका । सेइ पडहि येहु फनु पग्गिवाका ॥  
जबतें तुमन मुना मै स्वामिनि । भूम न चागर नीद न गामिनि ॥  
पूदेचें मुनिन्ह रेश तिन्हरी राखी । भवन गुमान होहि येहु सोखी ॥  
भामिनि फगु त फरी उपाऊ । ई तुमरी सेम वग राऊ ॥  
दो०—पगो वृष पुष नान दर गरी पून पर्न त्पामि ।

फहसि मोर दुगु दगि बड़ कम न कम हिा तामि ॥२१॥  
दुखरी करि कबुली कैकेयी । कपट दुगी उर पारन देई ॥  
लखइ न रानि निछट दुगु कैसैं । चरह हरिनि तित बनिमि जैमैं ॥  
मुनन वात गुरु अंत कठोरी । देहि मनु गनु मातुर पोरी ॥  
कहइ चेरि मुधि गहइ नि नही । स्वामिनि कहिहु कथा मोहि पारी ॥  
दुइ बरदान भूष सा थाती । मोगहु आनु जुझाहु छानी ॥  
सुतहि राजु रामहि बनमासू । देहु लेहु सन ससति हुलामू ॥  
भूपति राम सगथ जब फरई । तब मोगेहु जेहि बचनु न टरई ॥  
होइ अफाजु आजु निसि बोतैं । बचनु मोर मिय मानेहु जी तैं ॥  
दो०—बड बुधातु करि पातनिनि फहेसि कोपगृह जाहु ।

काजु सँभरेहु सजग सतु सहसा जनि पतिआहु ॥२२॥  
कुचरिहि रानि प्रानप्रिय जानी । बार बार बड़ि बुद्धि बखानी ॥  
तोहि सम हितु न मोर ससारा । बहे जात कइ भइसि अधारा ॥  
जौ मिधि पुरख मनोरथ फाली । करौ तोहि चपलूतरे आली ॥  
बहु मिधि चेरिहि आठर देई । कोपमवन गउनी कैकेई ॥  
बिपति बीजु बरपा रितु चेरी । भुईं भइ कुमति केई केरी ॥  
पाइ कपट जलु अकुल जामा । भरदोउ दल दुख फल परिनामा ॥  
कोप समाजु साजि सवु सोई । राजु करत निज कुमति त्रिगोई ॥  
राउर नगर कोलाहल होई । येहु कुचालि कछु जान न कोई ॥

दो०—प्रमुदित पुर भर नारि सन सजहि सुमंगलचार ।

एक प्रविसहि एक निर्गमहि भीर भूप दग्वार ॥२३॥  
 बालसत्ता सुनि हिय हरपाही । मिलि दस पाँच राम पहि जाही ॥  
 प्रभु आदरहि प्रेमु पहिचानी । पहुँचहि कुसल सेम मृदु बानी ॥  
 फिरहि भजन प्रिय आयसु पाई । करत परसपर राम बड़ाई ॥  
 को रघुबीर सरिस ससारा । सोलु सनेहु निवाहनिहारा ॥  
 जेहि जेहि जोनि करम बम भ्रमही । तहँ तहँ ईसु देउ येह हमही ॥  
 सेवक हम स्वामी सियनाह । होउ नात येहु ओर निवाह ॥  
 अस अभिलापु नगर सब काह । कैरवमुना हृदयँ अति दाह ॥  
 को न कुसंगति पाइ नसाई । रहे न नीच मतेँ चतुराई ॥

दो०—सौंभ समय सानंद नृपु गणउ कैरई गेह ।

गवनु निदुगता निकट किए जनु धरि देह सनेह ॥२४॥  
 कोपमवन सुनि सकुचेउ राऊ । भयवम अगहुड़ परै न पाऊ ॥  
 सुरपति बसइ बौह बल जाकेँ । नरपति सकल रहहि रूख ताकेँ ॥  
 सो सुनि तिअ रिस गणउ सुखाई । देखहु काम प्रयाप बड़ाई ॥  
 सूल कुलिस असि अँगवनिशरे । ते रतिनाथ सुमन सर मारे ॥  
 समय नरेसु प्रिया पहि गएऊ । देखि दमा दुखु दारुन भएऊ ॥  
 भूमि सयन पटु मोट पुराना । दिए 'डारि तन भूषन नाना ॥  
 बुमतिहि कसि कुबेपता फाबी । अनग्रहिवातु सून जनु भावी ॥  
 जाइ निकट नृपु कह मृदु बानो । प्रानप्रिया केहि हेतु रिसानी ॥

छं०—केहि हेतु रानि रिसानि परसत पानि पतिहि नेशरई ।

मानहुँ सरोष मुअंगमामिनि विषम मंति निहारई ॥  
 दोउ वासना रसना दसन बर मरम ठाहरु देखई ।  
 तुलसी नृपति भवितव्यतावस काम कौतुक लेखई ॥

सो०—बार बार कह राउ सुमुखि सुलोचनि पिक वचनि ।

कारन मोहि सुनाउ गजगामिनि निज कोप कर ॥२५॥



अनहित तोर प्रिया केई कीन्हा । केहि दुइ सिर केहि जमु चह लीन्हा ॥  
 कहु केहि रमहि करौ नरेसु । कहु केहि नृपहि निकासौं देसु ॥  
 सकौ तोर अरि अमरौ मारी । काह कीट बपुरे नर नारी ॥  
 जानसि मोर सुभाउ बरोरु । मनु तव आनन चद चकोरु ॥  
 प्रिया प्रान सुत सरबम गोरे । परिजन प्रजा सकल बस तोरे ॥  
 जौ कहु कहौ कपटु करि तोही । भामिनि राम सपथ सत मोही ॥  
 बिहँसि माँगु मन्भावति वाता । भूपन सजहि मनोहर गाता ॥  
 धरी धुधरी समुझि जिअँ देखू । वेगि प्रिया परिहरहि कुनेखू ॥  
 दो०—यह सुनि मन गुनिसपथ बडि बिहँसि उठी मातमद ।

भूपन सजति विलांकि मृगु मनहुँ किरातिनि फद ॥२६॥  
 पुनि कह राउ सुहृद जिअँ जानी । प्रेम पुलकि मृदु मजुल बानी ॥  
 भामिनि भएउ तोर मन भावा । घर घर नगर अनद बधावा ॥  
 रामहि देउँ कालि जुवराजू । सजहि सुलोचनि मंगल साजू ॥  
 दलकि उठेउ सुनि हृदय<sup>२</sup> फठोरु । अनु छुइ गएउ पाऊ बरतोरु ॥  
 अइसिउ पीर बिहँसि तेहि<sup>३</sup> गोई । चोरनारि जिमि प्रगटि न रोई ॥  
 लखी न भूप कपट चतुराई । कोटि कुटिल मनि<sup>४</sup> गुरू पढ़ाई ॥  
 जघपि नीति निपुन नरनाहँ । भारि चरित जलनिधि अमगाह ॥  
 कपट सनेहु बड़ाइ बहोरी । बोली बिहँसि नयन मुँहु मोरी ॥  
 दो०—माँगु माँगु पे कहहु पिय कबहुँ न देहु न लेहु ।

देन कहेहु बरदान दुइ तेउ पावन सदेहु ॥२७॥  
 जानेउँ मरमु राउ हँसि कहई । तुम्हहि कोहान परम प्रिय अहई ॥  
 थाती राखि न मागिहु काऊ । तिसरि गएउ मोहि भोर सुभाऊ ॥

१—प्र० परिहरहु । दि० परिहरहि । वृ०, ३० दि० ।

२—प्र० हउ । दि० हृदय । वृ०, १० दि० ।

३—प्र० तेहि । दि० प्र० [(३) (४) (५) तेइ] । [वृ० नव] । च० प्र० ।

४—[प्र० : मनि] । दि० मनि [(५) मनि] । [वृ० . मनि] । च० . दि० ।

भूटेहु<sup>१</sup> हमहि दोसु जनि देह । दुइ कै चारि माँगि बरु २ लेह ॥  
 रघुकुल रीति सदा चलि आई । प्रान जाहुँ बरु वचनु न जाई ॥  
 नहिँ असत्य सम पातक पुजा । गिरिसम होहिँ कि कोटिक गुजा ॥  
 सत्य मूल सन सुमन सुहाए । वेद पुरान विदित मुनि<sup>३</sup> गाए ॥  
 तेहि पर राम सपथ करि आई । मुष्टन सनेह अरुधि रुराई ॥  
 बात दृढ़ाइ कुमति हँसि बोली । कुमन कुनिहँगकुलह जनु सोली ॥  
 दो०—मूप मनोरथ सुमग वनु सुख सुनिहग समाजु ।

मिल्लिनि जिमि छाइन चहति वचनु मयकर बाजु ॥२८॥  
 सुनहुँ प्रानप्रिय भावत जी का । देहु एक बर भरतहि टीका ॥  
 माँगौ दूसर बर कर जोरी । पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी ॥  
 तापस बेप विसेपि उदासी । चोदह बरिस रामु बनन सी ॥  
 मुनि मृदु वचन मूप हिय साकू । सखिरु छुअत निरुल जिमि कोकू ॥  
 गएउ सहमि नहिँ फलु कहि आवा । जनु सचान बन भूषेट लावा<sup>४</sup> ॥  
 विनरन भएउ निपट नरपालू । दामिनि हनेउ मनहुँ तरु तालू ॥  
 माथे हाथ मूँदि दोउ लोचन । तनु धरि सोचु लाग जनु सोचन ॥  
 मोर मनोरथु सुरतरु फूला । फरत करिनि जिमि हतेउ समूला ॥  
 अवध उजारि कीन्ह कैनेई । दौन्हिसि अचन त्रिपति के नेई ॥  
 दो०—कवने अवसर का भएउ गएउ नारि बिस्वास ।

जोग सिद्धि फल समय जिमि जतिहि अविद्या नास ॥२९॥  
 एहि विवि राउ मनहिँ मन मँखा । देखि कुमाति कुमति मनु मँखा ॥  
 मतु कि राउर पूत न होही । आनेहु मोल बेसाहि कि मोही ॥  
 जो सुनि सरु अस लागु तुम्हारे । काहे न बोलहु वचनु सँभारे ॥

१—[प्र० झुड्ड] । दि०, १०, च० भूटेड्ड ।

२—प्र० बरु । [दि० (३) म०, (४) (५) (५३) किन] । [उ०, च० मडु] ।

३—प्र० मुनि । दि० प्र० । [उ० मनु] । च० प्र० [ ( ) मनु] ।

४—[ (६) मैं वह ब्रह्मानी नहीं है ]

देहु उतर गरु फाए कि नही । सयसंध तुम्ह समुत्त न गरी ॥  
 देन कहेहु गव जनि बर देन । तजहु सय जग अपननु लेह ॥  
 सत्य साराहि कहेहु बर देना । जानेहु लेहहि मांगि चमेना ॥  
 सिवि दधीचि बलि जो कहु गाथा । तनु धनु तजेउ बचा पनु राधा ॥  
 अति कहु बचा कहति कैरेई । मानहु तीन जग पर देई ॥  
 दो०—धरम धरधर धीर धरि नयन उघारे राय ।

सिर धुनि लीन्हि उसस असि मारेगि मोहि उठाय ॥ ३० ॥  
 आगे दीति जाति रिस भारी । मनहु राय तरवारि उगारी ॥  
 मूठि कुतुब्धि धार निद्रुगई । घरी कूचरी सानर बनाई ॥  
 लखी महीप बराल फठोरा । सत्य कि जीयनु लेहहि मोरा ॥  
 बोले राउ फठिन धरि छाती । बानी सचिनष तामु सोहाती ॥  
 प्रिया बचा कस कहसि कुमातो । भीर प्रनीति प्रीति धरि हाती ॥  
 मोरें भानु राम दुइ आँखी । सत्य कहीं करि सफर साखी ॥  
 अवसि दहु मै पठ-व प्राता । अइहहि बेगि मुनत दोउ भ्राता ॥  
 सुदिनु सोधि सनु साजु सजाई । देउं भरत कहु राजु धनाई ॥  
 दो०—लोभु न रामहि राज कर बहुत भरत पर प्रीति ।

मै बड़ छोट बिचारि जिअँ करत रहेउं नृपनीति ॥ ३१ ॥  
 राम सपथ सत कहौ सुभाऊ । राम मातु कछु कहेउ न काऊ ॥  
 मै सबु कीन्ह तोहि बिनु पूर्ण । तेहि तें परेउ मनोरथ छूँ ॥  
 रिस परिहर अव मंगल साजू । कछु दिन गएँ भरत जुनराजू ॥  
 एकहि बात मोहि दुखु लागी । बर दूसर असमजस मागी ॥  
 अजहूँ हृदय जगत तेहि आँचा । रिस परिहास कि साँचेहु साँचा ॥  
 कहु तजि रोपु राम अपराधू । सबु कोउ कहइ राम सुठि साधू ॥

१—[प्र०, दि०, वृ० नरत] । च० जरति [ (न) नरत ] ।

२—प्र० कुबेरि घर सान । दि०, वृ० च० कुबरी सान ।

३—प्र० भीर । दि० प्र० [ (३) (४) (५) भीर ] । [वृ० भीर] । च० प्र० ।

तुहँ सराहसि करसि सनेह । अच सुनि मोहि भएउ संदेह ॥  
जासु सुभाउ अरिहि अनुकूला । सो किमि करहि मातु प्रतिकूला ॥  
दो०—प्रिया हास रिस परिहरहि माँगु विचारि त्रिवेकु ।

जेहि देखौ अच नयन भरि भरत राज अभिषेकु ॥३२॥  
जिअइ मीन बरु बारि बिहीना । मनि बिनु फनिकु जिअइ दुख दीना ॥  
कहौ सुभाउ न छल मन माहीं । जीवनु मोर राम बिनु नाहीं ॥  
समुझि देखु जिअँ प्रिया प्रवीना । जीवनु राम दरस आधीना ॥  
सुनि मृदु वचन कुमति अति जरई । मनहुँ अनल आहुनि घृत परई ॥  
कहइ कहु किन कोटि उपाया । इहाँ न लागिहि राउरि माया ॥  
देहु कि लेहु अजसु करि नाहीं । मोहि न बहुत प्रपंच सोहाहीं ॥  
राम साधु तुम्ह साधु सयाने । राम मातु भलि सब पहिचाने ॥  
जस-कौसिला मोर भल ताका । तस फलु उन्हहि देउँ करि साका ॥  
दो०—होत प्रातु मुनि बेप धरि जौं न रामु बन जाहिं ।

मोर मरनु राउर अजसु नृप समुझिअ मन माहिं ॥३३॥  
अस कहि कुटिल भई उठि ठाढ़ी । मानहुँ रोप तरगिनि बाढ़ी ॥  
पाप पहार प्रगट भइ सोई । मरी क्रोध जल जाइ न जोई ॥  
दोउ बर कूल कठिन हठ धारा । भवँर कूबरी वचन प्रचारा ॥  
दाहत मू० रूप तरु मूला । चली बिपति बारिधि अनुकूला ॥  
लखी नरेस वात सब साँची । तिअ/मिस मीचु सीस पर नाची ॥  
गहि पद विनय कीन्ह बैठाड़ी । अनि दिनकर कुल होसि कुठारी ॥  
माँगु माथ अचहीं देउँ तोही । राम बिरह जनि मारसि मोही ॥  
राखु राम कहूँ जेहिं तेहिं गाँतो । नाहिं तजरिहि जनमु भरि छाती ॥  
दो०—देखी व्याधि असाधि नृप परेउ धरनि धुनि माथ ।

कहत परम आरत वचन राम राम रघुनाथ ॥३४॥

व्याकुल राउ सिथिल सब गाता । करिनि कलपतरु मनहु निपाता ॥  
 कंटु सूख मुख आव न बानी । जनु पाठीनु दोनु त्रिनु पानी ॥  
 पुनि कह कटु कठोरु कैरेई । मनहु घाय महु माहुरु देई ॥  
 जौ अतहु अस करतवु रहेऊ । भंगु मागु तुम्ह केहि बल कहेऊ ॥  
 दुइ कि होहि एक समय भुयाला । हँसब ठाढ़ फुलाउम गाला ॥  
 दानि कहाउब अरु कृपनाई । होइ कि खेम कुसल रौताई ॥  
 छोडहु बचनु कि धीरजु धरहू । जनिअबला जिमि करुना करहू ॥  
 तनु तिअ तनय घामु धनु धरनी । सत्यसध कहु तृन सम बरनी ॥  
 दो०—मरम बचन सुनि राउ कह कहु कछु दोषु न तोर ।

लागेउ तोहि पिसाच जिमि कालु कहावत मोर ॥३५॥  
 'बहत न भरत भूपतहि१ मोरें' । विधिवस कुमति बसी जिअें तोरें ॥  
 सो सनु मोर पाप परिनामू । भएउ कुठाहर जेहि विधि बामू ॥  
 सुबस बसिहि फिरि अवध सुहाई । सब गुन धाम राम प्रभुताई ॥  
 करिहहि माइ सकल सेवकाई । होइहि तिहुं पुर राम बड़ाई ॥  
 तोर बलकु मोर पडिताऊ । मुणहु न मिटिहि न जाइहि काऊ ॥  
 अथ तोहि नीक लाग करु सोई । लोचन ओट बेडु मुहु गोई ॥  
 जव लागि जिअौ कहै कर ओरी । तब लागि जनि कछु कहसि बहोरी ॥  
 फिरि पछितैहसि अत अभागी । मारसि गाइ महारू२ लागी ॥  
 दो०—परेउ राउ कहि कोटि विधि काहे करसि निदानु ।

कपट सयानि न कहति कछु जागति मनहु मसानु ॥३६॥  
 राम राम रट भिन्नल भुआलू । जनु बिनु पंख विहग बेहालू ॥  
 हृदय मनाव मोरु बनि होई । रामहि जाइ कहइ जनि कोई ॥  
 उदठ फाहु जनि रवि रघुकुल गुर । अथ विनोकि सून होइहि उर ॥

१—प्र० : भूप दि । [ दि०, तृ० : भूपर ] । च० • प्र० ।

२—प्र० : महारू । [ दि० : महारू ] । [ तृ० : महारू ] । च० • प्र० ।

मूप प्रीति कैकई . कठिनाई । उभय अवधि विधि रची बनाई ॥  
 बिलपत नृपहि भएउ भिनुसारा । बीना बेनु संख धुनि द्वारा ॥  
 पढ़हि माट गुन गावहि गायक । सुनत नृपहि जनु लागहि सायक ॥  
 मंगल . सकल सोहाहि न कैसें । सहगामिनिहि विभूपन जैसें ॥  
 तेहि निसि नींद परी नहि काहू । राम दरस लालसा उधाहू ॥  
 दो०—द्वार भीर सेवक सचिव कहहि उदित रवि देखि ।

जागेउ<sup>१</sup> . अजहुँ न अवघपति कारनु कवनु बिसेपि ॥३७॥  
 पछिले<sup>२</sup> पहर भूपु नित जागा । आजु हमहि बड़ अचरजु लागा ॥  
 जाहु सुमंत्र जगावहु जाई । कीजिअ काजु रजायेसु पाई ॥  
 गए सुमंत्रु तब राउर माहीं । देखि भयावन जात डेराहीं ॥  
 घइ खाइ जनु जाइ न हेरा । मानहुँ बिपति बिपाद बसेरा ॥  
 पूछे कोउ न उत्तर देई । गए जेहि भवन मूप कैकई ॥  
 कहि जय जीव बैठ सिर नाई । देखि मूप गति गएउ सुखाई ॥  
 सोच बिकल बिबरन भहि परेऊ । मानहुँ कमल मूलु परिहरेऊ ॥  
 सचिउ समीत सकइ नहि पूछो । बोली असुमभरी सुम छूडी ॥  
 दो०—परी न राजहि नींद निसि हेतु जान जगदीसु ।

रामु रामु रटि मोरु किय कहइ न मरसु महीसु ॥३८॥  
 आनहु रामहि बेगि बोलाई । समाचार तब पूछेहु आई ॥  
 चलेउ<sup>३</sup> सुमंत्रु राय रुख जानी । लखी कुचालि कीन्हि कछु रानी ॥  
 सोच बिकल मग परइ न पाऊ । रामहि बोलि कहहि का राऊ ॥  
 उर धरि धीरजु गएउ दुआरें । पूछहि सखल देखि मनु मारें ॥  
 समाधानु करि सो सब ही का । गएउ जहाँ दिनकर कुल टीका ॥  
 रामु सुमंत्रहि आवत देखा । आदरु कौन्ह पिता सम लेखा ॥

१—प्र० : जागेउ । दि० । प्र० [ (४) (५) : जागे ] । [ व० : जागे ] । च० : प्र० ।

२—[ प्र० : चलेउ ] । दि०, व०, च० : चलेउ ।

निराखि यदनु कहि मूप रजाई । रघुजुलानीपहि चनेउ लेगई ॥  
 राम जुभाँति सचिउ सँग जाहीं । देखि लोग जहँ तहँ गिनगहीं ॥  
 दो०—जाइ दोख रघुजममनि नरपनि निपट जुमानु ।

सहमि परेउ लखि सिंधिनिहि मनहुं वृद्ध गन्तरानु ॥३६॥  
 सुखहिं अधर जाइ सनु अगु । मनहुं दीन मनिहीन मुअगु ॥  
 सरूप समीप दीखि कैरई । मानहु मीचु घरी गनि लेई ॥  
 करनामय मृदु राम मुभाऊ । प्रथम दीख दुख सुना न काऊ ॥  
 तदपि धीर धरि समउ विचारी । पँछी मधुर वचन महतारी ॥  
 मोहि फटु मातु तात दुख फारनु । करिअ जननु जेहि होइ निवारनु ॥  
 सुनहु राम सयु फारनु एह । राजहि तुम्ह पर बहुत सनेह ॥  
 देन कहैन्हि मोहि दुख बरदाना । माँगेउँ जो कछु मोहि सोह'ना ॥  
 सो सुनि भएउ मूप उर सोचू । छाडि न सकहि तुम्हार सँकोचू ॥  
 दो०—सुन सनेहु इत वचनु उत सकट परेउ नरेसु ।

सकहु त आयेसु धरहु सिर भेटहु कठिन कलेसु ॥४०॥  
 निधरक बेठि कहइ फटु बानी । सुनत कठिनता अति अकुलानी ॥  
 जीम कमान वचन सर नाना । मनहुं ग्रहिषु मृदु लच्छ समाना ॥  
 जनु कठोरपनु धरे सरीरु । सिखइ धनुषविद्या बर बीरु ॥  
 सबु प्रसगु रघुपतिहि सुनाई । बेठि मनहुं तनु धरि निदुराई ॥  
 मन मुमराइ भानुजुल भानु । राम सहज आनर विधानू ॥  
 बोले वचन गिनत सब दूपन । मृदु मजुल जनु बाग विमूपन ॥  
 सुनु जननी सोइ सुनु बडमागी । जो पितु मातु वचन अनुगामी ॥  
 तनय मातु पितु तोपनिहारा । दुर्लभ जननि सकल ससारा ॥  
 दो०—सुनिगत मिलनु बिसेषि बन सबहि भाँति हिन मोर ।

तेहि परः पितु आयेसु बहुरि समत जननी तोर ॥४१॥

भरतु प्राण प्रिय पावहिं राजू । विधिसबविधि मोहिसनमुख आजू ॥  
 जौ न जाउँ वन अइसेहुँ काजा । प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा ॥  
 सेगहिं अरैडु कलपतरु त्यागी । परिहरि अमृतु लेहिं त्रिपु माँगी ॥  
 तेउ न पाइअ<sup>१</sup> समउ चुकाहीं । देखु विचारि मातु<sup>२</sup> मन माहीं ॥  
 अथ एकु दुखु मोहि बिसेषी । निगट विकल नरनायकु देखी ॥  
 थोरहिं बान पितहि दुख भारी । होत<sup>३</sup> प्रतीति न मोहि महतारी ॥  
 राउ धीरु गुन उदधि अगाधु । मा मोहि तैं कहु वड़ अपराधू ॥  
 जातैं<sup>४</sup> मोहि न कहत कहु राऊ । मोरि सपथु तोहि कहु सति भाउ ॥  
 दो०—सहज सरल रघुवर वचन कुमति कुटिल करि जान ।

चलइ जौक जल<sup>१</sup> वरु गति जघपि सलिलु समान ॥ ४२ ॥  
 रहसी रानि राम रुख पाई । बोली कपट सनेहु जनाई ॥  
 सपथ तुम्हार मात वड़ आना । हेतु न दूसर मैं कहु जाना ॥  
 तुम्ह अपराध जोगु नहिं ताता । जननी जनक बधु सुखदाता ॥  
 राम सत्य सबु जो कहु कहहू । तुम्ह पितु मातु वचन रत अहहू ॥  
 पितहि बुझाइ कहहु बलि सोई । चौथेंपन जेहिं अजसु न होई ॥  
 तुम्ह सम सुअन सुकृत जेहिं दीन्है । उचित न तापु निरादरु कीन्है ॥  
 लागहिं कुमुख बवन सुभ कैमे । मगह गयादिक तीरथ जैसे ॥  
 रामहि मातु वचन सब भाए । निमि सुरसरि गत सलिल सुहाए ॥  
 दो०—गइ मुख्या रामहि मुमिरि नृप फिरि करबट लोन्हि ।

सचिव राम आगमनु कहि विनय समय सम कीन्हि ॥ ४३ ॥  
 अर्वाविष अकनि रामु पगु धारे । धौरे धीरजु तब नयन उधारे ॥  
 सचिव सँभारि राउ बैठारे । चरन परत नृप रामु निहारे ॥  
 लिए सनेह विकल उर लाई । गइ मनि मनहुँ फनिक फिरि पाई ॥

१—प्र० : तेउ न पाइअ । [ दि०, तु० : तेउ न पाइ अस्त ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : जानैं । दि० : प्र० [ (४) (५) : तातैं ] । [ तु० : तातैं ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : जव । दि० : प्र० [ (१) : तिमि ] तु०, च० : प्र० ।



रामहि चितइ रहेउ नरनाह । चला बिलोचन गारि प्रयाह ॥  
 सोऊ बिअस फलु कहइ न पारा । हृदयँ लगावत बारहि धारा ॥  
 बिधिहि मनाव राउ मन माहीं । जेहिं रघुनाथ न कानन जाहीं ॥  
 सुमिरि महेसहि कहइ निहोरी । निनती सुनहु सत्रासिय मोरी ॥  
 आसुनोप तुम्ह अवदर दानी । आरति हरहु दीन जनु जानी ॥  
 दो०—तुम्ह प्रेरक सत्रकँ हृदयँ सो मति रामहि देहु ।

बचनु मोर तजि रहहिं पर परिहरि सीलु मनेहु ॥४४॥  
 अजसु होउ जग सुजमु नसाऊ । नरक परौ बरु सुखुर जाऊ ॥  
 सय दुख दुसह सहामउ मोहीं । लोचन थोट रामु अनि होहीं ॥  
 अस मन गुनइ राउ नहिं चोला । पीपर पात सरिस मनु डोला ॥  
 रघुपति पितहि प्रेम बस जानी । पुनि कछु कहिहिं मातु अनुमानी ॥  
 देस फाल अवसर अनुसारी । बोले बचन बिनोत बिचारी ॥  
 तात कहौ नछु करौ ढिठाई । अनुचिनु छमब जानि लरिकाई ॥  
 अति लबु बात लागि दुखु पावा । काहु न मोहि कहि प्रथम जनावा ॥  
 देखि गोसाइहि पूँछिउँ माथा । सुनि प्रपणु भए सीतल गाथा ॥  
 दो०—मगल समय सनेह बस सोचु परिहरिअ तान ।

आयेसु देइअ हरपि हिय कहि पुलके प्रभु गात ॥४५॥

धन्य जनमु जगतीतल तासू । पितहि प्रबोदु चरित सुनि जासू ॥  
 चारि पदारथ करतल ताकँ । प्रिय पितु मातु प्रान सम जाकँ ॥  
 आयेनु पालि जनम फलु पाई । अइहौं बेगिहि होउ रजाई ॥  
 बिदा मातु सन आवौ माँगौ । चलिहौं बनहि बहुरि पग लागी ॥  
 अस कहि रामु गगनु तब कीन्हा । भूप सोऊवम उतरु न दीन्हा ॥  
 नगर व्यापि गइ बात सुतीछी । छुअत चढ़ी जनु सय तन चीछी ॥  
 सुनि भए बिक्ल सकल नर नारी । बेलि निटय जिमि देखि दवारी ॥  
 जो जहँ सुनइ घुनइ सिरु सोई । बड़ विपादु नहिं धीरजु होई ॥

दो०—मुख सुखाहिं लोचन सखहिं सोकु न हृदयँ समाइ ।

मनहुँ करुन रस कटकई<sup>१</sup> उतरी अवध बजाइ ॥४६॥  
मिलेहि माँझ विधि बात वेगारी । जहँ तहँ देहिं कैरइहिं गारी ॥  
येहि पपिनिहि बूझि का परेऊ । छाइ भवन पर पावकु धरेऊ ॥  
निज कर नयन फाड़ि चह दीखा । डारि सुधा बिपु चाहति शीखा ॥  
कुटिल कठोर कुबुद्धि अमागी । भइ रघुवंस बेनु बन आगी ॥  
पालव बैठि पेड़ु येहि काटा । सुख महुँ सोक ठाटु धरि ठाटा ॥  
सदा रामु येहि प्रान समाना । कारन कवन कुटिलपनु ठाना ॥  
सत्य कहहिं कवि नारि सुभाऊ । सत्र विधि अगमु अगाध दुराऊ ॥  
निज प्रतिबिंबु चरकु गहि जाई । जानि न जाइ नारिगति भाई ॥  
दो०—काह न पावकु जारि सरु का न समुद्र समाइ ।

का न करइ अबला प्रबल केहि जग कालु न खाइ ॥४७॥  
का सुनाइ विधि काह सुनाया । का देखाइ चह काह देखावा ॥  
एक कहहिं भलु भूप न कीन्हा । बरु विचारि नहिं कुमतिहि दीन्हा ॥  
जो हठि मएउ सकल दुख भाजनु । अबला विवस जानु गुनु गा जनु ॥  
एक धरम परमिति पहिचाने । नृपहि दोसु नहिं देहिं सयाने ॥  
सिधि दधीचि हरिचंद्र कहानी । एक एक सन कहहिं बखानी ॥  
एक भरत कर संमत कहहीं । एक उदास भाय सुनि रहहीं ॥  
कान भूँदि कर रद गहिं जीहा । एक कहहिं येह बात अलीहा ॥  
सुकृत जाहिं अस कहत तुन्हारे । राम भरत कहूँ परम<sup>२</sup> पिआरे ॥  
दो०—चटु चवइ<sup>३</sup> बरु अमल कन सुधा होइ विष तूल ।

सपनेहुँ कबहुँ न करहिं कछु भरत राम प्रतिकूल ॥४८॥  
एक बिधातहि दृपन देहीं । सुधा देखाइ दीन्ह बिपु जेहीं ॥

१—[प्र० : बटक लेश ] । [ द्वि० : बटक ] । 'रु०, च० : बटकरं ।

२—प्र० : परम । [ द्वि०, रू० : प्रान ] । च० : प्र० [ (८) : प्रान ] ।

३—प्र० : चवइ । द्वि० : प्र० [ (४) (५) : चुवइ ] [ रू० : चुवइ ] । च० : प्र० ।

खरभरु नगर सोखु सब काह । दुसह दाहु उर मिटा उद्याह ॥  
 बिरबधू कुलमान्य जठेरी । जे प्रिय परम केई केरी ॥  
 लगी देन सिख सीखु सराही । बचन बान सम लागहि ताही ॥  
 भरतु न मोहि प्रिय राम समाना । सदा कहहु येहु सबु वगु जाना ॥  
 करहु राम पर सहज सनेह । केहि अपराध आजु बन देह ॥  
 कबहुँ न निषहु सबति आरेसू । प्रीति प्रतीति जान सबु देसू ॥  
 कौसल्या अब काह बिगारा । तुम्ह जेहि लागि बज्र पुर पारा ॥  
 दो०—सीय कि प्रियसंगु परिहरिहि लखनु कि रहिहाह धाम ।

राजु कि भूजव भरत पुर नृप कि जिइहि बिनु राम ॥४२॥  
 अस विचारि उर छाडहु कोह । सोक रुलरु कोटि जनि होह ॥  
 भरतहि अवस देहु जुबराजु । कानन काह राम कर काजु ॥  
 नाहिंन राम राज कें भूखे । धरम धुरीन प्रिय रस खूखे ॥  
 गुर गृहँ बसहुँ रामु तजि गेह १ नृप सन अस बरु दूसर लेह ॥  
 जौ नहिं लगिहुँ कहैं हमारें । नहिं लागिहि नछु हाथ तुम्हारे ॥  
 जो परिहास कीन्ह कछु होई । तौ कहि प्रगट जनावहु सोई ॥  
 राम सरिस सुत कानन जोगू । काह कहिहि सुनि तुम्ह कहु लोगू ॥  
 उठहु बेगि सोइ नरहु उपाई । जेहि बिधि सोखु बलकु नसाई ॥  
 छ०—जेहि भाँति सोखु कलकु जाइ उपाइ करि कुल पालही ।

हठि फेर रामहि जात बन जनि वात दूसरि चालही ॥

जिमि भानु बिनु दिनु प्रान बिनु तनु चद बिनु जिमि जामिनी ।

तिमि श्रवध तुलसीदास प्रभु बिनु समुझि पौ जिअँ भामिनी ॥

सो०—सखिन्ह सिखायनु दीन्ह मुनन मधुर परिनाम हित ।

तेहि कछु कान न कीन्ह कुटिल प्रयोधी कूयरी ॥५०॥

उतरु न देह दुसह रिस रुखी । मृगिन्हचितव अनु बाधिनि मूनी ॥

व्याधि असाधि जानि तिन्ह त्यागी । पत्नी कहत मतिमद अभागी ॥  
 राजु करत येहि दैअ बिगोई । कीन्हैसि अस जस करइ न कोई ॥  
 येहि विधि बिलपहि पुर नर नारी । देहि कुचालिहि कोटिक गारी ॥  
 जरहि विषम जर लेहि उसासा । कवनि राम बिनु जीवन आसा ॥  
 विपुल बियोग प्रजा अकुलानी । जनु जलचर गन सूखत पानी ॥  
 अति विषाद बस लोग लोगार्ह । गए मातु पहि रामु गोसाई ॥  
 मुख प्रसन्न चित चौगुन चाऊ । मिटा<sup>१</sup> सोनु जनि राखइ राऊ ॥  
 दो०—नव गयंदु रघुवीर मनु राजु अलान समान ।

छूट जानि बनगवनु सुनि उर अनंदु अधिकान ॥५१॥  
 रघुकुल तिलक जोरि दोउ हाथा । मुदित मातु पद नापउ माथा ॥  
 दीन्हि असीस लाह उर लीन्है । भूपन बसन निद्यावरि कीन्है ॥  
 बारवार मुख चुंनति माता । नयन नेह जलु पुलकिन गाता ॥  
 गोद राखि पुनि हृदय लगाए । सवत प्रेम रस पयद सुहाए ॥  
 प्रेमु प्रमोदु न कछु कहि जाई । रंक धनद पदवी जनु पाई ॥  
 सादर सुंदर वदनु निहारी । बोली मधुर बचन महतारी ॥  
 कहहु तात जननी बलिहारी । कबहिं लगन मुद मंगलकारी ॥  
 सुकृत सील सुख सीव सुहाई । जनम लाभ कह अवधि अवाई ॥  
 दो०—जेहि चाहत नर नारि सब अति आरत येहि भौंति ।

जिमि चातक चातकि त्रिपित वृष्टि सरद रितु स्वाति ॥५२॥  
 तात जाउँ बलि बेगि नहाह । जो मन भाव मधुर कछु खाह ॥  
 पितु समीप तब जाएहु मैया । भइ बड़ि बार जाइ बलि, मैया ॥  
 मातु वचन मुनि अति अनुकूला । जनु सनेह मुरतरु के फूला ॥  
 सुख मकरंद भरे श्रियमूला । निरखि राम मनु भवैरु न मूला ॥  
 धरम धुरीन धरम गति जानी । कहेउ मातु सन अति मृदु बानी ॥

पिता दीन्ह मोहि कानन राजू । जहँ सब भौंति मोर बड़ काजू ॥  
 आयेसु देहि मुदित मन माता । जेहिँ मुद मंगल कानन जाता ॥  
 जनि सनेह बस डरपसि भोरें १ । आनँद अत्र अनुग्रह तोरे ॥  
 दो०—वरष चारि दस विषिन बसि करि पितु वचन प्रमान ।

आइ पाय पुनि देखिहौं मनु जनि करसि म्लान ॥२३॥  
 वचन विनीन मधुर रघुबर के । सर सम लगे मातु उर करके ॥  
 सहमि सूखि सुनि सीतलि बनी । जिमि जवास परें पावस पानी ॥  
 कहि न जाइ कछु हृदयँ दिपादू । मनहुँ मृगी सुनि केहरि नादू ॥  
 नयन सजल तन थरथर कोपी । मौजहि खाइ मीन जनु मापी ॥  
 धरि धीरजु सुन वशु निहारी । गद्गद बचन कहति महतारी ॥  
 तात पितहि तुम्ह प्रान पिआरे । देखि मुदित नित चरित तुम्हारे ॥  
 राज देन कहुँ सुम दिन साधा । कहेउ जान बन केहि अपराधा ॥  
 तात सुनावह मोहि निदानू । को दिनकर कुल मण्ड कृसानू ॥  
 दो०—निरखि राम रुख सचिवसुन कारनु कहेउ बुझाई ।  
 सुनि प्रसंगु रहि मूक जिमि दसा वरनि नहि जाइ ॥२४॥

राखि न सनइ न कहि सक जाह । दूहैं भांति उर दारुन दाह ॥  
 लिखत सुधाकर गा लिखि राहू । विधि गति वाम सदा सब काह ॥  
 धरम सनेह उभय मत घेरी । भइ गति साँग छबुंदरि केरी ॥  
 राखौ सुनहि करौ अनरोधू । धामु जाइ अरु बहु विरोधू ॥  
 बहुरि समुझि तिअ धामु सयानी । रामु भरतु दोउ सुन सम जानी ॥  
 सरल सुभाउ राम महतारी । बोली वचन धीर धरि भारी ॥  
 तात जाउँ बलि कीन्हहु नीचा । पितु आयेसु सब धरम क टीसा ॥  
 दो०—राज देन कहि दीन्ह बन मोहि न सो दुख लेसु ।  
 तुम्ह धिनु भरतहि मूर्खतिहि प्रजहि प्रचंड कतेसु ॥२५॥

जौ केवल पितु आयेसु ताता । तौ जनि जाहु जानि बड़ि माता ॥  
 जौ पितु मातु कहैउ बन जाना । तौ काननु सन अवय समाना ॥  
 पितु बन्देव मातु बनदेगी । सग मृग चान सरोरुह सेवी ॥  
 अनहु उचिन नृपहि बनगसु । वय त्रिलोकि हियँ होइ हरीसु ॥  
 बड़भागी बन अवय अभगो । जौ रघुनमतिलकु तुम्ह त्यागी ॥  
 जौ सुन कहौ सग मोहि लेहू । तुम्हरे हृदयँ होइ सदेह ॥  
 पूत परम प्रिय तुम्ह सगही कैं । प्रान प्रान के जीवन जी कैं ॥  
 ते तुम्ह कहहु मातु बन जाऊँ । मैं सुनि बचन बैठि पढ़नाऊँ ॥  
 दो०—येह निचारि नहि करौ हठ मूँठ सनेह बढ़ाइ ।

मानि मातु कर नात बलि सुति बिसरि जनि जाइ ॥५६॥  
 देव पितर सन तुम्हहि गोसाईं । राखहुँ पलक नयन की नाई ॥  
 अविधि अबु प्रिय परिजन मीना । तुम्ह करनाकर धरम धुरीना ॥  
 अस विचारि सोइ करहु उपाई । सबहि जिअंत जेहि भेंटहु आई ॥  
 जाहु सुखेन बनहि बलि जाऊँ । करि अनाथ जनपरिजन गाऊँ ॥  
 सन कर आजु सुकृत फल बीना । भएउ करालु कालु विपरीता ॥  
 बहु विधि बिलपि चरन लगानो । परम अभागिनि आपुहि जानी ॥  
 दारुन दुसह दाहु उर व्यापा । वरनि न जाहि बिलप फलापा ॥  
 राम उठाई मातु उर लाई । कहि मृदु बचन बहुरि समुझाई ॥  
 दो०—समाचार तेहि समय सुनि सीय उठी अकुनाइ ।

जाइ सासु पद कमल जुग बदि बैठि सिरु नाइ ॥५७॥  
 दीन्हि असीस सासु मृदु बानी । अति मुकुमारि देखि अकुल ने ॥  
 बैठ नमित मुख सोचति सीता । रूप रासि पनि प्रेम पुनीता ॥  
 चलन चहत बन जीवननाथू । केहि सुकृनी सन होइहि साथू ॥  
 की तनु प्रान कि केवल प्राना । निधि करतबु कछु जाइ न जाना ॥

चारु चान नख लेखति धरनी । नूपुर मुम्बर मधुर कपि वरनी ॥  
 मनहुँ प्रेम बस निनी करही । हमहि सीय पद जनि परिहरही ॥  
 मजु त्रिलोचन मोचत बारी । वोनी देखि भ्राम महतारी ॥  
 तात सुनहु सिय अति सुसुमारी । सासु ससुर परिजनहि पित्रारी ॥  
 दो०—पिता जनक भूपालमनि ससुर भानुकुल भानु ।

पति रबिगुल कैरव विपिन चिनु गुन रूप निगानु ॥५८॥  
 मैं पुनि पुत्रनधू भिय पाई । रूपरासि गुन सील मुहाई ॥  
 नयन पुतरि करि प्रीति बढ़ाई । राखेउँ प्रान-जानकिहि लाई ॥  
 कलपर्बाल जिमि बहु त्रिधि लाली । सींचि सनेह सलिल प्रतिपाली ॥  
 फूलत फलत भएउ त्रिधि बामा । जानि न जाइ काह परिनामा ॥  
 पलंग पीठ तजि गोद हिंडोरा । सिय न दीन्ह पगु अवनि कठोरा ॥  
 जिअनमूरि जिमि जोगवन रहऊँ । दीप बाति नहिं टारन कहऊँ ॥  
 सोइ सिय चलन चहति बन साधा । आयेसु काह होइ श्रुनाथा ॥  
 चद त्रिरन रस रसिक चकोरी । रनि रूप नयनसरइ किमि जोरी ॥  
 दो०—करि केहरि निसिचर चरहिं दुष्ट जनु बन मूरि ।

बिष बाटिका कि सोह सुत सुभग सजीयनि मूरि ॥५९॥  
 बन हित कोल किरात किमोरी । रची विरचि बिषय सुख भोरी ॥  
 पाहन कृमि जिमि कठिन सुभाऊ । तिन्हहिं कलेसु न कानन काऊ ॥  
 कै तापस तिम्र कानन जोगू । जिन्ह तप हेतु तजा सन भगू ॥  
 सिय बन बसिहि तात केहि भांनो । बित्र लिखिन रूपि देखि डेराती ॥  
 सुरसर सुभग बनज बन चारी । बाबर जोगु कि हसकुमारी ॥  
 अस बिचारि जस आयेसु होई । मैं सिख देऊँ जानकिहि सोई ॥  
 जौ सिय भवन रहइ कह अबा । मोहि कहँ होइ बहुत अवलया ॥  
 सुनि श्रुवीर मातु प्रिय बानी । सील सनेह सुधा जनु सानो ॥  
 दो०—कहि प्रिय बवन विवेकमय कीन्ह मातु परितोष ।

लगे प्रबोधन जानकिहि प्रगटि विपिन गुन दोष ॥६०॥

मातु समीप कहत सजुचार्यो । बोलै समउ समुझि मन माहीं ॥  
 राजकुमारि सिखावनु सुनहु । ग्रानि भॉति जिअँ जनि कछु गुनहु ॥  
 आपन मोर नीक जौ चहहु । वचनु हमार मानि गृह रहहु ॥  
 आयेसु मोर सासु सेववाई । सत्र त्रिधि भामिनि भजन भनाई ॥  
 येहि तैं अधिगु धामु नहिं दूजा । सादर सासु समुद्र पद पूजा ॥  
 जय जय मातु करिहि सुधि मोरी । होइहि प्रेम निजल मति भरी ॥  
 सत्र सत्र तुम्ह कहि कथा पुरानो । सुंदरि समुझाएहु मृदु बानी ॥  
 कहौं सुभय सपथ सत मोही । सुमुखि मातु हित राखौ तोही ॥  
 दो०—गुरु श्रुति समत धरम फलु पाइअ निनिहिं कलेस ।

हठ बस सत्र संकट सहे गानव नहुष नरेस ॥६१॥  
 मैं पुनि करि प्रवान<sup>१</sup> पितु गानी । बेगि फिरव सुनु सुमुखि सयानी ॥  
 दिवस जात नहिं लागिहि बारा । सुंदरि सिखावनु सुनहु हमारा ॥  
 जौं हठ काहु प्रेमजस धामा । तौ तुम्ह दुखु पाउअ परिनामा ॥  
 काननु कठिन भयकरु भारी । धीर धामु हिम बारि बयारी ॥  
 बस कँक भग कौंकर नाना । चलव पयादेहिं त्रिनु पदत्राना ॥  
 चरन कमल मृदु मजु तुम्हारे । मारग अगम भूमिधर भारे ॥  
 कनर खोह नदी नद नारे । अगम अगाध न जहिं निहारे ॥  
 मालु बाध बृक येहरि नागा । कहिं नाद सुनि धीरजु भागा ॥  
 दो०—भूमि सयन बलफल बसन असन कद फल मूल ।

ते कि सदा सत्र दिन मिलहिं सखुइ समय अनूकूल ॥६२॥  
 नरअहार रजनीचर करहीं । नपट बेप त्रिधि कोटिक करहीं ॥  
 लगाइ अति पहार कर पानी । त्रिपिन बिपति नहिं जाइ रसानी ॥  
 व्याल कराल त्रिहँग बन घोरा । निसिचर निकर नारि नर चोरा ॥  
 डरपहिं धीर गहन सुधि आएँ । मृगलोचनि तुम्ह भीरु सुमाएँ ॥



हंसगवनि तुम्ह नहि बन जोगू । सुनि अपजसु मोहि देखि लोगू ॥  
 मानस सलिल सुग प्रतिपाली । जिअइ कि लखन पयोधि मराली ॥  
 नव रसाल बन विहरन सीला । सोह कि कोकिल विपिन करीला ॥  
 रहहु भवन अस हृदयँ विचरी । चंदननि दुखु कानन भारी ॥  
 दो०—सहज सुहृद गुर स्व मि सिख जो न करइ सिर मानि ।

सो पछिताइ अघाइ उर अगसि होइ हित हानि ॥ ६३ ॥  
 सुनि मृदु वचन मनोहर पिअ कैं । लोचन ललित भरे जन सिय कैं ॥  
 सीतल सिख दाहक भइ कैसैं । चइइहि स द चद निसि जैसैं ॥  
 उत्तरु न आव बिलल बेदही । तजन चहन सुचि स्वामि सनेही ॥  
 बरबस रोकि बिलोचन बारी । धरि धीरजु उर अवनितुमारी ॥  
 लागि सासु पग यह कर जोरी । छमवि देवि बड़ि अग्रिनय मोरी ॥  
 दीन्हि प्रानपति मोहि सिख सोई । जेहि विधि मोर परम हित होई ॥  
 मै पुनि समुक्ति दीख मन माहीं । पिय वियोग सम दुखु जग नाहीं ॥  
 दो०—प्राननाथु करुनायतन सुदर सुखद सुजान ।

तुम्ह त्रिनु रघुल कुमुद त्रिनु सुरपुर नरक समान ॥ ६४ ॥  
 मातु पिता भगिनी प्रिय भाई । प्रिय परिवारु सुहृद समुदाई ॥  
 सासु समुर गुर सजन सहार्ई । सुन सुंद' सुभल सुखशार्ई ॥  
 जहँ लागि नाथ नेह अरु नाते । पिय त्रिनु तिअहि तरनिहुँ तैं ताते ॥  
 तनु धनु धामु धर्गन पुर राजु । पति विहीन सबु सोरु समाजु ॥  
 भोग रोग सम मूषन भारू । जम जानना सरिस ससरू ॥  
 प्राननाथ तुम्ह बिनु जग माहीं । मो कहें मुगद कतहुँ कलु नाहीं ॥  
 जिअ बिनु देह नदी बिनु बारी । तैसिअ नाथ पुरप त्रिनु नारी ॥  
 नाथ सरल सुख साथ तुम्हारे । सरद निमल त्रिनु अदनु निहारे ॥

१—१०० मै निगजिनि बड़ाया कछि है —

अम यदि मित रघुपति पद लाई । बोला व इन प्रेम रम पागी ] ।

२—प्र० : पिदि : दि० : प्र० : [ १० : पि ] । २० : प्र० ।

दो०—खग मृग परिजन नगरु वन बलकल विमल दुकूल ।

नाथ साथ सुरसदन सम परनसाल सुख मूल ॥६५॥

वनदेवो वनदेव उदारा । करहहिं साष्टु ससुर सन सारा ॥

कुस किसलय साथी सुहाई । प्रभु संग मंजु मनोज तुगई ॥

कद मूल फल अमिअँ अहारू । अथव सौध सत सरिस पहारू ॥

धिनु धिनु प्रभु पद कमल बिलोनी । रहिहौ मुदित दिवस जिमि कोकी ॥

वन दुख नाथ कहे बहुतेरे । भय विषाद परिताप घनेरे ॥

प्रभु विभोग लखलेस समाना । सब मिलि होहिं न कृपानिधाना ॥

अस जिअँ जानि मुजान सिरोमनि । लेइअ संग मोहि छौंड़िअ जनि ॥

बिननी बहुत करौं का स्वामी । करुनामय उर अंतरजामी ॥

दो०—राखिअ अवध जो अवधि लगि रहत जानिअहिं प्रान ।

दीनबंधु सुंदर सुखद सील सनेह निधान ॥६६॥

मोहि मग चलत न होइहि हारी । धिनु धिनु चरन सोज निहारी ॥

सबहिं भौंति पिय सेवा करिहौं । मारग जनित सकल अम हरिहौं ॥

पाय पखारि बैठि तरु छाहीं । करिहौं बाउ मुदित मन माहीं ॥

अम कन सहित स्याम तनु देखें । कहैं दुख समउ प्रानपति पेखें ॥

सम महि वृत्त तरु पल्लव ढासी । पाय पनोदिहि सब निसि दासी ॥

चार चार मृदु मूरति जोही । लागिहि ताति बयारि न मोही ॥

को प्रभु संग मोहि चितबनिहारा । सिंध ववुहि जिमि ससक सिआरा ॥

मैं मुकुमारि नाथु वन जोगू । तुम्हहिं उचित तपु मो कहूँ भोगू ॥

दो०—अइसेउ वचन कठोर सुनि जौ न हृदउ बिलगान ।

तौ प्रभु विषम विभोग दुख सहिहहिं पावैं प्रान ॥६७॥

अस कहि सीय विरल मइ भारी । वचन विभोगु न सकी सँमारी ॥

देखि दसा रघुपति जिअँ जाना । हठि राखे नहिं राखिहि प्राना ॥

फहेउ कृपालु मानुकुल नाथा । परिहारि सोचु चलहु वन साथ ॥

नहिं विषाद कर अवसरु आजू । बेगि करहु वन गवन समाजू ॥

कहि प्रिय वचन प्रिया समुझाई । लगे मातु पद आसिप पाई ॥  
 बेगि प्रजा दुख भेट्य आई । जननी निरुर बिसरि जनि जाई ॥  
 फिरिहि दसा विधि बहुरि कि मोरी । देखिहौ नयन मनोहर जोरी ॥  
 मुदिन सुघरी तात कय होइहि । जननी जियत बदन त्रिधु जोइहि १ ॥  
 दो० बहुरि बच्य कहि लालु कहि रघुपति रघुनर तात ।

कचहि बोलाइ लगाइ । हियँ हरपि निरखिहौं गात ॥६८॥  
 लखि सनेह कातरि महतारी । बचनु न आव बिकल भइ भारी ॥  
 राम प्रनोव कीन्ह त्रिधि नाना । समउ सनेहु न जाइ बचाना ॥  
 तय जननी सासु पग लागी । सुनिअ माय मै परम अभागी ॥  
 सेवा समय देख्यं यनु दीन्हा । मोर मनोरथ सकल २ न कीन्हा ॥  
 तज्य द्योमु जनि छोडिय छोड् । फरमु कठिन कछु दोसु न मोह ॥  
 मुनि सिय वचन सासु अतुलानी । दसा कवनि विधि कहौ बलानी ॥  
 बारहि बार लाइ उर लीन्ही । धरि धीरजुसिख आसिप दीन्ही ॥  
 अचल होउ अहिनातु तुम्हारा । नय लगि गग जमुन जल धारा ॥  
 दो०—सीतहि सासु अभीस सिल दीन्ह अनेक प्रफार ।

बनी नाइ पद पदुम सिरु अतिहित बारहि बार ॥६९॥  
 समाचार जन लखिमन पाप । ब्याकुल बिलम्ब बदन उठि घाए ॥  
 कप पुलक तन नयन सनीरा । गहे चरन अति प्रेम अधीरा ॥  
 कहि न सक्ते कछु चितवत ठाढ़े । मीनु दीनु जनु जल तें काढ़े ॥  
 सोचु हृदयँ विधि का होनिहारा । सन सुख सुखु सिरान हमारा ॥  
 मो कहँ काह कहय रघुनाथा । रखिहँ भग्न कि लेहहि साथा ॥  
 राम त्रिनोकि बधु कर जोरे । देह गेह सब सन तनु तोरे ॥  
 बने बचनु राम नयनागर । सील सनेह सरल मुख सागर ॥  
 तात प्रेममम जनि कदराह । समुझि हृदयँ परिनाम उदाह ॥

१—प्र० मै दर ब्यापना नतीरे ।

२—प्र० मकर । [ ६०, ७० पृष्ठा ] । ३० प्र० ।

दो०—मातु पिता गुरु स्वामि सिख सिर धरि करहिं सुभायें ।

लहेउ लाभु तिन्ह जनम कर नतरु जनमु जग जायें ॥७०॥  
 अथ जियँ जानि सुनहुँ सिख भाई । करहु मातु पितु पद सेवकाई ॥  
 मवन भरतु रिपुसदनु नाही । राउ वृद्ध मम दुख मन माहीं ॥  
 मैं बन जाउँ तुम्हहि लेइ साथी । होइ सगहिं बिधि अवध अनाथा ॥  
 गुरु पितु मातु प्रजा परिवारु । सब कहूँ परठ दुसह दुख भारु ॥  
 रहहु कहु सय कर परितोष । नतरु ज्ञात होइहि बड दोष ॥  
 जानु राज प्रिय प्रजा दुखारी । सो नृपु अवसि नरक अधिकारी ॥  
 रहहु तात असि नीति निचारी । सुनत लखनु भए व्याकुल भारी ॥  
 सिधरे प्रचन सुखि गए केसैं । परसत तुहिन तामरस जेसैं ॥  
 दो०—उतरु न आवन प्रेमस गहे चरन अकुलाइ ।

नाथ दास मैं स्वामि तुम्ह तजहु त काह वसाइ ॥७१॥  
 दीन्ह मोहि सिख नीकि गोसाई । लागि अगम अपनी कदराई ॥  
 नर वर धीर धरम धुर घारी । निगम नीति कहूँ ते अधिकारी ॥  
 मैं सिमु प्रमु सनेह प्रतिपाला । मदरु मेरु कि लेहिं मराला ॥  
 गुरु पितु मातु न जानौ काह । कहौ सुमाउ नाथ पतिआह ॥  
 जहँ लागि जगत सनेह सगाई । प्रीति प्रनीति निगम निजु गाई ॥  
 मोरे सगइ एक तुम्ह स्वामी । दीनमुख उर अतरजामी ॥  
 धरम नीति उपदेसिअ ताही । कीरति भूति सुगति प्रिय जाही ॥  
 मन क्रम बचन चरनरत होई । कृपासिखु परिहरिअ कि सोई ॥  
 दो०—करुनासिखु सुबधु के सुनि मृदु बचन त्रिनीत ।

समुझाए उर लाइ प्रमु जानि सनेह समीत ॥७२॥  
 माँगहु त्रिदा मातु सन जाई । आवहु बेगि चनहु वन भाई ॥  
 मुदित भए सुनि रघुवर बानी । भएउ लाभ बड गइ बड़ हानी ॥  
 हरपित हृदय मातु पहिं आए । मनहुँ अघ फिरि लोचन पाए ॥  
 जाइ जननि पग नएउ माथा । मनु रघुनदन जानकि साथी ॥

पूछे<sup>१</sup> मातु मलिन मनु देखी । लखन कही सत्र कथा त्रिसेषी ॥  
 गई सहमि सुनि बचन कठोरा । मृगी देखि दव जनु चहे ओरा ॥  
 लखन लखेउ भा अनरथु आजू । येहि सनेहम करन अवाजू ॥  
 मौगत विदा समय सकुचाहीं । जाइ सग बिधि कहिहि कि नहीं ॥  
 दो०—समुझि सुमित्रा राम सिय रूप सुसोलु सुभाउ ।

नृप सनेहु लखि घुनेउ सिरु पापिनि दीन्ह बुझाउ ॥७३॥  
 धीरजु धरेउ कुअवसर जानी । सहज सुहृद बोली मृदु बानी ॥  
 तात तुम्हारि मातु वेदेही । पिता राम सब भाति सनेही ॥  
 अवध तहाँ जहँ राम निवास । तहई दिवसु जहँ भानु प्रकास ॥  
 जो पै सीय राम बन जाहीं । अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं ॥  
 गुर पितु मातु बधु सुर साई । सेइअहिं सकल प्रान की नाई ॥  
 राम प्रानप्रिय जीवन जी कैं । स्वारथरहित सखा सपही कैं ॥  
 पूजनीय प्रिय परम जहाँ तैं । सब मानिअहिं राम कैं नातैं ॥  
 अस जिअ जानि सग बन जाह । लेहु तात जग जीवन लाह ॥  
 दो०—भूरि भागभाजनु मणहु मोहि समेत बलि जाउँ ।

जौ तुम्हरे मन छाड़ि छलु कीह राम पद ठाउँ ॥७४॥  
 पुत्रवती जुबनी जग सोई । रघुपति भगतु जासु सुतु होई ॥  
 नतरु बाभ भलि वादि त्रिआनी । राम बिमुख सुन तैं हित जानी<sup>२</sup> ॥  
 तुम्हरेहिं भाग राम बन जाहीं । दूसर हेतु तात कछु नाहीं ॥  
 सकल सुकृत कर कल सुनरे येह । राम सीय पद सहज सनेह ॥  
 रागु रोषु हरिषा मदु मोह । अनि सपनेहु इन्हकैं बस होह ॥  
 सकल प्रहार त्रिकार बिहाई । मन क्रम बचन फरेहु सेवसाई ॥

१—प्र० पूछ । दि० प्र० [ (५) पूछेउ ] । [ तु० पूछा ] । च० प्र० ।

२—प्र० जाना । दि० प्र० [ (५) (५थ) जानी ] । तु० प्र० । [ च० (५) नी, ( ) मानी ] ।

३—प्र० पन सुन । दि० प्र० । [ तु० करपन ] । च० प्र० ।

तुम्ह कहँ बन सग भौति सुवासू<sup>१</sup> । सँग पितु मातु राम सिय जासू ॥  
जेहि न रामु बन लहहिँ कलेसू । सुन सोइ करेहु इहइ उपदेसू ॥  
छ०—उपदेसु येहु जेहिँ तात<sup>२</sup> तुम्हर रामु सिय सुख पावहीं ।

पितु मातु प्रिय परिवारु पुर मुख सुरति बन बिसरावहीं ॥

तुलसी प्रभुहि<sup>३</sup> सिख देइ आयेसु दीन्ह पुनि आसिप दई ।

रति होउ अघिरल अमल सिय रघुगौर पद नित नित नई ॥

सो०—मातु चरन सिरु नाइ चने तुरित सकित हृदय ।

बागुर विषम तोराइ मनहुँ भाग मृगु भागनस ॥७५॥

गए लखनु जहँ जानकिनाथू । म मन मुदित पाइ प्रिय साथू ॥

बदि राम सिय चरन सुहाए । चले सग नृपमदिर आए ॥

कहहिँ परसपर पुर नर नारी । भलि बनाइ निधि बात बिगारी ॥

तन वृस मन दुखु बदन मलीने । बिकल मनहुँ माखी मधु छीने ॥

कर मीजहिँ सिरु पुनि पछिताहीं । जनु निनु पख निहग अकुनाहीं ॥

भइ बडि भीर मृग दरगारा । बानि न जाइ निपादु अपारा ॥

सचिन उठाइ राउ बेठारे । कहि प्रिय वचनरामु पगु धारे ॥

सिय समेत दोउ तनय निहारी । व्याकुल भएउ भूमिपति भारी ॥

दो०—सीय सहित सुन सुमग दोउ देखि देखि अकुलाइ ।

बारहिँ बार सनेहबस राउ लेइ उर लाइ ॥७६॥

सकइ न बोलि बिकल नरनाह । सोऊ जनिन उर दारुन दाह ॥

नाइ सीसु पद अति अनुरागा । उठि रघुगौर बिदा तन मोंगा ॥

पितु असीस आयेम मोहि दीजे । हरप समय बिसमउ कत कीजे ॥

तात किएँ प्रिय प्रेम प्रभादू । असु जग जाइ होइ अपबादू ॥

सुनि सनेहबस उठि नरनाहों । बैठारे रघुपति गहि बाहों ॥

१—प्र० सुवास । दि० प्र० । [नृ० सुवास] । प्र० ।

२—प्र० तात । दि० प्र० । [४] चान ] । [नृ० चान] । च० प्र० ।

३—प्र० प्रभुहि । दि० प्र० । [नृ० प्रभुहि] । न० प्र० ।

सुनहु तात तुम्ह कहु मुनि कहहीं । राम चराचर नाथहु अटहीं ॥  
 उभ अरु असुभ करम अनुहारी । ईसु देइ फनु हट्यैं विचारी ॥  
 करइ जो फरमु पात्र फलु सोई । निगम नीति अस्ति कह समुझैई ॥  
 दो०—श्रीरु करइ अपराधु फोउ श्रीर पाव फल भोगु ।

अति विचित्र भगवन गति को जग जानइ जोगु ॥७७॥  
 राय राम राखन हित लागी । बहुत उपाय सिंघ धनु त्यागी ॥  
 लखी१ राम रुच रहत न जाने । धरम धुरधर धीर सपाने ॥  
 तन नृप सीय लाइ उर लीन्ही । अति हित बहुत भौति सिख दीन्ही ॥  
 कहि बन के दुख दुसह सुनाए । सामु समुद्र पितु सुख समुझाए ॥  
 सिय मनु राम चरन अनुरागा । घरु न सुगमु बनु बिषनु न लागी ॥  
 श्रीरौ सत्रहिं सीय समुझाई । कहि कहि त्रिपिन बिपति अधिकाई ॥  
 सचिव नारि गुर नारि सयानी । सहित सनेह कहहिं मृदु बानी ॥  
 तुम्ह कहैं तौ न दीन्ह बनवासू । करहु जो कहहिं समुद्र गुर सासू ॥  
 दो०—सिख सीतलि हित मधुर मृदु सुनि सीतहि न सोहानि ।

सरद चद चंदिनि लगत जनु चरई अकुलानि ॥७८॥  
 सीय सजुच बस उतरु न देई । सो मुनि तमकि उठी केकेई ॥  
 मुनि पट भूपन भाजन आनी । आगैं धरि बोली मृदु बानी ॥  
 नृपहि प्रानप्रिय तुम्ह रघुनीरा । सील सनेह न छाड़िहि भीरा ॥  
 सुकृत सुजसु परलोकु नपाऊ । तुम्हहिं जान बन कहिहि न काऊ ॥  
 अस बिचारि सोइ करहु जो भावा । राम जननि सिख सुनि सुख पावा ॥  
 भूपहि वचन बान सम लागे । करहिं न प्रान पयान अभागे ॥  
 लोग बिकल मुरिखित नरनाह । काह करिअ कहु सूक्त न काह ॥  
 राम तुरत मुनि बेपु बनाई । चले जनक जननी२ सिरु नाई ॥

१—प्र० लखी । दि० प्र० [ (५) लला ] । वृ०, च० \* प्र० ।

२—प्र० जननी । दि० \* प्र० [ (४) (५) जननिहि ] । वृ०, च० \* प्र० ।

दो०—सजि बन साजु समानु सब वनिता बहु समेत ।

बदि विप्र गुर चरन प्रभु चले करि सगहि अचेत ॥७६॥

निकसि बसिष्ठ द्वार भए ठाढ़े । देखे लोग बिरह दव दाढ़े ॥

कहि प्रियवचन सरल समुझाए । विप्र वृन्द रघुवीर बुलाए ॥

गुर सन कहि घरपासन दीन्हे । आदर दान विनय बस कीन्हे ॥

जाचक दान मान संतोषे । भीत पुनीत प्रेम परितोषे ॥

दासी दास बोलाइ बहोरी । गुरहि सौंपि बोले कर जोरी ॥

सब के सार सँभार गोसाईं । करवि जनक जननी की नाई ॥

बारहिं बार जोरि जुग पानी । कहत रामु सबसन मृदु बानी ॥

सोइ सब भौंति मोर हितकारी । जेहि तें रहइ मुथाल सुबारी ॥

दो०—मातु सरल मोरें बिरहैं जेहिं न होहि दुख दीन ।

सोइ उपाय तुम्ह करेहु सब पुरजन परम प्रवीन ॥८०॥

येहि विधिराम सबहिसमुझावा । गुर पद पदुम हरपि सिरु नावा ॥

गनपति गौरि गिरीसु मनाई । चले असोस पाइ रघुराई ॥

रामु चलत अति भएउ विपाद । सुनि न जाइ पुर आरत नाद ॥

कुसगुन लंक अवध अति सोकू । हरष बिपाद बिबस सुरलोकू ॥

गइ मरुद्धा तब भूपति जागे । बोलि सुमंत्रु कहन अस लागे ॥

रामु चले बन प्रान न जाहीं । केहिं सुख लागि रहत तन माहीं ॥

येहि तें कवन व्यथा बलवाना । जो दुखु पाइ तजहिं तनु माना ॥

पुनि धरि धीर कहइ नरनाह । लै रथु सग सखा तुम्ह जाह ॥

सो०—सुठि सुकुमार कुमार दोउ जनकमुता सुकुमारि ।

रथ चढ़ाइ टेखगइ वनु फिरेहु गएं दिन चारि ॥८१॥

जौ नहिं फिरि धीर दोउ भाई । सत्यसंध दृढ़व्रत रघुराई ॥

तौ तुम्ह विनय करेहु कर जोरी । फेरिअ प्रभु मिथिलेसकिसोरी ॥



जम सिध कानन देखि देसई । करेहु मंरि गिन अरगठ पाई ॥  
 सामु समुद्र अम करेउ संदेगू । पुत्रि किरिय बन बटु कनेगू ॥  
 विनुगृह कपटु कपटु समुगरी । रहेहु जहां रनि होइ तुहारी ॥  
 देखि निधि करेहु उपाय कदवा । फिगट त होइ प्रान अमनवा ॥  
 गाहि त मोर मानु परिनमा । कह्यु न बमाउ भणें विधि वमा ॥  
 अस कहि मुग्धि पग महि राऊ । राम लगनु गिय आनि देगाऊ ॥  
 दो०—पाद रजायेमु नद भिरु रथु । अनि बेग बनइ ।

गण्ड जहाँ बाहेर नगर सीय सहिन टांड भाइ ॥८२॥  
 तत्र सुमत्र नृप वचन मुनाए । करि विनवी रथ रागु चढ़ाए ॥  
 चढ़ि रथ सीय सहिन दोउ भाई । नने हृदयें अवधहि सिरु नई ॥  
 चलत रामु लसि अवध अनाथा । चिरल लोग सत्र लागे माथा ॥  
 कृपासिंधु बटु निधि समुझावहि । फिरहि प्रेमरमपुनि फिरि आगहि ॥  
 लागति अवध भयावनि भारी । मानहुँ कालराति अंगिअरी ॥  
 घोर जतु सग पुर नर नारी । दरबहि एरहि एक निहारी ॥  
 घर मसान परिजन जनु भूता । मुन हित गीतु मनहुँ जसदूता ॥  
 बागन्ह निटप बेलि धुँभिलाही । सरित सरोवर देखि न जाही ॥  
 दो०—हय गय कोटिन्ह केलिमृगु पुरषमु चानक मोर ।

विक्र रयांग सुक सारिका सारस हम चकोर ॥८३॥  
 राम बियोग बिरल सब ठाढ़े । जहँ तहँ मनहुँ चित्र लिसि कढ़े ॥  
 नगर सफल<sup>१</sup> वनु गहवर भारी । खग मृग विपुन सकल नर नारी ॥  
 विधि कैकई मिरातिनि कीन्ही । जेहि दव दुसह दसहु दिसि दोन्ही ॥  
 सहि न सके रघुवर बिरहागी । चले लोग सत्र ब्याकुल भागी ॥  
 सबहि बिचारु कीन्ह मनमाही । राम लखन सिध विनु सुखु नाही ॥  
 जहाँ रामु तहँ सबुइ समाजू । विनु रघुनीर अवध नहि काजू ॥

चले साथ अस मंत्र द्वाइ । सुर दुर्लभ सुखु सदन बिहाई ॥  
 राम चरन पंकज प्रिय जिन्हही । विषय भोग बस करहिं कि तिन्हही ॥  
 दो०—बालक वृद्ध निहाइ गृह लगे लोग सब साथ ।

तमसा तीर निवासु क्रिय प्रथम दिउस रघुनाथ ॥८४॥  
 रघुपति प्रजा प्रेमप्रम देखी । सद्य हृदयँ दुखु भएउ विसेपी ॥  
 करुनामय रघुनाथ गोसाई । बेगि पाइअहि पीर पराई ॥  
 कहि सप्रेम मृदु वचन सुहाए । बहु विधि राम लोग समुझाए ॥  
 किए घरम उपदेस घनेरे । लोग प्रेमप्रम फिरहिं न फेरे ॥  
 सील सनेहु छाँडि नहिं जाई । असमजसप्रस भे रघुगई ॥  
 लोग सोग श्रमप्रस गए सोई । कछुक देवमाया मति मोई ॥  
 ब्रह्महिं जाम जुग जामिनि बीती । राम सचिव सन कहेउ सप्रीती ॥  
 सोजु मारि रथु हाँसहु ताता । आन उपाय बनिहि नहिं<sup>१</sup> बाता ॥  
 दो०—राम लखनु सिय जान चेडि समु चरन सिरु नाइ ।

सचिव चलाएउ तुरत रथु इत उत खोज दुराई ॥८५॥  
 जागे सकल लोग भए भोरु । मे रघुनाथ भएउ अति सोरु ॥  
 रथ कर खोज कतहुं नहिं पावहिं । राम राम कहि चहुं दिसि घावहिं ॥  
 मनहुं वारिनिधि बूढ जहाजू । भएउ विरल बड़ बनिक समजु ॥  
 एकहि एक देहि उपदेसु । तजे राम हम जानि कलेसु ॥  
 निंदहिं आपु सराहहि मीना । धिग जीवनु रघुबीर बिहीना ॥  
 जौं पे प्रिय बियोगु विधि कीन्हा । तौ कस मरनु न मोंगे दीन्हा ॥  
 एहि विधि करत प्रलाप कलापा । आए अवध भरे परितापा ॥  
 विषम बियोगु न जाइ बखाना । अवधि आस सब राखहिं प्राना ॥  
 दो०—राम दरस हित नेम व्रत लगे करन नर नारि ।

मनहु कोक कोकी कमल दीन बिहीन तमारि ॥८६॥

सीता सचिव सहित दोउ भाई । सङ्गवेरपुर पहुँचे जाई ॥  
 उतरे राम देवसरि देखी । कीन्ह दंडवत हरपु निसेखी ॥  
 लखन सचिव सियँ किए प्रनामा । सर्वाहि सहित सुख पाएउ रामा ॥  
 गग सफल मुद मंगल मूना । सब सुख करनि हरनि सब सूना ॥  
 कहि कहि कोटिक कथा प्रसगा । रामु बिलोकिहि गग तरगा ॥  
 सचिवहि अनुजहि प्रियहि सुनाई । बिबुधनदी महिमा अधिनाई ॥  
 मृज्जनु कीन्ह पथ समु गएऊ । सुचि जलु विश्रत मुदित मनु भएऊ ॥  
 सुमिरत जाहि मिटइ समु भारू । तेहि समु येह लौकिक व्यग्रहारू ॥  
 दो०-सुद्ध सच्चिदानंदमय फंद भानुकुल केतु ।

चरित करत नर अनुहरत ससृति सागर सेतु ॥८७॥  
 येह सुधि गुह निपाद जब पाई । मुदित लिए प्रिय बधु बोलाई ॥  
 लिए फल मूल भेट भरि भारा । मिलन चलेउ हियँ हरपु अपारा ॥  
 करि दंडवत भेंट धरि आगें । प्रभुहि बिलोकत अति अनुरागे ॥  
 सहज सनेह बिस रघुराई । पूँछी कुसल निरुट बैठाई ॥  
 नाथ कुसल पद पंऊ देखें । भएउँ भाग भाजन जनु लेखें ॥  
 देव धरनि धनु धामु तुम्हारा । मै जनु नीचु सहित परिवारा ॥  
 कृपा करिअ पुर धारिअ पाऊ । थापिअ जनु सब लोगु सिहाऊ ॥  
 फहेहु सूर्य सब सखा सुजाना । मोहि दीन्ह पितु आयेसु आना ॥  
 दो०-वरप चारिदस बासु बन मुनि व्रत बेपु अहार ।

रामु बास नहिँ उचित सुनि गुहहि भएउ दुख भारू ॥८८॥  
 राम लखन सिय रूपु निहारी । कहहि सप्रेम ग्राम नर नारी ॥  
 ते पितु मातु कहहु सखि कैसेँ । जिन्ह पठए बन बालक ऐसेँ ॥  
 एक कहहि भल भूषति कीन्ह । लोयन लाहु हमहिँ बिधि दीन्हा ॥  
 तम निपादपति उर अनुमाना । तरु सिंसुषा मनोहर जाना ॥  
 ले रघुनाथहि ठाँव देखावा । कहेउ राम सन गाँति सुहावा ॥  
 पुरजन करि जोहारु घर आए । रघुवर सध्या करन सिधाए ॥

गुहँ सवाँरि साथरी बसाई । कुस किसलय मय मृदुल सुहाई ॥  
सुचि फल मूल मधुर मृदु जानी । दोना मरि मरि राखेसि आनी ॥  
दो०—सिय सुमत्र आता सहित कद मूल फल खाइ ।

सयन कीन्ह रघुवंसमनि पाय पलोत्त भाइ ॥८६॥  
उठे लखनु प्रभु सोवन जानी । कहि सचिरहि सोमन मृदु बानी ॥  
कल्युक्त दुरि सजि बान सरासन । जागन लगे बैठ बीरासन ॥  
गुह बेलाइ पाहरू प्रवीती । ठावँ ठावँ राखे अति प्रीती ॥  
आपु लखन पहुँ बैठेउ जाई । कटि माथी सर चाप चढाई ॥  
सोवत प्रभुहि निहारि निपादू । मण्ड प्रेमत्रस हृदयँ बिपादू ॥  
तनु पुलकित जल लोचन बहई । वचन सप्रेम लखन सन फहई ॥  
मूपति भवन सुभायँ सुहावा । सुरपति सदन न पटतर आवा ॥  
मनिमय रचित चारु चौबारे । जनु रतिपति निज हाथ सँबारे ॥  
दो०—सुचि सुविचित्र सुभोगमय सुमन सुगंध सुवास ।

पलंग मजु मनि दीप जहँ सब विधि सरल सुपास ॥८७॥  
बिबिध बसन उपधान तुराई । बीर फेन मृदु बिसद सुहाई ॥  
तहँ सिय रामु सयन निसि करहीं । निज छवि रति मनोज मदु हरहीं ॥  
तेद सिय रामु साथरी सोए । समित बसन बिनु जाहिं न जोए ॥  
मातु पिता परिजन पुरवासी । सखा सुसील दास अरु दासी ॥  
जोगवहिं जिन्हहि प्रान फी नाई । महि सोवत तेइ रामु गोसाई ॥  
पिता जनकु जग विदित प्रमाऊ । समुद्र सुरेस सखा रघुराऊ ॥  
रामचंदु पति सो वैदेही । सोवति महि बिधि वामन केही ॥  
सिय रघुनीर कि कानन जोगू । करमु प्रधान सत्य कह लोगू ॥

१—प्र०, दि०, वृ० : आनी । [ च० : (२) पानी, (२) प्राना ] ।

२—प्र० : माथी । [ दि०, वृ० : माथा ] । च० : प्र० ।

३—प्र०, दि०, वृ० : पावा । च० : आवा ।

४—प्र० : सोवति । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : सोवन ] ।

दो०—कैकयनदिनि मंदमति कठिन कुटिलपनु कीन्ह ।

जेहि रघुनंदन जानकिहि सुख अघसर दुख दीन्ह ॥६१॥  
 भइ दिनकर कुल विटप कुठारी । कुमति कीन्ह सखु बिख दुखारी ॥  
 भएउ निपादु निपादहि मारी । राम सीय महि सयन निहारी ॥  
 बोले लखनु मधुर मृदु बानी । ग्यान विराग भगति रस सानी ॥  
 काहु न कोउ सुख दुख कर दाता । निज कृत करम भोग सखु आता ॥  
 जोग वियोग भोग भल मदा । हित अनहित मध्यम भ्रम फंदा ॥  
 जनमु मरनु जहँ लागि जगजानू । सति विपति करमु अरु कालू ॥  
 धरान धामु धनु पुर परिवारु । सरगु नरकु जहँ लागि व्यवहारु ॥  
 देखिअ सुनिअ गुनिअ मनमाही । मोह मूल परमारगु नाही ॥  
 दो०—सपने होइ भिखारि नृप रकु नाकपति होइ ।

जागें लामु न हानि कछु तिमि प्रपनु जिअ जोइ ॥६२॥  
 अस विचारि नहि कीजिअ रोसु । काहुहि बादि न देइअ दोसु ॥  
 मोह निसा सखु सोवनिहारा । देखिअ सपन अनेक प्रकार ॥  
 येहि जग जामिनि जागहि जोगी । परमारथी प्रपंच विधोगी ॥  
 जानिय तवहि जीव जग जागा । जय सब विषय बिलास विरागा ॥  
 होइ विवेकु मोह अम भागा । तब रघुनाथ चरन अनुसारा ॥  
 सखा परम परमारथु एह । मन कम बचन राम पद नेह ॥  
 राम ब्रह्म परमारथरूपा । अविगत अलख अनादि अनूपा ॥  
 सकल विकार रहित गत वेदा । कहि नित नेति निरूपहि वेदा ॥  
 दो०—भगत भूमि भूसुर सुरभि सुर हित लागि कृपाल ।

करत चरित धरि मनुज ठनु सुख मिटहि जगजाल ॥६३॥  
 सखा सगुनि अस परिहरि मोह । सिध रघुवीर चरन रत होह ॥  
 कहत राम गुन भा भिनुमारा । जागे जग मंगल दातारा ॥

सकल सौच करि राम नहावा । सुचि सुजान बञ्छीर मँगावा ॥  
 अनुज सहित सिर जटा बनाए । देखि सुमत्र नयन जल छाए ॥  
 हृदय दाहु अति बदन मलीना । कह कर जोरि वचन अति दीना ॥  
 नाथ कहेउ अस कोसलनाथा । लै रथु जाहु राम के साथी ॥  
 बनु देखाइ सुरसरि अन्हवाई । आनेहु फेरि बेगि दोउ भाई ॥  
 लखनु राम सिय आनेहु फेरी । संसय सकल सँकोच निवेरी ॥  
 दो०—नृप अस कहेउ गोसाँइ अस कहँ करौ बलि सोइ ।

करि बिनती पायन्ह परेउ दीन्ह बाल जिमि रोइ ॥६४॥  
 तात कृपा करि कीजिअ सोई । जातैं अवध अनाथ न होई ॥  
 मन्निहि राम उठाइ प्रबोधा । तात धरम मगु तुम्ह सबु सोधा ॥  
 सिधि दधीचि हरिचंद नरेसा । सहे धरम हित कोटि कलेसा ॥  
 रंतिदेव बलि भूप सुजाना । धरमु घरेउ सहि संकट नाना ॥  
 धरमु न दूसर सत्य समाना । आगम निगम पुरान बखाना ॥  
 मैं सोइ धरमु सुनम करि पावा । तजे तिहँ पुर अपजस छावा ॥  
 संभावित कहँ अपजस लाहू । मरन कोटि सम दारुन दाहू ॥  
 तुम्ह सन तात बहुत का कहऊँ । दिऐँ उतरु फिरि पातकु लहऊँ ॥  
 दो०—पितु पद गहि कहि कोटि नति विनय करबि कर जोरि ।

बिता कवनहु बात कहि तत करिअ जनि मोरि ॥६५॥  
 तुम्ह पुनि पितु सम अनिहित मोरें । बिनती करो तात कर जोरें ॥  
 सब विधि सोइ करतउय तुम्हारें । दुखु न पाव पितु सोच हमारें ॥  
 सुनि रघुनाथ सचिव सचादू । गएउ सपरिजन बिरल निपादू ॥  
 पुनि कछु लखन कही कटु वानी । प्रभु वरजे बड़ अनुचित जानी ॥  
 सुचि राम निज सपथ देवाई । लखन सँदेसु कहिअ जनि जाई ॥  
 कह सुमंत्र पुनि भूप सँदेसू । सहि न सकहि सिय विपिन कलेसू ॥  
 जेहि विधि अवध आव फिरि सीया । सोइ खुबरहि तुम्हहि करनीया ॥  
 ननरु निपट अवलंब विहीना । मैं न जिअवजिमि जल विनु मीना ॥

दो०—मझें ससुरें सकल सुख जवहिं जहाँ मनु मान ।

तहँ तब रहिहि सुखेन सिय जब लगि बिपति बिहान ॥६६॥  
 बिनती भूप कीन्हि जेहिं माँती । आरति प्रीति न सो कहि जाती ॥  
 पितु सँदेसु सुनि कृपानिधाना । सियहि दीन्हि सिख कोटि बिधाना ॥  
 सासु ससुर गुर प्रिय परिवारु । फिरहु त सबकर मिटइ खमारु ॥  
 सुनि पति बचन कहति बैदेही । सुनहुँ प्रानपति परम सनेही ॥  
 प्रभु करुनामय परम बिबेकी । तनु तजि रहति छाँह किमि छँकी ॥  
 प्रभा जाइ कहँ मानु बिहाई । कहँ चंद्रिका चंदु तजि जाई ॥  
 पतिहि प्रेम मय बिनय सुनाई । कहति सचिव सन गिरा सुहाई ॥  
 तुम्ह पितु ससुर सरिस हितकारी । उतरु देउँ फिरि अनुचित भारी ॥  
 दो०—आरति बस सनमुख भइउँ बिलग न मानव तात ।

आरजसुत पद कमल बिनु बादि जहाँ लगि नात ॥६७॥  
 पितु बैभव बिलासु मैं डीठा । नृप मनि मुकुट मिलत<sup>१</sup> पदपीठा ॥  
 सुख निधान अस माइकर मोरें<sup>२</sup> । पिय बिहीन मन भाव न मोरें ॥  
 ससुर चक्कवइ कोसलराऊ । भुवन चारि दस प्रगट प्रभाऊ ॥  
 आगें होइ जेहि सुपति लेई । अरघ सिंघासन आसनु देई ॥  
 ससुर एतादस अवध निवासू । प्रिय परिवारु मातु सम सासू ॥  
 बिनु रघुपति पद पदुम परागा । मोहि कोउ<sup>३</sup> सपनेहुँ सुखदन लागा ॥  
 अगम पंथ बन भूमि पहारा । करि केहरि सरि सरित अपारा ॥  
 कोल किरात कुरंग बिहंगा । मोहि सब सुखद प्रानपति संग ॥  
 दो०—सासु ससुर सन मोरि हँति बिनय करवि परि पायें ।

मोर<sup>४</sup> सोचु जनि करिअ कछु मैं बन सुखी सुमायें ॥६८॥

१—प्र० : मिलन । दि० : प्र० [(२) : मिलन] । तृ०, च० : प्र० [(८) : मिलन] ।

२—प्र० : माइकर । दि० : प्र० [(३) (४) (५) : पितृगृह] । तृ०, च० : प्र० [(८) : पितृगृह]

३—प्र० : कोउ । [ दि० : मय ] । तृ०, च० : प्र० ।

४—प्र० : मोर । दि० : प्र० [(४) (५) : मोरि] । तृ०, च० : प्र० [(८) : मोरि] ।

श्राननाथ प्रिय देवर साथी । बीर घुरीन धरे धनु भाथा ॥  
 नहिं मग ससु भ्रमु दुख मन मोरें । मोहि लगि सोचु करिअ जनि भोरें ॥  
 सुनि सुमंत्रु सिय सीतलि बानी । भपउ बिकल जनु फनि मनि हानी ॥  
 नयन सूझ नहिं सुनई न काना । कहि न सकइ कहु अति अकुलाना ॥  
 राम प्रबोधु कीन्ह बहु भौंती । तदपि होति नहिं सीतलि छाती ॥  
 जतन अनेक साथ हित कीन्हे । उचित उत्तरु रघुनंदन दीन्हे ॥  
 भेटि जाइ नहिं राम रजाई । कठिन करम गति कहु न बसाई ॥  
 राम लखन सिय पद सिरु नाई । फिरेउ बनिकु जनु मरु गवाँई ॥  
 दो०—रघु हाँकेउ हय राम तन हेरि हेरि हिहिनाहिं ।

देखि निषाद विषादवस धुनहिं सीस पछिताहिं ॥६६॥  
 जामु वियोग बिकल पसु ऐसैं । प्रजा मातु पितु जीवहिं कैसें ॥  
 बरवस राम सुमंत्रु पठाये ॥ भुरसरि तीर आपु तब आप ॥  
 भौंगी नाव न क्रेवदु आना । कहइ तुम्हार मरु मैं जाना ॥  
 चरन कमल रज कहुं सबु कहई ॥ मानुषकरनि मूरि कहु अहरई ॥  
 छुअत सिला भइ नारि सुहाई । पाहन तैं न काठ फठिनाई ॥  
 तरनिउँ मुनि घरिनी हाँइ जाई । बाट परइ मोरि नाव उड़ाई ॥  
 बेहि प्रतिपालउँ सबु परिवारु । नहिं जानौं कहु और कवारु ॥  
 जौं मरु पार अवसि गा चहह ॥ मोहि पद पदुम पखारन कहह ॥

छं०—पद कमल धौइ चढ़ाइ नाव न नाथ उतराई चहौं ।

मोहि राम राउरि आन दसरथ सपथ सब सांची कहौं ॥

घरु तोर मारहुं लखनु पै जब लगि न पाय पखारिहौं ।

तब लगि न तुलसीदास नाथ कृपाल पारु उतारिहौ ॥

सो०—सुनि केवट के बयन प्रेम लपेटे अटपटे ।

बिहँसे करुना अयन चितइ जानकी लखन तन ॥१००॥



कृपाविधु बोलै मुमुक्षुई । मोह कर जेहि तर ना न जाई ॥  
 बेगि आनु जनु पाव पन्थाय । हंन बिनु उगारहि पार ॥  
 जमु नमु मुमिरन पठ बास । उगारि न भगिनु अगा ॥  
 सोइ कृपालु केसहि निहोरा । जेहि जगु द्विनि दुपगुतें धेगा ॥  
 पद नग निरनि देभरि हरणी । मुनि प्रमुखा मोह मनि करणी ॥  
 केवट राम रजायेउ पावा । पानि कटरा मरि लइ आग ॥  
 अति आनद उगगि अनुसागा । चरन सरोज पन्थाय लाग ॥  
 परसि सुनन सु सधल मिहारी । येहि सय पुन्यपुन कोउ नही ॥  
 दो०—पद पन्थारि जनु पान करि आपु सहित परिवार ।

पितर पार करि प्रभुहि पुनि मुदिन गण्ड लइ पार ॥१०१॥  
 उतरि टाढ़ मर सुसरि रेता । सीय राम गुह लखनु समेता ॥  
 केसट उतरि दखन कीन्ह । प्रभुहि सातु येहि नहि कलुहीन्ह ॥  
 विय हिय की सिय जाननिहारी । मनि मुंइगी मन मुदिन उगारी ॥  
 कहेउ कृपालु लेहि उनराई । केवट चरन गहे अकुनाई ॥  
 नाथ आजु मै पाए न पावा । मिटे दोष दुख दारिद दावा ॥  
 बहुत काल मई कीन्हि मजूरी । आजु दीन्हि विधि यनि मलि मूरी ॥  
 अब कछु नाथ न चाहिअ मोरें । दीन दखल अनुग्रह तेरें ॥  
 फिरती बार मोहि जो देन । सो प्रसादु मई सिर धरि लेष ॥  
 दो०—बहुत कीन्ह प्रभु लखनु सिय नहि कछु केसटु लेइ ।

बिदा कीन्ह करुनाथतन भगति निमल बर देइ ॥१०२॥  
 तब मज्जनु करि रघुहुलनाथ । पूजि पागिय नाएउ माथा ॥  
 सिय सुसरिहि कहेउ कर जोरी । मातु मनोरथ पुरउचि मारी ॥  
 पति देवर सँग बसुन बहोरी । आइ करउ जेहि पूजा तोरी ॥  
 सुनि सिय बिनय प्रेमरस सानी । मइ तब विमल चारि बर बानी ॥  
 सुनु रघुवीर प्रिया बैदेही । तब प्रभाउ जग बिदित न केही ॥  
 लोचन होहि बिलोक्त तोरें । तोहि सेवाहि सब सिधि कर जोरे ॥

तुम्ह जो हमहि बड़ि विनय सुनाई । कृपा कीन्ह मोहि दीन्ह बड़ाई ॥  
तदपि देवि मई देवि असीसा । सफल होन हित निज बागीसा ॥  
दो०—प्राण नाथ देवर सहित कुसल कोसला आइ ।

पूजिहि सब मन कामना सुजसु रहिहि जग छाई ॥ १०३ ॥  
गंग बचन सुनि मंगल मूला । मुदिन सोय सुरसरि अनुकूला ॥  
तब प्रभु गुहहि कहेउ घर जाहू । सुनत सूख मुख भा उर दाहू ॥  
दीन बचन गुह कह कर जोरी । विनय सुनहु रघुकुलमनि मोरी ॥  
नाथ साथ रहि पंथु देखाई । करि दिन चारि चरन सेवकाई ॥  
जेहि बन जाइ रहव रघुगई । परनकुट्टी मई कगवि सुहाई ॥  
तब मोहि कहँ जसि देवि रजाई । सोइ करिहो रघुबीर दोहाई ॥  
सहज सनेहु राम लखि तासू । सग लीन्ह गुह हृदय हुलासू ॥  
पुनि गुह ग्याति बोलि सब लीन्हें । करि परितोपु बिदा सब कीन्हें ॥  
दो०—तब गनपति सिव मुमिरि प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ ।

सखा अनुज सिय सहित बन गवनु कीन्ह रघुनाथ ॥ १०४ ॥  
तेहि दिन भएउ विटप तर बासू । लखन सखा सब कीन्ह सुपासू ॥  
प्रात प्रातहुन करि रघुराई । तीरथराजु दीख प्रभु जाई ॥  
सचिव सत्य श्रद्धा प्रिय नारी । माघन सरिस मीठु हितकारी ॥  
चारि पदारथ भरा भँडारू । पुन्य प्रदेस देव अति चारू ॥  
छेत्रु अगमु गद्गु गाढ़ सुहावा । सपनेहुँ नहि प्रतिपच्छिन्ह पावा ॥  
सेन सकल तीरथ वर वीरा । कलुष अनीक दलन रन धीरा ॥  
संगमु सिंघासन सुठि सोहा । छत्रु अपयवदु मुनि मनु मोहा ॥  
चँवर जमुन अरु गंग तरगा । देखि होहि दुख दारिद भंगा ॥  
दो०—सेवाहि मुहूर्ती साधु सुचि पावाहि सब मन काम ।

बंदी बेद पुरान गन कहहि विमल गुनग्राम ॥ १०५ ॥

को कहि सङ्ग प्रयाग प्रभाऊ । फनुष पुत्र कुंजर मृगगऊ ॥  
 अस तीरथपति देखि मुहावा । मुन सागर रघुवर मुगु पाग ॥  
 कहि सिय लगनहि ससहि सुनाई । श्रीधुम तीरथरात्र पड़ाई ॥  
 करि प्रनामु देखन बन बागा । कहत महातम अनि अनुगगा ॥  
 येहि विधि आइ चिनोकी बेनी । मुमिस्त सदन मुमंगन देनी ॥  
 मुदित नहाइ कीन्हि सिय सेवा । पूजि जयाविधि तीरथ देग ॥  
 तब प्रभु भरद्वाज पहि आये । करत दंडवन मुनि उर लाये ॥ -  
 मुनि मन मोद न कलु कहि जाई । ग्रहानंद रासि जनु पाई ॥  
 दो०—दीन्हि अभीम मुनीस उर अनि अनंदु अम जानि ।

लोचन गोचर मुष्टत फल मनहुँ किए विधि आनि ॥१०६॥  
 कुसल प्रप्त करि आसनु दीन्हे । पूजि प्रेम परिपूजन कीन्हे ॥  
 फंद मूल फल अंकुर नोके । दिए आनि मुनि मनहुँ अभी के ॥  
 सीय लखन जन सहित मुहाये । अतिरुचि राम मूल फल खाये ॥  
 भए विगत सम राम सुखारे । भरद्वाज मृदु बचन उचारे ॥  
 आजु सुफल तपु तीरथु त्यागू । आजु सुफल जपु जोग बिरागू ॥  
 सुफल सफल सुम साधन साजू । राम तुम्हहि अवलोकत आजू ॥  
 लाभ अवधि मुख अवधि न दूजी । तुम्हरेँ दरस आस सब पूजी ॥  
 अब करि कृपा देहु बरु पद । निजपद सरसिज सहज सनेह ॥  
 दो०—करम बचन मन छोड़ि छलु जव लगि जनु न तुम्हार ।

तब लगि सुखु सपनेहुँ नहीं किएँ कोटि उपचार ॥१०७॥  
 मुनि मुनि बचन रामु सकुचाने । भाव भगति आनंद अधाने ॥  
 तब रघुवर मुनि सुजसु सुहावा । कोटि भोंति कहि सगहि सुनावा ॥  
 सो बड़ सो सब गुन गन गेहू । जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू ॥  
 मुनि रघुबीर परसपर नवहीं । बचन अगोचर सुख अनुभवहीं ॥  
 येह सुधि पाइ प्रयाग निवासी । बटु तापस मुनि सिद्ध उदासी ॥  
 भरद्वाज आसम सब आए । देखन दसरथ सुभन सुहाए ॥

राम प्रनाम कीन्ह सब काहू । मुदित भए लहि लोचन लाहू ॥  
देहि असीस परम सुखु पाई । फिरे सराहत सुंदरताई ॥

दो०—राम कीन्ह विखाम निसि प्रात प्रयाग नहाइ ।

चले सहित सिय लखन जन मुदित मुनिहि सिरु नाइ ॥ १०८ ॥  
राम सप्रेम कहेंउ मुनि पाहीं । नाथ कहिय हम केहि मग जाहीं ॥  
मुनि मन बिहँसि राम सन कहहीं । सुगम सकल मग तुम्ह कहूँ अहहीं ॥  
साथ लागि मुनि सिष्य बोलाए । मुनि मन मुदित पचासक आए ॥  
सबन्हि राम पर प्रेम अपारा । सकल कहहिं मगु दीख हमारा ॥  
मुनि बटु चारि संग तब दोन्हें । जिन्ह बहु जनम सुकृत सय कीन्हें ॥  
करि प्रनाम रिपि आयेसु पाई । प्रमुदित हृदय चले रघुनाई ॥  
ग्राम निकट निकसहिं जय जाई । देखहिं दरसु नारि नर घाई ॥  
होहिं सनाथ जनम फलु पाई । फिरहिं दुखित मनु-संग पठाई ॥  
दो०—बिदा किए बटु विनय करि फिरे पाइ मन काम ।

उतरि नहाए जमुन जल जो सरीर सम स्याम ॥ १०९ ॥  
मुनत तीर वासी नर नारी । धाए निज निज काज बिसारी ॥  
लखन राम सिय सुंदरताई । देखि करहि निज भाग्य बड़ाई ॥  
अति लालसा सबहि मन माहीं । नाउँ गाउँ बृम्हन सकुचाहीं ॥  
जे तिन्ह महुँ ब्यविरिष सयाने । तिन्ह करि जुगुति राम पहिचाने ॥  
सकल कथा तेन्ह सबहि सुनाई । बनहि चले पितु आयेसु पाई ॥  
मुनि सबिषाद सकल पछिताहीं । रानी राय कीन्ह भल नाहीं ॥  
तेहि अवसर एक तापसु आवा । तेज पुंज लघु बयसु सुहावा ॥  
कवि अलखित गति बेषु बिागी । मन क्रम बचन राम अनुरागी ॥  
दो०—सजल नयन तन पुलकि निज इष्ट देउ पहिचानि ।

परेउ दंड जिमि धरनि तल दसा न जाइ बखानि ॥ ११० ॥  
राम सप्रेम पुलकि उर लावा । परम रंकु जनु पारसु पावा ॥  
मनहुँ प्रेमु परमारथु दोऊ । मिलत धरें तनु कह सनु कोऊ ॥

बहुरि लखन पायन्ह सोइ लागी । लीन्ह उठाइ उमगि अनुरागा ॥  
 पुनि सिय चरन घूरि धरि सीसा । जननिजानि सिमु दीन्हि असीसा ॥  
 कीन्ह निपाद दंडवत तेही । मिलेउ मुदिन लखि राम सनेही ॥  
 पिअत नयन पुट रूपु पियूषा । मुदिन सुयसनु पाइ जिमि भूषा ॥  
 ते पितु मातु कहहु सखि कैसे । जिन्ह पठए बन बालक ऐसे ॥  
 राम लखन सिय रूपु निहारी । सोच सनेह बिकल नर नारी ॥  
 दो०—सब ग्धुघोर अनेक विधि सखहि सिखावनु दीन्ह ।

राम रजायेसु सीस धरि भवन गवनु तेहि कीन्ह ॥१११॥  
 पुनि सिय राम लखन फर जेरी । जमुनहि कीन्ह प्रनामु बहोरी ॥  
 चले ससीय मुदित दोउ माई । रबितनुजा कै करत बड़ाई ॥  
 पथिक अनेक मिलहि मग जाता । कहहि सप्रेम देखि दोउ आता ॥  
 राजलखन सब अंग तुम्हारे । देखि सोचु अति हृदय हमारे ॥  
 मारगु चलहु पयादेहि पाएँ । जोतिषु भूठ हमारे १ भाएँ ॥  
 अगसु पथु गिरि कानन भारी । तेहि महँ साथ नारि सुदुमारी ॥  
 करि केहरि बन जाइ न जोई । हम सँग चलहि जो आयेसु होई ॥  
 जाव जहों लगि तहँ पहुँचाई । फिरव बहोरि तुम्हहि सिरु नाई ॥  
 दो०—येहि विधि पूछहि प्रेमदस पुलक गात जल नैन ।

कृपासिंधु फेरहि तिन्हहि कहि विनीत मृदु बदन ॥११२॥  
 जे पुर गावँ बसहि मग माहीं । तिन्हहि नाग सुर नगर सिहाहीं ॥  
 केहि सुकृती केहि धरी वषाए । धन्य पुन्यमय परम सुहाए ॥  
 जहँ जहँ राम चरन चलि जाहीं । तिन्ह समान अमरावति नाहीं ॥  
 पुन्य पुंज मग निकट निरासी । तिन्हहि सराहहि सुरपुर बासी ॥  
 जे भरि नयन मिलोहहि रामहि । सीता लखन सहित घनस्थामहि ॥  
 जे सर सरित राम अवगाहहि । तिन्हहि देव सर सरित सराहहि ॥

जेहि तर तर प्रसु बैठहिं जाई । करहिं कलपतरु तासु बड़ाई ॥  
 परसि रामु पद पदुम परागा । मानति भूमि भूरि निज भागा ॥  
 दो०—छाहैं करहिं घन विबुध गन वरपहिं सुमन सिंहाहिं ।

देखत गिरि वन विहग मृग रामु चले मग जाहिं ॥११३॥  
 सीता लखन सहित रघुराई । गावैं निकट जब निकसहिं जाई ॥  
 सुनि सय बाल वृद्ध नर नारी । चलहिं तुरत गृह काज बिसारी ॥  
 राम लखन सिय रूप निहारी । पाइ नयन फलु होहिं सुखारी ॥  
 सजल बिलोचन पुलक सरीरां । सब भए मगन देखि दोड बीरा ॥  
 बरनि न जाइ दसा तिन्ह फेरी । लहि जनु रंकन्हि सुरमनि देरी ॥  
 एकन्ह एक बोलि सिख देहीं । लोचन लाहु लेहु धन पहीं ॥  
 रामहि देखि एक अनुरागे । चितवत चले जाहिं संग लागे ॥  
 एक नयन मग धवि उर आनी । होहिं सिथिल तन मन बर बानी ॥  
 दो०—एक देखि बट छाहैं भलि डसि मृदुल तृन पात ।

कहहिं गँवाइअ छिनुकु समु गवनव अवहिं कि प्रात ॥११४॥  
 एक कलस भरि आनहिं पानी । अँचइअ नाथ कहहिं मृदु बानी ॥  
 सुनि प्रिय बचन प्रीति अति देखी । राम कृपाल सुसील बिसेपी ॥  
 जानी समित सीय मन माहीं । घरिक बिलंबु कीन्ह बट छाँहीं ॥  
 मुदित नारि नर देखहिं सोभा । रूप अनूप नयन मनु लोभा ॥  
 एक टक सब सोहहिं चहुँ ओरा । रामचंद्र मुख चंद्र चकोरा ॥  
 तरुन तमाल वरन तनु सोहा । देखत कोटि मदन मनु मोहा ॥  
 दामिनि वरन लखनु सुठि नीके । नख सिख सुभग भावते जीके ॥  
 सुनि पट कटिन्ह कसैं तूनीरा । सोहहिं कर कमलनि घनु तोरा ॥  
 दो०—जथा मुकुट सीसनि सुभगे उर भुज नयन बिसाल ।

सरद परव विधु बदन पर लसत स्वेदकन बाल ॥११५॥  
 बरनि न जाइ मनोहर जोरी । सोभा बहुत थोरि मति मोरी ॥  
 राम लखन सिय सुंदरताई । सब चितवहिं चित मन मति लाई ॥

थके नारि नर प्रेम पित्रासे । मनहु मृगी मृग देखि दित्रा से ॥  
 सीय समीप आन निअ जाही । पूँछन अति सनेह सकुनाही ॥  
 बार बार सब तागहि पाए । कहहि बचन मृदु माल सुभाए ॥  
 राजकुमारि विनय हमर करही । तिय सुभाय कहु पूँछन डरही ॥  
 स्वामिनि अविनय छमवि हमारी । विलगु न मानवि जानि गैवारी ॥  
 राजकुँअर दोउ सहज सलोने । एत ते लही दुति मरकत सोने ॥  
 दो०—स्यामल गौर किमोर बर सुंदर सुगमा अवन ।

सरद सर्शनीनाथ मुसु सरद सरोरट नयन ॥११६॥  
 कोटि मनोज लजावनिहारे । मुमुक्ष कहहु को आहि तुम्हारे ॥  
 सुनि सनेहमय मंजुल बानी । सकुचि सीय मन महुँ मुसुफानी ॥  
 तिन्हहि विलोकि विलोकि धरनी । दुहुँ सजोच सकुचति बरबरनी ॥  
 सकुचि सप्रेम बाल मृगनयनी । बोली मधुर बचन पिकवयनी ॥  
 सहज सुभाय सुमग तन गोरे । नामु लखनु लघु देवर मोरे ॥  
 बहुरि बदनु बिधु अंचल ढाँकी । पिय तन चिनइ भौंह करि बाँकी ॥  
 खजन मंजु तिरीछे नयननि । निअपतिकहेउतिःहहिसियमयननि ॥  
 भई मुदित सन ग्राम बधूटी । रकन्ह राय रासि जनु लूटी ॥  
 दो०—अति सप्रेम सिय पाय परि बहु बिधि देहि असीस ।

सदा सोहागिनि होहु तुम्ह जब लागि महि अहिमीस ॥११७॥  
 पारवती सम पति प्रिय होह । देखि न हम पर छाड़य छोह ॥  
 पुनि पुनि विनय करिअ कर जोरी । जौं येहि मारग फिरिअ बहोरी ॥  
 दरसन देव जानि निज दासी । लखी सीय सब प्रेम पित्रासी ॥  
 मधुर बचन कहि कहि परितोषी । जनु कुमुदिनी कौमुदी पोषी ॥  
 तबहिं लखन रघुवर रुख जानी । पूँछेउ मगु लोगन्हि मृदु बानी ॥  
 सुनन नारि नर भए दुखारी । पुलकित गात बिलोचन बारी ॥

मिया मोटु मन भए मलीने । विधि निधि दीन्हि ? लेत अनु छीने ॥  
समुझि करम गति धीरजु कीन्हा । सोधि सुगम मगु तिन्ह कहि दीन्हा ॥

दो०—लखन जानकी सहित तव गवनु कीन्ह रघुनाथ ।

फेरे सब भिष्य वचन कहि लिए लाइ मन साथ ॥११८॥

फिरत नारि नर अति पछिताहीं । दैअहि दोषु देहिं मन माहीं ॥  
सहित विषाद परसपर कहहीं । विधि करतब उलटे सब अहहीं ॥  
निपट निरंकुस निदुर निसंकू । जेहिं ससि कीन्ह सरुज सकलंकू ॥  
रुखु कलपतरु सागरु खारा । तेहिं पठए बन राजकुमारा ॥  
जौं पै इन्हहिं दीन्ह बनवासू । कीन्ह बादि विधि भोग विलासू ॥  
ये विचारहिं मग बिनु पदप्राना । रचे बादि विधि बाहन नाना ॥  
ये महि परहिं ढासि कुस पाता । सुमग सेज कत सृजत विधाता ॥  
तत्पर बास इन्हहिं विधि दीन्हा । धवल धाम रचि रचि समु कीन्हा ॥

दो०—जौं ये मुनिपट धर जटिल सुंदर मुठि सुकुमार ।

बिविधि भौंति भूपन बसन बोदि किए करतार ॥११९॥

जौं ये कंद मूल फल खाहीं । बादि सुधादि असन जग माहीं ॥  
एक कहहिं ये सहज सुहाए । आपु प्रगट भए विधि न बनाए ॥  
जहँ लगि बेद कही विधि करनी । सबन नश्य मन गोचर बरनी ॥  
देखहु खोजि भुवन दस चारी । कहँ अस पुरुष कहँ असि नारी ॥  
इन्हहिं देखि विधि मनु अनुरागा । पटतर जोगु बनावइ लागा ॥  
कीन्ह बहुत सम एक न आए । तेहिं इरिषा बन आनि दुराए ॥  
एक कहहिं हम बहुत न जानहिं । आपुहि परम धन्य करि मानहिं ॥  
ते पुनि पुन्य पुंज हम लेखे । जे देखहिं देखिहहिं जिन्ह देखे ॥



तुम्ह तें अधिक गुरहिं जिअ जानी । सकल भाय सेवहिं सनमानी ॥

दो०—सतु करि मोगहिं एरु फलु राम चरन रति होउ ।

तिन्ह के मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ ॥१२८॥

काम कोह<sup>१</sup> मद मान न मोहा । लोभ न द्योभ न राग न टोहा ॥

जिन्ह के कपट दम नहि माया । तिन्ह के हृदय बसहु रघुराया ॥

सच के प्रिय सच के हितकारी । दुख सुख सरित प्रससा गारी ॥

फहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी । जागत सोदत सरन तुम्हारी ॥

तुम्हहि छोड़ि गति दूसरि नाही । राम बसहु तिन्ह के मन माही ॥

जननी सम जानहिं पर नारी । धनु पराव निप तें निप भारी ॥

जे हरपहिं पर सपति देखी । दुखित होहिं पर निपति निसेपी ॥

जिन्हहिं राम तुम्ह प्रान पिआरे । तिन्ह के मन मुभ सदन तुम्हारे ॥

दो०—स्वामि सखा पितु मातु गुर जिन्हके सन तुम्ह तात ।

मन मंदिर तिन्ह के बसहु सीय सहित दोउ भान ॥१३०॥

अवगुन तजि सच के गुन गहरी । बिप्र धेनु हित संकट सहरी ॥

नीति निपुन जिन्ह कह जग लीका । घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका ॥

गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा । जेहि सन भौंति तुम्हार भरोसा ॥

राम भगत प्रिय लागहिं जेही । तेहि उर बसहु सहित बेदेही ॥

जाति पौंति धनु धामु बड़ाई । प्रिय परिवार सदन सुखदाई ॥

सच तजि तुम्हहि रहइ लउ<sup>२</sup> लाई । तेहि के हृदय रहहु रघुराई ॥

सरगु नरकु अपवरगु समाना । जहँ तहँ देख धरें धनु बाना ॥

करम बचन मन राउर चेरा । राम करहु तेहि के उर डेरा ॥

दो०—जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु ।

बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु ॥१३१॥

१—प्र० . कोह । दि० . प्र० [ (४) (५) . कोय ] । [ वृ० : कोय ] । च० . प्र० ।

२—प्र० . लउ । दि० . प्र० [ (१) : लै ] । [ वृ० : लय ] । च० : प्र० [ (८) . डर ] ।

येहि विधि मुनिवर भवन देलाए । बचन सप्रेम राम मन भाए ॥  
 कह मुनि मुनहु, भानुकुल नायक । आसमु कहौ समय सुखदायक ॥  
 चित्रकूट गिरि करहु निवासू । तहँ तुम्हार सब माँति सुपासू ॥  
 सैलु सुहावन कानन चारू । करि केहरि मृग बिहंग विहारू ॥  
 नदी पुनीत पुगन बखानी । अत्रि प्रिया निज तप बल आनी ॥  
 सुरसरि धार नाउँ मंदाकिनि । जो सब पातक पोतक ढाकिनि ॥  
 अत्रि आदि मुनिवर बहु बसहीं । करहि जोग जप तप सन कसहीं ॥  
 चलहु सफल स्रम सब कर करह । राम देहु गौरव गिरिवरह ॥  
 दो०—चित्रकूट महिमा अमित कही महा मुनि गाइ ।

आइ नहाए सरित बर सिय समेत दोउ भाइ ॥१३२॥  
 रघुवर कहेउ लखन भल घाढ़ । करहु कतहुँ अब ठाहर ठाढ़ ॥  
 लखन दीख पय उतर करारा । चहुँ दिसि फिरेउ धनुष जिमिनारा ॥  
 नदी पनच सर सम दम दाना । सकल कलुष कलि साउज नाना ॥  
 चित्रकूट जनु अबलु अहेगी । चुकइ न घान मार मुठमेरी ॥  
 अस कहि लखन ठाउँ देखरावा । थलु विलोकि रघुवर सुख पावा ॥  
 रमेउ राम मन देवन्ह जाना । चने सहित सुरथपति<sup>१</sup> प्रधाना ॥  
 फोल किरात वेप सब आए । रचे परन तुन सदन सुहाए ॥  
 वरनि न जाइ मंजु दुइ साला । एक ललित लघु एक बिमाला ॥  
 दो०—लखन जानकी सहित प्रभु राजन रुचिर निकेत ।

सोइ मदन मुनि वेप जनु रति रितुराज समेत ॥१३३॥  
 अमर नाग क्रियर दिसिपाला<sup>२</sup> । चित्रकूट आए तेहि काला ॥  
 राम प्रनामु कीन्ह सब काह । मुदित देव जहि लोचन लाह ॥  
 वरपि सुमन कह देव समाजू । नाथ सनाथ भए हम आजू ॥  
 करि विननी दुख दुसह सुनाए । हरपित निज निज सदन सिधाए ॥

१—प्र० : सुर यदति प्रधाना । [ द्वि० : सुरपति परधाना ] । नृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : गिपाना । द्वि० : प्र० । श्रु० : दिनिपाला । च० : नृ० ।

चित्रकूट रघुनन्दन ध्याए । समाचार सुनि सुनि सुनि आए ॥  
 आवत देखि मुदित मुनि वृदा । कीन्ह दृढवत - रघुकुल चदा ॥  
 मुनि रघुवरहि लाइ उर लेहीं । सुफल होन हित आसिप देखी ॥  
 सिय सौमित्रि राम छवि देखहि । साधन सकल सफल करि लेखहि ॥  
 दो०—जथाजोग सनमानि प्रभु प्रिया किए मुनि वृंद ।

करहि जोग जप जाग १ तप निज आसमहि सुखद ॥ १३४ ॥  
 येह सुधि कोल किरातन्ह पाई । हरये जनु नव निधि घर आई ॥  
 कद मूल फल भरि भरि दोना । चले रक जनु लूटन सोना ॥  
 तिन्ह महँ जिन्ह देखेदोउ आता । अपर तिन्हहि पूँछहि मग जाता ॥  
 कहत सुनत रघुनीर निनाई । आइ सवन्हि देखे रघुराई ॥  
 परहि जोहारु भेट धरि आगें । प्रभुहि बिलोखहि अति अनुरागे ॥  
 चित्र लिखे जनु जहँ तहँ ठाढ़े । पुलक सरीर नयन जल बाढ़े ॥  
 राम सनेह मगन सब जाने । कहि प्रिय बचन सकल सनमाने ॥  
 प्रभुहि जोहारि बहोरि बहोरी । बचन विनीत कहहि कर जोरी ॥  
 दो०—अब हम नाथ सनाथ सब भए देखि प्रभु पाय ।

भाग हमारे आगमनु राउर फोसलराय ॥ १३५ ॥  
 धन्य भूमि - बन पथ पहारा । जहँ जहँ नाथ पाउ तुम्ह धारा ॥  
 धन्य निहग मृग कानन चारी । सफल जनम भए तुम्हहि निहारी ॥  
 हम सन धन्य सहित परिवारा । दीख दरमु भरि नयन तुम्हारा ॥  
 कीन्ह वासु भल १ ठाउँ विचारी । इहाँ रावल रितु रहव सुखारी ॥  
 हम सब भौंति करव सेवनाई । करि केहरि अहि वाय दराई ॥  
 बन बेहड़ गिरि कदर सोहा । सन हमार प्रभु पग पग जोहा ॥  
 जहँ १ तहँ तुम्हहि अहेर खेलाउन । सर निरभर भन ठाउँ देसाउन ॥

१—[प्र० : जाग] । दि०, वृ०, च० : नाग ।

२—[प्र० : भवि] । [दि० : भवि] । वृ० : भव । च० : वृ० ।

३—प्र० : जह । दि० : प्र० [(-) : टह] । [वृ० : नह] । च० : प्र० [( ) : तह] ।

हम सेमक परिवार समेता । नाथ न सकुचन थायेसु देता ॥  
दो०—वेद वचन मुनि मन अगम ते प्रभु वरनाग्रयन ।

वचन विरातन्द के सुनत जिमि पितु बालक वयन ॥१३६॥  
रामहि केवल पेमु पियारा । जानि लेउ जो जाननिहारा ॥  
राम सखल यनचर सत्र तोपे । सहि मृदु वचन प्रेम परिपोषे ॥  
बिदा किए सिर नाई सिधाए । प्रभु गुन कहत सुनन घर आए ॥  
एहिं विधि सिय समेन दोउ भाई । बसहिं बिपिन सुर मुनि सुखदाई ॥  
जम तैं आइ रहे रघुनाथहु । सब तैं भएउ बनु मंगलदायकु ॥  
पूतहिं फलहिं विष्टप विधि नाना । मजु बलिन बर बेलि निताना ॥  
सुगठरु सरिस सुभयँ सुहाए । मनहु विबुध बन परिहारि आए ॥  
गुंज मजुतर मधुकर सैनी । त्रिविध बयारि बहइ सुख देनी ॥  
दो०—नीलकंठ कलकंठ सुरु चातक चक्र चक्र ।

भाति भाँति बोलहिं विहँग सवन सुखद चित्त चोर ॥१३७॥  
हरि केहरि कृपि कोल दुरगा । विगन बैर विचरहिं सत्र सगा ॥  
फिरत अहेर राम छवि देखी । होहिं मुदित मृग वृन्द बिसेपी ॥  
निनुध बिपिन जहँ लागे जग माहीं । देखि राम बनु सखल सिंहाहीं ॥  
सुरसरि सरसइ दिनकरकन्या । मेकलसुता गोदावरि धन्या ॥  
सत्र सर सिंधु नदी नद नाना । मझनिनि कर कहिं बग्याना ॥  
उदय अस्त गिरि अरु बैलासू । मरु मेरु सकल सुरवासू ॥  
सैल हिमाचल आदिक जेने । चित्रकूट असु गात्रहिं तेते ॥  
विधि मुदित मन सुख न समाई । सत्र त्रिपुल बडाई पाई ॥  
दो०—चित्रकूट के विहँग मृग बेलि विष्टप वृन जाति ।

पुन्यपुंज सत्र धन्य अस कहहिं देव दिन राति ॥१३८॥  
नयनवत रघुनाथि बिलोकी । पाइ जनम फल होहिं बिसोकी ॥

परसि चरन रज अचर सुखारी । भए परमपद के अधिकारी ॥  
 सो वनु सैलु सुभाय सुहावन । मगलमय अतिपावन । पावन ॥  
 महिमा कहिअ वचन विधि तासु । मुम्बसागर जहँ कीन्ह निजासु ॥  
 पयप्रयोधि तजि अवध विटाई । जहँ सिय लखनु राम रहे आई ॥  
 कहि न सजहिं सुपमा । असि कानन । जो सन सहस होहि सहसानन ॥  
 सो मै घरनि कहौ विधि केही । ढावर कमठ कि मंदर लेही ॥  
 सेवहिं लखनु करम मन बानी । जाइ न सीलु सनेहु बखानी ॥  
 दो०—छिनु छिनु लखि सिय राम पद जानि आपु पर नेहु ।

करत न सपनेहु लखनु चितु बंधु मातु पितु गेहु ॥ १३२ ॥  
 राम सग सिय रहति सुखारी । पुर परिजन गृह सुरति बिसारी ॥  
 छिनु छिनु पिय बिधु बदन निहागी । प्रमुदित मनहुँ चक्रोर कुमारी ॥  
 नाह नेहु नित बढत बिलोकी । हरपित रहति दिवस जिमे कोकी ॥  
 सिय मनु राम चरन अनुरागा । अवध सहस सम बन प्रिय लागा ॥  
 परनकुटी प्रिय प्रियनम संगी । प्रिय परिवारु दुरग बिहगा ॥  
 सासु ससुर सम मुनितिअ मुनिवर । असनु अभिअ सम कद मूल फल ॥  
 नाथ साय साथरी सुहाई । मयन सयन सय सम सुखदाई ॥  
 लोकप होहि बिनांकुत जासु । तेहि किमोहि सक बिषय बिलासु ॥  
 दो०—सुमिरत रामहिं तजहिं जन तृन सम बिषय बिलासु ।

रामप्रिया जग जननि सिय कछु न आचारजु तासु ॥ १४० ॥  
 सीय लखनु जेहिं विधि सुख लहरी । सोइ रघुनाथु करहिं सोइ कहरी ॥  
 कहहिं पुगतन कथा कहानी । सुनहिं लखनु सिय अति सुख मानी ॥  
 जय जय राम अवध सुधि करही । तब तब बारि बिलोचन भरही ॥  
 सुमिरि मातु पितु परिजन भाई । मात सनेहु सील सेवकाई ॥

१—[प्र० : सुभा ] । दि० : सुभा [ (४) : सुभा ] । [तु० : सुभा] । च० . दि० ।

२—प्र० : पर । दि० : प्र० [ (१) फल ] । तु०, च० : प्र० ।

कृपा सिंधु प्रभु होहिं दुखारी । धीरजु घरहिं कुसमठ बिचारी ॥  
 लखि सिय लखनु बिकल होइ जाहीं । जिमि पुरुषहि अनुसार परछाहीं ॥  
 प्रिया बंधु गति लखि रघुनंदनु । धीर कृपाल मगत उर चंदनु ॥  
 लगे कहन कछु कथा पुनीता । सुनि सुखलहहिं लखनु अरु सीता ॥  
 दो०—रामु लखन सीता सहित सोहत परन निरैत ।

जिमि बासव बस अमरपुर सची जयत समेत ॥१४१॥  
 जोगबहिं प्रभु सिय लखनहि कैसें । पलक विलोचन गोलक जैसें ॥  
 सेबहिं लखनु सीय रघुगौरहि । जिमि अश्विनेकी पुरुष सरीरहि ॥  
 येहि विधि प्रभु बन बसहिं सुखारी । खग मृग सुर तापस हितकारी ॥  
 कहैउं राम बन गवनु सुहावा । सुनहु सुमत्र अवध जिमि आवा ॥  
 फिरेउ निपादु प्रभुहि पहेचाई । सचिव सहित रथ देखैसि आई ॥  
 मंत्री बिकल विलोकि निपादू । कहि न जाइ जस भएउ बिपादू ॥  
 राम राम सिय लखनु पुनारी । परेउ घरनि तल व्याकुल मारी ॥  
 देख दखिन दिसि हय हिहिनाहीं । जनु बिनु पलबिहँग अनुलाहीं ॥  
 दो०—नहिं तनु चरहिं न पियहिं जलु मोचहिं लोचन बारि ।

व्याकुल भएउं निपाद सब रघुवर बाजि निहारि ॥१४२॥  
 धरि धीरजु तब कहइ निपादू । अब सुमत्र परिहरहु बिपादू ॥  
 तुम्ह पडित परमारथ ज्ञाता । धरहु धीर लखि विमुख बिघाता ॥  
 विविध कथा कहि कहि मृदु बानी । रथ बैठारेउ बरबस आनी ॥  
 सोक सिथिल रथु सके न होंकी । रघुनर बिरह पीर उर थोंकी ॥  
 चरफराहिं मग चलहिं न धोरे । बन मृग मनहुं आनि रथ जोरे ॥  
 अदुकि? परहिं फिरि हेरहिं पीछे । राम वियोग बिकल दुख तीर्थे ॥  
 जो कह रामु लखनु वेदेही । हिंकरि हिंकरि हित हेरहिं तेही ॥  
 बाजि बिरह गति कहि किमि जाती । बिनु मनिफनिक बिरल जेहि माँती ॥

दो०—भएउ निपाडु विपादवम देखत सचित्र तुरंग ।

बोलि सुसेवक चारि तत्र दिष्ट सारथी सग ॥१४३॥  
 गुरु सारथिह फिरेउ पहुँचाई । बिहू निपाडु घरनि नहि जाई ॥  
 चले अवध लेइ रथहि निपादा । होहि छनहि छन मगन विपादा ॥  
 सोच सुमत्र विह्वल दुख दीना । धिग जीवन रघुमेर विहीना ॥  
 रहिहि न अतहु अवध सरीरु । जमु न लहेउ बिहुरत रघुमेरु ॥  
 भए अजस अघ भाजन प्राना । कवन हेतु नहि फात पयाना ॥  
 अहह मद मनु अवसर चूसा । अजहु न हृदय होत दुइ दूका ॥  
 मीजि हाथ सिरु धुनि पछताई । मनहु कृपन रघन रासि गर्वाई ॥  
 बिरिद बाँधि वर वीरु कहाई । चलेउ समर जनु सुभट पराई ॥  
 दो०—त्रिम विप्रेक्षी वेद विर समत साधु सुजाति ।

जिमि धोलैं मद पान कर सचिव सोच तेहि भाति ॥१४४॥  
 जिमि कुलीन तिय साधु सयानी । पतिदेवा करम मन बानी ॥  
 रहे करम बस परिहरि नाह । सचिव हृदय तिमि दारुन दाह ॥  
 लोचन सजल डीठि भइ थोरी । सुनइ न सवन विह्वल मति भोरी ॥  
 सुखहि अधर लागि मुँह लादी । जित न जाइ उर अवधि कपाटी ॥  
 बिरन भएउ न जाइ निहारी । मारेसि मनहु पिता महतारी ॥  
 हानि गलानि विपुल मन व्यापी । जमपुर पथ सोच जिमि पापी ॥  
 वचन न आउ हृदयँ पछिताई । अवध काह मै देखब जाई ॥  
 राम रहिन रथ देखहि जोई । सकुचिहि मोहि बिलोक्त सोई ॥  
 दो०—धाइ पछिहहि मोहि जम बिमल नगर नर नारि ।

उतरु देव मै सर्गहि तत्र हृदय बज्रु बेठारि ॥१४५॥  
 पुछिहहि दीन दुखित सब माता । कहब काह मै तिन्हहि बिधाता ॥

१—प्र० : उडुकि । दि० : प्र० [ (४) (७) : अति ] । [तु० : उडुकि] । च० : प्र० ।

२—प्र० : रहिहि । दि० : प्र० [ (२) : रही ] । तु० : प्र० ।

३—प्र० : हानि । [ दि०, तु० : कृपनि ] । तु०, च० : प्र० [ (५) : कृपति ] ।

पूँछिहि जबहि लखन महतारी । कहिहौं कवन सँदेस सुखारी ॥  
 राम जननि जब आइहि घाई । सुमिरि बच्छु जिमि धेनु लवाई ॥  
 पूँछत उतरु देव मैं तेही । मे वनु राम लखनु वैदेही ॥  
 जोइ पूँछिहि तेहि ऊतरु देवा । जाइ अवर्ष अव येहु सुख लेना ॥  
 पूँछिहि जबहि राउ दुख दीना । जिवनु जासु रघुनाथ अधीना ॥  
 देहौं उतरु कौनु मुँहु लाई । आपउँ कुमल कुँआर पहुँचाई ॥  
 सुनत लखन सिय राम सँदेसू । तन जिमि तनु परिहरिहि नरेसू ॥  
 दो०—हृद न बिदरेउ पंक जिमि विद्युरत प्रीतमु नीरु ।

जानत हौं मोहि दीन्ह विधि येहु जातना सरीरु ॥१४६॥  
 येहि विधि करत पंथ पछितावा । तमसा तीर तुरत रथु आग ॥  
 विदा किए करि विनय निषादा । फिरे पाय परि बिकल विषादा ॥  
 पैठन नगर सचिव सकुवाई । जनु मारेसि गुर बाँमन गाई ॥  
 बैठि बिटप तर दिवसु गँवावा । सौंभ समय तब अवसर पावा ॥  
 अवध प्रवेशु कीन्ह अँधियारे । पैठ भवन रथु राखि दुआरे ॥  
 जिन्ह जिन्ह समाचार सुनि पाए । भूप द्वार रथु देखन आए ॥  
 रथु पहिचानि बिकल लखि घोरे । गरहिं गात जिमि आतप ओरे ॥  
 नगर नारि नर व्याकुल कैसे । निघटत नोर मीन गन जैसे ॥  
 दो०—सचिव आगमनु सुनत सबु बिकल भएउ रनिवासु ।

भवन भयकर लाग तेहि मानहु प्रेत निवासु ॥१४७॥  
 अति आरति सब पूँछहि रानी । उतरु न आव बिकल भइ बानी ॥  
 सुनइ न सवन नयन नहिं सूझा । कहहु कहौं नृपु तेहि तेहि बूझा ॥  
 दासिन्ह दीख सचिव बिकलाई । कौसल्या गृह गई लवाई ॥  
 जाइ सुमंत्र दीख कस राजा । अमिअ रहित जनु चदु बिराजा ॥  
 आसन सयन बिभूषन हीना । परेउ भूमि तल निपट मलीना ॥



लेहि उसास सोच मोहि भोली । गुगुर ते जनु ममेउ जजनी ॥  
 लेन सोच भरि दिनु दिनु दानी । जनु जगि पन पोट मंगानी ॥  
 राम राम कह राम सनेही । पुनि कह राम लखन बैदेही ॥  
 दो०—देभि सचिउ \*जय जीव कीन्हैउ दंड प्रगनु ।

मुन उठैउ ब्यकुल नृपति कहु मुनिव कहै राम ॥१४८॥  
 मूष सुमंतु लीन्ह उर लार्ई । मूडन कहु अभाज जनु पई ॥  
 सहित सनेह निरुट धैरसी । पूछन गउ नयन भरो बरी ॥  
 राम गुसन कहु सत्ता सनेही । कहै रघुनाथ लखनु बैदेही ॥  
 आने फेरि कि बगहि सिपाण । मुन सचिउ लोचन जन दाण ॥  
 सोक बिलल पुनि पूछ नरैसु । कहु मिय राम लखनु सदेसु ॥  
 राम रूप गुन सीन गुमाऊ । सुगरि सुगिर ठर सोचन गऊ ॥  
 राज सुगई दीन्ह बनवास । मुनि मन मण्ड न हरप हरैसु ॥  
 सो मुन बिहुरत गए न प्राणा । को पपी बड़ मोहि समाना ॥  
 दो०—सत्ता राम सिय लखनु जहैं तहाँ मोहि पटुनाउ ।

नाहि त चाहत चलन अर प्राण कहीं सति भाउ ॥१४९॥  
 पुनि पुनि पूछन मगिहि राऊ । मिशम \*मुमन सैदेम सुगऊ ॥  
 कहि सत्ता सैइ बेगि उपाऊ । राम लखनु सिय नयन देखैऊ ॥  
 सचिउ धीर धरि कह गृधु बानी । महाराज तुम्ह पडिन ज्ञानी ॥  
 बीर सुधीर धुरंधर देवा । साधु सभाजु सरा तुम्ह सेवा ॥  
 जनम मरन सब दुख सुख भोगा । हानि लाभु प्रिय मित्रन चियोगा ॥  
 काल करम बस होहि मोसई । चरनस राति दिवस की नई ॥  
 सुख हरषाई जड़ दुख बिलखाही । दोउ सम भीर धरहि मन माही ॥  
 भीरजु धरहु बिबेक बिचारी । छाड़िअ सोचु सकलु हितचारी ॥  
 दो०—प्रथम बास तमसा मण्ड दूसर सुरसरि तीर ।

न्हाइ रहे जल पानु करि सिय समेत दोउ बीर ॥१५०॥  
 केवट कीन्ह बहुत सेवकाई । सो जामिनि सिंगरीर गँवाई ॥

होत प्रातः वट्योहूँ मँगावा । जयमुकुट निज सीत वन वा ॥  
 राम सवा तन नाग मँगाई । प्रिया चढ़ाई चढ़े रघुराई ॥  
 लखन वान धनु धरे वनई । आपु चढ़े प्रभु आयेसु पाई ॥  
 बिहल बिलोकि मोहि रघुवोरा । बोले मचुर बचन धरि धीरा ॥  
 तात प्रनमु तात सन फहेहूँ । बार बार पद पंक्रज गहेहूँ ॥  
 करबि पाय परि बिनय बहोरी । तात करिअ जनि बिना मोरी ॥  
 वन मग मंगल कुमल हमारे । कृपा अनुग्रह पुन्य तुम्हारे ॥

धं०—तुम्हरे अनुग्रह तात वानन जात सन सुख पाइहों ।

प्रतिपालि आयेसु कुसल देखन पाय पुनि फिर आइहों ॥

जननी सकल परितोपि परि परि पाय करि बिनती धनी ।

तुलसी करेहु सोइ जननु जेहि कुमनी रहहि कोसलधनी ॥

सो०—गुर सन कहव सँदेसु बार बार पद पदुम गहि ।

कव्य सोइ उपदेसु जेहि न सोच मोहि अवधपति ॥ १५१ ॥

पुरजन परिजन सकल निहोरी । तात सुनाएहु<sup>१</sup> बिनती मोरी ॥

सोइ सन भौनि मोर हितकारी । जा तैं रह नरनाहु सुखारी ॥

कहव सँदेसु भात के आएँ । नोति न तजिअ राजपदु पाएँ ॥

पानेहु प्रजहि करम मन बानी । सेएहु मातु सकल सम जानी ॥

और<sup>२</sup> निवाहेहु भायव भाई । करि पितु मातु सुजन सेवकाई ॥

तात भौनि तेहि राखव राऊ । सोच मोर जेहि करइ न काऊ ॥

लखन कहे कछु बचन कठोरा । वरजि राम पुनि मोहि निहोरा ॥

बार बार निज सपथ देवाई । कहवि न तात लखन लरिकाई ॥

दो०—रहि प्रनामु कछु कहन निय सिय भइ सिथिल सनेह ।

धरित बचन लोचन सुजल पुलक पल्लवित देह ॥ १५२ ॥

तेहि अदसर रघुवर रख पाई । केवट पारहि नाव चलाई ॥

१—प्र० : सुनाएहु । दि० : प्र० [ (३) : सुनाएहु ] । तु०, च० : प्र० ।

२—प्र० : और । दि० : प्र० । [ तु० : और ] । च० : प्र० ।

रघुन तिलक चने येहि माँती । देखेउं ठाढ़ कुलिस घरि छाती ॥  
 मैं आपन किमि कहौ कनेसू । जिग्रत फिरेउं लेइ राम सँदेसू ॥  
 अस कहि सचिउ बचन रहि गएऊ । हानि मलानि सोच बस भएऊ ॥  
 सूत बचन सुनतहि नरनाह । परेउ घरनि उर दारुन दाह ॥  
 तलफन त्रिपम मोह मन गाथा । माँजा मनहुँ भीन कहैं व्यापा ॥  
 करि बिलाप सन रोहि रानी । महा विपनि किमि जाइ बमानी ॥  
 सुनि तिलाप दुखह दुख लागा । धीरजह कर धीरजु भागा ॥  
 दो०—भएउ कोलाहलु अगध अनि सुनि नृप राउर सोरु ।

विपुल त्रिहंग बन परेउ निसि मानहुँ कुलिस कठोरु ॥१५३॥  
 प्रान कठगत भएउ सुआलू । मनि त्रिहीन जनु व्याकुल व्यालू ॥  
 इद्रो सकल विकल भई मारी । जनु सर सरसिज बन विनु बारी ॥  
 कौसल्या नृप दीख मलाना । रविफुल रवि अँयएउ जिअ जाना ॥  
 उर घरि धीर गम महतारी । बोली बचन समय अनुसारी ॥  
 नाथ समुझि मन करिअ विचारू । राम विषोग पयोधि अपारू ॥  
 करनधार तुम्ह अवध जहाजू । चदेउ सकल प्रिय पथिक समाजू ॥  
 धीरजु धरिअ त पाइअ पारू । नाहि त बूढ़िहि सन परिवारू ॥  
 जौ जिअ धरिअ निनय पिअ मोरी । रामु लखनु सिय मिलहि बहोरी ॥  
 दो०—प्रिया बवन मृदु सुनन नृप चितएउ आँखि उधारि ।

तलफत भीन मलीन जनु सीबेउ सीतल बारि ॥१५४॥  
 घरि धीरजु उठि बैठ भुआलू । कहु सुमत्र कहैं रामु कृपालू ॥  
 कहा लखनु कहैं रामु सनेही । कहैं प्रिय पुनरधू बैदेही ॥  
 बिलपन राउ विफल बहु माँती । भइ जुग सरिस सिराति न राती ॥  
 तापस अथ साप सुधि आई । कौसल्यहि सब कथा सुनाई ॥  
 भएउ विफल बरनन इतिहासा । राम रहित धिग जीवन आसा ॥

सो तनु राखि करवि मैं काहा । जेहि न प्रेमपनु मोर निवाहा ॥  
हा रघुनंदन प्रान पिरीते । तुम्ह बिनु जिअत बहुत दिन बीते ॥  
हा जानकी लखन हा रघुवर । हा पितुहित चित चातक जलधर ॥

दो०—राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम ।

तनु परिहरि रघुवीर विरह राउ गणउ सुरधाम ॥१५५॥

जिअन मरन कलु दसरथ पावा । अंड अनेऊ अमल जनु छावा ॥  
जिअत राम बिधु बदन निहारा । राम विरह करि मरनु सँवारा ॥  
सोक बिकल सम रोवहि रानी । रूपु सीलु बलु तेजु बखानी ॥  
करहि बिलाप अनेऊ प्रकारा । परहि भूमि तल बारहि बारा ॥  
बिलपहि बिकल दास अरु दासो । घर घर रुदनु करहि पुरवासी ॥  
अँथपउ आजु भानुकुल मानू । धरम अवधि गुन रूप निधानू ॥  
गारी सकल कैकइहि देहीं । नयन बिहीन कीन्ह जग जेहीं ॥  
येहि विधि बिलपत रइनि बिहानी । आए सकल महामुनि ज्ञानी ॥

दो०—तब बसिष्ठ मुनि समय सम कहि अनेऊ इतिहास ।

सोक निवारेउ सबहि कर निज विज्ञान प्रकाम ॥१५६॥

तैल नाव भरि नृपु तनु राखा । दूत बोलाइ बहुरि अस माखा ॥  
धावहु बेगि भरत पडि जाहू । नृप सुधि कतहुँ कहहु जनि काहू ॥  
एतनेइ कहेहु भरत सन जाई । गुर बोलाइ पठए दोउ भाई ॥  
सुनि मुनि आयेमु धावन धाप । चले बेगि बर बाजिल जाए ॥  
अनरघु अवध अरभेउ जब ते । कुसगुन होहि भरत कहूँ तब ते ॥  
देखहि राति मथनऊ सभना । जागि करहि कटु कोटि कलपना ॥  
विप्र जेगइ देहि दिन दाना । सिव अभिषेक करहि धिधि नाना ॥  
मोंगहि हृदयँ महेस मनाई । कुसल मातु पितु परिजन भाई ॥

दो०—येहि विधि सोचन भरत मन धावन पहुँचे आई । -

गुर अनुसासन सवन सुनि चले गनेमु मनाइ ॥१५७॥  
चले समीर बेग हय होठे । नाघन सरित सैल वन बाँठे ॥  
हृदउ सोचु भइ कछु न सोहाई । अस जानहि जिअ जाँ उड़ाई ॥  
एक निमेष बाप सम जाई । येहि विधि भरत नगर निअगई ॥  
असगुन होहि नगर पैठारा । रटहि कुमति कुयेन कगरा ॥  
खर सिआर बेलहि प्रतिकूना । सुनि सुनि होइ भरत मन सूता ॥  
श्रीहत सर सरिता वन वागा । नगर विसैप भयाउन लाग्गा ॥  
खग मृग हय गय जाहि न जोए । राम वियोग कुरोग विगोए ॥  
नगर नारि नर निपट दुखारी । मनहु सगन्हि सन सपति हारी ॥  
दो०—पुरजन मिलहि न कहहि कछु गँवहि जोहागहि जाहि ।

भरत दुसल पूँछि न सगहि भय बिपादु मन माहि ॥१५८॥  
हाट बाट नहि जाइ निहारी । जनु पुर दह दिसि लागि दयारी ॥  
आवत सुत सुनि कैरव्यनदिनि । हरपी रविकुल जलहह चदिनि ॥  
सजि आरती मुदिन उठ धाई । द्वारेहि भेटि भवन लेइ आई ॥  
भरत दुखित परिहार निहारा । मानहुं तुहिन वनज वनु मारा ॥  
कैनेई हरपिन येहि भाँती । मनहुं मुदिन दय लाइ किराती ॥  
सुनिहि ससेच देखि मनु मारें । पूँछति नैहर कुपल हमारें ॥  
सकल दुसल कहि भरत सुनाई । पूँछी निज कुन कुपल भनाई ॥  
कहु कहैं तात कहाँ सन मता । कहैं मिथ रामु लखन प्रिय आता ॥  
दो०—सुनि सुत वचन सनेहमय कपट नार भरि नयत ।

भरत सवन मन सूल सम पापिनि बोली बयन ॥१५९॥  
तात बात मैं सरुन सँवारी । भइ मंथरा सहाय विचारी ॥  
दल्लुक काज विधि बीच बिगारेउ । भूपति सुरपतिपुर पगु धारेउ ॥  
सुनत भरतु भए बिबस बिपादा । जनु सहमेउ करि केहरि नादा ॥  
तात तात हा तात पुकारी । परे भूमि तल व्याकुल भारी ॥

चलत न देखन पाएउँ तोही । तात न रामहिँ सौँपेहु मोही ॥  
बहुरि धीर धरि उठे सँमारी । कहु पितु मरन हेतु महतारी ॥  
सुनि सुत वचन कहति केहेई । मरमु पौखि जनु माहुर देई ॥  
आदिहु तें सबु आपनि करनो । कुटिल कठोर मुदिन मन वानी ॥  
दो०—भरतहि बिसरेउ पितु मरन सुनन राम बन गीन ।

हेतु अपनपउ जानि जिअँ थकित रहे धरि मौन ॥१६०॥  
बिफल बिलोकि सुतहि समुझावति । मनहुँ जरे पर लोनु लगावति ॥  
तान राउ नहिँ सोचइ जोगू । बिडइ मुखन जमु कीन्हैउ भोगू ॥  
जीवत सकल जनम फल पाए । अत अमरपति सदन सिधाए ॥  
अस अनुमानि सोचु परिहरहू । सहित समाज राज पुर करहू ॥  
सुनि सुठि सहमेउ राजकुमारू । पाकें छत जनु लाग अँगारू ॥  
धीरजु धरि भरि लेहिँ उसासा । प पिनि सबहिँ भाँति कुल नासा ॥  
जौ पै वृश्चि रही अनि तोही । जनमत काहे न मारे मोही ॥  
पेडु काटि तई पालउ सीबा । मौन जिअन निति चारि उनीचा ॥  
दो०—हंसवंतु दसरथु जन्कु राम लखन से भाइ ।

जननी तूँ जननी भई बिधि सन कछु न बसाइ ॥१६१॥  
जब तैं कुमति कुमत जिअँ ठएऊ । खंड खंड होइ हृदउ न गयऊ ॥  
बर भोगत मन भइ नहिँ पीरा । गरी न जीह मुँह परेउ न कीरा ॥  
मूत्र प्रतीति तोरि किमि कीन्ही । मरन काल बिधि मति हरि लीन्ही ॥  
बिधिहुँ न नारि हृदय गति जानी । सकल रूप अघ अवगुन खानी ॥  
सरल मुसील घरमरत राऊ । सो किमि जानइ तीअ सुमाऊ ॥  
अस को जीव जतु जग माहीं । जेहि रघुनाथ प्राण प्रिय नाहीं ॥  
मे अति अहित रामु तेउर तोही । को तूँ अहसि सत्य कहु मोही ॥  
जो हसि सो हसि मुँह मसि लाई । ओखि ओटि उठि बैटहि जाई ॥

१—प्र० : सोच । दि० : प्र० [(४) (५) (५७) : सोचन] । [तु० : भोवन] । च० : प्र० ।

२—प्र० : तेउ । दि० : प्र० [(४) : प्रिय] । [५० : ते] । च० : प्र० ।

दो०—राम विरोधी दृष्ट्य ते प्रगट फान्ह बिनि मोहि ।

मो समान को पातकी चादि कहीं कहु तोहि ॥१६२॥  
 सुनि सत्रपुन मातु कुटिनाई । जगहि मान रिम कहु न बनाई ॥  
 तेहि अवसर कुबरो तहँ आई । बसन विमूगन बिबि बनाई ॥  
 लखि रिस भरेउ लखन लघु भाई । बगत अनन घृन आहुति पाई ॥  
 हुमनि लात तकि कूर माग । परि मुँह मर महि करन पुकारा ॥  
 कूरर दूटेउ पूट कपारू । दलित दसन मुन रधिर मनारू ॥  
 आह दइअ मै काह नमावा । कृत नीक कहु अनरुम पावा ॥  
 सुनिरिपुहन लखिनसासख सोटी । लगे घमीउन धरि धरि भौंटी ॥  
 भरत दयानिधि दीन्ह छड़ाई । कौसल्या पहि गो दोउ भाई ॥

दो०—मलिन यमन विरान बिहल कृम सरीर दुख भार ।

फनक कल्प वर बेलि मन मानहुँ हनी तुमारु ॥१६३॥  
 भरतहि देखि मातु उठि धाई । मुरझित अगनि परी भड्डँ आई ॥  
 देखत भरतु विकल भए भारी । परे चरन तन दमा भिमारी ॥  
 मातु तातु कहँ देहि देखाई । रुहँ सिय रामु लखनु दोउ भाई ॥  
 कहकह कत जनमी जग भौंका । जौ जनमि त भइ काहे न बौंका ॥  
 युल कलकु जेहि जनमेउ मोही । अपजम भाजन प्रिय जन द्रोही ॥  
 को निभुन मोहि सरिस अभागी । गति असि तोरि मातु जेहि लागी ॥  
 पितु सुरपुर बन रघुवर केतु । मै केवल सत्र अनरय हेतु ॥  
 धिग मोहि भएउँ बेनु बन आगी । दुसह दाहु दुख दूषन भागी ॥  
 दो०—मातु भरत के बचन मृदु सुनि पुनि उठी सँभारि ।

लिए उठाइ लगाइ उर लोचन मोचति चारि ॥१६४॥  
 सरल सुमाय माय हिय लाए । अति हित मनहु समफिरि आए ॥  
 भेटेउ बहुरि लखन लघु भाई । सोकु सनेहु न हृदयँ समाई ॥  
 देखि सुभाउ कहत सबु कोई । राम मातु अस काहे न होई ॥

माता भरतु गोद बैठारे । आँसु पोंखि मृदु वचन उचारे ॥  
 अजहूँ बच्छ बलि धीरनु धरह । कुसमउ समुझि सोक परिहरह ॥  
 \* जनि मानहु हियँ हानि गलानी । काल करम गति अघटिन जानी ॥  
 काहुहि दोस देहु जनि ताता । मा मोहि सब त्रिधि वाम त्रिधाता ॥  
 जो एतेहु दुख मोहि जिआवा । अजहूँ को जानइ का तेहि भवा ॥  
 दो०—पितु आयेसु भूपन बसन तात तजे रघुबीर ।

विसमउ हरपु न हृद<sup>१</sup> कछु पहिरे बलकल चीर ॥ १६५ ॥  
 मुख प्रसन्न मन रंगु<sup>२</sup> न रोपू । सब कर सब विधि करि परितोपू ॥  
 चले विपिन सुनि सिय सँग लागी । रहइ न राम चरन अनुरागी ॥  
 सुनतहि लखनु चले उठि साथी । रहहि न जतन किए रघुनाथा ॥  
 तय रघुपति सबही सिठ नाई । चले संग सिय अरु लघु भाई ॥  
 राम लखनु सिय बनहि सिधाए । गइउँ न संग न प्रान पठाए ॥  
 येहु सबु मा इन्ह आँखिन्ह आगें । तउ न तजा तनु जीव अभागें ॥  
 मोहि न लाज निज नेहु निहारी । राम सरिस सुत मैं महतारी ॥  
 जिअइ मरइ भल भूपति जाना । मोर हृदय सत कुलिस समाना ॥  
 दो०—कौसल्या के बचन सुनि भरत साहत रनिवासु ।

\* व्राकुल बिलपत राजगृहु मानहुँ सोक निगसु ॥ १६६ ॥  
 बिलपहि विकल भरत दोउ भाई । कौसल्या<sup>३</sup> लिए हृदय लगाई ॥  
 भाँति अनेक भरतु समुझाए । कहि विवेकर बचन सुहाए ॥  
 भातहुँ मातु सकल समुझाई । कहि पुरान श्रुति कथा सुहाई ॥  
 बल विहान सुचि सरल सुबानी । बोले भरत जोरि जुग पानी ॥  
 जे अघ मातु पिता सुत मारे<sup>४</sup> । गाइगोठ बहिसुर पुर जारे ॥  
 जे अघ तिश्र बालक बध कीन्हें । भीत महीपति माहुर दीन्हें ॥  
 जे पातक उपपातक अहहीं । करम बचन मन भव कवि कहहीं ॥



ते पातरु मोहि होहु विधाना । जौं येहु हरे मोर मन माना ॥  
दो०—जे परिहरि हरि हर चान भजहि भूत मन घोर ।

तिन्ह कह गति मोहि देउ बिधि जौ जननी मन मोर ॥१६७॥

बेचहि बेद धरमु दुहि लेटी । पिमुन पराय पाप कहि देही ॥  
कुपटी कुटिल कलहमिय कोषी । बेद बिदूषक बिम्ब विरोधी ॥  
लोभी लाल लोलुप चारा । जे ताहि पर घनु पर दाग ॥  
पावौं मै तिन्ह कै गति घोरा । जौ जननी एहु समन मोरा ॥  
जे नहि साधु सग अनुगै । परमारथ पथ विमुख अभागे ॥  
जे न भजहि हरि नर तनु पाई । जिन्हहि न हरि हर सुजमु सोहाई ॥  
तजि श्रुति पथु वाम पथ चहही । बंचरु विरचि बेपु जगु छलही ॥  
तिन्ह कह गति मोहि संकरु देऊ । जननी जौं येहु जानौं भेऊ ॥

दो०—मातु भरत के बचन सुनि सौंचे सरल मुभाय ।

कहाति राम मिय तात तुम्ह सदा बचन मन काय ॥१६८॥

राम प्रानहुँ<sup>१</sup> तैं प्रान तुम्हारे । तुम्ह रघुपतिहि प्रानहुँ तैं प्यारे ॥  
बिधु बिप बन्ध सबह हिमु आगी । होइ बारिचर बारि भिरागी ॥  
भएँ ज्ञानु बरु मिटइ न मोह । तुम्ह रामहिं प्रतिमूल ग होह ॥  
मत तुम्हार येहु जो जग कहहीं । सो सपनहुँ सुख सुगति न लाहही ॥  
अस कहि मातु भरतु हिय लाए । थन पय सबहि नयन जल छाए ॥  
करत बिलाप बहुत येहि भौंती । बैठैहिं बीति गई सप्र राती ॥  
बामदेउ बसिष्ठ तब आए । सचिव महाजन सकल बोलाए ॥  
मुनि बहु भौंति भरत उपदेसे । कहि परमारथ बचन सुदेसे ॥

१—प्र० : गन । ५० : प्र० [ (३) ॥ वा ] । ५०, ५० : प्र० ।

२—प्र० : प्रानहुँ । ५० : प्र० [ (५) (-) : प्रान ] । [ ५० : प्रान ] । ५० : प्र० ।

३—प्र० : बमर । [ ५० : (३) (४) (५) चवद, (५ अ) चुद ] । [ ५० : चुद ] । ५० : प्र० [ (८) : चद ] ।

दो०—सात हृदयँ धीरजु धरहु करहु जो अरसर आजु ।

उठे भरतु गुर बचन सुनि करन कहेउ सबु साजु ॥१६६॥

नृप तनु वेद विहित अन्हवावा । परम विचित्रु विमान बनावा ॥

गहि पग भरत मातु सब राखी । रही राम दरसन अभिलाषी ॥

चंदन अगर भार बहु आए । अमित अनेक सुगंध सुहाए ॥

सरजु तीर रचि चिता बनाई । जनु सुरपुर सोपान सुहाई ॥

येहि विधि दाह क्रिया सन कीन्ही । विधिवत न्हाइ तिलांजुलि दीन्ही ॥

सोधि सुमृत सब बेद पुगना । कीन्ह भरत दसगात विधाना ॥

जहँ जस मुनिवर आयेसु दोन्हा । तहँ तस सहस भौति सबु कीन्हा ॥

भए विपुद्ध दिए सबु दाना । धेनु बाजि गज वाहन नाना ॥

दो०—सिंघासन भूपन बसन अल धरनि धन धाम ।

दिए भरत लहि भूमिसुर मे परिपूरत काम ॥१७०॥

पितु हित भरत कीन्ह जसि करनी । सो मुख लाख जाइ नहिं बरनी ॥

सुदिनु सोधि मुनिवर तब आए । सचि महाजन सकल बोलाए ॥

बैठे राजसभा सब जई । पठए बोलि भरत दोउ भाई ॥

भरतु बसिष्ठ निकट बैठारे । नीति धरमथ बचन उचारे ॥

प्रथम कथा सब मुनिवर बरनी । कइकइ कुटिन कीन्ह जमि करनी ॥

भूप धरम ब्रतु सत्य सराहा । जेहि तनु परिहगि प्रेमु निवाहा ॥

कहत राम गुन सील सुभाऊ । सजल नयन पुलकैउ मुनिराऊ ॥

बहुरि लखन सिय प्रीति बखानी । सोक मनेह मगन मुनि ज्ञानी ॥

दो०—सुनहु भरत मावी प्रल बिलखि न्हैउ मुनिनाथ ।

हानि लाभु जीवनु मरनु असु अपजसु विधि हाथ ॥१७१॥

अस बिचारि केहि देख्य दोष । व्यर्थ कहि पर कीजिय रोष ॥

सात निचारु काहु मन माहीं । सोच जोगु दमरथ नृप नहीं ॥

सोचिअ मित्र जो बेद बिहीना । तजिनिअ धरमु मित्र लदनीन ॥  
 सोचिअ नृपनि जा नीति न जाना । जेहि न प्रना भिय प्रन समाना ॥  
 सोचिअ बयमु कृपन धनवान् । जो न अनिवि मित्र भगनि सुनान् ॥  
 सोचिअ सूदु मित्र अग्रमानी १ । मुखरु मानप्रथ ज्ञान गुमानी ॥  
 सोचिअ पुनि पतिवचक मारी । गुटिल कलहप्रिय इन्द्राचारी ॥  
 सोचिअ बटु निज व्रतु परिहरई । जो नहिं गुर आयेसु अनुमरई ॥  
 दो०—सोचिअ गृही जो मोह वन फरइ करमपथ त्याग ।

सोचिअ जनी प्रपच रत बिगन विनेक बिराग ॥१७२॥  
 बेपानस सोइ सोचइ जोगू । तपु रिहाइ जेहि भावइ भोगू ॥  
 सोचिअ पिसुन अमारन क्रोधी । जननि जनक गुर वधु रिरोधी ॥  
 सत्र विधि सोचिअ पर अपकारी । निज तनु पोषक निरदय भारी ॥  
 सोचनीय सगहीं विधि सोई । जो न छाड़ि छलु हरि जनु होई ॥  
 सोचनीय नहिं कोसल राऊ । भुवन चरि दस प्रगट प्रमाऊ ॥  
 भण्ड न अहइ न अब हानिहार । मूषु भरत जम पिता सुम्हारा ॥  
 विधि हरि हरु सुरपति दिसि न था । बरनहिं सत्र दसाथ गुनगाथा २ ॥  
 दो०—कहहु तात कहि भाँति कोउ करिहि बढाई तासु ।

राम लखन सुम्ह सनुहन सरिस सुअन सुचि जासु ॥१७३॥  
 सव प्रहार भूपति बडभागी । बादि विषाद करिअ तेहि लागी ॥  
 येहु सुनि समुझ सासु परिहरह । सिर धरि राज रजायेसु कह ॥  
 राय राजपटु सुम्ह कहँ दीन्हा । पिता वचनु फुर चाहिअ कीन्हा ॥  
 तजे रामु जेरि बचनहि ३ लागी । तनु परिहरेउ राम बिगहागी ॥

१—प्र० अग्रमानी । दि० प्र० [ (४) (५) अग्रमानी ] । [ पृ० अग्रमानी ] ।  
 च० प्र० ।

२—[पृ० मैं इसके आगे निम्नलिखित अर्द्धालो और है  
 तानि काल त्रिभुवन जग मानि । भूरि आग दसस्य सम मानि ।

३—[प्र० बचनेहि ] । दि०, पृ०, च० . बचनहि ।

नृपहि वचन प्रिय नहिं प्रिय आना । करहु तात पितु वचन प्रवाना १ ॥  
 करहु सोस धरि मूप रजाई । हइ तुम्ह कहैं सब भौंति भलाई ॥  
 परसुराम पितु आज्ञा राखी । मारी मातु लोक सब राखी ॥  
 सनय जजातिहि जीवनु दएऊ । पितु अज्ञा अघ अजमु न भएऊ ॥  
 दो०—अनुचित उचित विचार तजि जे पालहिं पितु वधन ।

ते भाजन मुख सुजसु के बसहिं अमरपास अयन ॥१७४॥  
 अवसि नरस वचन फुर करह । पालहु प्रजा सोकु परिहरह ॥  
 सुरपुर नृप पाइहि परितोष । तुम्ह कहैं सुकृप सुजसु नहिं दोष ॥  
 वेद विदित २ संमत सबही का । जेहि पितु देइ सो पावइ टीका ॥  
 परहु राजु परिहरहु गलानी । मानहु मोर वचन हित जानी ॥  
 सुनि सुख लहव राम वैदेही । अनुचित कहव न पंडित केही ॥  
 कैसल्यादि सकल महतारी । तेउ प्रजा मुख होहिं सुखागी ॥  
 मरम ३ तुम्हार राम कर जानिहि । सो सबविधि तुम्हसन भल मानिहि ॥  
 सौपेहु राजु राम के आएँ । सेवा करहु सनेह सुनाएँ ॥  
 दो०—कीजिअ गुर आयेसु अवसि कहहिं सचिव कर जोरि ।

रघुपति आएँ उचित जस तस तब करव बहोरि ॥१७५॥  
 कौसल्या धरि धीरजु कहई । पूत पथ गुर आयेसु अहई ॥  
 सो आदरिअ करिअ हित मानी । तजिअ विषादु कल गाति जानी ॥  
 वन रघुपति सुरपति ४ नरनाह । तुम्ह येहि भौंति तात कदराह ॥  
 परिजन प्रजा सचिव सब अंघा । तुम्हहीं सुन सब कहैं अवलंघ ॥  
 लखि विधि वम कलु कठिनाई । धीरजु घाहु मानु बलि जाई ॥

१—प्र० : प्रवाना । दि० : प्र० [ (४) (०) (१५) : प्रमाना ] । [तु० : प्रमाना] । च० : प्र० ।

२—प्र० : विदित । दि० : प्र० [ (३) : विदित ] । तु०, च० : प्र० [ (८) : विदित ] ।

३—प्र० : मरम । दि० : प्र० [ (३) (४) : प्रेम ] तु०, च० : प्र० [ (६) : परम ] ।

४—प्र० : सुरपति । [ दि०, तु० : सुरपुर ] । च० : प्र० ।

सिर धरि गुर आयेसु अनुसाह । प्रजा पालि पुरजन दुहु हरह ॥  
 गुर के बचन सचिव अभिनंरनु । सुने भरत हिय हित जनु चंदनु ॥  
 सुनी बहोरि मातु मृदु बानी । सील सनेह सरल रम सानी ॥

छं०—सानी सरल रस मातु बानी सुनि भरतु ठाकुर न भय ।  
 लोचन सरोरुह सबन सींचत बिरह उा अंगुर नय ॥  
 सो दसा देखत समय तेहि विमरी सर्वाहि सुनि देह की ।  
 तुलसी सराहत सकल सादर सेवें सरज रानेह की ॥

सो०—भरतु कमल कर जोरि धीर धुरंधर धीर धरि ।  
 बचनु अमिश्र जनु मोरि देत उचित उत्तर सर्वाहि ॥१७६॥  
 मोहि उपदेसु दीन्ह गुर नोका । प्रजा सचिव संमत सर्वाही का ॥  
 मातु उचित धरि आयेसु दीन्हा । अवसि सोस धरि चाहौ कीन्हा ॥  
 गुर पितु मातु स्वामि हित बानी । सुनि मनमुदित करि अभिलिजानी ॥  
 उचित कि अनुचित किए बिचारु । घामु जाइ सिर पातरु भारु ॥  
 तुम्ह तौ देहु सरल सिख सोई । जो आचरत मोर भल होई ॥  
 जद्यपि येह समुझत हउं नीके । तदपि होत पारतोपु न जी के ॥  
 अथ तुम्ह विनय मोरि सुनि लेह । मोहि अनुहरत सिखावनु देह ॥  
 उत्तर देउं क्षमव अपराधू । दुखित दोष गुन गनहि न साधू ॥  
 दो०—पितु सुपुत्र सिध रामु वन करन कहहु मोहि राजु ।  
 येहि तैं जानहु मोर हित के आपन बड़ फाजु ॥१७७॥  
 हित हमार सियपति सेदकाई । सो हरि लीन्ह मातु कुटिलाई ॥  
 मैं अनुमान दीखि मन माही । आन उपाय मोर हित नाही ॥  
 सोक समाजु राजु केह लेखें । लखन गम सिय पर बिनु देखे ॥

१—प्र० : धरि । दि० : प्र० । [ व० : पुनि ] : च० : प्र० ।

२—प्र० मैं इसके स्थान पर निम्नलिखित अर्थात् दी है :  
 मातु पिता गुरु प्रभु के बानी । विनहि विचार करिअ सुम जानी ।

३—प्र० : दासि । [ दि०, व० : दीख ] । च० : प्र० [ (घ) : दीख ] ।

बादि बसन बिनु भूषन मारु । बादि बिरति बिनु ब्रह्म बिचारु ॥  
 सरुज सरीर बादि बहु भोगा । बिनु हरि भगति जायँ जप जोगा ॥  
 जायँ जीव बिनु देह मुदाई । बादि मोर सबु बिनु रघुराई ॥  
 जाउँ राम पहिं आयेसु देह । एकहि आँक मोर हित येह ॥  
 मोहि नृपु करि भल आपन कहह । सोउ सनेह जड़ता बस कहह ॥  
 दो०—कइवइ सुषन कुटिल मति राम बिमुख गन्ताज ।

तुम्ह चाहत सुख मोहवस मोहि से अघमु के राज ॥१७८॥  
 कहौँ सौँचु सब सुनि पतिआह । चाहिअ घरमसील नरनाह ॥  
 मोहि राजु हठि देइहहु जवहीं । रसा रसातल जाइहि तवहीं ॥  
 मोहि समान को पाप नियासू । जेहि लगि सीय राम बनबासू ॥  
 राय राम कहुं काननु दीन्हा । बिलुरत गमनु अमरपुर कीन्हा ॥  
 मै सहु सब अनरथ कर हेतू । बैठ बात सब सुनौँ सचेतू ॥  
 बिनु रघुबीर बिलोकि अवसू । रहे प्रान सहि जग उपहाँसू ॥  
 राम पुनीत प्रिय रस रूखे । लोलुप भूमि भोग के मूखे ॥  
 कहँ लगि कहौ हृदय कठिनाई । निदरि कुलिसु जेहि लही बड़ाई ॥  
 दो०—कारन तैं कारजु कठिन होइ दोसु नहिं मोर ।

कुलिस अस्थि तैं उपल तैं लोह कराल कठोर ॥१७९॥  
 केकेईभर तनु अनुरागे । पाँवर प्रान अघाइ अभागे ॥  
 जौ प्रिय विरह प्रान प्रिय लागे । देखन सुनन बहुत अव आगे ॥  
 लखन राम मिय कहूँ वनु दीन्हा । पठइ अमरपुर पात हित कीन्हा ॥  
 लोन्ह विधवपन अपजसु आपू । दीन्हेउ प्रजहि सोकु सतापू ॥  
 मोहि दीन्ह सुख सुजमु सुगजू । कीन्ह कइकई सब कर काजू ॥  
 येहि तैं मोर काह अव नीका । तेहि पर देन कहहु तुम्ह टीका ॥  
 कइकइ जठर जनमि जग माहीं । येह मोहि कहँ कछु अनुचित नाहीं ॥

१—प्र० कैकेईभर तनु । दि० : प्र० । [ नृ० : कैकेईभर तनु ते ] । च० : प्र० ।

२—[ प्र० : पावन ] । दि०, नृ० : पावर । [ च० : पावन ] ।

कोउ कह रहन कहिअ नहिं काह । को न चहइ जग जीवनु लाह १ ॥  
दो०—जरउ सो सपति सदन सुख सुहृदु मातु पितु भाइ ।

सनमुख होत जो रामद कइ न सहज २ सहाइ ॥१८५॥  
घर घर साजहि वाहन नना । हरषु हृदय परमात पयाना ॥  
भरन जाइ घर कीन्ह बिचारु । नगरु बाजि गज भजन भडारु ॥  
सपति सब रघुपति कै आही । जौ बिनु जतनु चलौ तजि ताही ॥  
तौ पतिनाम न मोरि भलाई । पाप सिमोनि साहँ दोहाई ।  
करइ त्वमि हित सेरकु सई । दुपन कोटि देइ छिन कोई ॥  
अस त्रिचारि सुचि सेवक बोले । जे सपनेहु निज घरमु न डोले ॥  
कहि सबु मरमु धरमु भल माया । जो जेहि लायक सो तहँ राखा ॥  
करि सबु जतनु राखि रखवारे । राम मातु पहिं भरतु सिधरे ॥  
दो० आत जननी जनि सनु भरत सनेह सुजान ।

कहेउ बनवन पालघी संजन सुखासन जान ॥१८६॥  
चक्र चकि त्रिमि पुर नर नरी । चहन प्रात उर आरत भारी ॥  
जागन सर निनि भएउ त्रिशना । भरत बोलाए सचिव सुजाना ॥  
कहेउ लेहु सर तिलक समाजू । बनहि देव मुनि रामहि राजू ॥  
वेगि चलहु मुनि सचिव जोहारे । तुरत तुरग रथ नाग सँगरे ॥  
अरु भती अरु अग्नि समाऊ ॥ रथ चढ़ि चने प्रथम मुनिराऊ ॥  
बिग वृद्ध चढ़ि वाहन जाना । चने सकन तप तेज निधाना ।  
नगर लोग सब सजि सजि जाना । बित्रकूट कहँ कीन्ह पयाना ॥  
सिविका मुमग न जाहि बग्यानी । चढ़ि चढ़ि चलत भई सब रानी ॥

१—[१०] में इसके वर्णन निम्नलिखित हैं—  
के। न भव सिय लक्ष्मिन गानु । मव बह प्रिय दिय मग मरानु ॥

२—प्र सदा । दि० प्र० [ (२) मदम ] । १०० प्र० । [च० सदा] ।

३—प्र० नह । दि० प्र० [ (३) तेहि ] । १०० प्र० । [१०० : तेहि] ।

४—प्र० प्रमद ग क्र, राक्र । दि० प्र० [ (१) मारु, गारु ] । [१०० सनायु गारु] । च० : प्र० ।

दो०—पौषि नगर सुखे सेरकन्हि सादर सबहे चनाइ ।

सुमिरि राम सिय चरन तन चले भगु दोउ भाइ ॥१८७॥  
राम दरस वन सब नर नारी । जनु करि करिनि चने तकि वारी ॥  
वन भिय रामु समुझि मन माहीं । सानुज भगु पयादेहि जाहीं ॥  
देखि सनेहु लोग अनुरागे । उत्तरि चले हय गय रथ त्यागे ॥  
जाइ समीप राखि निज डोली । राम मानु मृदु बानी बोली ॥  
सात चढ़हु रथ बलि महनारी । होइहि प्रिय परिवर दुखारी ॥  
तुम्हरे चलत चलहि सब लोगू । सकल सौक कृतनहिं मग जोगू ॥  
सिर धरि बचन चरन सिरु नाई । रथ चढ़ि चलत भए दोउ भाई ॥  
तमसा प्रथम दिवस करि बासू । दूसर गोमति तीर निवासू ॥

दो०—पय अहार फल अमन एक निसि भोजन एक लोग ।

कहत राम हित नेम जन परिहरि भूपन भोग ॥१८८॥  
सई तीर बसि चले बिहाने । शृगवेरपुर सब निअराने ॥  
समाचार सब सुने निपाश । हृदयें विचार कइ समिपाश ॥  
कारन कउन भरतु वन जाहीं । है कछु कपट भाग मन माहीं ॥  
जौ पै जिअ न होनि कुटिलाई । तौ कत लीन्ह सग कटकाई ॥  
जानहिं सानुज रामहि मारी । कौ अकम्क राजु सुवारी ॥  
भरत न राजनीति उर आनी । तब कलकु अब जीवतु हानी ॥  
सकल सुगसुर जुगहिं जुम्कार । रामहि समर न जीननिहारा ॥  
का आचाजु भरतु अस करहीं । नहिं बिगनेलि अमिष फल फरहीं ॥  
दो०—अस विचारि गुह जाति सन कहेउ सजग सब होहु ।

हथमासहु बोरहु तरनि कीजिष घायरोहु ॥१८९॥  
होहु सँजोइल रोकहु घाटा । ठाटहु सकल मरइ के ठाटा ॥  
सनमुख लोह भरत सन लेऊँ । जिप्रत न सुगसरि उनन देऊँ ॥



जायँ जिघ्रत जग सो महि भारू । जना जायँ  
 दो०-विगत विपाद निपादपति सखि बढ़ाई उछाहु ।  
 सुभिरि राम मोंगेउ तुरत तरकस धनुष सनाहु ॥ १६० ॥  
 सुनि रजाई कदराइ न कोऊ ॥  
 करपा ॥

देखि सुभट सब लायक जाने । लई लई नाग मोहि ।  
दो०-भाइहु लवहु घोख जनि आजु काज बड़ होहि ।  
सुनि सरोष बोले सुभट वीर अधोर न होहि ॥१६१॥  
तोरें । कः कटक बिनु भः बिन घोरें ॥  
देखि कहीं ।

दो०-भाइहु लवहु दोल  
 सुनि सोव बोले सुमट वीर अधोर न होह  
 राम प्रताप नाथ बल तोरें । करि कटक बिनु भट बिन घोरें ॥  
 जीयत पाउ न पाछे धर्हीं । रुड मुंड मय मेदिनि कहीं ॥  
 दीख निपादनाथ मन दोनू । कहेउ बजाउ जुम्क डोलू ॥  
 एतना कहन छीक भइ वापें । कहेउ सगुनिग्रन्ह सेग सुशपें ॥

१—प्र० : क्रमः १११३, धव वेदः । डि०, तु०, च० : प्र० [ ( : करिड्डु, धवनिड्डु ।  
 २—प्र० : मावी । डि० : प्र० [ (५) (५अ) : मावा ] । [तु० : मावा ] । च० : प्र० ।  
 ३—प्र० : धनुषी । डि०, तु० : प्र० । [च० : धनहो ] ।

बूढ़ एक कह सगुन बिचरी । भरतहि मिलिअ न होइहि रारी ॥  
 रामहि भरतु मनावन जाहीं । सगुन कहइ अस बिप्रहु नाहीं ॥  
 सुनि गुह कहइ नोक कह बूढ़ा । सहसा करि पछिताहिं बिमृदा ॥  
 भरत सुभाउ सेलु विन बूझें । बड़ि हित हानि जनि विनु जूझें ॥  
 दो०—गहहु घाट भट सिमिटि सब लेउँ मारु मिलि जाइ ।

बूझि मित्र अरि मध्य गति तबु तसु<sup>१</sup> करिहौं अइ ॥१६२॥  
 लखव सनेह सुभायें सुझायें । बैरु प्रीति नहिं दुगइ दुरायें ॥  
 अस कहि भेंट सँजोवन लागे । कह मूल फल खग मृग माँगे ॥  
 मीन पीन पाटीन पुराने । भरि भरि मार कहारन्ह आने ॥  
 मिलन साजु सजि मिलन सिघाय । मंगलमूल सगुन सुभ पाए ॥  
 देखि दूरि तें कहि निज नाम । कीन्ह मुनीसहि दंड प्रनाम ॥  
 जानि रामप्रिय दीन्ह असेसा । भरतहि कहेउ बुझाइ मुनीसा ॥  
 राम सखा सुनि त्यंशनु त्यागा । चले उरि उभगन अनुगगा ॥  
 गाउँ जाति गुह नाउँ सुनाई । कीन्ह जोहारु माथ महि लाई ॥  
 दो०—करत दंडवन देखि तेहिं भरत लीन्ह उर लाइ ।

मनहुँ लवन सन भेंट भइ प्रेम न हृदयें समाइ ॥१६३॥  
 भेंट भरतु ताहि अनि प्रीती । लोग मिराहिं प्रेम के रीनी ॥  
 धन्य धन्य धुनि मंगलमूना । सुर सराहि तेहि वरिसहि फूना ॥  
 लोक वेद सब भाँतिहि नीचा । जासु छौं ह छुइ लेइअ सीचा ॥  
 तेहि भरि अंक राम लघु आता । मिलन पुनक परिपूरित गाता ॥  
 राम राम कहि जे जेवुझती<sup>२</sup> । तिन्हहि न पाप पुंज सद्गुहाही ॥  
 येहि तौ राम लाइ उर लीन्हा । कुल समेत जगु पावन कीन्हा ॥

१—प्र० : 'तु तसु' । द्वि, व० : प्र० । [ च० : तस तव ] ।

२—प्र० : जवुझती । द्वि० : प्र [ (५) (५) (५अ) : जमुझती ] । [ वृ० : जमुझती ] च० : प्र० : [ (५) : जमुझती ] ।

करमनास जलु मुग्धरि पाई । तेहि को कहहु भीम नहि भाई ॥  
उनटा नामु जवन जगु जना । बालनीकि भए व्रत सगना ॥

दो०—एवम मया सम जनम जइ पाँवर कोल किरान ।  
राम कहत गावन परम होत भुवन विनयान ॥१६४॥

नहि आचरिजु जुग जुग चलि आई । केहि न दीन्हि रघुवीर बढ़ाई ॥  
राम नाम महिमा सुर कहही । सुनि सुनि अथप लोग सुनु लहही ॥  
रामसर्वाह मिलि भातु समेमा । पूछी पुसन सुमंगल नेमा ॥

देखि भरत कर सोलु सनेह । मा निपाद तेहि समय विदेह ॥  
सकुच सनेहु मंदु मन बाढ़ा । भरतहि चितात एकटक ठाढ़ा ॥  
धरि धीरजु पद बंदि बहोरी । विनय समेम करत कर जोरी ॥

कुसल मून पद पंकज पेखी । मैं तिहुँ काल पुसत निज लेखी ॥  
अथ प्रभु परम अनुग्रह तोरें । सहित कोटि कुल मंगल मोरें ॥  
दो०—ससुँभ मोरि करतूति युलु प्रभु महिमा जिअं जंई ।

जो न भजइ रघुवीर पद जग विधि बंचित सोई ॥१६५॥  
कपटी कायर कुमति कुजाती । लोह बेद बाहेर सब भाँती ॥  
राम कीन्ह आपन जवही तैं । भएँ भुवन भूपन तवही नैं ॥

देखि प्रीति सुने विनय सुझाई । मिलेउ बहोरि भरत लघु भाई ॥  
कहि निपाद निज नामु सुबानी । सादर सकल जोहाती रानी ॥  
जानि लखन सम देहि असीसा । जियहु सुखी सय लख बगिया ॥

निरखि निपादु नगर नर नागी । भए सुखी जनु लखनु निहारी ॥  
कहहि लहेउ येहि जीवन लाहू । भेंटै राममद्र भरि बाहू ॥  
सुनि निपादु निज भाग बढ़ाई । प्रसुदित मन लै चलेउ लवाई ॥

दो०—सनकरे सेवक सकल चले स्वामि सुख पाई ।  
घर तरु तर सर बाग बन बास बनाएन्हि जाई ॥१६६॥

शृंगवेरपुर भरत दीख जर । भे सनेह सब<sup>१</sup> अंग सिथिल तव ॥  
 सोहत दिख निषादहि लागू । जनु धनु<sup>२</sup> धरें विषय<sup>३</sup> अनुगमू ॥  
 येहि विधि भरत सेनु सब संग । दीख जइ जग पावनि गंगा ॥  
 रामघट कहैं कीन्ह प्रनामू । मा मनु मगनु मिले अनु गमू ॥  
 करहि प्रनाम नगर नर नारी । मुद्रित ब्रह्मभय बारि निहारी ॥  
 करि मउजनु भौंहहि कर जोरी । रानचंद्र पद प्रीति न थोरी ॥  
 भरत कहेउ सुरसरि तव रेनु । सकल सुखद सेवक सुरधेनु ॥  
 जोरि पानि बर भौंगौ येहु । सीय राम पद सहज सनेहु ॥  
 दो०—येहि विष मउजनु भरतु करि गुर अनुभासन पाइ ।

मातु नहानी जानि सब डेरा चले लवाइ ॥१६७॥  
 जहैं तहैं लोगन्ह डेरा कीन्हा । भरत सोधु सबहीं कर लीन्हा ॥  
 गुर सेवा करि आयेसु पाई । राममातु पहि मे दोउ भाई ॥  
 चरन चौपि कहि कहि मृदु बानी । जननी सकल भरत सनमानी ॥  
 भइहि सौपि मातु सेवकाई । आपु निषादहि लीन्ह बोलाई ॥  
 चले सखा कर सों कर जंरे । सिथिल सरिरु सनेहु न थोरे ॥  
 पूछन सबहि सो ठाउँ देखऊ । नेकु नयन मन जरनि जुड़ाऊ ॥  
 जहैं सिय रामु लखनु निसि सोए । कहत भरे जल लोचन-कोए ॥  
 भरत बचन सुनि मएउ विषदू । तुरत तहों लेइ गएउ निषादू ॥  
 दो०—जहैं सिंधुषा पुनीत तरु रघुबर किए विश्रामु ।

अति सनेह सादर भरत कीन्हेउ<sup>४</sup> दंड प्रनामु ॥१६८॥  
 कुस साथरी निहारि सुहाई । कीन्ह प्रनामु प्रदच्छिन जाई ॥  
 चरन रेख रज आँखिन्ह लाई । बनइ न कहत प्रीति अधिकाई ॥

१—प्र० मव । दि० : प्र० [ (१) (५) : वस ] । नृ० : वम ] । च० : प्र० [ (६) : म ] ।

२—प्र० : तनु । दि०, नृ० : प्र० । च० : धनु ।

३—प्र० : विषय । [ दि०, नृ० : विनय ] । च० : प्र० [ (८) : विनय ] ।

४—[ प्र० : कीन्हे ] । दि०, नृ०, च० : कीन्हेउ [ (९) : कीन्हे ] ।

कनकपिडु दुह चारिक देखे । राखे सीस सीन सम लेखे ॥  
 सजल विलोचन हृदयँ गलानी । कहत सखा सन बचन सुधानी ॥  
 श्रीहत सीन चाहि दुत्तिहीना । जया अवत नर नारि मलेना ॥  
 पिता जनक देउँ पटनर केही । करतल भोगु जोगु जग जेही ॥  
 समुद्र भानु कुन भानु भुआलू । जेहि सिहात अमरावतिपालू ॥  
 प्राननाथ रघुनाथ गोमाई । जो बड़ होत सो राम बड़ाई ॥  
 दो०—पनिदेवता सुनीयमनि सीय सावरी देखि ।

बिहरत हृदउ न हहरि हर पबि तैं कठि । त्रिसेपि ॥ १६६ ॥  
 लालन जोगु लखन लघु लोने । भे न भाइ ऐसेरे अहहि न होने ॥  
 पुरजन प्रिय पितु मातु दुलारे । सिध रघुबीरहि प्रान विआरे ॥  
 मृदु मूरति सुकुमार सुभाऊ । तात बाउ तन लाग न काऊ ॥  
 ते बन सहहि विपति सब भौंती । निदरे कोटि कुँलस येहि छाती ॥  
 राम जनमि जग कीन्ह उजागर । रूप सील सुख सत्र गुन सागर ॥  
 पुरजन परिजन गुर पितु माता । राम सुभाउ सबहि सुखदाता ॥  
 बैरिउ राम बड़ाई करही । बोलनि मिलनि विनय मन हरही ॥  
 सारद१ कोटि कोटि सन सेवा । करिन सकहि प्रभु गुन गन लेखा ॥  
 दो०—सुख सरूप रघुवंस भनि मंगल मोद निधान ।

ते सोयत कुस ढाभि महि विधि गति अति बलवान ॥ २०० ॥  
 राम सुता दुरतु धान न काऊ । जीवनतरु जिमि जोगवइ राऊ ॥  
 पलक नयन कनि मनि जेहि भौंती । जोगवहि जननि सकल दिन राती ॥  
 ते अब फिगत विविन पदचारी । कंद मूल फल फूल अहारी ॥  
 धिग पइकई अमंगल मूला । मइसि प्रान प्रियनम प्रतिमूला ॥  
 मै धिग धिग अघउदधि अमागी । सनु उतगातु भएउ जेहि लागी ॥

१—प्र० : मंगला । द्वि० : प्र० । [ २० : विचीना ] ।

२—प्र० : कैते । [ द्वि०, प्र० : राम ] । ४ : प्र० ।

३—प्र० : मा । द्वि० : प्र० । [ १३ : मा ] । प्र०, १ : प्र [ १५ : १ ] ।

कुल कलंकु करि सृजेउ बिधाता । साईंदोह<sup>१</sup> मोहि कीन्ह कुमाता ॥  
सुनि सप्रेम समुझाव निपादू । नाथ करिअ कत बादि बिपादू ॥  
राम तुम्हहिं प्रिय तुम्ह प्रिय रामहिं । येह निरजोमु<sup>२</sup> दोसु विधि बामहिं ॥

दं०—विधि बाम की करनी कठिन जेहिं मातु कीन्हीं बावरी ।

तेहि राति पुनि पुनि करहिं प्रभु सादर सरहना रावरी ॥

तुलसी न तुम्ह सौं राम प्रीतमु कहतु हौं सौहें किए ।

परिनाम मंगलु जानि अपने आनिप धीरजु हियें ॥

सो०—अंतरजामी राम सकुच सप्रेम कृपायतन ।

चलिअ करिअ विलासु येह विचार दृढ़ आनि मन ॥२०१॥

सखा बचन सुनि उर धरि घोर । बास चले सुगिरत रघुवीरा ॥

येह सुधि पाइ नगर नर नारी । चले बिलोकन आरत भारी ॥

परदखिना करि करहिं प्रनामा । देहिं कइकइहि त्थोरि निकामा ॥

भरि भरि बारि बिलोचन लेही । बाम बिधातहि दूषन देही ॥

एक सराहहिं भरत सनेह । कोउ कह नृपति निवाहेउ नेह ॥

निंइहि आपु सराहि निपादहि । को कहि सकइ बिमोह बिपादहि<sup>३</sup> ॥

येहि विधि राति लोगु सबु जागा । भा भिनुसारु गुदारा लागा ॥

गुरहिं सुनाव चढ़ाई सुहाई । नई नाव सब मातु चढ़ाई ॥

दंड चारि महँ भा सबु पारा । उतरि भरत तब सबहिं संभाग ॥

दो०—प्रात क्रिया करि मातु पद बंदि गुरहि सिरु'नाइ ।

आगें किए निपाद गन दीन्हेउ फटकु चलाई ॥२०२॥

किएउ निपादनाथु अगुआई । मातु पालकी सकल चलाई ॥

साथ बोलाइ माइ लघु दीन्हा । बिमन्ह सहित गवनु गुर कीन्हा ॥

आपु सुरसरिहि कीन्ह प्रनाम । सुमिरे लखन सहित सिय राम ॥

१—प्र० : साईंदोह । दि० : प्र० [ (४) (१) साईंदोहि, (५अ) साईंदोह ] । [तु० : साईंदोह] । च० : प्र० ।

२—प्र० : निरजोमु । दि० : प्र० । [तु० : निरजोम] । च० : प्र० ।

३—[तु० में यह अक्षरान्ति नहीं है] ।

गवने भारत पयादेहि पाएँ । द्योतत सग जदि दोरिपाएँ ॥  
 कहहि सुसेधक बारहि वारा । होइअ नाथ अम्य भगवरा ॥  
 राम पयादेहि पाउ सिधाए । हम कहँ रथ गज बाजि वगाए ॥  
 सिर भर जाउँ उचि । अस मोग । सब तैं सेरक धामु कटेग ॥  
 देखे भारत गति मुनि मृदु बानी । सब मेरक गन करहि गनानी ॥  
 दो०—भारत तीसरे पहर कहँ कीन्ह प्रेम प्रदाग ।

कहत राम सिय राम सिय उमगि उमगि अनुराग ॥ २०३ ॥  
 भलका भलकत पायन्ह कैमें । पंढज कोम ओम फन जैमें ॥  
 भारत पयादेहि आए आजू । भएउ दुखिन मुनि सकल समानू ॥  
 सनरि लीन्ह सन लोग नहाए । कीन्ह प्रनामु त्रिवेनिहि आए ॥  
 सनिधि सिवासित नीर नहाने । दिए दान महिसुर सनमाने ॥  
 देवत स्यामल धवल हिलोरे । पुनकि सरीर भरत कर जोरे ॥  
 सकल कामप्रद तीरथराऊ । वेद विदिन जग प्रगट प्रमाऊ ॥  
 मोगउँ भील त्यागि निज धामू । आरत काह न करइ कुकामू ॥  
 अस जिअ जानि सुजान सुदानी । सफल करहि जग जावक बानी ॥  
 दो०—अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरान ।

जाम जनम रति राम पद येह वारदानु न आन ॥ २०४ ॥  
 जानहुँ राम कुटिल करि मोही । लोग कहउ गुर साहिब द्रोही ॥  
 सीनाराम चरन रति मोरे । अनुदिन बढउ अनुग्रह तोरे ॥  
 जलहु जनम भरि सुरति विसारउ । जाचत जलु पवि पाहन डारउ ॥  
 चातक रटनि घटै घटि जाई । बड़े प्रेसु सब भौंति भलाई ॥  
 कनकहि बान चढ़इ जिमि दाहें । तिमि प्रियनम पद नेम निचाहें ॥  
 भरत बचन सुनि भौंफ त्रिवेनी । भइ मृदु बानि सुमंगल देनी ॥  
 तात भात सुह सन बिधि साधू । राम चरन अनुराग अगाधू ॥

१—प्र० : करहि । दि० . प्र० । [ वृ०, च० : परहि ] ।

२—प्र० . । डु । दि० : प्र० [ (५) : जानहि ] । [ वृ० : जानहि ] । च० : प्र० ।

वादि गलानि करहु मन माहीं । तुम्ह सम रामहिं कोउ प्रिय नाही ॥  
दो०—जनु पुलकैउ हिय हरषु मुनि बेनि बचन अनुकूल ।

भरत धन्य कहि धन्य सुर हरपिन बरपाहिं फूल ॥२०५॥  
प्रभुदिन तीरथगज निवासी । बैपानस -बटु गृही उदासी ॥  
कहहिं परसपर मिलि दस पाँचा । भरत सनेहु सीलु सुचि साँचा ॥  
सुनत राम गुन ग्राम सुहाए । मरद्वज मुनिगर पहिं आए ॥  
दंड प्रनामु करत मुनि देखे । मृगनिधन ? भाग्य निज लेखे ॥  
धाइ डटाइ लाइ उर लोन्हे । दीन्ह असीस कृतारथ कीन्हे ॥  
आसनुं दीन्ह नाइ सिरु बैठे । चहत सकुच गृहें जनु भजि पैठे ॥  
मुनि पूँअ किछु येह बड़ सोचू । बोले रिपि लखि सीलु सँकोचू ॥  
सुनहु भरत हम सन सुधि पाई । बिधि करतव पर किछु न बसाई ॥  
दो०—तुम्ह गलानि जिअं जनि काहु समुझि मातु करतूनि ।

तात कइकइहि दोसु नहिं गई गिरा मति घृति ॥२०६॥  
यइउ कहत भल कहिह न कोऊ । लोकु बेदु बुध संमत दोऊ ॥  
तान तुम्हार बिमल जमु गाई । पाइहि लोकहु बेदु बड़ाई ॥  
लोक बेदु संमत सब कहई । जेहि पितु देइ राजु सो लहई ॥  
राउ सत्यव्रत तुम्हहिं बोलाई ? । देन राजु सुख धरमु बड़ाई ॥  
राम गधनु बन अनरथ मूला । जो मुनि सफल बिरन भइ सूला ॥  
सो भावी यस रानि अयानी । करि कुचानि अंतहु पछितानी ॥  
तहँउ तुम्हार अलप अपराधू । कहइ सो अधमु अयान असाधू ॥  
करतेहु राजु तौ ? तुम्हहिं न दोसू । रामहि होन सुनन संतोषू ॥  
दो०—अव अति कीन्हेहु भरत भल तुम्हहिं उचिन मत एहु ।

सरल सुमगल मूल जग रघुवर चरन सनेहु ॥२०७॥

१—प्र० : मृतिव । दि० : प्र० [(३) : मृतिव ।] । व० : प्र० । [च० : मृतिव ।]

२—प्र० : बोलाई । दि० : प्र० [(३) : बलाई ] । व०, च० : प्र० ।

३—[ प्र० : जो ] । [ दि० : नौ ] । [ व० : जो ] । च० : त ।



सो तुम्हारे भनु जीवनु प्राना । मूरि भाग को तुम्हहि मन्त्र ॥  
 येह तुम्हारे माचरनु न ताना । दसरथ सुपन राम दिव प्रान ॥  
 सुनहु भवन रघुनि मन मारी । पेनपाय तुम्ह मम कोउ नही ॥  
 लसन राम सीनहि अनि भीती । निसि सनु तुम्हहि साराहत बीनो ॥  
 जाना मरगु नहान प्रयागा । मगन होहि तुम्हरे अनुगम ॥  
 तुम्ह पर अरा सनेहु रघुवर के । सुगुन जीवन जग जग जड़ नर के ॥  
 येह न अधिक रघुवीर बढ़ाई । प्रान कुटुंब पान रघुवाई ॥  
 तुम्ह ली भात मोर मत येह । धरे देह जनु राम सनेहु ॥  
 दो०—तुम्ह वहेँ भरत कलक येह हम सब वहेँ उद्वेगु ।

राम भगति रस सिद्धि हित भा येह समउ गनेसु ॥२०८॥  
 नव बिधु विमल तात जसु तोरा । रघुवर किंकर कुमुद चकोरा ॥  
 उदित सदा अँदहि कषहेँ ना । घटिहि न जग नम दिन दिन दुना ॥  
 कोक तिलोक प्रीति अति करिही । प्रभु प्रतापु रविधविहि नहरिही ॥  
 निसि दिन सुखद सदा सब काह । असिहि न कइकइ करतबु राह ॥  
 पूरन राम सुपेम पियूषा । गुर अवमानर दोष नहिँ दूषा ॥  
 राम भगत अच अमिअ अघाहँ । कीन्हिहु सुलम सुधा वसुधाहँ ॥  
 भूप भगीरथ सुरसरि आनी । सुमिरत सकल सुमंगल खानी ॥  
 दसरथ गुन गन बानि न जाही । अधिकु कहा जेहि सम जग नाही ॥  
 दो०—जासु सनेह सकोच बस राम प्रगट भए आइ ।

जे हर हिय नयननि कषहेँ निरखे नहीं अघाइ ॥२०९॥  
 कीरति बिधु तुम्ह कीन्हि अनूषा । जहँ बस राम पेम मृग रूपा ॥

१—[ प्र० : सुद्यु ] । दि०, वृ०, च० : सुसु ।

२—प्र० : अवमान । दि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : अपमान ] । [ वृ० : अपमान ] । च० : प्र० [ (८) : अपमान ] ।

३—प्र० : कीन्हिहु । दि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : की-हेहु ] । [ वृ० : की-हेहु ] । च० : प्र० [ (८) : की हेहु ] ।

४—प्र० : कीन्हि । दि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : कीन्ह ] । [ वृ० : कीन्ह ] । च० : प्र० ।

तात गेतानि<sup>१</sup> करहु जिअैं ज.एँ । डरहु दरिद्रहि पागु पाएँ ॥  
 सुनहु भरतु हम भूठ न. कइहीं । उदासीन तापस बन रहहीं ॥  
 सब सपनु कर सुफल सुशवा । लखन राम सिय दरसन पावा ॥  
 तेहि फल कर फलु दरसु तुम्हारा । सहित पयाग मुभाग हमारा ॥  
 भरत धन्य तुम जग जस १ जयेऊ । कहि अस पेम मगन मुनि भएऊ ॥  
 मुनि मुनि बचन समासद. हरपे । सधु सराहि मुमन सुर बरपे ॥  
 धन्य धन्य धुनि गगन पयागा । मुनि मुनि मरतु मगन अनुरागा ॥  
 दो०—पुलक गात हियँ रामु सिय सज्ज सरोरुह नयन ।

करि प्रनामु मुनि मंडिलिहि बोले गदगद बयन ॥२१०॥  
 मुनि समाजु अरु तीरथराजू । साबिहु सपथ अघाइ अकाजू ॥  
 येहि यल जौं कछु कहिअ बनाई । येहि सम अधिक न अध अथमाई ॥  
 तुम्ह सर्वज्ञ कहौं सतिभाऊ । उर अंतरजामी रघुराऊ ॥  
 मोहि न मातु. करतव कर सोचू । नहिं दुख जिअैं जगजानहि<sup>२</sup> पोचू ॥  
 नाहिंन डरु विगरहि परलोकू । पितहुँ मरन कर नाहिंन<sup>३</sup> सोकू ॥  
 सुकृत सुजमु भरि मुवन सुहाए । लखिमन राम सरिस सुन पाए ॥  
 राम बिरह सलि तनु धनभंगू । भूप सोच कर कवन प्रसंगू ॥  
 राम लखन सिय विनु पग पनहीं । करि मुनि बेप फिरहिं बन बनहीं ॥  
 दो०—अजिन वसन फल असन महि सयन डसि कुस पात ।

वसितरुतर नित सहत हिम आतप बरपा यात ॥२११॥  
 येहि दुख दाइ दहइ दिन छाती । भूख न वासर नींद न राती ॥  
 येहि वुरोग कर ओषधु नाहीं । सोषेउं सकल विम्व मन माहीं ॥  
 मातु कुमत बढ़ई अघमृना । तेहिं हमार हित कीन्ह बँमूला ॥  
 कलि कुकाठ कर, कीन्ह कुलंजू । गाढ़ि अवध पढ़ि कठिन कुमंजू ॥

१—प्र० : जन जन्तु । दि० : प्र० [ (३) : जम जग ] । वृ०, च० : प्र० [ (२) : जस जग ] ।

२—[ प्र० : जानिहि ] । दि०, वृ०, च० : जानहि ।

३—प्र० : नाहिंन । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : मोहिं न ] । वृ० : प्र० । [ च० : मोहिं न ] ।

मोहि लगि येहु कुठाटु तेहिं ठाय । धं लेमि सनु जगु चारह सिाय ॥  
 मिटइ कुजोगु<sup>१</sup> राम किरि आएँ । बमइ अवध नहिं आन उपायँ ॥  
 भरत बचन सुनि मुनि मुखु पाई । सचहिं कीन्ह बहुत भोनि प्ताई ॥  
 तान करहु जनि सोचु विसेषी । सब दुरु मिटिहि राम पग देखी ॥  
 दो०—करि प्रबोधु मुनिवर कहेउ अतिथि प्रेम प्रिय होहु ।

कंद मूल फल पूल हम देहिं लेहु करि द्योहु ॥२१२॥  
 सुनि मुनि बचन भरत हियँ सोचू । भरत कुशवमठ कटिन सँकोचू ॥  
 जानि गरुड गुर गिरा बहोरी । चरन बदि बोले कर जोरी ॥  
 सिर धरि आयेसु करिअ सुंदारा । परम धरम येह नाथ हमारा ॥  
 भरत बचन मुनिवर मन भाए । सुचि सेवक सिप निरुट बुनाए ॥  
 चाहिअ कीन्ह भरत पहुनाई । कंद मूल फल आनहु जाई ॥  
 भलेहिं नाथ कहि तिन्ह सिर नाए । प्रमुदित निज निज काज सिगाए ॥  
 सुनिहि सोचु पाहुन बड़ नेवना । तसि पूजा चाहिअ जम देरता ॥  
 सुनि रिधि सिधि अनिमादिक आई । आयेसु होइ सो कहिं गोसाईं ॥  
 दो०—राम बिरह व्याकुल भरतु सानुज सहित सनाज ।

पहुनाई करि हाहु समु कहा मुदित मुनिराज ॥२१३॥  
 रिधि सिधि सिर धरि मुनिवर बानी । बड भागिनि आपुहि अनुमानी ॥  
 कहहिं परस्पर सिधि समुदाई । अतुलित अतिथि राम लबु भाई ॥  
 मुनिपद बदि करिअ सोइ आजू । होहिं सुबी सन राज समाजू ॥  
 अस कहि रचेउ<sup>२</sup> रुचि गृह नाना । जेहिं बिनोकि बिनखाहिं विमना ॥  
 भोग विभूनि भूरि भरि राखे । देखत जिन्हहिं अमर अभिलापे ॥  
 दासी दास साजु सन लीन्हे । जोगवन रहहिं मनहिं मनु दीन्हे ॥  
 सनु समाजु सजि सिधि पल माहीं । जे सुख सानेहुँ, सुखपुर नाहीं ॥  
 प्रथमहिं बास दिए सब केही । सुंदर सुखद जथा रुचि जेही ॥

१—प्र० : कुजोगु । दि० : प्र० [ (३) (४) : कुरोग ] । [ वृ० : कुरोग ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : रचेउ । दि० : प्र० । [ वृ० : रचे ] । च० : प्र० ।

दे०—बहुरि सपरिजन भरत कहूँ रिपि अस आयेसु दीन्ह । -

विधि विसमय दायकु विमव मुनिवर तप बल कीन्ह ॥२१४॥  
मुनि प्रमाउ जग भरत विलोका । सव लघु लगे लोकपति लोका ॥  
मुत्र समाजु नहि जाइ बखानी । देखत बिरति बिसाहि ज्ञानी ॥  
आसन सपन मुससन बिताना । बन वाटिका बिहंग मृग नाना ॥  
सुरभि फून फन अमिय समाना । विमल जज्ञासथ विविधि विधाना ॥  
अमन पान सुविं अमिय अमी से । देखि लोग सकुचान जमी से ॥  
सुरसुभी सुरतरु सबही केँ । लखि अभिजापु सुरेस सबी केँ ॥  
रितु बसंत वह त्रिविष बयारी । सन कहँ सुलभ पदारथ चारी ॥  
सरु चंदन वनितादिक भोगा । देखि हरप विसमय बस लोगा ॥  
दो०—संपति चरई भातु चक्र मुनि आयेसु खेलवार ।

तेहि निसि आलस पिजरा राखे मा भिनुमार ॥२१५॥  
कीन्ह निमज्जनु तीरथराजा । नाइ मुनिहि सिर सहित समाजा ॥  
रिपि आयेसु असीस सिर राखी । करि दंडवत विनय बहु भाखी ॥  
पथ गति कुसल साय मय लीन्हे । चले चित्रकूटहि चितु दीन्हे ॥  
रामसवा कर दीन्हे लागू । चलत देह धरि जनु अनुरागू ॥  
नहि पदत्रान सीस नहि छाया । पेमु नेमु ब्रजु घरमु अमाया ॥  
लखन गम भिय पंथ कहानी । पूँछन सखहि कहत मृदु बानी ॥  
राम बाम थल बिटप विलोकें । उर अनुराग रहत नहि रोकें ॥  
देखि दसा सुर बरिसहिं फूला । भइ मृदु महि मगु मंगल मूला ॥  
दो०—किए जाहि छाया जलद सुखद बहइ शर वात ।

तस मगु मण्डन न राम कहँ जस मा मरतहि जात ॥२१६॥  
जइ चेतन मग जीव घनेरे । जे चितए प्रसु जिह प्रसु हेरे ॥  
ते सब मण परम पद जोगू । भरत दस मेढा मव रोगू ॥  
येह बढ़ि वात भरत कह नाहीं । सुमिरत जिन्हहि रामु मन माहीं ॥  
बारक राम कहत जग जेऊ । होत तरन तारन नर तेऊ ॥

भरतु राम प्रिय पुनि लघु आता । कस न होइ मगु मंगलदाता ॥  
 सिद्ध साधु मुनिवर अस कहहीं । भरतहिं निरखि हरपु हिय लहहीं ॥  
 देखि प्रभाउ सुरेसहि सोचू । जगु भल मलेहि पोच कहुं पोचू ॥  
 गुर सन वहेउ वरिअ प्रभु सोई । रामहि भरतहि भेंट न होई ॥  
 दो०—रामु सँजोची प्रेमवस भरतु सुप्रेम<sup>१</sup> पयोधि ।

बनी बात बेगारन<sup>२</sup> चाहति करिअ जतनु छलु सोधि ॥२१७॥  
 बचन सुनत सुगुर मुसकाने । सहसनयनु बिनु लोचन जाने ॥  
 कह गुर बादि छोभु छलु छाँड़ू । इहाँ कपट करि होइअ भौँड़ू ॥  
 मायापति सेवक सन माया । करिअ त उलटि परइ सुराया ॥  
 तब किछु कीन्ह रामरुख जानी । अय कुचालि करि होइहि हानी ॥  
 सुनि सुरेस रघुनाथ सुमाऊ । निज अपराध रिसाहिं न काऊ ॥  
 जो अपराधु भगत कर करई । राम रोष पावक सो जरई ॥  
 लोडहुं वेद विदित इतिहासा । येह महिमा जानहिं दुखासा ॥  
 भरत सरिस को राम सनेही । जगु जप राम रामु जप जेही ॥  
 दो०—मनहु न आनिअ अमरपति रघुवर भगत अकाजु ।

अजसु लोक परलोक दुख दिन दिन सोक समाजु ॥२१८॥  
 सुनु सुरेस उपदेशु हमारा । रामहिं सेवकु परम पिअारा ॥  
 मानत सुखु सेवक सेवनाई । सेवक बेर मैर अधिकारै ॥  
 जद्यपि सम नहिं राम न रोष । गहहिं न पाप पुनु<sup>३</sup> गुन दोष ॥  
 करम प्रधान विस्व करि राखा । जो जस करइ सो तस फलु चाखा ॥  
 तदपि करहिं सम विषम विहारा । भगत अमगत<sup>४</sup> हृदय अनुसारा ॥

१—प्र० ॥ सुप्रेम । दि० : प्र० [ (५५) : सप्रेम ] । नृ० : प्र० । च० प्र० [ (=) : सप्रेम ] ।

२—प्र० : बगारन । दि० : प्र० [ (४) (५) (३५) : विगारन ] । [ नृ० : विगारन ] । च० : प्र० [ (=) : विगारन ] ।

३—प्र० : पुनु । दि० : प्र० [ (४) (५) (०५) : पुन्य ] । [ नृ० : पुन्य ] । च० : प्र० ।

४—[ प्र० : भरत भगत ] । [ दि० : रघुनाथ भगत ] । नृ० : भगत अमगत । च० : नृ० । [ (=) : रघुनाथ भगत ] ।

अगुन अलेख अमान एकरस । राम सगुन भए मगत प्रेम वस ॥  
रान सदा सेवक रुचि राखी । वेद पुरान साधु सुर साखी ॥  
अस जिय जानि तजहु कुटिलाई । करहु भरत पंद श्रीनि सुहाई ॥  
दो०—राममगत परहित निरत परदुख दुखी दयाल ।

भगत सिंगेमनि भरत ते जानि हरपहु सुरपाल ॥२११॥  
सत्यसंध प्रभु सुर हितकारी । भरत राम आयेसु अनुसारी ॥  
स्वारथ विवस विकल तुम्ह होह । भरत दोषु नहि राउर मोह ॥  
सुनि सुरवर सुरगुर वर बानी । भा प्रमोदु मन मिटी ग्लानी ॥  
वरापि प्रसून हरपि सुराऊ । लगे सराहन भरत सुमाऊ ॥  
येहि विधि भरतु चले मग जाही । दसा देखि मुनि सिद्ध सिहाही ॥  
जबहि राम कहि लेहि उसामा । उमगत पेम मनहु चहु पाना ॥  
द्रवहि वचन सुनि कुलिस पपाना । पुरजन पेषु न जाइ बखाना ॥  
बीच पास करि जमुनहि आए । निरखि नीरु लोचन जल छाप ॥  
दो०—रघुवर वरन बिलोकि वर बारि समेत समाज ।

होन मगन वारिधि विरह चढ़े विवेक जहाज ॥२२०॥  
जमुन तीर तंहि दिन करि वास । भएउ समय सम सगहि सुपास ॥  
रातिहि घाट घाट की तरनी । आई अगमित जाहि न बरनी ॥  
प्रात पार भए एकहि खेवों । तोपे रामसत्ता की सेवों ॥  
चले नहाइ नदिहि सिरु नाई । साथ निपादनाथु दोउ भाई ॥  
आगें मुनिर बाहन आछें । राज समाजु जाइ सबु पाछें ॥  
तेहि पाछें दोउ बंधु पयादें । मूपन बसन वेप सुठि सादें ॥  
सेवक सुहृद सचिवसुत साथ । सुमिरत लखनु सीय रघुनाथा ॥  
जहँ जहँ राम वास बिसामा । तहँ तहँ काहि सपेम प्रनामा ॥  
दो०—मगवासी नर नारि मुनि धाम काम तजि धाइ ।

देखि सरूप सनेह सब मुदित जनम फलु पाइ ॥२२१॥

कहहि सपेम एक एक पाहीं । गमु लगनु सरि होहि कि नाही ॥  
 वष वषु वरन रूपु सोई आली । सीलु सनेहु सरिग सन चाही ॥  
 बेपु न सो सन्नि सीय न सगा । आगे अगी चली चतुरगा ॥  
 नहि प्रमत्तमुख मनष खेदा । सन्नि सदेहु होइ येहि भेदा ॥  
 तामु तरक तिअग्न मन मानी । कहहि सकल तहि सन न मगानी ॥  
 तेहि सराहि बानी फुरि पूजी । बोली मधुर वचन तिअ दूजी ॥  
 कहि सपेम सब कथा प्रसगू । जेहि त्रिवि राम रान रम भगू ॥  
 भरतहि बहुरि सगलन लागी । सील सनेह सुमायँ सुमागी ॥  
 दो०—चलत पयादे खात फल पिना दीन्ह तनि राजु ।

जान मानवन रघुवरहि भक्त सरिस को आजु ॥२२०॥  
 भाष्य भगनि भक्तु आचरनु । कहत मुनन दुख दूषन हरनु ॥  
 जो किलु कहय थोर सन्नि सोई । रामचनु अस काहे न होई ॥  
 हम सब सानुज भरतहि देखें । भइन्ह धय जुवनी जन लेखें ॥  
 सुनि गुन देखि दसा पछिगहीं । कइरुद जननि जोगु सुत नाही ॥  
 फोड कह दूषनु रानिहि नाहिन । विधिसनु कीन्ह हमहि जो दाहिन ॥  
 कहँ हम लोक बेद विधि हीनी । लघु तिअ कुल करतूति मलीनी ॥  
 बमहिं युदेस कुर्गोव कुवामा । कहँ येह दसु पुन्य परिनामा ॥  
 अस अनहु अचिरिजु प्रति प्राप्ता । अनु मरु भूमि कलपारु जामा ॥  
 दो०—भरत दसु देखत खुलेउ मग लोगन्ह कर भागु ।

अनु सिंघलवासिन्ह भरत विधि बस सुलभ प्रयगु ॥२२१॥  
 निज गुन सहित राम गुन गाथा । सुनत जाहिं सुमिति रघुनाथा ॥  
 तीरथ मुनि आस्रम सुर धमा । निरखि निमज्जहि करहि प्रनामा ॥  
 मनही मन मोगहिं बरु एह । सीय राम पद पदुम सह ॥  
 मिलहिं किरात कोल बनवासी । बैखा स बडु जी उरासी ॥  
 करि प्रनामु पूछहिं जेहि तेही । रहि बन लखनु राम बेदेही ॥  
 ते प्रभु समाचार सब कहहीं । भरतहि देखि जनम फलु लहरी ॥

जे जन कहहि कुसल हम देखे । ते प्रिय राम लखन सम लेखे ॥  
येहि विधि ब्रह्म सबहि सुबानी । सुनत राम बच बास कहानी ॥  
दो०—तेहि वासर बसि प्रान्तहीं चले सुनिरि रघुनाथ ।

राम दरस की लालसा भरत सरिस सब साथ ॥२२४॥  
मंगल सगुन होहिं सब काहू । फरकहिं सुखद बिलोचन बाहू ॥  
भरतहि सहित समाज उड़ाहू । मिलिहहिं रामु मित्रिहि दुख दाहू १ ॥  
फरत मनोरथ अस जिअँ जाकैं । जाहिं सनेह सुरा सब छाकैं ॥  
सिथिल अंग पग मग डगि डोलहि । बिहबल बचन पेम बस बोलहिं ॥  
राम सखा तेहिं समय देखावा । सैल सिरोमनि सहज सुहावा ॥  
जासु समीप सरित पय तीरा । सीय समेत बसहिं दोउ बीरा ॥  
देखि फरहिं सब दंड प्रनामा । कहि जय जानकिजीवन रामा ॥  
प्रेम मगन अस राज समाजू । जनु फिरि अवध चले रघुराजू ॥  
दो०—भरत पेमु तेहि समय अस तस कहि सकइ न सेपु ।

कबिहि अगम जिमि ब्रह्म सुखु अहमम मलि । जनेपु ॥२२५॥  
सकल सनेह सिथिल रघुवर कैं । गए कोस दुइ दिनकर ढरकैं ॥  
जलु थलु देखि बसे निसि बीतैं । बीन्ह गवनु रघुनाथ पिरीतैं ॥  
उहाँ रामु रजनी अवतैषा । जागे सीय सपन अस देखा ॥  
संहित समाज भरत जनु आए । नाथ बियोग ताप तन ताए ॥  
सकल मलिन मन दीन दुखारी । देखी सासु आन अनुहारी ॥  
मुनि सिय सपन भरे जल लोचन । भए सोच बस सोचबिपोचन ॥  
लखन सपन यह नोक न हँई । कठिन कुचाह सुनाइहि कोई ॥  
अस कहि बंधु समेत नहाने । पूजि पुरारि साधु सतमाने ॥  
छं०—सनमानि सुर मुनि बंदि बैठे उतर दिसि देखत भए ।

नम धूरि खग मृग मूरि मागे विकल प्रभु आसम गए ॥



तुलसी उठे अवनोकि कारनु काह चिन सनक्ति<sup>१</sup> रहे ।

सब समाचार किरान कोलन्हि आई तेहि अउसा<sup>२</sup> करे ॥

सो०—सुनत सुमगल बैन मन प्रमोद तन पुनक भग ।

सद सरोरह नैन तुलसी भगे सनेह जन ॥२२६॥

बहुरि सोचयम भे सियरवनू । कारन कवन भात आगमनू ॥

एक आई अम कहा बहोरी । सेन सग चतुरंग न थोरी ॥

सो सुनि रामहि भा अति सोचू । इत पितु वच उन वनु तेंदोचू ॥

भरत सुभाउ समुझि मन माही । प्रमु चिन हित यिति पावन नाही ॥

समाधान तब भा यह जाने । भरतु कहे महुं साधु सयाने ॥

लखन लखेउ प्रभु हृदयें खमारू । रहत समय सम नीनि विचारू ॥

बिनु पूछें कछु कहौ गोसाईं । सेवक समय न दीठ दिठाई ॥

तुम्ह सर्वज्ञ सिरोमनि स्वामी । आपनि समुझि कहइ<sup>२</sup> अनुगामी ॥

दो०—नाथ सुहृद सुठि सरल चित सील सनेह निगन ।

सब पर प्रीति प्रीति जिअँ जानिअ आपु समान<sup>३</sup> ॥२२७॥

बिषयी जीव पाइ प्रमुताई । मूढ मोहवस होहिं जनाई ॥

भरतु नीनि रत साधु सुजाना । प्रभु पद प्रेभु सजल जगु जाना ॥

तेऊ आजु राजपदु पाई । चले धरम मरजाद मेठाई ॥

कुटिल कुबधु कुश्रवसरु ताकी । जानि रामु बन वास एकाकी ॥

करि कुमत्रु मन साजि समाजू । आप कहइ अकटक राजू ॥

कोटि प्रकार कलपि कुटलाई । आप दलु बयोरे दोउ भाई ॥

जौ जिअँ होति न कपट कुचाली । केहि सोहाति रथ बाजिगजानी ॥

भरतहि दोनु देइ को जाएँ । जग बौगइ राजपदु पाएँ ॥

दो०—ससि गुर तिअ गामी नहुप चढ़ेउ मूमिसुर जान ।

लोक बेद तैं विमुख भा अधम न बैन समान ॥२२८॥

१—प्र० : सचिन । द्वि० : प्र० [(४) (५) (५अ) चरित] । [तृ० : चरित] । च० : प्र० ।

२—प्र० : कहइ । द्वि० : प्र० । [तृ० : कहाँ] । च० : प्र० [(५) : कहाँ] ।

सहसबाहु सुरनाथ त्रिसकू । केहि न राजमद दीन्ह कलंकू ॥  
 भारत कीन्ह येह उचित उपाऊ । रिपु रिन रच न राखव काऊ ॥  
 एक कीन्हि नहिं भरत मलाई । निदरे राम जानि असहाई ॥  
 समुझि परिहि सोउ आजु बिसेषी । समर सरोष राम मुख पेखी ॥  
 एनना कहत नीत रस मूला । रन रस बिटु पुलक भिस फूला ॥  
 प्रमु एद यदि सोस रज राखी । बोले सत्य सहज बलु भाखी ॥  
 अनुचिन नाथ न मानव मोरा । भरत हमहिं उपचरा<sup>१</sup> न थोरा ॥  
 कहँ लगि सहिअ रहिअ मनु मारें । नाथ साथ धनु हाथ हमारें ॥  
 दो०—द्वत्र<sup>२</sup> जाति रघुकुल जनमु राम अनुज<sup>३</sup> जगु जान ।

लातहुँ मारें चढ़ति सिर नीच को घूरि समान ॥२२६॥  
 उठि कर जोरि रजायेसु मोंगा । मनहुँ बीररस सोवन जागा ॥  
 बौधि जटा सिर कसि कटि भाथा । साजि सरासनु सायकु हाथा ॥  
 आजु राम सेवक जसु लेऊँ । भरतहि समर सिखावन देऊँ ॥  
 राम निराद<sup>४</sup> घर फलु पाई । सोवहुँ समर सेज दोउ भाई ॥  
 आइ बना मन सकल समाजू । प्रगट करौ रिस पाछिन आजू ॥  
 जिमि करि निरु दलइ मृगराजू । लेइ लपेटि लवा जिमि बाजू ॥  
 तैसेहिं भरतहि सेन समेता । सानुज निदरि निपातौ<sup>५</sup> खेता ॥  
 जौ सहाय कर संकट आई । तौ मारौ रन राम दोहाई ॥  
 दो०—अति सरोष मापे लखनु लखि सुनि सपय प्रवान ।

सभय लोक सब लोरुपति चाहत भमरि भगान ॥२३०॥  
 जगु मय मगन गगन भइ चानी । लखन बाहु वनु त्रिपुल बखानी ॥  
 तात प्रताप प्रमाउ तुम्हारा । को कहि सकइ को जाननिहारा ॥  
 अनुचित उचिन काजु कलु होऊ । समुझि करिअ भल कह सबु कोऊ ॥

१—२० : उपचरा । [ दि०, नृ० : उपाचार ] । च० : प्र० [ (८) : उपचार ] ।

२—२० : द्वत्र । दि० : प्र० [ (१) (५) : द्वत्रि ] । [ नृ० : द्वत्रि ] । च० : प्र० [ (८) : द्वत्रि ] ।

३—२० : अनुज । दि०, नृ० : प्र० । [ च० : अनुज ] ।

सहसा करि पंछे पविताहीं । कहहि वेद बुध ते बुन नाही ॥  
 सुनि सुर बचन लखन सकुचाने । राम सीय सादर सनमाने ॥  
 फरी तात तुम्ह नीति सुहाई । सब तें कठिन राजमदु भाई ॥  
 जो अचन्त नृप मातहि तेई । नाहिन माधु सभा जेहि सेई ॥  
 सुनहु लखन भल भरन सरीसा । विधि प्रपच म्हैं सुना न दीसा ॥  
 दो०—भगति होइ न राजमदु विधि हरि हर पद पाइ ।

करहुँ की कौजो सीकरनि धीरसिधु बिनपाइ ॥२३१॥  
 तिमिर तरुन तरहि मकु गिलई । गगनु मग न मकु मेरहि मिलई ॥  
 गोपद जल बूझहि घटजेनो । सहज छमा बरु छाडि छोनी ॥  
 मसक फूँक मकु मेरु उड़ाई । होइ न नृपमदु भरतहि भई ॥  
 लखन तुम्हार सपथ पितु आना । सुचि सुबधु नहि भरत समाना ॥  
 सगनु लीरु अगुन जनु जाता । मिलइ रचइ परपचु विधाता ॥  
 भरतु हस रवि वष तडागा । जगमि कीन्ह गुन दोष विभागा ॥  
 गहि गुन पय तजि अवगुन बारी । निज जस जगत कीन्ह उजिआरी ॥  
 कहत भरत गुन सीलु सुभाऊ । प्रेम पयोधि मगन रघुराऊ ॥  
 दो०—सुनि रघुवर बानी विबुध देखि भारत पर हेतु ।

सकल सराहन राम सो प्रभु को कृपानिस्तेतु ॥२३२॥  
 जौ न होत जग जनम भरत को । सकल धरम धुर धग्नि धरत को ॥  
 कनि कुल अगम भरत गुन गाथा । सो जानइ तुम्ह त्रिनु रघुनाथा ॥  
 लखनु नाम सिधु सुनि सुर बानी । अति सुख लहेउ न जाड बन्वानी ॥  
 इहाँ भरतु सब सहित सहाएँ । मदाकिनी पुनोन नशएँ ॥  
 हरिन समीप राखि सब लोगा । मौगि मातु गुरु सचिव निशोगा ॥

१—प्र० : नृप साहि । दि० : प्र० [ (१) १५ साहि नृप ] । १०, च० : प्र० [ (१) १५ साहि नृप ] ।

—प्र० : जेहि । दि० : प्र० [ (२) ५ : बर ] । १०, च० : प्र० ।

२—प्र० : मनु । दि० : प्र० [ १० : बर ] । १० : प्र० ।

चले भरतु जहँ सिय रघुरई । साथ निपादनाथु लघु भाई ॥  
समुझि मातु करतव सकुचार्ही । करत कुतरक कोटि मन माहीं ॥  
राम लखनु सिय सुनि मम नाऊँ । उठि जनि अनउ जाहिं तजि ठाऊँ ॥  
दो०—मातु मतेँ महुँ मानि मोहि जो कछु करहिं सो थोर ।

अथ अवगुन छमि आदरहिं समुझि आपनी ओर ॥२३३॥  
जैँ परिहरहिं मलिन मनु जानी । जौँ सनमानहिं सेवकु मानी ॥  
मोरे सरन राम की पनहीं । राम सुस्वामि दोसु सब जन हीं ॥  
जग जस भाजन चातक मीना । नेम पेम निज निपुन नबीना ॥  
अस मन गुनत चले मग जाता । सकुच सनेह सिथिल सब गाता ॥  
फेगति मनहिं मातृकुन खोरी । चलत भगति बल धीरज धोरी ॥  
जब समुझत धुनाथ सुभाऊ । तब पथ परत उताइल पाऊ ॥  
भात दसा तेहि अदसा कैसी । जल प्रवाह जल अलि गति जैसी ॥  
देखि भरत घर सोचु सनेह । भा निपाद तेहि समय बिदेह ॥  
दो०—लगे होन मंगल सगुन सुनि गुनि कहत निपादु ।

मिटिहि सोच होइहि हरषु पुनि परिनाम विषादु ॥२३४॥  
सेवक वचन सत्य सब जाने । आस्रम निरट जाइ निभराने ॥  
भरत दीख बन सैल सभाजू । मुदित छुधिता अनु पाइ सुनाजू ॥  
ईति भीति अनु प्रजा दुखारी । त्रिविध ताप पीड़ित ग्रह मारी ॥  
जाइ सुगज सुदेस सुखारी । होहि भरत गति तेहि अनुहारी ॥  
राम बास बन संगति आज्ञा । सुखी प्रजा अनु पाइ सुगजा ॥  
सचिव रिरागु बिवेकु नरेसू । बिपिन सुहावन पावन देसू ॥  
भट जम नियम सैल रजधानी । सांति सुमति सुचि सुँदर रानी ॥  
सकल अंग संपन्न सुगऊ । रामचरन आस्रित चित चाऊ ॥

१—प्र० : रात । द्वि० : प्र० [ (३) : रातहिं ] । नृ० : प्र० । [ च० : रातहिं ] ।

२—[प्र० : गुन] । द्वि०, नृ०, च० : गुनि ।

३—[प्र०, द्वि०, नृ० : मारी] । च० : मारी [ (८) : मारी ] ।

दो०—जोति मोह महिपालु दल सहित विवेक मुशालु ।

करत अकंटक राज्य पुर सुख सपदा सुकालु ॥२३५॥

बन प्रदेश मुनि वास घनेरे । जनु पुर नगर गाउँगन खेरे ॥

विपुल विचित्र विहँग मृग नाना । प्रजा समाजु न जाइ बखाना ॥

खगहा करि हरि बाघ बगहा । देखि महिष वृषः साजु सराहा ॥

बयरु विहाइ चरहि एक सगा । जहँ तहँ मनहुँ सेन चतुरगा ॥

भराना भरहि मत्तगज गाजहि । मनहुँ नियान विविध विधि बाजहि ॥

चरु चक्रोर चातक सुक पिऊ गन । कूजः मंजु मराल मुद्रितमन ॥

अलिगन गावत नाचः मोरा । जनु सुगज मगल चहुँ ओरा ॥

बेलि बिटप तृन सकल सहुला । सब समाजु मुद मंगल मूला ॥

दो०—राम सैल सोभा निरखि भरत हृदयँ अति पेम ।

तापस तप फलु पाइ जिमि सुखी सिराने नेमु ॥२३६॥

सब केवट ऊँचे चढ़ि घाई । बहेउ भरत सन भुजा उठाई ॥

नाथ देखियहि बिटप विसाला । यारि जबु रसाल तमाला ॥

तिन्ह तरुवरन्ह मध्य बटु सोहा । मजु विसाल देखि मनु मोहा ॥

नील सपन पल्लव फल लाला । अविननः छाँह सुखद सन काला ॥

मानहुँ तिमिर अरुनमय रासी । बिरबी बिधि सकेलि सुपना सी ॥

ये तरु सरित समीप गोसाई । रघुवर पानपुटी जहँ छाई ॥

तुलनी तरुन बिबिध मुहाए । कहुँ कहुँ सिय कहुँ लखन लगार ॥

बटु धार्यो बेदिका बनाई । सिय निज पानि सरोज सुहाई ॥

दो०—जहाँ बैठि मुनि गन सहित नित सिय रामु सुमान ।

मुनिहि कथा इतिहास सन आगम निगम पुरान ॥२३७॥

सम्पा बचन मुनि बिटप निहारी । उमगे भरत विलोचन चारी ॥

करत प्रनाम चले दोउ भाई । कहत प्रीति सारद सकुचाई ॥  
हरपहि निरखि राम पद अंका । मानहुँ पारसु पाएउ रका ॥  
रज सिर धरि हिय नयनन्हि लावहिं । रघुचर मिलन सरिस सुख पावहिं ॥  
देखि भरत गति अरुथ अतीवा । प्रेम मगन मृग खग जड़ जीवा ॥  
सखहि सनेह विवस मग भूला । कहि सुपंथ सुर वरपहि फूला ॥  
निरखि सिद्ध साधक अनुरागे । सहज सनेहु सरहन लागे ॥  
होत न भूतल भाउ भरत को । अचर सचर चर अचर करत को ॥  
दो०—पेनु अमिष मंदरु बिरहु भरतु पयोधि गँभीर ।

मथि प्रगटेउ सुर साधु हित कृपासिंधु , रघुवीर ॥२३८॥  
सखा समेत मनोहर जोटा । लखेउ न लखन सघन बन ओटा ॥  
भरत दीख प्रभु आसुमु पावन । सकल सुमंगल सदन सुहावन ॥  
करत प्रवेस मिटे दुख दावा । जनु जोगी परमारथु पावा ॥  
देखे भरत लखन प्रभु आगे । पूछे बचन कहत अनुरागे ॥  
सीस जटा कटि मुनिपट बाँधे । तून कसे कर सर धनु काँधे ॥  
बेदी पर मुनि साधु समाजू । सीय सहित राजत रघुराजू ॥  
बलकल वसन जटिल तनु स्यामा । जनु मुनि बेपु कीन्ह रति कामा ॥  
कर धमलनि धनु सायकु फेरत । जिय की जरनि मनहुँ रहँसि हेरत ॥

दो०—लसत मंजु मुनि मंडली मध्य सीय रघुचंदु ।

ज्ञान सभा जनु तनु धरे भगति सच्चिदानंदु ॥२३९॥  
सानुज सखा समेत भगन मन । बिसरे हरप सोरु सुख दुख गन ॥  
पाहि नाथ कहि पाहि गोसाई । भूतल परे लकुट की नाई ॥  
बचन सपेम लखन पहिचाने । करत प्रनामु भरत जिअँ जाने ॥  
बंधु सनेह सरसरे येहि ओरा । उत साहिव सेवा बस जोरा ॥

१—प्र० : निव । दि० : प्र० [ (४) (१३) : दिव ] । तु०, च० : प्र० ।

२—प्र० : मनहुँ । [ दि०, तु० : हरत ] । च० : प्र० [ (८) : हरत ]

३—प्र० : सरस । दि० : प्र० । [ तु० : सरिस ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : बस । [ दि०, तु० : वर ] । च० : प्र० ।

मिलि न जाइ नहिं गुदरत बनई । सुकवि लखनमन की गति मनई ॥  
 रहे रखि सेवा पर भारू । चढ़ी चग जनु खैच खेलारू ॥  
 कहत सप्रेम नाइ महि माथा । भरत प्रनाम करत रतुनाथा ॥  
 उठे रामु सुनि पेम अधीरा । कहुं पट कहुं निपग धनु तीरा ॥  
 दो०—बरबस लिए डठाइ उर लाए कृपानिधान ।

भारत राम की मिलनि लखि बिसरे<sup>३</sup> सवहि अपान ॥२४०॥  
 मिलनि प्रीति तिमि जाइ बखानी । कवि बुल अगमवरम मन बानी ॥  
 परम पेम पूरन दोउ भाई । मन बुधि चित अहमिति बियराई ॥  
 कहहु सुपेसु प्रगट को करई । केहि छायाँ कवि मति अनुसरई<sup>४</sup> ॥  
 कविहि अरध आखर बलु सौंचा । अनुहरि ताल गतिहि नदु नाचा ॥  
 अगम सनेहु भरत रघुवर को । जहँ न जाइ मनु बिधि हरि हर सो ॥  
 सो मई गुमति कहौ केहि भाती । बाज सुराग कि गोंडर तौती ॥  
 मिलनि बिलोकि भारत रघुवर की । सुरागन सभय धक्कधक्की धरकी ॥  
 समुझाए सुरागुर जइ जागे । बरपि प्रसून प्रसंसन लागे ॥  
 दो०—मिलि सप्रेम रिपुमूदनहिं केवटु भेंटैउ राम ।

भूरि भायँ<sup>५</sup> भेंटै भारत लखिमन करत प्रनाम ॥२४१॥  
 भेंटैउ लखन ललकि लघु भाई । बहुरि निपादु तीन्ह उर लाई ॥  
 पुनि पुनिगन दुहु भाइन्ह बदे । अमिमत आसिष पाइ अनदे ॥  
 सानुज भरत उमगि अनुरागा । धरि सिर सिय पद पदुम परागा ॥  
 पुनि पुनि करत प्रनाम उटार । सिर कर कमल परसि बैठाए ॥  
 सीय असीम दीन्ह मन माहीं । मगन सनेह देह मुधि नारी ॥  
 सा बिधि मानकूल लभि मीना । भे नियोजन उर अपदग चीना ॥  
 फेउ रिझु रुदइन कोउ छिझु गूँरा । प्रेम भग मन निज गनि डूँछा ॥

३—प्र० : रिमरे । दि० : प्र० । [ (३) : मिलत ] । [ १० : विमल ] । च० : प्र० ।

४—[ प्र० : गति द अनुसरई ] । दि०, न०, च० : मति अनुसरत ।

५—प्र० : भाय । दि० : प्र० । [ नृ० : भाइ ] । च० : प्र०

तेहि अवसर नेवटु घोरजु धरि । जोरि पानि त्रिनवत प्रनामु करि ॥

दो०—नाथ साथ मुनिनाथ के मातु सफल पुर लोग ।

मेवक सेनप सचिव सब आए निकुन त्रियोग ॥२४२॥

सीलसिंधु मुनि गुर आगमनू । सिध समीप राखे ग्निपुदमनू ॥

चले समेग राम तेहि काला । धीर धरम धुर दीन दयाला ॥

गुरहि देखि सानुज अनुरागे । दड प्रनाम करन प्रमु लागे ॥

मुनिर धाइ लिए उर लाई । प्रेम उमगि भेंटे दोउ भाई ॥

प्रेम पुलकि नेवट कहि नामू । कीन्ह दुरि तें दड प्रनामू ॥

रामसखा रिपि बरवस भेंटा । जनु महि लुटत<sup>१</sup> सनेह समेग ॥

रघुपति भगति सुमगल मूला । नम सराहिं सुर बरपहिं<sup>२</sup> फूला ॥

येहि सम निपट नीच कोउ नाहीं । बड बसिष्ठ सम को जग माहीं ॥

दो०—जेहि लखि लखनहुं तें अधिक मिले मुदिन मुनिराउ ।

सो सीतापति भजन को प्रगट प्रताप प्रमाउ ॥२४३॥

आरत लोगु राम सब जाना । करुनाकर सुजान भगवाना ॥

जो जेहि भायँ रहा अभिनापी । तेहि तेहि कै तसि तसि रुख राखी ॥

सानुज मिलि पन महुं सब काहु । कीन्ह दूगि दुखु दारुन दाहु ॥

येह बडि गान राम कै नाहीं । जिमि घट कोटि एक रनि छाहीं ॥

मिलि केगहि उमगि अनुगग । पुरजन सरल मराहिं भाग ॥

देखी राम दुखित महतारी । जनु सुनेलि गबली हिम गारी ॥

प्रथम राम भेंटी केहई । सरल सुमायँ भगनि मति भेई ॥

पग परि कीन्ह प्रबोधु बहोरी । काल करम बिधि सिर धरि खोरी ॥

दो०—भेंटी रघुनर मातु सन करि प्रबोधु परितोषु ।

अथ ईम आधीन जगु काहु न देखिअ दोषु ॥२४४॥

१—प्र० लुटत । द्वि०, तृ० प्र० । [१० लुटत] ।

२—प्र० बरपहिं । द्वि०, तृ० प्र० । [४० बरिसहिं] ।



गुरतिअ पद चढ़े दुहुँ माई । सहित निपतिअ जे सँग आई ॥  
 गग गोरि सम सग सामानी । देखि अमीग मुदिन मृदु बानी ॥  
 गहि पद लगे मुमिया अथा । जनु भेंटो सपति अति रक्षा ॥  
 पुनि जननी चरनि दोउ भाना । परे पेग व्याकुल सग गाता ॥  
 अति अनुगग अंब उर लाए । नयन सोह सलित अन्हमाण ॥  
 तेहि अवसर कर हरष रिपाइ । किमि कनि कहइ मूक जिमि म्याइ ॥  
 मिलि जननिहि सानुज रघुराऊ । गुर सन कहैंउ कि धारिअ पाऊ ॥  
 पुरजन पाइ मुनीस नियोगू । जल धल तकि तकि उनरेउ लोगू ॥  
 दो०—महिपुर मत्री मातु गुर गने लोग लए साथ ।

पावन आसमु गवनु रिपे भरत लखन रघुनाथ ॥२४५॥  
 सीय आई मुनिअर पग लागी । उचिन असीन लही मन मोगी ॥  
 गुरपतिनिहि मुनितिअन्ह समेता । मिली पेग कहि जाइ न जेता ॥  
 यदि यदि पग सिय सगही के । आसिरअचन लहे भिय जी के ॥  
 सासु सकल जय सीयर निहारी । मूँदे नयन सहमि सुठुमारी ॥  
 परी बधिक बस मनहुँ मराली । काह कीन्ह करतार कुच ली ॥  
 तिह सिय निरखि निपट दुख पावा । सो सबु सहिअ जो दैउ सहावा ॥  
 जनकनुता तब उर धरि धीरा । नील नलिन लोयन भरि नीरा ॥  
 मिली सकल सासुन्ह सिय जाई । तेहि अवसर करुना महि छाई ॥  
 दो०—लागि लागि पग सर्गन सिय भेंटति अति अनुराग ।

हृदयँ अस सहिँ पेगबस रहिअहु भरी सोहाग ॥२४६॥  
 निरल सनेह सीय सग रानी । बैठन सबहिँ कहेउ गुर ज्ञानी ॥  
 कहि जग गति मायिक मुनिनाथा । कहे कछुक परमारथ गाथा ॥  
 नृप कर सुरपुर गवनु सुनावा । सुनि रघुनाथ दुसह दुख पावा ॥  
 मरन हेतु निज नेहु बिचारी । मे अति विकल धीर धुर धारी ॥

कुलिस ऋठोर सुनत कटु वानी । बिलपत लखन सीय सब रानी ॥  
 सोक विकल अति सकल समाजू । मानहुँ राजु अकालेउ आजू ॥  
 मुनिवर बहुरि राम समुझाए । सहित समाज सुसरित नहाए ॥  
 व्रतु निरंबु तेहि दिन प्रभु कीन्हा । मुनिहुँ कहैं जलु दाहु न लीन्हा ॥  
 दो०—भोरु भएँ रघुनदनहिं जो मुनि आयेसु दीन्ह ।

अर्द्धा भगति समेत प्रभु सो सबु सादर कीन्ह ॥२४७॥  
 करि पितु क्रिया वेद जसि बरनी । मे पुनीत पातक तम तरनी ॥  
 जासु नाम पावक अघ तूला । सुमिरत सकल सुमंगल मूला ॥  
 सुद्ध सो भएउ साधु संमत अस । तीरथ आवाहन सुरसरि जस ॥  
 सुद्ध भएँ दुइ वासर बीते । बोले गुर सन मातु<sup>१</sup> पिरीते ॥  
 नाथ लोग सब निपट दुखारी । कद मूल फल अबु अहारी ॥  
 सानुज भरतु सचिव सब माता । देखि मोहि पल जिमि जुग जाता ॥  
 सब समेत पुर धारिअ पाऊ । आपु इहाँ अमरावति राऊ ॥  
 बहुतु कहेउँ सब<sup>२</sup> किएउँ दिठार्ई । उचिन होइ तस करिअ गोसाईं ॥  
 दो०—धरम सेतु करुनायतन कस न कहहु अस राम ।

लोग दुखित दिन दुइ दारसु देखि लहहुँ विस्वाम ॥२४८॥  
 राम वचन मुनि समय समाजू । जनु जलनिधि महुँ चिन्तल जहाजू ॥  
 मुनि गुर गिरा सुमंगल मूला । भएउ मनहुँ मारुन अनुकूला ॥  
 पावनि पय तिहु काल नहाहीं । जो विलोकि अघ ओघ नसाहीं ॥  
 मंगल मूर्ति लोचन भरि भरि । निरसहिं हरषि दंडवत करि करि ॥  
 राम सैल वन देखन जाहीं । जहँ सुख सबले सकल दुख नाहीं ॥  
 भरना भरहिं मुखा सम वारी । त्रिनिघ तापहर त्रिनिघ बयारी ॥  
 त्रिप बेलि तृन अगनित जाती । फल प्रभून पल्लव बहु भाँती ॥

१—प्र० : मातु । [ दि० : ( ) (४) (५) राम ; (५) अ) पेम ] । [वृ० : गम ] । च० : प्र०  
 [ (८) : राम ] ।

२—प्र० : सब । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : वम ] ।

सुंदर सिला मुखद तरु छाहीं । जाइ बरनि वन छनि देहि पाहीं ॥  
दो०—सग्नि सरोरुह जल बिहँग नृजत गुंजत भृंग ।

घेर बिगत बिहरत विपिन मृग बिहग बहु रग ॥२४६॥

कोल किरात भिल्ल बनमासी । मधु सुचि सुंदर स्वाद सुधा सी ॥  
भरि भरि परन पुटीं रचि खूरीं । कद मूल फल अंकुर जूरीं ॥  
सबहिं देहिं करि विनय प्रनामा । कहि कहि स्वाद भेद गुन नामा ॥  
देहिं लोग बहु मोल न लेहीं । फेरत गम दोहाई देहीं ॥  
कहहिं सनेह भगन मृदु बानीं । गानन साधु पेम पहिचानी ॥  
तुम्ह सुकृती हम नीच निपादा । पावा दरसन राम प्रसादा ॥  
हमहिं अगम अति दरस तुम्हारा । जस मरु घरनि देवसरि धारा ॥  
राम कृपाल निपाद नेवाजा । परिजन प्रजउ चाहिअ जस राजा ॥

दो०—यह जिअँ जानि सँकोचु तजि करिअ छोडु लखि नेहु ।

हमहिं वृत्तारथ करन लागि फल तृन अकुर लेहु ॥२५०॥

तुम्ह प्रिय पाहुने बन पगु धारे । सेम जोगु न भाग हमारे ॥  
देव काह हम तुम्हहि गोसाईं । ईधनु पात किरात मिनाईं ॥  
यह हमारि अति बडि सेवकाईं । लेहिं न बासन बसन चोराईं ॥  
हम जड़ जीव जीवगन घाती । कुटिल कुचाली कुमति कुजाती ॥  
पाप करत निसि बासर जाहीं । नहिं प० कटि नहि पेट अघाहीं ॥  
सपनेहुँ धरम बुद्धि कस काऊ । येह रघुनरन दरस प्रभाऊ ॥  
जब तैं प्रभु पद पदुम निहारे । मिटे दुसह दुख दोष हमारे ॥  
बचन सुनत पुरजन अनुगो । तिन्हके भाग सराहन लागे ॥

छ०—लागे सराहन भाग सब अनुराग बचन सुनावहीं ।

बोलनि मिलनि सिय राम चरन सनेहु लखि सुख पावहीं ॥

नर नारि निद्राहिं नेहु निज सुनि कोल भिल्लानि की गिरा ।

तुलसी कृपा रघुवसमनि की लोह लै नौका१ तिरा ॥

सो०—बिहरहि वन चहुँ ओर प्रति दिन प्रमुदित लोग सब ।

जल ज्यों दादुर मोर भए पीन पावस प्रथम ॥२५१॥

पुर नर नारि मगन अति प्रीती । वासर जाहिं पलक सम बीती ॥

सीय सासु प्रति बेप बनाई । सादर कइ सरिस सेवकाई ॥

लखा न मरमु राम बिनु काहँ । माया सब सिय माया माहँ ॥

सीय सासु सेवा बस कीन्ही । तिन्हलहिसुख सिखयासिप दीन्ही ॥

लखि सिय सहित सरल दोउ भाई । कुटिल रानि पछितानि अधाई ॥

अबनि जमहि जाचति कैकेई । महि न मीचु बिधि मीचु न देई ॥

लोकहुँ बेद विदित कबि कहहीं । राम विमुख धलु नरक न लहहीं ॥

यहु संसउ सकलें मन माहीं । राम गवनु बिधि अवध कि नाहीं ॥

दो०—निंसि न नींद नहिं भूख दिन भएतु बिफल सुठि<sup>१</sup> सोच ।

नीच कीच बिच मगन जस मीनहि सलिल सँकोच ॥२५२॥

कीन्ही मातु मिस काल कुचाली । ईति भीति बस पाकत साली ॥

केहि बिधि होइ राम अभिपेकू । मोहि अवकलत उपाउ न एकू ॥

अवसि फिरहिं गुर आयेसु मानी । मुनि पुनि कहव राम रुचि जानी ॥

मातु कहेहु बहुरहिं रघुराऊ । रामजननि हठ करधि कि काऊ ॥

मोहि अनुचर कर केतिक बाता । तेहि महँ कुसुमउ बाग विधाता ॥

जौं हठ करौ त निपट कुकरम् । हर<sup>२</sup> गिरि तें गुरु सेवक धरम् ॥

एकउ जुगुति न मन ठहरानी । सोचत भरतहिं<sup>३</sup> रैनि बिहानी ॥

प्रात नहाइ प्रभुहि सिरु नाई । बैठउ पठए रिषयें बोलाई ॥

दो०—गुरु पद कमल प्रनामु करि बैठे आयेसु पाइ ।

बिच महाजन सचिच सब जुरे समासद आइ ॥२५३॥

बोले मुनिरु समग्र समाना । सुनहुँ समासद भरत सुजाना ॥

धरम धुरीन मानुकुल भानू । राजा राम स्वचस भगवानू ॥

१—प्र०, दि०, वृ० : सुठि । [ च० : सुचि ] ।

२—[ प्र० : हर ] । दि० : हर [ (३) : हर ] । वृ०, च० :

मनसं वचनं धृतिं सीतु । राम जगत् जग मंगल दे । ॥  
 गुर विपु मातु वचन अनुमती । मन दनु दनन देव दिगम्बी ॥  
 भीति भीति परमाथ स्वाम्यु । कोउ न मम मा जान नदाम्यु ॥  
 विधि हरे हन ममे मवि शिवायना । भाग्य मोर वचन पुनि कान्य ॥  
 अद्विप मद्विप महे ननि प्रमुदई । मोर निदिन निदनामन मई ॥  
 कति विनाम विभे देमहु भई ॥ मन स्वद भौव मदी के ॥  
 दो०—रामें राम स्वद मम हम मव क री होइ ।

गुम्फि मफने करहु मर मर निनि ममर सोइ ॥२५४॥  
 राम को सुगर मन अभिनेह । भंगन मंद गूत मगु पक ॥  
 वेदि विधि अवध नहि गुमाऊ । कहु गुम्फि मोइ कविम उरऊ ॥  
 सन सारग मुनि मुनिव बानी । गव परमाथ स्वाम्यु मानी ॥  
 उनरु न आर लोग भर भोरे । सब गिरु नाइ भाग क जोरे ॥  
 भानुवंग भय भूष पनेरे । अभिह पक ते पक बनेरे ॥  
 जनम ऐतु सन कहें विपु माना । करम मुभागुभ देइ विधाता ॥  
 दनि दुख सगद सदन कल्याना । अम अभीम सउरि जगु जाना ॥  
 सो गोमाई विधि गति जेहि ऐंदी । सगद को टारि टेक जो देखी ॥  
 दो०—गुम्फि मोहि उवाउ अब सो सब मोर अभागु ।

मुनि सनेइमय वचन गुर उर उमगा अनुरागु ॥२५५॥  
 तात बात फुरि राम कृपाही । राम विमुख सिधि सपनेहु नाही ॥  
 सकुचौ तात कहत एक वाता । अरध तजहि बुध सरयु जाता ॥  
 लुह पानन गवनहु दोउ भाई । फेरिअहि लखनु सीय सपुराई ॥  
 मुनि सुवचन हरषे दोउ आता । भे प्रमोद परिपूजन माना ॥  
 मन प्रसन्न तन तेजु विशाजा । अनु जिए राउ रागु भए राजा ॥  
 बहुहु लाभु लोगन्ह लघु हानी । सम दुख सुख सन रोवहि रानी ॥

कहहिं भरतु मुनि कहा सो कीन्हें । फलु जग जीवन्ह अभिमत दीन्हें ॥  
कानन करउँ जनम भरि बासु । येहि ते अधिक न मोर सुभासु ॥  
दो०—अंतरजाभी रामु सिध तुम्ह सर्वज्ञ सुजान ।

जौ फुर कहहु त नाथ निज कीजिय बचनु प्रवान ॥२५६॥  
भरत बचन सुनि देखि सनेह । समा सहित मुनि भएउ विदेह ॥  
भरत महा महिमा जलरासी । मुनि मति ठाढ़ि तीर अबला सी ॥  
गा चह पार जतनु हियँ हेरा । पावत नव न बोहितु बेरा ॥  
औरु करिहि को भरत बड़ाई । सरसी सोषि किं सिंधु समाई ॥  
भरतु मुनिहि मन भीतर भाए । सहित समाज राम पहिं आए ॥  
प्रभु प्रनामु करि दीन्ह सुआसनु । बैठे सब सुनि मुनि अनुसासनु ॥  
बोले मुनिवरु बचन बिचारी । देस काल अवसर अनुहारी ॥  
सुनहु राम सर्वज्ञ सुजाना । घरम नीति गुन ज्ञान निधाना ॥  
दो०—सब के उर अंतर बमहु जानहु भाउ कुमाउ ।

पुरजन जननी भरत हित होइ सो कहिअ उपाउ ॥२५७॥  
आरत कहहिं विचारि न काऊ । सूझु जुआरिहि आपन दाऊ ॥  
सुनि मुनि बचन कहत रघुराऊ । नाथ तुम्हारेहिं हाथ उपाऊ ॥  
सब दर हित रुख राउरि राखें । आयेसु किँ मुदित फुर भाखें ॥  
प्रथम जो आयेसु मो कहँ होई । माथे मानि करउँ सिख सोई ॥  
पुनि जेहि कहँ जस कहब गोसाई । सो सब भाँति घटिहि सेवकाई ॥  
कह मुनि राम सत्य तुम्ह भाषा । भरत सनेह बिचारु न राखा ॥  
तेहि तँ कहउँ बहोरि बहोरी । भरत भगति बस भइ मति मोरी ॥  
मोरें जान भरत रुचि राखी । जो कीजिय सो सुभ सिव राखी ॥  
दो०—भरत बिनय सादर सुनिअँ करिअँ विचारु बहोरि ।

करब साधुमत लोकमत नृपनय निगम निचोरि ॥२५८॥

१—प्र० : भरसी सीषि किं । दि० : प्र० [ (५) (५) (५अ) : सरसीषी किंमि ] । [ वृ० : सरसीषी किंमि ] । च० : प्र० ।

## श्री राम चरित मानस

गुर अनुगागु भरत पर देखी । राम हृदयँ आनंदु विसेपी ॥  
 भरतहि धरमधुरधर जानी । निज सेवक तन मानस बानी ॥  
 बोले गुर आयेसु अनुकूला । वचन मंजु मृदु मंगल मूना ॥  
 नाथ सपथ पितु चरन दोहाई । भरत न भुयन भरत सम भाई ॥  
 जे गुर पद अंबुज अनुरागी । ते लोकहुँ बेदहुँ बड़भागी ॥  
 राउर जा पर अस अनुगागू । को कहि सकइ भरत कर भागू ॥  
 लखि लघु बंधु बुद्धि सकुचाई । करत बदन पर भरत बड़ाई ॥  
 भावु करहि सोइ छिपेँ मनाई । अस कहि रामु रहे अरगाई ॥  
 दो०—उब मुनि बोले भरत सन सब सँकोचु तजि तात ।

कृपासिधु प्रिय बंधु सन कहहु हृदय कह बात ॥ २५६ ॥  
 सुनि मुनि वचन राम रुख पाई । गुर साहिव अनुकूल अघाई ॥  
 लखि अपने सिर सधु छरुमारू । कहि न सकहिं किछु करहिं बिचारू ॥  
 पुलकि सरीर समों भए ठाढे । नीरज नयन नेह जल बाँढ़े ॥  
 कहव मोर मुनिनाथ निबाहा । येहि तें अधिक कहौ मै काहा ॥  
 मई जानउँ निज नाथ मुभाऊ । अपराधिहु पर कोह न काऊ ॥  
 मो पर कृपा सनेहु विसेपी । खेलत खुनिस न कयहँ देखी ॥  
 सिधुपन तें परिहरेउँ न संगू । कबहुँ न कीन्ह मोर मन भगू ॥  
 मई प्रभु कृपा रीति जिय जोही । हारेहु खेल जितावहिं मोही ॥  
 दो०—महँ सनेह सकोव बम सनमुख कहै न बयन ।

दरसन तृपित न आजु लागि पेम पिशासे नयन ॥ २६० ॥  
 विधि न सकेउ सहि मोर दुनाराग नीच बीचु जननी मिस पारा ॥  
 येहुउ कहत मोहि आजु न सोभा । अपनी समुझि साधु मुनि को भा ॥  
 भावु मंदि मई साधु सुचाली । उर अम आनत कोटि कुचाली ॥  
 फरइ कि कोदव बालि सुमाली । मुफ्ता प्रसव कि संवुक्त बाली ॥

सपनेटे दोम कनेमु न काह । मोर अभाग उरधि अरगाह ॥  
 बिनु समझे निन अघ परिपकृ । जारिउं जायँ जननि कहि फाकू ॥  
 हृदयँ हेरि हारेउं सत्र ओरी । एकहि भोति भलेहि भल मोरी ॥  
 गुर गोसाईं साहिब सिय रामू । लागन मोहि नोक परिनामू ॥  
 दो०—साधु सभाँ गुर प्रभु निकट कहउं सुयन सतिभाउ ।

प्रेम प्रपचु कि भूठ फुर जानहि मुनि रघुगउ ॥२६१॥  
 मूपति मरनु प्रेम पनु राखी । जननी कुमनि जगनु सनु साखी ॥  
 देखि न जाहि निरैल महनारी । जरहिं दुसह जर पुर नर नारी ॥  
 महीं सकल अनरथ कर मूला । सो मुनि समुक्ति सहिउं सय सूना ॥  
 मुनि बन गवनु कीन्ह रघुनाथा । करि मुनि बेप लखनु सिय साथ ॥  
 निनु पानहिह पयादेहि पाँ । सकरु सापि रहेउं येहि घाँ ॥  
 बहुरि निहारि निपाद सनेह । कुलिस कठिन उर भएउ न बेह ॥  
 अर सनु आँखिन्ह देखेउं आई । जियत जीव जइ सगइ सहाई ॥  
 निन्हहि निरखि मग सौँपिनि वीछी । तजहिं विषम विष तामस<sup>१</sup> तोछी ॥  
 दो०—तइ रघुननु लखनु सिय अनहित लागे जाहि ।

तासु तनय तनि दुसह दुख दैउ सदावइ काहि ॥२६२॥  
 मुनि अति बिरल भरत बर नानी । आरति प्रीनि बिनय नय सानी ॥  
 सोक मगन सत्र सभा खमारू । गनहुँ कमल बन परउ तुपारू ॥  
 रहि अनरु त्रिधि कथा पुरानी । भरन प्रमोदु कीह मुनि ज्ञानी ॥  
 बोले उचित वचन रघुनदु । दिनकर कुल कैव वन चदू ॥  
 तात जायँ जियँ करहु गलानी । ईम अधीन जीव गनि जानी ॥  
 तीन काल तिमुयन मत मोरें । पुन्यसिलोक तात तर तोरे ॥  
 उर आनन तुम्ह पर कुटिलाई । जाइ लोकु पालोइ नसाई ॥

१—[ प्र० तामस ] । दि० तामस [ (अ) तामस ] । त० दि० । च० दि०  
 [ (इ) तामस ] ।



दोसु देहिं जननिहि जड़ तेई । जिनट गुर सासु ममा नहि मेई ॥

दो०—गिटिहट पापपपन सन गभिल अमगा भाग ।

लोक सुजसु पराजोक्त सुख सुभिरत नाम तुम्हार ॥२६३॥

कहउँ सुभउ सत्य सिय साखी । भगत भूमि रह राउरि रागी ॥

तात कुतारक करहु जनि जाएँ । बैर प्रेउ नहि दुग्द दुगण ॥

मुनिगन निफट चिहँग मृग जाही । बाधक बधिक मिलाफि पगही ॥

हित अनहित पमु बच्छिउ जाना । मानुष तनु गुन ज्ञान निगाना ॥

तात तुम्हहि मई जानेउँ नीकें । करउँ काह अममझसु जी कैं ॥

राखेउ रायें सत्य मोहि रयागी । तनु परिहरेउ पेम पन लागी ॥

तासु वचन मेहत मन सोचू । तहि तैं अधिक तुम्हार संजोचू ॥

तापर गुर मोहि आयेसु दीन्हा । अवसि जो कहहु चइउँ सोइ कान्हा ॥

दो०—मनु प्रसन्न करि सकुच तजि कहहु करउँ सोइ आजु ।

सत्यसध रघुवर वचन सुनि भा सुखी समाजु ॥२६४॥

सुरगन सहित सभय सुरराजु । सोचहिं चाहत होन अकाजु ॥

करत उपाउ बनत कछु नाही । राम सरन सन गे मन माही ॥

बहुरि बिचारि परसपर कहही । रघुपति भगन भगति बस अहही ॥

सुधि करि अवरीष दुरबासा । भे सुर सुरपति निकट निरासा ॥

रुहे सुरन्ह बहु काल विषादा । नरहरि किए प्रगट प्रह्लादा ॥

लागि लागि कान कहहिं धुनि माथा । अब सुर काज भरत कैं हाथा ॥

आन उपाउ न देखिअ देवा । मानत राम सुसेवक सेवा ॥

हिय सपेम सुमिरहु सब भरतहिं । निज गुन सील राम बस करतहि ॥

दो०—सुनि सुर मत सुरगुर कहेउ भल तुम्हार बड भागु ।

सकल सुगमल मूल जग भरत चरन अनुरागु ॥२६५॥

सीतापति सेवक सेवकाई । कामधेनु सय सरिस सुहाई ॥

भरत भगति तुम्हरेँ मन आई । तजहु सोचु बिधि बात बनाई ॥

देखु देवपति भरत प्रगाऊ । सहज सुभाय बिस रघुराऊ ॥

मन थिर करहु देव डरु नाहीं । भरनहि जानि राम परिछाहीं ॥  
 सुनि सुरगुर सुग समत सोचू । अतरजामी प्रभुहि सँजोचू ॥  
 निज सिर भारु भारत निय जाना । कस्त मोटि त्रिधि उर अनुमाना ॥  
 करि त्रिवारु मन दीन्ही ठीका । राम रजायेसु आपन नीका ॥  
 निज पन तजि राखेउ पनु मोरा । छोहु सनेहु कीन्ह नहि थोरा ॥  
 दो०—कीन्ह अनुग्रह अमिन अनि सन त्रिधि सोतानाथ ।

करि प्रनामु बोले मरतु जोरि जनज जुग हाथ ॥२६६॥  
 कहउँ कहावउँ का अरु स्वामी । वृथा अत्रुनिधि अतरजामी ॥  
 गुर प्रसन्न साहिब अनुकृता । मिटी मनिन मन कलपित सूला ॥  
 अपहर डरेउँ न सोच समूलें । रविहि न दोसु देन दिसि भूले ॥  
 मोर अभागु मातु कुटिलाई । विधि गति त्रिपम काल कठिनाई ॥  
 पाउ रोपि सब मिलि मोहि घाला । प्रननपाल पन आपन पाला ॥  
 येह नइ रीति न राउरि होई । लोकरुं वेद त्रिदिन नहि गोई ॥  
 जगु अनमल मन एवु गोसाई । कहिअ होइ मन कासु भनाई ॥  
 देउ देवतरु सरिस सुभाऊ । सनमुख त्रिमुखन काहुहि काऊ ॥  
 दा०—जाइ निरुट पहिचानि तरु छौंह समनि सन सोच ।

मौगत अभिमत पाव जगु राउ रकु मल पोच ॥२६७॥  
 लनि सन त्रिधि गुर स्वामि सनेह । मित्रेउ छोभु नहि मन सदेह ॥  
 अरु नरुनाकर कीजिअ सोई । जन हित प्रभु चित छोभु न होई ॥  
 जो सेवकु साहिबहि सँजोची । निन हित चहइ तासु मति पोची ॥  
 सेवक हित साहिब सेवकाई । करइ सकल सुख लोभ बिहाई ॥  
 स्वागथु नाथ फिरें सनकी का । मित्रें रजाइ कोटि विधि नीका ॥  
 येह स्वारथ परमारथ सारु । सकल सुखन फल सुगति सिंगारु ॥  
 देव एक बिनती सुनि गोरी । उचित होइ तस करव बहोरी ॥  
 तिलक समाजु साजि सबु आना । करिअ सुफल प्रभु जौ मनु माना ॥

दो०—सानुज पठइथ मोहि बन कीजिअ सबुहि सनाथ ।  
ननरु फेरिअहि बंधु दोउ नाथ चलउं मे साथ ॥२६८॥  
नगर जाहि बन तीनिउं भाई । बहुरिअ सीय सहित रघुआई ॥  
जेहि विधि प्रभु प्रसन्न मन होई । करुनाभागर कीजिअ सोई ॥  
देवें दीन्ह सबु मोहि अमरु । मोरें नीति न धरम विचारु ॥

कहउं वचन सन स्वारथ हेतू । रहत न आरत कैं बिन चेतू ॥  
उतरु देइ सुनि स्वामि रजाई । मो सेवकु लखि लाज लजाई ॥  
अस मै अयगुन उदधि अगाधू । स्वामि सनेह सराहत साधू ॥  
अब कृपाल मोहि सो मत भावा । सकुच स्वामि मन जाइ न पावा ॥  
प्रभु पद सपथ कहउं सतिभाऊ । जग गंगल हित एक उपाऊ ॥

दो०—प्रभु प्रसन्न मन सजुच तजि जो जेहि आवेसु देव ।  
सो सिर धरि धरि करिहि सबु मिटिहि अनट अवरोव ॥२६९॥  
भरत वचन सुनि सुनि मुर हरपे । साधु सराहि सुमन मुर बगपे ॥

असमंजस बस अवध नेवासी । प्रमुदित मन तापस बनगसी ॥  
चुपहि रहे रघुनाथ सेंकोची । प्रभु गति देखि सभा सब सोची ॥

जनक दूत तेहि अवसर आए । मुनि वसिष्ठ मुनि बेगि बोलापे ॥  
करि प्रनामु तिन्ह राम निहारे । वेपु देखि भए निपट दुखारे ॥

दूतन्ह मुनिअ बूझी वाता । कहहु विदेह भूप कुसलाता ॥  
मुनि सकुचाइ नइ महि माथा । बोले चर बर जोरें हाथा ॥

बूझ्य राउर सादर साई । कुसल हेतु सो भएउ गोसाई ॥  
दो०—नाहि त कोसलनाथ के साथ कुसल गइ नाथ ।

मिथिला अवध बिसेप तें जगु सब भएउ अनाथ ॥२७०॥  
कोसलपति गति सुनि जनकौरा । मे सब लोक सोकवस बीरा ॥  
जेहि देखे तेहि समय बिदेह । नामु सत्य अस लाग न केह ॥

रानि बुचालि सुनत नरपालहि । सूक्त न कछु जस मनि विनुव्यालहि ॥  
 भरत राजु रघुवर बन्नासू । मा मिथिलेसहि हृदयँ हराँसू ॥  
 नृप बूझे बुध सचिव समाजू । कहहु विचारि उचित का आजू ॥  
 समुझि अवध असमंजस दोऊ । चलिअ कि रहिय न कह बल्लुकोऊ ॥  
 नृपहिं धीर धरि हृदयँ विचारी । पठए अवध चतुर चर चारो ॥  
 बूझि भरत सतिभाव कुमाऊ । आपहु बेगि न होइ लखाऊ ॥  
 दो०—गए अवध चर भरत गति बूझि देखि करतूति ।

चले चित्रकूटहि भरतु चार चले तेरहति ॥२७१॥  
 दूतन्ह आइ भरत बड़ करनी । जनक समाज जथामति बरनी ॥  
 सुनि गुर परिजन सचिव महीपति । भे सब सोच सनेह बिरल अति ॥  
 धरि धीरजु करि भरत बड़ाई । लिप मुमट साहनी बोलाई ॥  
 घर पुर देस राखि रखवारे । हय गय रथ बहु जान सँवारे ॥  
 दुधरी साधि चले ततकाला । किये विस्वामु न मग महिपाला ॥  
 भोरहिं आजु नहाइ प्रयागा । चले जमुन उतरन सबु लागा ॥  
 खबरि लेन हम पठए नाथा । तिन्ह कहि असमहि नाएउ माथा ॥  
 साथ किरात छ सातक दीःहे । मुनिनर तुरत बिदा चर कीन्हे ॥  
 दो०—सुनत जनक आगबनु सबु हरपेउ अवध समाजू ।

रघुनंदनहि सरोजु बड़ सोच विवस सुरराजु ॥२७२॥  
 गरइ गलानि कुटिल कैदेई । काहि कहइ केहि दूपनु देई ॥  
 अस मन आनि मुदित नर नारी । भएउ बहोरि रहब दिन चारी ॥  
 येहि प्रकार गत बासर सोऊ । प्रात नहान लाग सबु कोऊ ॥  
 करि मज्जनु पूजहि नर नारी । गनप गौरि त्रिपुरारि१ तनारी ॥  
 रमारमन पद बंदि बहोरी । बिनबहिं अंजुलि अंचल जोरी ॥  
 राजा रामु जानकी रानी । आनँद अबधि अवध रजधानी ॥

१—प्र० : गनप गौरि त्रिपुरारि । दि० : प्र० [ (४) (१) (५अ) ] गनपति गौरि पुरारि ।  
 [ नृ० : गनपति गौरि पुरारि ] । च० : प्र० ।

सुनस बसउ फिरि सहित समाजा । भरतहि रामु करहुं जुवराजा ॥  
 येहि सुख सुधा सींचि सन काहू । देन देहु जग जीवन लाहू ॥  
 दो०—गुर समाज भाइन्ह सहित रामराजु पुर होउ ।

अद्यत राम राजा अवध भरिअ माग सनु कोउ ॥२७३॥  
 सुनि सनेहमय पुरजन बानी । निंदहिं जोग निरति मुनि ज्ञानी ॥  
 येहि विधि निरख करम करि पुरजन । रामहिं करिं प्रनाम पुलकि तन ॥  
 ऊँच नीच मध्यम नर नारी । लहहिं दसु निज निज अनुहारी ॥  
 साधधान सबही सनमानहिं । सफल सराहत कृपानिधानहिं ॥  
 लरिकाइहिं तैं रघुवर बानी । पालत नीति प्रीति पहिबानी ॥  
 सील सँकोच सिंधु रघुराऊ । सुख सुलोचन साल सुभाऊ ॥  
 कहत राम गुन गन अनुरागे । सब निज भाग सराहन लागे ॥  
 हम सम पुन्यपुंज जग थोरे । जिन्हहि राम जानन करि मोरें ॥  
 दो०—प्रेम मगन तेहि समय सब सुनि आवत मिथिलेसु ।

सहित सभा सभ्रम उठेउ रविनुल कमल दिनेसु ॥२७४॥  
 भाइ सचिव गुर पुरजन साथ । आगें गवनु कीन्ह रघुनाथा ॥  
 गिरिवरु दीख जनकपति जगहीं । करि प्रनामु रथ त्यागेउ तबहीं ॥  
 राम दरसु लालसा उद्याह । पथ सम लेसु कलेसु न काहू ॥  
 मन तहँ जहँ रघुवर बेदेही । निनु मन तन दुख सुख सुधि केही ॥  
 आनत जनकु चले येहि भाँती । सहित समाज प्रेम मति माती ॥  
 आए निरुट देखि अनुरागे । सादर मिलन परसपर लागे ॥  
 लगे जनकु मुनि जन पद बंदन । रिपिन्ह प्रनामु कीन्ह रघुनदन ॥  
 भाइन्ह सहित रामु मिलि राजहि । चले लवाइ समेत समाजहि ॥  
 दो०—आसम सागर सात रस पून पावन पाथु ।

सेन मनहुँ करुना रुगति लिए जात रघुनाथु ॥२७५॥  
 मोरति ज्ञान विगग करारे । वचन ससोऊ मिलत नद नारे ॥  
 सोच उसास समीर तरंगा । धीरज तट तस्वर कर भगा ॥

विषम विषाद तोरावति धारा । भय भ्रम भँवर अवर्त अपारा ॥  
 केवट बुध बिद्या बड़ि नावा । सकहिं न खेइ ऐरु नहिं आवा १ ॥  
 वनचर कोल किरात विचारे । थके विजोकि पथिक हियँ हारे ॥  
 आसम उदधि मिली जव जाई । मनहुँ उठेउ अंघुधि अकुलाई ॥  
 सोक बिरल दोउ राज समाजा । रहा न ज्ञानु न धीरजु लाजा ॥  
 भूप रूप गुन सील सराही । रोवहिं सोक सिंधु अवगाही ॥  
 छं०—अवगाहि सोक २ समुद्र सोचहिं नारि नर व्याकुल महा ।

दौ दोष सकल सरोप बोलहिं वाम बिधि कीन्हो कहा ॥

सुर सिद्ध तापस जोगिजन सुनि देखि दसा बिदेह की ।

तुलसी न समरथु कोउ जो तरि सकै सरित सनेह की ॥

सो०—किए अमित उपदेस जहँ तहँ लोगन्ह मुनिवरन्ह ।

धीरजु धरिअ नरेस कहेउ बसिष्ठ बिदेह सन ॥२७६॥

जासु ज्ञानु रवि भव निसि नासा । बचन किरन मुनि कमल बिकासा ॥

तेहिं कि मोह ममता निअराई । येह सिध राम सनेह बड़ाई ॥

विपथी साधक सिद्ध सयाने । त्रिविध जीव जग वेद बखाने ॥

राम सनेह सरस मल जासू । साधु समौ बड़ आदर तासू ॥

सोह न राम पेम बिनु ज्ञानु । करनधार बिनु जिमि जलजानू ॥

मुनि बहु बिधि बिदेहु समुझाए । रामघाट सब लोग नहाए ॥

सकल सोक संकुल नर नारी । सो वासरु वीतेउ बिनु घारी ॥

पसु खग मृगन्ह न कीन्ह अहारु । प्रिय परिजन कर कौनु बिचारु ॥

दो०—दोउ समाज निमिराजु रघुराजु नहाने प्रात ।

बैठे सब बट विट्ठ तर मन मलीन कृस गात ॥२७७॥

जे महिसुर दसरथपुर वासी । जे मिथिलापति नगर नेवासी ॥

१—[ प्र० पावा ] । दि० : आवा । उ०, च० : दि० [ (६) : पावा ] ।

२—प्र०, दि०, उ० : सोक । [ च० : सोच ] ।

हसयस गुर<sup>१</sup> जनक पुरोध। जिन्ह जग मगु परमाथु सोधा ॥  
 लगे कहन उपदेस अनेका । सहित घरम नय त्रिरति त्रिनेका ॥  
 कौसिक कहि कहि कथा पुरानी । समुझाई सन सभा सुरानी ॥  
 तब रघुनाथ कौसिकहि कहेऊ । नाथ कालि जल त्रिनु सनु रहेऊ ॥  
 मुनि कह उचित कहत रघुराई । गणठ बीति दिन पहर अढ़ाई ॥  
 रिपि रख लखि कह तेरहुति राजू । इहाँ उचिन नहिं असन अनाजू ॥  
 कहा भूप भल सबहि सोहाना । पाइ रजायेसु चले नहाना ॥  
 दो०—तेहि अवसर फल फूल दल मूल अनेक प्रहार ।

लइ आए बनचर विपुल भरि भरि कौवरि भार ॥२७८॥  
 कामद भे गिरि राम प्रसादा । अवलोस्त अपहरत त्रिपादा ॥  
 सर सरिता बन भूमि विभागा । जनु उमगत आनंद अनुरागा ॥  
 बेलि बिटप सन सफल सफूला । बोलत खग मृग अलि अनुरूना ॥  
 तेहिं अबर बन अधिक उच्चाहू । त्रिविध समीर सुखद सन काहू ॥  
 जइ न बरनि मनोहरताई । जनु महि करत जनक पहुनाई ॥  
 तब सन लोग नहाइ नहाई । राम जनक मुनि आयेसु पाई ॥  
 देखि देखि तरुवर अनुरागे । जहँ तहँ पुरजन उतरन लागे ॥  
 दल फल मूल कद विधि नाना । पावन सुंदर सुधा समाना ॥  
 दो०—सादर सब कहँ रामगुर पठए भरि भरि भार ।

पूजि पितर सुर अतिथि गुर लगे करन फलहार ॥२७९॥  
 येहि विधि वासर बीते चारी । रामु निरखि नर नारि सुखारी ॥  
 दुहुँ समाज असि रुचि मन माहीं । बिनु सिय राम फिरव भल नाहीं ॥  
 सीता राम सग बनवासू । कोटि अमरपुर सरिस सुपासू ॥  
 परिहरि लखन रामु बैदेही । जेहि घर भाव बाम विधि तेही ॥  
 दाहिन दइठ होइ जब सबहीं । राम समीप बसिअ बन तबहीं ॥

मंदकिनि मज्जनु तिहुँ काला । राम दरसु मुद मंगल माला ॥  
 अटनु रामगिरि वन तापस थल । असनु अभिअ सम कद मूल फल ॥  
 सुख समेत संवन दुइ साता । पल सम होहि न जनिअहि जाता ॥  
 दो०—येहि सुख जोग न लोग सब कहहि कहाँ अस भागु ।

सहज सुभाय समाज दुहुँ राम चरन अनुगगु ॥२८०॥  
 येहि विधि सफल मनोरथ करहीं । वचन सप्रेम सुनत मन हरहीं ॥  
 सीय मातु तेहि समयँ पठाई । दाहीं देखि सुअवसरु आई ॥  
 सावकास सुनि सब सिय सासू । आगुउ जनकराज रानिवासू ॥  
 कौसल्याँ सादर सनमानी । आसन दिए समय सम आनी ॥  
 सीलु सनेहु सकल दुहुँ ओरा । द्रवहि देखि सुनि कुलिस कठोरा ॥  
 पुलक सिधिल तन बारि बिलोचन । महि नख लिखन लगीं सब सोचन ॥  
 सब सिय रम प्रीति कि सी मूरति । जनु करुना बहु बेप बिसूगति ॥  
 सीय मातु कह विधि बुधि बाँझी । जो पय फेनु फोर पवि टाँझी ॥  
 दो०—सुनिअ सुधा देखिअहि गरल सब करतूनि कराल ।

जहँ तहँ वाक उलूक चक मानम सकुत मराल ॥२८१॥  
 सुनि ससोव कह देवि सुमित्रा । विधि गति बड़ि विपरीत विचित्रा ॥  
 जो सृजि पालइ हरइ बहोरी । बाल केलि सम विधि मति भोरी ॥  
 कौसल्या कह दोमु न काह । करम विवस दुखु सुखु छति लाह ॥  
 कठिन करम गति जान विधाता । जो सुभ असुभ सकल फलदाता ॥  
 ईस रजाइ सीस सबहीं कै । उत्पति थिति लय बिषहु अभी कै ॥  
 देवि मोहवस सोचिअ बादी । विधि प्रपंचु अस अवल अनादी ॥  
 भूपति जिअव मरव उर आनी । सोचिअ सखि लखि निज हितहानी ॥  
 सीयमातु कह सत्य सुवानी । सुकृती अवधिरे अवघपति रानी ॥

१—प्र० : सकल । दि० : प्र० [ (१) : मरस ] । [ व० : सरम ] । च० : प्र० ।

२—प्र० जो । दि० : प्र० । [ व० : सो ] । च० : प्र० ।

३—[ प्र० : अवध ] दि०, व०, च० : अवधि [ (३) : अवध ] ।



दो०—लगनु रागु मिय जाहूँ वन भन पगिन्धम न पोनु ।  
 गहपरि हिय कह कीमति मोहि भग क मोनु ॥२८२॥  
 ईम प्रसाद असीम सुखारी । मुन मुनबधु विनुपर गरि वगी ॥  
 रामगपम मै दीन्हि न छाऊ । सो हरि कहौ मभी मनकाऊ ॥  
 भगत सीन गुन विनय बढाई । भाव्य भगनि भोग्य मनाई ॥  
 कहत सारदहु क मति हीने । सागर भीरि छि जाहि उनीने ॥  
 जानउँ सदा भरन मुनदीपा । बाग बाग मोहि कहैउ मदीपा ॥  
 फमँ कनहु मनि पारिमि पाणें । पुग्य पगिनिघटि समय मुनपें ॥  
 अनुचित आजु कह्य अम मोस । सोरु मनेह मयानर भोग ॥  
 सुनि सुसरि सम पावनि यानी । मई मनेह बिह्यन सब रनी ॥  
 दो०—हीमलया कह धीर गरि मुनहु देवि मिथिनेमि ।

रानि राव सन अवरु पाई । अपनी भीनि कह्य समुझाई ॥  
 रसिअहि लखनु भातु गवनहि वन । जो येह मत मानइ मदीप मन ॥  
 ती भल जगनु करष मुविनारी । मोरें सोनु मरत कर भागी ॥  
 गूढ़ सनेह भरत मन माही । रहैं नीरु मोहि लागन गही ॥  
 ललि सुभाउ मुनि सरल सुगानी । सभ मई मगन कहन रस रानी ॥  
 नम प्रभू भरि धन्य धन्य धुनि । सिधिन सनेह भिद्ध जोगी मुनि ॥  
 सयु रनगसु विरकि लखि रहेऊ । तत्र धरि धीर सुमित्रा कहेऊ ॥  
 देवि दंड जुग जामिनि बीती । राममानु मुनि उठौ सनीती ॥  
 दो०—वेगि पाउ धारिअ थलहि कह सनेह सविभाष ।

हमरें तौ अच ईसर गति कै मिथिलेसु सहाय ॥२८४॥  
 लखि सनेहु सुनि वचन विनीता । जनकप्रिया गहे पायं पुनीता ॥

१—प्र० : विवध । डि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : देव ] । [ न० : देव ] । च० : प्र०  
 [ (८) : देव ] ।  
 २—[ प्र० : भूय ] । डि०, न०, च० : ईस [ (६) : भूय ] ।

देवि उचित असि विनय तुम्हारी । दसरथ धरिनि राम महतारी ॥  
 प्रभु अपने नीचहुँ आदरहीं । अग्नि घूम गिरि सिर तिन घरहीं ॥  
 सेवक राउं करम मन बानी । सदा सहाय महेसु भवानी ॥  
 रौरे अंग जोगु जग को है । दीप सहाय कि दिनकर सोहै ॥  
 राम जाइ वनु करि सुर काजू । अचल अवधपुर करिहहिं राजू ॥  
 अमर नाग नर राम बाहु बल । सुख बसिहहिं अपने अपने थल ॥  
 यह सब जागबलिक कहि राखा । देवे न होइ मुधा मुनि भाखा ॥  
 दो०—अस कहि पग परि पेम अति सिय हित विनय सुनाइ ।

सिय समेत सियमातु तब चली सुआयेसु पाइ ॥२८५॥  
 प्रिय परिजनहिं मिली बैदेही । जो जेहिं जोगु भांति तेहिं तेही ॥  
 तापस वेप जानकी देखी । भा सनु विकल विषाद बिसेपी ॥  
 जनक रामगुर आयेसु पाई । चले थलहिं सिय देखी आई ॥  
 लीन्ह लाइ उर जनक जानकी । पाहुनि पावन पेम प्रान की ॥  
 उर उमगेउ अंबुधि अनुरागू । भएउ भूप भनु मनहुँ पयागू ॥  
 सिय सनेह बढु वाढ़त जोहा । तापर राम पेम सिधु सोहा ॥  
 चिरजीवी मुनि ज्ञानु विकल जनु । बूढ़त लहेउ बाल अवलंबनु ॥  
 मोह भगन मति नहिं विदेह की । महिमा सिय रघुवर सनेह की ॥  
 दो०—सिय पितु मातु सनेह बस विकल न सकी सँभारि ।

धरनिमुना धीरजु धरेउ समउ सुधरमु विचारि ॥२८६॥  
 तापस वेप जनक सिय देखी । भएउ पेम परितोषु बिसेपी ॥  
 पुत्रि पवित्र किए कुल दोऊ । सुजस धवल जगु कह सनु कोऊ ॥  
 निमि सुगसरि कीरति सरि तोरी । गवनु कीन्ह विधि अंड करोरी ॥  
 गंग अरवि थल तीनि बड़ेरे । येहि क्रियें साधु समाज घनेरे ॥  
 पितु कह सत्य सनेह सुवानो । सीय सकुच महुँ मनहुँ समानी ॥

पुनि पितु मातु लोन्टि उर लाई । मित्र आगिनि हित कीन्हि मुसई ॥  
 फटति न मीय रनुनि मन माही । इहाँ चपन रजने मन माही ॥  
 लजि रातु रानि जनावउ गऊ । दरयै माहव सीनु मुनऊ ॥  
 दो०—भारथर मिनि भेंटि मिय जिह्वा कीन्हि सनसनि ।

कही मनष मिर भन गनि रानि मुसनि मयनि ॥ २८७ ॥  
 मुनि भूषाल भन वषट्कार । मोन मुनष मुष नमि सार ॥  
 भूंदे राजन नदन पुनढे तन । मुक्तु सगरन लोने मुदिन मन ॥  
 सावधान सुनु मुनिम सुनोचनि । भरन कथा भरथ विनोचनि ॥  
 धरम राजनय धामिबार ॥ इहाँ जवामनि मोर प्रचार ॥  
 सो मति मोरि भक्त महिमा ही । कहइ फाड़ धनि दुधनि न छाही ॥  
 विधि गनपति अदिपनि सिर सारद । कवि कोविद वृष बुद्धि विचारद ॥  
 भारत चरित कीरनि कातूनी । धरम सीन गुन विमल निमूनी ॥  
 समुंफत सुनन सुखद सन कह । सुचि मु सगि रुचि निरर सुधा हैं ॥

दो०—निरवधि गुन निरूपम पुरुष भारत भक्त सम जानि ।  
 कहिंअ सुमेरु कि सेर सम कवि बुल गनि सकुचानि ॥ २८८ ॥  
 अगम सर्वहि बरनन बर बानी । जिन जनहीन गीन गनु धरनी ॥  
 भरत अमित महिमा सुनु रानी । जानहि राम न सकहि बलानी ॥  
 बरनि सनेग भरन अनुभाऊ । तिअ विप्रकीरुचि लसि कह राऊ ॥  
 वहुहि लखनु भरतु बन जाही । सन कर भक्त सबकें मन माही ॥  
 देवि परतु भरत रघुवर की । प्रीति प्रीति जइ नहि तरकी ॥  
 भरतु अवधि सनेह ममता की । जयवि राम सीर समता की ॥  
 परमारथ स्वारथ सुख सारे । भरत न सनेहे मनहुं निहारे ॥  
 साधन सिद्धि राम पग नेह । मोहि लखि परत भरत मन येह ॥

१—[ प्र० : मोर ] । दि०, १० : मोरि । [ च० : मोर ] ।

२—प्र० : सीव । दि० : प्र० [ (२) : सीव ] । वृ० : प्र० । [ च० : सीव ] ।

दो०-भोरेहुं भरत न पेलिहहि मनसहुं राम रजाइ ।

करिअ न सोचु सनेह बस कहेउ भूप बिलखाइ ॥२८६॥  
राम भरत गुन गनत सप्रीतो । निसि दंपतिहि पलक सम वोती ॥  
राज समाज प्रात जुग जागे । न्हाइ न्हाइ सुर पूजन लागे ॥  
गे नहाइ गुरु पहिं रघुराई । वदि चरन बोले रुख पाई ॥  
नाथ भरतु पुरजन महतारी । सोरु बिकल बनवास दुखारी ॥  
सहित समाज राउ भिधिजेम । बहुत दिवस भए सहत कलेसू ॥  
उचिन होइ सोइ कीजिअ नाथा । हित सब हीं कर रौरैं हाथा ॥  
अस कहि अति सकुचे रघुराऊ । मुनि पुलके लखि सीलु सुभाऊ ॥  
तुम्ह बिन राम सकल सुख साजा । नरक सरिस दुहुँ राज समाजा ॥

दो०-प्रान प्रान के जीव के जिव सुख के सुख राम ।

तुम्ह तजि तात सुहात गृह जिन्हहि तिन्हहि विधि वाम ॥२८७॥  
सो सुख करम धरमु जरि जाऊ । जहँ न राम पद परज भाऊ ॥  
जोगु कुजोगु ज्ञानु अज्ञानु । जहँ नहि राम प्रेम परधानू ॥  
तुम्ह बिनु दुखी सुखी तुम्हते हीं । तुम्ह जानहु जिअँ जो जेहि केहीं ॥  
राउर आयेसु सिर सबही केँ । बिदित कृपालहि गति सग नीकेँ ॥  
आपु आस्रमहि धारिअ पाऊ । भएउ सनेह सिथिल मुनिराऊ ॥  
करि प्रनामु तब रामु सिधाए । रिपि धरि धीर जनक पहिं आए ॥  
राम बचन गुर नृपहि सुनाए । सील सनेह सुभायँ सुहाए ॥  
महाराज अव कीजिअ सोई । सब कर धरमसहित हित होई ॥

दो०-ज्ञाननिधान सुजान सुचि धरमधीर नरपाल ।

तुम्ह बिनु असमंजस समन को संमरथ येहि काज ॥२८८॥  
मुनि मुनिबचन जनक अनुरागे । लखि गति ज्ञानु बिरागु बिरागे ॥  
सिथिल सनेह गुनत मन माहीं । आए इहाँ कीन्हि भलि नाहीं ॥  
रामहि राय कहेउ बन जाना । कीन्ह आपु प्रिय प्रेमु प्रवाना ॥

हम अरु बन तें बगहि पठाई । प्रमुदित फिरत त्रिवेक बड़ाई ॥  
तापस मुनि महिसुर मुनि देखी । मए प्रेमस मिमल त्रिवेकी ॥  
समउ समुझि धरि धोरजु राजा । चने भरत पहि सहित समाजा ॥  
भरत आइ आगें भइ लीन्है । अवसर सरिस सुग्रामन दीन्है ॥  
तात भरत कह तेरहुतिराऊ । तुम्हहि त्रिदिन रघुवीर सुभाऊ ॥  
दो०—राम सत्यव्रत धरमारत सम कर सीतु सनेहु ।

सकट सटत सगंचरम कहिय जो आयेसु देहु ॥२६२॥  
मुनि तन पुलकि नयन भरि वारी । बोले भरतु धीर धरि भारी ॥  
प्रमु प्रिय पूज्य पिता सम आपू । कुलपुरु सम हित माय न वापू ॥  
कौसिकदि मुनि सचिप समाजू । जान अयुनिधि आपुनु आजू ॥  
सिधु सेवकु आयेसु अनुगामी । जानि मोहि सिल देइअ स्वामी ॥  
येहि समाज थल बूझन रागर । मौन मलिन मै बोलन बाउर ॥  
छोटे बदन कहौ बडि वाता । छमर तात लखि बाम बिधाता ॥  
आगम निगम प्रसिद्ध पुराना । सेवाधरमु कठिन जगु जाना ॥  
स्वामि धरम स्वारथहि विरोधु । बेरु अथु प्रेमहि न प्रबोधु ॥  
दो०—राखि राम रुख धरमु ब्रतु पराधीन मोहि जानि

सब कें समत सर्व हित करिअ प्रेसु पहिचानि ॥२६३॥  
भरत बचन मुनि देखि सुभाऊ । सहित समाज सराहत राऊ ॥  
सुगम अगम मृदु मजु कठोरे । अरथु अमित अति आखर धोरे ॥  
ज्यों मुखु मुरुर मुरुर निज पानी । गहि न जाइ अस अदभुत बानी ॥  
मृदु भरतु मुनि साधु समाजू । मे जहँ विबुध कुमुद द्विजराजू ॥  
मुनि सुधि सोच बिकल सब लोगा । मन्हें मीनगन नर जल जोगा ॥  
देव प्रथम कुलपुरु गति देखी । निरसि बिदेह सनेह बिसेपी ॥  
राम भगतिमय भरतु निहारे । सुर स्वारथी हहरि हिय हारे ॥

सब कोउ राम प्रेममय पेखा । भए अलेख सोचवस लेखा ॥  
दो०—रागु सनेहँ सँकोच बस कह ससोच सुरराजु ।

रचहु प्रपंचहि पंच मिलि नाहिँ त भएउ अकाजु ॥२६४॥  
सुरन्ह सुमिरि सारदा सराही । देवि देव सरनागत पाही ॥  
फेरि भरत मति करि निज माया । पालु बिबुध कुल करि दल द्याया ॥  
विवुध बिनय सुनि देवि सयानी । बोली सुर स्वारथ जड़ जानी ॥  
मोसन कहहु भरत मति फेरु । लोचन सहस न सूझ सुमेरु ॥  
बिधि हरि हर माया बड़ि मारी । सोउ न भरत मति सकइ निहारी ॥  
सो मति मोहि कहत करु मारी । चंदिनि कर कि चंडकर<sup>१</sup> चोरी ॥  
भरत हृदयँ सिय राम निवासू । तहँ कितिमिरि जहँ तरनि प्रकासू ॥  
अस कहि सारद गइ बिधि लोका । बिबुध बिकल निसि मानहुँ कोका ॥  
दो०—सुर स्वारथी मलीन मन कीन्ह कुमत्र कुठाडु ।

रचि प्रपंच माया प्रबल भय भ्रम अरति उचाडु ॥२६५॥  
करि कुचालि सोचत सुरराजु । भरत हाथ सब काजु अकाजु ॥  
गए जनकु रघुनाथ समीपा । सनमाने सब रविकुल दीपा<sup>२</sup> ॥  
समय समाज धरम अविरोधा । बोले तब रघुवंस पुरोधा ॥  
जनक भरत संगडु सुनाई । भरत कहाउति कही सुहाई ॥  
तात राम जस आयेसु देह । सो सबु करइ मोर मत येह ॥  
सुनि रघुनाथु जोरि जुग पानी । बोले सत्य सरल मृदु बानी ॥  
विद्यमान आपुनु मिथिलेसु । मोर कहव सब भौंति भदेसू ॥  
राउर राय रजायेसु होई । राउरि सपथ सही सिर सोई ॥  
दो०—राम सपथ सुनि मुनि जनकु सकुचे सभा समेत ।

सकल बिलोक्त भरत मुख बनइ न उत्तरु देत ॥२६६॥

१—प्र०: चंडकर । [दि०, तु०: चंड कर] । च०: प्र० ।

२—[ प्र० तथा (६) में यह अर्द्धाली नहीं है ] ।

समा सउचव भरत निहारी । राम बउ भरि भीरु भारी ॥  
 तुममउ देखि सनेहु सैगारा । बद्ध विधि निधि पटन निगारा ॥  
 सेक फनइलोचन मति छोनो । हरी विगन गुनगन जग जोनो ॥  
 भरत बिषेक बराह बिमाला । जनायाम उषी तेहि काना ॥  
 करि प्रनामु सन कहँ कर जोरे । राम राउ गुर साबु निहारे ॥  
 छमत्र आजु अति अनुचिन मोत । कहउँ बदन मृदु बगन फटोस ॥  
 हियँ सुमरी सारदा सुहाई । मानस तँ मुमपकज आई ॥  
 विमल बिषेक परम नय साली । भरत भारती गजु मरानी ॥  
 दो०—निखि बिषेक विनोचनन्हि सिधिन सनेहँ समाजु ॥  
 करि प्रनामु बोले भरतु मुभिरि सोय रघुगजु ॥२६७॥  
 प्रभु पितु मातु सुहृद गुर ह्यामी । पूज्य परम हिन अनरजामी ॥  
 सरल सुसाहिबु सील निवानू । प्रनत पालु सर्वज्ञ सुजानू ॥  
 समरघु सत्तागत हितकारी । गुन गाहकु अवगुन अप हारी ॥  
 स्वामि गोसाईंहि सरिस गोसाई । मोहि समान मई साई दोहाई ॥  
 प्रभु पितु बचन मोहबस पेली । आपउँ इहाँ समाजु सँकेली ॥  
 जग भल पोच ऊँच अरु नीचू । अमिश्र अमरपद माहुरु मीचू ॥  
 राम रजाइ मेटि मन माहीं । देखा सुना कतहु कोउ नाहीं ॥  
 सो मई सन बिधि कीन्हि दिठाई । प्रभु मानी सनेह सेनकाई ॥  
 दो०—कृपा भलाई आपनी नाथ कीन्ह भल मोर ।  
 दूपन मे भूपन सरिस सुजसु चारु चहुँ ओर ॥२६८॥  
 राउरि रीति सुगानि बड़ाई । जगत बिदित निगमागम गाई ॥  
 कूर कुटिल खल कुमति कलकरी । नीच निसील निरीस निसरी ॥  
 तेउ सुनि सरन सामुहँ आए । सकून प्रनामु किँ अपनाए ॥  
 देखि दोष कबहुँ न उर आने । सुनि गुन साधु समाज बधाने ॥  
 को साहिब सेवकहि नेवाजी । आपु समाज सज सन साजी ॥

निज करतूति न समुझिअ सपने । सेवक समुच्च सोच उर अपने ॥  
 सो गोपई नहिं दूमर कोपी । मुजा उठाइ कहौ पन रोपी ॥  
 पमु नाचन सुक पाठ प्रीना । गुन गति नट पाठक आधीना ॥  
 दो०—यों सुचारि सनमानि जन किए साधु सिरमौर ।

को कृपाल बिनु पानिहै बिरिदाबलि बरजोर ॥२६२॥

सोरु सनेह कि बाल सुभाएँ । आपउँ लाइ रजायेसु धाएँ ॥  
 तबहुँ कृपान हेरि निज ओरा । सबहिं भौंति भल मानेउ मोरा ॥  
 देखेउँ पाय सुमंगल मूला । जानेउँ स्वामि सहज अनुकूला ॥  
 बड़े समाज विलोकेउँ भागू । बड़ी चूक साहिब अनुरागू ॥  
 कृपा अनुग्रह अंगु अघाई । कीन्ह कृपानिधि सब अधिकारी ॥  
 राखा मोर दुलार गोसाईं । अपने सील सुभायँ भलाई ॥  
 नाथ निरट मई कीन्हि ठिठाई । स्वामि समाज सकोचु बिहाई ॥  
 अविनय विनय जगारुचि बानी । धमिहिं देउ अति आरत जानी ॥

दो०—सुदृढ़ मुजान सुआहियहि बहुत कहव बड़ि खोरि ।

आयेसु देखिअ देव अब सबइ सुधारी मोरि ॥३००॥

प्रसु पद पदुम पराग दोहाई । सत्य सुकृत सुन सीव सुहाई ॥  
 सो करि कहौ हिये अपने को । रुचि जागत सोवत सपने की ॥  
 सहज सनेह स्वामि सेवकाई । स्वाराय धन फल चारि मिहाई ॥  
 अज्ञा सम न सुनाहिअ सेवा । सो प्रसादु जनु पावइ देवा ॥  
 अस कहि प्रेम विवस मए भारी । पुलक सरीर विनोचन चारी ॥  
 प्रसु पद कमल गहे अकुलाई । समउ सनेहु न सो कहि जई ॥  
 कृपाभिधु सनमानि सुबानी । बैठाए समीप गहि पानी ॥  
 भरत विनय सुनि देखि सुभाऊ । सिथिल सनेह समा रघुराऊ ॥

छं०—रघुराउ सिथिल सनेह साधु समाजु मुनि मिथिलाधनी ।

मन महुँ सराहत भरत मायप भगति की महिमा धनी ॥



भरतहि प्रसंसत बिबुध बरषन सुमन मानस मलिन से ।

तुलसी बिकल सब लोग सुनि सकुचे निसागम नलिन से ॥

सो०—देखि दुखारी दीन दुहुँ समाज नर नारि सब ।

मधवा महा मलीन मुए मारि मंगल चहत ॥३०१॥

कपट कुचालि सीव सुरराजू । पर अकाज प्रिय आपन काजू ॥

काक समान पाकरिषु रीती । छली मलिन कतहुँ न प्रनीती ॥

प्रथम कुमत करि कपटु सँकेला । सो उचाटु सब केँ सिर मेला ॥

सुर माया सब लोग बिमोहे । राम प्रेम अतिसय न बिबोहे ॥

भय उचाट बस मन धिर नाही । छन बन रुचि छन सदन सोहाहीं ॥

दुषिध मनोगति प्रजा दुखारी । सरित सिंधु संगम जनु बारी ॥

दुचित कतहुँ परितोषु न लहहीं । एरु एरु सन मरमु न कहहीं ॥

लखि हियँ हँसि कह कृपानिधानू । सरिस स्थान मधवा निजु१ जानू ॥

दो०—भरतु जनकु मुनिजन२ सचिव साधु सचेत त्रिहाइ ।

लागि देवमाया सबहिं जथाजोगु जनु पाइ ॥३०२॥

कृपासिंधु लखि लोग दुखारे । निज सनेह सुरपति दल भारे ॥

सभा राउ गुर महिसुर मंत्री । भरत भगति सब कै मति जंत्री ॥

रामहिं चितगत चित्र लिखे से । सकुचत बोलन बचन सिखे से ॥

भरत प्रीति नति विनय बड़ाई । सुनन सुखद बरनन कठिनाई ॥

जानु वितोकि भगति लवलेसू । प्रेम मगन मुनिगन मिथिलेसू ॥

महिमा तामु कहइ किमि तुलसी । भगति सुमाय सुमति हिय तुलसी ॥

आपु छोटि महिमा बड़ि जानी । कवि कुल कानि मानि सकुचानी ॥

दहि न सफति गुन रचि अधिकाई । मति गति वाल बचन की नाई ॥

दो०—भरत विमल तामु विमल बिधु सुमति चक्रोरकुमारि ।

उदित विमल जन हृदय नम एकटक रही निहारि ॥३०३॥

१—प्र० : रूपरा निजु जानू । दि० : प्र० । [ नृ०, च० : मधवान जुरानू ] ।

२—प्र० : मुनिजन । दि०, नृ० : प्र० । च० : मुनिजन ।

भरत सुभाउ न सुगम निगमहैं । लघु मति चापलता मनि छमह ॥  
 कहत सुनन सति भाउ भगत को । सीय राम पद होइ न रत को ॥  
 सुमिरत भगतहि प्रेसु राम को । जेहि न सुलभु तहि सरिस वाम को ॥  
 दम्बि दयाल दसा सगहीं की । राम सुजान जानि जन जी की ॥  
 धरम धुरीन धीर नय नागर । सत्य सनह सील सुखमागर ॥  
 देसु कालु लखि समौ समानू । नीति प्रीति पालक रघुराजू ॥  
 नेने बचन कानि सरगसु से । हित परिनाम सुनत ससिरसु मे ॥  
 तात भरत तुम्ह धरम धुरीना । लोक वेद त्रिद प्रेम प्रवीना ॥  
 दो०—करम बचन गनम निमल तुम्ह समान तुम्ह तात ।

गुर समान लघु बधु गुन कुसमय किमि कहि जात ॥३०४॥  
 जानहु तात तरनि कुल रीनी । सत्यसय पितु कीरति प्रीती ॥  
 समौ समानु लान गुरजन की । उदासीन हित अन्हित मन की ॥  
 तुम्हहि निदित सगही कर करमू । आपन मोर परम हित धरमू ॥  
 मोहि सग भँति भगेश तुम्हारा । तदपि छहउँ अमर अनुसारा ॥  
 तात तात निनु वान हमारी । केवन गुर कुल कृपौ सँभारी ॥  
 नतर प्रजा पुरजन परिगार । हमहि सहित सनु होन खुआर ॥  
 जौ निनु अवसर अँधन दिनेम् । जग केहि कहहु न होइ फलेसु ॥  
 तस उत्पातु तात निधि कीन्हा । मुनि मिथिलेस राखि सयु लीन्हा ॥  
 दो०—रान राज सग लान पनि धरम धरनि धन धाम ।

गुर प्रभाउ पालिहि सबहि भल होइहि परिनाम ॥३०५॥  
 सहित समान तुम्हार हमारा । घर बन गुग्गु प्रमाद रखगारा ॥  
 मातु पिता गुर स्वामि निदेम् । सकन धरम धरनीधरु सेम् ॥  
 सो तुम्ह करहु करावहु मह । तात तरनि कुल पालक होइ ॥  
 साधक एक सङ्गल सिधि देनी । कीरति सुगति भूतिमय वेनी ॥

१—प्र० करम् । द्वि० प्र० [तु० मरम्] । तु०, च० प्र० ।

२—प्र० पुरजन । द्वि० प्र० । [तु० परिजन] । च० प्र० [( ) परिजन] ।

३—प्र० सग । द्वि० प्र० [(२)(४)(१) साधन] । [तु० साधन] । च० प्र० ।

सो त्रिचारि सहि सकटु मारी । करहु प्रजा परिवार सुखारी ॥  
 बाटी निपति सबहि मोहि भाई । तुम्हहि अग्रधि भरि बडि कठिनाई ॥  
 जानि तुम्हहि मृदु कहउँ कठोरा । उसमयँ तात न अनुचिन मोरा ॥  
 होहि कुठायँ सुखु सहाये । ओढ़िअहि हाथ असनिहुँ केषाये ॥  
 दो०—सेवक कर पद नयन से मुख सो साहिबु होइ ।

तुलसी प्रीति कि रीति सुनि सुखि सराहहि सोइ ॥३०६॥  
 सभा सफल सुनि रघुवर बानी । प्रेम पयोधि अभिग जनु सानी ॥  
 सिथिल समाजु सनेह समाधी । देखि दसा चुप सारद साधी ॥  
 भरतहि भएउ परम सनोपू । सनमुख स्नामि त्रिमुख दुखु दोपू ॥  
 सुख प्रसन्न मन मिटा बिपादू । भा जनु गूँगेहि गिरा प्रमादू ॥  
 कीन्ह सप्रेम प्रनमु बहोरी । बोले पानि पररुह जोरी ॥  
 नाथ भएउ सुख साथ गए को । लहेउँ लाहु जग जनमु भए को ॥  
 अन कृपाल जस आयेसु होई । करउँ भीस धरि सादर सोई ॥  
 सो अबलन देउर मोहि देई । अवधि पारु पावउँ जेहि सेई ॥  
 दो०—देव देव अभिपेक हित गुर अनुसासनु पाइ ।

आनेउँ सन तीरथ सलिलु तहि कहँ काह रजाइ ॥३०७॥  
 एकु मनोरथु बड मन माटी । समय सकोच जान कहि नाही ॥  
 कहहु तान प्रभु आयेसु पाई । बोले बानि सनेह सुहाई ॥  
 चिनहुट मुनिथल तीरथ बन । खग मृग सर सरि निर्भर गिरिगन ॥  
 प्रभु पद अमित अवनि बिसेपी । आयेसु होइ त आवउँ देखी ॥  
 अवनि अत्रि आयेसु सिर घरह । तात विगत भय कानन चरह ॥  
 मुनि प्रसादु बन मगलदाता । पावन परम सुहावन आता ॥  
 रिपिनायकु जहँ आयेसु देहीं । राखेहु तीरथजलु थन तेहीं ॥  
 सुनि प्रभु बचन भरत सुख पावा । मुनि पद कमल मुदित सिरु नाग ॥

दो०—भरत राम संवादु सुनि सकल सुमंगल मूल ।

सुर स्वारथी सराहि कुल वरपन सुरतरु फूल ॥३०८॥

धन्य भरत जय राम गोसाईं । कहत देव हरपन वरिआई ॥

मुनि मिथिलेस सभों सब काहू । भरत वचन मुनि भएउ उदाहू ॥

भरत राम गुन ग्राम सनेहू । पुलकि प्रसंगत राउ विदेहू ॥

सेरक स्वामि सुभाउ सुझावन । नेमु पेमु अति पावन पावन ॥

मति अनुसार सगहन लागे । सचिव सभासद सब अनुरागे ॥

सुनि सुनि राम भरत संवादू । दुहैं समाज हियैं हगु विपादू ॥

राममातु दुख सुख सम जानी । कहि गुन राम प्रयोधी रानी ॥

एक कहहिं रघुवीर बड़ाई । एक सराहत भरत भलाई ॥

दो०—अत्रि कहेउ तव भरत सन सैल समीप सुकूप ।

राखिअ तीरथ तोय तहैं पावन अमिअ अनूप ॥३०९॥

भरत अत्रि अनुसासन पाई । जल भाजन सब दिए चलाई ॥

सानुज आपु अत्रि मुनि साधू । सहित गए जहैं कूप अगाधू ॥

पावन पाथ पुन्य थल राखा । प्रमुदित प्रेम अत्रि अस भापा ॥

तात अनादि सिद्ध थल एहू । लोपेउ काल विदित नहिं केहू ॥

तब सेवकन्ह सरस थलु देखा । कीन्ह सुजल हित कूप बिसेपा ॥

विधि बस भएउ विस्व उपकारू । सुगम अगम अति धरम विचारू ॥

भरतकूप अत्र कहिहहिं लोगा । अति पावन तीरथ जल जोगा ॥

प्रेम सनेम निमज्जत प्राणी । होइहिहिं बिमल करम मन बानी ॥

दो०—कहत कूप महिमा सकल गए जहाँ रघुराउ ।

अत्रि सुनाएउ रघुबरहि तीरथ पुन्य प्रभाउ ॥३१०॥

कहत धरम इतिहास सप्रीती । भएउ भोरु निसि सो सुख चीती ॥

नित्य निवाहि भरतु दोउ भाई । राम अत्रि गुर आयेसु पाई ॥

सहित समाज साज सब सादैं । चले रामवन अटन पयादैं ॥

कोमल चरन चलन बिनु पनहीं । मइ मृदु भूमि सकुचि मन मनहीं ॥

कुस कटक कौकरी कुराई । कदुः कठोर कुबुत्तु दुराई ॥  
 महि मंजुल मृदु मारग कीन्हे । बहत समीर त्रिविध मुख लीन्हे ॥  
 सुमन वरपि सुर घन करि छाहीं । मृग मूलि फलि वृन मृदुना हीं ॥  
 मृग बिलोकि खग बोलि सुवानी । सेगहि सकल राम प्रिय जानी ॥  
 दो०—सुनभ सिद्धि सत्र प्राकृतहु राम कटत जमुहान ।

राम प्रान प्रिय भरत कहु येह न होइ बड़ि वात ॥३११॥  
 येहि विधि भरतु फित बन माहीं । नेम प्रेसु लजि मुनि सकुचाहीं ॥  
 पुन्य जलासय भूमि निभागा । खग मृग तरु वृन गिरि बन बागा ॥  
 चारु पिचित्र पवित्र विसेयी । बृम्हन भरतु दिव्य सब देखी ॥  
 मुनि मन मुदित रहत रिषिराज । हेतु नाम गुन पुन्य प्रभाज ॥  
 कनहुं निनज्जन कतहुं प्रनामा । कतहुं बिनोक्त मन अभिरामा ॥  
 कतहुं बेठि मुनि आयेसु पाई । सुमिरत सीय सहित दोउ भाई ॥  
 देखि सुभाउ सनेहु सुसेवा । देखि असीस मुदित बनदेवा ॥  
 फिरहि गएँ दिनु पहर अढ़ाई । प्रभु पद कमल त्रिलोकहि आई ॥  
 दो०—देखे थल तीरथ सकल भरत पाँच दिन मांझ ।

कहत सुनन हरि हर सुजसु गएउ दिवसु भइ साभ ॥३१२॥  
 भोर न्हाइ सबु जुरा समाजू । भरत भूमिसुर तेरहुतिराजू ॥  
 भल दिनु आजु जानि मन माहीं । राम कृपाल कहत सकुचाहीं ॥  
 गुर नृप भरत सभा अवलोकी । सकुचि राम फिरि अवनि बिलोकी ॥  
 सीलु सराहि सभा सब सोची । कहुं न राम सम स्वामि सँकोची ॥  
 भरत सुजान राम रुख देखी । उठि सप्रेम धरि धोर निसेयी ॥  
 करि दडवत कहत कर जोरी । राखी नाथ सकल सचि मोरी ॥  
 मोहि लागि सबहि सहेउ सनापू । बहुत मोति दुसु पावा आपू ॥

१—प्र० • कड । [ दि०, वृ० कडक ] । च० • प्र० ।

२—प्र० • सबहि सहेउ । दि० • प्र० । [ वृ० • सहेउ सनाप ] । च० • प्र० [(८) सहेउ  
 सबहि ] ।

अब गोसाईं मोहि देउ रजाई । सेवउँ अवध अवधि भरि जाई ॥  
दो०—जेहि उपाय पुनि पाय जनु देखइ दीनदयाल ।

सो सिस देख्य अवधि लागि कोसलपाल कृपाल ॥२१३॥  
पुरजन परिजन प्रजा गोसाईं । सब मुचि<sup>१</sup> सरस सनेह सगाईं ॥  
राउर बदि भल भव दुख दाह । प्रभु विनु वादि परमपद लाह ॥  
स्वामि सुजानु जानि सब ही की । रुचि लालसा रहनि जन जी की ॥  
प्रनतपाल पालिहि सब काह । देउ दुहैं दिसि ओर निबाह ॥  
अस मोहि सब विधि मूरि भरोसो । किएँ बिचार न सोच खरो सो ॥  
आगति मोर नाथ कर छोहैं । दुहैं मिलि कीन्ह दीठ हठि मोहैं ॥  
येह बड़ दोष दूरि करि स्वामी । तजि सकोचु सिखइय अनुगामी ॥  
भरत विनय सुनि सर्वाहि प्रसंसी । खीर नीर विवरन गति हंसी ॥  
दो०—दीनबंधु पुनि बंधु के बचन दीन छलहीन ।

देस काल अवसर सरिस बोले रामु प्रवीन ॥२१४॥  
तात तुम्हारि मोरि परिजन की । चिता गुरहि नृपहि घर बन की ॥  
माथे पर गुर मुनि मिथिलेसु । हमहि तुम्हहि सपनेहुँ न कलेसु ॥  
मोर तुम्हार परम पुरुषाथु । स्वार्थु सुजसु धर्म परमार्थु ॥  
पितु आयेसु पालिअ दुहैं भाई । लोक वेद भल भूप मलाई ॥  
गुर पितु मातु स्वामि सिख पालें । चलेहुँ कुमग पग परहि न खालें ॥  
अस विचारि सब सोच बिहाई । पालहु अवध अवधि भर जाई ॥  
देसु कोसु पुरजन परिवारु । गुर पद रजहि लोग छरुमारु ॥  
तुम्ह मुनि मातु सचिव सिख मानी । पालेहु पुहुमि प्रजा रजधानी ॥  
दो०—मुखिआ मुखु सों चाहिअइ खान पान कहूँ एक ।

पालइ पोषइ सकल अंग तुलसी सहित चित्रेक ॥२१५॥  
राजधरम सरबसु एतनोई । जिमि मन मोह मनोरथ गोई ॥

बधु प्रबोधु कीन्ह बहु भौंती । विनु आधार मन तोपु न सौंती ॥  
 भरत सीलु गुर सचिव समाजू । सकुच सनेह विरस रघुराजू ॥  
 प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्ही । सादर भरत सीम धरि लीन्ही ॥  
 चरनपीठ धरुनानिधान के । जनु जुग जामिक<sup>१</sup> प्रजा प्रान के ॥  
 सपुट भरत सनेह रतन के । आखर जुग जनु जीव जतन के ॥  
 बुल कषाट कर कुसल करम के । विमल नयन सेवा सुधरम के ॥  
 भरत मुदित अवलंब लहे तैं । अस सुख जस सिय राम रहे तैं ॥  
 दो०—मौंगेउ बिदा प्रनामु करि राम लिप<sup>२</sup> उर लाइ ।

लोग उचाटे अमरपति कुटिल कुअवसर पाइ ॥३१६॥  
 सो कुचालि सब कहँ भै नीकी । अवधि आस सम जीयनि जी की ॥  
 नतरु लखन सिय राम बियोगा<sup>२</sup> । हहरि भरत सबु लोग कुरोगा<sup>२</sup> ॥  
 राम कृपा अवरेब सुधारी । बिबुध धारि भइ गुनद गोहारी ॥  
 भेंटत भुज भरि भाइ भरत सो । रामप्रेम रसु कहि न परत सो ॥  
 तन मन बचन उमग अनुरागा । धीर धुरंधर धीरजु त्यागा ॥  
 बारिज लोचन मोचत बारी । देखि दसा सुर सभा दुखारी ॥  
 मुनिगन गुर धरधीर जनक से । ज्ञान अनल मन कसे कनक से ॥  
 जे बिरचि निरलेप उपाए । पदुमपत्र जिमि जग जल जाए ॥  
 दो०—तेउ विलोकि रघुवर भरत प्रीति अनूप अपार ।

भए मगन मन तन बचन सहित विराग विचार ॥३१७॥  
 जहाँ जनक गुर गति मति भोरी । प्राकृत प्रीति कहत बडि खोरी ॥  
 बरनत रघुवर भरत बियोगू । मुनि कठोर कवि जानिहि लोगू ॥  
 सो सकौचु रसु अकथ सुबानी । समउ सनेहु सुमिरि सकुचानी ॥  
 भेंटि भरतु रघुवर समुझाए । पुनि रिपुदवनु हरपि दियँ लाए ॥  
 सेवक सचिव भरत स्व पाई । निज निज काज लगे सब जाई ॥

१—प्र० : जानिक । दि०, वृ, च० : प्र० [ (६) - जानिक ] ।

२—प्र० : ब्रमदा बियोगी, कुरोगी । दि : बियोगा, कुरोगा । वृ०, च० : दि० ।

मुनि दारुन दुख दुहैं समाजा । लगे चलन के साजन साजा ॥  
 प्रभु पद पदुम बंदि दोउ भाई । चले सीम धरि राम रजाई ॥  
 मुनि तापस बन्देव निहोरी । सब सनमानि बहोरि बहोरी ॥  
 दो०—लखनहि भेंटि प्रनामु करि सिर धरि सिय पद धूरि ।

चले सप्रेम असीस मुनि सकल सुमंगल मूरि ॥३१८॥  
 सानुजं राम नृपहि सिर नाई । कीन्ह बहुत विधि बिनय बड़ाई ॥  
 देव दयावम बड़ दुख पाएउ । सहित सनाज काननहि आएउ ॥  
 पुग पगु धारिय देइ असीसा । कीन्ह धीर धरि गगनु महीसा ॥  
 मुनि महिदेव साधु सनमाने । बिदा किए हरि हर सम जाने ॥  
 सासु समीप गए दोउ भाई । फिरे बंदि पग आसिप पाई ॥  
 कौमिक बामदेव जागाली । पुरजन परिजन सचिय सुचाली ॥  
 बयाजोगु करि बिनय प्रनामा । बिदा किए सब सानुज रामा ॥  
 नारि पुरुष लघु मध्य बड़ेरे । सब सनमानि कृशनिधि फेरे ॥  
 दो०—भगतमातु पद बंदि प्रभु सुचि सनेह मिलि भेंटि ।

बिदा कीन्ह सजि पालकी सकुच सोच सब भेंटि ॥३१९॥  
 परिजन मातु पिनिहि मिलि सीता । फिरी प्रानप्रिय प्रेम पुनीता ॥  
 करि प्रनामु भेंटो सब साम् । प्रीति कहत कत्रि हिय न हुलास ॥  
 मुनि मित्र अभिमत आसिप पाई । रही सीय दुहैं प्रीति समाई ॥  
 रघुपति पदु पालकी भेगाई । करि प्रनोबु सब मातु चढ़ाई ॥  
 बार बार हिलि मिलि दुहैं भाई । सम सनेह जननी पहुँचाई ॥  
 साजि बाजि गज वाहन नाना । भूप भरत दल कीन्ह पयाना ॥  
 हृदय रामु सिय लखनु समेता । चले जाहि सब लोग अचेना ॥  
 बमह बाजि गज पसु हियँ हारें । चले जाहि परबम मन मारें ॥

दो०—गुर गुरतिय पद बदि प्रभु सीता लखन समेन ।  
 फिरे हरष विसमय सहित आए परननिकेत ॥३२०॥  
 बिदा कीन्ह सनमानि निषाद । चलेउ हृदयँ बड़ बिरह बिषाद ॥



कोल किरान मिलत बनचारी । फेरे फिरे जोहारि जोहारी ॥  
 प्रभु सिय लखन बैठि बट छाहीं । प्रिय परिजन वियोग विनखाहीं ॥  
 भरत सनेहु सुभाउ सुवानी । प्रिया अनुज रान कहत बखानी ॥  
 प्रीति प्रीति बचन मन करनी । श्रीमुख राम प्रेमवस बग्नी ॥  
 तेहि अवसर खग मृग जल मीना । चित्रकूट चर अचर मलीना ॥  
 विबुध बिलोकि दसा रघुवर की । बरपि सुमन कहि गति घर घर की ॥  
 प्रभु प्रनामु करि दीन्ह भरोसो । चले मुदित मन ढरु न खरो सो ॥  
 दो०—सानुज सीय समेत प्रभु राजत परनकुटीर ।

भगति ज्ञानु बैराम्य जनु सोहत धरै सरीर ॥३२१॥  
 मुनि महिसुर गुर भरत भुआलू । राम बिरहँ सबु साजु बिहालू ॥  
 प्रभु गुन ग्राम गुनत मम माहीं । सब चुप चाप चले मग जाहीं ॥  
 जमुना उतरि पारु सब भएऊ । सो बासरु बिनु भोजन गएऊ ॥  
 उतरि देवसरि दूसर चासू । रामसखा सब कीन्ह सुपासू ॥  
 सई 'उतरि गोमती नहाए । चौथें दिवस अवधपुर आए ॥  
 जनकु रहे पुर बासर चारी । राज काज सब साज सँभारी ॥  
 सौपि सचिव गुर भरतहि राजू । तेरहुति चले साजि सबु साजू ॥  
 नगर नारि नर गुर सिख मानी । बसे सुखेन राम रजधानी ॥  
 दो०—राम दरस लागि लोग सन करत नेम उपवास ।

तजि तजि भूपन भोग सुख जिअत अवधिकी आस ॥३२२॥  
 सचिव सुमेवक भरत प्रबोधे । निज निज काज पाइ सिख ओधे ॥  
 पुनि सिख दीन्ह बोलि लघु माई । सौधी सकल मातु सेवनाई ॥  
 भूसुर बोलि भरत कर जोरे । करि प्रनाम बर विनय निहोरे ॥  
 ऊँच नीच कारजु मल पोचू । आयेसु देव न करव मँकोचू ॥  
 परिजन पुग्जन प्रजा बोलाए । समाधानु करि सुनस बसाए ॥  
 सानुज गे गुर गेह बहोरी । करि दंडवत कहत फर जोरी ॥  
 आयेसु होइ त रहउँ सनेमा । बोले मुनि तन पुलकि सपेमा ॥

समुझव कहव करव तुम्ह जोई । घरम सारु जग होइहि सोई ॥  
दो०—सुनि सिख पाइ असीस बड़ि गनक बोलि दिनु साधि ।

सिंघासन प्रभु पादुका बैठारे निरुपाधि ॥३२३॥

राममातु गुर पद सिरु नाई । प्रभुपद पीठ रजायेसु पाई ॥  
नंदिगॉव करि परनकुटीरा । श्रीन्ह निवासु धरम धुर धीरा ॥  
जटा जूट सिर मुनिपट धारी । माह खनि कुस साँथरी सँथारी ॥  
असन बसन बासन ब्रज नेमा । करत कठिन रिपिधरम सपेमा ॥  
भूषन बसन भोग सुख मूरी । मन तन वचन तजे तिनु तूरी ॥  
अवधराजु सुरराजु सिंहाई । दसरथ धनु सुनि धनद लजाई ॥  
तेहि पुर बसत भरत बिनु रागा । चंचरीक जिमि चंपक बागा ॥  
रमाबिलासु राम अनुगामी । तजत बमन जिमि जन बड़भागी ॥  
दो०—राम पेम भाजन भरतु बड़े न येहि करतूति ।

चातक हंस सराहिअत टेक बिबेक विभूति ॥३२४॥

देह दिनहु दिन दूरि होई । घटइ तेजु बलु मुख छबि सोई ॥  
नित नव राम पेम पनु पीना । बढ़त धरम दलु मनु न मलीना ॥  
जिमि जलु निघटत सरद प्रकासे । बिलसत बेतस बनज बिकासे ॥  
सम दम संजम नियम उपासा । नखत भरत हियँबिमल अकासा ॥  
ध्रुव बिस्वासु अवधि राका सी । स्वामि सुरति सुरबीबि बिकासी ॥  
राम पेम धियु अचल अदोषा । सहित समाज सोह नित चोखा ॥  
भरत रहनि समुझनि करतूती । भगति बिरति गुन विमल विभूती ॥  
वरनन सकल सुकवि सकुचाहीं । सेस गनेस गिरा गमु नाहीं ॥  
दो०—नित पूजत प्रभु पाँवरी प्रीति न हृदयँ समाति ।

माँगि माँगि आयेसु करत राज काज चहुँ भौंति ॥३२५॥

१—प्र० : घटन न । [ दि० : (३) (५) घटत, (४) (५) घट न ] । [ तु० : घट न ] । च० : घटत ।

२—प्र० तथा (६) में यह अर्द्धांश नहीं है ।

३—प्र० : चहुँ । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : बहु ] । [ तु० : बहु ] । च० : प्र० ।

पुलक गात हियँ सिय रघुवीरू । जीहँ नाम जपु लोचन नीरू ॥  
 लखनु रामु मिय कानन बसहीं । भरतु भवन बसि तप तनु कसहीं ॥  
 दोउ दिसि समुझि कहत सबु लोगू । सब त्रिधि भरतु सराहन जोगू ॥  
 मुनि व्रत नेम साधु सकुचाहीं । देखि दसा मुनिगज लजाहीं ॥  
 परम पुनीत भरत आचरनू । मधुर मजु मुद मगल करनू ॥  
 हरन कठिन कलि कलुष कलेसू । महा मोह निसि दलन दिनेसू ॥  
 पाप पुंज कुंजर मृगराजू । समन सकल सताप समाजू ॥  
 जन रजन भजन भगभारू । राम सनेह सुधाकर सारू ॥

छ०—सिय राम पेम पिउष पूरन होत जनमु न भरत को ।

मुनि मन अगम जम नियम सम दम विषम व्रत आचरत को ॥

दुख दाह दारिद दम दूषन सुजसमिस अपहरत को ।

कलिकाल तुलसी से सठन्हि हठि राम सनमुख करत को ॥

सो०—भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं ।

सीय राम पद पेमु अवसि होइ भरस बिरति ॥ ३२६ ॥

इति श्री मद्रामचरित मानसे सकल कलि कलुष विपरंसे

द्वितीय : सोपान : समाप्तः ॥

श्रीगणेशाय नमः  
श्री ज्ञानकीवस्तुभो विजयने

# श्री राम चरित मानस

तृ ती य सो पा न

अरण्य कांड

श्लो०—मूलं धर्मतरोर्विवेकजलधेः पूर्णेन्दुमानन्दं  
वैराग्धां तु जभास्करं ह्यघघनध्वांतापहं तापहं ।  
मोहांमोघरपूगं पाटनदिघौ स्वःसंभव शंकरं  
वन्दे ब्रह्मकुलं कलंकशमनं श्रीरामभूषप्रियं ॥  
सांद्रानंदपयोदसौभगतनुं पीतांबरं सुंदरं  
पाणौ बाणशरासनं कटिलसत्तूणीभार वरं ।  
राजीवायतलोचनं धृतजटाजूटेन सशोभितं  
सीतालक्ष्मणसंयुतं पथिगतं रामाभिरामं मजे ॥

सो०—उमा राम गुन गूढ़ पंडित मुनि पावहिं बिरति ।  
पावहिं मोह विमूढ़ जे हरि विमुख न धर्मरति ॥

पुर नर<sup>२</sup> भरत प्रीति मैं गाई । मति अनुरूप अनूप सुहाई ॥  
अब प्रभु चरित सुनहु अति पावन । करत जे बन सुर नर मुनि भावन ॥  
एक बार चुनि कुसुम सुहाए । निज कर मूपन राम घनाए ॥  
सीतहि पहिराए प्रभु सादर । बैठे फटिक सिला पर सुंदर ॥  
सुरपति सुत धरि बाहस बेखा । सठ चाहत रघुपति बल देखा ॥  
जिमि पिपीलिका सागर थाहा । महा मंदमति पावन चाहा ॥

१—प्र० : पून । दि० : प्र० । [तृ० : पुत्र] । च० : प्र ।

२—प्र० : पुर नर । दि० : प्र० । [तृ० : पुर जन] । च० : प्र [(८) : पूरन] ।

सीता चरन चोंच हति भागा । मूढ़ मंद मति कारन कागा ॥  
 चला रघिर रघुनायक जाना । सीक घनुष सायक सधाना ॥  
 दो०--अतिकृपाल रघुनायक सदा दीन पर नेह ।

ता सनु चाह कीन्ह छतु मूर्ख अवगुन गेह ॥ १ ॥  
 प्रेरित मत्र ब्रह्मसर धावा । चला भाजि' चाहसभय पावा ॥  
 धरि निज रूप गएउ पितु पाहीं । राम त्रिमुख राखा तेहि नाहीं ॥  
 भा निगत उपजी मन त्रासा । जथा चक्र भय रिपि दुर्यासा ॥  
 ब्रह्मधाम सिवपुर सब लोफ । फिरा समित व्याकुल भय सोका ॥  
 काहूँ बेठन कहा न ओही । राखि को सके राम कर द्रोही ॥  
 मातु मृत्यु पितु सपन समाना । सुधा होइ निष सुनु हरिजाना ॥  
 मित्र करे सत रिपु कै करनी । ता कहु बिबुधनदी बैनरनी ॥  
 सत्र जगु ताहि<sup>१</sup> अनलहुँ<sup>२</sup> तैं ताना । जो रघुवीर बिमुख सनु आता ॥  
 नारद देखा बिकल जयन्ता । लागि दया कोमल चित सता ॥  
 पठगा तुरत राम पहिं ताही । कहेसि पुकारि प्रनतहित पाहीं ॥  
 आनुर समय गहेसि पद जाई । त्राहि त्राहि दयाल रघुराई ॥  
 अतुलित बन अतुलित प्रभुताई । मै मतिमद जानि नहि पाई ॥  
 निजकृत कर्म<sup>३</sup> जनित फल पाएउ<sup>४</sup> । अब प्रभु पाहि सरन तकिआएउ<sup>५</sup> ॥  
 सुनि कृपाल अति आरत बानी । एक नयन करि तजा भगानी ॥  
 सो०--कीन्ह मोहबस द्रोह जयपि तेहि कर बध उचित ।

प्रभु छाड़ेउ करि छोह को कृपाल रघुवीर सम ॥ २ ॥  
 रघुपति चित्रकूट बसि नाना । चरित किए सुति<sup>५</sup> सुधा समाना ॥

१—प्र० : मति । दि० : प्र० । [ न० : मति ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : ताहि । दि० : प्र० [ (१) : तेहि ] । न०, च० : प्र० ।

३—प्र० : भननहु । दि० : प्र० । [ न० : भनन ] । च० : प्र० ।

४—प्र०, दि०, न०, च० : बर्म [ (६) : धर्म ] ।

५—प्र० : सुति । दि०, न० : प्र० । [ च० : (६) अनि, (८) मर ] ।

बहुरि राम अत मन अनुमाना । होइहि भीर सबहि मोहि जाना ॥  
 सकल मुनिन्ह सन विदा फाई । सीता सहित चले द्वी भाई ॥  
 अत्रि के आश्रम जब प्रभु गएऊ । सुनत महा मुनि हरपिन भएऊ ॥  
 पुलकिन गात अत्रि उठि घाए । देखि रात्र आतुर चलि आए ॥  
 करत दहवत मुनि उर लाए । प्रेम बारि द्वी जन अन्हवाए ॥  
 देखि राम छवि नयन जुझाने । सादर निज आश्रम तव आने ॥  
 करि पूजा कहि बचन सुहाए । दिष्ट मूल फल प्रभु मन भाए ॥

सो०—प्रभु आसन आसीन भरि लोचन सोमा निरखि ।

मुनिवर परमप्रवीन जोरि पानि अस्तुति करत ॥ ३ ॥

छ०—नमामि भक्तवत्सलं । कृणालु शीत कोमलं ।

भजामि ते पदांबुज । अकामिनां स्वधामदं ॥

निकाम श्याम सुंदरं । भवांबुनाथ मंदरं ।

प्रकुल कंच लोचन । मदादि दोष मोचनं ॥

प्रलंब बाहु विक्रमं । प्रभो उपमेय वैभवं ।

निपंग चाप सायकं । धरं त्रिलोक नायकं ॥

दिनेश वंश मंढनं । महेश चाप खंडनं ।

मुनींद्र संत रंजनं । सुरारि वृंद मंजनं ॥

मनीज वैरि वंदितं । अजादि देव सेवितं ।

विशुद्ध बोध विग्रहं । समस्ते दूषणाग्रहं ॥

नमामि इंदिरापतिं । सुखाकरं सतां गतिं ।

भजे सशक्ति सानुजं । शचीपति प्रियानुजं ॥

स्वदग्निमूल ये नराः १ । भजंति हीनमत्सराः १ ।

पतति नो भवार्णवे । वितर्क बोधि संकुले ॥

विविक्तव्योसिनस्सदा । भजंति मुक्तये मुदा ।

१—प्र० : कमण्ड : नराः २, मत्सरा : [ (२) नरा मत्सरा ] । दि० : प्र० [ (३) (१) अ, नरा, मत्सरा ] । [ वृ० : नरा, मत्सरा ] । च० : प्र० [ (६) : नरा, मत्सरा ] ।

निरस्य इन्द्रियादिकं । प्रशानि ते गनि स्वरु ॥  
 त्वमेकमद्भुतं प्रभु । निरीहर्मरर रिभुं ।  
 जगद्गुरु च शरयत । तुरीयमेव केवल ॥  
 भजामि भावतलम । तुयोगिना मुदुलभ ।  
 स्वभक्त करप पादप । सनं मुमंज्यगन्तर ॥  
 अनूप रूप भूपति । ननोऽहमुत्तिन्नपनि ।  
 प्रसीद मे नमामि ते । पदाब्जभक्ति देहि मे ॥  
 पठति ये स्तव इव । नरादरेण ते पद ।  
 प्रजति नात्र सरय । त्वदीयभक्तिसपुता ? ॥  
 दो०—चिनती करि मुनि नाइ सिरु कर कर जोरि तहोरि ।  
 चरन सगेरुह नाव जनि करु तजै मति मोरि ॥ ४ ॥  
 अनसुइया क पद गहि सीता । मिली बहोरि मुमील बिनीना ॥  
 रिपिपतिनी मन मुल अघिकाई । आसिप देइर निकट नैठाई ॥  
 दिव्य वचन भूपन पहिराए । जे निन नूतन अमल सुहाए ॥  
 कह रिपियधू सरसई मृदु बानी । नारिधर्म कह्यु व्याज बखानी ॥  
 मातु पिता आता हितकारी । मित प्रद सख सुनु राजकुमारी ॥  
 अमित दानि भर्ता बेदेही । अधम सो नारि जो सेव न तेही ॥  
 धीरजु धर्म मित्र अरु नारी । आपद काल परस्तिगहि च री ॥  
 बृद्ध रोगयस जइ धनहीना । अध बधिर क्रोधी अति दीना ॥  
 ऐसेहु पति रर किए अपमाना । नारि पाव जमपुर दुख नाना ॥  
 एकै धर्म एक व्रत नेमा । काय वचन मन पनि पद मेमा ॥

१—प्र० संयुता [(१) संयुता ] । दि० प्र० [(५) 'सुभा, (१ अ) सुवर्ण ] । व०  
 सुवर्ण ] । [च० (६) संयुता, (८) संयुत ] ।

२—प्र० देह । दि० प्र० । [व० दाहि ] । ३—प्र० ।

४—प्र० सरस । दि० प्र० [(३) (५ अ) सरल] । [व० सरल] । च० प्र० [(८) मर] ।

५—प्र० । दि०, व०, च० परस्तिगहि [(६) परस्तिहि] ।

जग पतिप्रता चारि विधि अहहीं । वेद पुगन सन सब कहहीं ॥  
 उत्तम के अस बम मन माहीं । मपनेहु आन पुस्य जग नाहीं ॥  
 मध्यम पर पति देगैं कैसैं । आना पिता पुत्र निज जैमैं ॥  
 धर्म विचारि समुझि कुन रहई । सो१ निक्किष्ट त्रियम्बुति अस कहई ॥  
 विनु अवसर भय ते रह जोई । जानेहु अधम नारि जग सोई ॥  
 पतिबंधक परपति गनि करई । रौरव नरक कलर सत परई ॥  
 छन सुख लागि जनम सत कोटी । दुख न समुझतेहि सम को खोटी ॥  
 विनु सन नारि परम गति लहई । पतिवन धर्म छाड़ि छल गहई ॥  
 पति प्रतिकूल जन्मरे जहैं जाई । विधवा होइ पाइ तरनाई ॥  
 सो०—सहज अपावनि नारि पति सेवत सुभ गति लहइ ।

जमु गावन सुति चागि अजहुं तुलसिका हरिहि प्रिय१ ॥

सुनु सीता तव नाम सुमिरि नारि पतिवन करहिं ।

तोहि प्रान प्रिय राम कहेउँ कथा संसार हित ॥ ५ ॥

मुनि जानकी परम सुख पावा । सादर तासु चरन सिरु नावा ॥  
 तन मुनि सन कह कृपानिधाना । आयेसु होइ४ जाउँ वन आना ॥  
 संतत मोपर कृपा करेहू । सेवक जानि तजेहु जनि नेहू ॥  
 धर्म धुरधर प्रभु कै बनी । सुनि सप्रेम बोले मुनि ज्ञानी ॥  
 जामु कृपा अज सिव सनकादी । चहत सकल परमारथवादी ॥  
 ते तुम्ह राम अकाम पियारे । दीनबंधु मृदु बचन उचारे ॥  
 अव जानी मै श्रीचतुराई । भजो तुम्हहिं सब देव बिहाई ॥  
 जेहि समान अतिसय नहिं कोई । ता कर सील कम न अस होई ॥  
 केहि विधि कहौ जाहु अग्र५ स्वामी । कहहु नाथ तुम्ह अवरजामी ॥

१—प्र० : सो । द्वि० : प्र० । [तृ० : ते] । च० : प्र० ।

२—[प्र० : - नि] । द्वि०, तृ०, च० : जन्म ।

३—प्र० : हरिहि प्रिय । [द्वि० : हरिप्रिया] । तृ०, च० : प्र० [ (८) : इतिप्रिया ] ।

४—प्र० : होइ । द्वि० : प्र० । [तृ० : होउ] । च० : प्र० ।

५—प्र० : १५ । [द्वि०, तृ० : वन] । च० : प्र० ।



अस कहि प्रभु बिलोकि मुनि धीरा । लोचन जल बह पुलक सरीरा ॥

द्यो०—तन पुलक निर्भर प्रेम पूरन नयन मुख पंकज दिए ।

मन ज्ञान गुन गोतीत प्रभु में दीख जप तप का किए ॥

जप जोग धर्म समूह ते नर भगति अनुपम पावई ।

रघुवीर चरित पुनीत निसि दिनु दास तुलसी गावई ॥

द्यो०—कलिमल समन दमन दुख राम मुजस मुख मूल ।

सादर सुनहि जे तिन्ह पर राम रहहि अनुकूल ॥

सो०—कठिन काल मल कोस धर्म न ज्ञान न जोग जप ।

परिहरि सकल भरोस रामहि मजहि ते चनुर नर ॥ ६ ॥

मुनि पद कमल नाइ करि सीसा । चले बनहि सुर नर मुनि ईसा ॥

आगे राम अनुज<sup>१</sup> पुनि पाछे । मुनिवर बेप बने अति काछे २॥

उभय बीच श्री सोहइ<sup>३</sup> कैसी । ब्रह्म जीव बिच माया जैसी ॥

सरिता बन गिरि अवषट घाटा । पति पहिचानि देहि बर<sup>४</sup> घाटा ॥

जहँ जहँ जाहि देव रघुराया । करहि मेघ तहँ तहँ नभ छाया ॥

मिला असुर त्रिराघ मग जाता । आवत ही रघुवीर निपाता ॥

सुरतहि रुचिर रूप तेहि पावा । देखि दुखी निज धाम पठावा ॥

पुनि आए अहँ मुनि सरभंगा । सुदर अनुज जानकी संग ॥

द्यो०—देखि राम मुख पंकज मुनिवर लोचन भृंग ।

सादर पान करत अति धन्य जनम सरभंग ॥ ७ ॥

कह मुनि सुनु रघुवीर कृपाला । संहर मानस राज मराला ॥

जात रहेउ<sup>५</sup> विरंचि के धामा । सुनेउ<sup>५</sup> अवन बन अइहहि रामा ॥

चितवस पंथ रहेउ<sup>५</sup> दिनु राती । अब प्रभु देखि जुड़ानी छाती ॥

१—प्र० : अनुज । दि० : प्र० । [तु० : लखन] । च० : प्र० ।

२—प्र० : काछे । दि० : प्र० । [५] : आछे । [तु० : आछे] । च० : प्र० ।

३—प्र० : सोहइ । दि० : प्र० । [५] : सोहति । [तु० : सोहति] । च० : प्र० ।

४—प्र० : बर । दि० : प्र० । [तु० : सब] । च० : प्र० ।

नाथ सकल साधन मैं होना । कीन्ही कृपा जानि जन दीना ॥  
 सो कलु देव न मोहि निहोरा । निज पन राखेहु जन मन चोरा ॥  
 तब लगि रहहु दीन हित लागी । जब लगि मिलौ तुम्हहि तनु त्यागी ॥  
 जोगु जज जप तप जन कीन्हा । प्रभु कहूँ देह भगति बर लीन्हा ॥  
 येहि विधि सर रचि मुनि सरभंगा । बैठे हृदयँ छाड़ि सब संगी ॥  
 दो०—सीता अनुज समेत प्रभु नील जलद तनु त्याम ।

मम हिय बसहु निरनर सगुन रूप श्रीराम ॥ ८ ॥  
 अस कहि जोग अग्नि तनु जारा । राम कृपा धैकुंठ सियारा ॥  
 ताते मुनि हरिलीन न भयऊ । प्रथमहिं भेद भगति बर लयऊ ॥  
 रिपि निकाय मुनिवर गति देखी । सुखी भए निज हृदयँ विसेयी ॥  
 अस्तुति कहिं सकल मुनि वृंदा । जयति प्रननहित करुनाकदा ॥  
 पुनि रघुनाथ चले बन आगें । मुनिवर वृद बिपुन संग लागे ॥  
 अस्थि समूह देखि रघुराया । पूँछा मुनिन्ह लागि अति दाया ॥  
 जानत हूँ पूँछिअ फस स्वामी । सबदरसी१ तुम्ह२ अंतरजामी ॥  
 निसिचर निकर सकल मुनि खाए । मुनि रघुवीर नयन जल छाए ॥  
 दो०—निसिचर हीन करौं महि भुज उठाइ पन कीन्ह ।

सकल मुनिन्ह के आस्रमहि३ जाइ जाइ सुख दीन्ह ॥ ९ ॥  
 मुनि अगस्ति४ कर सिष्य सुजाना । नाम सुनीछन रति भगवाना ॥  
 मन क्रम बचन राम पद सेवक । सपनेहुँ आन भरोस न देवक ॥  
 प्रभु आगवनु सवन मुनि पावा । करत मनोरथ आतुर धावा ॥  
 है५ विधि दोनबंशु रघुराया । मो से सठ पर करिहिं दाया ॥  
 सहित अनुज मोहि राम गोसाईं । मिलिहहिं निज सेवक की नाईं ॥

१—प्र० : सबदरसी । द्वि० : प्र० [ (५) : समदरसी ] । तृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : तुम्ह । द्वि० : प्र० [ (५अ) : सब ] । तृ० : उर ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : आस्रमहि । [ द्वि० : आस्रमहि ] । [ तृ० : आस्रम ] । च० : प्र० ।

४—(प्र० : अगस्त्य) । द्वि०, तृ०, च० : अगस्ति [ (८) : अगस्त्य ] ।

५—प्र० : है । द्वि० : प्र० [ (३)(५) : है ] । [ तृ० : है ] । च० : प्र० [ (८) : है ] ।

मोरें जिय भगोस दृढ़ नाहीं । भगति विरनि न ज्ञान मन माहीं ॥  
 नहि सनसंग जोग जप जागा । नहि दृढ़ चमन कमल अनुरागा ॥  
 एक बानि कमलानिधान की । सो प्रिय जाके गनि न आन की ॥  
 होइहि सुफल आजु मम लोचन । देखि बदन पकज भय मोचन ॥  
 निर्भर प्रेम मगन मुनि ज्ञानी । कहि न जाइ सो दमा भशानी ॥  
 दिसि अरु त्रिदिसि पथ नहि सूझा । को मै चनेउँ कहाँ नहि बूझा ॥  
 कबहुँक फिरि पाछें पुनि जाई । कबहुँक नृत्य करइ गुन गाई ॥  
 अचिरल प्रेम भगनि मुनि पई । प्रभु देखहि तरु ओट लुफाई ॥  
 अतिसय प्रीति देखि रघुबीरा । प्रगटे हृदयँ हरन भगभीरा ॥  
 मुनि मग मौझ अचल होइ वैसा । पुनक सरीर पनसफन जैवा ॥  
 तब रघुनाथ निकट चलि आए । देखि दसा निज जन मन भाए ॥  
 मुनिहि राम बहु भौंति जगावा । जागै न ध्यान जनिन सुख पावा ॥  
 भूप रूप तब राम दुरावा । हृदयँ चतुर्भुज रूप देखावा ॥  
 मुनि अकुलाह बठा तब कैसैं । बिरल हीनमनि करिवर जैमैं ॥  
 आगे देखि रामु तनु स्थापा । संता अनुग्रह सहित सुख धापा ॥  
 परेउ लकुट इव चरनन्हि लागी । प्रेम मगन मुनिर बड़भागी ॥  
 भुज बिसाल गहि लिए ठठाई । परम प्रीति राखे उर लाई ॥  
 मुनिहि मिलन अस सोह कृपाला । कनक तरुहि अनु भेंट तमाला ॥  
 राम बदन विलोक मुनि ठाढ़ा । मानहुँ चित्र मौझ लिखि काढ़ा ॥  
 दो०—तब मुनि हृदयँ धीर धरि गहि पद बारहिं बार ।

निज आसम प्रभु आनि करि पूजा विविध प्रकार ॥ १० ॥  
 कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी । अस्तुति करौ कबनि विधि तोरी ॥  
 महिमा अमित मोरि मति थोरी । रवि सन्मुख खद्योत अँजोरी ॥  
 श्याम तामरस दाम शरीरं । जटा मुकुट परिधन मुनि चीरं ॥

१—प्र० : पुनि । [दि०, वृ० : पुनि] । च० : प्र० ।

२—[प्र० : जान] । दि०, वृ०, च० : जान [ (६) : जान ] ।

पाणि चाप शर कटि तूणीर । नौमि निरतर, श्री रघुवीरं ॥  
 मोह विविन घन दहन वृक्षानु १ । सत सरोरुह कानन भानु १ ॥  
 निशिचर ररि बरूथ मृगराज २ । त्रातु सदा नो भव खग बाज २ ॥  
 अरुण नयन राजीव सुवेश । सीता नयन चकोर निशेशं ॥  
 हर हृदि मानम बाल ३ मराल । नौमि राम उर बाहु विशाल ॥  
 सशय सर्प प्रसन उरगादः ४ । शमन सु कर्कर तर्क विपाद ४ ॥  
 मम भजन रजन सुर यूथ ५ । त्रातु सदा नो कृपा बरूथ ५ ॥  
 निर्गुण सगुण विषम सम रूप । ज्ञान गिरा गोऽनीतमनूपं ॥  
 अमलमखिलमनवद्यमपार । नौमि राम भजन महिभार ॥  
 भक्त कल्प पादप आराम ६ । तर्जन क्रोध लोभ मद काम ६ ॥  
 अतिनागर भ्रमसागर सेतु ७ । त्रातु सदा दिनकर कुल केतु ७ ॥  
 अतुलित भुज प्रताप बल धाम ८ । कलि मलविपुल विभजन नाम ८ ॥  
 धर्मवर्म नर्मद गुणग्राम ९ । सतत श तनोतु मम राम ९ ॥  
 जदपि विरज व्यापक अविनासी । सबके हृदय निरतर बासी ॥  
 तदपि अनुज श्री सहित स्वरासी । बसतु १० मनसि मम काननचारी ॥  
 जे जानहिं ते जानहुं स्वामी । सगुन अगुन उर अतरजाभी ॥  
 जो कोसलपति राजिव नयना । करहु सो राम हृदय मन अयना ॥  
 अस अभिमान जाइ जनि भारें । मैं सेवक रघुपति पति मोरें ॥

१—प्र० . वृक्षानु , भानु । [दि०, वृ० वृक्षानु , भानु] । च० प्र० ।

२—प्र० मृगराज बाज । [दि०, वृ० मृगराज , बाज] । च० प्र० ।

३—प्र० बाल । दि०, वृ०, च० प्र० [ (६) राज] ।

४—प्र० उरगाद , विपाद । [दि०, वृ० उरगाद , विपाद] । च० प्र० ।

५—प्र० यूथ , वरूथ । [दि०, वृ० यूथ , वरूथ] । च० प्र० ।

६—प्र० कल्प आराम , काम । [दि०, वृ० आराम , काम] , च० प्र० [ (६) आराम , काम] ।

७—प्र० सेतु केतु । दि०, वृ० सेतु , केतु । च० प्र० ।

८—प्र० धाम , नाम । [दि०, वृ० धाम नाम] । च० प्र० [ (१) धाम , नाम] ।

९—प्र० ग्राम , राम । [दि०, वृ० ग्राम] राम] । च० प्र० ।

१०—प्र० . बसतु । दि० प्र० [ (४) बसतु] । [वृ० बसतु] । च० प्र० ।

मुनि मुनि बचन राम मन भाए । बहुरि हरिणि मुनिवा उर लार ॥  
 परम पसत जानु मुनि मोही । जो या मामहु देउं सो तोही ॥  
 मुनि कह मै चर कहहु न जांचा । समुक्ति न परे मूठ<sup>१</sup> का सोचा ॥  
 बुद्धि नोकर लागी रघुआई । सो मोहि देहु दाम मुनराई ॥  
 अनिरल भगति विरति विजाना । होहु मदन गुन ज्ञान निधाना ॥  
 प्रभु जो दीन्ह सो घरु मै पाया । अब सो देहु मोरि जं भाया ॥  
 दो०—अनुज जानरी सहित प्रभु काप बन धर राम ।

मम हिय गगन इहु इव चमहु सदा येह काम ॥ ११ ॥  
 एवमस्तु कहि<sup>२</sup> स्मानियामा । हरिष चने कु मत्र रिषि पामा ॥  
 बहुत दिवस गुर दसनु पाए । भर मोहि मेहि आधनु आए ॥  
 अब प्रभु सग जाउं गुर पाही । बुद्ध कहै नाथ निहोरा नाही ॥  
 देखि कृपानिधि मुनि चतुराई । लिये सग विहँसे द्वौ भाई ॥  
 पथ कहत निज भगति अनूषा । पुनि आसम पहुँचे सुरमूषा ॥  
 तुरत सुनीधन गुर पहि गएऊ । करि दंडवन कहत अन भएऊ ॥  
 नाथ कोसलाधीस कुमार । आए मिलन जगत आधाग ॥  
 राम अनुज समेत बैदेही । निसि दिनु देव जपन दहु जेही ॥  
 मुनत अगस्ति तुरत उठि धाये<sup>३</sup> । हरिनिनोकि लोचन जन द्याये<sup>३</sup> ॥  
 मुनि पद कमल परे द्वौ भाई । रिषिअति प्रीति लिये उर लाई ॥  
 सादर कुसल पूछि मुनि ज्ञानी । आसन पर बैठारे आनी ॥  
 पुनि करि बहु प्रकार प्रभु पूजा । मोहि सम भाग्यधंत नहि दूजा ॥  
 जहँ लगि रहे अमर मुनि वृदा । हरये सब बिलोकि सुख फंदा ॥  
 दो०—मुनि समूह महँ<sup>४</sup> बैठे सनमुख सच की ओर ।

सरद इहु तन चितवत मानहुँ निकर चकोर ॥ १२ ॥

१—प्र० : मूठ । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) रुठ ] ।

२—प्र० : बहि । दि० : कहि । वृ०, च० : दि० ।

३—प्र० : जमदा : धाये, द्याये । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) धाय द्याय ] ।

४—प्र० : यह । दि०, वृ० च० : प्र० [ (६) मो ] ।

तव रघुवीर कहा मुनि पाहीं । तुम्ह सन प्रभु दुराव कछु नाहीं ॥  
 तुम्ह जानहु जेहि कारण आपउँ । ताते तात न कहि समुझाएउँ ॥  
 अथ सो मंत्र देहु प्रभु मोही । जेहि प्रकार मारौं मुनि१ द्रोही ॥  
 मुनि मुमुकाने सुनि प्रभु बानी । पूछेहु नाथ मोहि का जानी ॥  
 तुम्हरेइ भजन प्रभाव अघारी । जानौं महिमा कछुक तुम्हारी ॥  
 ऊमरि २ तरु विसाल तव माया । फल ब्रह्मांड अनेक निकाया ॥  
 जीव चराचर जंतु समाना । भीतर बसहि न जानहि आना ॥  
 ते फल भच्छक कठिन कराला । तव मय डरत सदा सोठ काला ३ ॥  
 ते तुम्ह सकल लोकपति साई । पूछेहु मोहि मनुज की नाई ॥  
 यह घर मागौं कृपानिकेता । बसहु हृदय श्री४ अनुज समेता ॥  
 अविरल भगति विरति सत्संगी । चरन सरोरुह प्रीति अभंगा ॥  
 जद्यपि ब्रह्म अखंड अनंता । अनुभवगम्य भजहि जेहि संता ॥  
 अस तव रूप बखानौं जानौं । फिरि फिरि सगुन ब्रह्मरति मानौं ॥  
 संतत दासन्ह देहु बड़ाई । ताते मोहि पूछेहु रघुराई ॥  
 है प्रभु परम मनोहर ठाकैं । पावन पञ्चवटी तेहि नाकैं ॥  
 दंडक वन पुनीत प्रभु करह । उग्र साप मुनिवर कै हरह ॥  
 वास फरहु तहैं रघुकुल राया । कीजै सकल मुनिन्ह पर दाया ॥  
 चले राम मुनि आयेसु पाई । तुरतहि पञ्चवटी निघराई ॥  
 दो०—गीधराज सैं भेंट भइ बहु विधि प्रीति बढ़ाई५ ।  
 गोदावरी निकट प्रभु रहे परमगृह ध्याइ ॥ १३ ॥  
 जब ते राम कीन्ह तहैं वासा । सुखी भये मुनि बीती आसा ॥

१—प्र० : मुनि । द्वि० : प्र० [ (१अ) मर ] । [तृ० : मर] च० : प्र० ।

२—प्र० ऊमरी । द्वि० : प्र० । [तृ० : ऊमरी] । च० : प्र० ।

३—[यह अर्थात् तृ० में नहीं है]

४—प्र० : श्री । द्वि० : प्र० [ (५ अ) सिध ] । [तृ० : सिध] । च० : प्र० ।

५—प्र० बढ़ाई । द्वि०, तृ० : प्र० । च० : बढ़ाई ।

गिरि वन नदी ताल छवि छाप । दिन दिनप्रति अति होहि मुहाप ॥  
 खग मृग वृंद अनदित रहहीं । मधुप मयुर गुँजन छवि लहहीं ॥  
 सो वनु बरनि न सक अहिराजा । जहाँ प्रगट रघुवीर बिगजा ॥  
 एक बार प्रभु सुख आसीना । लक्ष्मिन बचन करे छल हीना ॥  
 सुर नर मुनि सचराचर साई । मैं पूछौ निज प्रभु की नाई ॥  
 मोहि समुझाई कहहु सोइ देवा । सब तजि करौ चरन रज सेना ॥  
 कहहु ज्ञान विराग अरु माया । कहहु सो भगति काहु जेहि दाया ॥  
 दो०—ईश्वर जीवर भेद प्रभु सफल कहहु समुझाई ।

जा तैं होइ चरन रति सोक मोह भ्रम जाइ ॥ १४ ॥  
 थोरेह महु सब कहउँ बुझाई । सुनहु तात मति मन चित्तु लाई ॥  
 मैं अरु मोर तोर तैं माया । जेहि बस कीन्है जीव निकाया ॥  
 गो गोचर जहँ लगि मन जाई । सो सब माया जानेहु भाई ॥  
 तेहिकर भेद सुनहु तुम्ह सोऊ । बिद्या अपर<sup>२</sup> अनिद्या दोऊ ॥  
 एक दुष्ट अतिसय दुख रूपा । जा बस जीव परा भन कृपा ॥  
 एक रचै जग गुन वन जाकैं । प्रभु प्रेरित नहिं निज यल ताकैं ॥  
 ज्ञान मान जहँ एकौ नाहीं । देखि ब्रह्म समान सब माहीं ॥  
 कहिअ तात सो परम विरागी । त्रिन सम सिद्धि तीनि गुन त्यागी ॥  
 दो०—माया ईस न आपु कहुं जान । कहिअ सो जीव ।

यद्य मोच्छप्रद सर्व पर माया प्रेरक सीव ॥ १५ ॥  
 धर्म तैं बिरति जोग तैं ज्ञाना । ज्ञान मोच्छप्रद वेद धखाना ॥  
 जा तैं बेगि द्रवउँ मै भाई । सो मम भगति भगत सुखदाई ॥  
 सो सुतत्र अवलब न आना । तेहि आधीन ज्ञान विज्ञाना ॥  
 भगति तात अनुपम सुख मूला । मिलइ जो सत होइ अनुकूला ॥

१—प्र० : जीव । [दि०, तु० : जीवदि] । च० प्र० [ (६) जीवदि] ।

२—प्र० : अपर । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) अपर] ।

भगति के<sup>१</sup> साधन कहौ बखानी । सुगम पंथ मोहि पावहिं प्रानी ॥  
 प्रथमहिं विप्र चरन अतिप्रीती । निज निज कर्म<sup>२</sup> निरत मृति रीती ॥  
 येहि कर फल पुनि<sup>३</sup> विषय विरागा । तब मम धर्म<sup>४</sup> उपज अनुागा ॥  
 सवनादिक नव भगति दृढ़ाहीं । मम लोला रति अति मन माहीं ॥  
 संत चरन पंकज अतिप्रेमा । मन क्रम बचन मजन दृढ़ नेमा ॥  
 गुरु पितु मातु बंधु पति देवा । सब मोहि कहैं जानै दृढ़ सेवा ॥  
 मम गुन गावत पुलक सरीरा । गदगद गिरा नयन बह नीरा ॥  
 काम आदि मद दंभ न जाके । तात निरंतर बस मै ताके ॥

दो०—बचन करम मन मोरि गति भजनु करहिं निहकाम<sup>५</sup> ।

तिनके हृदय कमल महैं करौ सदा विश्राम ॥ १६ ॥

भगतिजोग सुनि अति सुख पावा । लक्ष्मिन प्रभु चरनहिं सिक्त नावा ॥  
 एहि विधि गए कछुक दिन बीती । कहत विराग ज्ञान गुन नीती ॥  
 सुपनवा रावन कै बहिनी । दुष्ट हृदय दारुन जसि अहिनी ॥  
 पंचवटी सो गई एक बारा । देखि विकल भई जुगन कुमारा ॥  
 आता पिता पुत्र उरगारी । पुरुष मनोहर निरखत नारी ॥  
 होइ बिरुल सक<sup>६</sup> मनहिं न रोकी । जिमि रश्मिनिद्रव रश्मिहिं बिलोकी ॥  
 रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई । बोली बचन बहुत मुसुकाई ॥  
 तुम सम पुरुष न मो सम नारी । येह<sup>७</sup> सँजोग बिधि रचा बिचारी ॥  
 मम अनुरूप पुरुष जग माहीं । देखेउँ खोजि लोक तिहैं नाहीं ॥

१—[प्र० : कि] । दि०, वृ०, च० : के ।

२—प्र० : कर्म । दि० : प्र० । [वृ० : परम] । च० : प्र० [ (६) धर्म] ।

३—प्र० : मन । दि० : पुनि । वृ०, च० : दि० ।

४—प्र० : धर्म । दि० : प्र० [ (५) अ) चरन] । [वृ० : चरन] । च० : प्र० [ (८) चरन] ।

५—[प्र० : निष्काम] । दि० : निःकाम । वृ०, च० : दि० [ (६) निष्काम] ।

६—प्र० : सक । दि० : प्र० [ (५) (५) सक] । वृ०, च० : प्र० ।

७—प्र० : येह । दि० : प्र० । [वृ० : अस] । च० : प्र० ।



ता तें अब लगि रहिउँ कुमारी १ । मनु माना कलु तुहहि निहारी ॥  
 सीतहि चिनइ कही प्रभु बाना । अहं कुमार २ मोर लघु आता ॥  
 गइ लक्ष्मिन रिपु भगिनी बानी । प्रभु विलोकि बोले मृदु बानी ॥  
 सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा । पराधीन नहिं तोर सुपासा ॥  
 प्रभु सम्रथ ३ कोसलपुर राजा । जो कलु करहि उन्हहिं सम्रथाजा ॥  
 सेवक सुख चह मान भिक्षारी । व्यसनी घन सुभगति विभिवारी ॥  
 लोभी जमु चह चार गुमानी ४ । नभ दुहि दूष चहत ये प्रानी ॥  
 पुनि फिरि रामु निकट सो आई । प्रभु लक्ष्मिन पहिं बहुरि पठाई ॥  
 लक्ष्मिन कहा तोहि सो बरई । जो तृन तोरि लाज परिहरई ॥  
 तब खिसिआनि राम पहिं गई । रूप भयंकर प्रगटत भई ॥  
 सीतहि समय देखि रघुआई । कहा अनुज सन सयन बुझाई ॥

दो०—लक्ष्मिन अति लाघव सों नाक कान बिनु कीन्हि ।

ता के कर रावन कहें मनौ ५ चुनीती दीन्हि ॥ १७ ॥

नाक कान बिनु भइ विकरारा । जनु सब सैल गेरु कै धारा ॥  
 खरदूषन पहिं गइ विलपाता ६ । धिग धिग तब पौरुष बल आता ॥  
 तेहि पंछा सब कहेसि बुझाई । जातुधान सुनि सेन बनाई ॥  
 धाए निसिचर निकर ७ बरूथा । जनु सपच्छ कज्जल गिरि जूथा ॥  
 नाना वाहन नानाकारा । नानायुध धर घोर अपारा ॥  
 सूपनखा आगे करि लीन्हि । असुभ रूप सुति नासा हीनी ॥

१—प्र० : कुमारी । दि० : प्र० । [वृ० : कुँआरी] । च० : प्र० ।

२—प्र० : कुँआर । दि० : प्र० । [५] (५ अ) कुमार] । वृ० : कुमार । च० : प्र० ।

३—प्र० : सम्रथ । दि० : प्र० । [३] (४) (५) समर्थ] । वृ० : प्र० । [च० : (६) समर्थ]

४—प्र०, दि०, वृ०, च० : गुमानी [ (६) गुनानी]

५—प्र० : दि० । मनौ । [वृ० : मनहु] । च० : प्र० [ (६) मनहु]

६—[प्र० : विलपाता] । दि० : विलपाता [ (४) विलपाता] । [वृ० विलपाता] । च० : प्र० ।

७—प्र०, दि०, वृ०, च० : निकर [ (६) बरन] ।

असगुन अमित होहिं भयकारी । गनहिं न मृत्यु विवस सव भारी ॥  
गर्जहिं तर्जहिं गगन उड़ाही । देखि कटकु मट अति हरपाही ॥  
कोउ कह जियत घरहु द्वौ<sup>१</sup> भाई । धरि मारहु त्रिय लेहु छड़ाई ॥  
धूरि पूरि नभ मंडल रहा । राम बोलाइ अनुज सन कहा ॥  
लै जानकिहि जाहु गिरि कंदर । आवा निसिचर कटकु भयंकर ॥  
रहेहु सजग मुनि प्रभु कै बानी । चले सहित श्री सर धनु पानी ॥  
देखि राम रिपु दल चलि आवा । बिहंसि कठिन कोदंड चढ़ावा ॥

छं०—कोदंड कठिन चढ़ाई सिर जटजूडु बाँधत सोह वयो ।  
मरकत सयल पर लारत<sup>२</sup> दामिनिकोटि सौ जुग भुजग उयो ॥  
कटि कसि निपंग विसाल भुज गहि चाप बिसिख मुधारि कै ।  
चितवत मनहुँ मृगराज प्रभु गजराज घट निहारि कै ॥

सो०—आइ गए वगमेल घरहु घरहु धावत<sup>३</sup> सुभट ।  
जथा विलोकि अकेल बाल रविहि घेरत दनुज ॥ १८ ॥  
प्रभु विलोकि सर सऊहि न डारी । शक्ति भई रजनीचर धारी ॥  
सचिव बोलि बोले खरदूपन । येह कोउ नृप बालक नर भूपन ॥  
नाग असुर सुर नर मुनि जेते । देखे जिते हते<sup>४</sup> हम केते ॥  
हम भरि जन्म सुनहु सब भाई । देखी नहिं असि सुन्दरताई ॥  
जद्यपि भगिनी कीन्हि कुरूप । बध लायक नहिं पुरुष अनूपा ॥  
देहु<sup>५</sup> तुरत निज नारि दुराई । जीअत भवन जाहु<sup>५</sup> द्वौ भाई ॥  
मोर कहा तुम्ह ताहि सुनावहु । तामु वचन सुनि आतुर आवहु ॥  
दूतन्ह कहा राम सन जाई । सुनत राम बोले मुमुकाई ॥

१—प्र० : द्वौ [ (२) दोउ ] । [ दि०, व० : दोउ ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : लारत । दि० : प्र० [ (४) (५अ) लसन ] । [ व० : लसन ] च० : प्र० ।

३—प्र० : धावत । दि० : प्र० । [ व० : धावत ] । च० : प्र० ।

४—प्र०, दि०, व०, च० : हते [ (६) हने ] ।

५—प्र० : क्रमशः देहु, जाहु । [ दि० : देहि, जाहु ] । व०, च० : प्र० [ (६) देहि, जाहि ] ।

हम लक्ष्मी मृगया मन करी । तुम्ह में मन मृग मोती निहरी ॥  
 रिपु मन में देखि नहिं करी । एक बार कान्हू मन नारी ॥  
 जगपति मनुष्य दनुज पुन पातक । मुनि कान्हू मन मानक कान्हू ॥  
 औ ॥ होइ बार बार निरि नरु । मर विपुल पै हनी न करु ॥  
 रन चढ़ि करिय कपट नुगई । रिपु पर ज्ञान पाम कदगई ॥  
 दूनर जाइ तुम्ह सब करेउ । मुनि मादूषन उर अनि दरेउ ॥

छं०—उर दरेउ कहेउ कि परतु भयै बिछट भट रक्तीनग ।

ता नाव सोमर सक्ति सून ज्ञान परिव परतु भग ॥

प्रभु कीन्ह धनुष टेंकोर प्रथम कटोर पोर भयावहा ॥

भय अधिर वशकुल जागृभान न ज्ञान सेहि अवगार रहा ॥

सो०—सावधान होइ भाए जानि भवन आरानि ।

लागे बाधन राम पर अमर सम बहु भौनि ॥

तिन्ह के आयुष तिन सम करि काटे रुपीर ।

तानि सरासन मनन लगि पुन पाड़े निज तीर ॥१२॥

तन चने बान कराल । फुंकरत अनुबहु बयन ॥

कांपेउ समर मीराम । चने विसिखनिभिनि निहाम ॥

अवलोकि खरतर तीर । मुरि चने निसिचर बीर ॥

भय क्रुद्ध तीनिउ भाइ । जो भागि रन तें जाइ ॥

तेहि बधन हम निज पानि । फिरे मरन मन महु ठानि ॥

आयुष अनेक प्रचार ॥ सनमुख तें करहिं प्रहार ॥

रिपु पाम कोपे जानि । प्रभु धनुष सर सथानि ॥

१—प्र० : पर [ (२) पर ] । दि०, गृ, च : प्र० [ (६) गृह ] ।

२—प्र० : भाए । दि० : प्र० । [ ल० : भावहु ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : भयावहा । दि० : प्र० । [ ल० : भयामहा ] । च० : प्र० ।

४—प्र०, दि०, ल०, च० : बहु [ (६) निज ] ।

५—[ प्र० : अपार ] । दि० : प्रवार । ल०, च० : दि० [ (६) अपार ] ।

झांडे बिपुल नाराच । लगे कटन विकट पिताच ॥  
 उर सीस भुज कर चरन । जहँ तहँ लगे महि परन ॥  
 चिकरत लागत वान । घर परत कुधर समान ॥  
 भट कटत तन सत खंड । पुनि उठन करि पाखंड ॥  
 नभ उत बड़हु भुज मुंड । बिनु मौलि धावत रुंड ॥  
 खग कंठ काक सुगाल<sup>१</sup> । कटकटहिं कठिन कराल ॥

छं०—कटकटहिं जंबुक मून प्रेत पिताच स्वर्पर<sup>२</sup> संवही ।  
 बेताल बीर कपाल ताल बजाइ जोगिनि नंवही ॥  
 रघुबीर वान प्रचंड खंडहिं मटन्ह के उर भुज सिरा ॥  
 जहँ तहँ परहिं उठि लरहिं धरु धरु धरु करहिं भयकर गिरा ॥  
 अंतावरी गहि उड़त गीघ पिचास कर गहि धावही ॥  
 संग्राम पुर बासी मनहुं बहु बाज गुडी उड़ावही ॥  
 मारे पछारे उर बिदारे बिपुल भट कहैरत परे ।  
 अवलोकि निज दल विकल भट तिसिरादि खरदूपन फिरे ॥  
 सर सक्ति तोमर परसु सूल कृपान एकहि वारही ।  
 करि कोप सीरघुबीर पर अगिनिउ निसाचर डारही ॥  
 प्रभु निमिष महूँ रिपु सर निवारि प्रचारि डारे सायका ।  
 दस दस विसिख उर माझ मारे सकल निसिचर नायका ॥  
 महि परत उठि भट भिरत मरत न करत माया अति घनी ।  
 सुर डरत चौदह सहस प्रेत बिलोकि एक अवधधनी ॥  
 सुर मुनि समय प्रभु देखि मायानाथ अति कौतुक करयो ॥  
 देखहिं परसपर राम करि संग्राम रिपुदल लरि सरयो ॥

दो०—राम राम कहि तनु तजहिं पावहिं पद निर्वाण ।  
 करि उपाइ रिपु मारे धनमहुँ कृपानिधान ॥

१—प्र० : सुगाल । [ दि० : सुकान ] । उ० : प्र० । च० : प्र० [ (ह) सुगाल ] ।

२—प्र० : स्वर्पर । [ दि०, उ० : स्वर्पर ] । च० प्र० ।

हरपिन चरपरि सुमन सुर बाजहि गगन निगान ।

अस्तुति करि करि सब चने सोमिन बिचित्र विमान ॥ २० ॥

जग रघुनाथ समर रिपु जीने । सुर नग मुनि सबके मग बीने ॥

तब लछिमन सीतहि लै आए । प्रभु पद पगत हरणि उर लार ॥

सीता चितव स्याम मृदु गाता । परम प्रेम लोचन न भ्रमना ॥

पचवटी बसि श्रीरघुनाथक । करत चरित सुर मुनि गुनदायक ॥

धुआं देखि सभदूषन केरा । जाइ सुमनना राखनु देरा ॥

बोली बचन मोष करि भारी । देस कोम कै मुरनि विमारी ॥

हरसि पान सोरसि दिनुरानी । मुषि नहि तब गिर पर आरानी ॥

राजु नीति बिनु धनु बिनु घर्मा । हरिहि ममपे बिनु सनधर्मा ॥

विद्या बिनु बिनेक उपकारे । अम फन पट्टे किण जरु पाए ॥

सग ते जनी सुमन ते राजा । मान ते ज्ञान पान ते लाजा ॥

प्रीति प्रनय बिनु मद ते गुनी । नासहि बेग नीति अमि मुनी ॥

सो०-रिपु रुज पावक पाप प्रभु अहि गनिअन छोट करि ।

अस कहि निविधि बिलाप करि लागी रोदन करन ॥

दो०-सभा भौंक परि व्याकुल बहु प्रकार कह रोइ ।

तोहि जिअत दसकधर मोरि कि असि गति होइ ॥ २१ ॥

सुनत सभासद उठे अकुलाई । समुझाई गहि बौह उठाई ॥

कह लकेस कहसि निज बाता । केइ तब नासा कान निपाता ॥

अवध नृपति दसरथ के जाए । पुरुषसिंघ बनु खेलन आए ॥

समुझि परी मोहिं उन्ह कै करनी । रहित निसाचर करिहहिं घरनी ॥

जिन्ह कर भुजबल पाइ दसानन । अभय भये बिचरत मुनि कानन ॥

देखत बालक काल समाना । परम धीर धन्वी गुन नाना ॥

अतुलित बल प्रताप द्वौ आता । खल बध रत सुर मुनि सुख दाता ॥

सोभा धाम राम अस नामा । तिन्ह के सग नारि एक स्यामा ॥

रूप रासि विधि नारि<sup>१</sup> सँवारी । रति सत कोटि तासु बलिहारी ॥  
तासु अनुज काटे सुति नासा । सुनि तन भगिनि करहि<sup>२</sup> परिहासा ॥  
खरदूपन सुनि लगे पुकारा । धन महुँ सकल कटक उन्ह मारा ॥  
खरदूपन तिसिरा कर घाता । सुनि दससीस जरे सब गाला ॥  
दो०—सूपनखहि समुझाइ करि बल बोलेसि बहु भाँति ।

गण्ड मवन अति सोचवस नीद परइ नहिं राति ॥ २२ ॥

सुर नर असुर नाग खग माहीं । मोरे अनुचर कहँ कोउ नाही ॥  
खरदूपन मोहिं सम बलवंता । तिन्हहि को मारइ विनु भगवंता ॥  
सुर रंजन भंजन महिमारा । जौं भगवंत लीन्ह अवतारा ॥  
तौ मैं जाइ बयरु हठि करऊँ । प्रभु सर प्रान तजे भव तरऊँ ॥  
होइहि भजनु न तामस देहा । मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ येहा ॥  
जौ नर रूप भूप सुत कोऊ । हरिहौं नारि जीति रन दोऊ ॥  
चला अकेल जान चढ़ि तह्यौ । बस मारीच सिंधु तट जह्यौ ॥  
इहौं राम जसि जुगुति बनाई । सुनहु उमा सो कथा सुहाई ॥  
दो०—लखिमन गए वनहिं जव लेन मूल<sup>३</sup> फल कंद ।

जनकसुना, सन बोले विहँसि कृपा सुखद्वंद ॥ २३ ॥

सुनहु प्रिया व्रत रुचिर सुसीला । मै कछु करवि ललित न लीला ॥  
तुम्ह पायक महुँ करहु निवासा । जौ लागि करौं निमाचर नासा ॥  
जबहिं राम समु कहा बखानी । प्रभु पद धरि हिय अनल समानी ॥  
निज प्रतिविम राखि तहँ सीता । तैसइ सील रूप सुबिनीता ॥  
लखिमनहँ येह मरम न जाना । जो कछु चरित रचाइ भगवाना ॥  
दसमुख गण्ड जहाँ मारीचा । नाइ माथ स्वारथरत नीचा ॥

१—प्र० : नारि । दि० : प्र० । [ व० : रत्नी ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : भगिनि करहि । दि० : प्र० । [ व० : भगिनि करी ] । च० : प्र० [ (=) : भगिनी करि ] ।

३—प्र० : मूल । दि० : प्र० । [ व० : फूल ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : रचा । दि० : वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (१) : रचेउ ] ।

नवति नीच के अति दुखदाई । जिमि अंकुस धनु उरग विलाई ॥  
 भयदायक खल के प्रिय बानी । जिमि अमाल के कुमुम भगानी ॥  
 दो०—करि पूजा मारीच तब सादर पूँछी बात ।

कवन हेतु मन व्यग्र अति अक्सर आएहु तात ॥ २४ ॥  
 दसमुस सकल कथा तेहि आगे । कही सहित अभिमान अभागै ॥  
 होहु कपटमृग तुम्ह बलकारी । जेहि बिधि हरि आनी नृपनारी ॥  
 तेहि पुनि कहा सुनहु दससीसा । ते नर रूप चराचर ईसा ॥  
 तासों तात ब्यक्त नहि कीजै । मारे मरिअ जिआए जोजै ॥  
 मुनि मख राखन गएउ कुमारा । बिनु फर सर रघुपति मोहि मारा ॥  
 सत योजन आण्डे छन माहीं । तिन्ह सन बधक किएँ भल नाहीं ॥  
 भइ समर कीट भृग के नाई । जहँ तहँ मैं देखौ दोउ भाई ॥  
 जौ नर तात तदपि अति सूर । तिन्हहि विरोधित आइहि पूरा ॥  
 दो०—जेहि ताड़का सुआहु हति खडेउ हर कोदंड ।

खर दूषन तिसिरा बधेउ मनुज कि अस बरिवड ॥ २५ ॥  
 जाहु भवन पुलकसल विचारी । सुनत जरा दीन्हिसि बहु गारी ॥  
 गुरु जिमि मूढ़ करसि मम बोधा । कहु जग मोहि समान को जोधा ॥  
 तब मारीच हृदय अनुमाना । नवहि विरोधे नहिँ कल्पाना ॥  
 सखी मनीं प्रभु सठ धनी । बैद बदि कबि मानसगुनी ॥  
 उभय भौंति देखाने निज मरना । तब तात्रेसि रघुनाथक सरना ॥  
 उतरु देत मोहि बधव अभागै । फस न मरौ रघुपति सर लागे ॥  
 अस जिअँ जानि दसानन संगी । चला राम पद प्रेमु अभगा ॥  
 मन अति हरष जनाव न तेही । आजु देखिहौ परम सनेही ॥  
 छं०—निज परम प्रीतम देखि लोचन सुफल करि सुख पाइहौ ।

श्री सहित अनुज समेत कृपानिकेत पद मन लाइहौ ॥

१—प्र० : मम । दि० : प्र० [ (५) : अनि ] । तृ० : च०, : प्र० ।

२—प्र०, दि०, तृ०, च० : मानसगुनी [ (५) : मानसगुनी ] ।

३—प्र० : देगा [ (५) : देगी ] । दि०, तृ०, च० : प्र० [ (८) : देखेसि ] ।

निर्गुन दायक क्रोध जाकर भगति अवलहि बसकरी ।

निज पानि सर संधानि सो मोहि बधिहि सुखसागर हरी ॥

दो०—मम पाछे घर घावत घरे सरासन बान ।

फिरि फिरि प्रभुहि बिलोकिहौं धन्य न मो सम आन ॥ २६ ॥

तेहि बन निकट दसानन गएऊ । तब मारीच कपटमृग भएऊ ॥

अति विचित्र कछु धरनि न जाई । कनक देह मनि रचिन बनाई ॥

सीता परम रुचिर मृग देखा । अग अंग सुमनोहर चेपा ॥

सुनहु देव रघुवीर कृपाला । येहि मृग कर अति सुंदर छाला ॥

सत्यमन प्रभु बधि करि येही । आनहु चर्म कहित बैदेही ॥

तन रघुपति जानत सब कारन । उठे हरषि सुर काजु सँवारन ॥

मृग बिलोकि कटि परिकर बाँधा । करसल चाप रुचिर सर साँधा ॥

प्रभु लखिमनहि कहा समुझाई । फिरत बिपिन निसिचर बहु भाई ॥

सीता केरि करेहु रसवारी । बुधि बिवेक बल समय विचारी ॥

प्रभुहि बिलोकि चला मृग भाजी । धाप राम सरासन साजी ॥

निगम नेति सिव ध्यान न पावा । मायामृग पाछे सो धावा ॥

कबहुं निकट पुनि दूरि पराई । कबहुं प्रगटे कबहुं छपाई ॥

प्रगटन दुरत करत छल भूरी । येहि विधि प्रभुहि गएउ लै दूरी ॥

तन तकि राम कठिन सर मारा । धरनि परेउर करि घोर पुकारा ॥

लखिमन कर प्रथमाहि लै नामा । पाछे सुमिरेसि मन महुं रामा ॥

पान तजत प्रगटेसि निज देहा । सुमिरेसि राम समेन सनेहा ॥

अंतर प्रेम तासु पहिचाना । मुनिदुर्लभ गति दोन्हि सुजाना ॥

दो०—त्रिपुल सुमन सुर बरपाहि गावहि प्रभु गुन गाथ ।

निज पद दोन्ह असुर कहैं दोलमसु रघुनाथ ॥ २७ ॥

१—प्र० : सोर । दि० : सो । नृ० , च० : दि० ।

२—प्र० : परेउ । दि० : प्र० । [ नृ० : परा ] । च० : प्र० ।



खल पछि सुरत फिरे ग्धुबीरा । सोह पाप कर कटि तूनीरा ॥  
 थारत गिरा सुनी जब सीता । कह लक्ष्मिन सन पद्म सपीता ॥  
 जाहु बेगि संकट<sup>१</sup> अति आना । लक्ष्मिन चिहँसि कहा सुनु माता ॥  
 भृशुटि घिलास सृष्टि लय होई । सपनेहुं संकट परइ कि सोई ॥  
 मरम बचन जब<sup>२</sup> सीता बोला । हरि प्रेरित लक्ष्मिन मन टोला ॥  
 मन दिसिदेव सौपि सय काह । चले जहाँ रावन समि राह ॥  
 सून बीच दसकधर देखा । आवा निकट जगो फे बेग ॥  
 जा के डर सुर असुर डेराही । निसि न नीद दिन अन्न न स्वाही ॥  
 सो दससीस रवान फी नाई<sup>३</sup> । इत उत चितइ चला मदिहाई<sup>४</sup> ॥  
 इमि युपथ पग देत खगेसा । रह न तेज तन बुधि बल<sup>५</sup> लेमा ॥  
 नाना विधि कहि कथा सुहाई<sup>६</sup> । राजनीति भय प्रीति दिसाई ॥  
 कह सीता सुनु जती गुसाई<sup>७</sup> । बोलेहु<sup>८</sup> बचन दुष्ट फी नाई ॥  
 तब रावन निजि रूप देखावा । मई समय जब नाम सुनावा ॥  
 कह सीता धरि धीगजु गाढ़ा । आइ गण्ड प्रभु रहु खल ठाढ़ा ॥  
 जिमि हरिबहुहि ह्युद्र सस चाहा । भएसि काल बस निसिचर नाहा ॥  
 सुन्नत बचन दससीस रिसाना<sup>९</sup> । मन महुं बरन बदि सुख माना ॥  
 दो०—क्रोधवन्त तब रावन लीन्हिसि रथ बैठाइ ।

चला गगन पथ आतुर भय रथ होंकि न जाइ ॥२८॥

हा जगदेक<sup>१०</sup> बीर रघुराया । केहि अपराध विसारेहु दाया ॥

१—प्र०, दि०, तु०, च० : संकट [ (१) : कट ] ।

२—प्र० ॥ जब । दि० : प्र० । [ तु० : तब ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : मदिहाई । दि० : प्र० । [ तु० : मदिहाई ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : बल । दि० : प्र० । [ तु० : लव ] । च० : प्र० ।

५—प्र० : सुहाई । दि० : प्र० । [ तु० : सुनाई ] । च० ॥ प्र० ।

६—प्र० : बोलेह । दि० : प्र० । [ तु० : बोलेह ] । च० : प्र० [ (६) : बोले ] ।

७—प्र० : रिसाना । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : लजाना ] । तु०, च० : प्र० ।

८—प्र० : जगदेक । दि० : प्र० [ (४) (५) : जगदीस ] । [ तु० : जगदेव ] । च० : प्र०

[ (८) : जग एक ] ।

आरति हरन सरन सुख दायक । हा रघुकुल सरोज दिन नायक ॥  
 हा लज्जिमन तुम्हार नहिं दोसा । सो फलु पापउँ कीन्हेउँ रोसा ॥  
 विविधि विलाप करति १ बैदेही । मूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही ॥  
 बिनति मोरि को प्रभुहि सुनावा । पुरोडास चह रासभ खावा ॥  
 सीता कै बिलाप सुनि भारी । भए चराचर जीव दुखारी ॥  
 गीधराज सुनि आरति घानी । रघुकुल तिलक नारि पहिचानी ॥  
 अधम निसाचर लीन्हे जाई । जिमि मलेखवस कपिला गाई ॥  
 सीते पुत्रि करसि जनि त्रासा । करिहौं जातुघानु कर नासा ॥  
 घावा क्रोधवंत खग कैसे । छूटै पवि पर्वत कहूँ जैसे ॥  
 रे रे दुष्ट ठाढ़ किन होई । निर्भय चलेसि न जानेहि २ मोही ॥  
 आवत देखि कृतांत समाना । फिर दसकंवर कर अनुभाना ॥  
 की मैनाक कि खगपति होई । मम बल जान सहित पति सोई ॥  
 जाना जरठ जटायू येहा । मम कर सीरथ ब्याढ़िहि देहा ॥  
 सुनत गीध क्रोधातुर घावा । कह सुन रावन मोर सिखावा ॥  
 तजि जानकिहि कुसल गृह जाहू । नाहिं त अस होइहि बहुबाहू ॥  
 राम रोष पावक अति घोरा । होइहि सलम सकल कुल तोरा ॥  
 उतरु न देत दसानन जोधा । तबहिं गीध घावा करि क्रोधा ॥  
 घरि कच बिरथ कीन्ह महि गिरा । सीतहि राखि गीध पुनि फिरा ॥  
 चोचन्ह मारि बिदारेसि देही । दंड एक भइ मुख्या तेही ॥  
 तब सक्रोध निसिचर खिसिआना । काढ़िसि परम कराल कृपाना ॥  
 काटेसि पंख परा खग घरनी । सुमिरि राम करि अदभुत करनी ॥  
 सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी । चला उताइल त्रास न थोरी ॥  
 करति बिलाप जाति नभ सीता । व्याघ विवस जनु मृगी समीता ॥

१—प्र० : करति । [ दि० : करन ] । वृ०, च० : प्र० [ (६) : करत ] ।

२—प्र० : जानेहि । दि० : प्र० [ (४) (५) जानेसि, (५अ) जानसि ] । वृ०, च० : प्र० [ (८) : जते ] ।

गिरि पर धैठे कपिन्ह निहारी । कहि हरि नामु दीन्ह पट्ट डारी ॥  
 येहि विधि सीतहि सो लै गणऊ । बन असोक महुँ रामन भरऊ ॥  
 दो०—हारि परा खल बटु विधि मय अरु प्रीनि देखाइ ।

तन असोक पादप तर राखिसि<sup>१</sup> जननु कराइ ॥

जेहि विधि कपट कुरग सँग धाइ चले श्री राम ।

सो छवि सीता राखि उर रटति रहनि हरि नम ॥ २२ ॥

रघुपति अनुजहि आवन देखी । बाहिज चिता कीन्हि बिसेयी ॥  
 जनकमुना परिहरेहु अकेली । आपहु तान बचन मम पेनी ॥  
 निसिचर निरर फिरहि बन माहीं । मम मन सीता आत्मम नाहीं<sup>२</sup> ॥  
 गहि पद कमल अनुज कर जोरी । कहेउ नाथ कहुँ मोहि न खोरी ॥  
 अनुज समेन गए प्रभु तहवाँ<sup>३</sup> । गोदागरि तट आसम जहवाँ<sup>३</sup> ॥  
 आत्म देखि जानकी हीना । मय निकल जम प्राकृत दीना ॥  
 हा गुनखानि जानकी सीता । रूप सील ब्रन नेम पुनीता ॥  
 लखिमन समुझाए बहु भाँती । पूँछत चले लता तरु पाँनी ॥  
 हे खग मृग हे मधुकर सेनी । तुम देखी सीता मृगनयनी ॥  
 खजन सुरु कपोत मृग मीना । मधुपु निकर कोकिला प्रवीना ॥  
 कुंद फली दाड़िम दामिनी । नमल सरद ससि अहि भामिनी ॥  
 बरुन पास मनोज धनु हसा । गज केहरि निज सुनन प्रसमा ॥  
 श्रीफल बनक कर्दाल हरपाहीं । नेरु न संक सकुच मन माहीं ॥  
 सुनु जानकी तोहि बिनु आजू । हरपे सकल पाइ जनु राजू ॥  
 किमि सहि जात अनख तोहि पाहीं । प्रिया बेगि प्रगटसि कम नाहीं ॥  
 येहि विधि खोजन बिलपन स्वामी । मनहुँ महा बिरही अनि कामी ॥

१—प्र० : राखिसि । [ द्वि० : राखेसि ] । [ तृ० : राखे ] । च० : प्र० [ (८) राखेसि ] ।

२—प्र० : मम सीता आत्मम महुँ नाहीं । द्वि० : मम मन सीता आत्मम नाहीं । तृ०, च० : द्वि० ।

३—प्र० : नमश तहवाँ, जहवाँ । द्वि०, तृ०, च० : प्र० [ (६) तहवाँ, जहवाँ ] ।

पूरनकामु राम सुखरासी । मनुज चरित कर अज अघिनासी ॥  
आगे परा गीधपति देखा । सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा ॥  
दो०—कर सरोज सिरु परसेउ कृपासिंधु रघुवीर ।

निरखि राम छविधाम मुख त्रिगत भई सब पीर ॥ ३० ॥  
तब कह गीध बचन धरि धीरा । सुनहु राम भजन भव भीग ॥  
नाथ दसानन येह गति कीन्ही । तेहि<sup>१</sup> खल जनमुता हरि लीन्ही ॥  
लै दन्दिन दिसि गएउ गोसाईं । विलपति अति कुररी की नाई ॥  
दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राणा । चलन चहत अब कृपानिधाना ॥  
राम कहा तनु राखहु ताता । मुख मुमुकाई कही तेहि बाता ॥  
जाकर नाम भरत मुख आवा । अधमौ मुकुत होइ श्रुति गावा ॥  
सौ मम लोचन गोचर आगे । राखौ देह नाथ फेहि खाँगे ॥  
जल भरि नयन कहहि रघुआई । तात कर्म निज ते गति पाई ॥  
परहित बस जिन्ह के मन माहीं । तिन्ह कहें जग दुर्लभ वहु नाहीं ॥  
तनु तजि तात जाहु मम धामा । देउँ काह तुम्ह पूरनकामा ॥  
दो०—सीता हरन तात जनि कहेहु<sup>२</sup> पिता सन जाइ ।

जौ मैं रामु त कुल सहित कहिहि दसानन आई ॥ ३१ ॥  
गीध देह तजि धरि हरि रूपा । मूपन बहु पट पीत अनूपा ॥  
स्याम गात विसाल भुज चारी । अस्तुति करत नयन भरि चारी ॥

छ०—जय राम रूप अनूप निर्गुन सगुन गुनप्रेरक सही ।  
दससीस बाहु प्रचंड खंडन चंड सर मंडन मही ॥  
पाथोद गात सरोज मुख राजीव आयत लोचन ।  
नित नौमि राम कृपाल बाहु विसाल भव भय मोचन ॥  
बल मप्रमेय मनादि मज मव्यक्त मेक मगोचर ।  
गोविंद गोपर द्वंद्वहर बिज्ञान धन धरनीधर ॥

१—प्र० : तेहि । द्वि० : प्र० । [ नृ० : तेहि ] । च० : प्र० ।

२—[ प्र०, द्वि०, नृ० : कःहु ] । च० : कहैह ।

जे१ राम मन जपत सन अनन जन मन रजन ।  
 निन नौमि राम अराम प्रिय नामादि खल दल गंजन ॥  
 जेहि श्रुति निरजन२ ब्रह्म व्यापक विरज अज कहि मानही ।  
 करि ध्यान ज्ञाननिगम जोग अनेक मुनि जेहि पावही ॥  
 सो प्रगट करुनाकद सोभारुद अग जग मोहई ।  
 गम हृदय पकज भृग अग अनग बहु ध्वनि सोहई ॥  
 जो अगम सुगम सुभाव निर्मल असम सम सीतल सदा ।  
 पश्यति ज जोगी जतनु करि करत मन गो बस सदा३ ॥  
 सो राम रमानिवास संनत दास बम त्रिभुवन धनी ।  
 मम उर बसउ४ सो समनससृति जागु कीरति पावनी ॥

दो०—अनिरल भगति माँगि घर गीघ गएउ हरि धाम ।

तेहिकी किया जथोचित निज कर कीन्ही राम ॥ ३२ ॥

कोमल चित अति दीन दयाला । कारन बिनु रघुनाथ कृपाला ॥  
 गीघ अधम खग आमिष भोगी । गति दीन्ही जो जाचन जोगी ॥  
 सुनहु उमा ते लोग अभागी । हरि तजि होहि निषय अनुरागी ॥  
 पुनि सीतहि खोजत द्वौ भाई । चले मिलोरुन बन बहुताई ॥  
 सजुल लता निटप धन कानन । बहु खग भृग तहँ गज पचानन ॥  
 आवत पथ बबध निपाता । तेहिँ सन कही साप के बाता ॥  
 दुर्बासा मोहि दीन्ही सापा । प्रभु पद देखि मिटा सो पापा ॥  
 सुनु गधर्व कहौ मैं तोही । मोहि न सुहाइ ब्रह्मकुल दोही ॥

दो०—मन क्रम बचन कपट तजि जो कर भूसुर सेव ।

मोहि समेत बिरचि सिन बस ताकै सब देव ॥ ३३ ॥

१—प्र० : जे । दि० • प्र० । [ तु० : जो ] । च० : प्र० [ (६) जो ] ।

२—प्र० : निरजन । दि० • प्र० । [ तु० : निरंतर ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : सदा । दि० • प्र० । [ तु० : जदा ] । च० : प्र० [ (६) : जदा ] ।

४—प्र० : बसउ [ (४) बसेउ ] । दि०, तु०, च० : प्र० ।

सापंतः । सादंतः । सापंतः । कहांतो । विषं श्रुज्य असी गावीहि संताप  
 पूजिअः विषं कसील । गुनहीना । सुदर्शनः गुन । गतो । ज्ञान प्रवीना ॥  
 कहिनिजः पधर्मः साहिं । समुत्तावा । निर्जघ्पद प्रीति देखि मन भयं ॥  
 रघुपतिः धरमः कमली मिरि नई । गर्पडागिन । आपनि गति पाई ॥  
 साहिं । देइ । गति । राम । उद्योग । प्रवरी नैके । आस्तमु । पगु । धारा ॥  
 सररो । देहि । सिस । पगुह । आप । मुनि । के । वचन । समुक्ति । जिअ । भाए ॥  
 सरसि । इलो । कन । वल्लु । मिसाल । जेअ । मुकुट । सिर । वन । माली ॥  
 प्याम । गौर । सुंदर । नो । दौ । मई ॥ सखी । परी । खीन । स्त । आई ॥  
 मेम । नि । मोर । मुखी । वचन । न । आवा । पुनी । पुनि । पद । सरोज । सिर । नवा । ॥  
 साई । मल । धि । चरन । पखरे । मुनि । सुंदर । आसन । बैठने । ॥  
 धो । ध । मूति । फल । सु । सदा । अति । दिव । राम । कहै । आनि । ॥  
 ॥ शान्ति । सहित । प्रमो । खी । वीरवार । नो । वल्लानि ॥ ३४ ॥  
 पानि । जोरि । आगे । मइ । पदी । प्रमुहि । मवितोकि । प्रीति । अति । चादी । ॥  
 केहि । धि । अस्तुति । कसै । सुहारी । अघम । जाति । मै । जड़मति । भारी ॥  
 अघम । तें । धन । अघम । अति । नारी । उति । नै । महुं । मै । अनि । मे । अघारी ॥  
 कह । रघुपति । गुनु । आनि । वीर । मानी । एक । मेगति । अर । मनाता ॥  
 जाति । पति । धुल । धमै । धि । धाई । धन । बल । परिजन । गुन । चतुराई । ॥  
 भगति । नो । नै । सोई । कै । सी । विनु । जल । धारि । देखि । अ । जैसा ॥  
 भव । भगति । कहौ । नो । हि । नै । संधान । गुनु । मरु । मन । माई । ॥  
 धि । भगति । सत । कर । संग । धूसरि । रति । मम । कथा । असी । ॥  
 धो । गुन । पद । पंजे । सी । तं । अगति । अमज । ॥  
 ॥ नै । भगति । मम । गुन । न । कर । कपट । अजि । नान । ॥ ३५ ॥  
 भर्त । जति । नै । महुं । वि । वि । पंचम । महुं । सो । चंद । प्रकाश । ॥  
 ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥ ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

छठ दम सील विरति बहु कर्मा । निरत निरंतर सज्जन धर्मा ॥  
 सातव सन मोहिमय जग देखा । मो तैं संत अधिक करि लेखा ॥  
 आठव जयालाभ सनोपा । सपनेहु नहि देखइ पर दोषा ॥  
 नवम रासल सब सन छलहीना । मम भरोस हिअ हरष न दीना ॥  
 नव महु एकौ जिन्ह कैं होई । नारि पुरुष सचराचर कोई ॥  
 सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें । सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें ॥  
 जोगिवृंद दुर्लभ गति जोई । तो कहुं आजु मुनम भइ सोई ॥  
 मम दरसन फल परम अनुपा । जीव पाव निज सहज सरूपा ॥  
 जनकसुता कह सुधि भामिनी । जानहि कहु करि बर गामिनी ॥  
 पपासरहि जाहु रघुराई । तहैं होइहि सुप्रीव मिताई ॥  
 सो सब कहिहि देव रघुवीरा । जानतहैं पूछहु मति घीरा ॥  
 बार बार प्रभु पद सिह नाई । प्रेम सहित सब कथा सुनाई ॥

छं०—कहि कथा सकल बिलोकि हरि मुख हृदय पद पंक्रज धरे ।

तजि जोग पावक देह हरिपद लीन भइ जहैं नहिं फिरे ॥

नर विविध कर्म अधर्म बहु मत सोकप्रद सब त्यागहू ।

विश्वास करि कह दास तुलसी राम पद अनुरागहू ॥

दो०—जातिहीन अध जन्म महि मुक्त कीन्ह असि नारि ।

महा मंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि ॥ ३६ ॥

चले राम त्यागा बन सोऊ । अतुलित बल नरकेहरि दोऊ ॥

विरही इव प्रभु करत विषादा । कहत कथा अनेक संवादा ॥

लखिमन देखु, विपिन कह सोभा । देखत केहि कर मनु नहिं छोभा ॥

नारि सहित सब खग मृग बृंदा । मानहुं मोरि करत हहिं निंदा ॥

हमहि देखि मृग निरु पराहीं । मृगीं कहहिं तुम्ह कहैं भय नाहीं ॥

तुम्ह आनंद काहु मृग जाए । कंचन मृग मोजन ये आए ॥

सग लाइ करिनी करि लेही । मानहु मोहिं सिखावनु देही ॥

साक्ष मुचितित पुनि पुनि देखिअ । मूर सुसेवित बस नहिं लेखिअ ॥

राखिअ नारि जदपि उर माहीं । जुवनी सास नृपति वय नाहीं ॥  
देखहु तात वसंत सोहावा । प्रियाहीन मोहि भयु उपजावा ॥

दो०—बिरह विकल बलहीन मोहि जानेसि निपट अकेन ।  
सहित बिपिन मधुकर खगः मदन कीन्हि बगमेल ॥  
देखि गएउ आना सहित तासु दूत सुनि वान ।  
ढेरा कीन्हेउर मनहुं तब कटकु हटकु मनजात ॥ ३७ ॥

बिटप विसाल लता अरुमानी । विविध चितान दिष्ट अनु तानी ॥  
धदलि ताल वर ध्वजा पताका । देखि न मोह धीर मन जाका ॥  
विविध भौंति फूले तरु नाना । अनु चानैन बने बहु बाना ॥  
कहुं कहुं सुंदर बिटप सुहाए । अनु मट विलग बिलग होइ छाप ॥  
कूजन पिक मानहुं गज माते । देक महोख ऊँट बेमरा ते ॥  
मोर चकोर कीर वर बाजी । पारावत मराल सब ताजी ॥  
तीतिर लावक पदचर जूथा । बरनि न जाइ मनोज बहूथा ॥  
रथ गिरि सिला दुंदुभी झरना । चानक बंदी गुन गन वरना ॥  
मधुकर मुखर भेरि सहनाई । त्रिविध बयार बसीठी आई ॥  
चतुरंगिनी सेनः सँग लीन्हे । विचरत सगहि चुनौती दीन्हे ॥  
लखिमन देखन काम अनोका । रहहि धीर तिन्ह कै जग लीका ॥  
पहि कै एक परम बल भारी । तेहि तें उबर सुभट सोइ भारी ॥

दो०—तात तीनि अति४ प्रबल खल५ काम क्रोध अरु लोभ ।  
मुनि विजान घाम मन कराहि निमिष महुं द्योम ॥

१—प्र० : खग । दि० : प्र० । [ वृ० : खगन ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : कीन्हेउ । दि० : प्र० । [ वृ० : दीन्हेउ ] । च० : प्र० [(२) : दीन्हेउ ] ।

३—प्र०, दि०, वृ०, च० : सेन [ (६) : सेना ] ।

४—प्र० : अति [ (२) : ये ] । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (२) : ये ] ।

५—प्र० : [(१), ये (२) अति ] । दि० : मन । वृ०, च० : दि० [ (२) : अति ] ।



[illegible]

१-प्रः शिः प्रः [युः क] उः मः ।

२-प्र० : सत्य । दि० : प्र० [ (३) (४) सत्य (५) सत्य (६) सत्य ]

[illegible]

४-प्र० : प. नास । दि० : परास । (दि०) : प. नास । कु. वि० : (१) : ०२-१

[illegible]

॥ गिरासिंह निहाल कृष्णी (३५) (३५) मरनन्य । निहाल मरनन्य । ॥

प्र० [ (६) : भर नक्ष ] ।

[illegible]

पृ० [ (२) : चक्षर सहज ] ।

राम सफल नामन्ह ते अधिक । होउ नाथ अघसग गन अधिक ॥  
दो०—राजा रजनी भगति तव राम नाम सोइ सोम ।

अपर नाम उटुगन विमल बसहु भगत उर व्योम ॥

एगमस्तु मुनि सन कहेउ कृपासिधु रघुनाथ ।

तय नारद मन हरष आति प्रभु पद नाएउ माय ॥ ४२ ॥  
अति प्रसन्न रघुनाथहि जानी । पुनि नारद बोले मृदु बानी ॥  
राम जयहि प्रेरेहु निज माया । मोहेहु मोहि सुनहु रघुराया ॥  
तन विवाह मैं चाहौ कीन्हा । प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा ॥  
सुनि मुनि तोहि कहौ सह रोसा । भजहि जे मोहि तजिसरुल भरोसा ॥  
करो सदा तिन्ह के रखवारी । जिमि बलक राखै महतारी ॥  
गह सिसु बच्च अनल अहि धाई । तहँ राखै जननी अरगाई ॥  
प्रौढ़ भए तेहिं सुन पर माता । प्रीति करै नहि पाछिनि बाता ॥  
मोरे प्रौढ़ तनय सम ज्ञानी । बलक सुन सम दास अमानी ॥  
जनहि मोर बल निज बल ताही । दुहुँ कहूँ काम क्रोध रिपु आही ॥  
येह विचारि पंडित मोहि भजही । पाएहु ज्ञान भगति नहिं तजही ॥  
दो०—राम क्रोध लोभादि मद प्रबल मोह के धारि ।

तिन्ह महँ अति दारुन दुखद माया रूपी नारि ॥ ४३ ॥  
सुनु मुनि कह पुगन धुनि संता । मोह बिपिन कहूँ नारि बसंता ॥  
जप तप नेम जलामय भारी । होइ प्रीपम सोखै सब नारी ॥  
काम क्रोध मद गस्सर मेका । इन्हहिं हरषमद बर्षा एका ॥  
दुर्बासना कुमुद समुदाई । तिन्ह कहँ सरद सदा सुखदाई ॥  
धर्म सफल सरसीरुह वृंदा । होइ हिम तिन्हहिं देति दुखमंदा ॥  
पुनि ममता जवास बहुताई । पलुहइ नारि सिसिर रितु पाई ॥  
पाप उलूक निकर सुखकारी । नारि निबिड़ रजनी अंधियारी ॥

बुधि बलु सील सत्य सब मीना । बनसी सम त्रिय कहहि प्रवीना ॥

दो०—अवगुणमूल सुलप्रद प्रमदा सः दुख खानि ।

ता तैं कीन्ह निवारन मुनि मैं येह जिय जानि ॥ ४४ ॥

मुनि रघुपति के बचन सुहाए । मुनि तन पुलक नयन भरि आए ॥

कहहु कवन प्रभु कै असि रीती । सेवक पर ममता अरु प्रीती ॥

जे न भजहि अस प्रभु भ्रम त्यागी । ज्ञान रंरु नर मंद अभागी ॥

पुनि सादर बोले मुनि नारद । सुनहु राम विज्ञान विसारद ॥

संतन्ह के लच्छन रघुवीरा । कहहु नाथ भजन भगभीरा ॥

सुनु मुनि संतन्ह के गुन कहऊँ । जिन्ह तैं मैं उन्हेके बस रहऊँ ॥

पट विकार जित अनन अकामा । अचल अकिंचन सुचि सुवधामा ॥

अमितबोध अनीह मितभोगी । सत्यमार कवि कोविद जोगी ॥

सावधान मानद मदहीना । धीर धर्मगति परम प्रवीना ॥

दो०—गुनागार संसार दुख रहित विगत संदेह ।

तजि मम चरन सरोज प्रिय तिन्ह कहूँ देह न गेह ॥ ४५ ॥

निज गुन सबन सुनत सकुचाहीं । पर गुन सुनत अधिह हरपाहीं ॥

सम सीतल नहि त्यागहि नीती । सरल सुभाउ सबहि सन प्रीती ॥

जप तप व्रत दम संजम नेमा । गुर गोविंद विप्र पद मेमा ॥

सद्धा धमा मयत्री दाया । मुदिना मम पद प्रीति अमाया ॥

विरति विवेक विनय विज्ञाना । बोध जथारथ वेद पुराना ॥

दंभ मान मद करहि न काऊ । भूलि न देहि कुमारग पाऊ ॥

गावहि सुनहि सदा मम लीला । हेतु रहित पर हित रत सीला ॥

मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेतै । कहि न सकै सारद श्रुति तेते ॥

१—प्र० : जिन्ह । दि० : प्र० । [ वृ० जेदि ] । च० : प्र० [ (६) वा ] ।

२—प्र० : धर्मगति । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (६) भगप्रियच ] ।

३—प्र० : दुख । दि० : प्र० । [ नृ० : सुख ] । च० : प्र० ।



श्रीगणेशाय नमः

श्री ज्ञानकीवल्लभो विजयने

# श्री राम चरित मानस

चतुर्थ सोपान

किष्किंधा कांड

श्लो०—कुन्देदीवरमुन्दरावतित्रलौ विज्ञानधामावुमौ  
शोभाढ्यौ वरघन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृंदप्रियौ ।  
माया मानुपरूपिणी रघुवरौ सद्धर्मवर्गौ हितौ  
सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः ॥  
ब्रह्मांभोषिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चान्यय  
श्रीमच्छंभुमुखेन्दुसुन्दरवरे संगोभितं सर्वदा ।  
संसारानयभेषजं सुखकरं श्रीज्ञानकीजीवनं  
धन्यास्ते कृत्तिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनाभाभृतम् ॥

सो०—मुक्ति जन्म महि जानि ज्ञान खानि अथ हानि कर ।  
जहँ वस संभु भवानि सो कासी सेइअ कस न ॥  
जरत सकल सुर वृंद विपम गरल जेहि पान किअ ।  
तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस ॥

आगे चले बहुरि रघुराया । रिप्यमूक पर्वत निअराया ॥  
तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा । आवत देखि अतुल बल सीवा ॥  
अति समीत कह सुनु हनुमाना । पुरुष जुगल बल रूप निधाना ॥  
घरि बटु रूप देखु तैं जाई । कहेसु जानि जिअँ सयन बुझाई ॥

पठए१ बालि होहि मन मैला । भागौ तुरत तजौ येह सैला ॥  
 विप्र रूप धरि कपि तहँ गएऊ । माथ नाइ पूँछत अम भएऊ ॥  
 को तुम्ह रयाग्ल गौर सरीरा । छत्री रूप किहु वन बीरा ॥  
 कठिन भूमि कोमल पद गामी । स्वन हेतु वन विचरहु स्वामी ॥  
 मृदुल रुनोहर सुंदर गाता । सहत दुसह वन आतप वाता ॥  
 की तुम्ह तीन देव महँ कोऊ । नर नारायन की तुम्ह दोऊ ॥  
 दो०—जग फारन तारन मरै भजन भरनी मार ।

कोसलेस दसरथ के जाए । हम पितु बचन मानि बन आए ॥  
 नाम राम लखिमन दोउ माई । संग नारि सुकुमारि सुहाई ॥  
 इहाँ हरी निसिचर बेदेही । विप्र फिरहिँ हम खोजत तेही ॥  
 आपन चरित कहा हम गाई । कहहु विप्र निज कथा बुझाई ॥  
 प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना । सो सुख उपा जाइ नहिं वरना ॥  
 पुलकित तन मुख आव न बचना । देखत रुचिर बेप कै रचना ॥  
 पुनि धीरजु धरि अस्तुति कीन्ही । हरप हृदयें निज नाथहि चीन्ही ॥  
 मोर न्याउ मै पूछा साई० । तुम्ह पूँछहु कस नर की नाई ॥  
 तब माया बस फिरो भुलाना । ता तें मै नहिं प्रभु पहिचाना ॥  
 दो०—एक मद मै मोहवस कुटिल१ हृदय अज्ञान ।

पुनि प्रभु मोहि विसारेउ दीनबधु भगवान ॥ २ ॥  
 जदपि नाथ० बहु अवगुन मोरें । सेवक प्रभुहिँ परै जनि मोरें ॥  
 नाथ जीव तब माया मोहा । सो निस्तरइ तुम्हारेहि छोहा ॥  
 तापर मै रघुबीर दोहाई । जानौ नहिं कछु भजन उपाई ॥  
 सेवक सुन पति मातु भरोसैं । रहै असोच बनइ प्रभु पोसैं ॥

१—प्र० : पठए । दि० : प्र० [ वृ० : पठवा ] । च० : प्र०

२—प्र० : मव । दि० : प्र० । [ वृ० : मवन ] । च० : प्र०

३—प्र० : कुटिल । दि० : प्र० । [ वृ० : कीस ] । च० : प्र० ।

अस कहि परेउ चरन अकुलाई । निज तनु प्रगटि प्रीति उर छाई ॥  
तव रघुपति उठाइ उर लावा । निज लोचन जल सींचि जुडावा ॥  
सुनु कपि जिअँ मानसि जनि ऊँना । तैं मम प्रिय लखिमन तें दूना ॥  
समदरसी मोहि कह सब कोऊ । सेवक प्रिय अनन्य गति सोऊ ॥  
दो०—सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत ।

मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत ॥ ३ ॥  
देखि पवनमुत पति अनुकूला । हृदयँ हरष बीती सब सूला ॥  
नाथ सैल पर कपिपति रहई । सो सुग्रीव दास तव अहई ॥  
तेहि सन नाथ मइप्री कीजै । दीन जानि तेहि अभय करीजै ॥  
सो सीताकर खोज कराइहि । जहँ तहँ मरकट कोटि पठाइहि ॥  
येहि विधि सरल कथा समुझाई । लिय दुबौ जन पीठि चढ़ाई ॥  
जय सुग्रीव राम कहूँ देखा । अतिसय जन्म धन्य करि लेखा ॥  
सादर मिलेउ नाइ पद माथा । भेंटेउ अनुज सहित रघुनाथा ॥  
कपि कर मन विचार येहि रीती । करिहहि विधि मोसन ये प्रीती ॥  
दो०—तव हनुमंत उमय दिसि कीरे सब कथा सुनाइ ।

पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ ॥ ४ ॥  
कीन्हि प्रीति कछु बीच न राखा । लखिमन राम चरित सब भाषा ॥  
कह सुग्रीव नयन भरि धारी । मिलिहि नाथ मिथिलेस कुमारी ॥  
मत्रिन्ह सहित इहाँ एक वारा । बैठ रहेउँ मैं करत विचारा ॥  
गगन पथ देखी मैं जाता । परबस परी बहुत बिलपाता ॥  
राम राम हां राम पुकारी । हमहि देखि दीन्हेउ पट डारी ॥  
माँगा रामु तुरत तेहि दीन्हा । पट उर लाइ सोच अति कीन्हा ॥

१—प्र० : करीजै [ (२) : करदीजै ] । दि०, वृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : की । दि० : प्र० [ (४) (१ अ) : कहि ] । वृ० : प्र० । [ च० : कर ] ।

३—प्र० : मिलपाता । दि०, वृ० : प्र० । च० : मिलपाता ।



फह सुग्रीव सुनहु रघुग्रीव । तजु सोच मन आनहु धीर ॥  
सम प्रफार करिहौ सेवसाई । जेहिबिधि मिलिहि जानकी आई ॥

दो०—सखा वचन सुनि हरपे कृपासिंधु बनसीर ।

कारन पवन बसहु वन मोहि कहहु सुग्रीव ॥५॥

नाथ बालि अरु मै ठौर भाई । प्रीति रही कहु बनि न जाई ॥  
मयसुन मायात्री तेहि नाऊँ । आवा सो प्रभु हमरे गाऊँ ॥  
अर्द्ध राति पुर द्वार पुफारा । बाली रिपु बल सहइ न पारा ॥  
धावा बालि देखि सो भागा । मै पुनि गएउँ बधु संग लागा ॥  
गिरि वर गुहा पैठ सो जाई । तन बाली मोहि कहा बुझाई ॥  
परिखेसु मोहि एक पलवारा । नहि थावौ तन जानेसु मारा ॥  
मास दिवस तहँ रहेउँ खरारी । निसरी रुधिर धार तहँ भारी ॥  
बालि हतेसि मोहि मारिहि आई । सिला देइ तहँ चलेउँ पराई ॥  
मजिन्ह पुर देखा विनु साई । दीन्हेउ मोहि राजु परिआई ॥  
बाली ताहि मारि गृह आवा । देखि मोहि जिअ भेद बढ़ावा ॥  
रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी । हरि लीन्हेसि सर्वनु अरु नारी ॥  
ताकें भय रघुवीर कृपाला । सकल भुवन मै फिरेउँ बिहाला ॥  
इहाँ स्थाप वम आवत नाहीं । तदपि समीत रहौ मन माहीं ॥  
सुनि सेवक दुख दीन दयाला । फरकि उठीं द्वीय भुजा बिसाला ॥

दो०—सुनु सुग्रीव मारिहौ बालिहि एकहि वन ।

ब्रह्म रुद्र सरनागत गण न उबारिहि प्रान ॥ ६ ॥

१—प्र० : दो । [ द्वि०, वृ० : दोउ ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : तहँ । द्वि०, वृ० : प्र० [ च० : सत ] ।

३—प्र० : उठीं । द्वि० : प्र० । [ वृ० : उठे ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : द्वै । द्वि० : (१) (४) (५) दोउ, (५ अ) दो । वृ० : दोउ । [ च० : दो ] ।

५—प्र० : मारिहौ । द्वि० : प्र० । [ वृ० : मै मारिहौ ] । च० : प्र० ।

६—प्र० : सरनागत । द्वि० : प्र० । [ वृ० : सरनागतहु ] । च० : प्र० ।

जे न मित्र दुख होहि दुखारी । तिन्हहि बिलोकत पातक भारी ॥  
 निज दुख गिरि सम रज करि जाना । मित्र क दुख रंज मेरु समाना ॥  
 जिन्ह केँ असि मति सहज न आई । ते सठ कत हठि करत मिताई ॥  
 कुपथ निवारि सुपंथ चलावा । गुन प्रगटइ अवगुननिह दुरावा ॥  
 देत लेन मन संक न धरई । वज्र अनुमान सदा हित करई ॥  
 विष तिकाल कर सगुन नेहा । श्रुति कह संत मित्र गुन पहा ॥  
 आगे कह मृदु बचन बनाई । पाछे अनहित मन कुटिलाई ॥  
 जा कर चित्त अहि गति सम भाई । अस कुमित्र परिहरेहि भलाई ॥  
 सेवक सठ नृप कृपन कुनारी । कपटी मित्र सूख सम चारी ॥  
 सखा सोच त्यागहु बल मोरें । सब विधि घटव काज मैं तोरें ॥  
 कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा । बालि महाबल अति रन धीरा ॥  
 दुंदुभि अस्थि ताल देखराए । बिनु प्रयास रघुनाथ ढहाए<sup>१</sup> ॥  
 देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती । बाली बध की भइ<sup>२</sup> परतीती ॥  
 बार बार नाउइ पद सीसा । प्रमुहि जानि मन हरष कपीसा ॥  
 उपजा ज्ञान बचन तब बोला । नाथ कृपा मन भएउ अलीला ॥  
 सुख संवति परिवार बड़ाई । सब परिहरि करिहौं सेवकाई ॥  
 ये सब राम भगति के बाधक । कहहि संत तब पद अवरधक ॥  
 सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं । मायाकृत परमारथ नाही ॥  
 बालि परम हित जासु प्रसादा । मिलेहु राम तुम्ह समन विषादा ॥  
 सपने जेहि सन होइ लराई । जागे समुझन मन सकुचाई ॥  
 अब प्रभु कृपा करहु येहि<sup>३</sup> भौंती । सब तजि भजन करौं दिनु राती ॥  
 सुनि विराग संजुत कपि बानी । बोले बिहँसि राम धनुपानी ॥  
 जो कछु कहेहु सत्य सब सोई । सखा बचन मम मृपा न होई ॥

१—[ प्र० : ढहाए ] । दि०, वृ०, च० ॥ ढहाए ।

२—प्र० : बाधि बधव इन्ह । दि०, वृ० : प्र० । च० : बानी बध की ।

३—प्र० : येहि । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : बेहि ] ।

नट मर्कट इव मबहि नचावन । रामु सगेम वेद अम गावन ॥  
 लै सुमीव संग रघुनाथा । चले चाप सायक गहि हाथा ॥  
 तव रघुपति सुमीव पठावा । गर्जेसि जाइ निहट यल पावा ॥  
 सुनन बालि कोधातुर धावा । गहि जर चरन नारि समुझावा ॥  
 -सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुयोवा । ते द्वौ बंधु तेज यल सीवा ॥  
 कोसलेस सुत लखिमन रामा । कालहु जीति सन्हि संप्रामा ॥  
 दो०—कहइ बालि सुनु भीरु प्रिय समदरयो  
 जौ कदाचि मोहि मारहि तौ पुनि होउ सनाथ ॥ ७ ॥

अस कहि चला महा अभिमानी । तन समान सुमीवहि जानी ॥  
 भिरे उभौ बाली अति तर्जा । मुठिऊ मारि महा धुनि गर्जा ॥  
 तव सुमीव विरुल होइ भागा । मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा ॥  
 मैं जो कहा रघुवीर कृपाला । बहु न होइ मौर यह काला ॥  
 एक रूप तुम्ह आता दोऊ । तेहि अम तैं नहि मारेउं सोऊ ॥  
 कर परसा सुमीव सरीरा । तनु भा कुलिस गई सत्र पीरा ॥  
 मेली कंठ सुमन के माला । पठवा पुनि चल देइ बिसाला ॥  
 पुनि नाना विधि भई लराई । बिटप ओट देखहि रघुराई ॥  
 दो०—बहु छल बन सुमीव करि हियैं हारा भय मानि ।  
 मारा बालि राम तव हृदय मरि सर तानि ॥ ८ ॥

परा विरुल महि सर के लागें । पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें ॥  
 श्याम गात सिर जटा बनाएँ । अरुन नयन सर चाप चढ़ाएँ ॥  
 पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा । सुफल जनम माना प्रभु चीन्हा ॥

१—प्र० : दी । [ दि०, वृ० : दोउ ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : बहै बालि । दि० : कह बाली । [ वृ० : करा बालि ] । [ च० : कह बालि ] ।

३—प्र० : मोह [ (२) : मोहि ] । दि०, वृ०, च० : प्र० ।

४—प्र० : मारहि [ (२) : मारिहहि ] । दि० : प्र० [ (५) मारिहि, (५अ) मारिहहि ] ।  
 [ वृ० : मारिह ] । च० : प्र० ।

५—प्र० : उभौ [ (२) : उभौ ] दि० : प्र० [ (५अ) : उभौ ] । वृ०, च० : प्र० ।

हृदयँ प्रीति मुख बचन कठोरा । बोला चितइ राम की ओरा ॥  
 धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं ॥ मारेहु मोहि व्याध की नाई ॥  
 मैं बैरी सुप्रीत पिआरा । अवगुन कवन नाथ मोहि मारा ॥  
 अनुज बधू भगिनी सुतनारी । सुन सठ ये कन्या सम चारी ॥  
 इन्हहिं कुदृष्ट बिलोकइ जोई । ताहि बधैं कछु पाप न होई ॥  
 मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना । नारि सिखावनु कसि न काना ॥  
 मम भुज बल आसिन तेहि जानौ । मारा चहमि अघम अभिमानी ॥  
 'दो०—सुन्हु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि ।

प्रभु अजहँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि ॥ ६ ॥  
 'सुनत राम अति कोमल वानी । बालि सीस परसेउ निज पानी ॥  
 'अचल करौं तनु राखहु प्राणा । बालि कहा 'सुनु कृपानिधाना ॥  
 जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं । अंत राम कहि आवत नाही ॥  
 'जासु नाम बल संकर कासी । देन सर्वाहिं सम गति अविनासी ॥  
 मम लोचन गोचर सोइ आवा । बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा ॥  
 छं०—सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावहीं ।

जित पवन मन गो निरस करि सुनि ध्यान क्यहुक पावहीं ॥  
 मोहि जानि अति अभिमानवस प्रभु कहेउ राखु सरीरही ॥  
 अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करिहि बचूरही ॥  
 अथ नाथ करि करुना बिलोकहु देहु ओ बर माँगऊँ ।  
 जेहि जोनि जन्मौं कर्मवस तहँ राम पद अनुरागऊँ ॥  
 येह तनय मम सम बिनय बल कल्याणप्रद प्रभु लीजिए ।  
 गहि बौह सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजिए ॥

'दो०—राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग ।

सुमनमाल जिमि कंठ तें गिरत न जानइ नाग ॥ १० ॥  
 राम बालि निज धाम पठावा । नगर लोग सब व्याकुल धावा ॥  
 नाना विधि बिलाप कर तारा । छूटे केस न देह सँभारा ॥

तारा बिरल देखि रघुराया । दीन्ह ज्ञान हरि लीन्ही माया ॥  
 धिति जल पावक गगन समीरा । पच रचित अति अघम सरीरा ॥  
 प्रगट सो तनु तब आगे सोचा । जीव नित्य केहि लागि तुम्ह रोवा ॥  
 उपजा ज्ञान चरन तब लागी । लीन्हेसि परम भगति बर माँगी ॥  
 उमा दारुमोषि की नाई । सनहि नचावत रामु गोसाई ॥  
 तब सुग्रीवहि आयेसु दीन्हा । मृतक कर्म विधिवन सन कीन्हा ॥  
 रामु कहा अनुजहि समुझाई । राजु देहु सुग्रीवहि जाई ॥  
 रघुपति चरन नाइ करि माथा । चले सकल प्रेरित रघुनाथा ॥  
 दो०—लक्ष्मिन तुरत बोलाए पुरजन निम समाज ।

राजु दीन्ह सुग्रीव कहु अगद कहु जुवराज ॥ ११ ॥  
 उमा राम सम हित जग माही । गुर पितु मातु बहु प्रभु नाहीं ॥  
 सुर नर मुनि सब केँ येह रीती । स्मरथ लागि कहिँ सब प्रीती ॥  
 बालि त्रास व्याकुल दिन राती । तन बहु बन बिता जर छाती ॥  
 सोइ सुग्रीव कीन्ह कपिराज । अति कृपाल रघुवीर सुभाज ॥  
 जानतहँ अस प्रभु परिहरहीं । काहे न विपति जाल नर परहीं ॥  
 पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बोलाई । बहु प्रभार नृप नीति सिलाई ॥  
 कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा । पुर न जाउँ दस चारि बरीसा ॥  
 गन ग्रीषम बापा रितु आई । रहिहौ निकट सैल पर आई ॥  
 अगद सहित करहु तुम राजू । संतन हृदयें धरेहु मम काजू ॥  
 जन सुग्रीव मनन फिरि आए । रामु प्रवरपन गिरि पर आए ॥  
 दो०—प्रथमहि देवन्द गिरि गुहा राखी रुचिर बनाइ ।

रामु कृपानिधि कछुक दिन वास करहिंगे आइ ॥ १२ ॥  
 सुंदर बन कुसुमित अति सोभा । गुंजन मधुप निन्नर मधु लोभा ॥  
 कद मूल पल पत्र मुहाए । मण वटुत जन तें प्रभु आए ॥

१—प्र० : करहि । दि०, १० प्र० । [ १०० करति ] ।

२—प्र० : सोइ । दि० : प्र० । [ १०० : मो ] । च० . प्र० ।

देखि मनोहर सैल अरुनूपा । रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा ॥  
मधुकर खग मृग तनु घरि देवा । कहिँ सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा ॥  
मंगलरूप भएउ बन तव तें । कीन्ह निवास रमापति जव तें ॥  
फटिक सिला अति सुभ्र सुहाई । सुख आसीन तहाँ द्वौ भाई ॥  
कहत अनुज सन कथा अनेका । भगति बिरति नृपनीति विवेका ॥  
बरपा काल मेघ नम छाए । गर्जत लागत परम सुहाए ॥  
दो०—लक्ष्मिन देखु मोर गन नाचत चारिद पेलि ।

गृही बिरति रत हरप जस बिष्नु भगत कहँ देखि ॥ १३ ॥  
घन घमंड नभ गर्जत घोरा । मिथाहीन डरपत मन मोरा ॥  
दामिनि दमक रह नः घन माहीं । खल कै प्रीति जथा धिरु नाहीं ॥  
बरपाहिँ जलद भूमि निअराए । जथा नहिँ बुध बिद्या पाए ॥  
बूँद अघात सहहिँ गिरि कैसे । खल के वचन संत सह जैसे ॥  
छुद्र नदी भरि चली तोराई<sup>१</sup> । जस थोरेहु घन खल इतराई ॥  
भूमि परत भा दावर पानी । जनु जीवहि माया लपटानी ॥  
सिमिटि सिमिटि जल भरहिँ तलावां । जिमि सदगुन सज्जन पहिँ आवा ॥  
सरिता जल जलनिधि महुँ जाई । होइ अचल जिमि जिव हरि पाई ॥  
दो०—हरित भूमि तृन संकुल समुक्ति पाहिँ नहिँ पंथ ।

जिमि पाखंडवाद<sup>२</sup> तें गुप्त होहि सदग्रंथ ॥ १४ ॥  
बादुर धुनि चहुँ दिसा सुहाई । बेद पढ़हिँ जनु बटु समुदाई ॥  
नव पल्लव भए विटप अनेका । साधक मन जस मिले विवेका ॥  
अर्क जवास पात बिनु भएऊ । जस सुराज खल उद्यम गएऊ ॥  
खोजत कतहुँ मिलइ नहिँ<sup>३</sup> घूरी । करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी ॥

१—प्र० : रह न । दि० : प्र० । तृ० : रही । च० : प्र०

२—प्र० : तोराई । दि० : प्र० [ (३) : तुराई ] (तृ० : च० : प्र०

३—प्र० : पाखंडवाद । दि० : प्र० [ (४) : पाखंडीवाद ] । [तृ० : पाखंडीवाद ] ।  
च० : प्र०

४—प्र० : मिलइ नहिँ । दि० : तृ० : प्र० । [च० : मिलइहि ]

ससि संपन्न सोह महि कैसी । उपकारी कै सवति जैमी ॥  
 निसि तम धन खद्योत बिराजा । जनु दमिन्ह कर मिला समाजा ॥  
 महावृष्टि चलि फूटि कायरी । जिमि सुतत्र भएँ बिगारहि नारी ॥  
 कृपी निरावहिं चतुर किसाना । जिमि बुध तजहिं मोहमद माना ॥  
 देखियत चक्रवाक सग नाही । कलिहि पाइ जिमि धर्म पगही ॥  
 ऊमर यरपे सृन नहिं जामा । जिमिहरिजन हियँ उपज न कामा ॥  
 विविधि जतु सकुल महि आज्ञा । प्रजा बाढ़ जिमि पाइ सुराजा ॥  
 जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना । जिमि इन्द्रियगन उपजें ज्ञाना ॥  
 दो०—कबहुँ प्रकृत चलै मारुन जहँ तहँ मेघ बिलाहि ।

जिमि कपूत के उपजें कुल सद्वर्म नसाहि ॥

कबहुँ दिवस महुँ निचिढ़ तम कबहुँक प्रगट पतग ॥

बिनसइ उपजइ ज्ञान जिमि पाइ कुसग सुसग ॥ १५ ॥

बरपा बिगत सरद रितु आई । लखिमन देखहु परम सुहाई ॥  
 फूले कास सकल महि छाई । जनु बरपा कृतै प्रगट बुढ़ाई ॥  
 उदित अगस्ति पथ जल सोखा । जिमि लोभहि सोखइ सतोषा ॥  
 सरिता सर निर्मल जल सोहा । सत हृदय जस गत मद मोहा ॥  
 रस रस सूख सरित सर पानी । ममता त्याग करहिं जिमि ज्ञानी ॥  
 जानि सरद रितु खजन आए । पाइ समय जिमि सुकृत सुहाए ॥  
 पक न रेनु सोह असि धरनी । नीति निपुन नृप के जसि करनी ॥  
 जल सकोच बिकल भइ भीना । अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना ॥  
 बिनु धन निर्मल सोह अकासा । हरिजन इव परिहरि सब आसा ॥  
 कहें कहें वृष्टि सारदी थोरी । कोउ कोउ पाव भगति जिमि४ मोरी ॥

१—प्र० : दिय । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : धिय ] ।

२—प्र० : चल । [ दि०, वृ० : बह ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : कृत । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : रितु ] ।

४—प्र० : जिमि । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : जमि ] ।

-दो०—चले हरषि तजि नगर नृप तापस वनिक भिखारि ।

जिमि हरि भगति पाइ स्रम तजहि आसमी चारि ॥ १६ ॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा । जिमि हरि सन न एकी बाधा ॥

पूले कमल सोह सर कैसा<sup>१</sup> । निर्गुन ब्रह्म सगुन भएँ जैमा<sup>२</sup> ॥

गुंजत मधुकर मुखर अनूष । सुंदर खग रव नाना रूपा ॥

चक्रवाक मन दुख निमि पेखी । जिमि दुर्जन पर संपति देखी ॥

चातक रटत तृषा अति ओही । जिमि सुख लहइ न सकर द्रोही ॥

सरदातप निसि ससि अपहरई । संत चरस जिमि पातक टरई ॥

देखि इंदु चक्रोर समुदाई । चितवहिं जिमि हरिजन हरि पाई ॥

मसक दंस धीते हिम त्रासा । जिमि द्विज द्रोह किएँ कुल नासा ॥

दो०—मूमि जीव संकुल रहे गए सरद रितु पाइ ।

सदगुर मिले जाहिं जिमि ससय भ्रम समुदाइ ॥ १७ ॥

बरपा गत निर्मल रितु आई । सुधि न तात सीता कै पाई ॥

एक बार कैपेहुं सुधि जानौ । कालहु जोति निमिप महुं आनौ ॥

फतहुं रहौ जौ जीवति होई । तात जतनु करि आनों सोई ॥

सुग्रीवहु सुधि मोरि बिसारी । पावा राज कोस पुर नारी ॥

जेहि सायक मारा मै वाली । तेहि सर हतौ मूढ कहुं काली ॥

जासु कृषो छूटहि मद मोहा । ताकहुं उमा कि सपनेहु फोहा ॥

जानहि येह चरित्र मुनि ज्ञानी । जिन्ह रघुबीर चरन रति मानी ॥

लक्ष्मिन कोधवन प्रभु जाना । धनुष चढ़ाइ गहे कर वाना ॥

दो०—तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुन सीव ।

भय देखाइ लै आवहु तात सखा सुग्रीव ॥ १८ ॥

इहाँ पवनसुत हृदय विचारा । रामकाजु सुग्रीव विचारा ॥

निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा । चारिहुं बिधि तेहि कहि समुझावा ॥

१—प्र० : क्रमशः वैमा, जैसा । द्वि० : प्र० [ (५) वैसे, जैसे ] । [ तृ० : वैसे, जैसे ] ।

च० : प्र० ।



सुनि सुग्रीव परम भय माना । बिषय मोर हरि लीन्हैउ ज्ञाना ॥  
 अब मास्तमुत दूत समूहा । पठवहुं जहँ तहँ बानर जूहा ॥  
 कहेहु पाख महुँ आव न जोई । मोरें कर ताछर बध होई ॥  
 तब हनुमंत बोलाए दूता । सत्र कर करि सनमान बहूता ॥  
 भय अरु प्रीति नीति देखराई । चले सरन चरनन्हि सिरु नाई ॥  
 येहि अवसर लखिमनु पुर आए । क्रोध देखि जहँ तहँ कपि पाए ॥  
 दो०—धनुष चढ़ाइ कहा तब जारि करौ पुर द्वार ।

व्याकुल नगर देखि सब आएउ बालिकुमार ॥ १९ ॥  
 चरन नाइ सिरु बिनती कीन्ही । लखिमनु अभय बौह तेहि दीन्ही ॥  
 क्रोधवंत लखिमनु सुनि काना । कह कपीस अति भय अकुलाना ॥  
 सुनु हनुमत संग लै तारा । करि बिनती समुझाउं कुमारा ॥  
 तारा सहित जाइ हनुमाना । चरन बंदि प्रभु सुजमु बखाना ॥  
 करि बिनती मंदिर लै आए । चरन पखारि पलंग बैठाए ॥  
 तब कपीस चरनन्हि सिरु नाबा । गहि भुज लखिमन कंठ लगावा ॥  
 नाथ बिषय सम मद कछु नाही । मुनि मन मोह<sup>१</sup> करइ द्यन माहीं ॥  
 सुनन बिनती बचन सुख पावा । लखिमन तेहि बहु बिधि समुझावा ॥  
 पवन तनय सब कथा सुनाई । जेहि बिधि गए दूत समुद्राई ॥  
 दो०—हरपि चले सुग्रीव तब अंगदादि कपि साथ ।

रामानुज आगे करि आए जहँ रघुनाथ ॥ २० ॥  
 नाइ चरन सिरु कह कर जोरी । नाथ मोहि कछु नाहिन खोरी ॥  
 अतिसय प्रकल देव तब माया । छूटइ राम काहु जौ दाया ॥  
 बिषयवस्य सुर नर मुनि स्वामी । मैं पाँवर पसु कपि अति कामी ॥  
 नारि नयन सर जाहि न लागा । घोर क्रोध तम निसि जो जागा ॥  
 लोभ पास जेहि गर न बैधाया । सो नर तुम्ह समान रघुराया ॥

१—प्र० : समुझाउ । दि०, तु० : प्र० । [च० : समुझाउ] ।

२—प्र० : मोह । दि० : प्र० । [तु० : द्योम] च० : प्र० ।

यह गुन सावन तेँ नहि होई । तुम्हीं कृपा पाव कोइ कोई ॥  
तब रघुपति बोले मुसुकाई । तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भाई ॥  
अब सोइ जतनु करहु मन लाई । जेहि विधि सीता कै सुधि पाई ॥  
दो०—येहि विधि होत बतकही आए बानर जूथ ।

नाना वरन सकल दिसि देखिअ कीस बरूथ ॥२१॥  
बानर कटक उमा में देखा । सो मूरख जो करन चहै लेखा ॥  
आइ राम पद नाबहि माथा । निरखि बदन सव होहि सनाथा ॥  
अस कपि एक न सेना माहीं । राम कुसल जेहि पूँछा नाही ॥  
येह कछु नहि प्रभु कै अत्रिकाई । बिस्वरूप व्यापक रघुराई ॥  
ठाढ़े जहँ तहँ आयेसु पाई । कह सुप्रीव सबहि समुझाई ॥  
राम काजु अरु मोर निहोरा । बानर जूथ जाहु चहुँ ओरा ॥  
जनरुसुना कहूँ खोजहु जाई । मास दिवस महुँ आपहु भाई ॥  
अवधि मेटि जो विनु सुधि पाए । आवंइ बनिहि सो मोहि मराए ॥  
दो०—बचन सुनत सब बानर जहँ तहँ चले तुरंत ।

तब सुप्रीव बोलाए अंगद नल हनुमन ॥२२॥  
सुनहु नील अंगद हनुमाना । जामवंत मतिधीर सुजाना ॥  
सकल सुभट मिलि दाँड्यन जाहू । सीता सुधि पूँछेहु सब काहू ॥  
मन क्रम बचन सी जतनु बिचारेहु । रामचंद्र कर काजु सँवारेहु ॥  
मानु पीठ सेइअ डर आगी । स्वामिहि सर्व भाव छल त्यागी ॥  
तजि माथा सेइअ परलोका । मिटहि सकल भवसंभव सोका ॥  
देह धरे कर येह फलु भाई । मजिअ राम सब काम बिहाई ॥  
सोइ गुनज ३ सोई बड़भागी । जो रघुवीर चरन अनुरागी ॥  
आयेसु माँगि चरन सिरु नाई । चले हरपि सुमिरत रघुराई ॥

१—प्र० : करन चह । दि० : प्र० [ (४) : क्रिय चह ] । [तु० : करि चहै] । च० : प्र० ।

२—प्र० : सो जतनु । दि० : प्र० । [तु० : सुनतन] । च० : प्र० ।

३—प्र० : गुन खान ] । दि० : गुनख [ (५थ) : गुनखान ] । तु०, च० : दि० ।

पाछे पवन तनय सिरु नावा । जानि काजु मधु निकट बोलावा ॥  
 परसा सीस सरोरुह पानी । कर मुद्रिका दोन्ह जन जानी ॥  
 बहु प्रकार सीतहि समुझाएहु । कहि बल बिह वैगि तुह आएहु ॥  
 हनुमत जनम सुफल करि माना । चनेउ हृदय धरि कृपानिधाना ॥  
 जद्यपि प्रभु जानन सब वाता । राजनोति राखत सुरवातः ॥  
 दो०—चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह ।

राम काज लय लीन मन बिसरा तन कर छोह ॥ २३ ॥  
 कनहुँ होइ निसिचर सै भेद्य । प्रान लेहि एक एक चपेद्य ॥  
 बहु प्रकार गिरि कानन हेरहि । कोउ मुनि मिलइ ताहि सब घेरहि ॥  
 लागि तृपा अतिसय अकुलाने । मिलइ न जल घन गहन भुलाने ॥  
 मन हनुमान कीन्ह अनुमाना । मरन चहत सब बिनु जलपाना ॥  
 चढ़ि गिरि सिलर चहुँ दिसि देखा । भूमि बिबर एक कौतुक पेखा ॥  
 चक्रवाक बक हंस उड़ाहीं । बहुतक खग प्रचिसहि तेहि माहीं ॥  
 गिरि तें उतरि पवनपुत्र आवा । सब कहुँ लेइ सोइ बिबर देखावा ॥  
 आगे कै हनुमंतहि लीन्हा । पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा ॥  
 दो०—दीख जाइ उषन बर सर बिगसितः बहु कंजः ।

मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तपपुंज ॥ २४ ॥  
 दूरि तें ताहि सयन्हि सिरु नावा । पूँछे निज वृत्तांत सुनावा ॥  
 तेहिं सब कहा करहु जल पाना । खाहु सुरस सुंदर फल नाना ॥  
 मज्जनु कीन्ह मधुर फल खाए । तासु निकट पुनि सब चलि आए ॥  
 तेहिं सब आर्पन कथा सुनाई । मै अब जाव जहाँ रघुआई ॥  
 मूँदहु नयन बिबर तजि जाह । पैहहु सीतहि जनि पविताह ॥  
 ननन मूँद पुनि देखहि बीरा । ठाढ़े सकल सिंधु के तीरा ॥  
 सो पुनि गई जहाँ रघुनाया । जाइ कमल पद नाएसि माथा ॥

१—प्र० : घन । दि० : प्र० [ (५७) : वन ] । [ २० : वन ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : बर सर बिगसित । दि० : प्र० । [ २० : वन सर बिगसित ] च० : मरविगसित तहँ ।

नाना भौंति विनय तेहिं कीन्ही । अनपायनी भगति प्रभु दीन्ही ॥

दो०—बदरीवन कहूँ सो गई प्रभु आज्ञा घरि सीस ।

उर घरि राम चरन जुग जे बंदत अज ईस ॥ २५ ॥

इहाँ विचारहिं कपि मन माहीं । बीती अवधि काजु कछु नाहीं ॥

सब मिलि कहहिं परस्पर याता । विनु सुधि लिए करम का आना १ ॥

कह अंगद लोचन भरि बारी । दुहूँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी ॥

इहाँ न सुधि सीता कै पाई । उहाँ गए मारिहि कपिराई ॥

पिता बधे पर मारत मोही । राखा राम निहोर न ओही ॥

पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं । मरन भएउ कछु संसय नाहीं ॥

अंगद बचन सुनत कपि बीरा । बोलि न सकहिं नयन बह नीरा ॥

छन एक सोच मगन होइ रहे । पुनि अस बचन कहत सब भए ॥

हम सीता कै सोध बिहीना । नहिं जइहहिं जुयराज प्रवीना २ ॥

अस कहि लवन सिंघु तट जाई । बैठे, कपि सब दर्भ डसाई ॥

जामवंत अंगद दुख देखी । कही कथा उपदेस विसेपी ॥

तात राम कहूँ नर जनि मानहु । निर्गुन ब्रह्म अजित अज जानहु ॥

हम सब सेवक अति बड़भागी । संतन, सगुन ब्रह्म अनुरागी ॥

दो०—निज इच्छा प्रभु अवतरइ ३ सुर महि गो द्विज लागि ।

सगुन उपासक संग तहूँ रहहिं मोच्छ सुख ४ त्यागि ॥ २६ ॥

येहि विधि कथा कहहिं बहु भौंती । गिरि कंदरा सुनी ५ संपाती ॥

बाहेर ६ होइ देखे ७ बहु कीसा । मोहि अहारु दीन्ह जगदीसा ॥

१—[ तू० में यह अपर्णाली नहीं है ] ।

२—[ तू० में यह तथा इसके पूर्व की तीन अपर्णालियाँ नहीं है ] ।

३—प्र० : प्रभु अवतरइ । दि० : प्र० [ (५) : प्रभु अवतरहिं ] । तू०, च० : प्र० ।

४—प्र० : सर । दि०, तू० : प्र० । च० : सुर ।

५—प्र० : सुनी । दि० : प्र० । [ तू०, च० : सुना ] ।

६—प्र० : बाहेर । दि० : प्र० [ (३) : बाहर ] । [ तू० : बाहिर ] । [ च० : बाहेरि ] ।

७—प्र० : देखि । दि० : प्र० । [ तू० : देखे ] । च० : तू० ।

आजु सचन्ह कहँ मच्छन करऊँ । दिन बहु चले अहार बिनु मरऊँ ॥  
 कबहुँ न मिलै भर उदर अहारा । आजु दीन्ह बिधि एकहि बारा ॥  
 ढरपे गीघ बचन सुनि काना । अब भा मरनु सत्य हम जाना ॥  
 कपि सब उठे गीघ कहँ देखी । जामवत मन सोच बिसेपी ॥  
 कह अंगद बिचारि मन माहीं । धन्य जटायू सम कोउ नाही ॥  
 राम काँज कारण तनु त्यागी । हरिपुर गएउ पाम बड़भागी ॥  
 सुनि खग हरष सोक जुत बानो । आवा निकट कपिन्ह भय मानी ॥  
 तिन्हहि अभय करि पूँछेसि जाई । कथा सरल तिन्ह ताहि सुनाई ॥  
 सुनि संपाति बधु कै करनी । रघुपति महिमा बहु बिधि बरनी ॥  
 दो०—मोहि लै जाहु सिंधु सट देउँ तिलाञ्जलि ताहि ।

बचन सहाय करबि मै पैहुहु खोजहु जाहि ॥ २७ ॥  
 कपि सब उठे गीघ कहँ देखी । जामवंत मन सोच बिसेपी ॥  
 अनुज क्रिया करि सागर तीरा । कहि निज कथा सुनहु कपि बीरा ॥  
 हम द्वौ बंधु प्रथम तरुनाई । गगन गए रवि निकट उड़ाई ॥  
 तेज न सहि सक सो फिर आवा । मै अभिनानी रवि निभरावा ॥  
 जरे पंख अति तेज अपारा । परेउँ भूमि करि घोर चिकारा ॥  
 मुनि एक नाम चंद्रमा ओही । लागी दया देखि करि मोही ॥  
 बहु प्रकार तेहि ज्ञान सुनावा । देह जनित अभिमान छड़ावा ॥  
 प्रेता ब्रह्म मनुज तनु धरिही । तासु नारि निसिचरपति हरिही ॥  
 तासु खोज पठइहि प्रभु दूता । तिन्हहि मिले तैं होब पुनीता ॥  
 जमिहहि पंख करसि जनि चिंता ॥ तिन्हहि देखाइ दिहेसु तैं सीता ॥  
 मुनि कै गिरा सत्य मइ आजू । सुनि मम बचन करहु प्रभु काजु ॥

१—[तु० में यह तथा इसके पूर्व की अध्यात्मिकी नहीं है] ।

२—[तु० में यह अध्यात्मिकी नहीं है] ।

३—प्र० : करि । दि० : प्र० । [तु० : अति] । च० : प्र० ।

४—प्र० : चिंता । दि० : प्र० । [तु० : चोला] । च० : प्र० ।

गिरि त्रिमूढ ऊपर बस लंका । तहँ रह रावन सहज असंका ॥  
तहँ असोक उपवन जहँ रहई । सीता बेठि सोच रत अहई ॥  
दो०—मै देखौ तुम्ह नाही<sup>१</sup> गीघहि दृष्टि अपार ।

वृद्ध भएउँ न त करतेउँ कछु सहाय तुम्हार ॥ २८ ॥  
जो नाघइ सत जोजन सागर । करइ सो राम काज मति आगर ॥  
मोहि बिलोकि घरहु मन धीरा । राम कृपा कस भएउ सरीरा ॥  
पापिउ जाकर नाम सुमिरहीं । अति अपार भव सागर तम्हीं ॥  
तासु दूत तुम्ह तजि कदराई । रामु हृदयँ धरि करहु उपाई ॥  
अस कहि उमा<sup>२</sup> गीघ जब गएऊ । तिन्ह केँ मन अति बिसमै भएऊ ॥  
निज निज बल सब काहू भापा । पार जाइ कर<sup>३</sup> समय राखा ॥  
जरठ भएउँ अब कहइ रिखेसा । नहिँ तन रहा प्रथम बल लेसा ॥  
जबहिँ त्रिविक्रम भए खरारी । तब मै तरन रहेउँ बल भारी ॥  
दो०—रलि बाँधत प्रसु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ ।

उभय धरी महँ दीन्ही<sup>४</sup> सात प्रदच्छिन धाइ ॥ २९ ॥  
अगद कहइ जाउँ मै पारा । जिअँ सभ्य कछु फिरती बारा ॥  
जामवत कह तुम्ह सज लायऊ । पठइअ किमि सबही कर नायक ॥  
कहइ रिखेस सुनहु<sup>५</sup> हनुमाना । का जुप साधि रहेउ बलवाना ॥  
पवनतनय बल पवन समाना । बुधि बिबेक बिज्ञान निधाना ॥  
करन सो फाजु कठिन जग माहीं । जो नहिँ होइ तात तुम्ह पाहीं ॥  
राम काज लागि तब अवतारा । सुनतहिँ भएउ पर्वताकारा ॥  
कनक बरन तन तेज विराजा । मानहु अपर गिरिन्ह कर राजा ॥  
सिंघनाद करि बारहिँ बारा । लीलहि नाघौ जलनिधि खारा ॥

१—प्र० : नाही । : दि० प्र० [ (५) : नाहि ] । [तु० : नाहिँन] । च० : प्र० ।

२—प्र० : गहड । दि०, तु० : प्र० । च० : उमा ।

३—प्र० . वै । दि० : प्र० । तु० : कर । च० : तु० ।

४—प्र० : दीन्ही । दि० : प्र० [ (५४) : दीन्हि मै ] । [तु० : दीन्हि मै] । च० : प्र० ।

५—प्र० : रीदपति सुनु । दि०, तु० : प्र० । च० : रिखेस सुनहु ।

सहित सहाय रावनहि मारी । आनौ इहाँ त्रिशूट उपारी ॥  
 जामवन मै पूथौ तोही । उचिन सिखावन दीजहु मोही ॥  
 एतना करहु तात तुह जाई । सोतहि दखि कहहु सुधि आई ॥  
 तन निज भुजवन राजिवनयना । कौतुक लागि सग कपि सेना ॥

छ०—कपि सेन सग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहै ।  
 त्रैलोक पावन सुजस सुर सुर मुनि नारदादि बखानिहै ॥

जो सुनत गावत कहत समुझन परम पद नर पावई ।  
 रघुवीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गावई ॥

दो०—भय भेषज रघुनाथ जम सुनहिं जे नर अरु नारि ।  
 तिह कर सनल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि ॥ ३० ॥

सो०—नीलोत्पल तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक ।  
 सुनिय तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक ॥

इति श्री रामचरितमानसे सकल कलि कलुषविध्वंसने विशुद्ध सन्तोष  
 संपादनो नाम चतुर्थ सोपान समाप्त ॥

१—प० श्री० ॥ १० ॥ प्र० ॥ [(५) वीरे] । [व० श्री०] च० प्र० ।

२—प० त्रिसिरारि । १० ॥ प्र० ॥ [(२)(४) त्रिसिरारि] । [व० त्रिसिरारि] । च० प्र० ।

श्रीगणेशाय नमः  
श्रीजानकीवल्लभाय नमः

# श्री राम चरित मानस

पं च म सो पा न  
सुंदर कांड

श्लो०—शात शङ्खतमप्रमेयप्रनघ निर्वाणः१ शक्तिप्रदं  
ब्रह्माशुमुक्तादिसेव्यमनिश वेदान्तरेच विभुं ।  
रामाख्य जगदीश्वर सुगुरु माशामनुज्य हरिं  
वन्देह करुणाकर रघुवर भूपालचूणामणिं ॥

नान्या स्पृहा रघुपते हृदयेस्मदीये सत्य वशमि च भवानखिलातगात्मा  
भक्तिप्रयच्छ रघुपुंगव निर्भरा मे कामादिदोषगर्हित कुरु मानस च ॥  
अतुलिततनधाम स्वर्णशेलामदेह दनुजवनकृशानु ज्ञानिनाममगण्य ।  
सकलगुणनिधान वानराणामधीशः२ रघुपतिवरदूत वातजात नमामि ॥  
जामवत के वचन सुहाए । सुनि हनुमन हृदयँ अति भाए ॥  
तब लागि मोहि परिखहु तुम्ह भाई । सहि दुख कद मूल फल खाई ॥  
जग लागि आगौं सीतहि देखी । होइहि३ काजु मोहि हरप निनेषी ॥  
अस रुहि नाइ सबन्हि कहें माथा । चलेउ हरपि हियँ घरि रघुनाथा ॥  
सिंधु तीर एक मूघर सुंदर । कौतुक कूदि चढ़ेउ ता ऊपर ॥  
वार वार रघुबीर सँभारी । तरकेउ पयनतनय वन भारी ॥

१—प्र० गीर्वाण । दि०, नृ० : प्र० । च० - निर्वाण ।

२—प्र०: होइहि । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) होइ । [नृ० होइ] । च०: प्र० [ (८) होइ ] ।



जेहि<sup>१</sup> गिरि चरन देइ हनुमंता । चनेउ<sup>२</sup> सो गा पापान तुरना ॥  
जिमि अमोघ रूपति कर बाना । येही<sup>३</sup> मोनि चला हनुमान ॥  
जलनिधि रूपति दूत बिचारी । तै भैनाक हंदि गमदारी ॥  
दो०—हनुमान तेहि परसा पर पुनि कीन्ह प्रनाम ।

राम काजु कीन्हें बिनु मोरि कहीं विनाम ॥ १ ॥  
जात पवनपुन देखन्ह देखा । जानइ कहु बन बुद्धि निनेगा ॥  
सुरसा नाम अहिन्ह के माता । पठइन्हि आई कही तेंहि बाना ॥  
आजु सुगन्ह मोहि दीन्ह अहारा । सुनत बचन कह पवनदुमारा ॥  
राम काजु करि फिरि मैं आर्यो । सीता के सुधि प्रमुहि सुनावौ ॥  
तन तुअ बदन पइठिहौ आई । सत्य कहौ मोहि जान दे माई ॥  
कबनेहु जतन देइ नहिं जाना । प्रससि न मोहि कहैउ हनुमाना ॥  
जोजन भरि तेहिं वदनु पसारा । कपि तनु कीन्ह दुगुन निम्नारा ॥  
सोरह जोजन मुख तेहि ठएक । तुरत पवनपुन बचिम भएऊ ॥  
जस जस सुरसा वदनु बड़ावा । तामु दून कपि रूप देखावा ॥  
सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा । अति लघु रूप पवनपुन लीन्हा ॥  
बदन पइठि पुनि बाहेर आवा । माँगा विदा ताहि सिरु नाया ॥  
मोहि सुरन्ह जेहि लागि पठावा । बुधि बल मरु तोर मैं पावा ॥  
दो०—राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान ।

आसिप देइ गई सो हरपि चलेउ हनुमान ॥ २ ॥  
निसिचर एऊ सिबु महुं रहई । करि माया नभ के खग गहई ॥  
जीव जतु जे गगन उड़ाहीं । जल बिलोकि तिन्ह के परिधाहीं ॥  
गहइ छौंइ सक सो न उड़ाई । येहि विधि सदा गगनचर खाई ॥

१—प्र० जेहि गिरि चरन देइ । दि० प्र० । [तु० जे गिरि चरन दीइ] । च० प्र० ।

२—प्र० चलेउ । दि० प्र० [तु० चलि] । च० प्र० ।

३—प्र० येही । दि० प्र० [१] (५५ वे०) । [तु० वेही] । [च० (६) योही, (-) वादी] ।

सोइ<sup>१</sup> बल हनुमान कहँ<sup>२</sup> कीन्हा । तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा ॥  
 ताहि मारि मारुतमु<sup>३</sup> वीरा । बारिधि पार गएउ मति धीरा ॥  
 तहाँ जाइ देखी वन सोभा । गुंजत चंचरीक मधु लोभा ॥  
 नाना तरु फल फूल सुहाए । खग मृग वृंद देखि मन भाए ॥  
 सैल चिसाल देखि एक आगे । तापर धाइ चढ़ेउ भय त्यागे ॥  
 उमा न कछु कपि कै अधिकारि । प्रभु प्रताप जो कालहि खाई ॥  
 गिरि पर चढ़ि लंका तेहि देखी । कहि न जाइ अति दुर्ग बिसेयी ॥  
 अति उत्तंग जलनिधि चहुँ पासा । कनककोट कर परम प्रकासा ॥  
 छं०—कनक कोट विचित्र मनिहुत सुंदरायतना<sup>१</sup> घना ।

चउहट्ट दट्ट सुवट्ट बीथी चारु पुरु बहु विधि बना ॥  
 गज बाजि खच्चर निरु पदचर रथ वरुगन्हि को गनै ।  
 बहु रूप निसिचर जूथ अति बल सेन वग्नत नहिं बनै ॥  
 वन बाग उपवन वाटिका सर कूप बापी सोइही ।  
 नर नाग सुर गंधर्व कन्या रूप मुनि मन मोहहीं ॥  
 कहँ माल<sup>१</sup> देह विसाल सैल समान अति बल गर्जहीं ।  
 नाना अक्षारेन्ह मिरहिं बहु विधि एक एकन्ह तर्जहीं ॥  
 करि जतन भट कोटिन्ह विकट तन नगर चहुँ दिसि रज्जहीं ।  
 कहँ महिष मानुष घेनु सर अज खल निसाचर भल्लहीं ॥  
 येहि लागि तुलसीदास इन्हकी कथा कछु एक है कही ।  
 रघुवीर सर तीरथ सरीरन्हि त्यागि गति पइहहिं सही ॥

दो०—पुर रखवारे देखि बहु कपि मन कीन्ह विचार ।  
 अति लघु रूप घरौ निसि नगर करौ पइसार ॥ ३ ॥

१—प्र० : सोइ । दि० : नृ० : प्र० । [च० : सो] ।

२—प्र० : कहँ । दि० : प्र० । [तृ० : ते] । च० : प्र० [(ते) : ते] ।

३—प्र० : सुंदरायतना । दि० : प्र० । [तृ० : सुंदरायत अति] । च० : प्र० ।

४—प्र० : माल । दि० : प्र० । [तृ० : मल] । च० : प्र० [(ते) : मल] ।

मसक समान रूप कपि धरी । भंछहि चलेउ मुभिरि नरही ॥  
 नाम लकिनी एक निसिनरी । सो कह चलेमि मोहि निंदरी ॥  
 जानेहि नहीं मायु सठ मोरा । मोर अहार जहाँ लगि चेरा ॥  
 मुठिका एक महाकपि हनी । रुधिर वमन<sup>१</sup> घरनी दगननी ॥  
 पुनि संभारि उठी सो लंछा । जोरि पानि कर चिनय ससछा ॥  
 जय रावनहि ब्रह्म वा दोन्हा । चनत विरंचि कहा मंहि चीन्हा ॥  
 शिक्ल होसि तैं<sup>२</sup> कपि कैं मारे । तव जानेयु निसिनर सरारे ॥  
 तात मोर अति पुन्य बहता । देखेउँ नयन राम कर दूता ॥

दो०—तात स्वर्ग अपवर्ग सुख परिअ तुला एक अंग ।

तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग ॥ ४ ॥  
 प्रविसि नगर कीजै सब काजा । हृदयँ राखि कोसलपुर राजा ॥  
 गरल सुधा रिपु करै मिताई । गोपद सिंधु अनल सितलाई ॥  
 गरुड़<sup>३</sup> सुमेरु रेनु सम ताही । राम कृपा करि चितवा<sup>४</sup> जाही ॥  
 अति लघु रूप धरेउ हनुमाना । पैठा नगर सुभिरि भगवाना ॥  
 मंदिर मंदिर प्रति करि सोधा । देखे जहँ तहँ अगनित जोधा ॥  
 गण्ड दसानन मंदिर माहीं । अति विचित्र कहि जात सो नाहीं ॥  
 सगन किए देखा कपि तेही । मंदिर महुँ न दीखि<sup>५</sup> बैदेही ॥  
 भवन एक पुनि दीख सोहावा । हरिमंदिर तहँ भिन्न बनावा ॥

दो०—रामायुध अंकित गृह सोभा वर्णन न जाइ ।

नव तुलसिछा<sup>६</sup> बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ ॥ ५ ॥

१—प्र० : वमन । दि० : व० । च० : प्र० [ (६) : वमन ] ।

२—प्र० : तैं । दि० : प्र० । [ व० : जब ] । प्र० [ (८) : जन ] ।

३—प्र० : गरुड । दि० : प्र० [ (५अ) : गरुड ] । [ व० : गरुड ] । च० : प्र० [ (८) : गरुड ] ।

४—प्र० : चितवा । दि० : प्र० । [ व० : चितवहि ] । च० : प्र० [ (८) : चितवहि ] ।

५—प्र० : दीखि । [ दि० : दीख ] । व० : प्र० । [ च० : दीख ] ।

६—प्र० : तुलसिछा । दि० : प्र० । [ व० : तुलसी के ] । च० : प्र० [ (८) : तुलसी के ] ।

लंका निसिचर निकर निवासा । इहाँ कहौं सज्जन कर बासा ॥  
 मन महुँ तरक करैं कपि लागा<sup>१</sup> । तेहीं समय बिभीषनु जागा<sup>१</sup> ॥  
 राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा । हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा ॥  
 येहि सनु हठि करिहौं पहिचानी । साधु ते होइ न कारज हानी ॥  
 बिप्र रूप धरि बचन सुनाए । सुनत बिभीषन उठि तहँ आए ॥  
 करि प्रनामु पूँछी कुसलाई । बिप्र कहहु निज कथा बुझाई ॥  
 की तुम्ह हरि दासन्ह महुँ कोई । मोरे हृदयँ प्रीति अति हाँई ॥  
 की तुम्ह रामु दीन अनुरागी । आएहु मोहिं करन बड़भागी ॥  
 दो०—सब हनुमंत कही सब राम कथा निज नाम ।

सुनत जुगल तन पुलक मन मगन सुमिरि गुनग्राम ॥ ६ ॥  
 सुनहु पवनसुत रहनि हमारी । जिमि दसनन्हि महुँ जीम बिचारी ॥  
 तात कबहुँ मोहि जानि अनाथा । करिहहि कृपा भानुकुल नाथा ॥  
 तामस तनु कछु साधन नाही । प्रीति न पद सरोज मन माहीं ॥  
 अब मोहि भा भरोस हनुमंता । बिनु हरि कृपा मिलहि नहि संता ॥  
 जौ रघुवीर अनुग्रह कीन्हा । तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा ॥  
 सुनहु बिभीषन प्रभु के रीती । करहि सदा सेवक पर प्रीती ॥  
 कहहु कवन मैं परम कुलीना । कपि चंचल सबही बिधि हीना ॥  
 प्रात लेइ जो नाम हमारा । तेहि दिन ताहि न मिलइ अहारा ॥  
 दो०—अस मैं अधम सखा सुनु मोहँ पर रघुवीर ।

कीन्ही कृपा सुमिरि गुन भरे बिलोचन नीर ॥ ७ ॥  
 जानतहँ अस स्वामि बिसारी । फिरहि ते काहे न होहि दुखारी ॥  
 येहि बिधि कहत राम गुनग्रामा । पावा अनिर्वाच्य विसामा ॥  
 पुनि<sup>२</sup> सब कथा बिभीषन कही । जेहि बिधि जनकसुजा तहँ रही ॥

१—प्र० : क्रमशः लागा, जागा । दि० : प्र० । [त० : लागे, लागे] । च० : प्र० ।

२—प्र० : पुनि । दि० : पुनि । च०, च० : दि० ।

तव हनुमंत कहा सुनु आता । देखी<sup>१</sup> नहों जानकी माता ॥  
 जुगुति निभीपन सफल सुनाई । चलेउ पन्नमुन बिदा फगई ॥  
 करि सोइ रूप गएउ पुनि तहवों । बन अमोठ सीना रह जहवों ॥  
 देखि मनहिं महं कीन्ह प्रनाम । बेटेहिं बेति जान निसि जाना ॥  
 कृततनु सीम जटा एक बेनी । जगनि हृदयें रघुपति गुन सोनी ॥  
 दो०—निज पद नयन दिए मन राम चरन<sup>२</sup> महं लीन ।

परम दुखी मा पवनमुन देखि जानकी दीन ॥ ८ ॥  
 तरु पल्लव महं रहा लुकाई । करइ विचार करौ का भाई ॥  
 तेहि अवसर रावनु तहँ आवा । सग नारि बहु किए बनावा ॥  
 बहु विधि खल सीतहि समुझावा । साम दान<sup>३</sup> भय भेद देखावा ॥  
 कह रावनु सुनु सुमुखि सथानी । मंदोदरी आदि सब रानी ॥  
 तव अनुचरीं करौ पन मोरा । एक बार बिलोकु मम ओरा ॥  
 तुन धरि ओट कहति वैदेही । सुमिरि अरुधपति परम सनेही ॥  
 सुनु दसमुख खद्योत प्रकासा । कबहुँ कि नलिनी करइ बिरासा ॥  
 अस मन समुकु<sup>४</sup> कहति जानकी । खल सुधि नहिं रघुवीर बान की ॥  
 सठ सूने हरि आनेहि मोही । अधम निलज्ज लाज नहिं तोही ॥  
 दो०—आपुहि सुनि खद्योत सम रामहिं । मानु समान ।

परष वचनसुनि काढ़ि असि बोला अति खिसिआन ॥ ९ ॥  
 सीता तै मम कृत अपमाना । कटिहौ तव सिर कठिन कृपाना ॥  
 नाहिं त सपदि मानु मम बानी । सुमुखि होति न त जीवन हानी ॥  
 स्याम सरोज दाम सम सुंदर । प्रभु भुज करि कर सम दसकंधर ॥

१—प्र० ॥ देखी । दि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : देवा ] । [ तु० : देवा ] । च० : प्र० [ (५) : देवा ] ।

२—प्र० : चरन महं । दि० : तु० : प्र० । [ च० : (६) कमल पद, (८) चरन लव ] ।

३—प्र० : दान । दि० : प्र० [ (५अ) : दान ] । [ तु० : दान ] । च० : प्र० [ (८) : दान ] ।

४—प्र० : समुकु । दि० : प्र० [ (५) (५अ) : समुकि ] । [ तु० : समुकि ] । च० : प्र० [ (८) : समुकि ] ।

सो भुज कुंठ कि तव असि घोरा । सुनु सठ अस प्रवान पन १ मोरा ॥  
चंद्रहास हरु मम परितापं । रघुपति बिरह अनल संजातं ॥  
सीतल निसि तव असि२ वर घारा । कह सोला हरु मम दुख भारा ॥  
सुनत बचन पुनि मारन घावा । मयननया कहि नीति दुष्कावा ॥  
कहेसि सकल निसिचरिन्ह वेलाई । सीतहि बहु विधि, त्रासहु जाई ॥  
मास दिवस महुं कहा न माना । तौ मै मारवि कादि कृपाना ॥  
दो०—भवन गएउ दसकंधर इहाँ पिसाचिनि वृंद ।

सीतहि त्रास देखावहिं धरहिं रूप बहु मंद ॥ १० ॥  
त्रिजटा नाम राक्षसी एका । राम चरन रति निपुन बिबेका ॥  
सबन्हौ बोलि सुनाएसि सपना । सीतहि सेइ करहु हित अपना ॥  
सपनें बानर लंका जारी । जातुघान सेना सब मारी ॥  
खर आरुढ़ नगन दससोसा । मुंडित सिर खंडित भुज बीसा ॥  
येहि विधि सो दच्छिन दिसि जाई । लंका मनहुं विभीषन पाई ॥  
नगर किरी रघुवीर दोहाई । तव प्रभु सीता३ बोलि पठाई ॥  
येह सपना मै कहौ पुकारी । होइहि सत्य गएँ दिन चारी ॥  
तासु बचन सुनि ते सब डरीं । जनकसुता के चरनन्हि परीं ॥

दो०—जहँ तहँ गईं सकल तव सीता कर मन सोच ।

मास दिवस बीते मोहि मारिहि निसिचर पोच ॥ ११ ॥  
त्रिजटा सन बोलीं कर जोरी । मातु विपति संगिनि तहँ मोरी ॥  
तजौं देह करु बेगि उपाई । दुसह बिरहु अथ नहि सहि जाई ॥  
आनि फाठ रचु चिता बनाई । मातु अनल पुनि देहि लगाई ॥  
सत्य करहि मम प्रीति सयानी । सुनइ को सवन रूल सम बानी ॥

१—प्र० : मन । दि० : पन । वृ० : च० : दि० ।

२—प्र० : निसि तव असि । दि० : प्र० । [ वृ० : निसि तव असि ] । च० : प्र० [ (६) : निसि तव असि ] ।

३—प्र० : सीता । दि० : प्र० । [ वृ० : सीतहि ] । च० : प्र० [ (८) : सीतहि ] ।

सुनत बचन पद गहि समुष्माणमि । प्रमु प्रनाप वन मुजप मुनापसि ॥  
 निसि न अनन मिल सुनु सुनुमारी । अस कहि सो निज भग्न सिधारी ॥  
 कह सीता विधि भा प्रतिकूला । बिलहि नपावक मिटिहि न सूना ॥  
 देखिअत प्रगट गगन अगारा । अवनि न आवन पकै ताग ॥  
 पावकमय ससि सरत न आगी । मानहु मोहि जानि हनभागी ॥  
 सुनहि बिनय मम विष्टप असोका । सत्य नाम उरु हरु मम सोका ॥  
 नूतन विसलय अनन समाना । देहि अगिनितार करहि निदाना ॥  
 देखि परम बिहाउल सीता । सो दन कपिहि कल्प सम बीता ॥  
 सो०—कपि करि हृदयँ विचार दीन्हि मुद्रिका डारि तप ।  
 तब देखी मुद्रिका मनोहर । राम नाम अकित अति सुंदर ॥ १२ ॥  
 चरित चितव मुदरी पहिचानी । हरप विषाद हृदयँ अकुलानी ॥  
 जीति को सगइ अजय रघुआई । माया तँ असि रचि नहि जाई ॥  
 सीता मन विचर कर नाना । मधुर बचन बोलेउ हनुमाना ॥  
 रामचंद्र गुन बरने लागा । सुनहि सीता कर दुख भागा ॥  
 लागीं सुनै लयन मन लाई । यदिहुँ तें सब कथा सुनाई ॥  
 लवनामृत जेहि कथा सुहाई । कही१ सो प्रगट होति निन भाई ॥  
 तब हनुमत निकट चलि गएऊ । फिरि बेठी मन विसमय भएउ ॥  
 राम दूत मै मातु जनकी । सय सपथ करुनानिधान की ॥  
 येह मुद्रिका मातु मै आनी । दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी ॥  
 नर बानरहि सग कहु कैरों । कही कथा भइ सगति जैसे ॥  
 दो०—कपि के बचन सप्रेम सुनि उपजा मन बिस्वास ।  
 जाना मन कम बचन येह कृपासिधु कर दास ॥ १३ ॥

१—प्र० : तन । दि० : प्र० [ (३) (१) : बनि ] । वृ० : प्र० । [ १० : जनि ] ।  
 २—प्र० : वही । दि० : प्र० [ (३) (४) (१५) : वनि ] । वृ० : वनि ] च० : प्र० ।

हरिजन जानि प्रीति अति बाढ़ी । सजल नयन पुनकावलि ठाढ़ी ॥  
 वृद्धत विरह जलधि हनुमाना । मण्डु तात मो कहूँ जलजाना ॥  
 अब बहु कुसल जाउँ बलिहारी । अनुज सहित सुखभवन खरारी ॥  
 कोमल चित्र कृष्णलु रघुराई । कपि केहि हेतु धरी निठुराई ॥  
 सहज बानि सेवक सुख दायक । कबहुँ सुख करत रघुनायक ॥  
 कबहुँ नयन मम सीतल ताता । होइहहिं निरखि ग्याम मृदु गाता ॥  
 वचन न आव नयन भरे बारी । अहह नाथ हौं निपट बिसारी ॥  
 देखि परम विरहाकुल सीता । बोला कपि मृदु वचन विनीता ॥  
 मातु दुसल प्रभु अनुज समेता । तव दुख दुखी सु कृपानिकेता ॥  
 जनि जननी मानहु जिअँ ऊना । तुम्ह तें प्रेम राम कै दूना ॥  
 दो०—रघुपति कर सदेसु अब सुनु जननी धरि धीर ।

अस कहि कपि गदगद भएउ भरे बिलोचन नीर ॥ १४ ॥  
 पहैउ राम विद्योग तव सीता । मोरुहुँ सकल भर बिपरीता ॥  
 नव तरु किसलय मनहुँ कृसानू । कालनिसा सम निसि ससि भानू ॥  
 कुबलय विपिन कुंज वन सरिसा । बारिद तपत तेल जनु बरिसा ॥  
 जे हित रहे करत तेइ पीरा । उरग स्वास सम त्रिविध समीरा ॥  
 कहेह तें कछु दुख घटि होई । काहि कहौं येह जान न कोई ॥  
 तत्त्व प्रेम कर मम अरु तोरा । जानत प्रिया एकु मनु मोरा ॥  
 सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं । जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं ॥  
 प्रभु संदेसु सुनत बैदेही । मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही ॥  
 कह कपि हृदय धीर घर माता । सुमिरु राम सेवक सुखदाता ॥  
 उर थानहु रघुपति प्रभुताई । सुनि मम वचन तजहु कदराई ॥

१—प्र० : भरे । [ दि, सु० : भरि ] । च० : प्र० [ (८) : वह ] ।

२—प्र० : जे दिन । [ दि० : जेदि तरु ] । [ न० : जेदि तर ] । च० : प्र० [ (८) : जेदि तर ] ।



दो०-निसिचर निरर पतग सम रघुपति बान गृमानु ।  
 जननी हृदयँ धीर धरु जरे निगाचर जानु ॥ १५ ॥  
 जो रघुवीर होति मुधि पाई । फरते नहि बिलबु रघुगई ॥  
 राम बान रवि उरँ जानकी । तम बरुथ फहँ जातुधान की ॥  
 अबहिं मातु मै जाउँ लवाई । प्रसु आयेमु नहि राम दोरई ॥  
 कछुक दिवस जननी धरु धीग । कपिन्ह सहित अइहहिं रघुवीरा ॥  
 निसिचर मारि तोहि लै जइहहिं । तिहु पुर नारादि जमु गइहहिं ॥  
 है सुत कवि सन तुम्हहिं समाना । जानुधान अति मत् बलभना ॥  
 मोरँ हृदयँ परम सदेहा । मुनि कपि प्रगट कीन्हि निज देहा ॥  
 कनक मूधारार सरीरा । समर भयकर अति बलवीरा ॥  
 सीता मन भोस तव भएऊ । पुनि लघु रूप पनयुत लएऊ ॥  
 दो०-सुनु माता साखामृग नहिं बल बुद्धि विमाल ।  
 प्रसु प्रतप तैं गरुड़हिं खाइ परम लघु व्यान ॥ १६ ॥  
 मन सनोप सुनत कवि बानी । भगनि प्रनाप तेज बल सानी ॥  
 आसिप दीन्हि राम प्रिय जाना । होहु तात बल सोल निधाना ॥  
 अजर अमर गुननिधि सुत होह । करहु बटुन रघुनायक छोह ॥  
 करहुँ कृपा प्रसु अस सुनि काना । निर्भर प्रेम मगन हनुमाना ॥  
 बार बार नाएसि पद सीसा । बोला बचन जोरि कर कीसा ॥  
 अब वृत्तद्वय भएउँ मै माता । आसिप तव अमोघ विख्याता ॥  
 सुनहु मातु मोहि अतिसय भूला । लागि देखि सुंदर फल हूला ॥  
 सुत सुत वरहिं बिपिन रखवारी । परम सुभट रजनीवर धारी ॥  
 तिन्ह कर मय माता मोहि नाही । जौ तुम्ह सुख मानहु मन माही ॥

१-प्र० ॥ साखामृग । दि० : प्र० । [ व० ॥ साखामृगदि ] । च० : प्र० [ (८) :  
 साखामृगदि ]

२-प्र० : मगन । दि० प्र० । [ व० : हरप ] । च० : प्र० ।

३-प्र० : बारी । दि०, व० . प्र० । च० : धारी ।

दो०—देखि बुद्धि बल निपुन ऋषि रहेउ जानकी जाहु ।

रघुपति चरन हृदय धरि तात मधुर फल खाहु ॥ १७ ॥  
चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा । फल खाएसि तरु तौरै लागा ॥  
रहे तहाँ बहु भट रखवारे । कुछु मारेसि न्ह्यु जाइ पुकारे ॥  
नाथ एक आवा कपि भारी । तेहि असोक वाटिका उजारी ॥  
खाएसि फल अरु चिटप उपारे । मृदक मर्दि मर्दि महि हारे ॥  
सुनि रावन पठए भट नाना । तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना ॥  
सब रजनीचर कपि सघारे । गए पुनारत कछु अधमारे ॥  
पुनि पठएउ तेहि अक्ष कुमारा । चला सग ले सुभट अपारा ॥  
आवत देखि चिटप गहि तर्जा । ताहि निपाति महा घुनि गर्जा ॥  
दो०—कछु मारेसि कछु मर्देसि कछु मिलयेसि धरि धूरि ।

कछु पुनि जाइ पुनारे प्रभु मर्कट बल भूरि ॥ १८ ॥  
सुनि सुन बध लकेस रिसाना । पठएसि मेघनाद बलवाना ॥  
मारेसि जानि सुन बाँधेसु ताही । देखिअ कपिहि कलँ कर आही ॥  
चना इद्रजित अतुलित जेघा । बधु निधन सुनि उपजा कोधा ॥  
कपि देखा दारन भट आवा । कटकाइ गर्जा अरु धावा ॥  
अति तिसाल तरु एक उपारा । बिरथ कीन्ह लकेम कुमारा ॥  
रहे महा भट ताकै सगा । गहि गहि कपि मर्दइ निज अगा ॥  
तिन्हहि निपाति ताहि सन बाजा । मिरे जुगल मानहुँ गजराजा ॥  
मुठिसा मारि चढा तरु जाई । ताहि एक ध्वन मुरझा आई ॥  
उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया । जीति न जाइ प्रमजनजाया ॥  
दो०—ब्रह्म अस्त्र तेहि साधा कपि मन कीन्ह चिचार ।

। जौ न ब्रह्म सर मानौ महिमा मिटइ अपार ॥ १९ ॥  
ब्रह्मचान कपि कहूँ तेहि मारा । परतिहुँ बार कटकु संघारा ॥  
तेहि देखा कपि मुरुखित भएऊ । नागपास बाँधेसि ले गएऊ ॥  
जासु नाम जपि सुनहु मरानी । भवबधन कार्यहि नर ज्ञानी ॥

तामु दूत कि बंध तर आवा । प्रभु कारज लागि कपिहि बँधावा ॥  
 कपि बधन सुनि निसिचर धाए । कौतुक लागि सभा सब आए ॥  
 दसमुख सभा दीखि कपि जाई । कहि न जाइ कछु अति प्रभुनाई ॥  
 कर जोरें सुर दिसिप विनीता । भृकुटि बिलोक्त सकल सभिता ॥  
 देखि प्रताप न कपि मन संका । जिमि अहिगन महुं गरुड़ असंका ॥  
 दो०—कपिहि बिलोकि दसानन बिहँसा कहि दुर्वाद ।

सुन बच सुगति कीन्ह पुनि उपजा हरय विपाद ॥ २० ॥  
 कह लहेस कवन तहँ कीमा । केहि कै बल घालेस बन खीसा ॥  
 की घौ श्रमन सुने नहिं मोही । देखौ अति असंक सठ तोही ॥  
 मारे निसिचर केहि अपगवा । फहु सठ तोहि न प्रान कै बाधा ॥  
 सुनु रावन ब्रह्मांड निकाया । पाइ जासु बल विरचति माया ॥  
 जाकें बन विरंचि हरि ईसा । पालन सृजन हरत दससीसा ॥  
 जा बन सीस धरत सहसानन । अंडकोप समेत गिरि कानन ॥  
 धाइ जो विविध देह सुरात्राता । तुम्ह से सठन्ह सिखावनु दाता ॥  
 हर कोदंड फठिन जेहि भंजा । तोहि समेत नृप दल मद गजा ॥  
 खर दूपन त्रिसिरा अरु बाली । बधे सकल अतुलित बलसाली ॥  
 दो०—जा कै बल लबलेस तैं जितेहु चराचर मारि ।

तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि ॥ २१ ॥  
 जानौ मैं तुम्हारि प्रभुताई । सहसबाहु सन परी लराई ॥  
 सपर बालि सन करि जमु पावा । सुनि कपि बचन बिहँसि बहरावा ॥  
 खाण्डे फन प्रभु लागी भूखा । कपि सुभाव ते तोरेउँ रूखा ॥  
 सब कें देह परम प्रिय स्वामी । मारहि मोहि कुमारगामी ॥  
 जिन्ह मोहि मारा ते मैं मारें । तेहि पर बाँधेउ तनयें तुम्हारे ॥  
 मोहि न बछु बाँधे कइ लाजा । कीन्ह चहैं निज प्रभु कर दजा ॥

बिनती करौं जोरि<sup>१</sup> कर रावन । सुनहु मान तजि मोर सिखावन ॥  
देखहु तुम्ह निज कुलहि विचारी । अम तजि भजहु भगत भयहारी ॥  
आ के<sup>२</sup> डर अति काल डेराई । जो सुर असुर<sup>३</sup> चराचर खाई ॥  
ता सौं बपरु कबहुं नहिं कोजै । मोरें बहैं जानकी दीजै ॥  
दो०—प्रनृपाल रघुनायक करुनासिंधु खरारि ।

गएँ सरन प्रसु राखहैं<sup>४</sup> तव अपराध विसारि ॥ २२ ॥  
राम चरन पकज उर धरहू । लंका अचल राजु तुम्ह करहू ॥  
रिपि पुलस्ति जसु विमल मयंका । तेहि ससि महुं जनि होहु फलका ॥  
राम नाम बिनु गिरा न सोहा । देखु विचारि त्यागि मद मोहा ॥  
बसनहीन नहिं सोह सुरारी । तव मूपन भूषित बर नारी ॥  
राम विमुख संपति, प्रसुताई । जाइ रही पाई बिनु पाई ॥  
सजल<sup>५</sup> मूल जिन्ह सरितन्ह नाहीं । बरपि गएँ पुनि तबहिं सुखाहीं ॥  
सुनु दसकंठ कहौं पन रोपी । विमुख राम व्रता नहिं कोपी ॥  
संकर सहस बिष्नु अज तोही । सद्धहिं न राखि राम कर द्रोही ॥  
दो०—मोह मूल बहु मूलप्रद त्यागहु तम अभिमान ।

भजहु राम रघुनायक कृपासिंधु भगवान ॥ २३ ॥  
जदपि कही कपि अति हित बानी । भगति विवेक<sup>६</sup> बिरति नय सानी ॥  
बोला बिहंसि महा अभिनानी । मिला हमहिं कपि गुर बड़ ज्ञानी ॥  
मृत्यु निकट आई खल तोही । लागेसि अधम सिखावन मोही ॥  
उलटा होइहि कह हनुमाना । मतिग्रम तोहि<sup>७</sup> प्रगट मैं जाना ॥  
सुनि कपि बचन बहुत खिसियाना । बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना ॥  
सुनत निसाचर मारन धाए । सचिवन्ह सहित बिभीषन आए ॥

१—प्र० : असुर । द्वि०, तृ० : । च० : प्र० [ (६) : अचर ] ।

२—प्र० : राखिई । द्वि०, तृ० : प्र० । [ च० : (६) राखिहि, (८) राखिरहि ] ।

३—प्र० : सरन । द्वि० : प्र० [ (५) (५अ) : सनन ] । तृ० : सजल । च० : तृ० ।

४—प्र० : तोहि । द्वि० : प्र० [ (४) : तोर ] । [ तृ० : तोर ] । च० : प्र० ।

नाइ सीस करि बिनय बहता । नीनि बिगोष न मागिअ दुता ॥  
 आन दढ कछु करिअ गोसाईं । सगही कहा मंत्र मन भाई ॥  
 सुनत बिहँसि बोला दसकंधर । अग भंग करि पठइअ बंदर ॥  
 दो०—एपि कैं गमता पूँछ पर सगहिं कसौ १ समुझाइ ।  
 तेल बोरि पठ बोधि पुनि पावक देहु लगाइ ॥ २४ ॥

पूँछहीन बानर तहँ २ जाइहि । तब सठ निज नाथहि लइ आइहि ॥  
 जिन्ह के कीन्हसि बहुत बड़ाई । देखौ मै तिन्ह के प्रमुनाई ॥  
 बचन सुनत कपि मन मुमुक्षुना । मइ सहाय सारद मै जाना ॥  
 जातुधान सुनि रावन बचना । लागे रचै गूढ़ सोइ रचना ॥  
 रहा न नगर वसन घृत तेला । बाढ़ी पूँछ कीन्ह कपि तेला ॥  
 कैतुक कहँ आए पुरवासी । मारहिं चरन करहिं बहु हौंसी ॥  
 बाजहिं ढोल देहिं सय तारी । नगर केरि पुनि पूँछ पजारी ॥  
 पावक जरत देखि हनुमता । मपउ परम लघु रूप तुरंता ॥  
 निब्रुकि चढ़ै कपि बनक अटारी । मइं समीत निसाचर नारी ॥  
 दो०—हरि प्रेरित तेहि अवसर चले मरुन उनचास ।  
 अट्टहास करि गर्जा कपि बड़ि लाग अफाम ॥ २५ ॥

देह बिसाल परम हरुआई । मंदिर तें मंदिर चढ़ धाई ॥  
 जरइ नगर भा लोग बिहाला । भूपट १ लपट बहु कोटि कराला ॥  
 तात मातु हा सुनिअ पुकारा १ येहि अवसर को हमहि उबारा ॥  
 हम जो कहा येह कपि नहिं होई । बानर रूप धरें सुर कोई ॥  
 साधु अवज्ञा कर फल ऐसा । जरइ नगर अनाध कर जैसा ।  
 जारा नगर निमिष एक माहीं । एक बिमोपन कर गृह नाहीं ॥

१—प्र० : बहयो । दि० : प्र० । [ तु० : बहा ] । [ १० : बरी ] ।  
 २—प्र० : तह । दि० : प्र० । [ तु० : जब ] । च० : प्र० [ (८) : जब ] ।  
 ३—प्र० : मपट । दि० : प्र० । [ तु० : दपट ] । च० : प्र० ।

ताऊर दूत अनल जेहि सिरिजा । अरा न सो तेहि कारन गिरिजा ॥  
उलटि पलटि लंका सब जारी । कृदि परा पुनि सिंधु मझारी ॥  
दो०—पूछ बुझाइ खोइ सम धरि लघु रूप बहोरि ।

जनकसुता केँ आगेँ ठाढ़ भएउ कर जोरि ॥ २६ ॥  
मातु मोहि दीजै किछु चीन्हा । जैसेँ रघुनायक मोहि दीन्हा ॥  
चूड़ामनि उतारि तब दएऊ । हरप समेत पवनमुत लएऊ ॥  
कहेउ तान अस मोर प्रनामा । सब प्रकार प्रभु पूरन कामा ॥  
दीन दयाल बिरिदु<sup>१</sup> संमारी । हरहु नाथ मम संकट भारी ॥  
तात सकसुन कथा सुनाएहु । बान प्रताप प्रभुहि समुझाएहु ॥  
मास दिवस महँ नाथु न आवा<sup>२</sup> । तौ पुनि मोहि जिअत नहिँ पावा<sup>३</sup> ॥  
कहु कपि केहि बिधि राखौ प्राणा । तुम्हहँ तात कहत अब जाना ॥  
तोहि देखि सीतल भइ छाती । पुनि मो कहँ सो दिनु सो राती ॥  
दो०—जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह ।

चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिँ कीन्ह ॥ २७ ॥  
चलत महा धुनि गजेंसि भारी । गर्भ सबहिँ सुनि निसिचर<sup>४</sup> नारी ॥  
नाघि सिंधु येहि पारहि आवा । सबद किलकिला कपिन्ह सुनावा ॥  
हरपे सब बिलोकि हनुमाना । नूतन जनम कपिन्ह तब जाना ॥  
मुख प्रसन्न तन तेज बिराजा । कीन्हेसि रामचंद्र कर काजा ॥  
मिले सकल अति भए सुखारी । तलफत मीन पाव जनु<sup>४</sup> बारी ॥  
चले हरपि रघुनायक पासा । पूछत कहत नवल इतिहासा ॥  
तब मधुवन भीतर सब आए । अंगद संमत मधुफल खाए ॥  
रखवारे जब बरजइ लागे । मुष्टि प्रहार हनत सब भागे ॥

१—प्र० : बिरिदु । [ दि०, तु० : निरद ] । [ च० : (६) बिहद, (९) निरद ] ।

२—[प्र० : कमरा : आवै, पावै] । दि० : आना, पावा । [तु० : आवै, पावै] । च० : दि० ।

३—प्र० : सुनि निसिचर । दि० : प्र० । [ तु० : रजनी घर ] । च० : प्र० ।

४—प्र० त्रिभि । दि० : प्र० । तु० : जनु । च० : तु० ।

दो०—जाइ पुकारे ते सब बन उजार जुवराज ।

सुनि सुग्रीव हरष कपि करि आए प्रभु काज ॥ २८ ॥  
जौ न होति सीता सुधि पाई । मधुवन के फल सहिं किं खाई ॥  
येहि विधि मन विचार कर राजा । आइ गए कपि सहित समाजा ॥  
आइ सनन्हि नाया पद सीसा । मिलेउ सनन्हि अति प्रेम<sup>१</sup> करीसा ॥  
पूँछी कुसल कुसल पद देखी । राम कृपाँ भा काजु बितेपी ॥  
नाथ काजु कीन्हैउ हनुमाना । राखे सकल कपिन्ह के प्राणा ॥  
सुनि सुग्रीव बहुरि तेहि मिलेऊ । कपिन्ह सहित रघुपति पहिं चलेऊ ॥  
राम कपिन्ह जव आवत देखा । फिँएँ काजु मन हरष बिसेपा ॥  
फटिक सिला बैठे द्वौ भाई । परे सकल कपि चरनन्हि जाई ॥

दो०—प्रीति सहित सब भेंटे रघुपति कसनापुंज ।

पूँछी कुसल नाथ अब कुसल देखि पद कज ॥ २९ ॥  
जामवन कह सुनु रघुराया । जापर नाथ करहु तुम्ह दाया ॥  
ताहि सदा सुम कुसल निरंतर । सुर नर मुनि प्रसन्न ता ऊपर ॥  
सोइ विजयी बिनयी गुन सागर । तासु सुजसु त्रैलोक्य उजागर ॥  
प्रभु की कृपा भएउ सब काजू । जन्म हमार सुफल भा आजू ॥  
नाथ पवनसुत कीन्हि जो करनी । सहसहु मुख न जाइ सो बरनी ॥  
पवनतनय के चरित सुहाए । जामवन रघुपतिहि सुनाए ॥  
सुनत कृपानिधि मन अति भाए । पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए ॥  
कहहु तात केहि भौंति जानकी । रहति करति रच्छा स्वप्न की ॥  
दो०—नाम पाहरू राति दिनु<sup>२</sup> ध्यान तुम्हार कपाट ।

लोचन निज पद जत्रित जाहि प्राण केहि बाट ॥ ३० ॥  
चलन मोहि चुड़ामनि दीन्ही । रघुपति हृदयँ लाइ सोइ लीन्ही ॥  
नाथ जुगल लोचन फिर बारी । कचन कहे कहु जनकपुरी ॥

१—प्र० : प्राप्ति । दि० : प्र० । नृ० : प्रेम । च० : पु० ।

२—प्र० : राति दिनु । दि० : प्र० [(०) : दिवस निमित्त] । नृ० : प्र० । [च० : दिवस निमित्त] ।

अनुज समेत गहेहु प्रभु चरना । दीनबंधु प्रनतारति हरना ॥  
मन क्रम वचन चरन अनुरागी । रेहिं अपगध नाथ हौ त्यागी ॥  
अमगुन एक भोर मै माना । त्रिछुगत प्रान न कीन्ह पयाना ॥  
नाथ सो नयनन्हि नर अपराधा । निमरन प्रान कर्हिं हठि १ राधा ॥  
विरह अगिनि तनु तूल समीरा । स्वास जगइ छन माहिं सरीरा ॥  
नयन सबहिं जलु निच हिन लागी । जगइ न पाव देह विरहागी ॥  
मीता कै अति निषनि प्रिसाला । निनहि कहे भलि दीनदयाला ॥  
दो०—निमिष निमिष करुनानिधि २ जहिं कलप सम वीति ।

बेगि चलिअ प्रभु आनिअ मुज यल खल दल जीति ॥ ३१ ॥  
सुनि सीता दुख प्रभु सुखययना । भरि आप ज्ञन राजिव नयना ॥  
बचन काय मन मम गति जाही । सपनेहुं वृक्षिअ निषनि कि साही ॥  
फह हनुमत प्रगति प्रभु सोई । जय तव सुमिरन भजन न होई ॥  
केतिकु बान प्रभु जातुधान की । रिपुहि जीति आनिनी ज्ञानकी ॥  
सुनु कपि तोहि समान उपकारी । नहिं कोउ सुर नर मुनि तनुधारी ॥  
प्रतिउपकार करौ का तोरा । सनमुख होइ न सक्त मन मोरा ॥  
सुनु सुत तोहि उरिन मैं नाही । देखेउं नर विचार मन माहीं ॥  
पुनि पुनि कपिहि चित्रव सुत्रावा । लोचन नीर पुलक अति गाता ॥  
दो०—सुनि प्रभु बचन निनोकि मुख गात हरषि हनुमंत ।

चरन परेउ प्रेमाकुल आहि आहि भगवत ॥ ३२ ॥  
बार बार प्रभु चहैं उठावा । प्रेम मगन तहि उठन न भावा ॥  
प्रभु नर पकज कपि कैं सीमा । सुमिरि सो दसा मगन गौरीमा ॥  
सावधान मन करि पुनि सकर । लागे कहन कथा अति सुंदर ॥  
कपि उठाइ प्रभु हृदय लगावा । कर गहि परम निकट चैठावा ॥

१—प्र०, दि०, नृ०, च० हठि [ (२) इति ] ।

२—प्र० कराना वि । दि०, प्र० । [ नृ० : कर्मावतन ] । ७० प्र० [ (२) ,  
कर्मावतन ] ।



## श्री राम चरित मानस

कहु कपि रावन पालित लंका । केहि विधि दहेहु दुर्ग अति वंका ॥  
 प्रभु प्रसन्न जाना हनुमाना । बोला वचन बिगत अभिमाना ॥  
 साखामृग कै बड़ि मनुसाई । साखा ते साखां पर जाई ॥  
 नौघि सिंधु हाटकपुर जारा । निसिचर गन बधि विपिन उजारा ॥  
 सो सब तव प्रताप रघुसाई । नाथ न कबूँ मोरि प्रभुसाई ॥  
 दो०—ता कहें प्रभु अगम नहि जा पर तुम्ह अनुकुल ।

ताव प्रभावरे बड़वानलहि जारि सङ्ग खलु तूल ॥ ३३ ॥  
 नाथ भगति अति सुखदायनी ॥ देहु कृपा करि अनपायनी ॥  
 सुनि प्रभु परम सरल कपि बानी । एवमस्तु तव कहेउ भवानी ॥  
 उमा राम सुभाउ जेहि जाना । ताहि भजनु तजि भाव न आना ॥  
 येह संवाद जासु उर आवा । रघुपति चरन भगति सोइ पावा ॥  
 सुनि प्रभु वचन कहहि कपिष्टंदा । जय जय जय कृपाल सुखकंदा ॥  
 तव रघुपति कपिपतिहि बोलावा । कहा चलइ कर करहु बनावा ॥  
 अब बिलवु केहि कारन कीजै । तुरत कपिन्ह कहें आयेसु दीजै ॥  
 कौतुक देखि सुमन बहु बरपी । नभ तें भवन चले सुर हरपी ॥  
 दो०—कपिपति बेगि बोलाए आए जूथप जूथ ।  
 नाना बरन अतुल बल बानर भालु बरूथ ॥ ३४ ॥  
 प्रभु पद पंज नावहिं सीसा । गर्जहिं भालु महाबल कीसा ॥  
 देखी राम सरल कपि सेना । चितइ कृपा करि राजिव नयना ॥  
 राम कृपा बल पाइ कपिंदा ॥ मए पच्छजुत मनहुं गिरिंदा ॥

१—प्र० : वट । दि० : प्र० । [ वृ० : वलुक ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : प्रभाव । दि० : प्र० । [ (१) (४) (५) प्रताप ] । [ वृ० : प्रताप ] । च० : प्र० ।  
 [ (८) प्रताप ] ।

३—प्र० : भगवतः अति सुखदायनी, अनपायनी । दि० : प्र० । [ वृ० : तव अति सुखदायनि,  
 सो अनपायनि ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : प्रभु । दि० : प्र० । [ वृ० : कपि ] । च० : प्र० ।

५—[ प्र० : भगवतः कपीश, गिरिदा । दि० : कपिदा, गिरिदा । वृ० : दि० । च० : प्र० ।  
 [ (६) : कपीश, गिरिदा ] ।

हरपि राम तब कीन्ह पयाना । सगुन भए सुंदर सुम नाना ॥  
जासु सकल मंगलमथ कीती<sup>१</sup> । तासु पयान सगुन येह नीती ॥  
प्रभु पयान जाना बैदेहीं । फरकि वाम अँग जनु कहि देहीं ॥  
जोइ जोइ सगुन जानकिहि होई । असगुन भरउ रावनहि सोई ॥  
चला कटकु को चानइ पारा । गर्जहि चानर भालु अपारा ॥  
नख आयुध गिरि पादप घारी । चले गगन महि इच्छाचारी ॥  
केहरि नाद भालु कपि करहीं । डगमगाहिं दिग्गज चिक्करहीं ॥

छं०—चिक्करहिं दिग्गज डोल महि गिरि लोल सागर खरभरे ।

मन हरप दिनकर सोम सुर मुनि नाग छिन्नर दुख टरे ॥

कटकटहिं मर्कट बिकट भट बहु कोटि कोटिन्ह धावहीं ।

जय राम प्रबल प्रताप कोसलनाथ गुन गन गावहीं ॥

सहि सक न भार उदार<sup>२</sup> अहिपति बार बारहिं मोहई<sup>३</sup> ।

गह दसन पुनि पुनि कमठ पृष्ठ कठोर सो किमि सोहई ॥

रघुवीर रुचिर पयान प्रस्थिति जानि परम सुहावनी ।

जनु कमठ खर्पर सर्पराज सो लिखत अविचल पावनी ॥

दो०—येहि विधि जाइ कृपानिधि उतरे सागर तीर ।

जहँ तहँ लागे खान फल भालु विपुल कपि वीर ॥ ३५ ॥

उहाँ निसाचर रहहिं ससंका । अब ते जारि गएउ कपि लंका ॥

निज निज गृहँ सब करहिं विचारा । नहि निसिचर कुल केर उबारा ॥

जासु दूत बंश वरनि न जाई । तेहि आँ पुर कवन भलाई ॥

दूतिन्ह सन सुनि पुगजन बानी । मंदोदरी अधिक अकुलानी ॥

रहसि जोरि कर पति पद लागी । बोली वचन नीति रस पागी ॥

१—प्र० : कीती । द्वि० : प्र० । [ तृ० : रीती ] । च० : प्र० [ (८) : रीती ] ।

२—प्र० : उदार । द्वि० : प्र० । [ तृ० : अपार ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : मोहई । द्वि० : प्र० [ (५) : बार विमोहई ] । तृ० : प्र० । च० : प्र० [ (८) : बार विमोहई ] ।

कंत करप हरि सन परिहृह । मोर कहा अति हित हियँ धरह ॥  
 समुझत जासु दूत कइ करनी । खवहिं गर्भ रजनीचर धरनी ॥  
 तासु नारि निज सचिव बोलाई । पठवहु कंत जो चहहु भलाई ॥  
 तव कुल कमल बिपिन दुखदाई । सीता सीत निमा सम आई ॥  
 सुगहु नाथ सीता बिनु दीन्हें । हित न तुम्हार संभु अज कीन्हें ॥  
 दो०—राम यान अहिगन सारस निरु निमाचर भेक ।

जब लगिअसत न तब लगि जतनु करहु तजि टेक ॥ ३६ ॥  
 सवन सुनी सठ तारुनि बानी । विहँसा जगन विदित अभिमानी ॥  
 समय सुभाउ नारि कर सौँचा । मंगल महँ मय मन अति फौँचा ।  
 जौँ आवै मरुट कटकाई । जिअहिं विचारे निसिचर खाई ॥  
 कंपहिं लोकप जाकी त्रासा । तासु नारि समीत बड़ि हासा ॥  
 अस कहि विहँसि ताहि उर लाई । चलेउ सभौ ममता अधिकाई ॥  
 मदोदरी हृदयँ कर चिंता । भएउ कंत पर बिधि विपरीता ॥  
 बैठेउ सभौ खबरि असि पाई । सिंधु पार सेना सब आई ॥  
 बूझेसि सचिव उचित मत कहह । ते सब हँसे मष्ट करि रहह ॥  
 जितेहु सुरासुर तब सम नाही । न बानर केहि लेखे माहीं ॥  
 दो०—सचिव वैद गुर सीनि जौँ प्रिय बेलहिं भय आम ।

राज धर्म तन सीनि कर होइ बेगि ही नास ॥ ३७ ॥  
 सोइ रावन पहुँचनी सहार्इ । असतुति करहिं सुनाइ सुनाई ॥  
 अबसर जानि विभीषनु आवा । आता चरन सीसु तेहिं नावा ॥  
 पुनि सिरु नाइ बैठ निज आसन । बोला वचन पाइ अनुससन ॥  
 जौँ कृपाल पूछहु मोहिं वाता । गति अनुरूप कहौं हित ताता ॥  
 जो आपन चाहइ कल्याना । सुखसु सुप्रति सुम गति सुख नाना ॥  
 सो पर नारि लिलारु गोसाई । तजौ चौथि के चद कि नाई ॥

चौदह भुवन एक पति होई । भूत द्रोह तिष्ठइ नहि सोई ॥  
 सुन सागर नागर नर जोऊ । अलप लोभ मल कहइ न कोऊ ॥  
 दो०—नाम कोष मद लोभ सब नाथ नरक के पथ ।

सब परिहरि रघुवीरहि भजहु भजहि जेहि सत ॥ ३८ ॥  
 तान राम नहि नर मूपाला । भुक्तेस्वर कालहु कर काला ॥  
 ब्रह्म अनामय अज भगवंता । व्यापक अजित अनादि अनया ॥  
 गो द्विज धेनु देव हितकारी । कृपासिंधु मानुष सनु धारी ॥  
 जन रंजन भजन खल प्राता । चेइ धर्म रक्षक सुनु आता ॥  
 ताहि बयर तजि नाइअ माथा । प्रनारति भजन रघुनाथा ॥  
 देहु नाथ प्रभु पहुँचै देही । भजहु राम विनु हेतु सनेही ॥  
 सरन गएँ प्रभु ताहु न त्यागा । विश्व द्रोह कृन अघ जेहि लागा ॥  
 जासु नाम त्रय ताप नसावन । सोइ प्रभु प्रकट समुक्तु जिअँ रावन ॥  
 दो०—बार बार पद लागौ बिनय कर्गँ दससीस ।

परिहरि मान मोह मद भजहु कोसलाधीस ॥

मुनि पुनस्ति निज सिध्य सन कहि पठई येह बात ।

तुरत सो मैं प्रभु सन कही पाइ सुअवसर तात ॥ ३९ ॥

माल्यवंत अति सचिव सयाना । तासु बचन मुनि अति सुख माना ॥  
 तात अनुज तब नीति विमूषन । सो उर धरहु जो कहत विभीषन ॥  
 रिपु उतकरष कहत सठ दोऊ । दूरि न करहु इहाँ हइ कोऊ ॥  
 माल्यवंत गृह गएउ बहोरी । कहइ विभीषनु पुनि बर जोरी ॥  
 सुमति कुमति सब के उर रहहीं । नाथ पुरान निगम अस कहहीं ॥  
 जहाँ सुमति तहँ सपनि नाना । जहाँ कुमति तहँ विपति निदाना ॥  
 तन उर कुमति बसी बिपरीता । हित अनहित मानहु रिपु प्रीता ॥  
 कालराति निसिबर कुल केरी । तेहि सीता पर प्रीति घनेरी ॥

दो०—तात चरन गहि मागौं राखहु मोर दुलार ।  
सीता देहु<sup>१</sup> राम कहूँ अहित न होइ तुम्हार ॥ ४० ॥

बुध पुगन श्रुति समत बानी । कही विभीषन नीति बखानी ॥  
सुनत दसानन उठा रिसाई । खल तोहि निरुट मृत्यु अब आई ॥  
जिअसि सदा सठ<sup>२</sup> मोर जिआवा । रिपु कर पच्य मूढ़ तोहि भावा ॥  
कहसि न खल अस को जग माहीं । भुजबल जेहि जीता मै नाहीं ॥  
मम पुर बसि तपसिन्ह पर प्रीती । सठ मिलु जाइ तिन्हहिं कहु नीती ॥  
अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा । अनुज गहे पद बारहिं वारा ॥  
उमा संत कै इहइ बड़ाई । मद करत जो करइ मलाई ॥  
तुम्ह पितु सरिस भलेहिं मोहि मारा । राम भजैं हित नाथ तुम्हारा ॥  
सचिव सग लै नम पथ गएऊ । सबहि सुनाइ कहत अस भएऊ ॥  
दो०—रामु सत्य संकल्प प्रभु सभा काल बस तोरि ।

मै रघुवीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि ॥ ४१ ॥  
अस कहि चला विभीषनु जवहीं । आयूहीन भए सब तवहीं ॥  
साधु अवज्ञा तुरत भवानी । कर कल्याण अखिल कै हानी ॥  
रायन जवहिं विभीषनु त्यागा । भएउ बिभव विनु तबहिं अभागा ॥  
चलेउ हरपि रघुनायक पाहीं । करत मनोरथ बहु मन माहीं ॥  
देखिहौ जाइ चरन जलजाता । अरुन मृदुल सेवक सुखदाता ॥  
जे पद परसि तरी रिपिनारी । दंडक कानन पावनकारी ॥  
जे पद जनकसुता उर लाए । कपट कुरग संग धर धाप ॥  
हर उर सर सरोज पद जेई । अहोभाग्य मै देखिहौ तेई ॥  
दो०—जिन्ह पायन्ह के पादुकन्हि भरत रहे मन लाइ ।  
ते पद आज भिलोकिहौ इन्ह नयनन्हि अब जाइ ॥ ४२ ॥  
येहि विधि करत सप्रेम विचारा । आपउ सपदि सिंधु येहि पारा ॥

१—प्र० : देहु । दि० : प्र० । [ वृ० : देव ] । च० : प्र० ।  
२—प्र० : सठ । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (ई) : सर ] ।

कपिन्ह विभीषनु आवत देखा । जाना छोठ रिपु दूत विसेषा ॥  
ताहि राखि कपीस पहिं आए । समाचार सन ताहि सुनाए ॥  
कह सुधीव सुनहु रघुगई । आवा मिलन दसानन भाई ॥  
कह प्रभु सखा वृष्णिष दाहा । कहइ कपीस सुनहु नरनाहा ॥  
जानि न जाइ निसाचर माया । कामरूप केहि कारन आया ॥  
भेद हमार लेन सठ आग । राखिअ बाँधि मोहि अस भावा ॥  
सखा नीति तुम्ह नीकि विचारी । मम पन सरनागत भयहारी ॥  
सुनि प्रभु वचन हरष हनुमाना । सरनागत बच्चल भगवाना ॥  
दो०—सरनागन कहूँ जे सजहिं निजु अनहित अनुमानि ।

ते नर पाँवर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि ॥ ४३ ॥  
कोटि धिन बध लागहि जाह । आपँ सरन सजौं नहिं ताह ॥  
सन्मुख होइ जीव मोहि जवहीं । जन्म कोटि अघ नासहिं<sup>१</sup> तवहीं ॥  
पापवंत कर सहज मुभाऊ । मजनु मोर तेहि भाव न फाऊ ॥  
जौं पै दुष्ट हृदय सोइ होई । मोरें सन्मुख आव कि सोई ॥  
निर्मल मन जन सो मोहि पावा । मोहि कपट छल छिद्र न भावा ॥  
भेद लेन पठवा दससीसा । तवहुँ न कलु भय हानि कपीसा ॥  
जग महुँ सखा निसाचर जेते । लखिमनु हनइ<sup>२</sup> निमिष महुँ तेते ॥  
जौं समीत आवा सरनाई । रसिहौं ताहि प्रान की नाई ॥  
दो०—उभय भौंति तेहि आनहु हैंसि कह कृपा निकेत ।

जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत ॥ ४४ ॥  
सादर तेहि आगे करि धानर । चले जहाँ रघुपति करुनाकर ॥  
दूरिहिं तैं देखे द्वौ आता । नयनानंद दान के दाता ॥  
बहुरि राम छविघाम बिलोकी । रहेठ ठठुकि एकटक पल रोक्री ॥  
मुज प्रलंब कंजारुन लोचन । रयामल गात प्रनत भयमोचन ॥

१—प्र० : नासहिं । दि०, प्र० । [ त० : नामो ] । च० : प्र० [ (न) : नासैंदी ]

२—प्र० : हनइ । दि० : प्र० । [ त० : हनहि ] । च० : प्र० ।

सिध कंध आगत उर सोटा । आनन अमिन मदन मन मोहा ॥  
 नयन नीर पुलकित अति गाता । मन धरि धीर कही मृदु वाता ॥  
 नाथ दसानन कर मै आता । निसिचर वंम जग सुराता ॥  
 सहज पाप प्रिय तामस देहा । जया उलूहि तम पर नेहा ॥  
 दो०—सरन सुजमु मुनि आएँ प्रभु भजन मन भीर ।

आहि आहि आरतिहरन सरनमुखद रघुभीर ॥ ४५ ॥  
 अस कहि करत दटवन देखा । तुरत उठे प्रभु हरप निमेषा ॥  
 दीन बचन सुनि प्रभु मन भाया । भुज निसाल गहि हृदय लगाया ॥  
 अनुज सहित मिलि ढिग बैठारी । बोले वचन भगत भयहारी ॥  
 कहु लरेस सहित परिवारा । कुसल कुठाहर बास तुम्हारा ॥  
 खल मडली बसहु दिनु राती । सखा धर्म निबहद केहि भौंती ॥  
 मै जानौ तुम्हारि सव रीती । अति नयनिपुन न भाव अनीती ॥  
 बरु भल बास नरक कर ताता । दुष्ट सग जनि देह बिधाता ॥  
 अब पद देखि कुसल रघुराया । जौ तुम्ह कीन्हि जानि जन दाया ॥  
 दो०—तब लागि कुसल न जीव कहु सपनेहु मन विग्राम ।

जब लागि भजत न राम कहु सोरधाम तजि काम ॥ ४६ ॥  
 तब लागि हृदय बसत खल नाना । लोभ मोह मच्छर मद माना ॥  
 जब लागि उर न बसत रघुनाथा । धरै चाप सायक कटि भाथा ॥  
 ममता तरुन तमी अधियारी । राग द्वेष उलूक सुखनारी ॥  
 तब लागि बसति जीव मन माहीं । जब लागि प्रभु प्रताप रवि नाहीं ॥  
 अब मै कुसल मिटे भय भारे । देखि राम पद कमल तुम्हारे ॥  
 तुम्ह कृपाल जापर अनुकूला । ताहि न व्याप त्रिनिध भवसूला ॥  
 मै निसिचर अति अधम सुभाऊ । सुम आचरनु कीन्ह नहि काऊ ॥

१—प्र०, दि०, वृ०, च० : मनु [ (६) द'ब ]

२—प्र० : तुम्हारि । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : तुम्हार ] ।

३—प्र० : मच्छर । [ दि०, वृ० : मत्सर ] । च० : प्र० [ (८) : मत्सर ] ।

जामु रूप मुनि ध्यान न आवा । तेहि प्रभु हरपि हृदयें मोहि लावा ॥  
दो०—अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा सुख पुंज ।

देखेउँ नयन विरचि सिव सेव्य जुगल पद कंज ॥ ४७ ॥  
सुनहु सखा निज कहौ मुभाऊ । जान भुसुंढि संभु गिरिजाऊ ॥  
जौ नर होइ चराचर द्रोही । आवइ समय सरन तकि मोही ॥  
तजि मद मोह कपट छल नाना । करौ सद्य तेहि साधु समाना ॥  
जननी जनक घंभु सुत दारा । तनु धन भयन सुदृढ़ परिवारा ॥  
सय कै ममता ताग यटोरी । मम पद मनहि बाँध बरि डोरी ॥  
समदरसी इच्छा कछु नार्हीं । हरप सोक भय नहि मन माहीं ॥  
अस सज्जन मम उर बस कैसैं । लोभी हृदयें बसै धनु जैसे ॥  
तुम्ह सारिखे संन प्रिय मोरें । घरैं देह नहि आन निहोरें ॥  
दो०—सगुन उपासक परै हित निरत नीति दृढ़ नेम ।

ते नर प्रान समान मम जिहकैं द्विज पद प्रेम ॥ ४८ ॥  
सुनु लकेस सरल गुन तोरें । ता तें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें ॥  
राम वचन सुनि वानर जूथा । सरल कहहि जय कृपावरूथा ॥  
सुनत बिभीषनु प्रभु कै बानी । नहि अघात सबनानृत जानी ॥  
पद अंबुज गह बारहि वारा । हृदयें समात न प्रेसु अपारा ॥  
सुनहु देव सचराचर स्नामी । प्रनतपाल उर अंतरजामी ॥  
उर कछु प्रथम वासना रही । प्रभु पद प्रीति सरित सो बही ॥  
अव कृपाल निज भगति पावनी । देहु सदा सिम मन भावनी ॥  
एवमस्तु कहि प्रभु रनधीग । माँगा तुरत सिंधुकर नीरा ॥  
जदपि सखा तव इच्छा नार्हीं । मोर दरसु अमोघ जग माहीं ॥  
अस कहि राम तिलक तेहि सारा । सुमन वृष्टि नम मई अपारा ॥  
दो०—रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड ।  
जरत बिभीषन राखेउर दीन्हेउ राजु अखंड ॥

१—प्र० : पर । दि० : प्र० । [ वृ० : परस ] । च० : प्र० [ (८) परम ] ।

२—प्र० : राखेउ । दि० : प्र० [ (३)(४)(५) : राजा ] । [ वृ० : राखे ] । च० : प्र० [ (८) : राजा ] ।



जो संपति सिव रावनहि दीन्हि दिऐँ दम माथ ।

सोइ सपदा त्रिभीषनहि सजुचि दीन्हि रघुनाथ ॥ ४९ ॥

अस प्रभु छाडि भजहिं जे आना । ते नर यमु त्रिनु पँख बिपाना ॥

निज जन जानि ताहि अपनाया । प्रभु सुभाव कपि कुल मन भावा ॥

पुनि सबज्ञ सर्व अवासी । सर्व रूप सब रहित उदासी ॥

बोले बचन नीति प्रतिपालक । कारन मनुज दनुज कुल घालक ॥

सुनु कपीस लकापति बीरा । केहि बिधि तरिअ जलधि गभीरा ॥

सजुल मरर उरग भूप जाती । अति गगाव दुस्तर सत्र भौंती ॥

कह लकेस सुनहु रघुनाथक । कोट सिंधु सोपक तब सायक ॥

जद्यपि तदपि नीति असि गाई । विनय करिअ सागर सन जाई ॥

दो०—प्रभु तुम्हार कुलगुर जनधि कहिहि उपाय विचारि ।

बिनु प्रयास सागर तरिहि सजल भालु कपि धारि ॥ ५० ॥

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई । करिअ दैव जौ होइ सहाई ॥

मन न येह लखियन मन भावा । राम बचन सुनि अति दुख पावा ॥

नाथ दैव पर कवन भरोसा । सोखिअ सिंधु करिअ मन रोसा ॥

कादर मन कहें एक अधारा । देउ दैव आलमी पुकारा ॥

सुनन त्रिहँसि बोले रघुनीरा । ऐसेइ करव धरहु मन धीरा ॥

अस कहि प्रभु शनुजहि समुझाई । सिंधु समीप गए रघुराई ॥

प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई । बेटे पुनि तट दर्भ उसाई ॥

जगहिं त्रिभीषन प्रभु पहि आए । पाछे रावन दूत पठाए ॥

दो०—सजल चरित तिन्ह देखे घरें कपट कपि देह ।

प्रभु गुन हृदयें सराहहिं सरनागत पर नेह ॥ ५१ ॥

प्रगट चम्पानहि राम सुभाऊ । अति सप्रेम गा बिसरि दुराऊ ॥

रिपु के दूत कपिन्ह तब जाने । सकल बाँधि कपीस<sup>१</sup> पहि आने ॥  
 कह सुग्रीव सुनहु सब वानर<sup>२</sup> । अंग भग करि पठवहु निसिचर ॥  
 सुनि सुग्रीव वचन कपि धाए । बाँधि फटक चहुँ पास फिराए ॥  
 बहु प्रकार मारन कपि लागे । दीन पुकारत तदपि न त्यागे ॥  
 जो हमार हर नासा काना । तेहि कोमलाधीस के आना ॥  
 सुनि लक्ष्मिन सब<sup>३</sup> निरुत बोलाए । दया लागि हँसि तुरत छोड़ाए ॥  
 रावन फर दीजहु येह पाती । लक्ष्मिन वचन बाँधु कुलघाती ॥  
 दो०—कहेहु मुखार मूढ सन मम संदेसु उदार ।

सीता देख मिलहु न त आवा कालु तुम्हार ॥ ५२ ॥  
 तुरत नाह लक्ष्मिन पद गाथा । चले दूत वरनत गुन गाथा ॥  
 कहत राम जमु लंका आए । रावन चरन सीस तिन्ह नाए ॥  
 बिहँसि दसानन पूँछी बाता । कहसि न सुक<sup>४</sup> आपनि कुसलाता ॥  
 पुनि कहु खबरि<sup>५</sup> विभीषन केरी । जाहि<sup>६</sup> मृत्यु आई अति नेरी ॥  
 करत राजु लंका सठ त्यागी<sup>७</sup> । होइहि जर फर कीट अभागी<sup>७</sup> ॥  
 पुनि कहु भालु कीस फटकाई । कठिन काल प्रेरित चलि आई ॥  
 जिन्हके जीवन फर रखवारा । मएठ मृदुल चित सिंधु बेचारा ॥  
 कहु तपसिन्ह के बात बहोरी । जिन्ह के हृदय त्रास अति मोरी ॥  
 दो०—की भइ भेंट कि फिरि गए खवन सुजसु सुनि मोर ।

कहसि न रिपुदल तेज बल बहुत चकित चित तोर ॥ ५३ ॥

१—प्र० : सकल बाँधि कपीस । द्वि० : प्र० । [ तृ० : ताहि बाँधि कपिपति ] । च० : प्र०  
 [(\*) : सपदि बाँधि कपिपति] ।

२—प्र० : वानर । द्वि० : प्र० । [ तृ० : वनचर ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : सर । द्वि० : प्र० । [ तृ० : नव ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : कम । द्वि० : मूक । तृ०, च० : द्वि० ।

५—प्र० : खबरि । द्वि० : प्र० । [ तृ० : कुसन ] । च० : प्र० ।

६—प्र० : जाहि । द्वि० : प्र० । [ तृ० : जासु ] । च० : प्र० ।

७—प्र० : नमशः त्यागी, अभागी । द्वि० : प्र० । [ तृ० : त्यागा, अभागा ] । च० : प्र० ।

नाथ कृपा करि पूँछेहु जैसे । मानहु कहा क्रोध तजि तेसैं ॥  
 मिला जाइ जब अनुज तुम्हारा । जातहि राम तिलक तेहि सारा ॥  
 रावन दूत हमहि सुनि काना । कपिन्ह वोंधि दीन्है दुख नाना ॥  
 सजन नासिका काँटे लागे । राम सपथ दीन्हें हम त्यागे ॥  
 पूँछिहु नाथ राम कटकाई । बदन फोटि सत बरनि न जाई ॥  
 नाना बरन भालु कपि धारी । निम्नानन बिसाल भयकारी ॥  
 जेहिं पुर दहेउ हतेउ सुत तोरा । सफल कपिन्ह महँ तेहि बलु थोरा ॥  
 अमित नाम भट कठिन कराला । अमित नाग बल निपुन बिसाला ॥  
 दो०—द्विविद मयद नील नलु अंगद गद<sup>१</sup> विन्दासि<sup>४</sup> ।

दधिमुख केहरि कुमुद गव<sup>५</sup> जामवत बलरासि ॥ ५४ ॥

ये कपि सब सुग्रीव समान । इन्ह सम कीटिन्ह गनइ को नाना ॥  
 राम कृपाँ अतुलित बल तिन्हही । तुन समान त्रैलोकहि गनहीं ॥  
 अस मै सुना सवन दसकथर । पदुम अठारह जूथप बदर ॥  
 नाथ फटक महँ सो कपि नाहीं । जो न तुम्हहि जीतइ रन माहीं ॥  
 परम क्रोध भोजहि सन हाथा । आयेसु पे न देहि रघुनाथा ॥  
 सोखहि सिंतु सहित भूष ब्याला । पूरहि न त भरि कुषर बिसाला ॥  
 मदि गर्द मिलगहि दससीसा । ऐसेइ वचन कहहि सन कीसा ॥  
 गर्जहि तर्जहि सहज असका । मानहु प्रसन चहत रहि लका ॥  
 दो०—सहज सूर कपि भालु सन पुनि सिर पर प्रभु राम ।

रावन कान<sup>६</sup> कोटि नहुँ जीति सरहि सप्राम ॥ ५५ ॥

१—प्र०, दि०, ग०, च०—दी दे [ (१) : दी देउ ] ।

२—" रजिन । दि० . प्र० [ (२) : कटि-द ] । [ तु० : विन्दा ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : अंगद गद । दि० : प्र० [ (४) : अंगदादि ] । [ तु० : अंगदादि ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : विन्दासि । दि० : प्र० [ (५) (५) : विन्दासि ] । तु० : प्र० । [ च० : विन्दासि ] ।

५—प्र० : निट मट । दि० : प्र० । तु० : कुमुदगव । च० : तु० ।

६—प्र० : कान । दि० : प्र० । [ तु० : काने ] । च० : प्र० ।

राम तेज बल बुधि विपुलाई । सेप सहस सत सकहिं न गाई ॥  
 सर सर एरु सोपि सत सागर । तव आतहि पहुँचेउ नयनागर ॥  
 तामु वचन सुनि सागर पाहीं । माँगत पथ कृपा मन माहीं ॥  
 सुनत वचन विहँसा दससीसा । जौ असि मति सहाय कृन कीसा ॥  
 सहज भीरु कर वचन दृढ़ाई । सागर सन ठानी मचलाई ॥  
 मृद मृपा का करसि बडाई । रिपु बल बुद्धि थाह मै पाई ॥  
 सचिव समीत विभीषनु जाकें । विजय विमूति न्हर्हा लगिरे ताकें ॥  
 सुनि खल वचन कृतहिरे रिसि वाढ़ी । समय विचारि पत्रिका काढ़ी ॥  
 रामानुज दीन्ही यह पातो । नाथ बैचाइ जुड़ाबहु छाती ॥  
 निहँसि बाम कर लीन्ही रावन । सचिव बोलि सठ लाग वचावन ॥

दो०—यातन्ह मनहि रिभाइ सठ जनि घालसि कुल खीस ।

राम निरोध न उबरसि सरन विष्णु अज ईस ॥

की तजि मान अनुज इव प्रभु पद पंरुज भृग ।

होहि कि राम सरानल २ सल कुल सहित पतंग ॥ ५६ ॥

सुनत समय मन मुखु मुमुनाई । नहत दसानन सर्वाहि सुनाई ॥

भूमि परा कर गहत अनासा । लघु तापस कर बाग बिलासा ॥

कह सुक नाथ सत्य सन बानी । समुझहु द्वाडि प्रकृति अभिमानी ॥

सुनहु वचन गम परिहरि क्रोधा । नाथ राम सन तजहु निरोधा ॥

अति कोमल रघुवीर सुभाऊ । जद्यपि अखिल लोरु कर राऊ ॥

मिलत कृपा तुम्ह पर प्रभु करिहीं १ । उर अपराध न एकी परिहीं ४ ॥

१—प्र० : जग : द्वि० : प्र० । नृ० : लगि । च० : ल० ।

२—प्र० ॥ दृढदि । [ द्वि०, नृ० : दृढ ] । च० : प्र० [ (न) : दृढ ] ।

३—[ प्र० : होहि कि राम सरानल खल ] । द्वि० : होहि कि राम सरानल खल । [ नृ० : होहि राम सर अनल खल जनि ] । च० : द्वि० ।

४—प्र० : वरिही, परिही । द्वि० : प्र० । [ नृ० : करिहिहि, परिहिहि ] । च० : प्र० [ (न) : वरिहिहि, परिहिहि ] ।

जनरुमुना रघुनाथहि दीजे । एतना कहा मोर प्रभु कीजे ॥  
 जब तेहिं कहा देन वैदेही । चरन प्रहार कीन्ह सठ तेही ॥  
 नाइ चरन सिरु चला सो ठहौ । कृपासिबु रघुनाथरु जहाँ ॥  
 करि प्रनामु निज कथा मुनाई । राम कृपां आपनि गति पाई ॥  
 रिपि अगस्ति की साप भवानी । राक्षस भएउ रहा मुनि जानी ॥  
 बंदि राम पद चारहि चारा । मुनि निज आत्मन कहँ पगु धारा ॥  
 दो०--बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीन दिन बीति ।

बोले राम सकोप तर भय त्रिनु होइ न प्रीति ॥५७॥  
 लछिमन बान सरासन आनू । सोसो बारिधि बिसिख वृत्तानू ॥  
 सठ सन बिनय कुटिल सन प्रीती । सहज कृपन सन सुंदर नीती ॥  
 ममतारत सन ज्ञान कहानी । अति लोभी सन बिरति यवानी ॥  
 क्रोधिहि सम कामिहि हरि कथा । ऊसर बीज बएँ फल जथा ॥  
 अस कहि रघुपति चाप चढ़ाया । येह मत लछिमन के मन भाया ॥  
 संधानेउ प्रभु बिसिख फराला । उठी उदधि उर अतर उमाला ॥  
 मकर उरग भूष गन अटुलाने । जगत जतु जननिधि जन जाने ॥  
 कनरु थार भरि मनि गन नाना । विप्र रूप आएरे तजि माना ॥  
 दो०--काटेहि पइ कदली फाइ कौटि जतन कोउ सींच ।

बिनय न मान खगेस सुनु डौंटेहि पै नर नोच ॥५८॥  
 सभय सिबु गहि पद प्रभु केरे । धमहु नाथ सब अवगुन मेरे ॥  
 गगन समीर अनल जल धरनी । इन्ह कह नाथ सहज जड़ फरनी ॥  
 तव प्रेरित माया उपजाए । सृष्टि हेतु सब अथन्हि गाए ॥  
 प्रभु आयेसु जेहि कहँ जप अहई । सो तेहि भौंति रहँ सुख लहई ॥

१—[ प्र० : बोध ] । दि० : कए । [ ल० : बोध ] । च० : दि० ।

२—प्र० : आप । दि० : प्र० [ (३) (५) आपण्ड ] । [ ल० : आपण्ड ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : टाँहि पै नय । दि० : प्र० [ (३) : टाँहि पै नय ] । ल०, च० : प्र० [(२) : मय विनु नय ] ।

४—प्र० : जस । दि० : प्र० [ (५) : नति ] । ल०, च० : प्र० ।

प्रभु मल कीन्ह मोहि सिख दीन्हि । मरजादा पुनि तुम्हहि अ कीन्हि ॥  
 ढोल गवाँ सूर पमु नारी । सकल ताड़ना के अधिकारी ॥  
 प्रभु प्रताप में जाव सुसाई । उतरिहि कटक न मोरि बड़ाई ॥  
 प्रभु अज्ञा अपेल श्रुति गई । क्यों सो बेग जो तुम्हहि सोहाई ॥  
 दो०—सुनत बिनीति बचन अति कह कृपाल मुमुक्षु ।

जेहि विधि उतरि कपि कटक तात सो कहहु उगाई ॥ ५२ ॥  
 नाथ नील नन कवि द्यौ भाई । लरिकाई रिपि आनिष पाई ॥  
 तिन्ह के परस किए गिरि भारे । तरिहहि जलधि प्रताप तुम्हारे ॥  
 मैं पुनि उर घरि प्रभु प्रभुनाई । करिहाँ बल अनुमान सहाई ॥  
 येहि विधि नाथ पयोधि बंधाईअ । जेहि येह सुजमु लोक तिहुँ गाईअ ॥  
 येहि सर मम उत्तर तट चासी । हतहु नाथ खल नर अधासी ॥  
 सुनि कृपाल सागर मन पीरा । तुरतहि हरी राम रनवीरा ॥  
 देखि राम बत पौरुष भारी । हरपि पयोनिधि मण्ड सुखारी ॥  
 सकल चरित कहि प्रभुहि सुनवा । चरन बंदि पायोधि सिधावा ॥

छं०—निज भवन गवनेउ सिंधु श्री रघुपतिहि येह मत्त भाएऊ ।

येह चरित कलिमलहर अपामति दास तुनसी गाएऊ ॥

सुखभवन संसयसमन दवन विपाद रघुपति गुनगना ।

तजि सकल आस भरोस गावहि सुनहि संतत सठ मना ॥

दो०—सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान ।

सादर सुनहि ते तरहि भव सिंधु बिना जलजान ॥ ६० ॥

इति श्री रामचरितमानसे 'सकल कलिमलुपविध्वंसने चिमन  
 ज्ञानसम्पादनो नाम पञ्चमः सोपानः समाप्तः॥

१—प्र० : सुनत बिनीत बचन । दि० : प्र० । [ तु० : सुनतहि बचन बिनीत ] । च० :

प्र० [ (न) : सुनि बिनीत के बचन ] ।

२—प्र० : दवन । दि० : प्र० । [ तु० : दमन ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : सठ । दि० : प्र० । [ तु० : सुवि ] । च० : प्र० ।

श्री गुरुभ्यो नमः

श्री गुरुभ्यो नमः

# श्री राम चरित मानस

पद्य सोपा न

लंका कांड

सुनहु भानुकुल केतु जामवंत कर जोरि कह ।

नाथ नाम तव सेतु नर चढ़ि भवसागर तरहि ॥

येह लघु जलधि तरत कृनि वारा । अस सुनि पुनि कह पवनकुमारा ॥

प्रभु प्रताप बड़वानल भारी । सोखेउ प्रथम पयोनिधि वारी ॥

तव त्रिपुनारि रुदन जलघाग । गरेउ बहोरि मएउ तेहि खारा ॥

सुनि अति उक्ति पवन सुन केरी । हरेपे कपि रघुपति तन हेरी ॥

जामवंत बोले दोउ माई । नल नीलहि सन कथा सुनाई ॥

राम प्रताप मुमिरि मन माहीं । करहु सेतु प्रयास कछु नाहीं ॥

बोली लिए कपि निरु बहोरी । सकल सुनहु बिनती एक मोरी ॥

राम चरन पंरुज उर घरह । कौतुक एक मालु कपि करह ॥

घावहु मरकट विकट बरुथा । आनहु चित्रगिरिन्ह के जूथा ॥

सुनि कपि मालु चले करि हहा । जय रघुबीर प्रताप समूहा ॥

दो०—अति उत्तम तरु सैलगन<sup>२</sup> लीलहि लेहि उठाइ ।

आनि देहि नल नीलहि<sup>३</sup> रचहि ते सेतु बनाइ ॥ १ ॥

सैल विशाल आनि कपि देरी । कंदुक इव नल नील ते लेही ॥

देखि सेतु अति सुंदर रचना । बिहंसि कृपानिधि बोले बचना ॥

परम रम्य उत्तम येह धरनी । महिमा अमिठ जाइ नहि बरनी ॥

करिहौं इहाँ संभु थापना<sup>४</sup> । मोरें हृदय परम कलपना ॥

सुनि कपीस बहु दूत पठाए । मुनिवर सकल बोली लै आए ॥

लिंग भाषि विधिवत करि पूजा । सिव सनान प्रिय मोहि न दूजा ॥

सिवत्रोही मम भगत<sup>५</sup> कहवा । सो नर सपनेहु मोहि न पावा ॥

संचर विमुख भगति चह मोरी । सो नारकी मूढ़ मति थोरी ॥

१—प्र० : क० । दि० : प्र० [ (५५) : एक ] । वृ० : एक । च० : वृ० ।

२—प्र० : गिरि पादप । दि० : प्र० । वृ० : तक्षकान । च० : वृ० ।

३—प्र० : नीलहि । दि० : प्र० । [ वृ० : नीलवई ] । च० : प्र० [ (८) : नीलवई ] ।

४—प्र० : थापना । दि० : प्र० । [ वृ० : अस्थापना ] । च० : प्र० [ (८) : अस्थाप ] ।

५—प्र० : भगत । दि० : प्र० । [ वृ० : दास ] । च० : प्र० [ (८) : दास ] ।





तिन्ह की ओट न देखिथ वारी । मगन भए हरिरूप निहारी ॥  
चला मटकु प्रभु आयेसु पाई<sup>१</sup> । को कहि सके कपिद्वज त्रिपुलाई ॥  
दो०-सेतुग्र भइ भीर अति कपि नम पय उड़ाहि ।

अपर जलचरन्हि ऊपर चढ़ि चढ़ि पारहि जाहि ॥ ४ ॥  
अस कौतुक तिनोकि हौ भाई । त्रिहँसि चने कृपालु रघुराई ॥  
सेन सहित उतरे रघुनारा । कहि न जाइ कपि जूथप भीरा ॥  
सिबु पार प्रभु डेग मीन्हा । सफल मफिर कहुं आयेसु दीन्हा ॥  
खाहु जइ फल मून सुहाए । सुनत भालु कपि जहाँ तहाँ घाए ॥  
सम तरु फरे राम हित लागी । रितु अरु बुरितु<sup>२</sup> काल गति त्यागी ॥  
खाहि मधुर फल मिष्ट हनावहि । लका सनमुख सिखर चलावहि ॥  
जहाँ कहुं फिरत निसावर पावहि । घेरि सफल बहु नाच नचावहि ॥  
दमनन्हि नाटि नासिका काना । कहि प्रभु सुजसु देहि तब जाना ॥  
जिन्ह कर नासा कान निपाना । तिन्ह रामनहि कहौ सम माता ॥  
सुनत लखन बारिधि बघाना । दसमुख बोलि उठा अटुलाना ॥  
दो०-आधो<sup>३</sup> बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु वारीस ।

सय तोयनिधि कपति उदधि पयेधि नदीस ॥ ५ ॥  
व्याकुलता निज समुझि वहांसी<sup>४</sup> । त्रिहँसि चला<sup>५</sup> गृह करि भय भोरी ॥  
मंदोदरी मुन्धो प्रभु आयो । कौतुकी<sup>६</sup> पाथोधि बैँघायो ॥  
कर गहि पतिहि भवन निज आनी । बोली परम मनोहर बानी ॥  
च न नाइ सिर अंचल रोपा । सुनहु बचन पिय परिहरि कोपा ॥

१-प्र० : प्रभु अ येसु पाई । दि०, १० : प्र० । च० : कह्यु वरनि न पाई ।

२-प्र० : रितु अरु बुरितु । दि० : प्र० । [ १० : अतु अ अतुहि ] च० : प्र० । (६)  
(अ) : रितु अरु बुरितु ] ।

३-प्र० : आधो । दि० : प्र० । [ १० : बाधे ] । च० : प्र० । (२) : बाधे ] ।

४-प्र० : निज विकृता निचारि । दि० : प्र० । १० : व्याकुलता निज समुझि ।  
च० : प्र० ।

५-प्र० : चला । दि०, १० : प्र० । च० : चला ।

नाथ चकर कोत्रे तारी सो । बुधियन महिप्र जनि जाी मों ॥  
 तुहहि रघुतिहि अंनक बैसा । मनु गमोउ दिनहरिः जेसा ॥  
 अतिरा गु कैंठम जेहि मारे । मझावी दिनितुन संगरे ॥  
 जेहि ननि बांधि सहसमुन गरा । मोह अमरोउ हरन महिम ग ॥  
 तामु धिगेध न कीजिअ नाथा । द्वाग करम जिय निनठे हाथा ॥  
 दो०—रामहि सोपिरे जगती नइ कृपन पद गाथ ।

सुन फटु राज स-वि वन जाइ मजिअ रघुनाथ ॥ ६ ॥  
 नाथ दीनखान रघुगई । चर्यो सन्मुख गए न मरई ॥  
 चाहिय करन तो सनु करि बीते । तुष्ट मुर अमु चराचर जीने ॥  
 संन कहहि असि नेति दमानन । चौथेन जइहि नृप दानन ॥  
 तामु मजनु कीजिअ तहँ भरता । जो करता पालक संहरता ॥  
 सोइ रघुनी प्रनन अनुगामी । मजहु नाथ मगना सन रगामी ॥  
 मुनिपर जननु कहहि जेहि लागी । मूप राजु तजि हांहि विगामी ॥  
 सोइ कोमलाधीस रघुनाथ । आपउ करन तोहि पर दाया ॥  
 जौ पिअ मानहु मोर सिखावन । सुजमु होइ निहुँ पुर अति पारन ॥  
 दो०—अस कहि लोचन वारि भरि गहि पद कपिन गात ।

नाथ मजहु रघुनाथ पद<sup>५</sup> अचल होइ अहिबान<sup>६</sup> ॥ ७ ॥  
 तव रावन मयसुता उठार्इ । कहइ लाग सल निज प्रभुनार्इ ॥  
 सुनु तै प्रिया वृथा भय माना । जग जेघा को मोहि समाना ॥  
 बहन कुचै पवन जम काला । भुजबल जिनेउँ सकल दिगपाला ॥

१—प्र० : दिनवरहि । द्वि० : प्र० । [ त्रिनाकर ] । च० : प्र० [ (८) : दिवारर ] ।

२—प्र० : सोपिरे । [ द्वि०, तृ०, च० : सोपिडु ] ।

३—[ (६) ॥ यः अर्जुनी नहीं है ] ।

४—प्र० : तवन नीर मरि । द्वि० : प्र० । तृ० : लोचन वारि भरि । च० : तृ० ।

५—प्र० : रघुनाथ । द्वि० : प्र० । तृ० : रघुनाथ पद । च० : तृ० [ (६), (८) : रघुनाथ पद ] ।

६—प्र० : अचल होइ अहिबान । द्वि० : प्र० । [ तृ० : मम अहिबान न जात ] । च० : प्र० [ (६) (८) : मम अहिबान न जात ] ।

देव दनुज नर सत्र बस मोरें । कवन हेतु उपजा भय तोरें ॥  
 नाना विधि तेहिं कहसि बुझाई । समा बहोरि बैठ सो जाई ॥  
 मंदोदरी हृदयँ अस जाना । काल विवम<sup>१</sup> उपजा अभिमाना ॥  
 समा आइ मंत्रिन्ह तेहिं<sup>२</sup> बूझा । करव कवन विधि रिपु सैं जूझा ॥  
 कहहिं सचिव सुनु निसिचरनाहा । बार बार प्रभु पूँछहु काहा ॥  
 कहहु कवन भय करिअ विचारा । नर कपि मालु अहार<sup>३</sup> हमारा ॥  
 दो०—सब के बचन<sup>४</sup> सवन सुनि कह प्रहस्त कर जोरि ।

नीति विरोध न करिअ प्रभु मंत्रिन्ह मति अति थोरि ॥ ८ ॥

कहहिं सचिव मठ<sup>५</sup> ठकुर सोहाती । नाथ न पूर आव येहि भौंती ॥  
 बारिधि नौधि एकु कपि आवा । तासु चरित मन महँ सब गावा ॥  
 छुपा न रही बुझहि तब काह । जारत नगरु कस न धरि खाह ॥  
 सुनत नौक आगे दुख पावा । सचिवन्ह असमत प्रभुहि सुनावा ॥  
 जेहि वारीस बैधाएउ हेला । उठरे सेन समेत सुबेला ॥  
 सो भनु मनुज खाव हम भाई । बचन कहहिं सब गाल फुलाई ॥  
 तात बचन मम सुनु<sup>६</sup> अति आदर । जनि मन गुनहु मोहि करि कादर ॥  
 प्रिय बानी जे सुनिहिं जे कहहीं । ऐसे नर निकाय जग अहहीं ॥  
 बचन परम हित सुनत फठारे । सुनिहिं जे कहहिं ते नर प्रभु धारे ॥  
 प्रथम बसीठ पठउ सुनु नीती । सीता<sup>७</sup> देख कहहु पुनि प्रीती ॥  
 दो०—नारि पाइ फिरि जाहि जौ तौ न बढ़ाइअ रारि ।

नाहिं त सनमुख समर महि तात करिअ हठि मारि ॥ ९ ॥

१—प्र० : वस्य । दि० : प्र० । वृ० : निवस । च० : वृ० ।

२—प्र० : तेहि । दि० : प्र० । [ वृ० : सन ] । च० : प्र० [ (८) (८अ) : सन ] ।

३—प्र० : पूँछहु । दि० : प्र० । [ वृ० : बूझहु ] । च० : प्र० [ (८) : बूझहु ] ।

४—प्र० : सबके बचन । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (९) (८अ) : बचन सबके ] ।

५—प्र० : मठ । दि० : प्र० [ (४) (८) : मठ ] । वृ० : प्र० । [ च० : मठ ] ।

६—प्र० : तात बचन मम सुनु । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : सुनु मम बचन तात ] ।

७—प्र० : सीता । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : सीताहि ] ।

येह मन जौ मानहु प्रभु मोग । उमा प्रसा मुउउ जग तोरा ॥  
 मुा सन कह दपकंड रिमई । अगिमानि मठ देहि तेहि गिमई ॥  
 अरही तौ उर संगव रोई । बेनु गून मुा भरउ घरोई ॥  
 सुनि पितु गिरा परग अनि घोरा । चनः भान कहि बान दठोग ॥  
 हित मन तोहि न लागत कैरे । जाल विरय कहु भोज दीगें ॥  
 संध्या समय जानि दसमीगा । भान चोउ निरगन भुज बीभा ॥  
 लंहा सिखा उर आगारा । अनि विचित्र तहें रोई अन्धारा ॥  
 बैठ जाइ तेहि मंदिर राज । लागे फिरा गुन गन गाया ॥  
 बाजहि ताल पश्चाउज चीना । नृत्य कहि अपदरा प्रवीणा ॥  
 दो०—सुनासीर सन सरिम सो सत्त करइ विनाम ।

परम प्रसन्न रिपु सीस पर तदपिन कहु मन नामरे ॥ १० ॥

इहाँ सुनेल सैन रघुसीरा । उरारे सैन सहित गनि भीरा ॥  
 सैन सुंग एक सुंदर देखी । अनि उतग सम मुअ भिसेवी ॥  
 तहैं तरु तिसलय सुमन सुहाए । लखिमन रवि निज हाथ टसाए ॥  
 तेहि पर रुचिर मृदुल मृगधाला । तेहि आसन आमीन कृपाला ॥  
 प्रभु कृत सीस कपीस उछगा । बान दहिन दिसि चाप निपंगा ॥  
 दुहुँ कर कमल सुशरत बाना । कह लफेस मंत्र लागि काना ॥  
 बड़भागी अगद हनुमाना । चरन कमल चापत विधि नाना ॥  
 प्रभु पाछे लखिमन वीरासन । कटि निपंग कर बान सरासन ॥

१—प्र० : गुनगन । दि० : प्र० । [ तु० : गंगरा ] । च० : प्र० [ (६) (नक) गंधर्व ] ।

२—प्र० : तपनि सोच न नाम । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : तपनि सोच नहि प्राप्त ] ।

[ तु० : तदपि न कहु तेहि नाम ] । च० : तदपि न कहु मन नाम [(२) : तपनि दृश्य नहि प्राप्त ] ।

३—प्र० : सिलर एक उतग अनि । दि० : प्र० । तु० : सैव सुंग एक सुंदर । च० : तु० ।

४—प्र० : परम रम्य । दि० : प्र० । तु० : अनि उतग । च० : तु० ।

५—प्र० : ता । दि० : प्र० । तु० : तेहि । च० : तु० ।

दो०—येहि विधि करुना सील<sup>१</sup> गुन धाम राम आसीन ।

ते नर धन्य जे ध्यान येहि<sup>२</sup> रहत सदा लयलीन ॥

पूरव दिसा बिलोकि प्रभु देखा उदिन मयंक ।

कहत सनहि देखहु ससिहि मृगपति सरिस असक ॥ ११ ॥

पूरव दिसि गिरि गुहा निवासी । परम प्रताप तेज बल रासी ॥

मत्त नाग तम कुंभ बिदारी । ससि देसरी गगन बन चारी ॥

बिधुरे नभ मुकुताहल तारा । निसि सुंदरी फेर सिंगारा ॥

कह प्रभु सभि महुं मेचकृताई । कहहु काह निज निज मति भाई ॥

कह सुग्रीव सुनहु रघुआई । ससि महुं प्रगट भूमि कै भाई ॥

मारेउ राहु ससिहि कह कोई । उर महुं परी स्यामना सोई ॥

कोउ कह जय विधि रति मुख कीन्हा । सारमाग ससि कर हरि लीन्हा ॥

जिदर सो प्रगट इंदु उर माहीं । तेहि मग देखिथ नभ परिधारी ॥

प्रभु कह गरल बंधु ससि केरा । अति प्रिय निज उर दीन्ह बसेरा ॥

बिप संजुत कर निरु पसारी । जारत बिरहबन नर नारी ॥

दो०—कह मारुतसुन<sup>३</sup> सुनहु प्रभु ससि तुम्हार प्रिय<sup>४</sup> दास ।

तव मूरति बिधु उर बसति सोई स्यामता अभास ॥

पवनतनय के बचन सुनि बिहैसे राम सुजान ।

दक्षिण दिसा बिलोकि पुनि<sup>५</sup> बोले कृपानिधान ॥ १२ ॥

देखु विभीषन दक्षिण आसा । धन धर्मद दामिनी विलासा ॥

मधुर मधुर गरजइ धन घोरा । होइ वृष्टि जनि उपल कठोरा ॥

१—प्र० : कृपा रूप । दि०, वृ० : प्र० । च० : करुना मीन [ (क) : करुना सिंधु ] ।

२—प्र० : धन्य ते नर येहि ध्यान जे । दि०, वृ० : प्र० । च० : ते नर धन्य जे ध्यान येहि ।

३—प्र० : हनुमन् । दि० : प्र० । वृ० : मारुतसुन । च० : वृ० ।

४—प्र०, दि०, वृ०, च० : प्रिय [ (क) : निज ] ।

५—प्र० : दिसि बिलोकि प्रभु । दि०, वृ० : प्र० । च० : दिसा बिलोकि पुनि [ (क) (च) : दिसा बिलोकि प्रभु ] ।

कहत विगीषन मुनहु रूप ना । होइ न तद्वित न बादि माना ॥  
 लका सिमर उपर १ आगास । तहँ दमकंष देन अनास ॥  
 धर नेपटय सिर धारी । गोइ जनु जनद धरा आ १ दागे ॥  
 मदादरी मयन ताटछ । सोइ प्रभु जनु दागेनी दमरा ॥  
 बाजहि तारा मृदग अनूष । मेइ रर मधुर २ मुनहु मुग्गुषा ॥  
 प्रभु मुसुरान समुष्मि अभिमाना । चप चढ़ाड प्रान रायना ॥  
 दो०—धर मुहुट ताटक सर हते एक ही वन ।

सर कें देखत महि परे मामु न बाँऊ जान ॥

अस कीतुक करि राम सर प्रियेउ अइ निपाग ।

रावन रुभा ससक सर देखि महा रस भग ॥ ११ ॥

कंप न भूमि न मरन प्रियेपा । अस सख कहु नयन न देखा ॥

सोचहिं सर निज हृदय मकारी । असगुन गरउ भयहर मारी ॥

दसमुख देखि सम भय पाई । बिहसि वचन कह जुगुनि बनाई ॥

सिरी गिरे सत सुम जाही । मुहुट खसे १ कम असगुन ताही ॥

सयन करहु निज निज गृह जाई । गगने गगन सफल मिर नाई ॥

मंदोदरी सोच उर बसेऊ । जन तें गगनगू महि खसेऊ ॥

सजल नयन कह जुग फर जोरी । मुनहु प्रानपनि चिनवी मोरी ॥

कंत राम विरोध परिहरहु । जानिमनुज जनि गग हठ ४ घाह ॥

दो०—निस्वरूप रघुवस मनि करहु वचन दिव्यासु ।

लोक बलपना घेद कर अग अग प्रस जासु ॥ १४ ॥

पद पाताल सौस अज धामा । अपर लोक अँग अँग बिनामा ॥

मृदुटि बिलास भयकर काला । नयन दिवाकर कच धनमाला ॥

१—प्र० : उपर । द्वि० : १०, १० प्र० [ (६) (अ) : रवि ] ।

२—प्र० : मधुर । द्वि० प्र० : [ वृ० : सरिस ] । च० : प्र० [ (६) (अ) : सरस ] ।

३—प्र० : परे । द्वि० प्र० : वृ० : रसे । च० : वृ० [ (अ) : गिरे ] ।

४—प्र० : हठ मन । द्वि० : प्र० [ (अ) : हठ उर ] । [ वृ० : हठ उर ] । च० : प्र०

[ (अ) : मन मह ] ।

जासु घान अस्विनी<sup>१</sup>मारा । निसि अरु दिवसु निमेष<sup>२</sup>अपारा ॥  
समन दिसा दस वेद ब्रह्मानी । मारुत<sup>३</sup> स्वास निगम नित्र वानी ॥  
अधर लोम जम दसन कराला । माया हास बाहु दिगपाला ॥  
आनन अनल अचुपति जीहा । उत्पति पलन प्रलय समीहा ॥  
रोमराजि यष्टादस भरा । अस्थि सैल सरिता नस जरा ॥  
उदर उदधि अधगो जातन<sup>४</sup> । जगमय प्रभु का बहु कल्पना ॥

दो०—अहंकार मित्र बुद्धि अज मन ससि चित्त महान ।  
मनुज वास सवराचर<sup>५</sup> रूप राम भगवान् ॥  
अस विचारि सुनु मानपति प्रभु सन वषरु बिहाइ ।  
प्रीत करहु रघुवीर पद मम अहिवाउ न जाइ<sup>६</sup> ॥१५॥

विहसा नारि बचन सुनि काना । अहो मोह महिमा बलवाना ॥  
नारि सुभाउ सत्य करि<sup>७</sup> कहहीं । अवगुन आठ सदा उर रहहीं ॥  
साहस अनृत चपलता माया । भय अविनेक असौच अदाया ॥  
रिपु कर रूप सकल तैं गाथा । अति बिसान<sup>८</sup> मय मोहि सुनावा ॥  
सो सब प्रिया सहज मम मोरे । समुझि परा प्रमाद अन तोरे ॥  
जानिउँ प्रिया तोरि चतुसाई । येहि भिसु<sup>९</sup> कहहु<sup>१०</sup> मोरि प्रभुनाई ॥  
तन बतकही गूढ मृगलोचनि । समुझन सुखद सुनत भयमोचनि ॥  
मनोदरि मन महुँ अस ठण्ठ । पिअहि कालवस मतिअम भण्ठ ॥

१—प्र० : मास्त [ (१) : मस्त ] । दि०, तु०, च० : प्र० ।

२—प्र० : सवराचर । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) : चरमरमय ] ।

३—प्र० : [यह दोहा (६) में नहीं है] ।

४—प्र० : सब । दि० : कवि । तु०, च० : दि० ।

५—[प्र० : शिल्पस ] । दि० : बिसान । तु०, च० : दि० ।

६—प्र० : विधि । दि० : तु० : प्र० । च० : भिक्षु [ (६) किति ]

७—प्र० : कहहु । दि० : : प्र० । [तु० : कहेउ] । च० : प्र० [ (६) : कहिदि ] ।

८—प्र० : मोचनि [ (२) : सोचनि ] । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) : सोचनि ] ।



दो०—बहु विधि जल्पेमि सकल निसि प्रात भय १ दगदध ।

सदज आसंक तांकपनि १ सग मण्ड मद्र थंभ ॥

सो०—हृत्तइ करइ न बेग जइप मुग बगदि जार ।

मूरा हृदय न चेन जी गुरु मिलहि बिगंनि मन १ ॥१६॥

इहो प्रात जागे रघुसई । पूछा मन सन सनिन बंलाई ॥

कहहु बेगि का करिअ उगई । जानबेन कह पद मिरु नाई ॥

मुनु सर्वज सकल गुन रामी १ सयसग प्रभु सग उर बासी ॥

मन कहौ निज मति अनुमारा । दूत पठाइग बालिमुमारा ॥

नीक मत्र सग के मन माना । अगद सन कह वृथानिपाना ॥

बालितनय बुधि बल गुन धामा । लका जहु तान मम कामा ॥

बहुत बुझाई तुहहि का कहकैं । परम चरु म जानन अहकैं ॥

काजु हमार तामु हित होई । रिपु सन १ करहु बनरही सोई ॥

सो०—प्रभु आज्ञा धरि सीस चगन यदि अगद उटेउ ।

सोई गुनमागर ईस राम कृपा जापर करहु ॥

स्वय सिद्ध सन काज नाथ मोहि आरु दिण्ड ।

अस निचारि जुबराज तन पुनकिन हरविन हिये ॥१७॥

बादि चरन उर धरि प्रभुसई । अंगद चनेउ सबहि सिरु नाई ॥

प्रभु प्रनाप उर सहज असफा । रन बौजरा बालिमुत बका ॥

पुर पैठन रावन कर बेठा । खेलन रहा सो होइ गद ७ भेंटा ॥

१—प्र० : वैदि विधि करत विनोद बहु प्रा० प्रग १ दि० : प्र० । तृ० : बहु विधि जल्पेमि सकल निसि प्रात भय । च० : तृ० ।

२—प्र० : दि०, तृ०, च० : लंकपनि [ (६) : मुलंकपनि ] ।

३—प्र० : सत । [ दि० : सिव ] । तृ० : प्र० । च० : प्र० [ (८) सग, (८५) सिव ] ।

४—प्र० : उरवासी । दि० : प्र० । तृ० : गुनरासी । च० : तृ० ।

५—प्र० : बुधि बल तैज धर्मगुनरासी । दि० : प्र० । तृ० : सत्य सब प्रभु सब उरवासी । च० : तृ० ।

६—प्र० : सन । दि०, तृ०, च० : प्र० [ (१) : सै ] ।

७—प्र० : दोर गै । दि० : प्र० [ (१) : सो दोर गइ ] । तृ० : सो दोर गइ । च० : तृ० ।

बातहि बात करष बढ़ि आई । जुगल अतुल बल पुनि तरुनाई ॥  
 तेहि अंगद कहूँ लात उठई । गहि पद पटकेउ भूमि भँवाई ॥  
 निसिचर निकर देखि भट भारी । जहँ तेहँ चले न सकहि पुनारी ॥  
 एक एक सन मरमु न कहहीं । समुझि तासु नव चुप करि रहहीं ॥  
 भएउ कोलाहल नगर मँझारी । आवा कपि लका जेहि जारी ॥  
 अब धौं काह करिहि करतारा । अति समीत सब कहि बिचारा ॥  
 विनु पूछे भगु देखि देखाई । जेहि बिलोक सोइ जाइ सुखाई ॥

दो०—गएउ सभा दरबार तब सुमिरि राम पद कंज ।

सिंघ ठवनि इत उत चित्रव धीर वीर बलपुंज ॥ १८ ॥

सुरत निसाचर एक पठावा । समाचार रावनहि जनावा ॥  
 सुनत बिहसि बोला दससीसा । आनहु बोलि कहौं कर कीसा ॥  
 आपेसु पाइ दूत बहु धाए । कपिकुंजरहि बोलि लै आप ॥  
 अंगद दीख दसानन बैसा १ । सहित प्रान कज्जलगिरि जैसा १ ॥  
 भुजा बिटप सिर सृंग समाना । रोमावली लना जनु नाना ॥  
 मुख नासिका नयन अरु काना । गिरि कंदरा खोह अनुमाना ॥  
 गएउ सभा मन नैकु न, मुरा । बालितनय अतिबल बाँकुरा ॥  
 उठेउ सभासद कपि कहूँ देखी । रावन उर भा क्रोध बिसेपी ॥

दो०—जथा मत्त गज जूथ महँ पंचानन चलि जाइ ।

राम प्रताप सँभारि उर २ बैठ सभा सिरु नाइ ॥ १९ ॥

कह दसकंठ कवन तैं बंदर । मैं रघुवीर दूत दसकंधर ॥  
 मम जनकहि तोहि रही मिताई । तव हित कारन आएउँ भाई ॥  
 उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती । सिव निरंजि पूजेहु बहु भाँती ॥

१—प्र० : क्रमशः देखे, जैसे । द्वि० : प्र० [(३) (४) : बैसा बैसा] । [च० : बैसा, बैसा] ।

२—प्र० : सुमिरि मन । द्वि०, च० : प्र० । त्रि० : सँभारि उर ।

वर पाएहु कीन्हहु सब काज । जीतेहु लोकरपाल सुर<sup>१</sup> राजा ॥  
 नृप अभिमान मोह बप क्रिवा । हरि आनेहु सीता जगदंता ॥  
 अत्र सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा । सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा ॥  
 दसन गहहु तुन कंठ कुठारी । परिजन सहित संग निज नारी ॥  
 सादर जनकसुता कर आगे । येहि बिधि चलहु सरल भय त्यागे ॥  
 दो०—प्रनतपाल रघुवंसमनि आहि आहि अत्र मोहि ।

आरत गिरा सुनत प्रभु<sup>२</sup> अभय करैगो<sup>३</sup> तोहि ॥ २० ॥  
 रे कपिपोत बोलु<sup>४</sup> संभारी । मूढ़ न जानेहि मोहि सुरारी ॥  
 कहु निज नाम जनक कर भाई । केहि नाते मानिए मितआई ॥  
 अंगद नाम बालि कर बेटा । ता सो कबहुँ भई ही<sup>५</sup> भेटा ॥  
 अंगद बचन सुनत सकुचाना । हां बाली<sup>६</sup> वानर मैं जाना ॥  
 अंगद तहीं बालि फर बालक । उपजेहु बंस अनज कुल बालक ॥  
 गर्भन गण्ड<sup>७</sup> व्यर्थ<sup>८</sup> तुम्ह जाएहु । निज मुख तापस दूत कहाएहु ॥  
 अब कहु कुसल बालि कहँ अहई । विहँसि बचन तब अंगद कहई ॥  
 दिन दस गए बालि पहि जाई । वृक्षेहु कुसल सखा उर लाई ॥  
 राम विरोध कुसल जसि होई । सो सब तोहि सुनाइहि सोई ॥  
 सुनु सठ भेद होइ मन ताके । श्री रघुवीर हृदयँ नहि जाके ॥

१—प्र० : सर । द्वि० : प्र० । तृ० : सुर । च० : तृ० ।

२—प्र० : आरत गिरा सुनत । द्वि० : प्र० । [ तृ० : सुनतहि आरत गिरा ] च० : प्र० [(१) (२) : सुनतहि आरत बचन ] ।

३—प्र० : करैगो । द्वि० : प्र० [ (४) (५) (६) : करहिगे ] । [ तृ० : करहिगे ] । च० : प्र० [ (७) (८) : करहिगे ] ।

४—प्र० : बोलु । द्वि० : प्र० [ (३) (४) : न बोलु ] । तृ०, च० : प्र० ।

५—प्र० : ही । द्वि० : प्र० [ (५) : रही ] । [ तृ० : ही ] । च० : प्र० [(६) रही, (८) हुय ] ।

६—प्र० : हा बाली । [ द्वि० : रहा बालि ] । तृ० : प्र० । च० : प्र० [ (७) (८) : रहा बालि ] ।

७—प्र० : गण्ड । [ द्वि०, तृ० : गण्ड ] । च० : प्र० [ (७) (८) : गण्ड ] ।

८—प्र० : व्यर्थ । द्वि० : प्र० । तृ० : वृथा ] । च० : प्र० [ (७) (८) : वृथा ] ।

दो०—हम कुलपालक सत्त तुम्ह कुलपालक दसमीस ।

अंगो बधिर<sup>१</sup> न असन्हि<sup>२</sup> नयन कान तव बीस ॥ २१ ॥

सित विरंचि सु<sup>३</sup> मुनि समुदाई । चाहत जासु चरन सेवकाई ॥

तासु दूत होइ हम तुन बोरा । अइसिहु मति उर बिहर न तोरा ॥

मुनि कठोर बानी कपि केरी । कहत दसाननु नग्न तरेरी ॥

खल तत्र कठिन वचन सव<sup>४</sup> सहऊँ । नीति धर्म मै<sup>५</sup> जानन अहऊँ ॥

कह कपि धर्मसीलना तोरी । हमहुँ सुनी कृत पर त्रिय चोरी ॥

देखी<sup>४</sup> नयन दूत रखवारी । बूडि न माहु धर्ममंत्र धारी ॥

कान नाक बिनु भगिनि निहारी । छमा कीन्हि तुम्ह धर्म विचारी ॥

धर्मसीलना तत्र जग जागी । पावा दरसु महुँ<sup>५</sup> बड भागी ॥

दो०—जनि जरपसि जड जंतु रुपि सठ बिलोडु मम बाहु ।

लोन्पाल बल बिपुन ससि असन हेतु सब राहु ॥

पुनि नम सर मम पर निरु र कमलन्हि पर करि बास ।

सोमन भएउ मराल इव समु<sup>६</sup> सहित कैलास ॥ २२ ॥

तुम्हरे फटक मांझ सुनु अगद । मो सन मिरिहि कवन जोधा वद ॥

तत्र प्रभु नारिबिरह बलहीना । अनुज तासु दुख दुखी मलीना ॥

तुम्ह सुग्रीव कूलद्रुम दोऊ । अनुज हमार भीरु अति सोऊ ॥

जामवंत मत्री अति बूढा<sup>६</sup> । सो कि होइ अब समर अरूढा ॥

सिलिपुनर्म जानहि नल नीला । है कपि एक महा बलसीला ॥

१—प्र० : बधिर । दि०, १०, च० : प्र० [ (६) ब'हर, (८) ब'हिरौ ] ।

२—प्र० : कहहि । दि०, १०, च० : प्र० [ (६) (८) : कहर ] ।

३—प्र० : प्रमशः सव, मै । दि०, १०, च० : प्र० [ (६) मै, 'सर ] ।

४—प्र० : देखी । दि० : प्र० । [ १० : देखे ] । [ च० : (१) देखेउ, (८) देखेउ, (८) देखे ] ।

५—प्र० : महुँ । [ दि०, १० : हमहुँ ] । च० : प्र० [ (८) : हमहुँ ] ।

६—प्र०, दि०, १०, च० : बूढा [ (१) : मूढा ] ।

आवा प्रथम नगरु जेहि जारा । सुनि हँसि बोलेउ<sup>१</sup> बालिकुमारा ॥  
 सत्य वचन कहु निसिचर नाहा । साचेहु कीस कीन्ह पुर दाहा ॥  
 रावन नगर अल्प कपि दहई । को अस भूँठ सुनै<sup>२</sup> को कहई ॥  
 जो अति सुभट सराहेहु रावन । सो पुगोव केर लघु धावन ॥  
 चलइ बहुत सो बीर न होई । पठवा खबरि लेन हम सोई ॥

दो०—अब जानेउँ पुर दहेउ कपि<sup>३</sup> त्रिनु प्रभु आयेसु पाह ।  
 किरि न गएउ निज नाथ<sup>४</sup> पहिँ तेहि भय रहा लुकाइ ॥  
 सत्य कहहि दसकंठ सब मोहि न सुनि कह्यु कोह ।  
 कोउ न हमरे कटक अस तो सन लारत जो सोह ॥  
 प्रीति निरोध समान सन करिअ नीति असि आहि ।  
 जौ मृगपति घष मेढुमन्दि मल कि कहइ कोउ ताहि ॥  
 जद्यपि लघुता राम कह्यु तोहि बघै बड़ दोष ।  
 तदपि कठिन दसकंठ सुनु छत्र<sup>५</sup> जाति कर रोष ॥  
 वक्र उक्ति धनु वचन सर हृदय दहेउ रिपु कीस ।  
 प्रतिउत्तर सइसिन्ह मनहुँ काढ़त मट दससीस ॥  
 हँसि बोलेउ दसमौलि तव कपि कर बड़ गुन एरु ।  
 जो<sup>६</sup> प्रतिपाले ताम्यु हित करै उपाय अनेक ॥२३॥  
 धन्य कीस जो निज प्रभु काजा । जहँ तहँ नाचै परिहरि लाजा ॥  
 नाचि कूदि करि लोग रिभाई । पति हित करे<sup>७</sup> धर्म निपुनाई ॥  
 अगद भगमिभक्त तव जाती । प्रभु गुन कम न कहसि येहि भौंती ॥

१—प्र० : सुनउ वचन बड़ । दि० : प्र० । नृ० : सुनि हँसि बोलेउ । च० : नृ० ।

२—प्र० : सुनि अम वचन मत्व । दि०, नृ० : प्र० । च० : वो अब भूँठ सुनै ।

३—प्र० : सत्य नगर कपि जाउ । दि० : प्र० । नृ० : अब जानेउ पुर दहेउ कपि । च० : नृ० ।

४—प्र० : सुगोव । दि० : प्र० । नृ० : निज नाथ । च० : नृ० ।

५—प्र० : दत्र । दि० : प्र० [ (५) (१३) : दत्रि ] । [ च० : प्र० [ (८) (१५) : दत्रि ] ।

६—[ प्र० : जो ] । दि० : जो । नृ०, च० : दि० [ (१) : जो ] ।

७—प्र० : करै । दि० : प्र० । [ नृ० : परै ] । च० : प्र० [ (८) : परै ] ।

मैं गुन गाहक परम सुजाना । तब कटु रटनि करौं नहिं काना ॥  
 कह कपि तब गुन गाहकताई । सत्य वनमुन मोहि सुनाई ॥  
 वन विघंसि सुत बधि पुर जारा । तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा ॥  
 सोइ विचारि तब प्रकृति सुहाई । दसकंधर मैं कीन्हि दिठाई ॥  
 देखेउँ आइ जो कछु कपि माया । तुम्हरेँ लाज न रोष न मोखा ॥  
 जौं असि मति पितु खाएहि कीमा । कहि अस वचन हँसा दससीसा ॥  
 पितहि खाइ सातेउँ पुनि तोही । अवहीं समुझि परा कछु मोहीं ॥  
 बालि विमल-जस भाजनु जानी । हतौ न तोहि अधम अभिमानी ॥  
 कहुँ रावन रावन जग केने । मैं निज सवन सुने सुनु जेते ॥  
 बलिहि जितन एकु गएउ पनाला । राखाँ बाँधि सिमुन्ह हयमाला ॥  
 खेलहि बालक मारहि जाई । दया लागि बलि दीन्ह छोड़ाई ॥  
 एकु बहोरि सहसमुज देखा । घाइ घरा जिमि जंतु विसेपा ॥  
 कौतुक लागि भवन लै आवा । सो पुनस्ति मुनि जाइ छोड़ाना ॥  
 दो०—एक कहत मोहि सकुच अति रहा बालि की कौल ।

इन्ह<sup>४</sup> महुँ रावन तैं कवन सत्य वदहि तजि माख ॥२४॥  
 सुनु सठ सोइ रावनु बलसीला । हरगिरि जान जासु भुज लीला ॥  
 जान उमापति जासु सुराई । पूजेउ जेहि सिर सुमन चढ़ाई ॥  
 सिर सरोज निज दरन्हि उतारी । पूजेउ अमित बार त्रिपुगरी ॥  
 भुज बिक्रम जानहि दिगपाला । सठ अजहूँ जिन्हकें उर साला ॥  
 जानहि दिगज उर कठिनाई । जब जब भिरौ जाइ बरिआई ॥  
 जिन्ह<sup>५</sup> के दमन कराल न फूटे । उर लागत मूलक इव दूटे ॥  
 जासु चलत डोलत इमि धरनी । चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी ॥

१—प्र० : कहु । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (इ) (नम) : सुनु ] ।

२—प्र० : जेते । दि० : प्र० [ (अ) : तेते ] । [ वृ० : तेते ] । च० : प्र० [ (न) (नम) : तेते ] ।

३—प्र० : राखेउ । दि० : प्र० । वृ० : राखा । च० : वृ० ।

४—प्र० : इन्ह । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (इ) (न) : तिन्ह ] ।

५—प्र० : जिन्ह । दि० : प्र० । [ वृ० : तिन्ह ] । च० : प्र० ।

आवा प्रथम नगर जेहि जारा । मुनि हंसि बोलेउः बालिकुमारा ॥  
 सत्य वचन कहु निसिचर नाहा । साँनेहु कीस कीन्ह पुर दाहा ॥  
 रावन नगर अल्प कपि दहई । को अम भूँठ गुनेर को कहई ॥  
 जो अति सुभट सराहेहु रावन । सां सुभीव केर लागु थावन ॥  
 चलइ बहुत सो बीर न होई । पठवा रात्रि लेन हम तोई ॥

दो०—अप जानेउँ पुर दहेउ कपिः विनु प्रभु आयेनु पाइ ।  
 फिरि न गएउ निज नाथ<sup>१</sup> पहिँ तोहि भय रहा लुझाइ ॥  
 सत्य कहहि दसकंठ सय मोहि न मुनि कहु कोइ ।  
 कोउ न हमरे कटक अस तो सन लगत जो सोइ ॥  
 प्रीति विरोध समान सन करिअ नीति अमि आहि ।  
 जौं मृगपति वध मेदुन्हि भल कि कहइ कोउ ताहि ॥  
 जयवि लघुता राम कहुँ तोहि बधैं बड़ दोष ।  
 तदपि कठिन दसकंठ सुनु धन<sup>२</sup> जाति कर रोष ॥  
 वरु उक्ति धनु वचन सर हृदय दहेउ रिपु कीस ।  
 प्रतिउत्तर सइसिन्ह मनहुँ काइत भट दससीस ॥  
 हंसि बोलेउ दसमौलि तय कपि कर बड़ गुन एक ।  
 जो<sup>३</sup> प्रतिपालै तामु हित करै उपाय अनेक ॥२३॥

धन्य कीस जो निज प्रभु काजा । जहँ तहँ नाचै परिहरि लाजा ॥  
 नाचि कूदि करि लोग रिभाई । पति हित करै<sup>४</sup> धर्म निपुनाई ॥  
 अगद स्वामिभक्त तव जाती । प्रभु गुन कस न कहसि येहि भाँती ॥

१—प्र० : सुनत वचन कह । दि० : प्र० । वृ० : मुनि हंसि बोलेउ । च० : वृ० ।  
 २—प्र० : मुनि अस वचन सत्य । दि०, वृ० : प्र० । च० : नो अस भूँठ गुनेर ।

३—प्र० : सत्य नगर कपि जारेउ । दि०, वृ० : प्र० । च० : नो अस भूँठ गुनेर ।

४—प्र० : सुभीव । दि० : प्र० । वृ० : निज नाथ । च० : वृ० ।

५—प्र० : धन । दि० : प्र० [ (५) (५अ) : धनि ] । [ च० : प्र० [ (८) (८अ) : धनि ] ।

६—[ प्र० : जी ] । दि० : जो । वृ०, च० : दि० [ (६) : जी ] ।

७—प्र० : करै । दि० : प्र० । [ वृ० : धरै ] । च० : प्र० [ (८अ) : धरै ] ।

मैं गुन गाहक परम सुजाना । तव कटु रटनि करौं नहिं काना ॥  
 कह कपि तव गुन गाहकताई । सत्य वनसुत मोहि सुनाई ॥  
 वन विधंसि सुत बधि पुर जारा । तदपि न तेहि कछु कृत अपकारा ॥  
 सोइ विचारि तव प्रकृति सुहाई । दसकंधर मैं कीन्हि ढिठाई ॥  
 देखेउँ आइ जो कछु कपि भाषा । तुम्हरे लाज न रोष न मांखा ॥  
 जौं असि मति पितु खाएहि कीसा । कहि अस वचन हँसा दससीसा ॥  
 पितहि खाइ खातेउँ पुनि तोही । अबहीं समुझि परा कछु मोहीं ॥  
 बालि विमल-जस भाजनु जानी । हतौं न तोहि अधम अभिमानी ॥  
 कहुं रावन रावन जग केते । मैं निज सवन सुने सुनु जेते ॥  
 बलिहि जितन एकु गएउ पताला । राखा<sup>१</sup> बाँधि सिसुन्ह हयमाला ॥  
 खेलहि बालक मारहि जाई । क्या लागि बलि दीन्ह छोड़ाई ॥  
 एकु बहोरि सहसभुज देखा । घाइ घरा जिमि जंतु बिसेपा ॥  
 कौतुक लागि भवन लै आवा । सो पुलस्ति मुनि जाइ छोड़ावा ॥  
 दो०—एक कहत मोहि सकुच अति रहा बालि की कौल ।  
 इन्ह<sup>४</sup> महुँ रावन तैं कवन सत्य बद्रहि तजि माख ॥ २४ ॥  
 सुनु सठ सोइ रावनु यलसीला । हरगिरि जान आसु भुज लीला ॥  
 जान उमापति आसु सुराई । पूजेउ जेहि सिर सुमन चढ़ाई ॥  
 सिर सरोज निज करन्हि उतारी । पूजेउ अमित बार त्रिपुगरी ॥  
 भुज विक्रम जानहि दिगपाला । सठ अजहूँ जिन्हकें उर साला ॥  
 जानहि दिगज उर कठिनार्ई । बन जब भिरौं जाइ बरिआई ॥  
 जिन्ह<sup>५</sup> के दसन कराल न फूटे । उर लागत मूलक इव दूटे ॥  
 आसु चलत डोलत इमि घरनी । चढ़त मत्त गज जिमि लघु तरनी ॥

१—प्र० : बडु । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (८अ) : सुनु ] ।

२—प्र० : जेते । दि० : प्र० [ (५अ) : तेते ] । [ वृ० : सेते ] । च० : प्र० [ (८) (८अ) : तेते ] ।

३—प्र० : राखेउ । दि० : प्र० । वृ० : राखा । च० : वृ० ।

४—प्र० : इन्ह । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (८) : तिन्ह ] ।

५—प्र० : जिन्ह । दि० : प्र० । [ वृ० : तिन्ह ] । च० : प्र० ।



सोइ रावनु जग बिदित प्रतापी । सुनेहि न सवन अलोक प्रतापी ॥  
 दो०—तेहि रावन कहूँ लघु कहसि नर कर करसि बखान ।

रे कपि बरबर खरब खल अब जाना तव ज्ञान ॥ २५ ॥  
 सुनि अगद सकोप कह बानी । बोलु सँभारि अधम अभिमानी ॥  
 सहसबाहु भुज गहन अपारा । दहन अनल सम जासु कुठारा ॥  
 जासु परसु सागर खर धारा । बूडे नृप अगनित बहु धारा ॥  
 तासु गर्ब जेहि देखत भागा । सो नर क्यों दससीस २ अभागा ॥  
 रामु मनुज कस रे सठ बंगा । धन्वी कामु नदी पुनि गंगा ॥  
 पसु सुरधेनु करुपउरु रूखा । अन्न दान अरु रस पीयूषा ॥  
 बैनतेय खग अहि सहसानन । चिन्तामनि पुनि उपल दसानन ॥  
 सुनु मतिमंद लोक वैकुंठा । लाम कि रघुपति भगति अकुठा ॥  
 दो०—सेन सहित तव मान मथि बन उजारि पुर जारि ।

कस रे सठ हनुमान कपि गणउ जो तव सुन मारि ॥ २६ ॥  
 सुनु रावन परिहरि चतुराई । मजसि न कृपासिंधु रघुराई ॥  
 जौं खल भएसि राम कर द्रोही । ब्रह्म रुद्र सक राखि न तोही ॥  
 मूढ़ वृथा ३ जनि मारसि गाला । राम बयर होइहि अस हाला ॥  
 तव सिर निकर कपिन्ह कै आगे । परिहहि धरनि राम सर लागे ॥  
 ते तव सिर कंदुक सम ४ नाना । खेलिहहि भालु कीस चौगाना ॥  
 जबहिं समर कोषिहिं रघुनायक । छुटिहहि अति कराल बहु सायक ॥  
 तब कि चलिहि अस ५ गाल तुम्हारा । अस बिचारि भजु राम उदारा ॥

१—[ प्र० : अब जाना तव जान ] । दि० : अब जाना तव ज्ञान [ (५अ) : अब जाना तव जान ] । [ वृ० : तव न जान अब जान ] । [ च० : (६) (८अ) अर जाना तव जान, (८) तव न जान अब जान ] ।

२—प्र० : दससीस । दि० : प्र० । [ वृ० : दसकठ ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : वृथा । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : (६) मुषा, (८) (८अ) वृथा ] ।

४—प्र० : सम । दि० : प्र० । वृ० : ख । च० : वृ० ।

५—प्र० : भ्रम । दि० : प्र० । [ वृ० : मठ ] । च० : प्र० ।

सुनत बचन रावन परजरा । जरत महानल जनु घृत परा ॥  
दो०—कुंभकरन अस<sup>१</sup> वंधु मम सुत प्रसिद्ध सकारि ।

मोर पराक्रम नहि सुनेहि जितेउं चराचर भ्रारि ॥ २७ ॥  
सठ साखामृग जोरि । सहाई । बाँधा सिंधु इहै प्रभुताई ॥  
नाघहि खग अनेक बारीसा । सूर न होहि ते सुनु जइ<sup>२</sup> कोसा ॥  
मम भुज सागर बल जल पूरा । जहँ बूड़े बहु सुर नर सूग ॥  
बीस पयोधि अगाध अपारा । को अस बीर जो पाइहि पारा ॥  
दिगपालन्ह मैं नीरु भरावा । मूष सुजमु खल मोहि सुनावा ॥  
जौ पै समर सुमट तव नाथा । पुनि पुनि कहसि जाधु गुनगाथा ॥  
तौ बसीठ पठवत केहि काजा । रिपु सन प्रीति करत नहि लाजा ॥  
हर गिरि मथन निखु<sup>३</sup> मम बाहू । पुनि सठ कपि निज प्रभुहि सराहू ॥  
दो०—सूर कवन रावन सरिस स्वरु क्राटि जेहि सीस ।

हुने अनल महँ बार बहु हरपिन साखि गिरीस<sup>४</sup> ॥ २८ ॥  
जरत बिलोकेउं जवहि कपाला । विधि के लिखे अंक निज भाला ॥  
नर के कर आपन बय बाची । हसेउं जानि विधि गिरा असाची ॥  
सोउ मन समुझि त्रास नहि मोरें । लिखा बिरंचि जरठ मति मोरें ॥  
आन बीर बल सठ मम आगें । पुनि पुनि कहसि लाज पति त्यागें ॥  
कह अंगद सलउज जग माहीं । रावन तोहि सभान कोउ नाहीं ॥  
लाजवंत तव सहज सुभाऊ । निज मुख निज गुन कहसि न काऊ ॥  
सिरु अरु सैल कथा चित रही । ता तैं बार बीस तैं कही ॥  
सो भुज बल राखेहु उर घाली । जीतेहु सहसबाहु बलि बाली ॥  
सुनु मतिमंद देहि अब पूरा । काटें सीस कि होइअ सूरा ॥

१—प्र० : अम । द्वि० : प्र० । [ तृ० : सम ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : सठ । द्वि०, तृ० : प्र० । च० : जड ।

३—प्र० : निखु । द्वि० : प्र० । [ तृ० : निरखि ] । च० : प्र० [ (न) (नअ) : निरखि ] ।

४—प्र० : अतिदूरप बहु बार साखि गौरीस । द्वि० : प्र० । तृ म२\* बार बहुहरपिन साखि गिरीस । च० : नृ० ।

बाजीगर<sup>१</sup> कहूँ, कहिअ न बीरा । काटइ निज पर सकल सरीरा ॥  
दो०—जरहिं पतंग विमोह<sup>२</sup> बस भार वहहिं खरबृंद ।

ते नहिं सूर सराहिअहिं<sup>३</sup> समुझि देखु मतिमद ॥ २६ ॥  
अब जनि बतवढ़ाव खल करही । सुनु मम वचन मान परिहरही ॥  
दसमुख मैं न बसीठों आएउँ । अस बिचारि रघुवीर पठाएउँ ॥  
बार बार इमि ४ कहइ कृपाला । नहिं गजारि जसु वधैं सृकाला ॥  
मन महुँ समुझि बचन प्रभु केरे । सहेउँ पठोर बचन सठ तेरे ॥  
नाहिं त करि मुखभंजन तोरा । लै जातेउँ सीतहि बरजोरा ॥  
जानेउँ तव बलु अधम सुरारी । सुनैं हरि आनिहि<sup>५</sup> पर नारी ॥  
तैं निसिचर पति गर्व बहूता । मै रघुपति सेवक कर दूता ॥  
जौ न राम अपमानहिं डरऊँ । तोहि देखत अस कौतुक करऊँ ॥  
दो०—तोहि पटकि महि सेन हति चौपट करि तव गाउँ ।

मंदोदरी<sup>६</sup> समेत सठ जनकमुतहि<sup>७</sup> लै जाउँ ॥ ३० ॥  
जौ अस करौं तदपि न बड़ाई । सुपहिं वधैं कलु नहिं न मनुसाई ॥  
कौल कामवस कृपन विमूढ़ा । अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा ॥  
सदा रोगग्रन सतन कोधी । बिष्णुविमुख्य श्रुति संत विरोधी ॥  
तनुपोषक निंदक अधखानी । जीवत सब सम चौदह प्रानी ॥  
अस बिचारि खल वधौं न तोहीं । अब जनि रिस उपजावसि मोहीं ॥  
सुनि सक्रोध कह निसिचरनाथा । अधर दसन दसि मीजत हाथा ॥

१—प्र० : इन्द्रमणि । दि० : प्र० । तु० : बाजीगर । च० : तु० ।

२—प्र० : मोह । दि० : प्र० । तु० : विमोह । च० : तु० ।

३—प्र० : कदावदि । दि० : प्र० । तु० : सरादिअहिं । च० : तु० ।

४—प्र० : अम । दि० : प्र० । तु० : इमि । च० : तु० ।

५—प्र० : आनिहि । [ दि० : आनेहि ] । [ तु० : आनेदि ] । च० : प्र० ।

६—प्र० : नव युधि । दि० : प्र० । तु० : मंदोदरी । च० : तु० ।

७—प्र० , दि० , तु० , च० : जनकमुतहि [ (२) : जनक मुता ] ।

८—प्र० : न बड़ाई । दि० : बलु नहि । तु० , च० : दि० ।

रे कपि पोत<sup>१</sup> मरन अत्र चहसी । छोटें वदन बात बड़ि कहसी ॥  
 कटु जल्पसि जड़ कपि बन जाकें । वन प्रताप बुधि तेज न ताकें ॥  
 दो०—अगुन अमान जानि<sup>२</sup> तेहि दीन्ह पिता वनवास ।  
 सो दुख अरु जुवती विरह पुनि निसिदिन<sup>३</sup> मम त्रास ॥  
 जिन्हके बल कर गर्व तोहि ऐमे मनुज अतेक ।  
 खाहि निसाचर दिवस निसि मूढ़ समुझ तजि टेक ॥ ३१ ॥  
 जब तेहि कीन्ह<sup>४</sup> राम कइ निद्रा । क्रोधवंत अति भएउ कपिदा ॥  
 हरि हर निद्रा सुनइ जो काना । होइ पाप गोघात समाना ॥  
 कटकटान कपिकुंजर भारी । दुहु भुजदंड तमकि महि मारी ॥  
 डोलत धरनि सभासद खसे । चले भाजि भय मारुत ग्रसे ॥  
 गिरत दसानन उठा सँमारी<sup>५</sup> । भूतल परे मुकुट पटचारी<sup>६</sup> ॥  
 कुछु तेहि लै<sup>७</sup> निज सिरन्हि सँवारे । कुछु अंगद प्रभु पास पवारे ॥  
 आवत मुकुट देखि कपि भागे । दिनहीं लूक परन विधि लागे ॥  
 की रावन करि कोपु चलाए । कुलिस चारि आवत अति धाए ॥  
 कह प्रभु हँसि जनि हृदयँ डेराह । लूक न असनि केतु नहिं राह ॥  
 ये किरौट दसकंधर केरे । आनत बालितनय के पेरे ॥  
 दो०—कूदि<sup>८</sup> पवनसुत कर गहे आनि घरे प्रभु पास ।  
 कौतुक देखहि भालु कपि दिनकर सरिस प्रकास ॥ ३२ ॥  
 उहाँ कहत दसरुध रिसाई । धरि मारहु कपि भाजि न जाई<sup>९</sup> ॥

१—प्र० : अधम । दि०, वृ० : प्र० । च० : पोत ।

२—प्र० : जानि । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : विचारि ] ।

३—प्र० : निसिदिन । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (पञ्च) : अनुदिन ] ।

४—[ प्र०, दि०, वृ० : की-इ ] । च० : कीन्ह [ (८) (पञ्च) : की-इ ] ।

५—प्र० : क्रमशः मगारि उठा दसकंधर, अनि सुंदर । दि० : प्र० । वृ० : दसानन उठा सँमारी, पटचारी । च० : वृ० ।

६—प्र० : तेहि लै । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : बड़ कर ]

७—प्र० : तरकि । दि० : प्र० । वृ० : कूदि । च० : वृ० ।

८—प्र० : उहाँ सर्वोपदसाननसद सनकदर रिसाई । परहु कपिदिधरि मारहु सुनिअंगद सुसुमार ॥

येहि विधिः बेगि सुभट सन घावहु । खाहु मारु कपि जहँ तहँ पावहु ॥  
 महि अग्रीस करि केरि दोहाई २ । जियत धरहु तापन द्वी भाई ॥  
 पुनि सकोप बोलेउ जुवराजा । गाल बजावन तोहि न लाजा ॥  
 मरु गर काटि निलज कुलपाती । बल बिलोकि निहरी ३ नहि ध्याती ॥  
 रे त्रियचोर कुमारग गामी । खन मलगासि मंदमति वामी ॥  
 सन्यपात जल्पसि दुर्बादा । भएसि काल बस खल ४ मनुजादा ॥  
 या को फलु पावहिगो आगे । बानर भालु चपेटन्हि लागे ॥  
 राम मनुज बोलत असि बानी । गिरहि न तन रसना अभिपानी ॥  
 गिरिहहि रसना ससय नाही । सिरन्हि समेत समर महि माही ॥

सो०—सो नर क्यों दसकष बालि बध्यो जेहि पक सर ।  
 बीसहु लोचन अघ धिग तव जन्म कुजानि जड़ ॥  
 तव सोनित की प्यास तृपित ५ राम सायक निरुर ।  
 तजौ तोहि तेहि त्रास कटु जल्पक निसिचर अघम ॥ ३३ ॥

मै तव दसन तोरिबे लायक । आयेसु मोहि न दीन्ह रघुनायक ॥  
 अस रिस होति दसौ मुख तोरौ । लका गहि समुद्र महँ बोरौ ॥  
 गूलरि फल समान तव ६ लका । बसहु मध्य तुम्ह जनु असंका ॥  
 मै बानर फल खात न बारा । आयेसु दीन्ह न राम उदारा ॥  
 जुगुति सुन्न रावन मुसुकाई । मूढ़ सिखिहि कहँ बहुत मुटाई ॥  
 बालि न कबहुँ गाल अस मारा । मिलि तपसिन्ह तै भएसि लपारा ॥  
 सौंचेहुँ मै लवार भुजबीहा । जौ न उपारिउँ तव दस जीहा ॥

१—३०: वधि । दि०: प्र० [(५)(६अ): विधि] । [तृ०: विधि] । च०: प्र० [(८)(८अ): विधि] ।  
 २—प्र०: मरुहीन करह महि जाई दि०: प्र० । तृ०: महि अग्रीस करि केरि दोहाई ।

च०: तृ० ।

३—प्र०: निहरीति । दि०, तृ०: प्र० । च०: निहरी ।

४—प्र०: खल, दि०: प्र० । [तृ०: सठ] । च०: प्र० [(६)(८अ): निसि] ।

५—[प्र०: निष्ठनि] दि०, तृ०, च०: तृपित ।

६—प्र०, दि०, तृ०, च०: तव [(६): यद] ।

राम प्रताप सुमरि १ कपि कोषा । संग्ग भौंभ पन करि पद रोषा ॥  
 जौ मम चरन सकसि सठ थारी । फिरहिं रामु सीता में हारी ॥  
 सुनहु सुभट सब कह दससीसा । पद गहि धरनि पधारहु कीसा ॥  
 इंद्रजीत आदिक बलवाना । हरपि उठे जहँ तहँ भट नाना ॥  
 भूपटहि करि बल विपुल उपाई । पद न टरइ बैठहिं सिरु नाई ॥  
 पुनि उठि भूपटहि सुरआराती । टरइ न कीस चरन येहि भौंती ॥  
 पुरुष कुजोगी जिमि उरगारी । मोह बिटप नहिं सकहिं उपारी २ ॥  
 दो०—भूमि न छाड़त कपि चरन देखत रिपु मद भाग ।

कोटि बिघ्न तें संत कर मन जिमि नीति न त्याग ॥ ३४ ॥

कपि बलु देखि सकल हियँ हारे । उठा आपु जुवराज प्रचारे ३ ॥  
 गहत चरन कह बालिकुमारा । मम पद गहे न तोर उवारा ॥  
 गहसि न राम चरन सठ जाई । सुनत फिरा मन अति सकुचाई ॥  
 भएउ तेज हत श्री सब गई । मध्य दिवस जिमि ससि सोहई ॥  
 सिंघासन बैठेउ सिर नाई । मानहुँ संपति सकल गँवाई ॥  
 जगदातमा मानपति रामा । तासु विमुख किमि लह बिलासा ॥  
 उमा राम की भृकुटि बिलासा । होइ बिस्व पुनि पावइ नासा ॥  
 तृन तें कुलिस कुलिस तृन करई । तासु दूत पन कहु किमि टरई ॥  
 पुनि कपि कही नीति विधि, नाना । मान न ताहि कालु निअराना ॥  
 रिपु मद मधि प्रभु सुजसु सुनायो । येह कहि चलयो बालि नृप जायो ॥  
 हतौं न खेत खेलाइ खेलाई । तोहि अगहिं का करौं चड़ाई ॥

१—प्र० : समुक्ति राम प्रताप । दि० : प्र० । वृ० : राम प्रताप सुमरि । च० : वृ० ।

२—इस अर्द्धाली के बाद प्र०, दि०, वृ० में निम्न लिखित दोहा भी है, जो च० में नहीं है :

कोटिन्ह भैरवनाद सम सुभट उठे हरषाद ।

भूपटहि टरइ न कपि चरन पुनि बैठहिं सिरु नाइ ॥

३—प्र० जुवराज प्रचारे । [दि० : कपि के परचारे] । वृ०, च० : प्र० ।

प्रथमहि तासु तनय कपि मारा । सो सुनि रावनु भएउ दुखारा ॥  
जातुधान अंगद पन देखी । भय व्याकुल सन भए विसेपी ॥  
दो०—रिपु बल धरपि<sup>१</sup> हरिप कपि बालिननय बलपुंज ।

सजल सुनोचन पुलक तनु<sup>२</sup> गहे राम पद कंज ॥

सौंभ जानि दसमौलि तव<sup>३</sup> भवन गएउ बिलखाइ ।

मरोदरी निसाचरहि<sup>४</sup> चहुरि कहा समुझाइ ॥३५॥

कत समुझि मन तजहु कुमतिही । सोहन समर तुम्हहि रघुपतिही ॥

रामानुज लघु रेख , लँचाई । सोउ नहि नोघेहु अमि मनुमाई ॥

पिय तुम्ह ताहि जिनय संपामा । जा के दूत केर अमय कामा ॥

कौतुक सिंधु नाधि तव लका । आएउ कपि केहरी असरा ॥

रखवारे हति विपिन उजारा । देखन तोहि अक्ष तेहि मारा ॥

जारि नगर सन<sup>५</sup> कीन्हेभि धारा । कहाँ रहा बल गर्व तुम्हारा ॥

अब पति मृषा गाल जनि मारहु । मोर कहा कछु हृदय विचारहु ॥

पति रघुपतिहि नृपतिजनि<sup>६</sup> मानहु । अग जग नाथ अतुल बल जानहु ॥

बान प्रताप जान मारीचा । तासु कहा नहि मानेहि नीचा ॥

जनक समा अगनित महिपाला<sup>७</sup> । रहे तुम्हौ बन विपुल<sup>८</sup> विमाला ॥

भजि धनुष जानकी विआही । तन संग्राम जितेहु किन ताही ॥

१—प्र०, दि०, वृ०, च० : धरपि [ (६) धरपि, (८८) दरपि ] ।

२—प्र० : पुलक सरीर नयन जन । दि० : प्र० । वृ० : सजल सुनोचन पुलक तनु । च० : वृ० ।

३—प्र० : दसकधर । दि०, वृ० : प्र० । च० : दसमौलि तव ।

४—प्र० : रावनहि । दि० : प्र० । [ वृ० : तव रावनहि ] । च० : निसाचरहि [ (८) : तव रावनहि ] ।

५—प्र० : येद । दि०, वृ० : प्र० । च० : अस ।

६—प्र० : सख पुर । दि०, वृ० : प्र० । च० : नगर सब ।

७—प्र०, दि०, वृ०, च० : जनि [ (६) (८) : मनि ] ।

८—प्र० : भूपाला । दि० : प्र० [ (५७) : महिपाला ] । वृ० : प्र० । च० : महिपाला ।

९—प्र० : अतुल । दि० : प्र० । वृ० : विपुल । च० : वृ० [ (८) : गर्व ] ।

दुरपति सुत जानइ बल थोरा । राखा जिअन आँखि गहि फोरा ॥  
सूपनखा के गति तुम्ह देखी । तदपि हृदयँ नहिं लाज बिसेषी ॥  
दो०—बधि विराध खरदूपनहि लोला हत्यो कवध ।

बालि एक सर मार्यो तेहि जानहु दसकथ ॥२६॥  
जेहि जलनाथु बँधाएउ हेना । उनरे प्रभु दल महित सुमेला ॥  
कारुनिक दिनकर कुन केनू । दून पठएउ तन हिन हेतू ॥  
सभा मौँझ जेहिं तव बल मया । करि वरूथ महु मृगयनि जथा ॥  
अंगद हनुमत अनुचर जा के । रन बाँकुरे वीर अति बाँके ॥  
तेहि कहूँ पिय पुनिपुनि नर कहहू । मुधा मान ममना मद बहहू ॥  
अहह कंठ कुन राम विरोधा । काल बिबस मन उपज न बोधा ॥  
काल दंड गहि काहु न मारा । हरइ धर्म बन बुद्धि विगरा ॥  
निकट काल जेहि आवइ साई । तेहि अम होइ तुम्हारिहि नाई ॥  
दो०—दुइ सुन मरे दहेउ पुर अजहुँ पूर पिय देहु ।

कृपाविषु रघुनाथरे भजि नाथ विमल जसु लेहू ॥२७॥  
नारि वचन सुनि बिसिख समाना । सभा गएउ उठि होत निहाना ॥  
बेठ जाइ निधासन फूनी । अति अभिमान त्रास सन मूनी ॥  
इहाँ राम अगदहि बोलावा । आइ चरन पकज सिरु नावा ॥  
अनि आदर समीप बेठारी । गेले निहेसि कृपाल खरारी ॥  
बालिननय अति कौतुक मोहीं । तात सत्य कहु पृथ्वी तोहीं ॥  
रावनु जातुधान कुल टीका । भुज बल अतुल जामु जग लीका ॥  
तासु मुकुट तुम्ह चारि चनाए । कहहु तात कवनी विधि पाए ॥  
सुनु सर्वज प्रनन सुखमारी । मुकुट न होहिं मूष गुन चारी ॥  
साम दानरे अरु दंड विभेदा । नृए उर बमहिं नाथ कह वेदा ॥

१—प्र० : मरे । [दि० : (३) (४) (५) मारेउ, (५अ) मारे ] । [ वृ० : मारेउ ] । [ च० : मारे ] ।

२—प्र० : रघुनाथ । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (७अ) : रघुनाथि ] ।

३—प्र० : दान । दि० : प्र० [ (३) (५अ) : दामा । वृ० : प्र० । च० : प्र० [ (६) (७अ) : दामा ] ।



नीति धर्म के चरन सुहाए । अस निम्न जानि नाथ पहिं आए ॥

दो०—धर्महीन प्रमुपद विमुस कालविषम दगभीस ।

आए गुन तजि रावनहि<sup>१</sup> मुनहु कोमनाभीन ॥

परम चतुरता ससन मुनि बिहंगे राम उदार ।

समाचार पुनि सब कहें गढ़ के मानिकुमार ॥३८॥

रिपु के समाचर जय पाए । राम गनिय मय निहट घेनाए ॥

लंका चौकें चारि दुआग । केहि बिधि लागिअ करहु विचारा ॥

तब कहीस रिन्देस बिभीषन । मुमिरि हृदयें दिनहर गुन भूपन ॥

करि विचार तिन्ह मत्र दृढ़ाया । चारि अनी कपि कटकु बनाया ॥

जथाजोग सेनापति कीन्हें । जूयव सफल बोले तब लीन्हें ॥

प्रभु प्रताप कहि सब समुझाए । मुनि कपि भिषनाद करि घाए ॥

हरपित राम चरन सिर नावहिं । गहि गिरिसिखर बीरसय पावहिं<sup>२</sup> ॥

गर्जहिं तर्जहिं भालु कपीसा । जय रघुबीर कोसलाधीसा ॥

जानत परम दुर्ग अति लक्ष । प्रभु प्रताप कपि चले असका ॥

घटाटोप<sup>३</sup> करि चहुं दिसि घेरी । मुबहि निसान बजावहिं भेरी ॥

दो०—जयति राम आता सहित<sup>४</sup> जय कहीस सुभीव ।

गरजहिं केहरिनाद<sup>५</sup> कपि भालु महा बलसीव ॥३९॥

लंका भण्ड कोलाहल भारी । सुना<sup>६</sup> दसानन अति अहंकारी ॥

देखहु वनरन्ह केरि दिठाई । बिहंसि निसाचर सेन बोलाई ॥

आए कीस काल के भेरे । छुधावत रजनीचर<sup>६</sup> मेरे ॥

१—प्र० : तेहि परिहरि गुन आए । दि० : प्र० । वृ० : आए गुन तजि रावनहि । च० : वृ० ।

२—[ यह अर्द्धाली वृ०, तथा (६) और (८) में नहीं है ] ।

३—प्र० : जय लक्ष्मिन । दि० : प्र० । वृ० : आता सहित । च० : वृ० ।

४—प्र० : भिषनाद । दि० : प्र० । वृ० : केहरि नाद । च० : वृ० ।

५—प्र० : सुना । दि०, वृ०, च०, : प्र० [ (६) : सुनेत ] ।

६—प्र० : सब निसिचर । दि० : प्र० । वृ० : रजनीचर । च० : वृ० ।

अम कहि अट्टहास सठ कीन्हा । गृह वेठें अटारु बिधि दीन्हा ॥  
 सुभट मरुन चारिहूँ-दिसि जाहू । धरि धरि भालु कीस सब खाहू ॥  
 उमा रावनहि अस अभिमाना । जिमि टिटिभ खग सूत उताना ॥  
 चले निसाचर आयेसु मोंगो । गहि कर मिडिपाल वर सोंगी ॥  
 तोमर मुद्गर परसु प्रचडा । सूल कृपान परिघ गिरिखडा ॥  
 जिमि अरुनोपल निरर निहारी । धावहि सठ रग मांम अहारी ॥  
 चोंच भंग दुख तिन्हहि न सूझा । निमि घाप मनुजद अनूझा ॥  
 दो०—नानायुग सर चाप धर जासुधान बनवीर ।

कोटि कंगूरन्हि चडि गए कोटि कोटि रन धीर ॥४०॥  
 कोट कंगूरन्हि सोहहि केमे । मेरु के सुंगनि अनु घन बैसे ॥  
 वाजहि दोन निमान जुझाऊ । सुनि धुनि होइ भटन्ह मन चाऊ ॥  
 वाजहि मेरि नफीरि अपारा । सुनि माइर उर जाहि दरारा ॥  
 देखिन्ह जाइ कपिन्ह के ठट्टा । अति बिसाल तनु भालु सुमट्टा ॥  
 धावहि गनहि न अवघट घाटा । पर्वन फोरि करहि गहि बाटा ॥  
 कटमट्टाहि कोटिन्ह भट गर्जहि । दसन ओठ काटहि अति तर्जहि ॥  
 उत रावन इत राम दोहाई । जयति जयति जय परी लराई ॥  
 निसिचर सिखर समूह दहावहि । कूदि घग्हि नपि फेरि चलावहि ॥  
 छ०—धरि कुधर खड प्रचड मरुट भालु गढ़ पर डारहीं ।

भूपटहि चरन गहि पटाकि महि भजि चना बहुरि पचारहीं ॥  
 अति तरल तरन प्रताप तरपहि तर्माकि गढ़ चडि चडि गए ।  
 कपि भालु चडि मंदिरन्हि १ जहँ सहँ राम जसु गावत गए ॥  
 दो०—एक एक गहि रजनिचर २ पुनि कपि चले पराई ।  
 ऊपर आपुनु हेठ भट गिराई धरनि पर आइ ॥४१॥

१—प्र० : पचारहीं । [ दि०, तृ० : प्रचारहीं ] । च० : प्र० [ (=) (८३) प्रचारहीं ] ।

२—[ प्र०, दि०, तृ० : मंदिरन्ह ] । च० : मंदिरन्हि ।

३—प्र० : निसिचर गहि । दि० : प्र० । तृ० : गहि रजनिचर । च० : तृ० ।

राम प्रनाप प्रबल कपि जूथा । मर्दहि निसिचर निकर<sup>१</sup> बरूथा ॥  
 चढ़े दुर्ग पुनि तहँ जहँ वानर । जष रघुवीर प्रनाप दिवाकर ॥  
 चले निसाचर<sup>२</sup> निकर पगई । प्रबल पवन जिमि घन समुदाई ॥  
 हाहाकार भरउ पुर भारी । रोवहि आरत बालक<sup>३</sup> गारी ॥  
 सब मिलि देहि रावनहि गारी । राजु करत येहि मृगु हँकारी ॥  
 निजदनविचनसुना<sup>४</sup> जय<sup>५</sup> काना । फेरि सुमट लकैस गिसाना ॥  
 जो रन विमुख फिरा मै जाना <sup>६</sup> । तेहि मारिहौ<sup>७</sup> कराल कृपाना ॥  
 सर्वसु खाइ भोग करि नाना । समरभूमि भए बलनभ<sup>८</sup> प्राना ॥  
 उग्र वचन सुनि सकल डेगने<sup>९</sup> । फिरे क्रोध करि वीर<sup>१०</sup> लजाने ॥  
 सन्मुख मरन वीर कै सोभा । तब तिन्ह तज्ज प्रान कर लोभा ॥

दो०—बहु आयुधधर सुमट सब मि हिं पचारि पचारि ।

व्याकुल कीन्हे<sup>११</sup> भालु कपि परिघ प्रचड्निह<sup>१२</sup> मारि ॥४२॥

भग आतुर कपि भागन लागे । जयपि उमा जीतिहहिं आगे ॥  
 कोउ कह कहँ अगद हनुमंता । कहँ नल नील दुविद बलवंता ॥

१—प्र० : सुमट । दि०, तु० : प्र० । च० : निकर ।

२—प्र० : निसाचर । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) (८) : तमोचर ] ।

३—प्र० : बालक आतुर । दि० : प्र० । तु० : आरत बालक । च० : तु० ।

४—प्र० : सुनी । दि०, : प्र० । [ तु० : सुना ] । च० : प्र० [ (८) : सुना ] ।

५—प्र० : तेहि । दि० : प्र० । तु० : जब । च० : तु० [ (८) : जो ] ।

६—[ प्र० : सुना मै जाना ] । दि० : फिरा मै जाना [ (१) (१) (१) : सुना मै जाना ] ।

तु०, च० : दि० ।

७—प्र० : सो मै हतव । दि०, तु० : प्र० । च० : तेहि मारिहौ ।

८—प्र० : बलभ । दि० : प्र० । तु० : दुर्लभ । च० : प्र० [ (६) (८) : दुर्लभ ] ।

९—प्र० : डेराने । दि०, तु० : प्र० । [ च० : सवाने ] ।

१०—प्र० : चले क्रोध करि सुमट । दि०, तु० : प्र० । च० : फिरे क्रोध करि वीर ।

११—प्र० : व्याकुल किए । दि० : व्याकुल कीन्हे । तु० ~ दि० । च० : कीन्हे व्याकुल ।

१२—प्र० : प्रिचड्निह । दि०, तु० : प्र० । च० : प्रचड्निह ।

निज दल विचल<sup>१</sup> सुना<sup>२</sup> हनुमाना । पच्छिम द्वार रहा बलवाना ॥  
मेघनाद तहँ करइ लराई । दृष्ट न द्वार परम कठिनाई ॥  
पवननय मन भा अति क्रोधा । गर्जेउ प्रवल काल सम जोधा ॥  
कूदि लक गढ़ ऊपर आवा । गहि गिरि मेघनाद कहूँ धावा ॥  
भजेउ रथ सारथी निपाता । ताहि हृदय महुँ मारेसि लाता ॥  
दुसरे<sup>३</sup> सूत विकल तेहि जाना । स्यंदन घालि तुरत गृह आना ॥  
दो०—अंगद सुनेउ कि<sup>४</sup> पवनसुन गढ़ पर गएउ अकेल ।

समर<sup>५</sup> बाँकुरा बालिसुन तरकि चढ़ेउ कपि खेल ॥४३॥  
जुद्ध विरुद्ध कुद्ध द्वौ बंदर<sup>६</sup> । राम प्रताप सुमिरि उर अंतर ॥  
रावन भवन चढ़े तब<sup>७</sup> घाई । करहि कोसलाधीस दोहाई ॥  
कलस सहित गहि भवनु दहावा । देखि निसाचरपति भय पाग ॥  
नारिबृंद कर पीटहि छाती । अब दुइ कपि आए उतपाती ॥  
कपिनीला करि तिन्हहि डेरावहि । रामचंद्र कर सुजपु सुनावहि ॥  
पुनि कर गहि कंचन के खंभा । कहेन्हि करिअ उतपात अरंभा ॥  
कूदि परे<sup>८</sup> रिपु कटक मँझारी । लागे मर्दइ भुज बल भारी ॥  
काहुहि लात चपेटन्हि केहू । भजहु न रामहि सो फलु लेहू ॥  
दो०—एक एक सब मर्दि करि<sup>९</sup> तोरि चलावहि मुंड ।

गगन आगे परहि ते जनु फूटहि दधि कुंड ॥४४॥

१—प्र० : विचल । द्वि० : प्र० [ (३) : विकल ] । तृ०, च० : प्र० ।

२—प्र० : सुना । द्वि०, तृ०, च० : प्र० [ (६) (८अ) : सुनी ] ।

३—प्र० : दुसरे । द्वि० : प्र० । [ तृ० : दूसरे ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : सुना । द्वि० : प्र० । [ तृ० : सुने कि ] । च० : सुनेउ कि ।

५—प्र० : रन । द्वि० : प्र० । तृ० : ममर । च० : तृ० ।

६—प्र० : बंदर । द्वि०, तृ०, च० : [ (६) : बानर ] ।

७—प्र० : द्वौ । द्वि० : प्र० । तृ० : तब । च० : तृ० ।

८—प्र० : परे । द्वि० : प्र० । [ तृ० : परेउ ] । च० : प्र० ।

९—प्र० : सो मर्दिहि । द्वि० : प्र० । [ तृ० : मन मर्दिहि ] । च० : सन मर्दिकरि [ (८) : यदि रजनिचर ] ।

महा महा मुनिगा जे पावहि । ते पद गहि प्रभु पाय न जानहि ॥  
 कहइ विभीषणु निन्ह के नाम । देखि गमु निन्है निज प्रभा ॥  
 खल मनुवाइ द्विजामिष भोगी । पावहि गनि जो ज'नन जंगी ॥  
 उगा राम गृधु चित कइनाइ । बरमान गुनिरन मोहि निमिष ॥  
 देहि परम गनि सो जिअ जनी । अम कृपाल को कहहु भानी ॥  
 सुनि अस प्रभु न भजहि अम रयागी । नर मनि मंद ते परम प्रभागी ॥  
 अंगद अरु हनुमत प्रवेसा । कीन्ह दुर्ग अम कर प्रवेसा ॥  
 लंका द्वी कपि सोइहि केने । मयहि भिनु दुइ मर जै ॥  
 दो० - भुजवल रिपु दल दलमनि १ देखि दिख्य कर अत ।

कूदे जुगल प्रयास विनु १ आप जहँ मगय ॥ ४५ ॥  
 प्रभु पद कमल सीस तिन्ह नाए । देखि मुमट गुणनि मन भाए ॥  
 रामरूपा करि जुगल निहारे । मर बिगनसम पाम मुबारे ॥  
 गए जानि अंगद हनुमान । फिरे मालु मर्कट भट नाना ॥  
 जातुधान प्रदोष बल पाई । धाप करि दगसीस दोहाई ॥  
 निसिचर अनी देखि कपि फिरे । जहँ तहँ कटकटाइ भट भिरे ॥  
 द्वी दल प्रल पचारि पचारी । लरत १ मुमट नहि मनहि ४ हारी ॥  
 वीर तमीचर सत्र अति करे ५ । नाना बग्न बलीमुख भारे ॥  
 सबल जुगन दल समबल जोधा । कौतुक करत लरत करि कोधा ॥  
 प्राविट सरद पयोद घनेरे । लरत मनहु मारुन के भेरे ॥  
 अनिष अकंपन अरु अतिक्रिया । बिबलिन सेन कीन्ह इन नाया ॥  
 भएउ निमिष महँ अति अधिवास । वृष्टि होइ रुधिरपल धारा ॥

१ - प्र० : दामने । दि० : दलमनि । वृ० : दि० । [ च० : दलमलेउ ] ।

२ - प्र० : बिगनसम । दि० : प्र० । वृ० : प्रयास विनु । च० : वृ० ।

३ - प्र० : लरत । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : लरहि ] ।

४ - प्र० : मानहि । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : मानन ] ।

५ - प्र० : महावीर निसिचर । दि० : प्र० । वृ० : वीर तमीचर सत्र । च० : वृ० [ (८) : वीरनिसिचर सत्र ] ।

दो०—देखि निचिड़ तम दसहुँ दिसि कपि दल भएउ खँभार ।

एकहि एकु न देखइ<sup>१</sup> जहँ तहँ करहि पुकार ॥ ४६ ॥

येह सब मरम राम विभु जाना<sup>२</sup> । लिए बोलि अगद हनुमाना ॥

समाचार सब कहि समुझए । सुनन कोपि कपिकुंजर धाए ॥

पुनि कृपाल हँसे चाप चढ़ावा । पावक सायक सपदि चनावा ॥

भएउ प्रकास कतहुँ तम नाही । ज्ञान उदय जिमि संमय<sup>३</sup> जाहीं ॥

भालु बलीमुख पाइ प्रकासा । घाए हरपि<sup>४</sup> विगत स्रम त्रासा ॥

हनूमान अगद रन गाजे । हौंक सुन्त रजनीचर भाजे ॥

भागन भट पटकहि धरि धरनी । करहि भालु कपि अद्भुत करनी ॥

गहि पद डारहि सागर माहीं । मरु उरग भूप धरि धरि लाहीं ॥

दो०—कलु धायल कलु रन परे<sup>५</sup> कलु गढ़ चढ़े पराइ ।

गर्जहि मर्कट भालु भट<sup>६</sup> रिपु दल बल बिचलाइ ॥ ४७ ॥

निसा जानि कपि चारिउ अनी । आए जहाँ कोसलाधनी ॥

राम कृपा करि चितवा सबहीं । भए विगत स्रम बानर तबहीं ॥

उहाँ दसानन सचिव<sup>७</sup> हँकारे । सब सन कहेसि सुमट जे मारे ॥

आधा कटक कपिन्ह संहारा । कहहु बेगि का करिअ बिबारा ॥

माख्यवंत अति जरठ निसाचर । रावन मातु पिता मंत्री घर ॥

बोला बचन नीति अति पावन । सुनु तात कलु मोर सिखावन ॥

१—प्र० : देख । दि० : प्र० । [ तु० : देख तव ] । [ च० : (६) (८) देख तव, (८) देखहि ] ।

२—प्र० : सकल मरम रतुनायक । दि० : प्र० । तु० : यह सब मरम राम विभु । च० : तु० ।

३—प्र०, दि०, तु०, च० : समय [ (६) (८) : दुब सब ] ।

४—प्र० : हरपि । दि०, तु० : प्र० । [ च० : कोपि ] ।

५—प्र० : मारे कलु धायन । दि० : प्र० । तु० : धायल कटु रन परे । च० : तु० ।

६—प्र० : भालु बलीमुख । दि० : प्र० । तु० : मर्कट भालु भट । च० : तु० ।

७—प्र० : सचिव । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) (८) : सुमट ] ।

जब तें तुम्ह सीना हरि आनी । अपगुन होहि न जहि बनानी ॥

वेद पुरान जामु जम गावा । राम विनुन काहु न गुनु पावा ॥

दो०—हिरन्याक्ष आना सहित मनु कैटभ बनवान ।

जेहि मारे सोद अनरेउ कृष्णि भगवान ॥

फालरूप राल बन दहन गुनगार पनगोव ।

जेहि से हि मित्रकमन मार तेहि सनरे बचन विगोध ॥ ४८ ॥

परिहरि बपरु देहु बैदेही । मज्जु कृष्णनिधि परम सनेही ॥

ताके बचन बान सन लागे । करिआ मुँह<sup>४</sup> करि जाहि अगामे ॥

बूढ़ भएसि न त मरतेउं तोही । अर जनि नयन देखायमि मोही ॥

तेहि अपने मन अस अनुमाना । बर्षी चहत येहि कृष्णनिधाना<sup>५</sup> ॥

सो उठि गएउ कहत दुर्वादा । तन सकोप बोलेउ पननादा ॥

कीतुक प्रात देखिअहु मोरा । करिहो बटुन कर्हा फा थोरा ॥

सुनि सुत बचन भोसा आवा । प्रीत समेन अंक बैठावा ॥

करत बिचार भएउ भिनुमारा । लागे कपि पुनि चहै दुआरा ॥

कोपि कपिन्ह दुर्घट गडु घेरा । नगर फोलाहल गएउ पनेरा ॥

विप्रिधायुधधर निसिचर धाए । गढ़ तें पर्यन सिखर दहाए ॥

छं०—ढाहे महीधर सिखर कोटिन्ह विविध विधि गोला चले ।

घहरात जिमि पवि पात गर्जन जनु प्रलप के बादले ॥

मर्कट बिकट भट जुटत फटत न लटत तन जर्जर भए ।

गहि सैल तेहि<sup>६</sup> गढ़ पर चलावहि जहँ सो तहँ निसिचर हए ॥

१—प्र० : कमलः गायो, पायो । दि० : प्र० । वृ० : गावा, पावा । च० : वृ० ।

२—प्र० : सव निरचि जेहि सेहि । दि० : प्र० । वृ० : जेहि सेहि सव कमल भर ।

च० : वृ० ।

३—प्र० : तासो । दि०, वृ० : प्र० । च० : तेहिसन ।

४—प्र० : मुँह । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : मुख ] । वृ० : प्र० । [ च० : मुख ] ।

५—प्र० : कृष्णनिधाना । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) (पञ्च) : श्री गणेश ] ।

६—प्र० : तेहि । दि० : प्र० । [ वृ० : तेह ] । च० : प्र० [ (६) : तेह ] ।

दो०—मेघनाद सुनि सवन अस गद्गु पुनि छेंका आइ ।

उतरि बीरवर दुर्ग तें<sup>१</sup> सन्मुख चलेउ बजाइ ॥४८॥

कहैं कोसलाधीस द्वौ आता । धन्वी मरुत लोक बिख्याता ॥

कहैं नन नील दुविद<sup>२</sup> सुधीवा । अगद हनुमंत बलसीवा ॥

कहाँ विभीषनु आता द्रोही । आजु सठहि<sup>३</sup> हठि मारौ ओही ॥

अस कहि कठिन बान संधाने । अतिमय कोप<sup>४</sup> सवन लागि ताने ॥

सर समूह सो छाँड़ै लागा । जनु सपत्त घावहि बहु नागा ॥

जहँ तहँ परन देखिअहि वानर । सन्मुख होइ न सके तेहि अवसर ॥

भागे मय व्याकुल कपि रिच्छा<sup>५</sup> । बिसरौ सगहि जुद्ध कै इच्छा ॥

सो कपि मालु न रन महँ देखा । कीन्हैसि जेहि न प्रान अवसेपा ॥

दो०—मारैसि दस दस बिसिख सव<sup>६</sup> परे भूमि कपि बीर ।

सिंघनाद गर्जन भएउ मेघनाद रन धीर<sup>७</sup> ॥५०॥

देखि पवनपुत कटक बिहाला । क्रोधवंत जनु घाएउ काला ॥

महा महीधर तमकि उषारा<sup>८</sup> । अति रिस मेघनाद पर डारा ॥

आवन देखि गएउ नभ सोई । रथ सारथी तुरग सब खोई ॥

चार चार पचार हनुमाना । निरुट न आव मरमु सो जाना ॥

१—प्र० : उतरयो वार दुर्ग ते । दि० : प्र० [ (१अ) उतरि दुर्ग तें बीरवर ] । नृ० : उतरि बीरवर दुर्ग तें । च० : तु० ।

२—प्र० : सगहि । दि० : प्र० [ (१अ) सठहि ] । तु० : सठहि । च० : तु० ।

३—प्र० : क्रोध । दि०, तु० : प्र० । च० : कोप ।

४—प्र० : जई -इ भागि चने । दि० : प्र० । तु० : म । मय व्याकुल । च० : तु० ।

५—प्र० : दस दस सर सव मारैसि । दि० : प्र० । नृ० : मारैनि दस दस विभिन्न सव । च० : तु० ।

६—प्र० : वरि गनं मेघनाद वनवीर । दि० : प्र० । तु० : गर्जं । भ उ मेघनाद रन धीर । च० : तु० ।

७—प्र० : महाधैर एक तुरग उषारा । दि० : प्र० । तु० : महा महीधर तमकि उषारा । च० : तु० ।



राम समीप<sup>१</sup> गएउ घननादा । नाना भांनि करेमि दुर्गता ॥  
 अस्त सप्त आयु । सप्त दारे । कौतुक ही प्रभु काटि निररे ॥  
 देति प्रताप<sup>२</sup> मूढ तिमिराना । करै लाग माया बिधि ननः ॥  
 जमि कोउ करै मरुइ सैं गेला । दरपये<sup>३</sup> गरि स्वल्प पेना ॥

दो०—जासु प्रबल माया बस सिर चिरचि बट्ट दोट ।

ताहि देखाये निसिनर निज माया मर्त सोट ॥५१॥  
 नभ चढ़ि ब पइ बिजुन अंगारा । महि तैं प्रगट होहि जलयाग ॥  
 नाना भांति पिषान पिपाची । मारु काटु धुनि बोनहि गाची ॥  
 बिष्टा पूष रुधिर कच हाड़ा । बापइ कवहुं उपत बट्ट दाढ़ा ॥  
 बरपि धूरे कीन्हेसि अधिआरा । सूक्त न आपन हायु पमाग ॥  
 कवि अट्टलाने माया देखैं । सप्त कर मरनु बना येहि लेखैं ॥  
 कौतुक देखि राग मुसुकाने । भए समीत सकल कवि जाने ॥  
 एक वान काटी सव माया । जमि दिनकरहर निभिर निकाया ॥  
 कृपादृष्टि कवि भालु बिलोके । भए प्रनन रन रहहि न रोके ॥

दो०—ग्राधेसु मांगेउ<sup>४</sup> राम पहि अंगदादि कवि साथ ।

लक्ष्मिन चले सक्रोप अति<sup>५</sup> वान सरासन हाथ ॥५२॥  
 छतज नयन उर बाहु बिसाला । हिमगिरि निभ तनु कल्लु एक लाला ॥  
 इहाँ दसानन सुभट पठाए । नाना सब अस्त गहि धाए ॥  
 भूधर नख बिट्ठायुध धारी । धाए कवि जय राम पुकारी ॥  
 भिरे सकल जोरिहि सन जोरी । इत उत जय इच्छा नहि थोरी ॥  
 मुठिरुन्ह लातन्ह दाठन्ह काटहि । कवि जयसील मारि पुनि डाटहि ॥  
 मारु मारु घरु मरु घरु मारु । सीस तोरि गहि भुजा उषारु ॥

१—प्र० : खुबनि निकट । दि० : प्र० । वृ० : राम समीप । च० : वृ० ।

२—प्र० : प्रताप । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (३) (८३) : प्रताप ] ।

३—प्र० : मापि । दि० : प्र० । [ वृ० : मापी ] । च० : मणित ।

४—प्र० : ऋद्धिदोष । दि० : प्र० । वृ० : सरोप अति । च० : वृ० ।

असि रव पूरि रही नव खंडा । धावहिं जहँ तहँ रुंड प्रचंडा ॥  
देखहिं कौतुक नम सुरवृंदा । कबहुँक त्रिसनय कबहुँ अनंदा ॥  
दो०—रुधिर गाड़ भरि भरि जम्भो ऊपर धूरि उड़ाइ ।

जिमि१ अँगार रासिन्ह पर मृतक धूम रहरे छाइ ॥५३॥  
घायल वीर बिराजहिं कैसे । कुसुमिन किंसुक के तरु जैसे ॥  
लखिनन मेघनाद द्वौ जोधा । मिरहिं परसपर करि अति क्रोधा ॥  
एकहि एक सकइ नहिं जीतो । निसिचर छलबल करइ अनीतो ॥  
क्रोधवन तव भएउ अनंता । भंजेउ रथ सारथी तुरंता ॥  
नाना विधि प्रहार कर सेपा । राक्षस भएउ प्रान अवसेपा ॥  
रावनसुत निज मन अनुमाना । संकट भएउ हरिहि मम प्राना ॥  
बीरघातिनी छाड़िसि साँगी । तेजपुंज लखिमन उर लागी ॥  
मुख्या भई सक्ति कें लागें । तव चलि गएउ निकट भय त्यागें ॥  
दो०—मेघनाद सम फोटि सत जोधा रहे उठाइ ।

जगदाधार अनंत२ किमि उठइ चले खिसिग्राइ ॥ ५४ ॥  
सुनु गिरिजा क्रोधानल जासू । जारइ भुवन चारि दम आसू ॥  
सक संप्राम जीति को ताही । सेवहिं सुर नर अग जग जाही ॥  
यह कौतूहल जानइ सेई । जा पर कृपा राम कै होई ॥  
सध्या भइ किरिं द्वौ बाहिनो । लगे सँभारन निज निज अनी ॥  
व्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर । लखिमन कहों वृष् करुनाकर ॥  
तव लागि लै आएउ हनुमाना । अनुज देखि प्रभु अनि दुख माना ॥  
जामवत कह बैद सुपेना । लंका रह को पठइ प्र लेना ॥  
धरि लघु रूप गएउ हनुमंता । आनेउ भवन समेत तुरंता ॥

१—प्र० : अनु । दि०, वृ० : प्र० । च० : जिमि ।

२—प्र० : रहयो । दि०, वृ०, प्र० । च० : रह ।

३—प्र० : सेव । दि० : प्र० । वृ० : अनी । च० : वृ० ।

दो०—रघुपति चरन सरोज<sup>१</sup> सिर नाएउ आइ सुपेन ।

कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुन लेन ॥ ५५ ॥  
 राम चरन सरसिअ उर राखी । चना प्रभवनसुन बल भापी ॥  
 उहाँ दून एक मरमु जनाग । रावनु कालनेमि गृह आवा ॥  
 दसमुख क<sup>२</sup> मरमु तेहि सुना । पुनि पुनि कालनेमि सिर धुना ॥  
 देखन तुम्हहि नगर जहि जारा । तासु पंथ को रोरुनिहारा<sup>३</sup> ॥  
 भजि रघुपति करु हित आपना । छाडहु नाथ मृषा<sup>४</sup> जल्पना ॥  
 नील कज तनु सुदर स्यामा । हृदयँ राखु लोचनाभिरामा ॥  
 अहकार ममता मद<sup>५</sup> त्यागू । महा मोह निसि सोवत<sup>६</sup> जागू ॥  
 काल व्याल कर भक्तक जोई । सपनेहु समर कि जीतिअ सोई ॥  
 दो०—सुनि दसक<sup>७</sup> रिसान अनि तेहि मन कीन्ह बिचार ।

राम दूत कर भरौ बरु येह खल रत मल भार ॥ ५६ ॥  
 अस कहि चला<sup>८</sup> रचिसि मग माय । सर मंदिर बर बाग बनाया ॥  
 मारुनसुन देखा सुभ आसम । मुनिहि बूझिजलु पिऔ जाइ लम ॥  
 राक्षस कपट बेप तहँ सोहा । माथापति दूनहि चह मोहा ॥  
 जाइ पवनसुन नाएउ माथा । लाग सो कहइ राम गुन गाथा ॥  
 होन महा रन रावन रामहिं । जितिहहिं रामु न ससय या महि ॥  
 इहाँ भर मै देखौ भाई । ज्ञान दृष्टि बल मोहिं अधिकाई ॥  
 मोंगा जल तहि दीन्ह कमडल । कह कपि नहिं अघाउ<sup>९</sup> धारे जल ॥

१—प्र० । ११५ । ॥ व । दि० प्र० । १० । रघुपति । १२१ सरोज । च० १० ।

—प्र० । ११५ । ॥ व । दि० प्र० । (१) (५) (५३) । रोरुनिहारा । १० । रोरुनिहारा ।  
 च० १० ।

३—प्र० । मृषा । दि० प्र० । (५३) । मृषा । [ १० । मृषा ] । च० प्र० । (६) (८)  
 मृषा ] ।

४—प्र० । मैतै नीर मूढ । दि० प्र० । १० । अहकार ममता मद । १० । १० ।

५—प्र० । सुन । दि० प्र० । १० । मोहन । १० । १० ।

६—प्र० । दमर । दि० प्र० । १० । दमर । १० । १० ।

सर मञ्जन करि आतुर आवहु । दिच्छा देउँ ज्ञान जेहि पावहु ॥  
दो०—सर पैठन कपि पद गहा मकरी तव अकुलान ।

मारी सो धरि दिव्य तनु चली गगन चढ़ि जान ॥ ५७ ॥  
कपि तव दरस मइउँ निःपापा । मित्र तात मुनिवर कर सापा ॥  
मुनि न होइ यह निसिचर घोरा । मानेहु सत्य बचन कपि<sup>१</sup> मोरा ॥  
अस कहि गई अपद्यग जबहीं । निसिचर निकट गएउ सो<sup>२</sup> तबहीं ॥  
कह कपि मुनि गुरदखिना लेह । पाछें हमहि मंत्र तुम्ह देह ॥  
सिर लंगूर लपेटि पधारा । निज तनु प्रगटैसि मरती वारा ॥  
राम राम कहि द्याइसि प्राणा । मुनि मन हरपि चलेउ हनुमाना ॥  
देखा सैल न औपध चीन्हा । सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा ॥  
गहि गिरि निसि नम धावत मएऊ । अवधपुरी ऊपर कपि गएऊ ॥  
दो०—देखा भरत विसाल अति निसिचर मन अनुमानि ।

बिनु फर सर तकि<sup>३</sup> मारेउ चाप सवन लगि तानि ॥ ५८ ॥  
परेउ मुरुझि महि लागत सायक । सुमिरत राम राम रघुनायक ॥  
मुनि प्रिय बचन भरतु उठि<sup>४</sup> घाए । कपि समीप अति आतुर आए ॥  
बिहल बिलोकि कीस उर लावा । जागत नहि बहु भौंति जगावा ॥  
मुख मलीन मन भए दुखारी । कहत बचन लोचन भरि बारी ॥  
जेहि विधि राम विमुख मोहि कीन्हा । तेहि पुनि येह दारुन दुख दीन्हा ॥  
जौ मोरे<sup>५</sup> मन बच अरु काया । प्रीति राम गद कमल अमाया ॥  
तौ कपि होउ विगत सन सूना । जौ मोपर रघुपति अनुकूला ॥  
सुनत बचन उठि बैठ कपोमा । कहि जय जयति कोसलाधीसा ॥  
सौ०—जीन्ह कपिहि उर लाइ पुलकित तनु लोचन सजल ।

प्रीति न हृदय समाइ सुमिरि राम रघु कुल तिलक ॥ ५९ ॥

१—प्र० : कपि । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) (त्य) : प्रभु ] ।

२—प्र० : कपि । दि० : प्र० । तु० : सो । च० : तु० ।

३—प्र० : सायक । दि०, तु० : प्र० । च० : सर तकि ।

४—प्र० : तव । दि०, तु० : प्र० । च० : उठि ।

दुर्मुख सुरारिपु मनुज अहारी । मट अतिताय अकंपन भारी ॥  
अपर महोदर आदिक बीग । परं मनर भरि मय रनभीरा ॥  
दो०—सुनि दमकपर वनन तन कुम्भरग्न चिन्ता ॥

जगदमा हरि आनि अब सठ चहन दहयन ॥ ६२ ॥  
मल न कीन्ह तै निसिचर नाहा । अय मोहि आई जगाहि पाहा ॥  
अजहं तात त्यागि अभिमाना । मारु गन होइहि दहयन ॥  
हैं दससीय मनुज रघुनायक । जाके हनुमान सो पायक ॥  
अहह वधु तै कीन्हि ग्योटाई । प्रथमहि मोहि न मुनापरि आई ॥  
फीन्हेहु प्रभु बिरोध तेहि देखक । नुग निरचि गुर जके सेवक ॥  
नारद सुनि माहि ज्ञान जो कहैऊँ । कहतेउँ तोहि समय निर्देऊँ ॥  
अय भरि अरु भेंदु मोहि भाई । लोनन सुकन करी मै जाई ॥  
स्याम गात सरमीरुह लोचन । देखी जाइ तापय मोचन ॥  
दो०—राम रूप गुन सुमिरि मन १ मगन भण्ड छन एक ॥

रावन मोंगेउ कोटि घट मद अरु महिष अनेक ॥ ६३ ॥  
महिष खाइ करि मदिरा पाना । गर्जा बज्राघात समाना ॥  
कुम्भकरन दुर्मद रन रगा । चना दुर्ग तजि सेन न सगा ॥  
देखि बिभीषनु आगे गएऊ ॥ पद गहि नाम कहत निज भएऊ ॥  
अनुज उठाइ हुर्यै तेहि लावा ५ । रघुपति भगन जानि मन भावा ५ ॥  
तात लात रावन मोहिं मारा । कहत परम हित मत्र बिचारा ॥  
तेहिं गलानि रघुपति पहि आएउँ । देखि दीन प्रभु के मन भाएउँ ॥  
सुनु सुत भएउ कालवस रावन । सो कि मान अब परम सिखावन ॥

१—प्र० : क्रमशः कहा, निर्वाहा । दि० : प्र० । तु० : बहेऊ, निवर्द्धक । च० : तु० ।

२—प्र० : मै । दि०, तु० च० : प्र० [ (६) (८) निज ] ।

३—प्र० : सुमिरत । दि० : प्र० । तु० : सुमिरि मत्र । च० : तु० ।

४—प्र० : क्रमशः आएऊ, परेउ चरन निज नाम सुनाण्ड । दि०, तु० प्र० । च० : गएऊ, पद गदि नाम कहत निज भएऊ ।

५—प्र० : क्रमशः लायो, भायो । दि०, तु० : प्र० । च० : लावा, भावा ।

घन्य घन्य तैं घन्य विभीषन । मणहु तात निसिचर कुल भूषन ॥  
बंधु बस तुम्ह<sup>१</sup> कीन्ह उजागर । मजेहु राम सोभा सुख सागर ॥

दो०—बचन कर्म मन कपट तजि मजेहु राम रनधीर ।

जाहु न निज परं रूम्ह मोहि मणउँ कालबस बीर ॥ ६४ ॥

बंधु बचन सुनि चला<sup>२</sup> विभीषन । आपउ जहँ त्रैलोक्य विभूषन ॥

नाथ भूधराकार सरीरा । कुंभकरन आवत रनधीरा ॥

एतना कपिन्ह सुना जय काना । किलकिताइ घाए चलवाना ॥

लिए उपारि<sup>३</sup> बिटप अरु भूधर । कटकटाइ डारहिं ता ऊपर ॥

कोटि कोटि गिरि सिखर प्रहारा । करहिं मालु कपि एक एक<sup>४</sup> बारा ॥

मुरै<sup>५</sup> न मन तन टरै<sup>५</sup> न टारा<sup>५</sup> । जिमि गज अर्क फलन्हिको मारा<sup>५</sup> ॥

तय मारुनसुत मुठिका हनेऊ<sup>६</sup> । परेउ<sup>६</sup> धरनिग्याकुल सिर घुनेऊ<sup>६</sup> ॥

पुनि उठि तेहि मारेउ हनुमंता । घुमिंत भूतल परेउ तुरंता ॥

पुनि नल नीलहि अबनि प्यारिसि । जहँ तहँ पटक पटक<sup>७</sup> भट डारिसि ॥

चली बलीमुख सेन पराई । आत भय त्रसितन कोउ समुडाई ॥

दो०—अगदादि कपि घायबस<sup>७</sup> करि समेत सुग्रीव ।

काँख दाबि कपिशज कहूँ चला अमित बलसीव ॥ ६५ ॥

उमा करत रघुपति नर लीला । खेलगरुड़ जिमि अहिगन मीला ॥

भूकुटि भंग जो कालहि खाई । ताहि कि सोहइ ऐसि लराई ॥

१—प्र० : तैं । द्वि०, तृ० : प्र० । च० : तुम्ह ।

२—प्र० : चला । द्वि०, तृ०, च० : प्र० [ (६) (८) : फिरा ] ।

३—प्र० : उठाइ । द्वि०, प्र० । तृ० : उपारि । च० : तृ० ।

४—प्र० : एक एक । द्वि० : प्र० [ (४) (५) : एकहिं ] । [ तृ० एकहिं ] च० : प्र० [ (८) (८) : एकहिं ] ।

५—प्र० : क्रमशः मुरथो, टरथो, टारथो, मारथो । द्वि० : प्र० । तृ० : मुरै, टरै, टारे, मारे । च० : प्र० ।

६—प्र० : क्रमशः हन्यो, परथो, घुन्यो । द्वि० : प्र० । तृ० : हनेऊ, परेऊ, घुनेऊ । च० : तृ० ।

७—प्र० : मुरुद्धि । द्वि० : प्र० । तृ० : घायबस । च० : तृ० ।

जग पावनि कीरति चिस्तरिहहिं । गाइ गाइ भवनिधि नर तरिहहि ॥  
 मुग्धा गइ मारुतसुत जागा । सुग्रीवहि तब खोजन लागा ॥  
 कपिराजहु<sup>१</sup> के मुख्या बीती । निबुकि गणउ तेहि मृतक प्रतीती ॥  
 फाटेसि दसन नासका काना । गर्जि अरुस चलेउ तेहि जाना ॥  
 गहेसि चरन गहि घग्नि<sup>२</sup> पक्षारा । अति लाघव उठि पुनि तेहि मारा ॥  
 पुनि आएउ प्रभु पहिं बलवाना । जयति जयति जय कृपानिधाना<sup>३</sup> ॥  
 नारु फान फाटे सोइ<sup>४</sup> जानी । किरा क्रोध करि रुइ मन भ्लानी ॥  
 सहज भीम पुनि बिनु सुति नासा । देखत कपिदल उपजी आसा ॥  
 दो०—जय जय जय रघुवसमनि घाए कपि दे हह ।

एरहि बार जो तासु<sup>५</sup> पर छाड़ेन्हि गिरि तरु जूह ॥ ६६ ॥  
 कुंभकरन रन रंग बिरुद्धा । सन्मुख चला काल जनु क्रुद्धा ॥  
 फोटि फोटि कपि घरि घरि खाई । जनु टीढी गिरि गुहाँ सभाई ॥  
 फोटिन्ह गहि सगीर सन मर्दा । फोटिन्ह भीजि मिलत महि गर्दा ॥  
 मुख नासा स्रवन्निहि की थाटा । निसरि पराहिं भालु कपि ठाटा ॥  
 रन मद मत्त निसाचर दर्पा । निस्वग्रसिहि जनु येहि विधि अर्पा ॥  
 सुरे सुभट सब<sup>६</sup> फिरहिं न फेरे । सुभ न नयन सुनहिं नहि टेरे ॥  
 कुंभकरन कपि कौज बिहारी<sup>७</sup> । सुनि धाई रजनीचर धारी ॥  
 देखी राम त्रिकल बटकाई । रिपु अनीक नाना त्रिधि आई ॥

१—प्र० : सुग्रीव । दि० : प्र० । गृ० : कपिराजहु । च० : गृ० ।

२—प्र० : गहेउ चरन गहि भूमि पक्षारा । दि० : प्र० । गृ० : गहेसि चरन गहि धरनि पक्षारा । च० : गृ० ।

३—प्र० : जयति जयति जय कृपानिधाना । दि० : प्र० । [ गृ० : जय जय कृपानिधान भगवा । ] । च० : प्र० [ (६) (अ) : जय जय कृपानिधान भगवाना ]

४—प्र० : रिम । दि० गृ० : प्र० । च० : सोइ [ (८) (अ) : सो ] ।

५—प्र० : तामु । दि० : प्र० । गृ० : सो तामु । च० : गृ० [ (८) गो तामि, (अ) ते तामु ] ।

६—प्र०, दि०, गृ०, च० : सब [ (६) (अ) : सब ] ।

७—प्र०, दि०, गृ०, च० : बिहारी [ (६) बिहारी, (अ) बिहारी ] ।

दो०—सुनु सौमित्र कपीस तुम्ह सकल<sup>१</sup> सँभारेहु सेन । .

मैं देखौं खल बल दलहि बोले राजिवनयन ॥ ६७ ॥  
 कर सारंग त्रिसिख<sup>२</sup> कटि भाया । मृगपति ठवनि<sup>३</sup> चले रघुनाथा ॥  
 प्रथम कीन्ह प्रभु धनुष टकोरा । रिपु दल बधिर भएउ सुनि सोरा ॥  
 सत्यसंघ छाड़े सर लच्छा । कालमर्ष जनु चले सपत्ता ॥  
 अति जय चले निसित<sup>४</sup> नाराचा । लगे कटन मट विकट पिसाचा ॥  
 कटहि चरन उर सिंर मुजदंडा । बहुनरु बीर होहि सत खंडा ॥  
 घुमि घुमि घायल महि परही । उठि संभारि सुभट पुनि लरही ॥  
 लागत बान जलद<sup>५</sup> जिमि गाजहि । बहुतक देखि कठिन सर भाजहि ॥  
 रुंड प्रचंड मुंड विनु धावहि । धरु धरु मारु मारु धुनि गावहि ॥  
 दो०—धन महँ प्रभु के सायकन्हि काटे विकट पिसाच ।

पुनि रघुपति के त्रोन<sup>६</sup> महँ प्रविसे सय नाराच ॥ ६८ ॥  
 कुंभकरन मन दीख विचारी । हनी निमिष महँ निसिचर<sup>७</sup> धारी ॥  
 भएउ क्रुद्ध दारुन बलबीरा<sup>८</sup> । क्रियो<sup>९</sup> मृगनायक नाद गँभीरा ॥  
 कोपि महीघर लेइ उपारी । डारइ जहँ मरकट भट भारी ॥  
 आवत देखि सैल प्रभु भारे । सान्हि काटि रज सम करि डारे ॥  
 पुनि धनु तानि कोपि रघुनायक । छाड़े अति कराल बहु सायक ॥

१—प्र० : सुनु सुग्रीव विभीषण अनुज । दि० : प्र० । तु० : सुनु सौमित्र कपीस तुम्ह सकल । च० : तु० ।

२—प्र० : साजि । दि० : प्र० । तु० : त्रिसिख । च० : तु० [ (अ) : वठिन ] ।

३—प्र० : अरि दल दलन । दि० : प्र० । तु० : मृगपति ठवनि । च० : तु० ।

४—प्र० : उई तहँ चने रिपुल । दि० : प्र० । तु० : अति जय चने निसित । च० : तु० ।

५—प्र० : जलद । दि०, तु०, च० : प्र० [ (१) वनद, (अ) मेघ ] ।

६—प्र० : रघुबीर निषंग । दि० : प्र० । तु० : रघुपति के त्रोन । च० : तु० ।

७—प्र० : उठि द्यन मांझ निसाच । दि० : प्र० । तु० : हनी निमिष महँ निसिचर । च० : तु० ।

८—प्र० : भा अति क्रुद्ध महा । दि०, तु० : प्र० । च० : भएउ क्रुद्ध दारुन ।

९—प्र० : क्रियो । दि० : प्र० । [ तु०, च० : करि ] ।



तन महुं प्रबिसि निसरि सर जाहीं । जनु दापिनि धन माँझ समाहीं ॥  
 सोनित खवन सोह तन कारे । जनु कज्जल गिरि गेरु पनारे ॥  
 बिकल बिलोकि भालु कपि घाए । बिहँसा जवहि निकट भट<sup>१</sup> आए ॥  
 दो०—गर्जत धाएउ बेग अति<sup>२</sup> कोटि कोटि महि भीस ।

महि पटकइ गजराज इव सपथ करइ दससीस ॥ ६९ ॥  
 भागे भालु बलीमुख जूथा । वृक बिलोकि जिमि मेघ बरूथा ॥  
 चले भागि कपि भालु भगानी । बिकल पुकारत आरत बानी ॥  
 येह निसिचर दुकाल सम अहई । कपि कुल देस पग्न अर चहई ॥  
 कृपा चारिधर राम सरारी । पाहि पाहि प्रनतारतिहारी ॥  
 सनरुन बचन सुनन भगवाना । चले सुधारि सरासन बाना ॥  
 राम सेन निज पाछे घाली । चले सकोप महा बलसाली ॥  
 खँचि धनुष सत सर सधाने । छूटे तीर सरीर समाने ॥  
 लागत सर धावा रिस भरा । कुधर डगमगत डोलति धरा ॥  
 लीन्ह एक तेहि सैल उपाटी । रघुनुलतिलक भुजा सोइ काटी ॥  
 धावा धाम बहु गिरि भारी । प्रभु सोउ भुजा काटि महि पारी ॥  
 काटे भुजा सोह खल कैसा । पक्षहीन मदरगिरि जैसा ॥  
 उप बिलोकनि प्रभुहि बिलोका । प्रसन चहत मानहुं त्रैलोक्य ॥  
 दो०—हरि चिचार घोर अति<sup>३</sup> धावा बदन पसारि ।

गगन सिद्ध सुर त्रासित हा हा हेति पुकारि ॥ ७० ॥  
 सभय देव करुआनिधि जानेउ । खवन प्रजन सरासन तानेउ ॥  
 बिमिस निद्धर निसिचर मुग भरेऊ । तदपि महाबल भूमि न परेऊ ॥  
 सरन्हि भरा मुग सन्मुख धाम<sup>४</sup> । कालत्रोन सजीव जनु आग ॥

१—द० : बरि । दि० : प्र० । [ नृ० : बनि ] । च० : म<sup>१</sup> ।

२—द० : म<sup>२</sup> । दि० : प्र० । नृ० : गर्जत पारउ बेग बनि । च० : नृ० ।

३—द० : हरि चिचार घोर बनि । दि० : प्र० । [ नृ० : हरि चिचार अति घोरत्वर ] ।

[ च० : (१) हरि चिचार अति घोरत्वर, (२) (अ) हरि चिचार अति घोरत्वर ] ।

४—द०, दि०, नृ०, च० : सुग सन्मुख [ (१) : म<sup>३</sup> सुग सो ] ।

तव प्रभु कोपि तीव्र सर लीन्हा । घर तें मित्र तासु सिरु कीन्हा ॥  
 सो सिरु परेउ दसनन आगें । बिम्लमण्ड जिमि फनिमनित्यगे ॥  
 धरनि धमइ घर घाव प्रचंडा । तव प्रभु काटि कीन्हा दुड संडा ॥  
 परे भूमि जिमि नम तें मूघर । हेठ दावि कपि भालु निसाचर ॥  
 तासु तेजु प्रभु वदन समाना । सुर मुनि सवहिं अचंभौ माना ॥  
 नमरे हुंदभी बजावहिं हरपहिं । जय जय करि प्रसून सुर ३ वरपहिं ॥  
 करि विनती सुर सकल सिघाए । तेही समय देवरिपि आए ॥  
 गगनोपरि हरि गुनगन गाए । रुचिर वीर रस प्रभु मन भाए ॥  
 बेगि हतहु खल कहि मुनि गए । राम समर महि सोभित भए ॥

छ०—संप्रामभूमि बिराज रघुपति अतुल बल कोसलघनी ।

सम बिंदु मुख राजीव लोचन रुचिर ४ तन सोनित कनी ॥

मुज जुगल फेरत सर सरासन भालु कपि चहुँ दिसि बने ।

कह दास तुलसी कहि न सक छावि सेप जेहि आनन घने ॥

दो०—निसिचर अधम मलायतन ५ ताहि दीन्ह निज घाम ।

गिरजा ते नर मंदमति जे न भजहि श्रीगम ॥७१॥

दिन के अंत फिरी द्वौ अनी । समर भई सुभट्न्ह सम घनी ॥

राम कृपा कपि दल बल बाढ़ा । जिमि तून पाइ लाग अति डाढ़ा ॥

छीजहि निसिचर दिनु अरु राती । निज मुख कहें धर्म ६ जेहि भौंती ॥

बहु बिलाप दसकंधर करई । बंधु सीस पुनि पुनि उर धरई ॥

१—[ तु०. (६) तथा (८) में यह अर्थात् नहीं है ] ।

२—प्र० : सुर । दि०, तु० : प्र० । च० : नम ।

३—प्र० : अस्तुति करहिं सुमन वहु । दि० : प्र० । [ तु० : जय जय करहिं सुमन सुर ] ।

च० : जय जय करि प्रसून सुर [ (८) : जय जय करहिं सुमन सुर ] ।

४—प्र० : अवन । दि० : प्र० । तु० : रुचिर । च० : तु० ।

५—प्र० : मलाकर । दि० : प्र० । तु० : मलायनन । च० : तु० ।

६—प्र० : सुल । दि० : प्र० । तु० : धर्म । च० : तु० ।

रोवहि नारि हृदय हति पानी । तासु तेज बल त्रिपुन बखानी ॥  
 मेघनाद तेहि अवसर आवा । कहि बहु कथा पिता समुझावा ॥  
 देखेहु कालि मोरि मनुमाई । अवहि बहुत का करौ बड़ाई ॥  
 इष्टदेव सैं बल रथ पाएउँ । सो बन तात न तोहि देखाएउँ ॥  
 येहि विधि जल्पत मएउ बिहाना । चहुँ दुआर लागे कपि नाना ॥  
 इत कपि भालु काल सम बीरा । उत रजनीचर अति रनधीरा ॥  
 लहि सुभट निज निज जय हेतू । बरनि न जाइ समर खगहेतू ॥  
 दो०—मेघनाद मायारचित<sup>१</sup> रथ चढ़ि गएउ अंकास ।  
 गजेंउ प्रलय पयोद जिमि<sup>२</sup> भइ कपि कटकहि त्रास ॥ ७२ ॥

सक्ति सूल तरवारि कृपाना । अस्त्र सख कुलिसायुध नाना ॥  
 डारइ पासु परिघ पापाना । लागेउ वृष्टि करइ बहु नाना ॥  
 रहे दसहुँ दिसि सायक छाई<sup>३</sup> । मानहुँ मघा मेघ भरि लाई ॥  
 घरु घरु मारु सुगहि कपि<sup>४</sup> काना । जो मारै तेहि कोउ न जाना ॥  
 गहि गिरितर अकास कपि धावहि । देखहि तेहिन दुखित फिरि आवहि ॥  
 अवघट घाट घाट गिरि कंदर । मायाचल कीन्हेसि सर पंजर ॥  
 जाहि कहौ भए व्याकुल बंदर । सुरपति बंदि परेउ जनु मदर ॥  
 मारुतसुत अंगद नल नीला । कीन्हेसि विकल सकल बलसीला ॥  
 पुनि लक्ष्मिन सुभीव दिभीषन । सरन्ह मारि कीन्हेसि जर्जर तन ॥  
 पुनि रघुपति सैं<sup>५</sup> जूझइ लागे । सर छाड़इ होइ लागहि नागा ॥

१—य० : रा । न्य । दि०, वृ० : प्र० । च० : मायारचिन [(न्य) माया रथी, (न्य) सुने  
 सार । ]

२—य० : कटकास करि । दि० : प्र० । वृ० : प्रलय पयोद जिमि । च० : वृ० ।

३—य० : दस निमि रहे बान नम छाई । दि० : प्र० । वृ० : रहे दसहुँ दिमि सायक  
 छाई । च० : वृ० ।

४—य० : सुनि पुनि । दि० : प्र० । वृ० : सुगहि कपि । च० : वृ० [(न) (न्य) सुनि]  
 ५—य० : ये । दि० : प्र० । [ वृ० : सन ] । च० : प्र० [ (१) : मन ] ।

व्याल पासवस भए खरारी । स्ववंस अनंत एक अधिकारी ॥  
नट इव कपट चरित कर नाना । सदा स्वतंत्र रासु<sup>१</sup> भगवाना ॥  
रन सोभा लागि प्रमुहि<sup>२</sup> वंधावा<sup>३</sup> । देखि दसा देवन्ह भय पावा<sup>४</sup> ॥  
दो०—खगपति<sup>५</sup> जासु<sup>६</sup> नाम अपि मुनि क्यटहिं भव पास ।

सो प्रमु आव कि बंध तर<sup>७</sup> व्यापक चिस्व निवास ॥ ७३ ॥  
चरित राम के सगुन भवानी । तकि न जाहिं बुद्धि बल बानी ॥  
अस विचारि ले तज बिरागी । रामहि मजहिं तर्क सब त्यागी ॥  
व्याकुल कटक कीन्ह घननाद । पुनि भा प्रगट कहइ दुर्वादा ॥  
जामवंत कह खल रहु ठाढ़ा । सुनि कूरि ताहि क्रोध अति बाढ़ा ॥  
बूढ़ जानि सठ छाड़ेउं तोही । लागेसि अधम<sup>८</sup> पचारइ मोही ॥  
अस कहि तीव्र<sup>९</sup> तिसूल चलायो । जामवंत कर गहि सोइ घायो ॥  
मारेसि मेघनाद कै छाती । परा धरनि<sup>१०</sup> धुमिल सुरधाती ॥  
पुनि रिसान गहि चरन किरावा<sup>११</sup> । महि पछारि निज बलु देखरावा<sup>१२</sup> ॥  
बर प्रसाद सो मरइ न मारा । तब गहि पद लंका पर द्वारा ॥  
इहाँ देवरिषि गरुड़ पठावा<sup>१३</sup> । राम समीप सपदि सो आवा<sup>१४</sup> ॥

१—[ प्र०, दि० : एक ] । त०, च० : रासु ।

२—प्र० : प्रमुहि । दि० : प्र० । [ त० : आसु ] । च० : प्र० [ (न) : आसु ] ।

३—प्र० : बंधायो । दि० : प्र० । त० : बंधावा । च० : त० ।

४—प्र० : नाग पास देवन्ह भय पायो । दि० : प्र० । त० : देखिदसा देवन्ह भय पावा ।  
च० : त० ।

५—प्र० : गिरिजा । दि०, त० : प्र० । च० : खगपति ।

६—प्र० : जासु । दि०, त० : प्र० । च० : जाकर ।

७—प्र० : सोकि बंधनर आवै । दि० : प्र० । त० : सो प्रमु आव कि बंधतर । च० : त० ।

८—प्र० : अधम । दि० : प्र० । [ त० : पतिन ] । च० : प्र० [ (द) (द्वय) : पतिन ] ।

९—प्र० : खल । दि०, त० : प्र० । च० : तीव्र ।

१०—प्र० : भूमि । दि०, त० : प्र० । च० : धरान ।

११—प्र० : किरावो, देखरावो । दि० : प्र० । त० : किरावा, देखरावा ।

१२—प्र० : पठावो, आवो । दि० : प्र० । त० : पठावा, आवा । च० : त० ।

दो०—पद्मगारि राए सकल धन महँ ब्याल बरुथ ।  
 भर बिगत माया तुगत हरषे बानर जूथ ॥  
 गहि गिरि पादप उपल नक्ष ध.प. क्षीस रिमाई ।  
 चन तभीचर विद्वन्तर गढ़ पर चढ़े पराई ॥७४॥  
 मेघनाद कै गुरुदा जागी । पिन्हि विनोकि लाज अनिलगी ॥  
 सुरत गएउ गिरि वर कंदग । करौ अजय मन अग मन भग ॥  
 सो सुधि पाई विभीषन कहई । सुनु प्रभु सवानार अग अरई ॥  
 मेघनाद मग करई अपायन । लाल मायावी देख सतावन ॥  
 जौ प्रभु सिद्ध होई सो पाइहि । नाथ योगिरिपु जीनि नज इहि ॥  
 सुनि रघुपति अतिसय सुनु माना । योने अगदादि कपि नाना ॥  
 लखिमन संग जाहु सब भाई । फरहु बिषम जज्ञ फर जाई ॥  
 तुह लखिमन मारेहु रन आही । देखि ममयसु दुष आत मोटी ॥  
 जायवन कपिराज ॥ विभीषन । सेन समेत रहेहु तीनिउँ जन ॥  
 जय रघुवीर दीन्ह अनुभासन । कटि निपग कसि साजि सरासन ॥  
 प्रभु प्रताप उर धरि रनशील । बोले धन इय गिरा गभीर ॥  
 जौ तेहि आजु बधे त्रिनु आवउँ । तौ रघुपति सेवक न कहावउँ ॥  
 जौ सत सकर कहि सहाई । तदवि हतौ रघुवीर दोहाई ॥

१—प्र० : खगपति सब धरि राए माया नाग बरुथ ।  
 माया बिगत भए सर हरषे बानर जूथ ॥ दि० : प्र० ।  
 २० : पद्म गारि राए सकल धन महँ ब्याल बरुथ ।  
 भर बिगत माया सुरत हरषे बानर जूथ ॥ च० : २० ।

२—प्र० : इहाँ विभीषन सेन बिचारा । सु-हु नाथ नल अनुज उदारा ॥ दि० : प्र० ।  
 २० : सो सुधि पाई विभीषन कहई । सुनु प्रभु स. वार अस अरई ॥ च० : २० ।  
 ३—प्र० : पुनि । दि० : प्र० । २० : रिपु । च० : २० ।

४—प्र० : मैं इस अर्द्धांश के धन-नर निम्ननिजित अर्द्धांश और है—  
 मरिहु तेदि नल बुद्धि चलाई । जेहि छीने निसिचर अनु मारई ॥  
 दि० : प्र० । २० : मैं नहों है । च० : २० ।

५—प्र० : सुधीव । दि०, २० : प्र० । च० : कपिराज ।

दो०—बंदि राम पद कमल जुग<sup>१</sup> चलेउ तुरंत अनंत ।

अंगद नील मयंद नल संग सुमट<sup>२</sup> हनुमंत ॥७५॥

जाइ कपिन्ह देखा सो बैसा । आहुति देत रुधिर अरु भैंसा<sup>३</sup> ॥

तय कीसन्ह कृन जज्ञ विधंसा<sup>४</sup> । जव न उठइ तव करहिं प्रसंसा ॥

तदपि न उठइ धरेन्हि कच जाई । लातन्हि हति हति चले पराई ॥

लै त्रिसूल धावा कपि भागे । आप जहँ रामानुज आगे ॥

आवा परम क्रोध कर मारा । गर्ज घोर रव बारहिं बारा ॥

कोपि मरुतसुत अंगद घाए । हति त्रिसूल उर धरनि गिराए ॥

प्रभु कहँ छाड़ेसि सूल प्रचंडा । सर हति कृत अनंत जुग खंडा ॥

उठि बहोरि मारुति जुबराजा । हतहिं कोपि तेहि घाउ न बाजा ॥

फिरे वीर रिपु भरइ न मारा । तय धावा करि घोर चिकारा ॥

आवत देखि क्रुद्ध जनु काला । लक्ष्मिन छाड़े बिसिख कराला ॥

देखेसि आवत पवि सम बाना । तुरत भएउ खल अंतरधाना ॥

विविध बेप धरि करइ लराई । कबहुँक प्रगट कबहुँ दुरि जाई ॥

देखि अजय रिपु डरपे कीसा । परम क्रुद्ध तव भएउ अहीसा ॥

लक्ष्मिन मन अस मंत्र दृढ़ावा । येहि पापिहिं मैं बहुत खेलावां<sup>५</sup> ॥

सुमिरि कोसलाधीस प्रतापा । सर संधान कीन्ह करि<sup>६</sup> दापा ॥

छाड़ेउ बान मौंझ उर लागा । मरती बार कपटु सनु त्यागा ॥

दो०—रामानुज कहँ रामु कहँ अस कहि छाड़ेसि प्रान ।

धन्य धन्य तव जननी ७ कह अंगद हनुमान ॥७६॥

१—प्र० : खुपति चरन नाद सिर । दि० : प्र० । [ तु० : खुपति चरनीह नाद सिर ] ।

च० : बंदि राम पद कमल जुग ।

२—प्र०, दि०, तु० च०, : सुमट [ (६) : रिपय ] ।

३—[ (६) मैं यह अर्द्धाली नहीं है ] ।

४—प्र० : कीन्ह कपिन्ह सब । दि०, तु० : प्र० । च० : तव कीसन्ह कृन ।

५—तु० : लक्ष्मिन मन अस मंत्र दृढ़ावा । दि० : प्र० । [ तु० : अत्र अत्र उचिन कपिन्ह भय पावा ] । च० : प्र० [ (६) (अ) : अत्र वध उचिन कपिन्ह भय पावा ] ।

६—प्र० : करि [ (२) : प्रति ] । दि०, तु०, च० : प्र० ।

७—प्र० : धन्य धन्य तव जननी । दि० : प्र० । [ तु० : धन्य सक जिन मातु तव ] । च० : प्र० [ (६) (अ) धन्य सक जिन मातु तव ] ।

बिनु प्रयास हनुमान उठावा<sup>१</sup> । लंका द्वार राखि तेहि<sup>२</sup> आवा ॥  
 तासु मरन सुनि सुर गंवर्त्ता<sup>३</sup> । चढ़ि बिमान आए नम सर्वा ॥  
 वरपि सुमत दुंदुभी वजावहिं । श्रीरघुनाथ<sup>४</sup> बिल जमु गावहिं ॥  
 जय अनत बय जगदाधारा । तुम्ह ममु सब देवन्हि निस्तारा ॥  
 अस्तुति करि सुर सिद्ध सिधाए । लखिमन कृपासिंधु पहिं आए ॥  
 सुन बध सुना दसानन जवहीं । मुरुखित भएउ परेउ महि तवहीं ॥  
 मंदोदरी रुदन कर मारी । उर ताडत बहु भाँति पुकारी ॥  
 नगर लोग सब व्याकुल सोचा । सज्जल कहहिं दसकंधर पोचा ॥  
 दो०—तब लफेस अनेक विधि<sup>५</sup> समुझाई सब नारि ।

नस्व<sup>६</sup> रूप प्रपंच<sup>७</sup> सब देखहु हृदय विचारि ॥७७॥

तिन्हहि ज्ञानु उपदेसा रावन । आपुन मंद कथा अति पावन<sup>८</sup> ॥  
 पर उपदेस कुसल बहुतेरे । जे आचरहिं ते नर न धनेरे ॥  
 निसा सिरानि भएउ भिनुसारा । लगे भालु कपि चारिहुं द्वारा ॥  
 सुभट बोलाइ दसानन बोला । रन सन्मुख जाकर मन डोला ॥  
 सो अवहीं बरु जाउ पराई । संजुग बिमुख भएँ न भलाई ॥  
 निज भुज बल मै बयरु बढ़ावा । देहौं उतरु जो रिपु चढ़ि आवा ॥  
 अस कहि मरुत बेग रथ साजा । बाजे सकल जुभाऊ बाजा ॥  
 चले वीर सब अतुलित बली । अनु कज्जल कै आँधी चली ॥  
 असगुन अमित होहिं तेहि काला । गन्ध न भुज बल गर्व विसाला ॥

१—प्र० : प्रमत्तः उठावो, आवो । दि० : प्र० । नृ० : उठावा, आवा । च० : दृ० ।

२—प्र० : पुनि । दि०, नृ० : प्र० । च० : तेदि ।

३—प्र० : रघुनाथ । दि० : प्र० । [ वृ० : रघुवीर ] । च० : प्र० [ (३) : रघुवीर ] ।

४—प्र० : दसकंठ विविध विधि । दि० : प्र० । वृ० : लकिन अनेक विधि । च० : वृ० ।

५—प्र० : जगन । दि० : प्र० । नृ० : प्रपंच । च० : वृ० ।

६—प्र० : अनि पावन । दि० : प्र० [ (५७) : सुम पावन ] । वृ०, च० : प्र० [ (३) : सुम पावन ] ।

छं०—अति गर्व गनइ न सगुन असगुन सबहि आयुष हाथ ते ।  
भट गिरत रथ ते वाजि गज चिह्नरत भाजहि साथ ते ॥  
गोमायु गृद्ध करार खर ख रवान रोवहि १ अति घने ।  
जनु काल दूत उलूक बोलहि बचन परम भयावने ।

दो०—ताहि कि संपति सगुन सुभ सपनेहुं मन विताम ।

मृतद्रोह रत मोहवस राम विमुख रनि काम ॥ ७८ ॥

चलेउ निसाचर कटकु अपारा । चतुरंगिनी अनी बहु धारा ॥  
विविध भौंति बाहन रथ जाना । विपुल वरन पताक ध्वज नाना ॥  
चले मत्त गजे जूथ घनेरे । प्राचिट जलद मरुत जनु प्रेरे ॥  
वरन वरन विरदैत निजाया । समर सूर जानहि बहु माया ॥  
अति विचित्र बाहिनी बिराजी । वीर बसंत सेन जनु साजी ॥  
चलत कटकु दिगसिंधुर डिगहीं । छुमिन पयोधि कुधर डगमगहीं ॥  
उठी रेनु रवि गएउ छपाई । मरुत थकित वसुधा अकुलाई ॥  
पवन निसान घोर ख बाजहि । प्रलय समयरे के घन जनु गाजहि ॥  
भेरि नफीरि बाज सहनाई । मारु राग सुमट सुखदाई ॥  
केहरि नाद वीर सब करहीं । निज निज बल पौरुष उच्चरहीं ॥  
कहइ दसानन सुनहु सुमट्टा । मर्दहु भालु कपिन्ह के ठट्टा ॥  
हौ मारिहौ भूप द्वौ भाई । अस कहि सन्मुख फौज रेंगाई ॥  
येह सुधि सकल कपिन्ह जव पाई । धाए करि रघुवीर दोहाई ॥

छं०—धाए बिसाल कराल मर्कट भालु काल समान ते ।

मानहु सपत्त उड़ाहि भूधर वृंद नाना वान ते ॥

१—प्र० : बोलहि । दि० : प्र० [ (१) : रोवहि ] । वृ० : रोवहि । च० : वृ० ।

२—प्र०, दि०, वृ०, च० : मग्न [ (२) : पवन ] ।

३—प्र० : प्रलय समय । दि० : प्र० । [ वृ० : महा प्रलय ] । [ च० : (६) (८५) महा प्रलय, (८) प्रलय वाज ] ।



नर दमन सैल महाद्रुमायुध सबल संक न मानही ।

जग राम रावन गच गज मृगगज मुजनु बगानही ॥

दो०—हुहँ दिसि जयजयहार करि निज निज जोगी जानि ।

गिरे धीर इत रघुपनिहि<sup>१</sup> उन रावनहि बसानि ॥७६॥

रावनु रथी विरथ रघुवीरा । देखि विभीषनु भणउ अधीरा ॥

अधिक प्रीति मन मा संदेहा । बंदि चरन कह सहित सनेहा ॥

नाथ न रथ नहिं तनु पदत्राना । कहि विधि जिनब वीर चलाना ॥

सुनहु सखा कह कृपानिधाना । जेहि जय होइ सो रथेंशन प्राणा ॥

सौरज धीरज तेहि रथ बारा । सत्य सील दृढ़ ध्वजा पनाका ॥

बल विवेक दम परहित धोरे । प्रमा कृपा समता रजु जोरे ॥

ईस भजनु सारथी मुजाना । प्रिति चर्म संनोप कृपाना ॥

दान परसु बुधि सक्ति प्रचंडा । वर विज्ञान कठिन कोदंडा ॥

अमल अचल मन ओन सगाना । सम जम नियम सिलीमुख नाना ॥

कथच अभेद विप्र गुर पूजा । येहि सम विजय उपाय न दूजा ॥

सखा धर्ममय अम रथ जाकें । जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताकें ॥

दो०—महा अजय ससार रिपु जीति सकै सो धीर ।

जाकें अस रथ होइ दृढ़ सुनहु सखा मतिधीर ॥

सुनत विभीषन प्रभु वचन<sup>२</sup> हरपि गहे पद कज ।

येहि मिस मोहि उपदेस दिअ<sup>३</sup> राम कृपा सुख पुंज ॥

उत पचार दसकंठ भट<sup>४</sup> इत अगद हनुमान ।

सरन निसाचर मालु कपि करि निज निज प्रभु प्राण ॥८०॥

१—प्र० : रात दित । दि० : अ० [ (५) राम कहि ] । तु० : रघुपनिहि<sup>१</sup> । च० : तु० [ (८) राम कहि ] ।

२—प्र० : सुनि प्रभु वचन विभीषन । दि० : प्र० । तु० : सुनत विभीषन प्रभु वचन । च० : तु० ।

३—प्र० : येहि मिस मोहि उपदेसेहु । दि० : प्र० । [ तु० : येहि विधि मोहि उपदेसे ] । च० : येहि मिस मोहि<sup>३</sup> उपदेस दिअ ।

४—प्र० : दसकंधर । दि० : प्र० । तु० : प्र० । च० : दसकंठ भट ।

सुर ब्रह्मादि सिद्ध मुनि नाना । देखत रन नम चढ़े विमाना ॥  
हमहूँ उमा रहे तेहि संगी । देखत-राम चरित रन रंगा ॥  
सुमट समर रस दुहुँ दिसि माते । कपि जयसील राम बल ताते ॥  
एक एक सन भिरहिं पचारहिं । एकन्ह एक मदिं महि पारहिं ॥  
मारहिं काटहिं धरहिं पधारहिं । सीस तोरि सीसन्ह सन मारहिं ॥  
उदर विदारहिं भुजा उपारहिं<sup>१</sup> । गहि पद अवनिपटकिमटडारहिं<sup>२</sup> ॥  
निसिचर मट महि गाड़हिं मालू । ऊपर डारि<sup>३</sup> देहिं बहु बालू ॥  
वीर बलीमुख जुद्ध विरुद्धे । देखिअत विपुल काल जनु क्रुद्धे ॥

छं०—क्रुद्धे कृतांत समान कपि तनु सवत सोनिन राजहीं ।

मर्दहिं निसाचर फटकु मट बलबन धन जिमि गाजहीं ॥

मारहिं चपेटन्ह डाटि दातन्ह काटि लातन्ह मीजहीं ।

चित्रकरहिं मरकट मालु धल बल करहिं जेहिं खल धीजहीं ॥

घरि गाल फारहिं उर विदारहिं गल अंतावरि मेलहीं ।

प्रह्लादपति जनु विविध तन धरि समर अंगन खेलहीं ॥

धरु मारु फाटु पधारु घोर गिरा गगन महि भरि रही ।

जय राम जो तृन तैं कुलिस कर कुलिस तैं कर तृन सही ॥

दो०—निज दल विचल विलोकि तेहिं<sup>४</sup> बीस भुजा दम चाप ।

चलेउ दसानन<sup>५</sup> कोपि तब फिरहु फिरहु करि दाप ॥८१॥

घाएउ परम क्रुद्ध दसकंधर । सन्मुख चले हूह दै बंदर ॥

गहि कर पादप उपल पहारा । डारेन्ह तापर एरुहि वारा ॥

लागहिं सैल वज्र तनु तासू । खंड खंड होइ फूटहिं आसू ॥

१—प्र०, दि०, वृ०, च० : उपागहिं, डारहिं [ (६) उपायहिं, दायहिं ] ।

२—प्र० : डारि । दि०, वृ०, च० : प्र० [(६) (त्य) : डारि ] ।

३—प्र० : विचल देखिसि । दि० : प्र० । [ वृ० : विचल विलोकि तेहिं ] । च० : विचल विलोकि तेहिं<sup>४</sup> ।

४—प्र० : रथ चढ़ि चलेउ दसानन । दि० : प्र० । वृ० : चलेउ दसानन कोपि तब । च० : वृ० ।

चला न अचल रहा रथ<sup>१</sup> रोपी । रन दुर्मद रावनु अति कोपी ॥  
 इत उत भूपटि दपटि कपि जोधा । मर्दई लाग भएउ अति क्रोधा ॥  
 चले पगइ भालु कपि नाना । त्राहि त्राहि अंगद हनुमाना ॥  
 पाहि पाहि रघुवीर गोसाईं । येह खल खाइ दाल की नाई ॥  
 तेहि देखे कपि सकल पराने । दसहु चाप सायक सधाने ॥

छ०—संधानि धनु सर निरर छाड़ैसि उरग जिमि उड़ि लागहीं ।  
 रहे पूरि सर धरनी गगन दिसि बिदिसि कहँ कपि भागहीं ॥  
 भयो अति कोलाहलु बिकल कपि दल भालु बोलहि आतुरे ।  
 रघुवीर करुना सिंधु आरत बधु जन रक्षक हरे ॥

दो०—बिचलत देखि अनोरु निज कटि<sup>२</sup> निपग धनु हाथ ।  
 लखिमनु चले सरोप तव<sup>३</sup> नाइ राम पद माथ ॥८२॥  
 रे खल का मारसि कपि भालू । मोहि बिनोकु तोर मै कालू ॥  
 खोजत रहेउ तोहि सुत धाती । आजु निपाति जुडावौं छाती ॥  
 अस कहि छाड़ैसि बान प्रचडा । लखिमन किए सकल सन खडा ॥  
 कोटिन्ह आयुध रावन डारे<sup>४</sup> । तिल प्रबान करि काटि निवारे ॥  
 पुनि निज बान्ह कीन्ह प्रहारा । स्यदनु भजि सारथी मारा ॥  
 सन सत सर मारे दस भाला । गिरि स्रगन्ह जनु प्रबिसहि ड्याला ॥  
 सन सर पुनि मारा उर माहीं । परेउ अवनि<sup>५</sup> तल सुधि फछु नाहीं ॥  
 उठा प्रमत्त पुनि भुरखा जागी । छाड़ैसि ब्रह्म दीन्हि जो सौंगी ॥

१—प्र० : रथ । दि०, तृ०, च० : प्र० [ (६) (८५) : सहा ] ।

२—प्र० : निररल दिक्क देनि कटि कसि । दि० : प्र० । [ तृ० : निर दन निरन बिलोकि तेहि कटि ] । च० : बिचलन देनि अनोरु निज कटि ।

३—प्र० : बद्ध होइ । दि० : प्र० । तृ० : सरोप तव । च० : तृ० ।

४—प्र० : डारे । दि० : प्र० । [ तृ० : गारे ] । च० : प्र० ।

५—प्र० : परनि । दि० : प्र० । तृ० : अवनि । च० : तृ० ।

छं०—सो ब्रह्मदत्त प्रचंड शक्ति अनंत उर लागी सही ।

पर्यो बीर विकल उठाव दसमुख अतुल बल महिमा रही ॥

ब्रह्मांड भवन<sup>१</sup> विराज जाकेँ एक सिर जिमि रज कनी ।

तेहि चह उठावन मूढ़ रावन जान नहि त्रिभुवन घनी ॥

दो०—देखत धाएउ<sup>२</sup> पवनसुत बोलत बचन कठोर ।

आवत तेहि उर महेँ हतेउ<sup>३</sup> मुष्टि प्रहार प्रघोर ॥८३॥

जानु टेकि कपि भूमि न गिरा<sup>४</sup> । उठा सँभारि बहुत रिस भरा ॥

मुठिका एक ताहि कपि मारा । परेउ सैल अनु बज्र प्रहारा ॥

सुरुद्धा गइ बहोरि सो जागा । कपि बल त्रिपुल सराहन लागा ॥

धिग धिग मम पौरुष धिग मोही । जौं तै जियत उठेसि सुरद्रोही ॥

अस कहि लछिमन वहुँ कपि लयायो । देखि दसानन विसमय पायो ॥

कह रघुबीर समुझु जिअँ आता । तुम्ह कृतांत भक्तक सुरत्राता ॥

सुनत बचन उठि बैठ कृपाला । गई गगन सो सकति कराला ॥

धरि सर चाप चलत पुनि भए । रिपु समीप अति आतुर गए<sup>५</sup> ॥

छं०—आतुर बहोरि बिभंजि स्यंदनु सूत हति व्याकुल कियो ।

गिर्यो धरनि दसकंधर विकलतर बान सत बेध्यो हियो ॥

१—प्र० : भवन । दि० : प्र० [ (३) (४) भुवन ] । [ तृ० : भुवन ] । च० : प्र० [ (८) भुवन ] ।

२—प्र० : देखि पवन सुन धाएउ । दि० : प्र० । तृ० : देखत धाएउ पवन सुन । च० : तृ० ।

३—प्र० : आवत कपिदि इन्दो तेहि । दि० : प्र० । तृ० : आवत तेहि उर महेँ हतेउ । च० : तृ० ।

४—प्र० : गिरा । दि० : प्र० । [ तृ० : परा ] । च० : तृ० ।

५—प्र० : पुनि कोदंड बान गहि धाए ।

रिपु सन्मुख अति आतुर आए ॥ दि०, तृ० : प्र० ।

च० : धरि सर चाप चलत पुनि भए ।

रिपु समीप अति आतुर भए ॥

सारथी दूसर पाति रथ छेहि सुरत तंघा री गयो ।

रघुनीरखें प्रतापपुंन बरोरि प्रभु चरनन्हि नरो ॥

दो०—उहाँ दमानन जागि कपि करै लाग पनु जज ।

जय नारत रघुपति विभुग १ मठ हठ दम गति अज ॥८४॥

इहाँ विभीषन मर मुषि पार्द । मषदि जद रघुनिरि सुनार्द ॥

नाथ करइ रावन एक जागा । गिद्ध मरें नहि मरिहि अमंगा ॥

पठयहु देवर बेगि मट बंदर । कहि विषम आग दगधर ॥

मात होन प्रभु सुमट पठाए । अनुभदादि अगद सब धाए ॥

कौतुक कूदि चढ़े कपि लका । पैठे रावन मरन अमहा ॥

जज्ञ करत जगही सो ढरा । सफल कपिन्ह भा क्रोध विनेगा ॥

रन तें निलज भाजि गृह आवा । इहो आइ चक्र ध्यानु लगावा ॥

अस कहि अगद मारा २ लाता । चितव न सठ स्यारथ मनु राना ॥

छं०—नहि चिनच अज कपि कोपि तर ४ गहि दमन्ह लानन्ह मारही ।

धरि केस नारि निकारि बाहेर तेइति दीन पुकारही ॥

सन उठेउ क्रुद्ध ५ कृतांत सम गहि चरन बानर डारई ।

येहि बीच कपिन्ह विधस कृत मख देखि मन महुँ हारई ॥

दो०—मख विधसि कपि कुसल सन ६ आए रघुपति पास ।

चलेउ लंकपति ७ क्रुद्ध होइ त्यागि जीवन के आस ॥८५॥

१—प्र० : राम विरोध विजय चढ़ । दि० : प्र० [(५५) राम विरोधी विजय चढ़] । [तु० : विजय चढ़त रघुपति विभुग] । च० : जय चाहत रघुपति विभुग ।

२—प्र० : नाथ । दि० : प्र० । तु० : देव । च० : तु० [(२४): देव] ।

३—प्र० : मारा । दि० : प्र० [(५४): मारेउ] । [तु०, च० : मारेउ] ।

४—प्र० : करि कोय कपि । दि० : प्र० । तु० : कपि कोपि तर । च० : तु० ।

५—प्र० : क्रुद्ध । दि० : प्र० । [तु०, च० : कोपि] ।

६—प्र० : जज्ञ विधसि कुसल कपि । दि० : प्र० । [तु० : जगि विधस बरि कुसल सन] । च० : मख विधसि कपि कुसल सब ।

७—प्र० : निसाचर । दि० : प्र० । तु० : लंकपति । च० : तु० ।

चलत होहिं अति असुम मयंकर । बैठहिं गीष उड़ाइ सिरन्ह पर ॥  
 भएउ कालवस काहुँ न माना । कहेसि वजावहु जुद्ध निसाना ॥  
 चली तमीचर अनी अपारा । बहु गज रथ पदाति असवारा ॥  
 प्रभु सन्मुख धाए खल कैसेँ । सज्जम समूह अनल कहँ जैसेँ ॥  
 इहाँ देवतन्ह विनतीः कीन्ही । दारुन विपति हमहि येहिं दीन्ही ॥  
 अब जनि राम खेलावहु येही । अतिसय दुखित होति बेदेही ॥  
 देव बचन सुनि प्रभु मुसुकाना । उठि रघुवीर सुधारे बाना ॥  
 जटा जूट हट बंधि मार्ये । सोहहिं सुमन बीच बिच गार्ये ॥  
 अरुन नयन बारिद तनु स्यामा । अखिल लोक लोचनामिरामा ॥  
 कटि तट परिकर कस्यो निपंगा । कर कोदंड कठिन सारगा ॥  
 छं०—सारंग कर सुंदर निपंग सिलीमुखाकर कटि कस्यौ ।  
 भुजदंड पीन मनोहरायत उर बरासुर पद लस्यौ ॥  
 कह दास तुलसी जगहिं प्रभु सर चाप कर फेरन लगे ।  
 ब्रह्मांड दिग्गज कमठ अहि महि सिंधु मूघर डगमगे ॥  
 दो०—हरपे देव बिलोकि छविः वरपहिं सुमन अपार ।  
 जय जय प्रभु गुन ज्ञान बल धाम हरन महिभारः ॥८६॥  
 येही बीच निसाचर अनी । कसमसाति आई अति घनी ॥  
 देखि चले सन्मुख कवि भट्टा । प्रलय काल के जनु घन घट्टा ॥  
 बहु कृपान तरवारि चमकहिं । जनु दह दिसिः दामिनी दमंकहि ॥  
 गज रथ तुरग चिकार कठोरा । गर्जत<sup>५</sup> मनहुँ बलाहक घोरा ॥

१—प्र० : अस्तुनि । दि०, तु० : प्र० । च० : विनती ।

२—प्र० : सोमा देखि हरपि सुर । दि० : प्र० । तु० : हरपे देव बिलोकि छवि । च० : तु० ।

३—प्र० : जय जय जय करुनानिधि छवि बल गुन आगार । दि० : प्र० । तु० : जय जय प्रभु गुन ज्ञान बल धाम हरन महि भार । च० : तु० ।

४—प्र० : जनु दह दिसि । दि० : प्र० । [ तु० : जनु दम दिसि ] । च० : प्र० [ (न) जनु चहुँ दिसि, (न) मानहुँ घन ] ।

५—प्र० : गर्जहि । दि० : प्र० । तु० : गर्जन । च० : तु० ।

कपि लंगूर विपुल नभ छाए । मनहु इद्र धनु उप सुहाए ॥  
 उठै धूरि मानहुँ जल घारा । बान बृंद भइ वृष्टि अपारा ॥  
 दुहुँ दिसि पर्वत करहि प्रहारा । वज्रपात जनु बारहि वारा ॥  
 रघुपति कोपि बान भरि लाई । घायल भै निसिचर समुदाई ॥  
 लागत बान बीर चिकगहीं । घुमि घुमि जहँ तहँ महि परहीं ॥  
 सबहिँ सैल जनु निर्भर भारी१ । सोनित सरि कादर भयकारी ॥

छ०—कादर मयकर रुधिर सरिता बड़ी२ परम अपावनी ।

दोड कून दल रथ रेत चक्र अवर्त बहति भयावनी ॥

जलजतु गजपदचरतुंग खर विविध बाहन को गने ।

सर सक्ति तोमर सर्प चाप तरंग चर्म कूट घने ॥

दो०—बीर परहि जनु तीर तरु मज्जा बहु बह फेन ।

कादर देखत डगहिँ तेहि३ सुभटन्ह केँ मन चैन ॥८७॥

मज्जहिँ भूत पिशाच बेताला । प्रमथ महा भोटिंग कराला ॥

कारु करु ले भुजा उडाहीं । एक ते छीनि एक ले खाहीं ॥

एक कहहिँ ऐसिउ सौघाई । सठहु तुम्हार दरिद्रु न जाई ॥

कहरत भट घायल तट गिरे । जहँ तहँ मनहुँ अर्धजल परे ॥

सैचहिँ गीघ आत तट भएँ । जनु बनसी खेलत चित दएँ ॥

बहु भट बहहिँ चढ़े खग जाहीं । जनु नावरि खेलहिँ सर माहीं ॥

जोगिनि भरि भरि खप्पर सचहिँ । भूत पिशाच वधु नभ नंचहिँ ॥

भट कपाल करताल बजावहिँ । चामुंडा नाना विधि गावहिँ ॥

जनुक निरुर कटकट कटहिँ । खाहिँ हुहाहिँ अघाहिँ दपटहिँ ॥

१—प्र० : भारी । दि० : प्र० [ (४) भारी ] । [ तु० : भारी ] । १० : प्र० [ (८) (८५) भारी ] ।

२—प्र० : बड़ी । दि० : प्र० । तु० : बड़ी । च० : तु० [ (८) चलेउ ] ।

३—प्र० : देखि डरहिँ तहँ । दि० : प्र० । तु० : देखत डरहिँ तेहि । १० : तु० [ (८) देखत डरहिँ ] ।

कोटिन्ह रुंड मुंड विनु चल्हहिं<sup>१</sup> । सीस परे महि जय जय बोल्लहिं ॥

छं०—बोल्लहिं जो जय जय मुंड रुंड प्रचंड सिरु विनु धावहीं ।

खप्परन्हि स्वगा अलुज्झि जुज्झहिं सुभट भटन्ह दहावहीं<sup>२</sup> ॥

निसिचर वरूय विमर्दि गर्जहिं भालु कपि दर्पिन भए<sup>३</sup> ।

सग्राम अंगन सुभट सोवहिं राम सर निऊरन्हि हए ॥

दो०—हृदयें विचारेउ दसवदन<sup>४</sup> मा निसिचर संघार ।

मै अकेल कपि भालु बहु माया काउँ अपार ॥८८॥

देवन्ह प्रभुहि पथादे देखा । उपजा अति उर द्योम विसेखा ॥

सुरपति निज रथु तुरत पठावा । हरप सहित मातलि लै आवा ॥

तेज पुंज रथ दिठ्य अनूपा । बिहँसि<sup>५</sup> चढ़े कोसलपुर भूपा ॥

चचल तुरग मनोहर चारी । अजर अमर मन सम गतिकारी<sup>६</sup> ॥

रथारूढ़ रघुनाथहि देखी । घाए कपि बलु पाइ विसेपी ॥

सही न जाइ कपिन्ह कै मारी । तब गवन माया विस्तारी ॥

सो माया रघुवीरहि बाँची । सब काहू मानी करि साँची<sup>७</sup> ॥

देखी कपिन्ह निमाचर अनी । बहु अंगद लक्ष्मिन कपि धनी<sup>८</sup> ॥

१—प्र० : चल्हहिं । [ दि० टोहहिं ] । [ तु० : डोलहिं ] । च० : प्र० [ (न) (नप्र) डोलहिं ] ।

२—प्र० : भटन्ह दहावहीं । दि० : प्र० [ (प्र) ; सुखुरावहीं ] । [ तु०, च० : सुखुरावहीं ] ।

३—प्र० : शनर निसाचर निऊर मर्दहिं राम बन दर्पिन भए । दि० : प्र० । तु० : निसिचर वरूय विमर्दि गर्जहिं भालुकपि दर्पिन भए । च० : तु० ।

४—प्र० : रावन हृदयें विचारा । दि० : प्र० । तु० : हृदय विचारेउ दस वदन । च० : तु० ।

५—प्र० : दरपि । दि० : प्र० । तु० : बिहसि । च० : तु० ।

६—[ तु०, (६) तथा (न) में यह अर्थांती नहीं है ] ।

७—प्र० : लक्ष्मिन कपिन्ह सो मानी साँची । दि० : प्र० । तु० : सब काहू मानी करि साँची । च० : तु० ।

८—प्र० : अनुज मर्दिन बहु कोमल धनी । दि० : प्र० । तु० : बहु अंगद लक्ष्मिन कपि धनी । च० : तु० ।



८०—बहु बालिमुत लक्ष्मिन कपीस बिलोकि मरुट अपटरे<sup>१</sup> ।  
 जनु नित्र निमिन समेत लक्ष्मिनजरें सो तहें चितरहि मरे ॥  
 नित्र सेन चकिन बिलोकि हेंमि सर चाप सजि कोमलपनी ।  
 माया एगी हरि निमिष महुं दगपो सकल बानर<sup>२</sup> अनी ॥

दो०—अरु रामु सब नन चितइ बोले बचन गभीर ।  
 द्वंद्व जुद्ध देखहु सकल समिन भए जति बीर ॥८१॥  
 अस कहि रथ खुनाथ चलाया । बिच चरन पकज सिरु नाया ॥  
 तब लकेस क्रोध उर छाया । गर्जन तर्जन सन्मुख आगार<sup>३</sup> ॥  
 जीतेहु जे भट संजुग माही । मुनु तापम मै तिन्ह सम नाही ॥  
 रावन नाम जगत जम जाना । लोकरु जाकें पदीग्याना ॥  
 खर दृपन कवच<sup>४</sup> तुम्ह मारा । यधेहु व्याध इव बालि बिचारा ॥  
 निसिचर निजर सुभट सघारेहु । कुंभकरन घननादहि मारेहु ॥  
 आजु बयरु सबु लेउँ निगही । औ रन भूप भाजि नहि जाही ॥  
 आजु करौ खलु काल हवाले । परेहु कठिन रावन कै पाले ॥  
 सुनि दुर्बचन कालनस जाना । विहंसि कहेउ तरु<sup>५</sup> कृपानिघना ॥  
 सत्य सत्य सब तब प्रभुताई । जल्पसि जनि देखाउ मनुमाई ॥

छ०—जनि जल्पना करि सुजसु नासहि नीति सुनहि करहि धमा ।  
 ससार महुं पूरप त्रिविध पाटल रसाल पनस समा ॥  
 एक सुमनप्रद एक सुमन फल एक फलइ केवल लागही ।  
 एक कहहि कहहि करहि अपर एक करहि कहत न बागही ॥

१—प्र० : बहु राम लक्ष्मिन देखि मरुट मालु मन अति अपटरे । दि० : प्र० । १० । बहु बालि मुन लक्ष्मिन कपीस बिलोकि मरुट अपटरे । च० : १० ।

२—प्र० : रकट । दि० : प्र० । १० । बानर । च० : १० ।

३—प्र० : धावा । दि० : प्र० [(५)(५५) आवा] । १० : आवा । च० : १० ।

४—प्र० : विराध । दि०, १० : प्र० । च० : कवच ।

५—प्र० : विहंसि बचन कह । दि० : प्र० । १० : विहंसि कहेउ तब । च० : १० ।

दो०—राम वचन सुनि बिहँसि कहै मोहि सिखावत ज्ञान ।

वयरु करत नहि तब डरेर अब लागे प्रिय प्रान ॥६०॥  
 कहि दुर्वचन क्रुद्ध दसकंधर । कुलिस समान लाग छाड़ै सर ॥  
 नानाकार सिलीमुख घाए । दिसि अरुचिदिसि गगन महि छाए ॥  
 अनल वानर छाड़ेउ रघुवीरा । छन महु जरे निसाचर तीरा ॥  
 छाड़िसि तीव्र सक्ति खिसिआई । बान संग प्रभु फेरि चलाई ॥  
 कोटिन्ह चक्र तिसूल पवारइ । बिनु प्रयास प्रभु काटि निवारइ ॥  
 निःफल होहि रावन सर कैसे । खल के सकल मनोरथ जैसे ॥  
 तब सत वान सारथी मारेसि । परेउ भूमि जय राम पुकारेसि ॥  
 राम कृपा करि सूत टठावा । तब प्रभु परम क्रोध फहुँ पाया ॥

छं०—भए क्रुद्ध जुद्ध बिरुद्ध रघुपति त्रोन सायक कसंमसे ।

कोदंड धुनि अति चंड सुनि मनुजाद सब मारुत प्रसे ॥  
 मंदोदरी उर कंप कंषित कमठ भू भूधर प्रसे ।

चिक्करहि दिग्गज दसन गहि महि देखि कौतुक सुर हँसे ॥

दो०—तानि सरासन सवन लागि छाड़े बिसिख कराल ।

राम मार्गन गन चले लहलहात जनु व्याल ॥६१॥  
 चले वान सपच्छ जनु उरगा । प्रथमहि हत्यो सारथी तुरगा ॥  
 रथ विमंजि हति केतु पतारा । गर्जा अति अंतर बलु थाका ॥  
 तुरत आन रथ चढ़ि खिसिआना । अख सख छाड़ेसि बिधि नाना ॥  
 विफल होहि सब उद्यम ता के । जिमि पर द्रोह निरत मनसा के ॥  
 तब रावन दस सूल चलावा । बाजि चारि महि मारि गिरावा ॥

१—प्र० : बिहसा । दि० : प्र० । [तु० : बिहसेउ] । च० : बिहसि कह ।

२—प्र० : डरे । दि०, तु०, च० : ॥० [(६) (८) : टरेहु] ।

३—प्र० : पावक सर । दि० : प्र० । तु० : अनल वान । च० : तु० ।

४—प्र० : चलाई । दि०, तु०, च० : प्र० [(०) (६) (८) : पठाई] ।

५—प्र० : तानेउ चाप । दि० : प्र० । तु० : तानि सरासन । च० : तु० ।

द्वौ भिरे अतिबल मरल जुद्ध त्रिहृद एक पकड़ि हने  
रघुवीर बल गतिर १ निर्भीपनु धालि नहिं लच्छुं मने ॥

दो०—उमा निर्भीपनु रावनहिं सनमुख चित्त कि द्यउ ।

भिरत सो बाल समान अर २ श्रीरघुवीर प्रभाउ ॥ ६४ ॥

देखा सभित निर्भीपनु भारी । धापउ हनुमान गिरिधारी ॥  
रथ तुरंग सारथी निपाता । हृदय मोक तेहि मारसि लाना ॥  
ठाढ़ रहा अति कपित माता । गपउ निर्भीपनु जहँ जनजाता ॥  
पुनि रावन तेहि ३ हनउ पचारी । चनेउ गगन कवि पूँछ पमारी ॥  
गहिसि पूँछ कवि सहित उड़ाना । पुनि फिरि भिरेउ प्रवन हनुमाना ॥  
लरत अकास जुगल सम जोधा । एरहिं एक हनन करि कोधा ॥  
सोहहिं नभ छन बन बहु करहीं । कज्जल गिरि मुमेरु अनु लरही ॥  
बुधि बल निमिचर परे न पारा । तब मारुनसुत प्रभु सभारा ४ ॥

छ०—सभारि श्रीरघुवीर धीर प्रचारि कवि रावन हन्यो ।

महि परत पुनि उठि लरत देन्ह जुगल कहुं जय जय मन्यो ॥

हनुमंत सभट देखि मरुट भालु कोधातुर चले ।

रन मत्त रावन सकल सुभट पचड भुज बल दलमले ॥

दो०—राम पचारि वीर तन ५ धाप कोस प्रचड ।

रपि दल प्रबल बिलोकि ६ तेहिं कीन्ह प्रगट पाखड ॥ ६५ ॥

अंतर्धान भएउ छन एका । पुनि प्रगटे खल रूप अनेका ॥

रघुपति कटक भालु कपि जेते । जहँ तहँ प्रगट दसानन तेते ॥

१—प्र० : दर्पित । दि० : प्र० । वृ० : गतिर । च० : वृ० ।

२—प्र० : सो अब भिरत काल ज्यो । दि० : प्र० । [वृ० : सो अब भीरत काल ज्यो] ।  
च० : भिरत सो काल समान अब ।

३—प्र० : कवि । दि० : प्र० । वृ० : तेहि । च० : वृ० ।

४—प्र० : पारवो, सभारवो । दि० : प्र० । वृ० : पारा, मंगारा । च० : वृ० ।

५—प्र० : तब रघुवीर पचारे । दि० : प्र० । वृ० : राम पचारे वीर तब । च० : वृ० ।

६—प्र० : देखि । दि० : प्र० । वृ० : बिलोकि । च० : वृ० ।

कटे सिर नभ मारग घावहिं । जय जय धुनि करि भय उपजावहिं ॥  
 कहँ लखिमनु हनुमान<sup>१</sup> कपीसा । कहँ रघुनीर कोसलाघीसा ॥  
 छ०—कहँ रामु कहि सिर निकर धाए देखि मर्कट भजि चले ।  
 संधानि धनु रघुवंसमनि हँसि सरन्ह सिर वेधे भले ॥  
 सिर मालिका गहि कालिका कर<sup>२</sup> वृंद वृंदन्हि बहु मिली ।  
 करि रुधिर सरि मज्जनु मनहुँ संग्राम बट पूजन चली ॥  
 दो०—पुनि रावन अति कोप करि छाड़िसि<sup>३</sup> सक्ति प्रचंड ।  
 चली विभीषन सन्मुख<sup>४</sup> मनहुँ काल कर दंड ॥२३॥  
 आवत देखि सक्ति खर धारा<sup>५</sup> । प्रनतारति हर विरिद सँभारा<sup>६</sup> ॥  
 तुरत विभीषनु पावै मेला । सनमुख राम सहेउ सोइ सेला ॥  
 लागि सक्ति मुख्या कलु भई । प्रभु कृत खेल सुरन्ह विकलई ॥  
 देखि विभीषनु प्रभु स्तम पाएउ<sup>७</sup> । गहि कर गदा क्रुद्ध होइ धाएउ ॥  
 रे कुभाग्य सठ मंद कुबुद्धे । तैं सुर नर मुनि नाग विरुद्धे ॥  
 सावर सिव कहँ सीस चढ़ाए । एक एक के कोटिन्ह पाए ॥  
 तेहिं कारन खल अब लागि बाँचा<sup>८</sup> । अब तव कालु सीस पर नाचा<sup>९</sup> ॥  
 राम विमुख सठ चह सदा । अस कहि हनेसि माँझ उर गदा ॥  
 छं०—उर माँझ गदा प्रहार घोर कठोर लागत महि पर्यो ।  
 दसवदन सोनित सबत पुनि संभारि धायो रिस भर्यो ॥

१—प्र० : सुग्रीव । दि० : प्र० । तृ० : हनुमान । च० : प्र० ।

२—प्र० : कर बालिका गहि । दि०, तृ० : प्र० । च० : गहि कालिका कर ।

३—प्र० : पुनि रावन अति क्रुद्ध होइ छाँडी । दि० : प्र० । तृ० : पुनि रावन अति कोप करि छाड़िसि । च० : तृ० ।

४—प्र० : चली विभीषन सन्मुख । दि० : प्र० । [तृ०, च० : सन्मुख रानी विभीषनहि] ।

५—प्र० : क्रमशः अति घोर, मंजन पन मोटा । दि० : प्र० । तृ० : खर धारा, हर विरिद संभारा । च० : तृ० ।

६—प्र० : पायो, पायो । दि०, तृ० : प्र० । च० : पाएउ, धाएउ ।

७—प्र० : बाँचा, नाचा । दि० : प्र० । तृ० बाँचा, नाचा । च० : तृ० ।

छं०—गहि भूमि पारसो लात मारसो जानिगु । प्रभु पई गगे ।

संगारि उठि दसदठ धोर छोर ॥ गजन भजे ॥

हरि दाप चाप चढ़ाई रम गपनि सर चढ़ चढ़ाई ।

किय मछन भट पावन मनहुनि देनि निज वन दराई ॥

दी०—तेन सुगति लंकेमर के नीम भुजा गर नग ।

काटे भय बहोरि निमिर कन नृप क हार ॥२७॥

सिर भुज बाढ़ि देनि गिपु छरी । नातु छपिन्ह रिम भई पनेरी ॥

मरत न नृप कटेहु भुज सीमा । पाष दोषि भानु भट कीमा ॥

वानितनय मारुति नन नीना । दुबिद कथीम वनमर वननीना ॥

बिटप महीगर कहि प्रहाग । सदागिरि नरुगहि कपिन्ह सोमाग ॥

एक नखन्दि रिपु अपुष बिहारी । नागि चन्हि एक लान्ह मागी ॥

तन नल नील सिरन्दि चढ़ि गण ॥ नखन्दि निलार बिदारत भय ॥

रुधिर बिलोकि सक्रो गुहारी ॥ सिन्धहि धरन ददु भुजा पगारी ॥

गहे न जाहि करन्दि पर फिररी । अनु जुग मनुष कमल वन चढ़ी ॥

फोपि कूदि द्वी धरेसि बहोरी । गहि पटधन भजे भुजा मगोरी ॥

पुनि सक्रोप दस धनु पर लीन्हें । सरन्ध मारि घायल कपि कीन्हें ॥

हनुमदादि मुरुधित करि बंदर । पाइ प्रदोष हरष दसकधर ॥

मुरुधित देखि सकल कपि बीरा । जामवंत धाएउ रनधीरा ॥

संग भालु भूधर तरु धारी । मारन लगे पचारि पचारी ॥

१—प्र० : रावन । दि० : प्र० । नृ० : लंकेम । च० : १० ।

२—प्र० : काटे बहुत बड़े पुनि । दि० : प्र० । [१० : काटे भय बहोरि छेद] । च० : काटे भय बहोरि निमिर ।

३—प्र० : निजि नीरव पर । दि०, १० : प्र० । च० : कन नृप ।

४—प्र० : वानरराज दुबिद । दि०, १० : प्र० । च० : दुबिद कथास वनम ।

५—[प्र० : ठपक, भपक] । दि०, १० : गपक, भपक । च० : गप, भप ।

६—प्र० : नखन्दि । दि०, नृ० : प्र० । [च० : नखन्दि] ।

७—प्र० : रुधिर देखि बिषाद पर भारी । दि० : प्र० । रुधिर बिलोकि सरोप गुहारी । च० : १० ।

देखे कपिन्ह अमित दससीसा । भागे भालु विकट भट<sup>१</sup> कीसा ॥  
चले बलीमुख<sup>२</sup> घरहिं न धीरा । त्राहि त्राहि लखिमन रघुवीरा ॥  
दह दिसि धावहिं कोटिन्ह रावन । गर्जहिं घोर कठोर भयावन ॥  
डरे सकल सुर चले पराई । जय कै आस तजहु अब भाई ॥  
सब सुर जिते एक दसकंधर । अब बहु भए तक्रहु गिरि कंठर ॥  
रहे धिरचि संभु मुनि ज्ञानी । जिन्ह जिन्ह प्रभु महिमा कछु जानी ॥  
छं०—जाना प्रताप ते रहे निर्भय कपिन्ह रिपु माने फुरे ।

चले विचलि मर्कट भालु सकल कृपाल पाहि भयातुरे ॥

हनुमंत अंगद नील नल अति बल सारत रन बाँकुरे ।

मर्दहिं दसानन कोटि कोटिन्ह कपट भू भट अंकुरे ॥

दो०—सुर बानर देखे विकल हँस्यो कोसलाधीस ।

सजि बिसिपासन एक सर<sup>३</sup> हते सकल दससीस ॥६६॥

प्रभु छन महँ माया सब काटी । जिमि रबि उएँ जाहिं तम फाटी ॥

रावनु एक देखि सुर हरपे । फिरे सुमन बहु प्रभु पर वारपे ॥

भुज उठाइ रघुपति कपि फेरे । फिरे एक एकन्ह तब टेरे ॥

प्रभु बलु पाइ भालु कपि धाए । तरल तमकि संजुगमहि आए ॥

करत प्रसंसा सुर तेहि देखे<sup>४</sup> । भएउँ एक मैं इन्ह के लेखे ॥

सठहु सदा तुम्ह मोर मरायल । अस कहि कोपि गगन पर<sup>५</sup> धायल ॥

हाहाकार करत सुर भागे । खलहु जाहु कहँ मोरे आगे ॥

विकल देखि सुर अंगदु धायो । कूदि चरन गहि भूमि गिरायो ॥

१—प्र० : जहँ, तहँ मजे भालु अरु । दि० : प्र० । तु० : भागे भालु विकट भट कीसा ।

२—प्र० : भागे बानर । दि० : प्र० । तु० : चले बलीमुख । च० : तु० ।

३—प्र० : सजि सारंग एक सर । दि० : प्र० । तु० : सजि बिसिखासन एक सर । च० : तु० [(८) : सँचि सरासन सवन लजि] ।

४—प्र० : असतुति करत देवतन्ह देखे । दि० : प्र० । तु० : करत प्रसंसा सुर तेहि देखे । च० : तु० ।

५—प्र० : पर । दि० : प्र० । [(३) (४) (५) पथ] । तु० : प्र० । [च० : पथ] ।

कह त्रिजटा सुनु राजकुमारी । उर सर लागत भरइ सुरारी ॥  
प्रभु ता तें उर हवैं न तेही । येहि कें हृदयें वसहिं वेदेही ॥

छं०—येहि कें हृदय वस जानकी जानकी उर मम वास है ।

मम उदर भुवन अनेक लागत वान सब कर नास है ॥

सुनि वचन हरष विपाद मन अति देखि पुनि त्रिजटा रुहा ।

अब मरिहि रिपु येहि विधि सुनिहि सुंदरि तजहि ससय महा ॥

दो०—काटत सिर होइहि विकल छुटि जाइहि तब ध्यान ।

तब रावनहि<sup>१</sup> हृदय महु मरिहहि राम सुजान ॥२६॥

अस कहि बहुत भौंति समुझाई । पुनि त्रिजटा निज भवन सिधाय ॥

राम सुभाउ सुमिरि वेदेही । उपजी बिरह बिधा अति तेही ॥

निसिहि ससिहि निंदति बहु भौंती । जुग सम भई सिराति ॥ राती<sup>२</sup> ॥

करति विलाप मनहि मन भारी । राम बिरह जानकी दुखारी ॥

जब अति भएउ बिरह उर दाह । फरकैउ वाम नयन अरु बाह ॥

सगुन बिचारि धरी मन धीरा । अब मिलिहहि कृपाल रघुबीरा ॥

इहों अर्धनिसि रावनु जागा । निज सारथि सन स्त्रीभक्त लागा ॥

सठ रतभूमि छड़ाइसि मोही । धिग धिग अधम मंदमति तोही ॥

तेहि पद गहि बहु विधि समुझावा । भोरु भएँ रथ चढ़ि पुनि धावा ॥

सुनि आगवनु दसानन केरा । कपि दल खरभर भएउ घनेरा ॥

जहँ तहँ भूधर बिटष उपारी । धाए कटकटइ भट भारी ॥

छं०—धाए जो मकंठ विकट भालु कराल कर भूधर धरा ।

अति कोप करहि प्रहार मारत भजि चले रजनीचरा ॥

विचलाइ दल बलवन कीसन्ह धेरि पुनि रावनु लियो ।

चहुँ दिसि चपेटन्ह मारि नखन्हि बिदारितनु व्याकुल कियो ॥

१—प्र० : रावनहि । दि०, लृ० : प्र० । [च० : (३) (८) रावन कहूँ, (८अ) रावन के] ।

२—प्र० : सिराति न राती । दि० : प्र० [(३) (४) (५) : न राति सिरातो] । लृ०, च० : प्र० [(६) (८अ) : बिहानि न राती] ।

भएउ क्रुद्ध रावनु बलवाना । गहि पद महि पटकै भट नाना ॥  
देखि भालुपति<sup>१</sup> निज दल घाता । कोपि मौंझ उर मारेसि लाता ॥

द्यं०—उर लात घात प्रचंड लागत -विकल रथ तैं महि परा ।

गहे<sup>२</sup> भालु बीसहु कर मनहुँ कमलन्हि वसे निसि मधुकरा ॥

मुगद्धित बहोरि विलोकि पद हति भालुपति प्रभु पहिँ गयो ।

निसि जानि स्पंदन घालि तेहि तब सूत जतनु करत भयो ॥

दो०—गइ मुरुझा तबरे भालु कपि सब आए प्रभु पास ।

निसिचर सकल रावनहि घेरि रहे अति त्रास ॥६८॥

तेही निसि सीता पहिँ जाई । त्रिजटा कहि सब कथा सुनाई ॥

सिर भुज बाढ़ि सुनत रिपु केरी । सीता उर भइ त्रास घनेरी ॥

मुख मलीन उपजो मन बिता । त्रिजटा सन बोली तब सीता ॥

होइहि कहा<sup>४</sup> कहसि किन माता । केहि विधि मरिहिविष्वदुख दाता ॥

रघुपति सर सिर कटेहु न मरई । बिधि विपरीत चरित सब करई ॥

मोर अभाभ्य जिआवत ओही । जेहि हौ हरि पद कमल बिछोही ॥

जेहि कृत कपट कनकमृग भूटा । अजहुँ सो दैव मोहि पर लूटा ॥

जेहि विधि मोहि दुख दुसह सहाए । लब्धिमन कहुँ कटु बचन कहाए ॥

रघुपति विरह सविष सर भारी । तकि तकि मार बार बहु मारी ॥

ऐसेहु दुख जो राखु मम प्राणा । सोइ विधि ताहि जिआव न आना ॥

बहु विधि कर<sup>५</sup> विलाप जानकी । करि करि सुरति कृपानिधान की ॥

१—[प्र० : भालुपति] । दि० : भालुपति । तृ० : च० : दि० ।

२—प्र० : गहे । दि० : प्र० [(३) (४) (५) गहि] । [तृ० : गहि] । च० : प्र० [(२) (३) गहि] ।

३—प्र० : मुरुझा विगत । दि० : प्र० । तृ० : गै मुरुझा तर । च० : तृ० ।

४—[प्र०, दि० : कहा] । तृ० : कहा । च० : तृ० ।

५—प्र० : कर । [दि० : (३) (४) (५) करत, (१) करति] । [तृ० : करत] । च० : प्र० [(६) (७) करत] ।



दो०-रहे तामु गुन मन कहुक<sup>१</sup> जइमति तुनमीशुग ।

नि० पौरुष अनुसार त्रिभिरे मगठ उडाहि मद्यगरे ॥

काटे सिर भुज मर बहु मरन न भट लहेम ।

पभु सीइत सुर सिद्ध मुनि व्याकुल देखि छेमे ॥१०२॥

काटत नइहि सीस समुदाई । त्रिभि ननि नाम नाम धधिदाई ॥

मरइ न रिपु सम भएउ रिनेपा । राम विभीषन तन तर देखा ॥

उमा कालु मर जाही ईडा । सो भु जन कर पीनि पगीडा ॥

सुनु सर्वज्ञ चराचर नायक । मननपान गुं मुनि गुम्हायक ॥

नाभीकुंड मुधा<sup>४</sup> वस जा के । नाथ निघन गवनु नल ताके ॥

सुनत त्रिभीषन वचन कृपाला । हरषि गहे कर बान कराला ॥

असगुन होन लगे<sup>५</sup> तन नाना । रोवहि सर सुकाल यहु<sup>६</sup> राना ॥

बोलहि रग जग आरति हेतू । प्रगट भए नभ जहँ तहँ केतू ॥

दस दिसि दाह होन अति लागा । भएउ परम रिनु रवि उपरागा ॥

मदोदरि उर कपति भारी । प्रतिमा सबहि नयन मग वारी ॥

छं०-प्रतिमा सबहि<sup>७</sup> पवि पात नभ अति बात वह बोलति मही ।

वरपहि बलाहक रुधिरु कच रज असुभ अतिसक को कही ॥

उतपात अमित त्रिलोकि नभ सुर<sup>८</sup> निम्ल बोलहि जय जये ।

सुर सभय जानि कृपाल रघुपति चाप सर जोरत भए ॥

१-प्र० : ताके गुनगन कहु रहै । दि० : प्र० । १० : वदे तासु गुनगन वहुन । च० : १० ।

२-प्र० : त्रिभि ननि बल अनुरूप ते । दि० : प्र० । १० : निन पौरुष अनुसार त्रिभि । च० : १० ।

३-प्र० : माझी उदै अवास । दि०, १० : प्र० । १० : मसक उडाहि अवास । च० : १० ।

४-प्र० : नाभीकुंड पिथूप । दि० : प्र० । १० : नाभी कुंड मुधा । च० : १० ।

५-प्र० : असुभ होन लगे । दि०, १० : प्र० । च० : असगुन होन लगे ।

६-प्र० : सर सुकाल बहु । दि०, १० : प्र० । च० : वह सुकाल सर ।

७-प्र० : सबहि । दि० : प्र० । १० : सबहि । च० : १० ।

८-प्र० : नभ सुर । दि० : प्र० । १० : मुनि सुर । च० : १० ।

दो०—देखि महा मर्कट प्रवल रावन कीन्ह विचार ।

अंतरहित होइ निमेष महुँ कृत माया विस्तार ॥१००॥

जव कीन्ह तेहि पापंड । भए प्रगट जंतु प्रचंड ॥

बेताल भूत पिशाच । कर धरै धनु नाराच ॥

जोगिनि गहैं करवाल । एक हाथ मनुज कपाल ॥

करि सद्य सोनित पान । नाचहिं करहिं बहु गान ॥

घरु मारु बोलहिं घोर । रहि पूरि धुनि चहुँ ओर ॥

मुख बाह धावहिं खान । तव लगे कीस परान ॥

जहँ जाहिं मर्कट भागि । तहँ वरत देखहिं आगि ॥

भए विकल बानर भालु । पुनि लाग वरपै वालु ॥

जहँ तहँ थकित करि कीस । गर्जेउ बहुरि दससीस ॥

लङ्घिमन कपीस समेत । भए सकल वीर अचेत ॥

हा राम हा रघुनाथ । कहि सुभट मीजहिं हाथ ॥

येहि विधि सकल बल तोरि । तेहि कीन्ह कपट बहोरि ॥

प्रगटैसि विपुल हनुमान । धाए गहैं पापान ॥

तिन्ह राम धेरे जाइ । चहुँ दिसि वरूथ बनाइ ॥

मारहु घरहु जनि जाइ । कटकटहिं पूछ उठाइ ॥

दह दिसि लँगूर विराज । तेहि मध्य कोसलराज ॥

द्यं०—तेहि मध्य कोसलराज सुंदर स्याम तन सोभा लही ।

जनु इंद्रधनुष अनेक की वर वारि तुंग तमाल ही ॥

प्रभु देखि हरष विषाद उर सुर वदतज्य जय जय करी ।

रघुवीर एक्कहि तीर कोपि निमेष महुँ माया हरी ॥

माया विगत कपि भालु हरपे विटप गिरि गहि सत्र फिरे ।

सर निकर छाड़े राम रावन बाहु सिर पुनि महि गिरि ॥

श्री राम रावन समर चरित अनेक कल्प जो गावहीं ।

सत सेप सारद निगम कवि तेउ तदपि पार न पावहीं ॥

दो०—कृपादृष्टि करि वृष्टि प्रभु अमय क्रिप मुर उद ।

हरपे बानर भालु सब<sup>१</sup> जय सुखधाम मुमुद ॥१०३॥

पति सिर देखत मंदोदरी । मुरुद्धित निकल भरनि ससि परी ॥

जुनति घृद रोवति उठि धाई । तेहि उठाइ रावन पहि आई ॥

पति गति देखि ते करहिं पुकारा । छुटे चिकुर न सरीर संभारा<sup>२</sup> ॥

उर ताड़ना करहि बिधि नाना । रोवत करहिं प्रताप बगवाना ॥

तब बल नाथ डोल नित धरनी । तेजहीन पावक ससि तरनी ॥

सेप कमठ सहि सगहिं न भारा । सो तनु भूमि परेउ भरि छारा ॥

वरुन कुनेर सुरेस समीरा । रन सन्मुख धरि काहु न धीरा ॥

भुज बल जितेहु काल जम साई । आजु परेहु अनाथ की नाई ॥

जगत बिदित तुम्हारि प्रभुताई । सुत परिजन बल नरनि न जाई ॥

राम विमुख अस हाल तुम्हारा । रहा न कोउ कुल रोवनिहारा ॥

तब बस बिधि प्रपच सन नाथा । समय दिसिप नित नागहिं माथा ॥

अब नय सिर भुज जबुक खाहीं । राम विमुख येह अनुचित नाहीं ॥

काल बिनस पति कहा न माना । अग जग नाथु मनुज करि जाना ॥

छ०—जानेउ मनुज करि दनुज कानन दहन पावक हरि स्वय ।

जेहि नमत सिव ब्रह्मादि सुर पिअ भजेहु नहिं करुनामय ॥

आजन्म ते परद्रोह रत पापौघमय तब तनु अय ।

तुम्हहैं दियो निज धाम राम नमामि ब्रह्म निरामय ॥

दो०—अहह नाथ रघुनाथ सम कृपासिधु को<sup>३</sup> आन ।

मुनि दुर्लभ जो परम गति<sup>४</sup> तोहि दीन्हि भगवान ॥१०४॥

१—प्र० : भालु वीस सब सगपे । दि० : प्र० । तु० : हरपे बानर भालु सब । च० : तु० ।

२—प्र० : छूटे कय नहिं वपुष संभारा । दि० : प्र० । [तु० : छूटे चिकुर न चौर संभारा]

च० : छुटे चिकुर न सरार संभारा [(द्वि०) छूटे चिकुर न चौर संभारा] ।

३—प्र० : नहि । दि० : प्र० । तु० : को । च० : तु० ।

४—प्र० : जोहि वृद्ध दुर्लभ गति । दि०, तु० । च० : मुनि दुर्लभ जो परम गति ।

दो०—सैचि सरासन सवन लगि१ छाड़े सर एकतीस ।  
 रघुनायक सायक चले मानहुँ काल फनीस ॥१०२॥  
 सायक एक नाभिसर सोखा । अपर लगे भुज सिर करि रोषा ॥  
 लै सिर बाहु चले नाराचा । सिर भुज हीन रुंड महि नाचा ॥  
 धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा । तव सर हति प्रभु कृत जुग२ खंडा ॥  
 गर्जेउ मरत घोर रव भारी । कहौं रामु रन हतौ पचारी ॥  
 डोली भूमि गिरत दसकंभर । छुभित सिंधु सरि दिग्गज भूधर ॥  
 परेउ वीर३ द्वौ खंड वढ़ाई । चापि मालु मर्कट समुदाई ॥  
 मशोदरि आगे भुज सीसा । धरि सर चले जहाँ जगदीसा ॥  
 प्रविसे सब निपग महुँ आई४ । देखि सुरन्ह दुंदुभी वजाई ॥  
 तामु तेज समान प्रभु आनन । हरपे देखि संभु चतुरानन ॥  
 जय जय धुनि पूरी ब्रह्मंडा । जय रघुवीर प्रबल भुजदडा ॥  
 वरपहिं सुमन देव मुनि वृंदा । जय कृपाल जय जयति मुकुंदा ॥  
 छ०—जय कृपाकंद मुकुंद द्वंदहरन सरन सुखप्रद प्रभो ।  
 खल दल विदारन परम फारन कारुनीक सदा बिभो ॥  
 सुर सिद्ध मुनि गधर्व हरपे५ बाज दुंदुभि गहगही ।  
 सग्राम अगन राम अंग अनंग बहु सोभा लही ॥  
 सिर जटा मुकुट प्रसून विच विच अति मनोहर राजही ।  
 जनु नीलगिरि पर तडित पटल समेत उडुगन आजही ॥  
 भुजदड सर कोदंड फेरत रुधिर कन तन अति बने ।  
 जनु रायमुनी तमाल पर वैठी विपुल सुख आपने ॥

१—प्र० : सैचि सरासन सवन लगि । दि० : प्र० । [तु० : आकरषेड धनु कान लगि] ।

च० : प्र० [(६) (८अ) : आकरषेड धनु कान लगि] ।

२—प्र० : दुइ । दि० : प्र० [(४) (५) : जुग ] । तु० : जुग । च० : तु० ।

३—प्र० : धरनि परेउ । दि० : प्र० । तु० : परेउ वीर । च० : तु० ।

४—प्र० : जाई । दि० : प्र० [(५अ) : आई] । तु० : आई । च० : तु० ।

५—प्र० : सुर सुमन वरपहिं हरपे संकुल । दि० : प्र० । तु० : सुरसिद्धमुनि गधर्व हरपे ।  
 च० : तु० ।

छं०—किए सुखी कहि बानी मुधा सम बल तुम्हारे रिपु हयो ।  
पायो विभीषन राजु तिहुँ पुर जमु तुम्हारे नित नयो ॥  
मोहि सहित सुम कीरति तुम्हारी राम प्रीति जे गढ़हैं ।  
ससार सिधु अपार पार प्रयास विनु नर पाइहैं ॥

दो०—सुनत राम के वचन मृदु<sup>१</sup> नहिं अधाहिं कपि पुंज ।  
बारहिं बार बिलोकि मुख<sup>२</sup> गढ़हिं सजल पद फंज ॥ १०६ ॥  
पुनि प्रभु बोलि लिपउ हनुमाना । लका जाहु कहेउ भगवाना ॥  
समाचार जानकिहि सुनावहु । तामुकुसल लै तुम्ह चलि आवहु ॥

तव हनुमत नगर महुँ आए । सुनि निसिचरी निसाचर धाप ॥  
बहु प्रकार तिन्ह पूजा कीन्ही । जनकमुता दिखाइ पुनि<sup>३</sup> दीन्ही ॥  
दूरहिं ते प्रनामु कपि कीन्हा । रघुपति दूत जानकी चीन्हा ॥  
कहहु तात प्रभु कृपानिरेता । कुसल अनुज कपि सेन समेता ॥  
सय विधि कुसल कोसलापीसा । मातु समर जीत्यौ दससीसा ॥  
अविचल राजु विभीषनु पावा<sup>४</sup> । सुनि कपि वचन हरप उर छावा<sup>५</sup> ।

छं०—अनि हरप मन तन पुलक लोचन सजल कह पुनि पुनि रमा ।  
का देखैं तोहि त्रैलोक महुँ कपि किमपि नहि बानी समा ॥  
सुनु मात मै पायो अखिल जग राजु आजु न संसय ।  
रन जीति रिपु दल बंधु जुत पत्स्यामि राममनामयं ॥  
दो०—सुनु सुत सदगुन सकल तव हृदयैं बसहुँ हनुमंत ।  
सानुकूल रघुवंस मनि<sup>५</sup> रहहु समेत अनंत ॥ १०७ ॥

१—प्र० : प्रभु के वचन सवन सुनि । दि० : प्र० । वृ० : सुनत राम के वचन मृदु । च० : वृ० ।

२—प्र० : बार बार स्तिर नावहि । दि० : प्र० । वृ० : बारहिं बार बिलोकि मुख । च० : वृ० ।

३—प्र० : पुनि । दि०, वृ० : प्र० । [च० : तिन्ह] ।

४—प्र० : क्रमशः पायो, छायो । दि० : प्र० । वृ० : पावा, छावा । च० : वृ० ।

५—प्र० : कोसल पति । दि० : प्र० । वृ० : रघुवंसमनि । च० : वृ० ।

मंदोदरी वचन सुनि काना । सुर मुनि सिद्ध सबन्हि सुख माना ॥  
 अज महेस नारद सनकादी । जे मुनिवर परमारथवादी ॥  
 भरि लोचन रघुपतिहि निहारी । प्रेम मगन सब भए सुखारी ॥  
 रुदनु करत बिलोकि<sup>१</sup> सब नारी । गएउ विभीषनु मन दुखु भारी ॥  
 बहु दसा देखत<sup>२</sup> दुख कीन्हा । राम अनुज कहुं<sup>३</sup> आयेसु दीन्हा ॥  
 लक्ष्मिन जाइ ताहि<sup>४</sup> समुभाएउ<sup>५</sup> । बहुरि विभीषन प्रभु पहि आएउ<sup>५</sup> ॥  
 कृपा दृष्टि प्रभु ताहि बिलोका । करहु क्रिया परिहरि सब सोका ॥  
 कीन्हि क्रिया प्रभु आयेसु मानी । विधिवत देस काल जिअ जानी ॥  
 दो०—मय तनयादिक नारि सब<sup>६</sup> देइ तिलांजलि ताहि ।

भवन गई रघुवीर<sup>७</sup> गुन गन वरनत मन माहि ॥ १०५ ॥  
 आई विभीषन पुनि सिरु नाएउ<sup>८</sup> । कृपासिधु सब अनुज बोलाएउ<sup>८</sup> ॥  
 तुम्ह कपीस अंगद नल नीला । जामवंत मारुति नयसीला ॥  
 सब मिलि जाहु विभीषन साथ । सारेहु तिलकु कहेउ रघुनाथा ॥  
 पिता वचन मै नगर न आवौ । आपु सरिस कपि अनुज पठावौ ॥  
 तुरत चले कपि सुनि प्रभु वचना । कीन्ही जाइ तिलक की रचना ॥  
 सादर सिंहासन बैठारी । तिलक कीन्ह<sup>९</sup> अस्तुति अनुसारी ॥  
 नोरि पानि सबही सिर नाए । सहित विभीषन प्रभु पहि आए ॥  
 तव रघुवीर चोलि कपि लीन्हे । कहि प्रिय वचन सुखी सब कीन्हे ॥

१—प्र० : देखी । दि० : प्र० । तृ० : बिलोकि । च० : तृ० ।

२—प्र० : बिलोकि । दि० : प्र० । तृ० : देखत । च० : तृ० ।

३—प्र० : तब प्रभु अनुजहि । दि०, तृ० : प्र० । च० : राम अनुज कहूँ ।

४—प्र० : तेहि बहु विधि । दि० : प्र० । तृ० : जाइ ताहि । च० : तृ० ।

५—प्र० : क्रमशः समुभायो, आयो । दि० : प्र० । तृ० : समुभाएउ, आएउ । च० : तृ० ।

६—प्र० : मंदोदरी आदि सब । दि० : प्र० । तृ० : मयतनयादिक नारि सब । च० : तृ० ।

७—प्र० : रघुपति । दि० : प्र० । तृ० : रघुवीर । च० : तृ० ।

८—प्र० : क्रमशः नाथो, बोलायो । दि० : प्र० । तृ० : नाथउ, बोलाएउ । च० : तृ० ।

९—प्र० : सारि । दि०, तृ० : प्र० । च० : कीन्हा ।

सुनि लखिमन सीता के बानी । गिरह गियेक घरम नुति सानी ॥  
 लोचन सजल जोरि कर दोऊ । प्रभु सन महु रहि सकन न ओऊ ॥  
 देखि राम रुख लखिमन घाए । प्रगटि कृसानु काठ बहु लाए ॥  
 प्रवल अनन बिलोकि वैरेही । हृदयँ हरष नहि भय महु तेही ॥  
 जौ मन वच क्रम मम उर माहीं । तजि रघुनीर आन गति नाहीं ॥  
 तौ कृसानु सब के गति जाना । मोकहु होहु श्रीखड समाना ॥

छ०—श्रीखड सम पावक प्रवेसु कियो सुमिरि प्रभु मेथिली ।  
 जयकोसलेस महेस वदित चरन रति अति निर्मली ॥  
 प्रतिदिन अरु लोकि कलक प्रचड पावक महु जरे ।  
 प्रभु चरित काहुँ न लखे नभ सुर सिद्ध मुनि देखहि खरे ॥  
 तन अनल भूसुर रूप कर गहि सत्य श्री स्रुति<sup>४</sup> निदि तजो ।  
 जिमि क्षीरसागर इदिरा रामहि समर्पी आनि सो ॥  
 सो राम बाम विभाग राजति रुचिर अति सोभा भली ।  
 नन नील नीरज निकट मानहुँ कनक पकज की कली ॥

दो०—हरषि सुमन वरषहि विबुध<sup>५</sup> बाजहि गगन निसान ।  
 गावहि किन्नर अपहरा<sup>६</sup> नाचहि चढ़ी विमान ॥  
 श्री जानकी<sup>७</sup> समेत प्रभु सोभा अमित अपार ।  
 देखत हरषे भालु कपि<sup>८</sup> जय रघुपति सुख सार ॥१०६॥

१—प्र० : निनि । दि० : नुति [(१) नुति, (५अ) नुति] । [तु० : नभ] । च० : दि० ।

२—प्र० : पावक प्रगति । दि०, तु० : प्र० । ३० : प्रगटि कृसानु ।

३—प्र० : पावक प्रवत देखि । दि० : प्र० । तु० : प्रवत अनल बिलोकि ।

४—प्र० : परि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य स्रुति जग । दि० : प्र० । तु० : नभ अनल भूसुर रूप कर गहि सत्य श्री स्रुति । च० : तु० ।

५—प्र० : वरषहि सुमन हरषि सुर । दि० : प्र० । तु० : हरषि सुमन वरषहि विबुध । च० : तु० ।

६—प्र० : अपहरा । दि० : प्र० । तु० : अपहरा । च० : तु० ।

७—प्र० : जनकमुता । दि० : प्र० । तु० : श्री जानकी । च० : तु० ।

८—प्र० : देखि भालु कपि हरषे । दि० : प्र० । तु० : देखत हरषे भालु कपि । च० : तु० ।

अब सोइ जननु करहु तुम्ह ताता । देखौ नयन स्याम मृदु गाता ॥  
 तब हनुमान राम पहिं जाई । जनकपुता के कुमल सुनाई ॥  
 सुनि बानी पतंग कुलभूपन<sup>१</sup> । बोलि लिए जुवराज विभीषन ॥  
 मारुतसुत के सग सिधावहु । सादर जनकसुनहिं ले<sup>२</sup> आबहु ॥  
 तुरतहि सकल गए जहँ सीता । सेवहिं सब निसिचरी विनीता ॥  
 वेगि विभीषन तिन्हहिं सिखावा<sup>३</sup> । सादर तिन्ह सीतहि अन्हवावा<sup>४</sup> ॥  
 दिव्य वसन<sup>५</sup> भूपन पहिराए । सिविका रुचिर साजि पुनि लाए ॥  
 तापर हरपि चढ़ी वैदेही । सुभिरि राम सुखधाम मनेही ॥  
 धेतपनि रक्षक चहुँ पासा । चले सकल मन परम हुलासा ॥  
 देखन कीस भालु<sup>६</sup> सब आए । रक्षक कोपि निवारन धाए ॥  
 कह रघुवीर कहा मम मानहु । सीतहि सखा पयादे आनहु ॥  
 देखहिं<sup>७</sup> कपि जननी की नाई । बिहसि कहा रघुनाथ गोसाई ॥  
 सुनि प्रभु वचन भालु कपि हरपे । नभ ते सुरन्ह सुमन बहु वरपे ॥  
 सीता प्रथम अनल महुँ राखी । प्रगट क्रीन्हि चह अंतरसाखी ॥  
 दो०—तोहि कारन करुनायतन<sup>८</sup> कहे कलुरु दुर्बाद ।

सुनन जातुधानी सकल<sup>९</sup> लागी करै बिपाद ॥१०८॥

प्रभु के वचन सीस धरि सीता । बोली मन क्रम बचन पुनीता ॥  
 लखिमन होहु घरम के नेगी । पावक प्रगट करहु तुम्ह वेगी ॥

१—प्र० : सुनि सदेस भानुकु भूषन । दि० : प्र० । तृ० : सुनि बानी, पतंग कुल भूपन । च० : तृ० ।

२—प्र० : क्रमशः सिनायो । तिन्ह बहु विधि मंजन करवायो । दि० : प्र० । [ तृ० : सिखाए । सादर तिन्ह सीतहि अन्हवाए ] । च० : निखावा । सादर तिन्ह सीतहि अन्हवावा ।

३—प्र० : बहु प्रवार । दि०, तृ० : प्र० । च० : दिव्य वसन ।

४—प्र०, दि० : कीस भालु । तृ०, च० : भालु कीस ।

५—प्र० : देखहुँ । दि० : प्र० । तृ० : देखहि । च० : तृ० ।

६—प्र० : करनानिधि । दि० : प्र० । तृ० : करुनायतन । च० : तृ० ।

७—प्र० : मव । दि० : प्र० । [ (अ) : सख ] । तृ० : सकल । च० : तृ० ।



अज व्यापकमेकमनादि मदा । कृताकृत राम नमामि मुरा ॥  
 स्थुनस विमूषन दूषनहा । कृत मूष मिथीपनु शीन रहा ॥  
 गुन जान निगान अमान अज । निनगन नम निमिर्गुं विज ॥  
 भुजदड प्रचेड प्रनाप मन । खल वृद्धनिहृद नही दुषल ॥  
 मिनु सारन दीनदयान हितं । छत्रिधाम नमामि रमामहित ॥  
 भन तारन कारन काजरं । मन सभ । दारुन दोष हर ॥  
 सर चाप मनोहर गोनधर । जनजरा लोचन भूषणरं ॥  
 सुख मंदिर सुदर धीरमन । मद माग गदा<sup>१</sup> नमता समन ॥  
 अनय अखंड न गोचर गो । समरूप सदा समहोइनसो<sup>२</sup> ॥  
 इति वेद वदति न दत्तया । रविआतपभिन्न न भिन्न जया ॥  
 कृतकृत्य मिथो सन वानर ये । निरसति तयानन सादर ये<sup>३</sup> ॥  
 धिग जीवन देव सरीर हरे । तन भक्तिमिना भन भूलि परे ॥  
 अम दीन दयाल दया करिष । मति मोर मिभेदकरी हरिष ॥  
 जेहि तें विपरीत क्रिया करिष । दुख सो सुख धनि सुखी चरिष ॥  
 खल खडन मंडन रम्य छमा । पद परुज सेवित सभु उमा ॥  
 नृपनायक दे वरदानमिद । चरनावुज प्रेमु सदा सुभद ॥

दो०—विनयकीन्ह विधि भौंति बहु<sup>४</sup> प्रेम पुलक अति गात ।

वदन विलोकित राम कर<sup>५</sup> लोचन नही अघात ॥१११॥

तेहि अंतर दसरथ तहैं आए । तनय विलोकि नयन जल छाए ॥

सहित अनुज प्रनाम प्रभु कीन्हा<sup>६</sup> । आसिर्गाद पिता तब दीन्हा ॥

१—प्र० : मुषा । द्वि० : प्र० : वृ० : मदा । च० : वृ० ।

२—प्र० : न गो । द्वि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) नू सो ] । उ० : न सो । च० : वृ० ।

३—प्र०, द्वि०, वृ०, च० : ये [(६) : जे] ।

४—प्र० : चतुरानन । द्वि०, प्र० । वृ० : विधि भाति वह । च० : वृ० ।

५—प्र० : सोभा सिंधु विलोकित । द्वि० : प्र० । वृ०, वदन विलोकित राम कर । च० : उ० ।

६—प्र० : अनुज सहित प्रभु वंदन कीन्हा । द्वि० : प्र० । वृ० : सहित अनुज प्रनाम प्रभु कीन्हा । च० : वृ० ।

तव रघुपति अनुसासन पाई । मातलि चलेउ चरन सिरु नाई ॥  
 आए देव सदा स्वारथी । वचन कहहिं जनु परमारथी ॥  
 दीनबंधु दयाल रघुराया । देव कीन्हि देवन्ह पर दायी ॥  
 विस्व द्रोह रत येह सन कामी । निज अघ गएउ कुमारग गामी ॥  
 तुम्ह समरूप ब्रह्म अविनासी । सदा एकरस सहज उदासी ॥  
 अकल अगुन अज अनघ अनामय । अजित अमोघसक्ति करुनामय ॥  
 मीन कमठ सूँर नरहरी । वामन परसुराम वपु धरी ॥  
 जब जब नाथ सुरन्ह दुखु पावा<sup>१</sup> । नाना तनु धरि तुम्हहिं नसावा<sup>२</sup> ॥  
 रावनु पापमूल<sup>३</sup> सुर द्रोही । काम लोभ मद रत अति कोही ॥  
 सोउ कृपाल तव धाम सिधावा<sup>४</sup> । यह हमरें मन बिसमय आवा ॥  
 हम देवता परम अधिकारी । स्वारथ रत तव भगति बिसारी ॥  
 भव प्रवाह संतत हम परे । अब प्रभु पाहि सरन अनुसरे ॥  
 दो०—करि विनती सुर सिद्ध सब रहे जहँ तहँ कर जोरि ।

अतिसय प्रेम सरोजभव<sup>५</sup> अस्तुति करत बहोरि ॥११०॥  
 जय राम सदा सुखधाम हरे । रघुनायक सायक चाप घरे ॥  
 भव वारन दारन सिंघ प्रभो । गुन सागर नागर नाथ बिभो ॥  
 तन काम अनेक अनूप छवी । गुन गावत सिद्ध मुनींद्रकवी ॥  
 जसु पावन रावन नाग महा । खगनाथ जथा करि कोष गहा ॥  
 जनरंजन भंजन सोऊ भयं । गतक्रोध सदा प्रभु बोधमयं ॥  
 अवतार उदार अपार गुनं । महि भार विभंजन ज्ञानधनं ॥

१—प्र० : क्रमशः पायो, नसायो । दि० : प्र० । पावा, नसावा । च० : नृ० ।

२—प्र० : येह रत्न मलिन सदा । दि०, तृ० : प्र० । च० : रावनु पापमूल ।

३—प्र० : अथम सिरोमनि तव पद पावा । दि०, तृ० : प्र० । च० : सोउ कृपालु तव धाम सिधावा ।

४—प्र० : प्रभु । दि०, तृ० : प्र० । च० : तव ।

५—प्र० : अति सप्रेम तनु पुलक विधि । दि० : प्र० । तृ० : अतिसय प्रेम सरोजभव । च० : तृ० ।

वैदेहि अनुज समेत । मम हृदय करहु निरुद्ध ॥

मोहि जानिए निज दास । दे भक्ति रमानिवास ॥

छ०—दे भक्ति रमानिवास रासहरन सरन सुखदायक ।

सुखधाम राम नमामि काम अनेक छवि गनुनायक ॥

सुर वृंद रजन हृद भजन गनुज तनु अतुलित बल ।

प्राप्तादि सकर सेव्य राम नमामि ररुना तोमल ॥

दो०—अब करि कृपा बिलोकि मोहि आयेमु देहु कृपाल ।

काह करौ सुनि मिय वचन बोले दीनदयान ॥११३॥

सुनु सुरपति कपि भालु हमारे । परे मूमि निमिचरन्ह जे मारे ॥

मम हित लागि तजे इन्ह प्राणा । सकल जियाउ सुरेस सुजाना ॥

सुनु खगपति प्रभु के यह धानी । अति अगाध जानहि मुनि ज्ञानी ॥

प्रभु सक त्रिभुवन मारि जिआई । केवल सकहि दीन्ह बड़ाई ॥

सुधा बरपि कपि भालु जिआए । हरपि उठे सब प्रभु पहि आए ॥

सुधा वृष्टि भइ दुहुँ दल ऊपर । जिए भालु कपि नहिं रजनीचर ॥

रामाकार भए तिन्ह के मन । गए ब्रह्मपद तजि सरीर रन ॥

सुर असिक सब कपि अरु रीखा । जिए सकल रघुपति की ईवा ॥

राम सरिस को दीन हितकारी । कीन्हे मुक्त निसाचर भारी ॥

खल मलधाम कामरत रावन । गति पाई जो सुनिनर पाव न ॥

दो०—सुमन बरपि सब सुर चले चढ़ि चढ़ि रुचिर बिमान ।

देखि सुअवसर राम पहि आए सभु सुजान ॥

परम प्रीति कर जोरि जुग नलिन नयन भरि बारि ।

पुलकित तन गदगद गिरा बिनय करत त्रिपुरारि ॥११४॥

१—प्र० : रगेस । दि० : प्र० । तु० : सुरपति । च० : तु० ।

२—प्र० : मुक्त भए छूटे भव बधन । दि० : प्र० । [तु० : गए परम पद तजि सरीर रन] ।  
च० : गए ब्रह्म पद तजि सरीर रन ।

३—प्र० : प्रभु । दि०, तु० : प्र० । च० : राम ।

तात सकल तव पुन्य प्रभाऊ । जीत्यो अजय निसाचर राऊ ॥  
 सुनि सुत वचन प्रीति अति वाढ़ी । नयन सनीर<sup>१</sup> रोमावलि ठाढ़ी ॥  
 रघुपति प्रथम प्रेम अनुमाना । चितइ पिनहि दोन्हैउ दढ़ ज्ञाना ॥  
 ता तैं उमा मोक्ष नहि पावा<sup>२</sup> । दसरथ भेद भगति मन लावा<sup>२</sup> ॥  
 सगुनोपासक मोक्ष न लेहीं । तिन्ह कहुं राम भगति निज देहीं ॥  
 बार बार करि प्रभुहि प्रनामा । दसरथ हरपि गए सुरधामा ॥  
 दो०—अनुज जानकी सहित प्रभु कुसल कोसलाधीस ।

छवि बिलोकि मन हरप अति<sup>३</sup> अस्तुति कर सुरईस ॥११२॥

तोमर छं०—जय राम सोमाधाम । दायक प्रनत बिह्वाम ॥  
 धृत त्रोन वर सर चाप । भुजदंड प्रबल प्रताप ॥  
 जय दुपनारि खरारि । मर्दन निसाचर धारि ॥  
 येह दुष्ट मारेउ नाथ । भए देव सकल सनाथ ॥  
 जय हरन धरनी भार । महिमा उदार अपार ॥  
 जय रावनारि कृपाल । किए जातुधान बिहाल ॥  
 लंकेस अति बन गर्व । किए बस्य सुर गंधर्व ॥  
 मुनि सिद्ध खग नर नाग । हठि पंथ सब के लाग ॥  
 पर द्रोह रत अति दुष्ट । पायो सो फलु पापिष्ट ॥  
 अब सुनहु दीन दयाल । राजीव नयन विसाल ॥  
 मोहि रहा अति अभिमान । नहि कोउ मोहि समान ॥  
 अब देखि प्रभु पद कंज । गत मान प्रद दुख पुंज ॥  
 कोउ ब्रह्म निर्गुन ध्याव । अव्यक्त जेहि श्रुति गाव ॥  
 मोहि भाव कोसल भूप । श्रीराम सगुन सरूप ॥

१—प्र० : सनिर । दि०, तु० : प्र० । च० : सनीर ।

२—प्र० : पायो, लायो । दि० : प्र० । तु० : पावा, लावा । च० : तु० ।

३—प्र० : सोमा देखि हरपि मन । दि० : प्र० । तु० : छवि बिलोकि मन हरपि अति ।  
 च० : तु० ।

तापस बेप सरीर<sup>१</sup> कृस जपत निरंतर मोहि ।  
 देखौं बेगि सो जतन करु सखा निहोरौं तोहि ॥  
 बीते अवधि जाउँ जौं<sup>२</sup> जियन न पावौं बीर ।  
 प्रीति भरत कै समुझि प्रभु<sup>३</sup> पुनि पुनि पुलक सरीर ॥  
 करेहु कलप भरि राजु तुम्ह मोहि मुझिरेहु मन माहिं ।  
 पुनि मम धाम सिधाइहहु<sup>४</sup> जहाँ संत सब जाहिं ॥११६॥  
 सुनत विभीषन बचन राम के । हरषि गहै पद कृपाधाम के ॥  
 यानर भालु सकल हरपाने । गहि प्रभु पद गुन विमल बखाने ॥  
 बहुरि विभीषन भवन सिधाए । मनि गन बसन विमान भालए ॥  
 लै पुष्पक प्रभु आगे राखा । हँसि करि कृपासिंधु तब भापा ॥  
 चढ़ि विमान सुनु सखा विभीषन । गगन जाइ बरपहु पट भूपन ॥  
 नभ पर जाइ विभीषन तबहीं । बरषि दिए मनि अंबर सबहीं ॥  
 जोइ जोइ मन भावइ सोइ लेहीं । मनि मुख मेलि डारि कपि देहीं ॥  
 हँसे रामु श्री अनुज समेता । परम कौतुकी कृपानिकेता ॥  
 दो०—ध्यान न पावहिं जाहि मुनि<sup>५</sup> नेति नेति कह वेद ।  
 कृपासिंधु सोइ कपिन्ह सन करत अनेक बिनोद ॥  
 उसा जोग जप दान तप नाना मख ब्रत नेम ।  
 राम कृपा नहिं करहिं तसि जसि तिष्केवल प्रेम ॥११७॥  
 भालु कपिन्ह पट भूपन पाए । पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आए ॥  
 नाना जिनिस देखि सब<sup>६</sup> कीसा । पुनि पुनि हँसत कोसलाधीसा ॥

१—प्र०: ना० । द्वि०: प्र० । तृ०: सरीर । च०: तृ० ।

२—प्र०: बीते अवधि जाहुँ जौ । द्वि०: तृ० । [च०: जौ जैहौं बीते अवधि] ।

३—प्र०: सुमिरत अनुज प्रीति प्रभु । द्वि०: प्र० । तृ०: प्रीति भरत कै समुझि प्रभु । च०: तृ० ।

४—प्र०: पाइहहु । द्वि०: प्र० । तृ०: सिधाइहहु । च०: तृ० ।

५—प्र०: मुनि जेहि ध्यान न पावहिं । द्वि०: प्र० । तृ०: ध्यान न पावहिं जाहिं मुनि । च०: तृ० ।

६—प्र०: देखि सब । द्वि०: प्र० । [तृ०: देखि प्रभु] । [च०: (६) देखि प्रभु, (८) भालु कपि] ।

द्व०—मामभिरक्षय रघुकुत्तनायक । धृन वर चाप रुचिर कर सायक ॥  
 मोह महा धन पटल प्रमंजन । संसय विपिन अन्तल सुर रंजन ॥  
 सगुन अगुन गुन मंदिर सुंदर । अम तम प्रबल प्रताप दिवाकर ॥  
 काम क्रोध मद गज पंचानन । वसहु निरंतर जन मन कानन ॥  
 विषय मनोरथ पुंज कंज वन । प्रबल तुषार उदार पार मन ॥  
 भव बारिधि मंदर परमं दर । बारय तारय संसृति दुस्तर ॥  
 स्याम गात राजीव विलोचन । दीनबंधु प्रनतारति मोचन ॥  
 अनुज जानकी सहित निरंतर । वसहु राम नृप मम उर अंतर ॥  
 मुनि रंजन महिमंडल मंडन । तुलसिदास प्रभु त्रास विलंबन ॥  
 दो०—नाथ जगहिं कोसलपुरी होइहि तिलकु तुहार ।

तब मैं आउव सुनहु प्रभु<sup>२</sup> देखन चरित उदार ॥११५॥  
 करि बिनती जब संभु सिधाए । तब प्रभु निकट विभीषन आए ॥  
 नाह चरन सिरु कह मृदु वानी । बिनय सुनहु प्रभु सारंगपानी ॥  
 सकुल सदल प्रभु रावनु मारा<sup>३</sup> । पावन असु त्रिभुवन विस्तारा ॥  
 दीन मलीन हीनमति जाती । मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती ॥  
 अब जन गृह पुनीत प्रभु कीजै । मज्जन करिअ समर स्रम छीजै ॥  
 देखि कोस मंदिर संपदा । देहु कृपाल कपिन्ह कहुं मुदा ॥  
 सब विधि नाथ मोहिं अपनाइअ । पुनिमोहिसहित अबधपुर<sup>४</sup> जाइअ ॥  
 सुनत वचन मृदु दीन दयाला । सजल मए द्वौ नयन बिसाला ॥  
 दो०—तोर कोस गृह मोर सब सत्य वचन सुनु आत ।

दसा भरत कै सुमिरि<sup>५</sup> मोहिं निमिष क्लप सम जात ॥

१—[ प्र० : मथन पर मंदर ] । दि०, वृ०, च० : मंदर परमं दर ।

२—प्र० : कृपासिधु मैं आउव । दि०, वृ० : प्र० । च० : तब मैं आउव सुनहु प्रभु ।

३—क्रमशः मारयो, विस्तारयो । दि० : प्र० । वृ० : मारा, विस्तारा । च० : वृ० ।

४—प्र०, दि०, वृ०, च० : पुर [ (६) : प्रभु ] ।

५—प्र० : भरत दसा सुमिरत मोहिं । दि० : प्र० । वृ० : दसा भरत कै सुमिरि मोहिं । च० : वृ० ।

रुचिर विमानु चलेउ अति आतुर । कीन्ही सुमन वृष्टि हरपे सुर ॥  
 परम सुखद चलि<sup>१</sup> त्रिविध बयारी । सागर सर सरि निर्मल वारी ॥  
 सगुन होहि सुंदर चहुँ पासा । मन प्रसन्न निर्मल नभ आसा ॥  
 कह रघुबीर देखु रन सीता । लखिमन इहाँ हत्यो इंद्रजीता ॥  
 हनुमान अंगद के मारे । रन महि परे निसाचर भारे ॥  
 कुंभकरन रावन द्वौ भाई । इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई ॥

दो०—यह देखु सुंदर सेतु जहँ<sup>२</sup> थापेउँ सिव सुखधाम ।

सीता सहित कृपायतन<sup>३</sup> संभुहि कीन्ह प्रनाम ॥

जहँ जहँ कृपासिंधु<sup>४</sup> बन कीन्ह वास विस्राम ।

सफल देखाए जानकिहि कहे सबन्हि के नाम ॥११६॥

सपदि<sup>५</sup> विमान तहाँ चलि आवा । दंडकवन जहँ परम सुहावा ॥

कुंभजादि मुनिनायक नाना । गए राम सब के अस्थाना ॥

सकल रिपिन्ह सन पाइ असीसा । चित्रकूट आएउ जगदीसा ॥

तहँ करि मुनिन्ह केर संतोषा । चला विमानु तहाँ ते चोखा ॥

बहुरि राम जानकिहि देखाई । जमुना कलि मल हरनि सोहाई ॥

पुनि देवी सुरसरी पुनीता । राम कहा प्रनामु करु सीता ॥

तीरधपति पुनि देखु प्रयागा । देखत<sup>६</sup> जन्म कोटि अघ भागा ॥

देखु परम पावनि पुनि बेनी । हरन सोक हरि लोक निसेनी ॥

पुनि देखु<sup>७</sup> अवधपुरी अति पावनि । त्रिविध ताप भव रोग नसावनि ॥

१—प्र०, दि : चलि । [तु०: वर] । च०: प्र० ।

२—प्र०: १ । सेतु बाधो ग्रह । दि०, तु०: प्र० । च०: यह देखु सुंदर सेतु जहँ [ (न) :  
 देखु सुंदरि सेतु ५६ ] ।

३—प्र०: कृपानिधि । दि०: प्र० । तु०: कृपायतन । च०: तु० ।

४—प्र०: कृपासिंधु । दि०: प्र० । [तु०: मैं यह दोहा नही है] । [च०: (ब)(न) करुनासिंधु] ।

५—प्र०: तुरत । दि०: प्र० । तु०: सपदि । च०: तु० ।

६—प्र०: निरत । दि०: प्र० । तु०: देखत । च०: तु० ।

७—प्र०: पुनि देखु । दि०: प्र० । [तु०: देखेउ] । च०: प्र० [(न) : देख] ।

चितइ सबन्ह पर कीन्ही दाया । बोले मृदुल वचन रघुगया ॥  
 तुम्हरे बल मै रावनु मोरा<sup>१</sup> । तिलकु बिभीषन कहें पुनि सारा<sup>२</sup> ॥  
 निज निज गृह अथ तुम्ह सब जाहू । सुमिरोहु मोहि ढाहु<sup>३</sup> जनि काहें ॥  
 वचन सुनत प्रेमाकुल बानर । जोरि पानि बोले सब सादर ॥  
 प्रभु जोइ कहहु तुम्हहिं सब सोहा । हमरे होत वचन सुनि मोहा ॥  
 दीन जानि कपि किए सनाथा । तुम्ह • त्रैलोक ईस रघुनाथा ॥  
 सुनि प्रभु वचन लाज हम मरही । मसरु कबहुँ<sup>४</sup> खगपति हित करही ॥  
 देखि राम रुख बानर रीछा । प्रेम मगन नहिं गृह कै ईछा ॥

० दो०—प्रभु प्रेरित कपि भालु सब राम रूप उर राखि ।  
 हरष विषाद समेत तब चले विनय बहु भाखि<sup>५</sup> ॥  
 जामवंत कपिराज नल अंगदादि<sup>६</sup> हनुमान ।  
 सहित बिभीषन अपर जे जूथप कपि बलवान ॥  
 कहि न सकहिं कछु प्रेमवस भरि भरि लोचन बारि ।  
 सन्मुख चितवहिं राम तन नयन निमेष निवारि ॥११८॥

अतिसय प्रीति देखि रघुगई । लीन्हे सकल विमान चढ़ाई ॥  
 मन महुं बिप्र चरन सिरु नावा<sup>७</sup> । उत्तर दिसिहि विमान चलावा<sup>८</sup> ॥  
 चलत विमान कोलाहलु होई । जय रघुवीर कहै सब कोई ॥  
 सिंघासन अति उच्च मनोहर । श्री समेत प्रभु बैठे तापर ॥  
 राजत राम सहित भामिनी । मेरु सृंग जनु घनु दामिनी ॥

१—प्र०: क्रमशः मारयो, सारयो । दि०: प्र० । तु०: सारा, सारा । च०: तु० ।

२—प्र०: ढरपहु । दि०: प्र० [(१) ढरेहु, (५) ढरपेहु] । [तु०: ढरेहु] । च०: ढरइ ।

३—प्र०: नहु । दि०, तु०: प्र० । च०: कबहुँ ।

४—प्र०: सहित चले निनय विविध विधि भाषि । दि०: प्र० । तु०: समेत तब चले विनय बहु भाषि । च०: तु० ।

५—प्र०: कपिपति नील रीछपति अंगद नल । दि०: प्र० । तु०: जामवत कपिराज नल अंगदादि । च०: तु० ।

६—प्र०: क्रमशः नायो, चलायो । दि०: प्र० । तु०: नावा, चलावा । च०: तु० ।



सब भौंति अघम निपाद सो हरि भरत ज्यों उर लाइयो ।  
 मतिमंद तुलसीदास सो प्रभु मोहवस विसराइयो ॥  
 येह रावनारि चरित्र पावन रामपद रतिप्रद सदा ।  
 कामादिहर विज्ञानकर सुर सिद्ध मुनि गावहिं मुदा ॥  
 दो०—समर विजय रघुपति चरित सुनहिं जे सदा<sup>१</sup> सुजान ।  
 विजय विवेक विभूति नित तिन्हहिं देहिं भगवान ॥  
 येह कालकाल मलायनन मन करि देखु बिचार ।  
 ली रघुनाथ नाम तजि नहिं कछु<sup>२</sup> आन ग्रधार ॥१२१॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकलुपविध्वंसने विमलविज्ञान-  
 सम्पादनो नाम षष्ठः सोपानः समाप्तः ।

५१

१—प्र०: रघुनाथ के चरित जे सुनहिं । दि०: प्र० । वृ०: रघुनाथ चरित सुनहिं जे सदा ।  
 ५५: १० ।

२—प्र०: श्री रघुनाथ नाम तजि नाहिं । दि०: प्र० । वृ०: श्री रघुनाथक नाम तजि नहिं  
 कछु । ५५: १० ।

दो०—तव रघुनायक श्री सहित अवधहि कीन्ह<sup>१</sup> प्रनाम ।  
 सजल विलोचन पुलक तनु<sup>२</sup> पुनि पुनि हरषित राम ॥  
 पुनि प्रभु आई त्रिवेनी<sup>३</sup> हरषित मज्जनु कीन्ह ।  
 कपिन्ह सहित विप्रन्ह कहु<sup>४</sup> दान विविध विधि दीन्ह ॥ १२० ॥  
 प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई । धरि बटु रूप अवधपुर जाई ॥  
 भरतहि कुसल हमारि सुनाएहु । समाचार लै तुम्ह चलि आएहु ॥  
 तुरत पवनसुत गवनत भएऊ । तब प्रभु भरद्वाज पहि गएऊ ॥  
 नाना विधि मुनि पूजा कीन्ही । असतुति करि पुनि आसिष दीन्ही ॥  
 मुनि पद बदि जुगल कर जोरी । चढ़ि विमान प्रभु चले बहोरी ॥  
 इहाँ निपाद सुना प्रभु<sup>५</sup> आए । नाव नाव कह लोग बुलाए ॥  
 सुरसरि नौधि जान तब<sup>६</sup> आवा<sup>७</sup> । उत्तरेउ बटु प्रभु आवेसु पावा<sup>७</sup> ॥  
 तब सीता पूजी सुरसरी । बहु प्रकार पुनि चरनन्हि परी ॥  
 दीन्ह असीस हरषि मन गंगा । सुंदरि तब अहिवात अभंग्गा ॥  
 सुनत गुहा धाएउ प्रेमाकुल । आएउ निकट परम सुख संकुल ॥  
 प्रभुहि सहित विलोकि वैदेही । परेउ अवनितन सुधि नहि तेही ॥  
 प्रीति परम विलोकि रघुराई । हरषि टठाई लियो उर लाई ॥  
 छं०—लियो. हृदय लाई कृपानिधान सुजान राम रमापती ।  
 बैठारि परम समीप बूझी कुसल सो कर बीननी ॥  
 अथ कुसल पद पकज विलोकि विरचि संकर सेव्य जे ।  
 सुखधाम पूरनकाम राम नमामि राम नमामि ते ॥

१—प्र०: मोन सहित अवध कह कीन्ह कृतानि । दि०: प्र० । त०: तव रघुनायक था सहित सहित अवधहि कीन्ह । च०: त० ।

२—प्र०: सजल नयन पुनक्ति तन । दि०: प्र० । त०: मज्जनु विलोचन पुलकि तन । च०: त० ।

३—प्र०: पुनि प्रभु आई । दि०: प्र० । [त०, च०: बहुरि त्रिवेनी आई प्रभु] ।

४—प्र०: सहित विप्रन्ह कह । दि०: प्र० । [त०, च०: समेत महीसुरन्ह] ।

५—प्र०: सुना प्रभु । दि०: प्र० [(४), ५: सुन्यो प्रभु] । त०, च०: प्र०, [(२) : बुनाहि] ।

६—प्र०: उव । दि०: प्र० [(३): वव] । त०: प्र० । [च०: जव] ।

७—प्र०: क्रमशः आयो, पायो । दि०: प्र० । त०: आवा, पावा । च०: त० ।

रहेउ<sup>१</sup> एक दिन अवधि अघारा । समुझन मन दुख भएउ अपारा ॥  
 कारण कवन नाथ नहि आएउ । जानि कुटिल द्विर्घो मोहि निसराएउ ॥  
 अहह धन्य लक्ष्मिन बड़भागी । राम पदारविदु अनुरागी ॥  
 कपटी कुटिल मोहि प्रभु चीन्हा । ता नैं नाथ संग नहि लीन्हा ॥  
 जौ करनी समुझै प्रभु मोरी । नहि निस्तार कलप सन फोरी ॥  
 जन अयगुन प्रभु मान न बाऊ । दीननहु अति मृदुल सुभाऊ ॥  
 मोरें जिअँ भोगेस दृढ़ सोई । मिलिहहि रागु सगुन सुभ होई ॥  
 बीते अवधि रहहि जौ प्राणा । अधम कउन जग मोहि समाना ॥

दो०—राम विरह सागर महँ भरत मगन मन होत ।

बिष रूप धरि पवनसुत आई गएउ जनु पोत ॥

बैठे देखि कुसामन जटा मुकुट कृम गात ।

राम राम रघुपति जपत खवत नयन जलजात ॥ १ ॥

देखत हनुमान अति हरपेउ । पुलक गात लोचन जलु बरपेउ ॥  
 मन महँ बहुत भोति सुख मानी । बोलेउ खवन सुधा सम बानी ॥  
 जासु विरह सोचहु दिनु राती । रटहु निरतर गुन गन पाँती ॥  
 रघुकुलतिलक सो जन<sup>१</sup> सुखदाता । आएउ कुसल देव मुनि प्राता ॥  
 रिपु रन जीति सुजस सुर गावत । सीता अनुज सहित<sup>४</sup> पुर<sup>५</sup> आवत ॥  
 सुनत बचन बिसरे सब दुखा । तृषावत जिमि पाइ<sup>६</sup> पियूषा ॥  
 को तुम्ह तात कहों तैं आए । मोहि परम प्रिय बचन सुनाए ॥  
 मारुतसुत मै कपि हनुमाना । नाम मोर सुनु कृपानिधाना ॥

१—प्र० रहेउ [ (२): रहा ] । दि०: प्र० । [ वृ०: रहा ] । च०: प्र० [ (८): रहे ] ।

२—प्र०: सुजन । दि०, वृ०: प्र० । च०: सो जन ।

३—प्र०: सहित अनुज । दि०: प्र० [ (५) (५अ): अनुज सहित ] । वृ०: अनुज सहित ।  
 च०: वृ० ।

४—प्र०: प्रभु । दि०, वृ०: प्र० । च०: पुर ।

५—प्र०: पाइ । दि०: प्र० । [ वृ०, च०: पाव ] ।

श्री गणेशाय नमः  
श्री जानकीवल्लभो विजयते

# श्री राम चरित मानस

स प्त म सो पा न

उत्तर कांड

श्लो०—क्रेक्रीकठाभनील सुर वरविलसद्विप्रपादावजचिह्नं  
शोभाढ्यं पीतमल्ल सरसिजनयनं सर्वदा सुमसन्नम् ।  
पाणौ नाराचचाप कपिनिकरयुत वधुना सेयमानं  
नौमीड्यं जानकीशं रघुवरमनिशं पुष्पकारुढरामम् ॥  
कोरणेन्द्रपदकजमजुलो कामलावज<sup>१</sup> महेश्वदितौ  
जानकीकरसरोत्रलालितौ चिन्तस्य मनभृगुसगिनौ ॥  
कुङ्कुमदुदरगौरसुंदर अंविक्वापतिमभीष्टसिद्धिदम् ।  
कास्त्रीक कलकजलोचनं नौमि शंकरमनंगमोचनम् ॥  
दो०—रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग ।  
जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कूमतनु राम त्रियोग ॥  
सगुन होहिं सुंदर सकल मन प्रसन्न सत्र फेर ।  
प्रभु आगवन जनाव जनु, नगर रम्य चहुँ फेर ॥  
कौसल्यादि मातु सत्र मन अनंद अस होइ ।  
आपउ प्रभु श्री अनुज जुत कहन चहत अब कोइ ॥  
मरत नयन भुज दच्छिन फरकत बारहिं बार ।  
जानि सगुन मन हरष अति लागे करन<sup>२</sup> विचार ॥

१—प्र० . कोमलावज । दि० : प्र० । [ वृ० . कोमलावज ] । च० : प्र० ।

२—प्र०, दि०, वृ०, च० : करन [ (६) : करै ] ।

जे जैसेहिं तेसेहिं उठि धावहि । बाल वृद्ध कहु संग न लावहि ॥  
 एक एकन्ह कहु वृम्हहि भाई । तुम्ह देने दयाल रघुराई ॥  
 अवधपुरी प्रभु आवत जानी । भई सकल सोभा के रानी ॥  
 बहइ सुहावन त्रिविध समीरा । भइ सरऊँ अति निर्मल नीरा ॥

दो०- हरपिन गुर परिजन अनुज भूसुर वृंद समेत ।  
 चले भारत मन प्रेम अति सन्मुख कृपा निकेत ॥  
 बहुसरु चढ़ी अठारिन्ह निरखहि गगन विमान ।  
 देखि मधुर सुर हरपत कहिं सुमंगल गान ॥  
 राका ससि रघुपति पुर सिंधु देखि हरपान ।  
 वदेउ कोलाहल करत जनु नारि सरग समान ॥ ३ ॥

इहाँ भानुकुल कमल दिवाकर । कपिन्ह देखावत नगर मनोहर ॥  
 सुनु कपीस अगद लूकेसा । पावन पुरी रुचिर येह देसा ॥  
 जद्यपि सब वैकुण्ठ बखाना । वेद पुरान विदित जग जाना ॥  
 अवध सरिस प्रिय मोहिं न सोऊँ । येह प्रसंग जानइ कोउ कोऊ ॥  
 जन्मभूमि मम पुरी सुहावनि । उत्तर दिसि बह सरयू पावनि ॥  
 जा मणजन तैं बिनहि प्रयासा । मम समीप नर पावहिं बासा ॥  
 अति प्रिय मोहि इहाँ के वासी । मम धामदा पुरी सुखरासी ॥  
 हरपे सब कपि सुनि प्रभु बानी । धन्य अवध जो राम बखानी ॥

दो०-आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान ।  
 नगर निःश्रुत प्रभु प्रेरेउ उतरेउ भूमि विमान ॥  
 उतरि कहेउ प्रभु पुष्पकहि तुम्ह कुबेर पहिं जाहु ।  
 प्रेरित राम चलेउ सो हरप बिरह अति ताहु ॥ ४ ॥

१-प्र० : सरऊ । [ दि०, वृ० : सरजू ] । च० : प्र० [(च) : सरजू ] ।

२-प्र० : अवधपुरी सम प्रिय नहिं सोऊ । दि० : प्र० । वृ० : अवध सरिस प्रिय मोहिं न सोऊ । च० : वृ० ।

दीनबंधु रघुपति कर किंकर । सुनत भरत भेंटउ उठि सादर ॥  
 मिलत प्रेमु नहि हृदयें समाता । नयन सवत जल पुलकित गाता ॥  
 कपि तव दरस सकल दुख बीते । मिले आजु मोहि रामु पिरिते ॥  
 बार बार वृष्णी कुसलावा । तो कहें देउं काह सुनु आता ॥  
 येह<sup>१</sup> संदेस सरिस जग माहीं । करि विचार देखेउं कछु नाहीं ॥  
 नाहिन तात उरिन मै तोही । अब प्रभु चरित सुनावहु मोही ॥  
 तव हनुमत नाइ पद माथा । कहै सकल रघुपति गुन गाथा ॥  
 कहु कपि कबहुं कृपाल गुसाई । सुमिरहि मोहि दास की नाई ॥  
 छं०—निज दास ज्यों रघुवंस भूपन कबहुं मम सुमिरन कर्यौ ।  
 सुनि भरत बचन विनीत अति कपि पुलकि तन चरनन्हि पर्यौ ॥  
 रघुवीर निज मुख जासु गुन गन कहत अग जग नाथ जो ।  
 काहे न होइ विनीत परम पुनीत सदगुन सिंधु सो ॥  
 दो०—राम प्रान प्रिय नाथ तुम्ह सत्य बचन मम तात ।  
 पुनि पुनि मिलत भरत सुनि हरष न हृदयें समात ॥  
 सो०—भरत चरन सिरु नाइ तुरित गपउ कपि राम पहि ।  
 कही कुसल सब जाइ हरषि चलेउ<sup>२</sup> प्रभु जान चढ़ि ॥२॥  
 हरषि भरत कोसलपुर आए । समाचार सब गुरहि सुनाए ॥  
 पुनि मंदिर महैं बात जनाई । आवत नगर कुसल रघुराई ॥  
 सुनत सकल जननी उठि धाई । कहि प्रभु कुसलभरत समुझाई<sup>३</sup> ॥  
 समाचार - पुरवासिन्ह पाए । नर अरु नारि हरषि सब घाए ॥  
 दधि दुर्वा रोचन फल फूला । नव तुलसीदल मंगल मूला ॥  
 भरि भरि हेम थार मामिनी । गावत चलि<sup>३</sup> सिंधुरगामिनी ॥

१—प्र० : पद । द्वि० : प्र० [ (५) : पहि ] । [ तृ० : यहि ] । च० : प्र [ (३) : पहि ] ।

२—प्र० : चलेउ । द्वि० : प्र० [ (३) (४) (५) : चले ] । [ तृ० : चले ] । च : प्र० [ (८) : चले ] ।

३—प्र० : चलि । द्वि० : प्र० [ (३) (४) (५) : चली ] । [ तृ० : चलि मव ] । च० : प्र० [ (८) : चली ] ।

प्रेमातुर सब लोग निहारी । कौतुक कीन्ह कृपाल सरारी ॥  
 अमित रूप प्रगटे तेहिं काला । जथाजोग मिने सबहि कृपाला ॥  
 कृपादृष्टि रघुवीर विलोकी । किए सफल नर नारि विसोकी ॥  
 द्यन महँ सचहि मिले भगवाना । उमा मरम येह काहु न जाना ॥  
 येहि विधि सचहि सुखी करि रामा । आगे चले सील गुन धामा ॥  
 कौसल्यादि मातु सब धाई । निरलि बच्छ जनु धेनु लवाई ॥  
 छ०—जनु धेनु बालक बच्छ तजि गृह चरन बन परवस गई ।

दिन अंन पुर रुख सबत थन हुंकार करि धावत भई ॥

अति प्रेम प्रभु सब मातु भेटौ वचन मृदु बहु विधि कहे ।

गई विषम विपति वियोगभव तिन्ह हरप सुख अर्गनित लहे ॥

दो०—भेंटैउ तनय सुमित्रा राम चरन रति जानि ।

रामहि मिलत कैकई हृदयँ बहुत सकुचानि ॥

लक्ष्मिन सब मातन्ह मिलि हरपे आसिस पाइ ।

कैरुइ कहँ पुनि पुनि मिले२ मन कर छोम न जाइ ॥ ६ ॥

सासुन्ह सबनि मिली बैठेही । चरनन्हि लागि हरपु अति तेही ॥

देहिं असीस बूझि कुसलाता । होउ३ अचल तुम्हार अहिवाता ॥

सब रघुपति मुख कमल विलोकहिं । मंगल जानि नयन जल रोकहि ॥

कनक थार आरती उतारहिं । बार बार प्रभु गात निहारहिं ॥

नाना भाँति निष्ठावरि करहीं । परमानंद हरप उर भरहीं ॥

कौसल्या - पुनि पुनि रघुवीरहि । चिनवउ कृपासिंधु रनधोरहि ॥

हृदयँ विचारति बारहि वारा । कवन भाँति लक्ष्मणपति मारा ॥

अति सुकुमार जुगल मम वारे । निसिचर सुभट महा बल भारे ॥

१—प्र० : महि । दि० : प्र० [ (४) (५) (१७) महँ ] । तृ० : प्र० । च० : मह ।

२—प्र० : कैरुइ कहँ पुनि पुनि । दि० : प्र० [ (३) (४) कैकेई कहँ पुनि ] । तृ०, च० : प्र० [ कैकेई कहँ पुनि ] ।

३—प्र० : होइ । दि० : प्र० [ (३) होइ, (४) (५) होउ ] । तृ० : होउ । च० : तृ० ।

आए भरत संग सब लोग । कृस तन श्री रघुवीर वियोगा ॥  
 वामदेव बसिष्ठ मुनिनायक । देखे प्रभु महि धरि धनु सायक ॥  
 घाइ धरे<sup>१</sup> गुर चरन सरोरुह । अनुज सहित अति पुलक तनोरुह ॥  
 भैंटे कुसन वृक्षो मुनिराया । हमरे कुसल तुम्हारिहि दाया ॥  
 सकल द्विजन्ह मिलि नापड माथा । धरम धुरधर रघुकुल नाथा ॥  
 गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज । नमत जिन्हहि सुर मुनिसंकर अज ॥  
 परे नृमि नहि उठत उठाए । बर<sup>२</sup> करि कृपासिबु उर लाए ॥  
 स्यामल गात रोम भर ठाढ़े । नव राजाव नयन जल बाढ़े ॥

धं०—राजीव लोचन सबत जल तन ललित पुलकावलि घनी ।

अति प्रेम हृदय लगाइ अनुजहि मिले प्रभु त्रिभुवन घनी ॥

प्रभु मिलत अनुजहि सोह मो पहि जाति नहि उपमा कही ।

जनु प्रेम अरु सिंगार तनु धरि मिले बर सुपमा<sup>३</sup> लही ॥

वृक्षत कृपानिधि कुसल भरतहि बचन बेगि न आवई ।

सुनु सिवा सो सुख बचन मन ते भिन्न जान जो पावई ॥

अब कुसल कोसलनाथ आरत<sup>४</sup> जानि जन दरसन दियो ।

बूझत विरह वारीस कृपानिवान मोहि कर गहि लियो ॥

दो०—पुनि प्रभु हरपि सत्रुहन भैंटे हृदय लगाइ ।

लक्ष्मिन भरत मिले तब<sup>५</sup> परम प्रेम दोउ भाइ ॥ ५ ॥

भारतानुज लक्ष्मिन पुनि भैंटे । दुसह विरह संभव दुख मेटे ॥

सीता चरन भरत सिरु नावा । अनुज समेत परम सुख पावा ॥

प्रभु विलोकि हरपे पुरवासी । जनिउ वियोग विपति सब नासी ॥

१—प्र० : धरे । दि० : प्र० । [ वृ० : गहे ] । च० : प्र० [ (३) : गहे ] ।

२—प्र० : दि० : बर । [ वृ० : बल ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : सुपमा । दि० : प्र० [ (३) : परमा ] । [ वृ०, च० : परमा ] ।

४—[ प्र०, दि० : आरति ] वृ०, च० : आरत ।

५—प्र० : भएन मिले तब । दि० : प्र० । [ वृ० : भैंट भरत पुनि ] । च० : प्र० ।



पुर सोभा सपति कल्याणा । निगम सेव सारदा यन्माना ॥  
तेउ येह चरित देखि ठगि रहही । उमा तामु गुन नर किमि कहही ॥

श्री०—नारि पुमुदिनी अचय सर रुपपति बिगह दिनेम ।

अम्त भए बिगसन भई निरसि राम गछेस ॥

होहि सगुन मुमभिविध बिधि चात्रहि गगन<sup>१</sup> निगान ।

पुर नर नारि सनाथ करि भयन चने भगवान ॥ ६ ॥

प्रभु जानी कैरई लजानी । प्रथम तामु गृह गए भयानी ॥

ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा । पुनि निज भयन गगन हरि कीन्हा ॥

कृपासिनु तन<sup>२</sup> मदिर गए<sup>३</sup> । पुर नर नारि सुखी सब भए<sup>४</sup> ॥

गुर बसिष्ठ द्विज लिए बुलाई । आज सुपरी सुदिन सुभलाई<sup>५</sup> ॥

सन द्विज देहु हरषि अनुसासन । रामचंद्र बैठहि सिपासन ॥

मुनि बसिष्ठ के वचन मुहाए । मुनत सकल विप्रन्ह अति भाए ॥

कहहि वचन मृदु निप्र अनेका । जग प्रभिराम राम अभिपेक्षा ॥

अब मुनिनर बिलवु नहिं रीजे । महाराज कहुं तिलक दरीजे ॥

श्री०—तब मुनि रहेउ सुमन सन सुनन चलेउ सिर नाइ<sup>६</sup> ।

रथ अनेक बहु बाजि गत्र तुरत संवारे जाइ ॥

जहँ तहँ धावन पठइ पुनि मगल द्रव्य मँगाइ ।

हरष समेत बसिष्ठ पद पुनि सिह नाएउ आइ ॥ १० ॥

अवधपुरी अति रुचिर बनाई । देवन्ह सुमन वृष्टि भरि<sup>७</sup> लाई ॥

राम कहा सेवकन्ह बोलाई । प्रथम ससन्ह अन्हवारहु जाई ॥

१—प्र० : गगन । दि० : प्र० । [ तु० : नाक ] । च० : प्र० [ नाक (६) ] ।

२—प्र० : तब । दि० : प्र० [ (१) : जब ] । [ तु० : जब ] । च० : प्र० [ (६) : जर ] ।

३—प्र० : गए, भए । दि० : प्र० [ (३) : गएऊ भएऊ ] । [ तु० : गएऊ, भएऊ ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : समुदाई । दि० : सुमदाई । तु०, च० : दि० [ (८) : सुमदाई ] ।

५—प्र० : हरषार । दि० : प्र० । तु० : सिर नाइ । च० : तु० ।

६—प्र० : भर । दि० : भरि । तु०, च० : दि० ।

दो०—लक्ष्मिन अरु सीता सहित प्रभुहि बिलोकति मातु ।

परमानंद मगन मन पुनि पुनि पुलकित गातु ॥ ७ ॥

लंकापति कपीस नल नीला । जामवन अंगद सुभ सीला ॥

हनुमदादि सब बानर बीरा । धरे मनोहर मनुज सरीरा ॥

भरत सनेहु सील व्रत नेमा । सादर सब चरनहि अति प्रेमा ॥

देखि नगर आसिन्ह कै रीती । सकल सराहहि प्रभु पद प्रीती ॥

पुनि रघुपति सब सखा बोलाए । मुनि पद लागहु सकल सिखाए ॥

गुर वसिष्ठ कुलपूज्य हमारे । इन्हक्री कृपा दनुज रन मारे ॥

ये सब सखा सुनहु मुनि मेरे । मए सम सागर कहूँ बेरे ॥

मम हित लागि जन्म इन्ह हारे । भरतहुँ तें मोहि अधिक पिआरे ॥

सुनि प्रभु वचन मगन सब भए । निमिपि निमिपि उपजत सुख नए ॥

दो०—कौसल्या के चरनन्हि पुनि तिन्ह नाएउ माथ ।

आसिप दीन्हे हरपि तुम्ह प्रिय मम जिमि रघुनाथ ॥

सुमन वृष्टि नभ संकुल भवन चले सुखकंद ।

चढ़ी अटारिन्ह देखहि नगर नारि वर वृंद ॥ ८ ॥

कंचन कलस विचित्र सँवारे । सर्वाहि धरे सजि निज निज द्वारे ॥

पंदनिवार पताका केतू । सबन्हि बनाए मंगल हेतू ॥

बीथी सकल सुगंध सिचाई । गजमनि रचि बहु चौक पुराई ॥

नाना भौंति सुमंगल साजे । हरपि नगर निसान बहु बाजे ॥

जहँ तहँ नारि निछावरि करहीं । देहि 'असीस' हरप उर भरहीं ॥

कंचन धार आरती नाना । जुवती सजें करहि सुभ गाना ॥

करहि आरती आरतिहर के । रघुकुल कमल विपिन दिनकर के ॥

१—प्र०, दि०, तु०, च० : लागहु सकल [(६) : लागन कुसल] ।

२—प्र० : वर । दि० : प्र० [(४) (५) (५अ) : नर] । [तु० : नर] । च० : प्र० [(८) : नर] ।

भरतादि अनुज विभीषणांगद हनुमदादि समेत ते ।  
 गहे छत्र चामर व्यवन धनु असि चर्म सक्ति पिराजने ॥  
 श्री सहित दिनकर वंगभूषण धान चतु ध्वज सोदर ।  
 नव अंबुधर वर गा । अर पीन मुनि मन मोदर ।  
 मुकुटागदादि विभिन्न भूषण अंग अगन्धि प्रति सजे ।  
 अंभोज नयन विमाल उर भुज धन्य नर निरक्षति जे ॥

दो०—बहु सोभा समाज सुख कहत न चन्द मोग ।  
 चरन सारद सेव श्रुति सो रस जान महेश ॥  
 भित्त भित्त अस्तुनि करि गए मुर निज निज धाम ।  
 बंदी सेव वेद तब आप जहँ श्री राम ॥  
 प्रभु सर्वज्ञ कीन्ह अति आदर कृपानिधान ।  
 लखैउ न काह मरम येह लगे करन गुन गान ॥ १२ ॥

छ०—जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने ।  
 दसकंधरादि प्रचंड निसिचर प्रबल खल भुजपल हने ॥  
 अवतार नर सत्तार भार विभजि दारुन दुख दहे ।  
 जय प्रनतपाल दयाल प्रभु संजुक्त सक्ति नमामहे ॥  
 तब विषम मायावस सुरासुर नाग नर अग जग हरे ।  
 भव पंथ भ्रमत अमित दिवस निसि काल कर्म गुनन्हि भरे ॥

१—प्र०, दि०, वृ०, च० : चर्म [ (६) : रम ] ।

२—प्र० : सुर । दि० : प्र० । वृ० : मुनि । च० : वृ० ।

३—प्र० : गए । दि० : प्र० । [ वृ० : गे ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : जय सगुन निर्गुन रूप रूप अनूप भूप सिरोमने । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) :  
 जय सगुन रूप अनूप भूप विचार विबुध सिरोमने ] ।

५—प्र०, दि०, वृ०, च० : सार भार [ (६) संभारि कर ] ।

६—भ्रमत अमित दिवस निसि । दि० : प्र० [ (४) : भ्रमत अमित दिवस निसि ] । [ वृ० :  
 अमित अमित दिवस निसि ] । [ च० : (६) भ्रमत अमित दिवस निमि, (८) भ्रमित  
 देवस निसि प्रभु ] ।

सुनत बचन जहँ तहँ जन धाए । सुग्रीवादि तुरत<sup>१</sup> अन्हवाए ॥  
 पुनि करुनानिधि भरत हँकरे । निज कर राम जटा निरुआरे ॥  
 अन्हवाए प्रभु तीनिउँ भाई । भगत बखल कृपाल रघुराई ॥  
 भरत भाग्य प्रभु कोमलताई । सेप कोटि सत सद्धहि न गाई ॥  
 पुनि निज जटा राम बिवराए । गुर अनुसासन माँगि नहाए ॥  
 कार मज्जन प्रभु भूपन साजे । अग अनंग कोटि द्यवि लाजे<sup>२</sup> ॥

दो०—सामुन्ह सादर जानकिहि मज्जनु- तुरत कराइ ।

दिव्य वसन घर भूपन अँग अँग सजे बनाइ ॥

राम वाम दिसि सोभित रमा रूप गुन खानि ।

देखि मातु सब हरपी जन्म सुफल निज जानि ॥

सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि वृंद ।

चढ़ि विमान आए सब सुर देखन सुखकंद ॥११॥

प्रभु बिलोकि मुनि मनु अनुरागा । तुरत दिव्य सिंघासन माँगा ॥

रवि सम तेज सो वरनि न जाई । बैठे राम द्विजन्ह सिर नाई ॥

जनकसुता समेत रघुराई । पेलि प्रहरपे मुनि समुदाई ॥

वेद मंत्र तब द्विजन्ह उचारे । नम सुर मुनि जय जयति पुकारे ॥

प्रथम तिलक बसिष्ठ मुनि कीन्हा । पुनि सब विप्रन्ह आयेसु दीन्हा ॥

सुन बिलोकि हरपी महतारी । वार वार आरती उतारी ॥

विप्रन्ह दान विविध विधि दीन्हे । जाचक सकल अजाचक कीन्हे ॥

सिंघासन पर त्रिभुवन साई । देखि सुरन्ह दुंदुभी बजाई ॥

छं०—नम दुंदुभी बाजहि विपुल गंधर्व किलर गावहीं ।

नाचहि अपहरा वृंद परमानंद सुर मुनि पावहीं ॥

१—प्र० : सुग्रीवादि तुरत । दि०, च० : प्र० । [ च० : (६) सुग्रीवहिं तुरत, (८) सुग्रीवहिं प्रथमहिं ] ।

२—प्र० : देखि सत लाजे । दि० : प्र० [(३) : कोटि द्यवि लाजे] । नृ० : कोटि द्यवि द्याजे । च० : नृ० ।

दससीस विनासन बीस भुजा । कृत दूरि महा महि भूरि रुजा ।  
 रजनीचर वृद्ध पतंग रहे । सर पावरु तेज प्रचंड दहे ॥  
 महि मडल मडन चारुतर । धृत सायक चाप निपग वर ।  
 मद मोह महा ममता रजनी । तुम पुंज दिवाकर तेज अनी ॥  
 मनजात<sup>१</sup> किरात निपात किए । मृग लोग कुभोग सरेन हिये ।  
 हति, नाथ अनाथन्हि पाहि हरे । बिषया वन पौवर भूलि परे ॥  
 बहु रोग वियोगन्हि लोग हए । भवद्वि निरादर के फल ये ।  
 भवसिंधु अगाध परे नर ते । पद पंकुज प्रेमु न जे करते ॥  
 अति दीन मलीन दुखी नित हीं । जिन्हकें पद पंकुज प्रीति नहीं ।  
 अवलब भवत कथा जिन्ह कैं । प्रिय संत अनत सदा तिन्ह कैं ॥  
 नहि राग न लोभ न मान मद्र । तिन्ह कैं सम वेभव वा विपदा<sup>२</sup> ।  
 येहि तैं तव सेवरु होत मुदा । मुनि त्यागत जीग भरोस सदा ॥  
 करि प्रेमु निरतर नेमु लिए । पद पंकुज सेवत सुद्ध हिये ॥  
 सम मानि निरादर आदरहीं । सन सन सुखी बिचरति मही ॥  
 मुनि मानस पंकुज भृग भजे । रघुनीर महा रनधीर अजे ।  
 तव नाम जपामि नमामि हरी । भवरोग महा गद<sup>३</sup> मानअरी ॥  
 गुन सील कृपा परमायतन । प्रनमामि निरतर श्रीरमन ।  
 रघुनद निकटय द्वंद धन । महिपाल बिलोरुय दीन जन ॥  
 दो०—बार बार बार भोगों हरषि देहु श्रीरग ।  
 पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसग ॥  
 वरनि उमापति राम गुन हरषि गए केलास ।  
 तन प्रभु कपिन्ह दिवाए सब विधि सुखप्रद वास ॥ १४ ॥

१—प्र० : मनजात । दि० : प्र० । [ (४) : मनुजात ] । [ व० : मनुजान ] । च० : प्र०  
 [ (५) : जमुजात ] ।

२—प्र०, दि०, व०, च० : विपदा [ (६) निपदा ] ।

३—प्र० : गद । दि० : प्र० [ (४) (५) : मद ] । [ व०, च० : मद ] ।

जे नाथ करि करुना बिलोके त्रिविधि दुख ते निर्वहे ।  
 भव खेद छेदनदक्ष हम कहँ रक्ष राम नमामहे ॥  
 जे ज्ञान मान बिमल तव भवहरनि भक्ति न आदरी ।  
 ते पाइ सुर दुर्लभ पदादपि परत हम देखत हरी ॥  
 बिस्वास करि सब आस परिहरि दास तव जे होइ रहे ।  
 जपि नाम तव बिनु सम तरहिं भव नाथ सो स्मरामहे ॥  
 जे चरन सिव अज पूज्य रज सुभ परसि मुनिपतिनी तरी ।  
 नख निर्गता मुनि बंदिता त्रैलोक पावनि सुरसरी ॥  
 ध्वज कुलिस अंकुस फंज जुत बन फिरत कंटक किन लहे ।  
 पद कंज द्वंद मुकुंद राम रमेस नित्य भजामहे ॥  
 अव्यक्त मूल मनादि तरु त्वच चारि निगमागम भने ।  
 पट फंघ साखा पंचवीस अनेक पर्न सुमन घने ॥  
 फल जुगल बिधि कटु मधुर बेलि अकेलि जेहि आसित रहे ।  
 पल्लवत फूलत नवल नित संसार बिटप नमामहे ॥  
 जे ब्रह्म अजमद्वैतमनुभवगम्य मन पर ध्यावहीं ।  
 ते कहँ जानँ नाथ हम तव सगुन जसु निज गावहीं ॥  
 करुनायतन प्रभु सदगुनाकर देव येह बर माँगहीं ।  
 मन वचन कर्म बिकार तजि तव चरन हम अनुरागहीं ॥

दो०—सब के देखत बेदन्ह बिनती कीन्ह उदार ।  
 अंतरधान भए पुनि गए ब्रह्म आगार ॥  
 बैनतेय सुनु समु तव आए जहँ रघुबीर ।  
 बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर ॥१३॥

तोमर छ०—जय राम रमा रमनं समनं । भव ताप गयाकुल पाहि जनं ।  
 अवधेस सुरेस रमेस बिभो । सरनागत माँगत पाहि प्रभो ॥

सुनि प्रभु वचा मगा सब भए । को हम कहाँ बिगारि ता गए ॥  
 एक टक रहे जोरि पर आगे । सद्धि न द्रुद्धि अनि अनुगने ॥  
 परम प्रेमु तिन्ह पर प्रभु देमा । कहा बिबिध विधि आनि मेमा ॥  
 प्रभु सन्मुग कलु कहन न पारहि । पुनि पुनि चरन सरो । निरागहि ॥  
 तन प्रभु भूपन वसा मँगाए । नाना रग अनुर मुटाए ॥  
 सुप्रीवहि प्रथमहि पहिराए । वसन भरत निज हाथ बनाए ॥  
 प्रभु प्रेरित लखिमनु पहिराए । लकापति रघुपति मा भए ॥  
 अगद बैठ रहा नहि ढोला । शीति देखि प्रभु ताहि न बेला ॥  
 दो०—जामवत नीलादि सन पहिराए रघुनाथ ।

हिय धरि राम रूप सब चले नाइ पद माय ॥

तन अगद उठि नाइ सिंह सजल नयन कर जोरि ।

अति विनीत बोलेउ वचन मनहुँ प्रेम रस बोरि ॥१७॥

सुनु सर्वज्ञ टूषा सुख सिधो । दीन दयाकर आरत चरो ॥

मरती बेर नाथ मोहि बाली । गपउ तुम्हारेहि कोपे घाली ॥

असरन सरन विरिहु सभारी । मोहि जनि सजहु भगत हितकारी ॥

मोरें तुम्ह प्रभु गुरु पितु माता । आवैं कहीं तजि पद जलजाता ॥

तुम्हइ विचारि कहहु नरनाहा । प्रभु तजि भवन काजु मम काहा ॥

बालक ज्ञान बुद्धि बल हीना । राखहु सरन नाथ जन दीना ॥

नीचि टहल गृह कै सब करिहौं । पद पकन विलोकि भव तरिहो ॥

अस कहि चरन परेउ प्रभु पाही । अथ अनि नाथ कहहु गृह जाही ॥

दो०—अगद वचन विनीत सुनि रघुपति करनासीव ।

प्रभु उठाइ उर लाएउ सजल नयन राजीव ॥

निज उर माल बसन मनि वालितनय पहिराइ ।

विदा कीन्हि भगवान तब बहु प्रफार समुझाइ ॥१८॥

सुनु खगपति यह कथा पावनी । त्रिविध ताप भव भय दावनी ॥  
 महाराज कर सुम अभिषेका । सुनत लहहि नर विरति विवेका ॥  
 जे सकाम नर सुनिहि जे गावहि । सुख संपति नाना विधि पावहि ॥  
 सुर दुर्लभ सुख करि जग माहीं । अंत काल रघुपति पुर जाहीं ॥  
 सुनिहि विमुक्त विरत अरु विषई । लहहि भगति गति संपति नई ॥  
 खगपति राम कथा मैं चरनी । स्वमति विलास त्रास दुख हरनी ॥  
 विरति विवेक भगति दृढ़ करनी । मोह नदी कहूँ सुंदर तरनी ॥  
 नित नव मंगल कोमलपुगी । हरषि रहहि लोग सब कुरी ॥  
 नित नई प्रीति राम पद पंकज । सबकै जिन्हहि नमत सिव मुनि अज ॥  
 मगन बहु प्रकार पहिराए । द्विजन्ह दान नाना विधि पाए ॥  
 दो०—ब्रह्मानंद मगन कषि सब कै प्रभु पद प्रीति ।

जात न जाने देवस तिन्ह ३ गए मास पट बीति ॥ १५ ॥  
 विसरे गृह सपनेहुँ सुधि नाही । जिमि परद्रोह संत मन नाही ४ ॥  
 तब रघुपति सब सखा बोलाए । आई सबन्हि सादर सिर नाए ॥  
 परम प्रीति समीप बैठारे । भगत सुखद मृदु बचन उचारे ॥  
 तुम्ह अति कीन्हि मोरि सेवकाई । मुख पर केहि बिधि करौ बड़ाई ॥  
 ता तैं मोहिं तुम्ह अति प्रिय लागे । मम हित लागि भवन सुख त्यागे ॥  
 अनुज राज संपति वैदेही । देह गेह परिवार सनेही ॥  
 सब मम प्रिय नहिं तुम्हहि समाना । मृषा न कहौ मोर येह बाना ॥  
 सब कै प्रिय सेवक येह नीती । मोरें अधिक दास पर प्रीती ॥  
 दो०—अब गृह जाहु सखा सब भजेहु मोहि दृढ़ नेम ।

सदा सर्वगत सर्वहित जानि करेहु अति प्रेम ॥ १६ ॥

१—प्र० : भय । दि० : प्र० । [ तु० : दाप ] । च० : प्र० [ (८) : दाप ] ।

२—प्र० : नई । दि० : प्र० । [ तु० : नितई ] । च० : प्र० [ (८) : नितई ] ।

३—प्र० : देवस तिन्ह । दि० : प्र० । [ तु० : दिवस निति ] । च० : प्र० [ (८) : दिवस निति ] ।

४—प्र० : मन नाही । दि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : मन माहीं ] । [ तु०, च० : मन माहीं ] ।



रामराज भेटे त्रै लोका । हरणि । भए गए सब सोदा ॥  
 बयरु न नर काह सन कोई । राम प्रताप विपमता सोई ॥  
 दो०—बरनासन निज निज धरम निरत बेद पथ लोग ।

चलहि सदा पावहि मुखहि<sup>१</sup> नहिं भय सोरु न रोग ॥२०॥  
 देहिऊ देविऊ भौतिऊ तापा । राम राज नहिं काहुहि व्यापा ॥  
 सन नर कहि परसपर प्रीती । चलहि रम्यधर्म निरत धुनि रीनी<sup>२</sup> ॥  
 चारिउ चरन धर्म जग माही । पूरि रहा सपनेहु अप नाही ॥  
 राम भगति रत नर अरु नारी । सरल परम गति के अधिपारी ॥  
 अल्प मृत्यु नहिं कवनिउं पीरा । सन मुदर सब बिरुज सरीग ॥  
 नहिं दरिद्र कोउ दुखी न दीना । नहिं कोउ अयुध न लक्षणहीना ॥  
 सब निर्दभ धरमरत पुनी<sup>३</sup> । नर अरु नारि चतुर सब गुनी ॥  
 सब गुनज्ञ पंडित सन ज्ञानी । सन कृपज्ञ नहिं कपट सयानी ॥  
 दो०—राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहि ।

काल कर्म सुभाव गुन कृप दुख काहुहि नाहि ॥२१॥  
 मूमि सप्त सागर मेखला । एक मूष रघुपति कोसला ॥  
 भुञ्जन अनेक रोम प्रति जासू । येह प्रभुना कष्टु बहुत न तासू ॥  
 सो महिमा समुझन प्रभु केरी । येह बरनत हीनना घनेरी ॥  
 सोउ महिमा खगेस जिन्ह जानी । फिरि येहि चरित तिन्हहुरति मानी ॥  
 सोउ जाने कर फल येह लीला । कहहिं महा मुनिनर<sup>४</sup> दमभीला ॥  
 राम राज कर सुख सपदा । बरनि न सरद फनीस सारदा ॥  
 सब उदार सब पर उपकारी । विप्र चरन सेवक नर नारी ॥  
 एक नारि व्रत रत सब भ्गारी । ते मन बच कम पति हितकारी ॥

१—प्र० : मुखहि । दि० : प्र० (३) (४) (५) : मुख । वृ० : प्र० । [ च० : मुख ] ।

२—प्र० : नीती । दि०, वृ० : प्र० । च० : रीती ।

३—[ प्र० : पुनी ] । दि० : धनी [ (३) (४) (५) : पुनी ] । [ वृ० : पुनी ] । च० : दि० ।

४—[ प्र० : वरद सुसीला ] । दि० : वर दम सीला [ (४) (५) : वरद सुसीला ] । [ वृ० : वरद सुसीला ] । च० : दि० [ (८) वर सुसीला ] ।

भरत अनुज सौमित्रि समेता । पठवन चले भगत कृत चेता ॥  
 अंगद हृदयँ प्रेमु नहिं थोरा । फिर फिर चितव राम की ओरा ॥  
 बार बार कर दंड प्रनामा । मन असरहन कहि मोहिं रामा ॥  
 राम विलोकनि बोलनि चलनी । सुमिरि सुमिरि सोचत हैंसि मिलनी ॥  
 प्रभु रुख देखि विनय बहु भाखी । चलेउ हृदयँ पद पंकज राखी ॥  
 अति आदर सब कपि पहुँचाए । माइन्ह सहित भगत पुनि आए ॥  
 तब सुभीव चरन गहि नाना । भाँति विनय कीन्ही<sup>१</sup> हनुमाना ॥  
 दिन दस करि रघुपति पद सेवा । पुनि तब चरन देखिहौं देवा ॥  
 पुन्य पुंज तुम्ह पवनकुमारा । सेवहु जाइ कृपाआगारा ॥  
 अस कहि कपि सब चले तुरन्ता । अंगद कहइ सुनहु हनुमन्ता ॥  
 दो०—कहेहु दंडवत प्रभु सैं<sup>२</sup> तुम्हहि कहौं कर जोरि ।  
 बार बार रघुनायकहिं सुरति कराएहु मोरि ॥  
 अस कहि चलेउ बालिसुत फिर आएउ हनुमन्त ।  
 तासु प्रीति प्रभु सन कही मगन भए भगवंत ॥  
 कुलिसहु चाहि कठोर अति कोमल कुसुमहु चाहि ।  
 चित्त खगेस राम कर<sup>३</sup> समुझि परइ कहु काहि ॥१६॥  
 पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा । दीन्हे भूपन वसन प्रसादा ॥  
 जाहु भवन मम सुमिरन करेहु । मन क्रम बचन धर्म अनुसरेहु ॥  
 तुम्ह मम सखा भरत सम आता । सदा -रहेहु पुर आवत जाता ॥  
 बचन सुनत उपजा सुख भारी । परेउ चरन भरि लोचन बारी ॥  
 चरन नलिन उर धरि गृह आवा । प्रभु सुमाउ परिजनन्हि सुनावा ॥  
 रघुपति चरित देखि पुरवासी । पुनि पुनि कहहिं धन्य सुखरासी ॥

१—प्र० : कीन्ही । दि०, वृ० : प्र० । च० : कीन्ही ।

२—प्र० : सैं । दि० : प्र० । [ वृ० : सन ] । च० : प्र० [ (८) : सन ] ।

३—प्र० : चित्त खगेस राम कर । दि० : प्र० । [ वृ० : चित्त खगेस अस राम कर ] । च० : प्र० [ (८) : चित्त खगेस सुनि राम कर ] ।

दो०—जासु कृपा कटाक्ष मुर चाहत नित न सोइ ।

राम पदारविंद गति करति सुभावहि सोइ ॥२४॥  
 सेरहि सानुहूल सन भाई । राम चरन रति अति अधिघई ॥  
 प्रभु मुख कमल चिन्ताहत रहही । कनहुं कृपाल हमहि कहु कहही ॥  
 राम करहि आतन्ह पर प्रीती । नाना भोति सिखावहि नीनी ॥  
 हरपिन रहहि नगर के लोगा । करहि सखल मुर दुर्लभ भोगा ॥  
 अहनिसे विधिहि मनावत रहहीं । श्री रघुबीर चरन रति चहहीं ॥  
 दुइ सुत सुंदर सोना जाए । लन कुस वेद पुरानन्ह गाए ॥  
 द्वौ बिजई धिनई गुनमंदिर । हरि प्रतिनिब मनहु अति सुंदर ॥  
 दुइ दुइ सुत सब आतन्ह केरे । भए रूप गुन सील पनेरे ॥  
 दो०—ज्ञान गिरा गोतीत अज माया मन गुन पार ।

सोइ सच्चिदानंद घन कर नर . चरित उदार ॥२५॥  
 प्रात काल सरक<sup>१</sup> करि मज्जन । बेठहि सभा संग द्विज सज्जन ॥  
 वेद पुरान वसिष्ठ बखानहि । सुनहि राम जयपि सब जानहि ॥  
 अनुजन्ह संजुत भोजनु करहीं । देखि सकल जननी सुख भरहीं ॥  
 भरत सत्रुहन दूनों भाई । सहित पवनसुत उपवन जाई ॥  
 ब्रूमहि बैठि राम गुनगाहा । कह हनुमान सुमति अवगाहा ॥  
 सुनत विमल गुन अति सुख पावहि । बहुरि बहुरि करि विनय कहावहि ॥  
 सब के गृह गृह होहि<sup>२</sup> पुराना । राम चरित पावन विधि नाना ॥  
 नर अरु नारि राम गुन गानहि । करहि दिवस निसि जात न जानहि ॥  
 दो०—अवधपुरी वासिन्ह कर सुख संपदा समाज ।

सहस सेस नहि कहि सकहि जहँ नृप राम विराज ॥२६॥  
 नारदादि सनकादि मुनीसा । दरसन लागि कोसलाधीसा ॥  
 दिन प्रति सकल अजोध्या आवहि । देखि नगरु विराग बिसरावहि ॥

१—प्र० : सरक । दि०, वृ० : सख । च० : प्र० [ (८) : सरक ] ।

२—प्र० : गृह गृह होहि । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : गृह होहि वेद ] ।

दो०—दंड जतिन्ह कर मेद जहँ नर्तक नृत्य समाज ।

जीतहु मनहिं सुनिअ अस<sup>१</sup> रामचन्द्र केँ राज ॥२२॥

फूलहिं फरहिं सदा तरु कानन । रहहिं एक सँग गज पंचानन ॥

खग मृग सहज बयरु विसराई । सबन्हि परसपर प्रीति बढ़ाई ॥

कूजहिं खग मृग नाना वृंदा । अभय चरहिं बन करहिं अनंदा ॥

सीतल सुरभि पवन वह मंदा । गुंजत अलि लै चलि मकरंदा ॥

लता बिटप मोंगे मधु चवहीं । मनभावतो धेनु पय संवहीं ॥

ससि संपन्न सदा रह धरनी । जेता भइ कृतजुग के करनी ॥

प्रगंटी गिरिन्ह विविधि मनि खानी । जगदातमा भूप जग जानी ॥

सरिता सकल बहहिं बर बारी । सीतल अमल स्वाद सुखकारी ॥

सागर निज मरजादा रहहीं । डारहिं रतन तटन्हि नर लहहीं ॥

सरसिज संकुल सकल तड़ागा । अति मसन्न दस दिसा बिभागा<sup>२</sup> ॥

दो०—बिधु महि पूर मऊखन्हि रवि तप जेतनेहि काज ।

मोंगे बारिद देहिं जल रामचंद्र केँ राज ॥२३॥

कोटिन्ह बाजिमेध प्रभु कीन्है । दान अनेक द्विजन्ह कहँ दीन्है ॥

श्रुति पथ पालक धर्म धुरंधर । गुनातोत अरु भोग पुरंदर ॥

पति अनुकूल सदा रह सीता । सोभाखानि सुसील विनीता ॥

जानति कृपासिंधु प्रभुताई । सेवति चरन कमल मन लाई ॥

जद्यपि गृह सेवक सेवकिनी । विपुल सकल सेवा विधि गुनी ॥

निज कर गृह परिचरजा करई । रामचंद्र आयेसु अनुसरई ॥

जेहिं विधि कृपासिंधु सुख मानइ । सोइ कर श्री सेवाविधि जानइ ॥

कौसल्यादि सासु गृह माहीं । सेवइ सबन्हि मान मद नाहीं ॥

उमा रमा ब्रह्मानि बंदिता<sup>३</sup> । जगदंबा संततमनिदिता ॥

१—प्र०: सुनिअ अस । दि०, वृ०: प्र० । [च०: (१) अस सुनिअ जग, (२) अस सुनिअ] ।

२—[ प्र० में यह अर्द्धाली नहीं है ] ।

३—प्र०: ब्रह्मानि बंदिता । [ दि०: ब्रह्मादि बंदिता ] । वृ०: प्र० । [च०: (१) ब्रह्मादि बंदिता । (२) ब्रह्मादिक बंदिता] ।

छ०—वाजार रुचिर<sup>१</sup> न वनइ वरनत वस्तु बिनु गथ पाइए ।

जहँ भूप रमानिवास तहँ की सपदा किमि गाइए ॥

बैठे बजाज सराफ बनिक अनेक मनहुं कुवेर ते ।

सब सुखी सब सच्चरित सुंदर नारि नर सिधु जरठ जे ॥ ०

दो०—उत्तर दिसि सरजू बह निर्मल जल गभीर ।

बौंधे घाट मनोहर स्वल्प पक नहिं तीर ॥२८॥

दूर फराक रुचिर सो घाट । जहँ जल पिअहिं बाजि गज ठाट ॥

पनिघट परम मनोहर नाना । तहाँ न पुरुष करहि अस्नाना ॥

राजघाट सब विधि सुंदर बर । मज्जहिं तहाँ बरन चारिउ नर ॥

तीर तीर देवन्ह के मंदिर । चहुं दिसि तिन्हकी<sup>२</sup> उपवन सुंदर ॥

कहुं कहुं सरिता तीर उदासी । बसहि<sup>३</sup> ज्ञानरत मुनि सन्यासी ॥

तीर तीर तुलसिका सुहाई । वृद वृद बहु मुनिन्ह लगाई ॥

पुर सोभा कछु वरनि न जाई । बाहेर नगर परम रुचिराई ॥

देखत पुरी अखिल अघ भागा । बन उपवन बापिका तड़ागा ॥

छ०—बापी तड़ाग अनूप कूप मनोहरायन सोहहीं ।

सोपान सुंदर नीर निर्मल देखि सुर<sup>४</sup> मुनि मोहहीं ॥

बहु रंग कज अनेक खग कूजहि मधुप गुंजारहीं ।

आराम रम्य पिकादि खग रव जनु पथिक हकारहीं ॥

दो०—राम नथ जहँ राजा सो पुर वरनि कि जाइ ।

अनिमादिक सुख सपदा रही अवध सन छाइ ॥२९॥

१—प्र० : रुचिर । दि० : प्र० [ (३) (४) चार ] । नृ० : प्र० । [ च० : चार ] ।

२—प्र० : तिन्हकी । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : तिन्हके ] । [ नृ० : तिन्हके ] । [ ७० : (३) तिन्हकी, (५) तिन्हके ] ।

३—प्र० : बसहि । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (४) मारहि ] ।

४—[ प्र० : सर ] । दि० : सुर । नृ० : दि० । ७० : दि० [ (६) : सर ] ।

जातरूप मनि रचित अटारी । नाना रंग रुचिर गन दारी ॥  
पुर चहुँ पास कोट अति सुंदर । रचे कंगूरा रंग रंग वर ॥  
नवग्रह निकर अनीक बनाई । जनु घेरी अमरावति आई ॥  
महिँ बहु रंग रचित गच काँचा । जो विलोकि मुनिवर मन नाचा ॥  
धवल धाम ऊपर नम चुंवत । कलस मनहुँ रवि ससि दुति निदत ॥  
बहु मनि रचित भरोखा आजहिँ । गृह गृहप्रति मनि दीप बिराजहिँ ॥

६०—मनि दीप राजहिँ भवन आजहिँ देहरी बिद्रुम रची ।  
मनि खंभ भीति बिरचि बिरची कनक मनि मरकन खची ॥  
सुंदर मनोहर मंदिरायत अजिर रुचिर फटिक रचे ।  
प्रति द्वार द्वार कपाट पुरट बनाइ बहु बज्रन्हि खचे ॥

६०—चारु चित्रसाला गृह गृह प्रति लिखे बनाइ ।  
राम चरित जे निरखत मुनि मन लेहिँ चुराइ ॥२७॥  
सुमन बाटिका सबहिँ लगाई । विविध भौंति करि जतन बनई ॥  
लता ललित बहु जाति सुहाई । फूलहिँ सदा वसन की नाई ॥  
गुंजत मधुकर मुखर मनोहर । मारुत त्रिविध सदा बह सुंदर ॥  
नाना खग बालकन्हि जिआए । बोलत मधुर उड़ात सुहाए ॥  
मोर हंस सारस पारावत । भवनन्हि पर सोभा अति पावत ॥  
जहँ तहँ देखहिँ निज परिष्ठाही । बहु विधि कूजहिँ नृत्य कराही ॥  
सुक सारिका पद्मावहिँ बालक । कहहु राम रघुपति जनपालक ॥  
राज दुआर सकल विधि चारु । बीथी चौहट रुचिर बजारु ॥

१—प्र० : २७ : दि० : ३० : [ वृ० : पदे ] । च० : ३० : [ (८) : पदे ] ।

२—प्र० : गृह प्रति लिखे । दि०, वृ० : प्र० । [ च० : (६) प्रति रचि लिखे, (८) प्रतिमा रचे ] ।

३—प्र० : जे निरखत मुनि ते मन । दि० : प्र० [ (४) : जे निरखत मुनि मन ] । वृ० : जे निरखत मुनि मन । च० : वृ० [ (८) : निरखत मन मुनि मन ] ।

४—प्र० : देखहिँ । दि० : प्र० [ (५) : देखत ] । वृ०, च० : प्र० [ (६) : निरखहिँ ] ।

दो०—येह प्रताप रवि जाकेँ उर जब करै प्रकास ।

पछिले बादहि प्रथम जे कहै ते पावहि नास ॥३१॥

आतन्ह सहित रामु एक चारा । सग परम प्रिय पवनकुमारा ॥

सुंदर उपमन देखन गए । सब तरु कुमुमित पल्लव नए ॥

जानि समय सनकादिकु आए । तेजपुंज गुन सल मुहाए ॥

ब्रह्मानंद सदा लयलीना । देवत बालक वटुक्षानीना ॥

रूप धरै जनु चारिउ वेदा । समदरसी मुनि त्रिगत निभेदा ॥

।सा बसन व्यसन येह तिन्हहीं । रघुपति चरित होहि तहँ सुनहीं ॥

तहों रहे सनकादि भवानी । जहँ घटसभव मुनि पर ज्ञानी ॥

राम कथा मुनिवर बहु<sup>१</sup> घरनी । ज्ञान जोति<sup>२</sup> पावक जमि अरनी ॥

दो०—देखि राम मुनि आवत हरखि दंडवत फीन्ह ।

स्वागत पूछि पोत पट प्रभु बैठन कहुं दीन्ह ॥३२॥

फीन्ह दंडवत तीनिउ भाई । सहित पवनसुन सुख अधिमाई ॥

मुनि रघुपति छवि अतुन बिलोकी । भए मगन मन सके न रोकी ॥

स्यामल गात सरोरुह लोचन । सुंदरता मंदिर भव मोचन ॥

एक टक रहे निमेष न लावहि । प्रभु कर जोरे सीस नवावहि ॥

तिन्ह के दसा देखि रघुवीरा । खवत नयन जल पुलक सरीरा ॥

कर गहि प्रभु मुनिवर बैठारे । परम मनोहर वचन उचारे ॥

आज धन्य मै सुनहु मुनोसा । तुम्हरे दरस जाहि अथ स्वीसा ॥

बड़े भाग पाइअ<sup>३</sup> रे सतसगा । बिनिहि प्रयास होइ भव भगा ॥

दो०—संग सग<sup>४</sup> अपवर्ग<sup>५</sup> कर कामी भव कर पथ ।

कहहि सत कवि कोविद श्रुति पुरान सब ग्रथ<sup>५</sup> ॥३३॥

१—प्र० : मुनिवर बहु । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) : मुनि बहु विधि ] ।

२—[ प्र० : ज्ञान जोति ] । दि० : ज्ञानजोति । तु०, च० : दि० [ (८) : ज्ञानजोति ] ।

३—प्र० : पाइव । दि० : प्र० [ (४) (५) (५अ) : पाइअ ] । तु० : पाइअ । च० : तु० ।

४—प्र० : संग । दि० : प्र० [ तु० : पंग ] । च० : प्र० [ (८) : पंग ] ।

५—प्र० : सदग्रथ । दि०, तु०, च० : सब ग्रथ ।

जहँ तहँ नर रघुपति गुन गावहिं । बैठि परसपर इहै सिखावहिं ॥  
 भजहु प्रनत प्रतिपालक रामहि । सोभा सील रूप गुन धामहि ॥  
 जलज विलोचन स्यामल गातहि । पलक नयन इव सेवक त्रातहि ॥  
 धृत सर रुचिर चाप तूनीरहि । संत कंज वन रवि रनधीरहि ॥  
 काल कराल डयाल खगराजहि । नमत राम अकाम ममता जहि ॥  
 लोभ मोह मृग जूथ किरातहि । मनसिज करि हरिजन सुख दातहि १ ॥  
 संसय सोक निविड़ तम भानुहि । दनुज गहन घन दहन कृसानुहि ॥  
 जनक सुता समेत रघुवीरहि । कस न भजहु भजन भव भीरहि ॥  
 बहु वासना मसक हिम रासिहि । सदा एक रस अज अविनासिहि ॥  
 मुनि रंजन भंजन महि भारहि । तुलसिदास के प्रभुहि उदारहि ॥  
 दो०—येहि बिधि नगर नारि नर करहिं राम गुन गान ।

सानुकूल सब पर रहहिं<sup>२</sup> संतत कृपानिधान ॥३०॥

जब तैं राम प्रताप खगेसा । उदित भयउ अति प्रबल दिनेसा ॥  
 पूरि प्रकास रहेउ तिहुँ लोका । बहुतेन्ह सुख बहुतन्ह<sup>३</sup> मन सोका ॥  
 जिन्हहि<sup>४</sup> सोक ते कहौ बखानी । प्रथम अविद्या निसा नसानी ॥  
 अघ उलूक जहँ तहाँ लुकाने । काम क्रोध कैरव सकुचाने ॥  
 विविध कर्म गुन काल सुभाऊ । ये चक्रोर सुख लहहिं न काऊ ॥  
 मत्सर मान मोह मद चोरा । इन्ह कर हुनर न कवनिहुँ ओरा ॥  
 धाम तहाग ज्ञान विज्ञाना । ये पंऊज बिकसे बिधि नाना ॥  
 सुख संतोष बिराग बिवेका । बिगत सोक ये कोक अनेका ॥

१—प्र० : [ (६) मैं यह तथा इसके ऊपर की अर्द्धाली नहीं है ] ।

२—प्र० : दि०, तु०, च० : रहहिं [ (६) : रह ] ।

३—प्र० : बहुतेन्ह सुख बहुतन्ह । [ दि० : (२) बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह, (४) बहुतेहु सुख बहुतेन्ह, (५) बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह, (५अ) बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह ] । [ तु० : बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह ] । [ च० : बहुतेन्ह सुख बहुतेन्ह ] ।

४—प्र०, दि०, तु०, च० : जिन्हहि [ (६) : जिन्हहि ] ।



सनकादिक विधि लोक सिधाए । आतन्ह राम चरन सिरु नाए ॥  
 पूछत प्रभुहि सकल सकुचाहीं । चितवहिं सब मारुतसुत पाहीं ॥  
 सुनी चहहि प्रभुमुख कै बानी । जो सुनि होइ सकल भ्रम हानी ॥  
 अंतरजामी प्रभु सब जाना । वृष्कन कहहु काह हनुमाना ॥  
 जोरि पानि कह तब हनुमंता । सुनहु दीनदयाल भगवंता ॥  
 नाथ भारत कछु पूछन चहहीं । प्रसन्न करत मन सकुचत अहहीं ॥  
 तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ । भरतहि मोहि कछु अनर काऊ ॥  
 सुनि प्रभु बचन भरत गहे चरना । सुनहु नाथ प्रनतारति हरना ॥  
 दो०—नाथ न मोहि सदेह कछु सपनेहु सोक न मोह ।

केवल कृपा तुम्हारि हि कृपानंद संदोह ॥३६॥  
 करौ कृपानिधि एक ठिठाई । मैं सेवरु तुम्ह जन सुखदाई ॥  
 संतन कै महिमा रघुराई । बहु विधि वेद पुरानन्ह<sup>१</sup> गाई ॥  
 श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्ह बड़ाई । तिन्ह पर प्रभुहि प्रीति अधिक्राई ॥  
 सुना चहौं प्रभु तिन्ह कर लक्षन । कृपासिंधु गुन ज्ञान विचक्षण ॥  
 सत असन भेद बिलगाई । प्रनत पाल मोहि कहहु बुझाई ॥  
 सतन्ह के लच्छन सुनु आता । अगनित श्रुति पुरान विख्याता ॥  
 संन असतन्हि के असि करनी । जिमि कुठार चंदन आचरनी ॥  
 काटइ परसु मलय सुनु भाई । निज गुन देइ सुगंध बसाई ॥  
 दो०—ता तैं सुर सीतन्ह चढ़त जगवल्लभ श्रीखंड ।

अनल दाहि पीटत घनन्हि<sup>२</sup> परसु बदन येह दइ ॥३७॥  
 बिषय अलंपट सील गुनाकर । पर दुख दुख सुख सुख देखें पर ॥  
 सम अभूतरिषु विमद विरागी । लोभामरष हरष भय त्यागी ॥  
 कोमल चित दीनन्ह पर दाया । मन बच क्रम मम भगति अमाया ॥  
 सबहि मानप्रद आपु अमानी । भरत प्राण सम मम ते प्राणी ॥

१—प्र० : पुरानन्ह । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : पुरानन्हि ] ।

२—प्र० : घनदि । दि०, वृ० : प्र० । च० : घनन्हि ।

मुनि प्रभु वचन हरषि मुनि चारी । पुलकित तनु अस्तुति अनुसारी ॥  
जय भगवत अनंत अनामय । अनघ अनेक एक करुनामय ॥  
जय निर्गुन जयजय गुन सागर । सुख मंदिर सुंदर अति नागर ॥  
जय इंदिरारमन जय भूधर । अनुभम अजर अनादि सोभाकर ॥  
ज्ञान निधान अमान मानप्रद । पावन सुजमु पुरान वेद वद ॥  
तनु कृतनु अजुता मजन । नाम अनेक अनाम निरंजन ॥  
सर्व सर्वगत सर्व उरालय । वससि सदा हम कहूँ परिपालय ॥  
द्वंद्व विपति भन फंद विभज्य । हृदि वसि राम काम मद मंजय ॥  
दो०—परमानंद कृपायतन मन पर पूरन काम ।

प्रेम भगति अनपायनी देहु हमहि श्री राम ॥३४॥  
देहु भगति रघुपति अति पावनि । त्रिविधि ताप भव दाप नसावनि ॥  
प्रनन काम सुरधेनु कलपतरु । होइ प्रसन्न दीजै प्रभु येह बरु ॥  
भव वारिधि कुंभज रघुनायक । सेवत सुलभ सकल सुख दायक ॥  
मनसंभव दारुन दुख दारय । दीनबंधु समता विस्तारय ॥  
आस त्रास इरिषादि निवारकु । विनय विवेक बिरति विस्तारकु ॥  
मृपि मौलि मनि मंडन घानी । देहि भगति संसृति सरि तरनी ॥  
मुनि मन मानस हंस निरंतर । चरन कमल वंदित अज संकर ॥  
रघुकुल केतु सेतु श्रुति रक्षक । काल कर्म सुभाव गुन भक्षक ॥  
तारन तरन हरन सब दूषन । तुलसिदास प्रभु त्रिभुवन भूषन ॥  
दो०—वार वार अस्तुति करि प्रेम सहित सिरु नाइ ।

ब्रह्मभवन सनकादि गे अति अभीष्ट बर पाइ ॥३५॥

१—प्र० : जय जय गुन सागर । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : जय गुन निधि सागर ] ।

२—प्र० : कृति अनुभन । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : अनुभन अत्र ] । वृ० : अनुभन अत्र ।  
च० : वृ० ।

३—प्र० : मन परिपूरन । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : मन पर पूरन ] ।

४—प्र० : सुरधेनु । दि०, वृ० : प्र० [ च० : (६) धुकधेनु ] ।

सनकादिक विधि लोक सिषाय । आतन्ह राम चरन सिरु नाए ॥  
 पूछत प्रभुहि सरल सकुचाहीं । चितवहिं सन मारुतमुत पाहीं ॥  
 सुनी चहहि प्रभुमुख के बानी । जो सुनि होइ सकन भ्रम हानी ॥  
 अतरजामी प्रभु सब जाना । वृष्कन कहहु काह हनुमाना ॥  
 जोरि पानि कह तब हनुमंता । सुनहु दीनदयाल भगवंता ॥  
 नाथ भरत कछु पूछन चहहीं । प्रसन्न करत मन सकुचन अहहीं ॥  
 तुम्ह जानहु कपि मोर सुभाऊ । भरतहि मोहि कछु अंतर काऊ ॥  
 सुनि प्रभु वचन भरत गहे चरना । सुनहु नाथ प्रनतारति हरना ॥  
 दो०—नाथ न मोहि सदेह कछु सपनेहु सोऊ न मोह ।

केवल कृपा तुम्हारि हिं कृपानन्द सद्गोह ॥३६॥  
 करौ कृपानिधि एक ठिठाई । मै सेवरु तुम्ह जन सुखदाई ॥  
 सतन कै महिमा रघुआई । बहु विधि वेद पुरानन्ह<sup>१</sup> गाई ॥  
 श्रीमुख तुम्ह पुनि कीन्ह बड़ाई । तिन्ह पर प्रभुहि प्रीति अधिकारी ॥  
 सुना चहौं प्रभु तिन्ह कर लक्षण । कृपासिंधु गुन ज्ञान विचक्षण ॥  
 सत असन भेद बिलगआई । प्रनत पाल मोहि कहहु बुझाई ॥  
 सतन्ह के लच्छन सुनु आता । अगनिन श्रुति पुरान बिल्याता ॥  
 सन असतन्हि के असि करनी । जमि कुठार चंदन आचरनी ॥  
 काटइ परसु मलय सुनु भाई । निज गुन देइ सुगंध बसाई ॥  
 दो०—ता तैं सुर सीसन्ह चढ़त जगवल्लभ श्रीखड ।

अनल दाहि पीटत धनन्हि<sup>२</sup> परसु बदन येह दड ॥३७॥  
 विषय अलपट सील गुनाकर । पर दुख दुख सुख सुख देखें पर ॥  
 सम अभूतसिंधु विमद विरागी । लोभाभ्रष हरष भय त्यागी ॥  
 कोमल चित दीनन्ह पर दाया । मन बच क्रम मम भगति अमाया ॥  
 सचहि मानप्रद आपु अमानी । भरत प्राण सम मम ते प्राणी ॥

१—प्र० : पुरानन्ह । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : पुरानन्हि ] ।

२—प्र० : धनन्हि । दि०, वृ० : प्र० । च० : धनन्हि ।

विगत काम मम नाम परायण । सांति विरति विनती मुदितायन ॥  
 सीतलता सरलता मङ्गत्री । द्विज प्रद प्रीति धरम जनयित्री १ ॥  
 ये सब लच्छन बसहिं जासु उर । जानेहु तात संत संतत फुर ॥  
 सम दस नियम नीति नहिं डोलहिं । परुष वचन कबहुँ नहिं बोलहि ॥  
 दो०—निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कंज ।

ते सज्जन मम प्रान प्रिय गुणमंदिर सुखपुंज ॥३८॥  
 सुनहु असंजन्ह केर सुभाऊ । भूलेहु संगति करिअ न काऊ ॥  
 तिन्ह कर सम सदा दुखदाई । जिमि कपिलहिं घालइ हरहाई ॥  
 खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेषी । जरहिं सदा पर संपति देखी ॥  
 जहँ कहँ निंदा सुनहिं पराई । हरपहिं मनहुँ परी निधि पाई ॥  
 काम क्रोध मद लोभ परायण । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥  
 बयर अकारने सब काहू सों । जो कर हित अनहित ताहू सों ॥  
 भूठइ लेना भूठइ देना । भूठइ भोजन भूठ चबेना ॥  
 बोलहिं मधुर वचन जिमि मोरा । खाइ महा अहि हृदय कठोरा ॥  
 दो०—पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपवाद ।

ते नर पावँर पाप मय देह धरे मनुजाद ॥३९॥  
 लोभइ ओढ़न लोभइ हासन । सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न ॥  
 काहूँ कै जौ सुनहिं बड़ाई । स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ॥  
 जब काहूँ कै देखहिं विपती । सुखी भए मानहुँ जग नृपती ॥  
 स्वारथरत परिवार विरोधी । लंपट काम लोभ अति क्रोधी ॥  
 मातु पिता गुर विप्र न मानहिं । आपुं गए अरु घालहिं आनहिं ॥  
 करहिं मोहवस द्रोह परावा । संत संग हरिकथा न भावा ॥  
 अवगुन सिंधु मंदमति कामी । वेद विदूषक पर धन स्वामी ॥  
 विप्रद्रोह सुरद्रोह २ विसेषा । दंभ कपट जिय घरे सुवेषा ॥

१—प्र० : जनयित्री । दि० : प्र० । [ तृ० : जन्वत्री ] । च० : प्र० [ (८) : जनयित्री ] ।

२—प्र० : परद्रोह । दि० : प्र० । तृ० : सुरद्रोह । च० : तृ० ।

दो०—ऐसे अघम मनुज खल कृतजुन त्रेता नाहिं ।

द्वारपर कछुक वृन्द बहु होइहहिं कलिजुग माहिं ॥४०॥

परहित सरिस धर्म नहिं भाई । पर पीड़ा सम नहिं अघमाई ॥  
निर्णय सकल पुरान वेद कर । कहेउँ तात जानहिं छोधि नर ॥  
नर सरीर धरि जे पर पीरा । कहिं ते सहहिं महा भय भीरा ॥  
करहि मोह बस नर अघ नाना । स्वारथ रत परलोक नसाना ॥  
काल रूप तिन्ह कहुँ मै आता । सुभ अरु असुभ कर्म फल दाता ॥  
अस विचारि जे परम स्याने । भजहिं मोहि ससृति दुख जाने ॥  
त्यागहिं कर्म सुभासुभ दायक । भजहिं मोहि सुर नर मुनि नायक ॥  
संत असंतन्ह के गुन भापे । ते न परहि भय जिन्ह लखि राखे ॥

दो०—सुनहु तात मायाकृत गुन अरु दोष अनेक ।

गुन यह उभय न देखिअहि देखिअ सो अविवेक ॥४१॥

श्रीमुख बचन सुनत सन भाई । हरपे प्रेसु न हृदयँ समाई ॥  
करहि विनय अति बारहिं बारा । हनूमान हियँ हरप अपारा ॥  
पुनि रघुपति निज मंदिर गए । येहि विधि चरित करत नित नए ॥  
बार बार नारद मुनि आवहिं । चरित पुनीत राम के गावहिं ॥  
नित नव चरित देखि मुनि जाती । ब्रह्मलोक सब कथा कहाही ॥  
सुनि विरचि अतिसय सुख मानहिं । पुनि पुनि तात कहहु गुन गानहिं ॥  
सनकादिक नारदहि सराहहिं । जयपि ब्रह्मनिरत मुनि आहहिं ॥  
सुनि गुन गान समाधि विसारी । सादर सुनहिं परम अधिकारी ॥

दो०—जीवनमुक्त

ब्रह्मपर चरित सुनहिं तजि ध्यान ।

जे हरि कथा न करहिं रति तिन्ह के हिय पापान ॥४२॥

१—५० : परहिं । दि०, न०, च० : प्र० [ (६) : परिधि\* ] ।

२—५० : अनिसय । दि०, न०, प्र० । [ च० : (६) सुर अनि, (८) अनि सो ] ।

वगत काम मम नाम परायन । सांति विरति विनती मुदितायन ॥  
 सीतलता सरलता मइत्री । द्विज प्रद प्रीति धरम जनयित्री १ ॥  
 ये सब लच्छन बसहि जासु उर । जानेहु तात संत संतत फुर ॥  
 सम दस नियम नीति नहि डोलहि । परुष वचन कबहुं नहि बोलहि ॥  
 दो०—निंदा अस्तुति उभय सम ममता मम पद कज ।

ते सज्जन भम प्राण प्रिय गुणमंदिर सुखपुंज ॥३८॥  
 सुनहु असंतनह केर सुभाऊ । मूलेहु संगति करिअ न काऊ ॥  
 तिन्ह कर सग सदा दुखदाई । जिमि कपिलहि घालइ हरहाई ॥  
 खलन्ह हृदयँ अति ताप बिसेपी । जरहि सदा पर संपति देखी ॥  
 जहँ कहुं निंदा सुनहि पराई । हरपहि मनहुं परी निधि पाई ॥  
 काम क्रोध मद लोभ परायन । निर्दय कपटी कुटिल मलायन ॥  
 वरु अकारन सब काहू सों । जो कर हित अनहित ताहू सों ॥  
 मूठइ लेना भूठइ देना । भूठइ भोजन भूठ चबेना ॥  
 बोलहि मधुर वचन जिमि मोरा । खाइ महा अहि हृदय कठोरा ॥  
 दो०—पर द्रोही पर दार रत पर धन पर अपवाद ।

ते नर पावँ पाप मय देह धरे मनुजाद ॥३९॥  
 लोभइ ओदन लोभइ ढासन । सिस्नोदर पर जमपुर त्रास न ॥  
 काहूँ कै जौं सुनहि बढ़ाई । स्वास लेहिं जनु जूड़ी आई ॥  
 जय काहूँ कै देखहिं विपती । सुखी भए मानहुं जग नृपती ॥  
 स्वारथरत परिवार विरोधी । लंपट काम लोभ अति क्रोधी ॥  
 मातु पिता गुर त्रिप न मानहिं । आपुं गए अरु घालहिं आनहिं ॥  
 कहि मोहुवस द्रोह परावा । संत संग हरिकथा न भावा ॥  
 अवगुन सिधु मंदमति कामी । वेद विदूषक पर धन स्वामी ॥  
 मिमद्रोह सुद्रोह २ विसेष । दम कपट जिय धरें सुवेपा ॥

१—प्र० : जनयित्री । दि० : प्र० । [ वृ० : जनयित्री ] । च० : प्र० [ (५) : जनयित्री ] ।

२—प्र० : परद्रोह । दि० : प्र० । वृ० : सुद्रोह । च० : वृ० ।

दो०—ऐसे अधम मनुज खल कृतजुन त्रेता नाहिं ।

द्रापर कछु क वृद्ध बहु होइहहि कलिजुग माहि ॥४०॥  
 परहित सरिस धर्म नहिं भाई । पर पीडा सम नहिं अधमाई ॥  
 निर्नय सकल पुरान वेद कर । कहेउ तात जानहिं होत्रि नर ॥  
 नर सरीर धरि जे पर पीरा । कहिं ते सहहिं महा भय भीरा ॥  
 करहि मोह बस नर अध नाना । स्वारथ रत परलोक नसाना ॥  
 काल रूप तिन्ह कहें मै आता । सुभ अरु असुभ र्म फल दाता ॥  
 अस बिचारि जे परम सयाने । भजहिं मोहि ससृति दुख जाने ॥  
 त्यागहिं कर्म सुभासुभ दायक । भजहिं मोहि सुर नर मुनि नायक ॥  
 सत असतन्ह के गुन भापे । ते न परहिं भय जिन्ह लखि राखे ॥  
 दो०—सुनहु तात मायाकृत गुन अरु दोष अनेक ।

गुन यह उभय न देखिअहि देखिअ सो अनिमेक ॥४१॥  
 श्रीमुख बचन सुनत सम भाई । हरपे प्रेमु न हृदयें समाई ॥  
 करहिं विनय अति बारहिं बारा । हनुमान हियें हरप अपारा ॥  
 पुनि रघुपति निज मंदिर गए । येहि बिधि चरित करत नित नपे ॥  
 बार बार नारद मुनि आवहिं । चरित पुनीत राम के गावहिं ॥  
 नित नव चरित देखि मुनि जाती । ब्रह्मलोक सब कथा कहाही ॥  
 सुनि विरचि अतिसय सुख मानहिं । पुनि पुनि तात कहहु गुन गानहिं ॥  
 सनकादिक नारदहिं सराहहिं । जद्यपि ब्रह्मनिस्त मुनि आहहिं ॥  
 सुनि गुन गान समाधि निसारी । सादर सुनहिं परम अधिकारी ॥  
 दो०—जीवनमुक्त तखपर चरित सुनिहि तजि ध्यान ।

जे हरि कथा न करहिं रति तिन्ह के हिय पापान ॥४२॥

१—५० : परहिं । दि०, नृ०, च० : प्र० [ (६) : परहिं\* ] ।

२—५० : कृतिसय । दि०, नृ०, प्र० । [ च० : (६) सुर अति, (८) अति सो ] ।

एक वार रघुनाथ बोलाए । गुरु द्विज पुरवासी सब आए ॥  
 बैठे गुरु मुनि अरु द्विजसज्जन<sup>१</sup> । बोले वचन भगत भग<sup>२</sup> भंजन ॥  
 सुनहु सकल पुरजन मम बानी । कहौं न कछु ममता उर आनी ॥  
 नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई । सुनहु करहु जौ तुम्हहि सुहाई ॥  
 सोइ सेवक प्रियतम मम सोई । मम अनुसासन मानइ जोई ॥  
 जौ अनीति कछु भापौ भाई । तौ मोहि वरजहु मय बिसराई ॥  
 षडे भाग मानुष तनु पावा । सुर दुर्लभ सब ग्रथनिह गावा ॥  
 सावन धाम मोक्ष कर द्वारा । पाइ न जेहि परलोक सँवारा ॥  
 दो०—सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पबिताइ ।

कालहि कर्महि ईस्वरहि<sup>३</sup> मिथ्या दोष लगाइ ॥४३॥  
 येहि तन कर फल विषय न भाई । स्वर्गौ स्वल्प अत दुखदाई ॥  
 नर तनु पाइ विषय मन देहीं । पलटि सुधा ते सठ विष लेहीं ॥  
 ताहि कहहु भल कहइ न कोई । गुंजा ग्रहे<sup>४</sup> परसमनि खोई ॥  
 आकर चारि लच्छ चौरासी । जीव अमृत येह जिव अविनासी ॥  
 फिरत सदा माया कर प्रेरा । काल कर्म सुभाव गुन घेरा ॥  
 कवहुँक करि करुना नर देही । देत ईस विनु हेतु सनेही ॥  
 नर तनु भव वारिधि कहुं बेरो । सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो ॥  
 करनधार सदगुरु दृढ़ नावा । दुर्लभ साज सुलभ करि पावा ॥  
 दो०—जो न तरइ भवसागर नर समाज अस पाइ ।

सो कृतनिद्रक मदमति आत्महन<sup>५</sup> गति जाइ ॥४४॥

१—प्र० : गुरु मुनि अरु द्विज । दि० : प्र० : [ तृ० : सदमि अनुज मुनि ] । च० : प्र० :  
 [ (४) : मदमति अनुज मुनि ] ।

२—प्र० : भव । दि० : प्र० : [ (४) : भव ] । [ तृ०, च० : भव ] ।

३—प्र० : ग्रहे । दि० : प्र० : [ (३) (४) (५) : ग्रहे ] । [ तृ० : ग्रहे ] । च० : प्र० : [ (८) : ग्रहे ] ।

४—प्र० : आत्महन । दि० : आत्महन [ (३) (५) : आत्महन ] । तृ०, च० : दि० : [ (४) :  
 आत्महन ] ।



सोइ सर्वज्ञ तज सोइ पंडित । सोइ गुन गृह विज्ञान भरदिन ॥  
 दक्ष सकल लक्षण जुन सोई । जाके पर सरोव री । सोई ॥  
 दो०—नाम एक बर मार्गी राम कृपा करि देहु ।

जन्म जन्म प्रभु पर कमल कबहुँ पड़े अनि नेहु ॥४२॥

अस कहि मुनि बसिष्ठ गृह आए । कृपाविधु कें मन अनि भाए ॥  
 हनुमान भारदारिक माना । सग लिए मेरक सुमराना ॥  
 पुनि कृपाल पुर चाहेर गए । गज रथ तुम मंगारन भए ॥  
 देखि कृपा करि सकल सराहे । दिषे उचिन्त बिन्दु बिन्दु तेइ चाहे ॥  
 हरन सकल सम प्रभु सम पाई । गए जहाँ सीतले अचरार्थ ॥  
 भरत दीन्ह निज बसन ढमाई । बैठे नभु सेरहि सर भाई ॥  
 मारुतसुत तब मारुन करई । पुलक बपुष लोचन जल भरई ॥  
 हनुमान समाने बड़ भागी । नहि कोउ राम चरन अनुरागी ॥  
 गिरिजा जानु प्रीति सेवकाई । बार बार प्रभु निज मुख गाई ॥  
 दो०—तेहि अवसर मुनि नारद आए करतल बीन ।

गावन लागे राम कल कीरति सदा नरीन ॥५०॥

मामवलोक्य एकज लोचन । कृपा बिलोकनि सोच विमोचन ॥  
 नील तामरस स्याम कामअरि । हृदय कज मकरंद मधुष हरि ॥  
 जातुधान वरुथ बल भंजन । मुनि सज्जन रंजन अथ गंजन ॥  
 भूसुर ससि नव वृंद बलाहक । असरन सरन दीन जन गाहक ॥  
 भुजबल विगुल भार महि खडित । खर दूषन चिराध बध पंडित ॥  
 रावनारि सुख रूप मूष वर । जय दसरथ कुल कुमुद सुधाकर ॥  
 सुजसु पुरान बिदित निगमागम । गावत सुर मुनि संन समागम ॥

१—प्र० : तेइ । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : जेइ ] । [ तु०, च० : जेइ ] ।

२—प्र० : सम नहि । दि०, तु० : प्र० । च० : समान ।

३—प्र० : सोच । दि०, तु०, च० : प्र० [ (६) : सोक ] ।

एक वार रघुनाथ बोलाए । गुरु द्विज पुरवासी सब आए ॥  
 बैठे गुरु मुनि अरु द्विज सज्जन<sup>१</sup> । बोले वचन भगत भवर<sup>२</sup> भंजन ॥  
 सुनहु सकल पुरजन मम वानी । कहौं न कछु ममता उर आनी ॥  
 नहिं अनीति नहिं कछु प्रभुताई । सुनहु करहु जौ तुम्हहि सुहाई ॥  
 सोइ सेवक प्रियतम मम सोई । मम अनुसासन मानइ जोई ॥  
 जौ अनीति कछु भापौ भाई । तौ मोहि वरजहु भय बिसराई ॥  
 बड़े भाग मानुष तनु पावा । सुर दुर्लभ सब ग्रंथहि गावा ॥  
 साधन धाम मोक्ष कर द्वारा । पाइ न जेहि परलोक सँवारा ॥  
 दो०—सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ ।

कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोष लगाइ ॥४३॥  
 येहि तन कर फल विषय न भाई । स्वर्गौ स्वल्प अत दुखदाई ॥  
 नर तनु पाइ विषय मन देही । पलटि सुधा ते सठ विष लेही ॥  
 ताहि कवहुँ भल कहइ न कोई । गुंजा ग्रहै<sup>३</sup> परसमनि खोई ॥  
 आकर चारि लच्छ चौरासी । जीव अमृत येह जिव अविनासी ॥  
 फिरत सदा माया कर प्रेरा । काल कर्म सुभाव गुन घेरा ॥  
 कवहुँकरि करि कठना नर देही । देत ईस बिनु हेतु सनेही ॥  
 नर तनु भव वारिधि कहूँ बेरो । सन्मुख मरुत अनुग्रह मेरो ॥  
 करनधार सदगुरु दृढ़ नावा । दुर्लभ साज सुलभ करि पावा ॥  
 दो०—जो न तरइ भवसागर नर समाज अस पाइ ।

सो कृतनिदक मंदमति आत्महन<sup>४</sup> गति जाइ ॥४४॥

१—प्र० : गुरु मुनि अरु द्विज । दि० : प्र० । [ तु० : सदसि अनुज मुनि ] । च० : प्र०  
 [ (६) : मदसि अनुज मुनि ] ।

२—प्र० : भव । दि० : प्र० [ (४) : भव । [ तु०, च० : भव ] ।

३—प्र० : ग्रहै । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : गहै ] । [ तु० : गहै ] । च० : प्र० [ (८) : गहै ] ।

४—प्र० : आत्महन । दि० : आत्महन [ (३) (५) : आत्महन ] । तु०, च० : दि० [ (६) :  
 आत्महन ] ।

हरिचरित्रमानस<sup>१</sup> तुम्ह गावा । सुनि मै नाथ अमित सुख पावा ॥  
 तुम्ह जो कही यह कथा सुहाई । कागभुसुंढि गरुड़ प्रति गाई ॥  
 दो०—विरति ज्ञान विज्ञान दृढ़ राम चरन<sup>२</sup> अति नेह ।

बायस तन रघुपति भगति मोहि परम सदेह ॥५३॥

नर सहस्र महँ सुनहु पुरारी । कोउ एक होइ धर्मव्रत धारी ॥  
 धर्मसील कोटिक महँ कोई । विषय विमुख विराग रत होई ॥  
 कोटि विरक्त मध्य श्रुति कहई । सम्यक् ज्ञान सकृत् कोउ लहई ॥  
 ज्ञानवत कोटिक महँ कोऊ । जीवनमुक्त सकृत् जग सोऊ ॥  
 तिन्ह सहस्र महँ सब सुख खानी । दुर्लभ ब्रह्मलीन विज्ञानी ॥  
 धर्मसील विरक्त अरु ज्ञानी । जीवनमुक्त ब्रह्म पर प्राणी ॥  
 सन तैं सो दुर्लभ सुरराया । राम भगति रत गत मद माया ॥  
 सो हरि भगति काग किमि पाई । विस्वनाथ मोहि कहहु बुझाई ॥  
 दो०—राम परायन ज्ञान रत गुनागार मति धीर ।

नाथ कहहु केहि कारन पाएउ काग सरीर ॥५४॥

यह प्रभु चरित पवित्र सुहावा । कहहु कृपाल काग कहँ पावा ॥  
 तुम्ह कहि भाँति सुना मदनारी । कहहु मोहि अति कौतुक भारी ॥  
 गरुड़ महा ज्ञानी गुनरासी । हरिसेवक अति निकट निवासी ॥  
 तेहि केहि हेतु काग सन जाई । सुनी कथा मुनि निकर विहाई ॥  
 कहहु कवन त्रिधि भा सनादा । दोउ हरि भगत काग उरगादा ॥  
 गौरि गिरा सुनि सगल सुहाई । बोले सिव सादर सुख पाई ॥  
 धन्य सती पावनि मति तोरी । रघुपति चरन प्रीति नहि थोरी ॥  
 सुनहु परम पुनीत इतिहासा । जो सुनि सफल लोक भ्रम नासा ॥  
 उपजइ राम चरन बिस्वासा । भवनिधि तर नर तिनहि प्रयासा ॥

१—४० . हरिचरित्र । द्वि० : प्र० । [ १० : रामचरित ] । १० : प्र० ।

२—५० . रामचरन । द्वि० १०, च० : प्र० [ (१). रामचरन ] ।

कारुणीक व्यलीक<sup>१</sup> मद खडन । सब बिधि कुसल कोसला मंडन ॥  
कलि मल मथन नाम ममताहन । तुलसिदास प्रभु पाहि प्रनत जन ॥  
दो०—प्रेम सहित मुनि नारद बनि राम मुन ग्राम ।

सोभासिधु हृदयँ धरि गए जहाँ बिधि धाम ॥५१॥  
गिरिजा सुनहु विसद येह कथा । मै सब कही मोरि मति जथा ॥  
रामचरित सत कोटि अपारा । श्रुति सारदा न वरनै पारा ॥  
रामु अनत अनत- गुनानी । जन्म कर्म अनत नामानी ॥  
जल सीरर महि रज गनि जाहीं । रघुपति चरित न बरनि सिराहीं ॥  
विमल कथा हरिपद दायनी । भगति होइ सुनि अनपायनी ॥  
उमा कहेउँ सब कथा सुहाई । जो भुसुंढि खगपतिहि सुनाई ॥  
कछुक राम गुन कहेउँ बखानी । अब का कहौ सो कहहु भवानी ॥  
सुनि सुभ कथा उमा हरपानी । बोलीं अति विनीत मृदु बानी ॥  
धन्य धन्य मै धन्य पुरारी । सुनेउँ राम गुन भव भय हारी ॥  
दो०—तुम्हरी कृपा कृपायतन<sup>२</sup> अब कृतकृत्य न मोह ।

जानेउँ राम प्रताप प्रभु चिदानंद संदोह ॥

नाथ तैवानन ससि खवत कथा सुधा रघुबीर ।

श्रवन पुटन्हि मन पान करि नहि अघात मतिधीर ॥५२॥  
रामचरित जे सुनत अघाहीं । रस विसेष जाना तिन्ह नाहीं ॥  
जीवन्मुक्त महामुनि जेऊ । हरि गुन सुनहि निरंतर तेऊ ॥  
भवसागर चह पार ओ पावा । राम कथा ता कहुँ दृढ़ नावा ॥  
बिषइन्ह वहुँ पुनि हरि गुन ग्रामा । खवन सुखद अरु मन अमिरामा ॥  
खवनवंत अस को जग माहीं । जाहि ने रघुपति चरित सुहाहीं ॥  
ते अड़ जीव निजात्मक<sup>३</sup> घाती । जिन्हहि न रघुपति कथा सोहाती ॥

१—प्र० : व्यलीक । दि० : प्र० [ (५) : व्यलीक ] । [ व०, च० : बालिक ] ।

२—प्र० : कृपायतन । दि०, व०, च० : प्र० [ (६) कृपालमर ] ।

३—प्र० : निजात्मक । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : निजानम ] । [ व० : निजानम । च० : प्र० [ (८) : निजल कुल ] ।

जब मैं जाइ सो कौतुक देखा । उर उपजा आनंद चितेसा ॥  
दो०—तब कछु काल मराल तनु धरि तहँ कीन्ह निवास ।

सादर सुनि रघुपति गुन पुनि आएउँ कैलास ॥५७॥

गिरिजा कहेउँ सो सब इतिहासा । मैं जेहि समय गएँ खग पासा ॥

अब सो कथा सुनहु जेहि हेतू । गए काग पहिँ खगकुल केतू ॥

जब रघुनाथ कीन्ह रन कीड़ा । समुझत चरित होत मोहि व्रीड़ा ॥

इंद्रजीत फर आपु बंधायो । तब नारद मुनि गरुड़ पढायो ॥

बंधन काटि गयो उरगादा । उपजा हृदयँ प्रचंड बिपादा ॥

प्रभु बंधन समुझत बहु भाँती । करत बिचार उरगआराती ॥

ब्यापक ब्रह्म विरज बागीसा । माया मोह पार परमीसा ॥

सो अवतरा सुनेउँ जग माहीं । देखेउँ सो प्रभाव कछु नाहीं ॥

दो०—भव बंधन तैं छूटहि नर जपि जा कर नाम ।

खर्य निसाचर बंधेउ नागपास सोइ राम ॥५८॥

नाना भाँति मनहि समुझावा । प्रगट न० ज्ञान हृदयँ भ्रम छावा ॥

खेद खिन्न मन तर्क बढ़ाई । भएउ मोह बस तुम्हरिहि नाई ॥

ब्याकुल गएउ देवरिपि पाहीं । कहेसि जो संसय निज मन माँहीं ॥

सुनि नारदहि लागि अति दायी । सुनु खग प्रचल राम कै माया ॥

जो ज्ञानिन्ह कर चित अपहरई । बरिआई बिमोह मन करई ॥

जेहि बहु बार नचावा मोहीं । सोइ ब्यापी बिहंगपति तोही ॥

महामोह उपजा उर तोरे । मिटिहि न बेगि कहे खग मोरे ॥

चतुरानन पहिँ जाहु खगेसा । सोइ करहु जेहि होइ२ निदेसा ॥

दो०—अस कहि चले देवरिपि करत राम गुन गान ।

हरि माया बल बरमत पुनि पुनि परम सुजान ॥५९॥

१—प्र०, दि०, वृ०, च० : प्रगट न [ (६) प्रगटत ] ।

२—प्र० : सोइकरहु जेहि होइ निदेसा । दि० : प्र० । [ वृ० : सोइ करहु जो देहि निदेसा ]

[ च० : (६) सोइ करहु जो देहि निदेसा, (८) खै न मोह निसा ख लेसा ] ।

दो०—ऐसिअ प्रसन्न विहंगपति कीन्ह काग सन जाइ ।

सो सब सादर कहिहौं सुनहु उमा मन लाइ ॥५५॥  
 मैं जिमि कथा सुनी भव मोचनि । सो प्रसंग सुनु सुमुखि सुलोचनि ॥  
 प्रथम दत्त गृह तब अवतारा । सनी नाम तब रहा तुम्हारा ॥  
 दत्त जज्ञ तब भा अपमाना । तुम्ह अति क्रोध तजे तब प्राना ॥  
 मम अनुचरन्ह कीन्ह मूल भंगा । जानहु तुम्ह सो सकल प्रसगा ॥  
 तब अति सोच भएउ मन मोरे । दुखी भएउं वियोग प्रिय तोरे ॥  
 सुंदर बल गिरि सरित तड़ागा । कौतुक देखत फिरौं बेरागा ॥  
 गिरि सुमेरु उत्तर दिसि दूरी । नील सैल एक सुंदर भूरी ॥  
 तासु कनकमय सिलर सुहाए । चारि चारु मोरे मन भाए ॥  
 तिन्ह पर एक एक बिटप बिसाला । बट पीपर पाकरी रसाला ॥  
 सैलोपरि सर सुंदर सोहा । मनि सोपान देखि मन मोहा ॥  
 दो०—सीतल अमल मधुर जल जलज विपुल बहु ग ।

कूजत कलरव हंस गन गुंजत मंजुल मृंग ॥५६॥  
 तेहि गिरि रुचिर बसइ खग सोई । तासु नास कलपांत न होई ॥  
 मायाकृत गुन दोष अनेका । मोह मनोज आदि अविवेका ॥  
 रहे व्यापि समस्त जग माही । तेहि गिरि निकट कबहुं नहिं जाही ॥  
 तहँ बसि हरिहिं भजइ जिमि कागा । सो सुनु उमा सहित अनुरागा ॥  
 पीपर तर तर ध्यान सो धरई । जाप जज्ञ पाकरि तर करई ॥  
 आवैं छाँह कर मानस पूजा । तजि हरि भजनु काजु नहिं दूजा ॥  
 भर तर कह हरि कथा प्रसंगा । आवहिं सुनिहिं अनेक विहंगा ॥  
 राम चरित विचित्र विधि नाना । प्रेम सहित कर सादर गाना ॥  
 सुनिहिं सकल मति बिमल मराला । बसहिं निरंतर जे तेहि काला ॥

१—प्र० : किरौ बेरागा । [ दि० : किरौ विरागा ] । [ वृ० : किरौ विभागा ] । च० : प्र०

[ (६) किरौ विरागा ] ।

२—प्र० : सुनिहिं । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : सुनै ] ।

मिलहि न रघुपति त्रिनु अनुरागा । किरैं जोग जप<sup>१</sup> ज्ञान विरागा ॥  
 उचर दिसि सुदर गिरि नीला । तहैं रह काग मुमुडि सुभीला ॥  
 राम भगति पथ परम प्रयोना । ज्ञानी गुनगृह बहुछालीना ॥  
 राम कथा सो कहइ निरतर । सादर मुनिहि विविध विहग नर ॥  
 जाइ सुनहु तहैं हरिगुन भूरी । होइहि मोहजनित दुख दूरी ॥  
 मै जन तेहि सत्र रहा बुझाई । चनेउ हरपि मम पद सिरु नाई ॥  
 ता तैं उमा न मै समुझाया । रघुपति कृपा मरम में पाया ॥  
 होइहि कीन्ह कन्हु अभिमाना । सो स्वाँवै चह कृपानिधाना ॥  
 कछु तेहि तैं पुनि मै नहि राखा । समुझइ खग खग ही के भापा ॥  
 प्रभु माया बलवन भवानी । जाहि न मोह कवन अस ज्ञानी ॥

दो०—ज्ञानी भगत सिरोमनि त्रिभुवन पति कर जान ।

ताहि मोह माया नर पाँवर कहि गुमान ॥

सिव विरचि रहैं मोहे<sup>२</sup> को है बपुरा आन ।

अस जिय जानि भजहि मुनि मायापति भगवान ॥६२॥

गएउ गरुड जहँ बसइ भुसुंढी<sup>३</sup> । मति अकुंठ हरि भगति अखंडी<sup>३</sup> ॥

देखि सैल प्रसन्न मन भएऊ । माया मोह सोच सब गएऊ ॥

करि तडाग मज्जन जल पाना । बट तर गएउ हृदयें हरपाना ॥

वृद्ध वृद्ध विहग तह आए । सुनइ राम के चरित सुहाए ॥

कथा अरभ करइ सोइ चाहा । तेही समय गएउ खगनाहा ॥

आवत देखि सकल खगराजा । हरपेउ बायस सहित समाजा ॥

अति आदर खगपति कर कीन्हा । स्वागत पूँछि सुआसन दीन्हा ॥

करि पूजा समेत अनुरागा । मधुर बचन तब बोलेउ कागा ॥

१—प्र० : तप । दि० : प्र० [ (१) (२) (५) : जप ] । तु० : जप । च० : तु० ।

२—प्र० : मोहै । दि० : प्र० । [ तु० : मोह है ] । च० प्र० [ (८) : मोह है ] ।

३—प्र० : मुमुटा । दि० प्र० [ (३) (५) (५अ) . मुमुटी, अखंडी ] । तु० : भुसुंढी,  
 अखंडी । च० : तु० ।

तव सगपति विरंचि पहिं गएऊ । निज संदेह सुनावत भएऊ ॥  
 सुनि विरंचि रामहि सिरु नावा । समुझि प्रताप प्रेम उर १ छावा ॥  
 मन महुं करइ विचार विधाता । मायावस कवि कोविद ज्ञाता ॥  
 हरि माया कर अमित प्रभावा । विपुल वार जेहि मोहिं नचावा ॥  
 अगजग मय जग २ मम उपराजा । नहिं आचरज मोह खगराजा ॥  
 तव बोले विधि गिरा सुहाई । जान महेस राम प्रभुताई ॥  
 दैन्तेय संकर पहिं जाहू । तात अनत पूछहु जनि काहूँ ॥  
 तहँ होइहि सब संसय हानी । चलेउ विहंग सुनत विधि बानी ॥

दो०—परमातुर विहंगपति आएउ तब मो ३ पास ।

जात रहेउँ कुवेर गृह रहिहु उमा केलास ॥ ६० ॥

तेहि मम पद सादर सिरु नावा । पुनि आपन सदेह सुनावा ॥  
 सुनि वाकरि विनती ४ मृदु बानी । प्रेम सहित मैं कहेउँ भवानी ॥  
 मिलेहु गरुड़ ५ मारग महँ मोही । कवन भौंति समुझावौं तोही ॥  
 तवहि होइ सब संसय भंगी । जब बहु काल करिअ सतसंगा ॥  
 सुनिअ तहाँ हरि कथा सुहाई । नाना भौंति मुनिन्ह जो गाई ॥  
 जेहि महुँ आदि मध्य अवसाना । प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना ॥  
 नित हरि कथा होति जहँ भाई । पठवौं तहाँ सुनहु तुम्ह जाई ॥  
 जाइहि सुनत सकल सदेहा । राम चरन होइहि अति नेहा ॥

दो०—विनु सतसंग न हरि कथा तेहि विनु मोह न भाग ।

मोह गए विनु राम पद होइ न दृढ़ अनुराग ॥ ६१ ॥

१—प्र० : अति । दि० : प्र० । तु० : उर । च० : तु० ।

२—प्र० : मय जग । दि० : प्र० । [ तु० : मय सब ] । च० : प्र० [ (५) : माया ] ।

३—प्र० : मो । [ दि०, तु०, च० : मोदि ] ।

४—प्र०, दि०, तु०, च० : विनती [ (६) : विनीत ] ।

५—प्र०, दि०, तु०, च० : गरुड [ (६) : गरु ] ।



जो अति आतप व्याकुल होई । तरु छाया सुख जानइ सोई ॥  
 जौ नहि होत मोह अति मोही । मिलतेउँ तात करन त्रिधि तोही ॥  
 सुनतेउँ किमि हरि कथा सुहाई । अति त्रिचित्र बहु विधि तुम्ह गाई ॥  
 निगमागम पुगन मत येहा । कहहि सिद्ध मुनि नहि संदेहा ॥  
 सत विसुद्ध मिलहिं परि तेही । चितवहि राम कृपा करि जेही ॥  
 राम कृपा तव दरसन भएऊ । तव प्रसाद मम ससय गएऊ ॥

दो०—सुनि बिहगपति बानी२ सहित विनय अनुराग ।

पुलकि गात लोचन सजल मन हरपेउ अति काग ॥

स्रोता सुमति सुसील सुचि कथारसिक हरिदास ।

पाइ उमा अति गोप्यमपि३ सज्जन कहिं प्रजास ॥ ६६ ॥

बोलेउ कागमुसुंडि बहोरी । नमगनाथ पर प्रीति न थोरी ॥  
 सब त्रिधि नाथ पूज्य तुम्ह मेरे । कृपापात्र रघुनाथक केरे ॥  
 तुम्हहि न ससय मोह न माया । मो पर नाथ कीन्हि तुम्ह दाया ॥  
 पठइ मोह मिस खगपति तोही । रघुपति दीन्हि बड़ाई मोही ॥  
 तुम्ह निज मोह नही खगसाई । सो नहि कछु आचरज गोसाई ॥  
 नारद भव विरचि सनकादी । जे मुनिनाथक आत्मवादी ॥  
 मोह न अध कीन्ह केहि केही । को जग काम नचाव न जेही ॥  
 तृप्ता केहि न कीन्ह बौराहा४ । केहि कर हृदय कोष नहि दाहा ॥

दो०—ज्ञानी तापस सूर कवि कोविद गुन आगार ।

केहि कै लोभ बिडंबना कीन्हि न येहि ससार ॥

१—प्र० : सब । दि० : प्र० । तृ० : मम । च० : तृ० ।

२—प्र० : बानी । दि० : प्र० । [ तृ० : बानि वर ] ।

३—प्र० : गोप्यमपि । दि० : प्र० [ (५अ) : गोप्यमपि ] । [ तृ० : गोप्यमपि ] । च० : प्र०  
 [ (८) : गुह्यमत ] ।

४—प्र० : बौराहा । दि०, तृ०, च० : प्र० [ (६) : बौराहा ] ।

दो०—नाथ कृतारथ भएउं मई तव दरसन खगराज ।

आयेसु देहु सो करौं अब प्रभु आएहु केहि काज ॥

सदा कृतारथ रूप तुम्ह कह मृदु वचन खगेस ।

जेहि कै अस्तुति सादर निज मुख कीन्हि महेस ॥ ६३ ॥

सुनहु तात जेहि कारन<sup>१</sup> आएउं । सो सब गएउ दरस तव पाएउं ॥

देखि परम पावन तव आत्मम । गएउ मोह संसय नाना भ्रम ॥

अब श्री राम कथा अतिपावनि । सदा सुखद दुख पूग<sup>२</sup> नसावनि ॥

सादर तात सुनावहु मोही । बार बार विनवौ प्रभु तोही ॥

सुनत गरुड़ कै गिरा विनीता । सरल सुप्रेम सुखद सुपुनीता ॥

भएउ तासु मन परम उछाहा । लाग कहइ रघुपति गन गाहा ॥

प्रथमहिं अति अनुराग भवानी । राम चरित सर कहेसि बखानी ॥

पुनि नारद कर मोह अपारा । कहेसि बहुरि रावन अवतारा ॥

प्रभु अवतार कथा पुनि गाई । तब सिसु चरित कहेसि मन लाई ॥

दो०—बाल चरित कहि विविध विधि मन महुं परम उछाह ।

रिपि आगमन कहेसि पुनि श्री रघुवीर विवाह ॥ ६४ ॥

बहुरि राम अभिषेक प्रसंगा । पुनि नृप वचन राज रस भगा ॥

पुर वासिन्ह कर विरह विषादा । कहेसि राम लज्जिमन सबादा ॥

विपिन गवनु केवट अनुरागा । सुरसरि उत्तरि निवास प्रयागा ॥

बालभीकि प्रभु मिलन बखाना । चित्रकूट जिमि बसे भगवाना ॥

सचिवागवन नगर नृप भरना । भरतागवन प्रेम बहु वरना ॥

करि नृप क्रिया संग पुरवासी । भरत गए जहँ प्रभु सुखरासी ॥

१—प्र० : जेहि कै । दि० : प्र० [(३) (४) (५) : बि-३ कै] । [तु० : जेहिनी] । च० : प्र० [(८) : जेहिनी] ।

२—प्र० : वारन । दि०, तु०, च० : प्र० [(६) : वारन] ।

३—प्र० : पूग । [दि०, तु० : पुज] । च० : प्र० [(८) : पुज] ।

दो०—लरिकाई जहँ जहँ फिरहि तहँ तहँ संग उड़ाउँ ।

जूठनि परइ अजिर महँ सो उठाइ करि खाउँ ॥

एक बार अति सैसवै<sup>१</sup> चरित किए रघुनीर ।

सुमिरत प्रभु लीला सोइ पुलकिन भणउ सरीर ॥ ७१ ॥

कहइ भुसुँडि सुनहु खगनायक । राम चरित सेवक<sup>२</sup> सुखदायक ॥

नृप मंदिर सुंदर सग भोती । खचित कनक गनि नाना जाती ॥

बरनि न जाइ रुचिर अँगनाई । जहँ खेलहि नित चारिउ भाई ॥

बाल विनोद करत रघुराई । विचरत अजिर जननि सुखदाई ॥

मरकत मृदुल फलेवर त्यामा । अग अग प्रति छवि बहु कामा ॥

नव राजीव अरुन मृदु चगना । पदज रुचिर नख ससि दुति हरना ॥

ललित अक कुलिसादिक चारी । नूपुर चारु मधुर रव कारी ॥

चारु पुरट मनि रचित बनाई । फटि किंकिनि कल मुखर सुहाई ॥

दो०—रेखा त्रय सुंदर उदर नामि रुचिर गंभीर ।

उर आयत भ्राजत विविध बाल विभूषन चीर<sup>३</sup> ॥ ७६ ॥

अरुन पानि नख करज मनोहर । बाहु बिसाल विभूषन सुंदर ॥

कंध बाल केहरि दर ग्रीवों । चारु चिवुक आनन छवि सीवों ॥

कलबल बचन अघर अरुनारे । दुइ दुइ दसन बिसद बर बारे ॥

ललित कपोल मनोहर नासा । सरल सुखद ससिकर सम हासा ॥

नील कज लोचन गव मोचन । भ्राजत भाल तिलक गोरोचन ॥

विकट भृकुटि सम सनन सुहाए । कुचित कच मेचक छवि छाए ॥

पीत भिनि भिगुली तन सोही । किलमनि चितवनि भावति मोही ॥

रूपरासि नृप अजिर बिहारी । नाचहि निज प्रतिबिब निहारी ॥

१—प्र० : अति सैसवै । दि० : प्र० [ (४) (५) (५३) : अतिसय सव ] । [ वृ० : अतिसय सुख ] च० : प्र० [ (८) : अतिसय सुख ] ।

२—प्र० : सेवक । दि०, वृ०, च० ॥ प्र० [ (६) : सेवन ] ।

३—प्र० : चीर । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (३) : बार ] ।

श्रीमद वक्र न कीन्ह केहि प्रभुता वधिर न काहि ।

मृगलोचनि लोचन<sup>१</sup> सर को अस लाग न जाहि ॥ ७० ॥

गुन कृत सन्यपात नहिं केही । कोउ न मान मद तजेउ निवेही ॥

जौवन उजर केहि नहिं बलकावा । ममता केहि कर जसु न नसावा ॥

मच्चर काहि कलंक न लावा । काहि न सोक समीर डोलावा ॥

चिंता सौंपिनि को नहिं<sup>२</sup> खाया । को जग जाहि न व्यापी माया ॥

क्रीट मनोरथ दारु सेरीरा । जेहि न लाग घुन को अस धीरा ॥

सुत बित लोक<sup>३</sup> ईपनां तीनी । केहि कै मति इन्ह कृत न मलीनी ॥

यह सब माया कर परिवारा<sup>४</sup> । प्रव्रन अमिति को बरनै पाग ॥

सिव चतुरानन जाहि डेराहीं । अपर जीव केहि लेखे माहीं ॥

दो०—व्यापि रहेउ संसार महुँ माया कटक प्रचड ।

सेनापति कामादि भट दंम कपट पाखंड ॥

सो दासी रघुवीर के समुझे मिथ्या सोपि ।

छूट न राम कृपा बिनु नाथ कहौ पद रोपि ॥ ७१ ॥

जो, माया सब जगहि नचावा । जासु चरित लखि काहु न पावा ॥

सोइ प्रभु भू, बिलास खगराजा । नाच नटी इव सहित समाजा ॥

सोइ सच्चिदानंद मन रामा । अज बिज्ञान रूप गुन<sup>५</sup> धामा ॥

व्यापक व्यापि, अखंड अनंता । अखिल-अमोघ सक्ति भगवंता ॥

१—प्र० ॥ मृगलोचनि लोचन । दि० : प्र० [ (५३) : मृगलोचनि के नैन ] । [ वृ० : मृग-  
नयनी के नयन ] । [ च० : मृगलोचनि के नैन ] ।

२—प्र० : को नहिं । दि० : प्र० । [ वृ० : केहि नहिं ] । [ च० : काहि न ] ।

३—प्र० : लोक । दि० : प्र० [ (३) (४) नारि, (५) सोरु ] । [ वृ० : नारि ] । च० : प्र०  
[ (८) नारि ] ।

४—प्र० : परिवारा । दि०, वृ०, च० : प्र० [ (६) : परिवारा ]

५—प्र० : बल । दि० : प्र० । वृ० : गुन । च० : वृ० ।

येहि कौतुक कर मरमु न'काहँ । जाना अनुज न मातु पिता हँ ॥  
 जानुपानि धाए मोहि धरना । स्यामल गान अरुन कर चरना ॥  
 तव मै भागि चलेउँ<sup>१</sup> उरगारी । राम गहन कहुँ मुजा पसारी ॥  
 जिमि जिमि दूरि उड़ाउँ अकासा । तहँ हरि<sup>२</sup> भुज देखौ निज पासा ॥  
 दो०—ब्रह्मलोक लागि गएउँ मै चितएउँ<sup>३</sup> पाछ-उड़ात ।

जुग अगुल कर बीच सब राम भुजहिं मोहि तात ॥

ससावरन भेद करि जहाँ लगें गति<sup>४</sup> मोरि ।

गएउँ तहाँ प्रभु भुज निराखि ब्याकुल भएउँ बहोरि ॥ ७१ ॥

मूदेउँ नयन त्रसित जब भएऊँ । पुनि चितवत कोसलपुर गएऊँ ॥

मोहि बिलोकि राम मुसुकाहीं । बिहँसत तुरत गएउँ मुख माहीं ॥

उदर मोंक सुनु अडजराया । देखेउँ बहु ब्रह्माड निकाया ॥

अति विचित्र तहँ लोक अनेका । रचना अधिऊँ एक ते एका ॥

कोटिन्ह चतुरानन गौरीसा । अगनित उडगन रवि रजनीसा ॥

अगनित लोकपान जम काला । अगनित भूधर भूमि विसाला ॥

सागर सरि सर विपिन अपारा । नाना भौंति सृष्टि बिस्तारा ॥

सुर मुनि सिद्ध नाग नर किन्नर । चारि प्रकार जीव सचराचर ॥

दो०—जो नहिं देखा नहिं सुना जो मनहूँ न समाइ ।

सो सब अद्भुत देखेउँ बरनि कवनि विधि जाइ ॥

एक एक ब्रह्माड महुँ रहौ<sup>५</sup> वरप सत एक ।

येहि त्रिधि देखत फिरौ मै अडकटाह अनेक ॥ ८० ॥

१—प्र० : चलेउँ [ ( २ ) : गलिउ ] । दि०, १०, च० : प्र० ।

२—प्र० : भुज हरि । दि० : प्र० । नृ० : हरि भुज ।

३—प्र० : चितएउ । दि० : प्र० । [ नृ० : चितवन ] । च० : प्र० [ ( ८ ) : चितवत ] ।

४—[ प्र० : जहाँ लागि गति ] । दि० : जहाँ लगें गति [ ( १५ ) : जई लागि गति रहि ] ।

[ नृ० : जई लागि गति रहि ] । च० : प्र० [ ( ८ ) : जई लागि गति रहि ] ।

५—प्र० : रहौ । दि० : प्र० [ ( ४ ) : रहयो ] । [ नृ० : रहे ] । च० : प्र० [ ( ८ ) : रहे ] ।

मोहि सन् करहिं विविध विधि क्रीडा । वरनत<sup>१</sup> मोहि होति अति<sup>२</sup> व्रीडा ॥  
किलकृत मोहि धरन जव धावहि । चलौ मागि तव पूष देखावहि ॥

दो०—आवत निकट हसहिं प्रभु भाजत रुदन कराहि ।

जाउँ समीप गहन पद फिरि फिरि चितइ पराहि ॥

प्राकृत सिसु इव लीला देखि भएउ मोहि मोह ।

कवन चरित्र करत प्रभु चिदानंद संदोह ॥ ७७ ॥

एतना मन आनत खगाराथ । रघुपति प्रेरित व्यापी माया ॥

सो माया न दुखद मोहि काही । आन जीव इव संसृति नाही ॥

नाथ इहाँ कछु धारन आना । सुनहु सो सावधान हरिजाना ॥

ज्ञान अखंड एक सीतावर । मायावस्य जीव सचराचर ॥

जौ सव के रह ज्ञान एक रस । ईस्वर जीवहिं भेद कहहु कस ॥

माया वस्य जीव अभिमानी । ईस वस्य माया गुनखानी ॥

परवस जीव स्ववस भगवता । जीव अनेक एक श्रीकंता ॥

मुषा भेद जद्यपि कृत माया । बिनु हरि जाइ न कोटि उपाया ॥

दो०—रामचंद्र के भजन बिनु जो चह पद निरवान ।

ज्ञानवंत अपि सो नर पसु बिनु पूछ बिपान ॥

राकापति पोडस उअहिं<sup>३</sup> तारागन समुदाइ ।

सकल गिरिन्ह दव लाइए बिनु रवि राति न जाइ ॥ ७८ ॥

ऐसेहि बिनु हरि<sup>३</sup> भजन खगेसा । मिटइ न जीवन्ह केर कलेसा ॥

हरि सेवकहि न व्याप अविद्या । प्रभु प्रेरित व्यापइ तेहि विद्या ॥

ता तैं नास न होइ दास कर । भेद भगति वाढ़इ विहग घर ॥

अम ते चकित राम मोहि देखा । विहँसे सो सुनु चरित विसेपा ॥

१—प्र० : मोहि होति अति । दि० : प्र० । वृ० : चरित होति मोहि । च० : वृ० ।

२—प्र० : उअहिं । दि० : प्र० । [ वृ० : जाहिं ] । च० : प्र० [ ( ८ ) : उगहिं ] ।

३—प्र० : हरि बिनु । दि० : प्र० [ ( ५ ) : बिनु हरि ] । [ वृ० : बिनु हरि ] । च० : प्र०

• [ ( ६ ) : बिनु हरि ] ।

करौं विचार बहोरि बहोरी । मोह कलिल व्यापित मति मोरी ॥  
उभय घरी महँ मै सब देखा । भएउँ समित मन मोह बिसेपा ॥

दो०—देखि कृपाल विकल मोहि बिहँसे तब रघुवीर ।  
बिहँसत ही मुख बाहेर आपउँ सुनु मतिधीर ॥  
सोइ लरिकाई मो सन करन लगे पुनि राम ।  
कोटि भाँति समुझावौ मनु न लहइ विक्ताम ॥८२॥

देखि चरित येह सो प्रभुताई । समुझन देह दसा बिसराई ॥  
धरनि परेउँ मुख आव न बाता । त्राहि त्राहि आरत जन त्राता ॥  
प्रेमाकुल प्रभु मोहि बिलोकी । निज माया प्रभुता तब रोकी ॥  
कर सरोज प्रभु मम सिर धरेऊ । दीनदयाल सकल दुख हरेऊ ॥  
कीन्ह राम मोहि बिगत बिमोहा । सेवक सुखद, कृपा संदोहा ॥  
प्रभुता प्रथम विचारि विचारी । मन महँ होइ हरष अति भारी ॥  
भगतबद्धलता प्रभु कै देखी । उपजी मम उर श्रीति बिसेपी ॥  
सजल नयन पुलकित कर जोरी । कीन्हिउँ बहु बिधि विनय बहोरी ॥

दो०—सुनि सप्रेम मम बानी१ देखि दीन निज दास ।  
वचन सुखद गंभीर मृदु बोले रमानिवास ॥  
काग सुसुँडि माँगु बर अति प्रसन्न मोहि जानि ।  
अनिमादिक सिधि अपर रिधि मोक्ष सकल सुख खानि ॥८३॥

ज्ञान बिबेक बिरति बिज्ञाना । मुनि२ दुर्लभ गुन जे जग जाना ॥  
आजु देउँ सब३ संसय नाही । माँगु जो तोहि भाव मन माहीं ॥  
सुनि प्रभु वचन अधिक अनुरागेउँ । मन अनुमान करन तब लागेउँ ॥  
प्रभु कह देन सकल सुख सही । भगति आपनी देन न कही ॥

१—प्र० : मम बानी । दि० : प्र० । [ त० : मम बैन वर ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : मुनि । दि०, त०, च० : प्र० [(६) : मुनि] ।

३—प्र० : सब । दि०, त०, च० : प्र० [(६) : सब] ।

लोक लोक प्रति भिन्न विधाता । भिन्न विष्णु सिव मनु दिसित्राता ॥  
 नर गंधर्व भूत वेताला । किन्नर निसिचर पशु सग व्याला ॥  
 देव दनुज गन नाना जाती । सकल जीव तहँ आनहि भौंती ॥  
 महि सरि सागर सर गिरि नाना । सब प्रपंच तहँ आनइ आना ॥  
 श्रृंगकोस प्रति प्रति निज रूपा । देखेउँ जिनस<sup>१</sup> अनेक अनूपा ॥  
 अवधपुरी प्रति भुवन निनारी<sup>२</sup> । सरजू<sup>३</sup> भिन्न भिन्न नर नारी ॥  
 दसरथ कौसल्या सुनु ताता<sup>४</sup> । विविध रूप भरतादिकु आता ॥  
 प्रति ब्रह्मांड राम अवतारा । देखौं बाल विनोद उदारा<sup>५</sup> ॥  
 दो०—भिन्न भिन्न मै दीख सबु<sup>६</sup> अति विचित्र हरिजान ।

अगनित भुवन फिरेउँ प्रभु राम न देखेउँ आन ॥

सोइ<sup>७</sup> सिमुपन सोइ सोभा सोइ कृपाल रघुशीर ।

भुवन भुवन देखत<sup>८</sup> फिरौ प्रेरित मोह समीर<sup>९</sup> ॥ ८१ ॥

अमृत मोहि ब्रह्मांड अनेका । बीते मनहुं कल्प सत एका ॥  
 फिरत फिरत निज आश्रम आएउँ । तहँ पुनि रहि कछु काल गवाँएउँ ॥  
 निज प्रभु जनम अवध सुनि पाएउँ । निर्भर प्रेम हरपि उठि धाएउँ ॥  
 देखेउँ<sup>१</sup> जनम महोत्सव जाई । जेहि विधि प्रथम कथा मै गाई ॥  
 राम उदर देखेउँ जग नाना । देखत वनइ न जाइ बखाना ॥  
 तहँ पुनि देखेउँ राम सुजाना । मायापति कृपाल भगवाना ॥

१—प्र० : जिनस । दि० : प्र० । [ तु० : निबिस ] च० : प्र० [ (८) : जीव ] ।

२—प्र० : क्रमशः निनारी, सरजू । [(३) (५) निनारी, सरजू, (४) (५) निहारी, सरजू] ।  
 [ तु० : निहारी, सरजू ] । च० : प्र० [ (८) : निनारी, सरजू ] ।

३—प्र० : कौसल्या सुनु ताता । दि० : प्र० । [ तु० : कौसल्यादिकु भाता ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : अपारा । दि०, तु० : प्र० । च० : उदारा ।

५—प्र० : मै दीख सब । दि०, तु० : प्र० । च० : प्र० [ (८) : सब देखेउं ] ।

६—प्र० : सोइ । दि० : प्र० । [ तु० : सो ] । च० : प्र० ।

७—प्र० : देखत । दि०, तु०, च० : प्र० [(६) : प्रेरित] ।

८—प्र० : समीर । दि०, तु० : प्र० । च० : सरीर ।

९—प्र० : देखौं । दि० : प्र० । तु० : देखेउं । च० : तु० ।



मम माया सभर संसार । जीव चराचर बिधि ॥ ५६ ॥  
 सब मम प्रिय सब मन उपजाय । सब तें अभिह मनुज मोहि भाय ॥  
 तिन्ह महँ द्विज द्विज महँ श्रुतिपापी । तिन्ह महँ निगम धर्म अनुमापी ॥  
 तिन्ह महँ प्रिय मित्र पुनि ॥ ५७ ॥ निहुँ तें अति प्रिय विजानी ॥  
 तिन्ह तें पुनि मोहि प्रिय निज दाया । जेहि गति मोरि नरे दूगि आसा ॥  
 पुनि पुनि सर । करी तोहि पाही । मोहि मेरु सम प्रिय छोड नाही ॥  
 भगनिहीन विरचि छिन होई । सब जो गुरु सब निज मोहि मोई ॥  
 भगतिवन अति नीचो प्राणी । मोहि प्राण प्रिय अति मन चानी ॥  
 दो०—सुचि सुशील सेवक मुमति प्रिय कहु छाहि न लाग ।

श्रुति पुरान कह नीति असि सावधान मुनु दाम ॥ ५८ ॥  
 एक पिता के त्रिपुन उमारा । होहि पृथक गुन सील अचारा ॥  
 कोउ पंडित कोउ तापस ज्ञाता । कोउ धनवंत सूर छोड दाता ॥  
 कोउ सर्वज्ञ धर्मरत कोई । सब पर पिनहि प्रीति सम होई ॥  
 कोउ पितु भगत वचन मन कर्मा । सपनेहु जान न दूसर धर्मा ॥  
 सो सुत प्रिय पितु प्राण समाना । जयपि सो सब भोति अयाना ॥  
 येहि विधि जीव चराचर जेते । त्रिजग देव नर असुर समेते ॥  
 अखिल बिस्व यह मोर उपाया । सब पर मोहि बराबरि दाया ॥  
 तिन्ह महँ जो परिहरि मद माया । भजइ मोहि मन बच अरु काया ॥  
 दो०—पुरुष नृपसक नारि वा जीव चराचर कोइ ।

सर्व भाव भज कष्ट तजि मोहि परम प्रिय सोइ ॥

सो०—सत्य कहौ स्वग तोहि सुचि सेवक मम प्राण प्रिय ।

अस विचारि भजु मोहि परिहरि आस भरोस सब ॥ ५९ ॥

१—५० : पुनि । दि० : प्र० । [ तृ० : अह ] । च० : प्र० ।

२—[ प्र० : जेहि भगति मोरि न ] । दि० : जेहि गति मोरि । तृ०, च० : दि० ।

३—प्र० : जीवहु । दि० : प्र० [ (३)(४)(५) : जीवन ] । तृ० : प्र० । [ च० : जीवन ] ।

४—प्र० : भजइ । दि० : प्र० । [ तृ० : भजहि ] । [ च० : मैं नहीं है, (८) भजदि ] ।

भगति हीन गुन सब सुख कैसे १ । लवन बिना बहु बिजन जैसे ॥  
भजनहीन सुख कबने काजा । अस विचारि बोलेउँ खगराजा ॥  
जौ प्रभु होइ प्रसन्न वर देह । मोपर करहु कृपा अरु नेह ॥  
मन भावत वर माँगौ स्वामी । तुम्ह उदार उर अंतरजामी ॥

दो०—अविरल भगति विसुद्ध तव स्तुति पुरान जो गाव ।

जेहि २ खोजत जोगीस मुनि प्रभु प्रसाद कोउ पाव ॥

भगत कल्पतरु प्रनतहित कृपासिंधु सुखधाम ।

सोइ निज भगति मोहि प्रभु ३ देहु दया करि राम ॥८४॥

एवमस्तु कहि रघुकुलनायक । बोले वचन परम सुखदायक ॥

सुनु बायस तहँ सहज सयाना । काहे न माँगसि अस वरदाना ॥

सब सुख खानि भगति तैं माँगी । नहिं जग कोउ तोहि सम बड़ भागी ॥

जो मुनि कोटि जतन नहिं लहही । जे जप जोग अनल तन दहही ॥

रीमेउँ देखि तोरि चतुराई । माँगेहु भगति मोहि अति भाई ॥

सुनु बिहंग प्रसाद अब मोरे । सब सुभ गुन बसिहहिं उर तोरे ॥

भगति ज्ञान बिज्ञान बिगागा । जोग चरित्र रहस्य बिभागा ॥

जानव तैं सचही पर भेदा । मम प्रसाद नहिं साधन खेदा ॥

दो०—माया संभव अम सब अब, न व्यापिहहिं तोहि ।

जानेसु ब्रह्म अनादि अज अगुन गुनाहर मोहि ॥

मोहि भगत प्रिय संतत अस विचारि सुनु काग ।

काय वचन मन मम पद करेसु अचल अनुराग ॥८५॥

अब सुनु परम बिमल मम वानी । सत्य सुगम निगमादि चत्तानी ॥

निज सिद्धांत सुनावौ तोही । सुनिमन घरु सब तजि भजु मोही ॥

१—प्र० : ऐसे । दि० : प्र० [ (४)(५)(५अ) : कैसे ] । तु० : कैसे । च० : तु० ।

२—प्र० : जेहि । दि० : प्र० । [ तु० : जो ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : प्रभु । दि० : प्र० । [ तु० : अब ] । च० : प्र० ।

कोउ विद्याम कि पाव तात सहज संतोष<sup>१</sup> विनु ।

चलइ कि जल विनु नाव कोटि जतन पचि पचि मरिअ ॥ ८२ ॥

विनु सतोष न काम<sup>२</sup> नसाही । काम अद्यत सुख सपनेहुं नाही ॥

राम भजन विनु भिट्ठाह कि कामा । थल विहीन तरु कबहुं कि जामा ॥

विनु विज्ञान कि समता श्रावै । कोउ प्रवकास कि नभ विनु पावै ॥

सद्धा<sup>३</sup> विना धर्म नहिं होई । विनु महि गध कि पावइ कोई ॥

विनु तप तेज कि कर बिस्तारा । जल विनु रस कि होइ रांसारा ॥

सील कि मिल विनु बुध सेवकाई । जिमि विनु तेज न रूप गुसाई<sup>४</sup> ॥

निज सुख विनु मन होइ कि थीरा । परस कि होइ विहीन समीरा ॥

कवानउ सिद्धि कि विनु बिस्वासा । विनु हरि भजन न भव भय नासा ॥

दो०—विनु बिस्वास भगति नहिं तेहि विनु द्रवहि न रामु ।

राम कृपा विनु सपनेहुं जीव न लह<sup>५</sup> विद्यामु ॥

सो०—अस विचारि मति धीर तजि कुतर्क ससय सकल ।

भजहु राम रघुबीर करुनाकर सुंदर सुखद ॥ ८० ॥

निज मति सरिस नाथ मै गई । प्रभु प्रताप महिमा खगराई ॥

कहेउ न कछु कर जुगति बिसेषी । येह सब मैं निज नयनन्हि देखी ॥

महिमा नाम ९५ गुन गाथा । सकल अमित अनंत रघुनाथा ॥

निज निज मति मुनिहरि गुन गावहिं । निगम सेष सिध पार न पावहिं ॥

तुम्हहि आवि खग मसक प्रजंता । नभ उड़ाहिं नहिं पावहिं अता ॥

तिमि रघुपति महिमा अवगाहा । तात कबहुं कोउ पाव कि थाहा ॥

राम काम सत कोटि सुभग तन । दुर्गा कोटि अमित अरि मर्दन ॥

सक्र कोटि सत सरिस बिलासा । नभ सत कोटि अमित अवकासा ॥

दो०—मरुत कोटि सत बिपुल बल रवि सत कोटि प्रकास ।

ससि सत कोटि सुधील समन सकल भव त्रास ॥

१- प्र० : काम न । द्वि० : प्र० [(५) (५) : न काम] । तृ० : न काम । च० : तृ० ।

२- प्र० : जीव न लह । द्वि० : प्र० । [तृ० : जीव कि लहै] । [च० : जीव कि लहै]

कबहुँ काल नहिं व्यापिहि तोहीं । सुमिरेसु मजेसु<sup>१</sup> निरंतर मोहीं ॥  
 प्रभु बचनमृत सुनि न अधाऊँ । तन पुलकित मन अति हरपाऊँ ॥  
 सो सुख जानइ मन अरु काना । नहि रसना पहिं जाइ वखाना ॥  
 प्रभु सोभा सुख जानहि नयना । कहि किमिसर्गहिं तिन्हहि नहिं वयना ॥  
 बहु विधि मोहि पचोधि सुख देखै । लगे करन सिसु कौतुक तेई ॥  
 सजल नयन कलु मुख करि रूखा । चितइ मातु लागी अति भूखा ॥  
 देखि मातु आतुर उठि धाई । कहि मृदु बचन लिए उर लाई ॥  
 गोद राखि कराव प्य पाना । रघुपति चरित ललित कर गाना ॥  
 सो०—जेहि<sup>२</sup> सुख लागि पुरारि असुमचेव कृत सिव सुखद ।  
 अवधपुरी नर नारि तेहि सुख महुं संतत मगन ॥  
 सोई सुख<sup>३</sup> लवलेस जिन्ह वारक सपनेहु लहेउ ।  
 ते नहिं गनहिं<sup>४</sup> खगेस ब्रह्म सुखहिं सज्जन सुमति ॥ ८८ ॥  
 म पुनि अवध रहेउ कलु काला । देखेउ बाल विनोद रसाला ॥  
 राम प्रसाद भक्ति वर पाएउ । प्रभु पद बंदि निजासम आएउ ॥  
 तब तें मोहि न व्यापी माया । जब तें रघुनायक अपनाया ॥  
 येह सब गुंस चरित मै गावा । हरि माया जिमि मोहि नचावा ॥  
 निज अनुभव अव कहौ खगेसा । बिनु हरि भजन न जाहि फलेसा ॥  
 राम कृपा बिनु सुनु खगराई । जानि न जाइ राम प्रभुताई ॥  
 जाने बिनु न होइ परतीती । बिनु परतीति होइ नहि प्रीती ॥  
 प्रीति बिना नहिं भगति दढ़ाई । जिमि खगपति जल कै चिकनाई ॥  
 सो०—बिनु गुर होइ कि ज्ञान ज्ञान कि होइ चिराग बिनु ।  
 गावहिं वेद पुरान सुख कि लहिअ हरि भगति बिनु ॥

१—प्र० : सुमिरेसु मजेसु । दि० : प्र० [ (३)(४)(५) : सुमिरेसु मजेसु ] । तु० : प्र० [ च० : सुमिरेसु मजेसु ] ।

२—प्र० : जेदि । दि० : प्र० [ तु० : जो ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : सोई सुख । दि० : प्र० [ तु० : सो सुखकर ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : ते नहिं गनहिं । दि० : प्र० [ तु० : सो नहिं गनै ] । च० : प्र० ।

पाखिल मोह समुक्ति पञ्चिताना । ब्रह्म अनादि मनुज करि माना ॥  
 पुनि पुनि काग चरन सिरु नावा । जानि राम सम प्रेम बढ़ावा ॥  
 गुर बिनु भवनिधि तरइ न कोई । जौ विरचि संकर सम होई ॥  
 समय सर्प असेउ मोहि ताता । दुखद लहरि बुतर्क बहु वाता ॥  
 तव सरूप गारुडि रघुनायक । मोहि जिआएउ जन सुखदायक ॥  
 तव प्रसाद मम मोह नसाना । राम रहस्य अनूपम जाना ॥  
 दो०—ताहि प्रससि<sup>१</sup> विविध विधि सीस नाइ कर जोरि ।

बचन विनीत सप्रेम मृदु बोलेउ गरुड़ बहोरि ॥

प्रभु अपने अविवेक तैं बुझौ स्वामी तोहि ।\*

कृपासिंधु सादर कहहु जानि दास निज मोहि ॥ ६३ ॥

तुम्ह सर्वज्ञ तज्ञ तमपारा । सुमति सुसील सरल आचारा ॥  
 ज्ञान बिरति विज्ञान निवासा । रघुनायक के तुम्ह प्रिय दासा ॥  
 कारन कवन देह येह पाई । तान सकल मोहि कहहु बुझाई ॥  
 राम चरित सर सुंदर स्वामी । पाएहु कहाँ कहु न भगामी ॥  
 नाथ सुना मै अस सिव पाहीं । महा प्रलयहुँ नास तव नाहीं ॥  
 मृषा<sup>१</sup> बचन नहि ईश्वर कहई । सोउ मोरे मन ससय अहई ॥  
 अग जग जीव नाग नर देवा । नाथ सकल जगु काल कलेवा ॥  
 अडवटाह अमित लयकारी । काल सदा दुरतिक्रम भारी ॥  
 सो०—तुम्हहि न व्यापत काल अति कगल कारन कवन ।

मोहि सो कहहु कृपाल ज्ञान प्रभाव कि जोग बल ॥

दो०—प्रभु तव आसम आएँ<sup>४</sup> मोर मोह अम भाग ।

कारन कवन सो नाथ सब कहहु सहित अनुगम ॥ ६४ ॥

१—प्र० : माना । द्वि० : प्र० । [ ६०, च० : जाना ] ।

— प्र० : प्रससि । द्वि० : प्र० । [ ६० : प्रससे ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : गुषा । द्वि० : प्र० । ६० : मृषा । च० : ६० ।

४ प्र० : आए । द्वि० : प्र० [ (३) : आएँ ] । [ ६०, च० : आएँ ] ।

काल कोटि सत सरिस अति दुस्तर दुर्ग दुरत ।

धूमरेतु सत कोटि सम दुःखाग्र भगवंत ॥ ६१ ॥

भु अगाध सत कोटि पताला । समन कोटि सन सरिम काला ॥

भीरु अमित कोटि सम पावन । नाम अस्मिन् अप पूग नमावन ॥

हिमगिरि कोटि अचल रघुनीरा । सिंधु कोटि सन सम गभीरा ॥

आमधेनु सत कोटि समाना । सकन कामदायक भगवाना ॥

मारद कोटि अमिन चतुराई । विधि सत कोटि सृष्टि निपुनई ॥

गिनु कोटि सम पालन करता । रुद्र कोटि सन सप सधरता ॥

धनद कोटि सत सम धनवाना । माया कोटि प्रपंच निधाना ॥

भार धरन सन कोटि अहीसा । निरवधि निरुपम प्रभु जगदीसा ॥

६०—निरुपम न उपमा आन राम समान रामु निगम कहै ।

जिमि कोटि सत खद्योत सम रवि कहन अति लघुता लहै ॥

येहि भोति निज निज मति बिलास मुनीस हरिहि उखानहीं ।

प्रभु भाव गाहक अनि कृपान सप्रेम सुनि सुख मानै ॥

६०—रामु अमित गुन सागर थाह कि पाइ कोइ ।

सगह सन जप किछु सुनेउँ तुम्हहि सुनाएउँ सोइ ॥

६०—भावस्थ भगवान सुखनिधान करुणाभवन ।

तजि ममता मद मान भजिग मदा सीतारजन ॥ ६२ ॥

पुनि मुसुंडि के बचन सुहए । हरपिन स्वयंपति पख फुलाए ॥

नयन नीर मन अनि हरषाना । श्री रघुनि प्रनाम उर आना ॥

१—प्र० : मम । डि० : प्र० [ ७०, च० मर ] ।

२—प्र० : पूर । [ दि०, गृ०, च० - पुत्र ] ।

३—प्र० : मम । दि० प्र० [ (१५) - मन ] । [ ७०, च० : सन ] ।

४—प्र० : मार । दि० : प्र० [ (५५) धरा ] । गृ०, च० : ध० ।

५—प्र० प । दि० प्र० [ (३) (५) प्रभा ] । च०

दो०—प्रथम जनम के बरित अन कहौ सुनहु विहँगेस ।

सुनि प्रभु पद रति उपजइ जातें मिटहि कलेस ॥

पूरुष कल्या एक प्रभु जुग कलिजुग फलमूल ।

नर अरु नरि अधर्म रत सकल निगम प्रतिकूल ॥६६॥

तेहि कलिजुग कोसलपुर जाई । जन्मन भएउँ सूद्र तन पाई ॥

सिव सेवक मन कम अरु बानी । आन देव निंदक अभिमानी ॥

धन मदमत्त परम बाचाना । उग्र बुद्धि उर दंभ बिसाला ॥

जदपि रहेउँ श्रुपनि रजधानी । तदपि न कछु महिमा तब जानी ॥

अब जाना मै अवध प्रभावा । निगमागम पुगन अस गावा ॥

कवनेहु जनम अवध बस जोई । गम परायन सो परि होई ॥

अवध प्रभाव जान तब प्रानी । जब उर बसहि रामु धनुपानी ॥

सो कलिकाल कठिन उरगारी । पाप परायन सब नर नारी ॥

दो०—कलिमल ग्रसे १ धर्म सब लुमरे भए सदग्रंथ ।

दंभिन्ह निज मति कल्पि करि प्रगट किए बहु पंथ ॥

भए लोग सर मोहबस लोभ ग्रसे सुभ कर्म ।

सुनु हरिजान ज्ञाननिधि कहौ कछुक कलि धर्म ॥६७॥

वरन धर्म नहि आसुम चारी । श्रुति विरोध रत सब नर नारी ॥

द्विज सुति वेचक भूप प्रजासन । कोउ नहि मान निगम अनुसासन ॥

मारग सोइ जा कहैं जोइ भावा । पंडित सोइ जो गाल बजावा ॥

मिथ्यारंभ दंभ रत जोई । ता कहैं संत कहइ सब कोई ॥

मोइ सयान जो पर धन हारी । जो कर दंभ सो बड़ आचारी ॥

जो कह भूँट ममखरी जाना । कनियुग सोइ गुनवंत बखाना ॥

१ प्र० : ग्रसे । द्वि० : प्र० । [ नृ० : ग्रसे ] : च० : प्र० ।

२ प्र० : सुन । द्वि० : प्र० [ (५) : सुन ] । नृ० : प्र० । [ च० : सुन ] ।

३ प्र० : रत भव नर । द्वि० : प्र० । [ नृ० : नर नर ] । [ च० : नर नर ] ।

४—प्र० : वे क । द्वि० : प्र० [ (३) (४) (५) : वेचक ] । [ नृ०, च० : वेचक ] ।

गुरु गिरा सुनि हरपेउ कागा । बोलेउ उमा परम' अनुरागा ॥  
 धन्य धन्य तव मति उरगारी । प्रसन्न तुम्हारि मोहि अति प्यारी ॥  
 सुनि तव प्रसन्न सप्रेम सुहाई । बहुत जनम कै सुधि मोहि आई ॥  
 सब निज कथा कहौ मैं गाई । तात सुनहु सादर मन लाई ॥  
 जप तप मल सम दम व्रत दाना । विरत विवेक जोग विज्ञाना ॥  
 सब कर फलु रघुपति पद प्रेमा । तेहि बिनु कीउ न पावइ छेमा ॥  
 येहि तन राम भगति मैं पाई । ता तें मोहि ममता अधिकारी ॥  
 जेहि तें कछु निज स्वारथ होई । तेहि पर ममता कर सब जोई ॥

सो०—पद्मगारि असि नीति श्रुति संमत सज्जन कहहिं ।

अति नीचहु सन प्रीति करिअ जानि निज परम हित ॥

पाट कीट तें होइ तेहि तें पाटवर रुचिर ।

कृषि पालइ सब कोइ परम अपावन प्रान सम ॥६५॥

स्वारथ सौँच जीव कहूँ येहा । मन कम बचन राम पद नेहा ॥  
 सोइ पावन सोइ सुभग सरीरा । जो तनु पाइ भजइ रघुवीरा ॥  
 राम विमुख लहि विधि सम देही । कवि कोविद न प्रसमहि तेही ॥  
 राम भगति येहि तन उर जामी । ता तें मोहि परम प्रिय स्वामी ॥  
 तजौ न तनु निज इच्छा मरना । तनु बिनु बेद भवनु नहिं बरना ॥  
 प्रथम मोह मोहि बहुत बिगोवा । राम विमुख सुख कहूँ न सोवा ॥  
 नाना जनम करम पुनि नाना । किए जोग जप तप मल दाना ॥  
 कवन जोनि जन्मेउं जहँ नाही । मैं समेत अमि अमि जग माहीं ॥  
 देखेउं करि सब करम गोसाई । सुखी न भएउं अरहिं की नाई ॥  
 सुधि मोहि नाथ जनम बहु केरी । सिव प्रसाद गति मोह न घेरी ॥

१—प्र० ॥ परम । द्वि० : प्र० [ (०) (०) : सद्धि ] । [ नृ०, च० : सद्धि ] ।

२—प्र० : तेहि तें । द्वि० : प्र० । [ नृ०, च० : तातें ] ।

३—प्र० : भजौ । द्वि० : प्र० [ (१) (१) (५) : भजिअ ] । नृ०, च० : प्र० ।



द्वापर करि रघुपति पद पूजा । नर भव तरहि उपाउ न दूजा ॥  
 कलिजुग केवल हरि गुन गाहा । गावत नर पावहि भय थाहा ॥  
 कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना । एक अधार राम गुन गाना ॥  
 सब भरोस तजि जो भज रामहि । प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि ॥  
 सोइ भव तर कछु ससय नाही । नामप्रताप प्रगट कलि माही ॥  
 कलि कर एरु पुनीत प्रतापा । मानस पुन्य होहि नहि पापा ॥  
 दो०—कलिजुग सम जुग आन नहि जौ नर कर बिस्वास ।

गाइ राम गुन गन विमल भव तर विनहि प्रयास ॥

प्रगट चारि पद धर्म के कलि महुं एरु प्रधान ।

जेन केन बिधि दीन्हे दान करइ कल्याण ॥१०३॥

नितः जुग धर्म होहिं सब करे । हृदयै राम माया के प्रेरे ॥

सुद्ध सत्त्व समता बिज्ञाना । कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना ॥

सत्त्व बहुत रज कछु रति कर्मा । सब बिधि सुख त्रेता कर धर्मा ॥

बहु रज स्वरूप सत्त्व कछु तामस । द्वापर धर्म हरष भय मानस ॥

तामस बहुत रजोगुन थोरा । कलि प्रभाव बिरोध चहुं ओरा ॥

बुध जुगधर्म जानि मन माही । तजि अधर्म रति धर्म कराही ॥

काल धर्मः नहि व्यापहि ताही । रघुपति चरन प्रीति अति जाही ॥

नट कृत बिकट कपट खगराया । नटसेवरुहि न व्यापइ माया ॥

दो०—हरि माया कृत दोष गुन विनु हरि भजन न जाहिं ।

भजिअ राम तजि काम सब अस बिचारि मन माहिं ॥

तेहि कलि काल वरष बहु बसेउँ अवध बिहँगेस ।

परेउ दुकाल बिपत्तिवस तव मै गपउँ विदेस ॥१०४॥

गपउँ उजेनी सुनु उरगारी । दीन मलीन दरिद्र दुखारी ॥

१—प्र० : नित । दि० : प्र० [ (३) (५) कृ ] ।। वृ०, वृ० : कृ ] ।

२—प्र० : बान्धव । दि० : प्र० । [ वृ० : बान्धव ] । [ च० : प्रभु प्रभाव ] ।

निराचार जो श्रुति पथ त्यागी । कलिजुग सोइ ज्ञानी सो विरागी १ ॥  
जार्के नख अरु जटा बिसाला । सोइ तापस प्रसिद्ध कलिकाला ॥  
दो०—असुम बेध भूपन धरे मत्ताभन्त जे खाहिं ।

तेइ जोगी तेइ सिद्ध नर पूजिति २ कलिजुग माहि ॥

सां०—जे अपकारी चार तिन्ह कर गौरव मान्य तेइ ३ ।

मन क्रम बचन लवार तेइ बक्ता कलिकाल महुं ॥६८॥

नारि बिरस नर सकल गोसाई । नाचहिं नट मर्कट की नाई ॥

सूद्र द्विजन्ह उपदेसहिं ज्ञाना । मेलि जनेऊ लोहि कुदाना ॥

सब नर काम लोभ रत क्रोधो । देव बिप्र श्रुति ४ संत विरोधो ॥

गुन मंदिर सुंदर पति त्यागी । भजहिं नारि पर पुरुष अभागी ॥

सौभागिनी बिभूषन होना । बिधवन्ह के सिंगार नवीना ॥

गुर सिप बधिर अध का ५ लेखा । एक न सुनइ एक नहि देखा ॥

हरइ सिष्य धन सोक न हरई । सो गुर घोर नरक महुं परई ॥

मातु पिता बालकन्हि बोलावहिं । उदर भरइ सोइ धरम सिलावहिं ॥

दो०—ब्रह्मज्ञान बिनु नारि नर कहहि न दूसरि बात ।

कौड़ी लागि मोह बस करहिं बिप्र गुर घात ॥

बादहिं सूद्र द्विजन्ह सन हम तुम्ह तें कछु घाटि ।

जानइ ब्रह्म सां बिप्रवर आंखि देखावहिं छाटि ॥६९॥

पर त्रिय लंपट कपट सयाने । मोह द्रोह ममता लपटाने ॥

तेइ अभेदवादी ज्ञानी नर । देखा मै चरित्र कलिजुग कर ॥

आपु गए अरु तिन्हहैं घालहिं । जे कहैं सत ६ मारग प्रतिपालहि ॥

१—[ प्र० : ज्ञान बैरागी ] । दि० : ज्ञानी सो विरागी [ (५अ) : ज्ञानी बैरागी ] । [ वृ० , च० : ज्ञानी बैरागी ] ।

२—प्र० : पूजित । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : पूज्य ते ] । [ वृ० : पूजित ] । [ च० : पूज्य ते ] ।

३—प्र० : मान्य तेइ । दि० : प्र० । [ वृ० : मान्यता ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : श्रुति । दि० : प्र० । [ वृ० : श्रु ] । च० : प्र० ।

५—[ प्र० : क ] । दि० : का [ (५अ) : कर ] । वृ० : दि० । [ च० : कर ] ।

६—प्र० : जे कहैं सत । दि० : प्र० । [ वृ० : जे कहैं सत ] । [ च० : निज कृत दोष ] ।

द्वापर करि रघुपति पद पूजा । नर भव तरहि उपाउ न दूजा ॥  
 कलिजुग केवल हरि गुन गाहा । गावत नर पावहि भव थाहा ॥  
 कलिजुग जोग न जज्ञ न ज्ञाना । एक अधार राम गुन गाना ॥  
 सत्र भरोस तजि जो भज रामहि । प्रेम समेत गाव गुन ग्रामहि ॥  
 सोइ भव तर कछु ससय नाही । नामप्रताप प्रगट कलि माहीं ॥  
 कलि कर एरु पुनीत प्रतापा । मानस पुन्य होहि नहि पापा ॥  
 दो०—कलिजुग सम जुग आन नहि जौ नर कर बिस्वास ।

गाइ राम गुन गन विमल भव तर विनहिं प्रयास ॥

प्रगट चारि पद धर्म के कलि महुं एरु प्रधान ।

जेन केन विधि दीन्हे दान करइ कल्याण ॥१०३॥

नितः जुग धर्म होहिं सब करे । हृदयें राम माया के प्रेरे ॥

सुद्ध सत्त्व समता विज्ञाना । कृत प्रभाव प्रसन्न मन जाना ॥

सत्त्व बहुत रज कछु रति कर्मा । सब विधि सुख त्रेता कर धर्मा ॥

बहु रज स्वल्प सत्त्व कछु तामस । द्वापर धर्म हरप भय मानस ॥

तामस बहुत रजोगुन थोरा । कलि प्रभाव विरोध चहुं ओरा ॥

बुध जुगधर्म जानि मन माहीं । तजि अधर्म रति धर्म कराहीं ॥

काल धर्म नहि व्यापहि ताही । रघुपति चरन प्रीति अति जाही ॥

नट कृत बिकट कपट खगराया । नटसेवकहि न व्यापइ माया ॥

१ दो०—हरि माया कृत दोष गुन बिनु हरि भजन न जाहिं ।

भजिअ राम तजि काम सब अस विचारि मन माहि ॥

तेहि कलि काल बरष बहु बसेउँ अवध बिहंगेस ।

परेउ दुकाल बिपतिवस तव मै गणउँ विदेस ॥१०४॥

गणउँ उजेनी सुनु उरगारी । दीन मलीन दरिद्र दुखारी ॥

गए काल कछु संपति पाई । तहँ पुनि करें संभु सेवआई ॥  
 बिप्र एक वैदिक सिव पूजा । करइ सदा तेहि काजु न दृजा ॥  
 परम साधु परमार्थ बिदक । संभु उपासक नहिं हरि निंदक ॥  
 तेहि सेवौ मैं कपट समेता । द्विज दयाल अति नीति निकेता ॥  
 बाहिज नम्र देखि मोहि साई । बिप्र पढ़ाव पुत्र की नाई ॥  
 संभु मंत्र मोहि द्विजवर दीन्हा । सुभ उपदेस विविध विधि कीन्हा ॥  
 जपौ मंत्र सिव मंदिर जाई । हृदय दंभ अहमिति अधिकारि ॥

दो०—मैं खल मल संकुल मति नीच जाति वस मोह ।

हरिजन द्विज देखे जरौं करें बिप्लु कर-द्रोह ॥

सो०—गुर नित मोहि प्रबोध दुखित देखि आचरन मम ।

मोहि उपजइ अति क्रोध दंभिहि नीति की भावई ॥१०५॥

एक बार गुर लीन्ह बोलाई । मोहि नीति बहु भौंति सिखाई ॥  
 सिव सेवा कै कल सुन सोई । अचिरल भगति राम पद होई ॥  
 रामहि भजहि तात सिव घाता । नर पावँर कै केतिक वाता ॥  
 जासु चरन अज सिव अनुरागी । तासु द्रोह सुख चहसि अभागी ॥  
 हर कहूँ हरिसेवक गुर कहेऊ । सुनि खगनाथ हृदय मम दहेऊ ॥  
 अधम जाति मैं बिद्या पाए । भएउ जथा अहि दूध पिआए ॥  
 मानी कुटिल कुभाष्य कुजाती । गुर कर द्रोह करें दिनु राती ॥  
 अतिदयाल गुरु स्वल्प न क्रोधा । पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा ॥  
 जेहि ते नीच बढ़ाई पावा । सो प्रथमहि हति ताहि नसावा ॥  
 धूम अनल संभव सुनु भाई । तेहि बुझाव घन पदवी पाई ॥  
 रज मग परी निरादर रहई । सब कर पद प्रहार नित सहई ॥  
 मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भाई । पुनि नृप नयन किरीटन्हि परई ॥  
 सुनु खगपति अस समुझि प्रसंगा । बुध नहिं कहिं अधम कर संग्गा ॥  
 कबि कोचिद गावहिं असि नीती । खल सनकलह न भल नहिं प्रीती-॥

उदासीन नित रहित्य गोसाईं । खल परिहरित्य मगन दी नई ॥  
 मै खल हृदय रुपट कुटिलाई । गुर हित करहि न मोहि मुहाई ॥  
 दो०—एक बार हर मंदिर १ अपत रहेउं सित नाम ।

गुर आपउ अभिमान नैं उठि नहि कीन्ह प्रनाम ॥

सो दयाल नहि रहेहु फलु उर न रोष लव लेस ।

अति अघ गुर अपमानता सहि नहि सकै महेस ॥१०६॥

मदिर मौंझ भई नभनानी । रे हतभाष्य अज अभिमानी ॥  
 जयपि तव गुर कैं नहिं क्रोधा । अति कृपाल चित सम्यक बोधा ॥  
 तदपि साप सठ देहों तोही । नीति विरोध सोहाइ न मोही ॥  
 जौ नहि दढ करौं खल तोरा । अष्ट होइ धुति मारग मोरा ॥  
 जे सठ गुर सन इरिषा करहीं । रौरव नरक कोटि जुग परहीं ॥  
 त्रिजग जोनि पुनि धरहि सरीरा । अयुन जन्म भरि पावहिं पीरा ॥  
 बेठि रहेसि अजगर इव पापी । सर्व होहि खल मल मति व्यापी ॥  
 महा घिटप कोटर महुं जाई । रहु अधमाधम अधगति पाई ॥  
 दो०—हाहाकार कीन्ह गुर दारुन सुनि सिव साप ।

कपित मोहि बिलांकि अति उर उपजा परिताप ॥

करि दढवत सप्रेम द्विज सिव सन्मुख कर जोरि ।

बिनय करत गदगद गिरा २ समुझि घोर गति मोर ॥१०७॥

नमामीशमीशाननिर्वाणरूप । विभुं व्यापक ब्रह्म वेदस्वरूप ॥  
 निज निर्गुण निविकल्प निरीह । चिदाशमाकाशवास भजेह ॥  
 निराकारमोकारमूल तुरीय । गिराज्ञानगोतीतमीश गिरीश ॥  
 करालं महाकालकालं कृपाल । गुप्तागार ससारपार ननोह ॥  
 तुषाराद्रिसकाशगौर गभीर । मनोभूतफोटिप्रभा थी शरीरं ॥

॥ए काल कछु संपति पाई । तहँ पुनि करौ संभु सेवआई ॥  
 बिप्र एक वैदिक सिव पूजा । करइ सदा तेहि काजु न दृजा ॥  
 परम साधु परमारथ विदक । संभु उपासक नहि हरि निंदक ॥  
 तेहि सेवौ मैं कष्ट समेता । द्विज दयाल अति नीति निकेता ॥  
 बाहिज नम्र देखि मोहि साई । बिप्र पढ़ाव पुत्र की नाई ॥  
 संभु मंत्र मोहि द्विजवर दीन्हा । सुभ उपदेस विविध विधि कीन्हा ॥  
 जपौ मंत्र सिव मंदिर जाई । हृदय दंभ अहमिति अधिकारै ॥

दो०—मैं खल मल संकुल मति नीच जाति बस मोह ।

हरिजन द्विज देखे जरौ करौ बिप्लु कर-द्रोह ॥

सो०—गुर नित मोहि प्रबोध दुखित देखि आचरन मम ।

मोहि उपजइ अति क्रोध दंभिहि नीति की भावई ॥१०५॥

एक बार गुर लीन्ह बोलाई । मोहि नीति बहु भौंति सिखाई ॥  
 सिव सेवा कै फल सुन सोई । अबिरल भगति राम पद होई ॥  
 रामहि भजहि तात सिव धाता । नर पावँर कै केतिक बाता ॥  
 जासु चरन अज सिव अनुरागी । तासु द्रोह सुख चहसि अमागी ॥  
 हर कहँ हरिसेवक गुर कहेऊ । सुनि लगनाथ हृदय मम दहेऊ ॥  
 अधम जाति मैं बिद्या पाए । भएउ जथा अहि दूध पिआए ॥  
 मानी कुटिल कुभाष्य कुजाती । गुर कर द्रोह करौ दिनु राती ॥  
 अतिदयाल गुरु स्वल्प न क्रोधा । पुनि पुनि मोहि सिखाव सुबोधा ॥  
 जेहि ते नीच बड़ाई पावा । सो प्रथमहि हति लाहि नसावा ॥  
 घूम अनल संभव सुनु भाई । तेहि बुझाव घन पदवी पाई ॥  
 रज मग परी निरादर रहई । सब कर पद प्रहार नित सहई ॥  
 मरुत उड़ाव प्रथम तेहि भरई । पुनि नृप नयन किरीटन्हि परई ॥  
 सुनु लगपति अस समुझि प्रसंगा । बुध नहि कहिं अधम कर संगी ॥  
 कवि कोविद गावहिं असि नीती । खल सनकलह न भल नहि प्रीती ॥

सरर दीन दयाल अब येहि पर होहु कृपाल ।

साप अनुग्रह होइ जेहि<sup>१</sup> नाथ थारे ही काल ॥१०८॥

येहि कर होइ परम कल्याण । सोइ कराहु अब कृपानिधान ॥

विप्र गिरा सुनि परहित सानी । एवमस्तु इति भै नभ मानी ॥

जदपि कीन्ह येहिं दारुन पापा । मैं पुनि दीन्ह क्रोध करि सापा ॥

तदपि तुम्हारि साधुता देखी । करिहौं येहि पर कृपा बिसेषी ॥

छमासील जे पर उपकारी । ते द्विज मम<sup>२</sup> प्रिय जथा स्वरासी ॥

मोर साप द्विज व्यर्थ न जाइहि । जन्म सहस अबसि<sup>३</sup> येह पाइहि ॥

जन्मत भरत दुसह दुस होई । येहि स्वल्पी नहिं व्यापिहि सोई ॥

कवनेहु जन्म मिटिहि नहिं ज्ञाना । सुनहि सूद्र मम बचन प्रवाना ॥

रघुपति पुरी जन्म तव भएऊ । पुनि तैं मम सेवा मन दएऊ ॥

पुरी प्रभाव अनुग्रह मोरे । राम भगति उपजिहि उर तोरे ॥

सुनु मम बचन सत्य अब भाई । हरि तोपन व्रत द्विज सेवकाई ॥

अब जनि करहि विप्र अपमाना । जानेसु संत अनंत समाना ॥

इद्रकुलिस मम सूल बिसाला । कालदंड हरिचक्र कराला ॥

जो इन्ह कर मारा नहि मरई । विप्र द्रोह पावक सो जरई ॥

अस बिबेक राखेहु मन माहीं । तुम्ह कहँ जग दुर्लभ कछु नाही ॥

औरी एक आसिषा मोरी । अप्रतिहत गति होइहि तोरी ॥

दो०—सुनि सिव बचन हरषि गुर एवमस्तु इति भाषि ।

मोहि प्रबोधि गण्ड गृह संभु चरन उर राखि ॥

प्रेरित काल बिधि<sup>४</sup> गिरि जाइ भएउँ मैं ब्याल ।

१—प्र० : तेहि । दि० : प्र० । [तु० ता] । च० : प्र०

२—प्र० : मोहि प्रिय । दि० : प्र० । तु० : मम प्रिय । च० : तु०

३—प्र० : सहस अवस्य । दि० : सहस अवसि । [तु० : सहस अवस्य] । च० : दि०

४—प्र० : विधि । दि० : प्र० । [तु० : सुविधि] । च० : प्र०

स्फुरन्मौलिकल्लोलिनी चारु गंगा । लसद्भालबालेन्दु कठे भुजगा ॥  
 चलेत्कुण्डल शुभनेत्रेः विशाल । प्रसन्नानन नीलकण्ठं दयाल ॥  
 मृगाधोश्चर्मोदर मुंडमाल । प्रिय शङ्करं सर्वनाथं भजामि ॥  
 प्रचंड प्रकृष्ट प्रगल्भं परेश । अस्रद्ध अज भानुकोटिप्रकाश ॥  
 त्रय शूल निर्मूलन शूलपाणिम् । भजेह भगनीपति भावगम्य ॥  
 कलातीतकल्याणकल्पातकारी । सदा सज्जनानन्ददाता पुरारी ॥  
 चिदानन्दसरोहमोहापहारी । प्रसीद प्रसीद प्रभो मन्मथारी ॥  
 न यावद् उमानाथपादारविन्द । भजतीह लोके परे वा नराणा ॥  
 न तावत्सुख शक्ति सनापनाश । प्रसीद प्रभो सर्वभूनाधिवास ॥  
 न जानामि योग जप नैव पूजा । नतोहं सदा सर्वदा शम्भु तुभ्य ॥  
 जराजन्मदुःखौघतात्प्यमानं । प्रभो पाहि आपन्न मामीश शम्भो ॥

श्लो० — रुद्राष्टकमिदं प्रोक्त विप्रेण हरतोपये २ ।

ये पठति नरा भक्त्या तेषां शम्भुः प्रसीदति ॥

दो०—सुनि निन्ती सर्वज्ञ सिव देखि मित्र अनुगागु ।  
 पुनि मंदिर नभ बानी भइ १ द्विजवर वर माँगु ॥  
 जौ प्रसन्न प्रभु मोपर ४ नाथ दीन पर नेहु ।  
 निज पद भगति ५ देइ प्रभु पुनि दूसर वर देहु ॥  
 तव मायाउस जीव जड़ सतत फिरइ भुलान ।  
 तेहि पर-क्रोध न करिअ प्रभु कृपासिंधु भगवान ॥

१—प्र० : अ सुनेत्र । दि० : प्र० [(५अ) : अ प्लेव] । वृ० : शुभनेत्र । च० : वृ० ।

२—प्र० : तोपये । [ दि०, वृ० : तुष्टय ] च० : प्र० ।

३—प्र० : नम बानी भइ । दि० : प्र० । [ वृ० : बानी भइ हे ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : प्रभु मो पर । दि० : प्र० [(५अ) : प्रभु मोहि पर ] । वृ० : अति मोहि पर ]

च० : प्र० ।

५—प्र० : भगति । दि० : प्र० । [ वृ० : भगती ] । च० : प्र० ।



दो०—गुर के बचन सुगति करि राम चरन मनु लाग ।  
 रघुपति जस गावन फिरो धन धन न । अनुसाग ॥  
 मेरु सिखर बट धार्यो मुनि लोमस आमीन ।  
 देसि चरन सिग नाणउं बचन छेउं गनि दीन ॥  
 मुनि मम वचन बिनीत मृदु मुनि टुपान भगना ॥  
 मोहि सादर पूजत भए द्विज आणहु कंहि छा ॥  
 तब मै कहा टुपानिबै तुह सख ॥ गुमान ॥  
 सगुन तस अवराधन ॥ मोहि कहहु भगवान ॥ ११० ॥

तब मुनीस रघुपति गुन गाथा । कहै कटुक सादर भगनाथा ॥  
 ब्रह्मज्ञान रत मुनि विजानी । मोहि परम अधिकारी जानी ॥  
 लागे करन तस उपदेसा । अत्र अद्वैत अगुन ददयेसा ॥  
 अकल अनीह अनाम अरूपा । अनुभवगम्य असद अनूपा ॥  
 मन गोतीत अमल अत्रिनासी । निबिचार निरवधि सुखरासी ॥  
 सो तै ताहि तोहि नहि भेदा । तारि बीचि इव गामहि वेश ॥  
 त्रिविधि भौंति मोहि मुनि सगुभावा । निर्गुन मत मम ॥ हृदय त आया ॥  
 पुनि मै कहेउं नाइ पद सीसा । सगुन उपासन कहहु मुनीसा ॥  
 राम भगति जल मम मन मीना । किमि निलगाइ मुनीस प्रवीना ॥  
 सो उपदेस कहहु करि दाया । निज नयनन्हि देखौ रघुराया ॥  
 भरि लोचन विलोकि अवधेसा । तब सुनिहौ निर्गुन उपदेसा ॥  
 मुनि पुनि कहि हरिकथा अनूपा । खडि सगुन मृत अगुन निरूपा ॥  
 तब मै निर्गुन मत करि दूरी । सगुन निरूपों करि हठ भूरी ॥  
 उत्तर प्रतिउत्तर मै कीन्हा । मुनि तब भए क्रोध के चीन्हा ॥

१—प्र० • कृपानिधि । दि० : प्र० । [तु० • कृपावतन] । १० : प्र० ।

२—प्र० : अवराधन । दि० : प्र० । [तु० • अवराधन] । च० : प्र० ।

३—प्र० सस । दि० • प्र० । [तु० • सोहि] । च० : प्र० ।

पुनि प्रयास बिनु सो<sup>१</sup> तनु तजेउँ गए कछु काल ॥  
जोइ तनु धरौ तजौ पुनि अनायास हरिजान ।  
जिमि नूतन पट पहिरइ नर परिहरइ पुरान ॥  
सिव राखी श्रुति नीति अरु मैं नहि पाव कलेस ।  
येहि विधि धरेउँ विविध तनु ज्ञान न गएउ खगेस ॥१०६॥

त्रिजग देव नर जोइ तन धरै । तहैं तहैं राम भजन अनुसरै ॥  
एक सूल मोहि बिसर न काऊ । गुर कर कोमल सील सुभाऊ ॥  
चरम<sup>२</sup> देह द्विज के मैं पाई । सुर दुर्लभ पुशन श्रुति गाई ॥  
खेलौ तहैं<sup>३</sup> बालकन्ह मीला । करौ सकल रघुनायक लीला ॥  
प्रौढ़ भए मोहि पिता पढ़ावा । समुझौ सुनौ गुनौ नहि भावा ॥  
मन तैं सकल वासना भागी । केवल राम चरन लय लागी ॥  
कहु खगेस अस कवन अभागी । खरी सेव सुरधेनुहि त्यागी ॥  
प्रेम मगन मोहि कछु न सोहाई । हारेउ पिता पढ़ाई पढ़ाई ॥  
भए कालवस जब पितु माता । मैं बन गएउँ भजन जनत्राता ॥  
जहँ जहँ विपिन मुनीस्वर पावौ । आसम जाइ जाइ सिरु नावौ ॥  
बूझौ तिन्हहि राम गुन गाहा । कहहि सुनौ हरपित खगनाहा ॥  
सुनत फिरौ हरि गुन अनुबादा । अव्याहृत गति समु प्रसादा ॥  
छूटो त्रिविध ईपना<sup>४</sup> गाढ़ी । एक लालसा उर अति बाढ़ी ॥  
राम चरन बारिज जब देखौ । तब निज जन्म सुफल करि लेखौ ॥  
जेहि पूछौ सोइ मुनि अस कहई । ईस्वर सर्व मृत मय अहई ॥  
निर्गुन मत नहि मोहि सुहाई । सगुन ब्रह्म रति उर अधिकारि ॥

१—सो । दि० प्र० । [ व० : सोउ ] । [च० : पंचि नहीं है]

२—प्र० : चर्म । दि० : प्र० [ (५अ) : धर्म ] व० : चरम । [च० : धर्म] ।

३—प्र० : तहैं [ (२) : तह ] दि० : प्र० । [व०, च० : तहा ] ।

४—प्र० : ईपना । दि० प्र० [ (८) (५) : ईर्ष्या ] । [व० : ईर्ष्या] । [च० : न दरपा]

सत्य वचन बिस्वास न करही । वायम इव सब ही तें ढरही ॥  
 सठ स्वपच्च तव हृदय बिसाला । सपदि होहि पद्मी चंडाला ॥  
 लीन्ह साप में सीसा चढ़ाई । नहिं कछु भय न दीनता आई ॥  
 दो०—तुरत भएउं मैं पाग तव पुनि मुनि पद मिरु नाई ।

मुमिरि राम रघुवत्स मनि हरपित चलेउं उड़ाई ॥

उमा जे राम चरन रत विगत काम मद क्रोध ।

निज प्रभुमय देखहिं जगत केहि१ सन करहिं बिगेष ॥ ११२ ॥

सुनु सगेस नहिं कछु रिषि दूषन । उर प्रेरक रघुवंस विमूषन ॥  
 कृपासिंधु मुनि मति करि भोरी । लीन्हो प्रेम परिच्छा मोरी ॥  
 मन वच क्रम मोहि निज जन जाना । मुनि मति पुनि फेरी भगवाना ॥  
 रिषि मम सहन२ सीलता देखी । राम चरन बिस्वास बिसेपी ॥  
 अति बिसमय पुनि पुनि पद्यताई । सादर मुनि मोहि लीन्ह बोलाई ॥  
 मम परितोष विविध विधि कीन्हा । हरपित राममंत्र तव दीन्हा ॥  
 बालक रूप राम कर ध्याना । कहेउ मोहि मुनि कृपानिगाना ॥  
 सुंदर सुखद मोहि अति भावा । सो प्रथमहिं मै तुम्हहि सुनावा ॥  
 मुनि मोहि कछुक काल तहँ राखा । रामचरितमानस तव माखा ॥  
 सादर मोहि यह कथा सुनाई । पुनि बोले मुनि गिरा सुहाई ॥  
 रामचरित सर गुष्ठ सुहावा । संभु प्रसाद तात मै पावा ॥  
 तोहि निज भगत राम कर जानी । ता ते मैं सब कहेउं बखानी ॥  
 राम भगति जिन्ह के उर नाही । कबहुँ न तात कहिय तिन्ह पाहीं ॥  
 मुनि मोहि विविध भौंति समुझावा । मई सप्रेम मुनि पद सिरु नावा ॥  
 निज कर कमल परसि मम सीसा । हरपित आसिष दीन्ह मुनीसा ॥  
 राम भगति अबिरल उर तोरे । बसिहि सदा प्रसाद अब मोरे ॥

१—प्र० : केहि । द्वि० : प्र० । [ वृ० : का ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : सहन । [ द्वि० : (३)(०)(५) मदत, (५५) सदन ] । वृ० : प्र० । [ च० : सदन ] ।

सुनु प्रसु बहुत अवज्ञा किए<sup>१</sup> । उपज क्रोध<sup>२</sup> ज्ञानिन्ह<sup>३</sup> के हिए<sup>४</sup> ॥

अति संघारण कर जो कोई । अनल प्रगट चंदन तैं होई ॥

दो०—चारचार सक्रोप सुनि करइ निरूपन ज्ञान ।

मैं, अपने मन बैठ तब करौं विविध अनुमान ॥

क्रोध कि द्वैत बुद्धि बिनु द्वैत कि बिनु अज्ञान ।

मायावस<sup>५</sup>, परिच्छिन्न जड़ जीव कि ईस समान ॥१११॥

कवहुँ कि दुख सत्र कर हित ताके । तेहि कि दरिद्र परसमनि जाके ॥

परदोही की होहि निसंका । कामी पुनि कि रहहि अकलंका ॥

बंस कि रह द्विज अनहित कीन्हे । कर्म कि होहि स्वरूपहि चीन्हे ॥

काहु सुमति कि खल सँग जामो । सुम गति पाव कि पर त्रिय गामी ॥

भव कि परहि परमात्म<sup>४</sup> विंदक । सुखी कि होहि कवहुँ हरि निंदक ॥

राजु कि रहइ नीति बिनु जाने । अथ कि रहहि हरि चरित बखाने ॥

पावन जस कि पुन्य बिनु होई । बिनु अथ अजस कि पावइ कोई ॥

लाभु कि कछु हरि भगति समाना । जेहि गावहि श्रुति संत पुराना ॥

हानि कि जग येहि सम कछु भाई- । भजिअ न रामहि नर तनु पाई ॥

अथ की बिनु तामस कछु आना । धर्म कि दया सरिस हरिजाना ॥

येहि विधि अमित जुगुति मन गुनेऊँ । मुनि उपदेस न सादर सुनेऊँ ॥

पुनि पुनि सगुन पच्छ मैं रोपा । तब मुनि बोलेउ बचन सक्रोपा ॥

भूढ़ परम सिल. देउ न मानसि । उत्तर प्रतिउत्तर बहु आनसि ॥

१—[प्र० : कोप, हीए] । दि० : किए, हिए । [ (३) (४) : कोप, हीए ] । [तृ० : किएऊ, हिएऊ] । च० : दि० ।

२—प्र० : शानिन्ह । दि० : शानिहु [ (३) : शानिन्ह ] । [तृ० : शानी] । च० : दि० ।

३—प्र० : को होई । दि० : प्र० [ (३) कि होइ, (४) (५) का होइ ] । [तृ० : की होइ] । [च० : किमि होइ] ।

४—प्र० : परमात्मा । दि० : प्र० [ (२४) : परमारथ ] । तृ० : परमात्म । [च० : परमारथ] ।

५—प्र० : बिनु तामस । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : विमुक्ता सम] । तृ०, च० : प्र० ।

भगति पच्छ हठ करि रहेउँ दीन्ह मरारिणि मार ।

मुनि दुर्लभ वर पाएउँ देमहु भजन प्रताप ॥११४॥

जे असि भगति जानि परिहरही । देवल ज्ञान हेनु धन करही ॥

ते जेइ कामधेनु गृह त्यागी । सोऊन आहु फिरहि पप लागी ॥

मुनु स्वगेस हरि भगति चिहाई । जे मुन चाहहि आन उपाई ॥

ते सठ महासिधु विनु तरनी । पैरि पार चारहि जइ करनी ॥

मुनि भुसुडि के वचन भगानो । बोलेउ गरुड हरणि मृदु रानी ॥

तव प्रसाद प्रभु मम उर माही । संसय सोऊ मोह भ्रम नाही ॥

सुनेउँ पुनीत राम गुन प्रामा । तुम्हरी कृपा लहेउ बिसामा ॥

एक बात प्रभु पूछौं तोही । कहहु बुझाइ कृपानिधि मोही ॥

कहहि सत मुनि वेद पुराना । नहि कछु दुर्लभ ज्ञान समाना ॥

सोइ१ मुनि तुम्ह सन कहेउ गोसाई । नहि आदरेहु भगति की नाई ॥

ज्ञानहि भगतिहि अतरु फेता । सफल कहहु प्रभु कृपानिकेना ॥

मुनि उरगारि वचन सुख माना । सादर बोलेउ काग सुजाना ॥

भगतिहि ज्ञानहि नहि कछु भेदा । उभय हरहि भव सभव खेदा ॥

नाथ मुनीस कहहि कछु अतर । सावधान सोउ सुनु मिहगर ॥

ज्ञान विराग जोग विज्ञाना । ये सब पुरुष सुनहु हरिजाना ॥

पुरुष प्रताप प्रबल सब भौंती । अबला अबल सहज जइ जाती ॥

दो०—पुरुष त्यागि सक नारिहि जो विरक्त भति धीर ।

न तु कामी विषयावस२ विमुख जो पद रघुवीर ॥

सो० सोउ मुनि ज्ञान निधान मृगनयनी विधु मुख निरखि ।

बिकल३ होहि हरिजान नारि बिस्व माया प्रगट ॥११५॥

इहों न पक्षपात कछु राखौ । वेद पुरान सत मत भाखौ ॥

१—प्र० : सोई । दि० : प्र० । [ त० : सो ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : विषयावस । दि० : प्र० । [ त० : विषयाविस ] । [ च० : जो विषयवस ] ।

३—प्र० : दिवस । दि० : प्र० । त० : बिकल । च० : त० ।

दो०—सदा राम प्रिय होहु तुम्ह सुभ गुन भवन अमान ।

कामरूप इच्छामरन ज्ञान विराग निधान ॥

जेहि<sup>१</sup> आश्रम तुम्ह बसव<sup>२</sup> पुनि सुमिरत स्त्री भगवंत ।

व्यापिहि तहँ न अविद्या जोजन एक प्रजंत ॥११३॥

काल करम गुन दोष सुभाऊ । कछु दुख तुम्हहि न व्यापिहिकाऊ ॥

रामरहस्य ललित बिचि नाना । गुप्त प्रगट इतिहास पुराना ॥

बिनु स्तम तुम्ह जानव सब सोऊ । नित नव नेह राम पद होऊ ॥

जो इच्छा करिहुहु मन माहीं । प्रभु<sup>३</sup> प्रसाद कछु दुरलभ नाहीं ॥

१. सुनि मुनि आसिष सुनु मतिधीरा । ब्रह्मगिरा भइ गगन गँभीरा ॥

एवमस्तु तव बच मुनि ज्ञानी । यह मम भगत कर्म मन बानी ॥

सुनि नम गिरा हरष मोहि भएऊ । प्रेम मगन सब संसय गएऊ ॥

करि विनती मुनि आयेसु पाई । पद सरोज पुनि पुनि सिरु नाई ॥

हरष सहित येहि आस्तम आएउँ । प्रभु प्रसाद दुरलभ वर पाएउँ ॥

इहाँ बसत मोहि सुनु खगईसा । बीते कलप सात अरु बीसा ॥

करौं सदा रघुपति गुन गाना । सादर सुनहिं बिहंग सुजाना ॥

जय जब अवधपुरी रघुबीरा । धरहिं भगत हित मनुज सरीरा ॥

२. तव तव जाइ रामपुर रहऊँ । सिसु लीला बिलोकि सुख लहऊँ ॥

पुनि उर राखि राम सिसुरूपा । निज आस्तम आवौं खगभूषा ॥

कया सकल मैं तुम्हहिं सुनाई । काग देह जेहि<sup>३</sup> कारन पाई ॥

कहेउँ तात सब प्रसन्न तुम्हारी । राम भगति महिमा अति भारी ॥

दो०—ता तैं येह तन मोहिं प्रिय भएउ राम पद नेह ।

निज प्रभु दरसन पाएउँ गएउ सकल संदेह ॥

१—प्र० : जेहि । दि० : प्र० । [ तु० : जो ] । च० : प्र० ।

२—प्र० : बसव । दि० : प्र० । [ तु०, च० : बसहु ] ।

३—प्र० : हरि । दि० : प्र० । तु० : प्रभु । च० : तू ।

तेइ तृन हरित चरइ अब गाई । भाव बच्छ सिगु पाइ पेन्हारै ॥  
 नोइ निवृत्ति पात्र विस्वाभा । निर्मल मन अहीर नित्र दासा ॥  
 परम धर्ममय पय दुहि भाई । अवटइ अनल अराम बनाई ॥  
 तोष मरुन तत्र छमा जुड़ावै । धृति सम जावनु देइ जमावै ॥  
 मुद्रिता मथइ विचार गथानी । दम आधार रजु सरय मुचानी ॥  
 तव मथि काढि लेइ नवनीता । विमल विराम सुभग सुपुनोता ॥  
 दो०—जोग अग्नि करि प्रगट तव कर्म सुभासुभ लाइ ।

बुद्धि सिरायइ ज्ञान घृत ममता मम जरि जाइ ॥  
 तत्र विज्ञानरूपिनी<sup>१</sup> बुद्धि विमद घृत पाइ ।  
 चित दिशा भरि धरइ दृढ़ समता दिअटि बनाइ ॥  
 तीनि अवस्था तीनि गुन तेहि कपास ते काढ़ि ।  
 तूल तुरीय सँवारि पुनि बाती करइ सुगाढ़ि ॥  
 सो०—येहि विधि लेसइ दीप तेजरासि विज्ञानमय ।

जातहिं तासु<sup>२</sup> समीप जरहिं मदादिक सलभ सब ॥११७॥  
 सोहमस्मि इति वृत्ति अखडा । दीप सिखा सोइ परम प्रचडा ॥  
 आतम अनुभव सुख सुप्रकासा । तब भव मूल भेद भ्रम नासा ॥  
 प्रबल अविद्या कर परिवारा । मोह आदि तम मिटइ अपारा ॥  
 तब सोइ बुद्धि पाइ उजियारा<sup>३</sup> । उर गृह बैठि ग्रंथि निरुआरा<sup>४</sup> ॥  
 छोरन ग्रंथि पाव जौ सोई । तौ यह जीव कृतारथ होई ॥  
 छारत ग्रंथि जानि खगराया । विघ्न अनेक करइ तब भाया ॥  
 रिद्धि सिद्धि प्रेरइ बहु भाई । बुद्धिहि लोभ दिखावहि आई ॥  
 कल बल छल करि जाहि<sup>५</sup> समीपा । अचल बात बुझावहिं दीपा ॥

१—प्र० : रूपिनी । द्वि० : प्र० । [ तृ० : निरूपिनी ] । [ च० : निरूपन ]

२—प्र० : तासु । द्वि० : प्र० [ (३) (४) (५) : जासु ] : तृ० : प्र० । [ च० : जासु ] ।

३—प्र० : उजियारा, निखारा । द्वि० : प्र० । [ तृ०, च० : उजियारी, निखारी ] ।

४—प्र० : जाई । द्वि० : प्र० [ (४) (५) : जाइ ] । [ तृ० : जाइ ] । च० : प्र० ।

मोह न नारि नारि के रूपा । पत्रगारि यह रीति<sup>१</sup> अनूपा ॥  
 माया भगति सुनहु तुम्ह दोऊ । नारि वर्ग जानै सब कोऊ ॥  
 पुनि रघुवीरहि भगति पियारी । माया खलु नर्तकी विचारी ॥  
 भगतिहि सानुकूल रघुनाथ । ता तें तेहि ढरपति अति माया ॥  
 राम भगति निरुपम निरुपाधी । बसइ जासु उर सदा अवाधी ॥  
 तेहि बिलोकि माया सकुचाई । करि न सकइ कलु निज प्रभुताई ॥  
 अस विचारि जे मुनि विज्ञानी । जाचहि भगति सकल सुख खानी ॥

दो०—यह रहस्य रघुनाथ कर बेगि न जानइ कोइ ।

जाने तेरे रघुपति कृपा सपनेहुँ मोह न होइ ॥

औरौ भ्यान भगति कर भेद सुनहु सुप्रवीन<sup>२</sup> ।

जो सुनि होइ राम पद प्रीति सदा अविद्यीन<sup>४</sup> ॥११६॥

सुनहु तात यह अकथ कहानी । समुझत बनइ न जाइ<sup>५</sup> बखानी ॥  
 ईश्वर अस जीव अविनासी । चेतन अमल सहज सुखरासी ॥  
 सो माया बस भणउ गोसाईं । दूँध्यो कीर मर्कट की नाईं ॥  
 जड चेतनहि ग्रंथि परि गई । जदपि मृषा छूटत कठिनई ॥  
 तब ते जीव भणउ संसारी । छूट न ग्रंथि न होइ सुखारी ॥  
 श्रुति पुरान बहु कहेउ उपाई । छूट न अधिक अधिक अरुम्ताई ॥  
 जीव हृदय तम मोह बिलेपी । ग्रंथि छूटि किमि परइ न देखी ॥  
 अस संयोग ईस जव करई । तबहु कदाचित सो निरुधरई ॥  
 सारिवक सदा धेनु सुहाई । जौ हरि कृपा हृदय बस आई ॥  
 जय तप व्रत जम नियम अपारा । जे श्रुति कह सुभु धर्म अचारा ॥

१—प्र० : रीति । दि० : प्र० । [ व०, च० : रीति ] ।

२—प्र० : जो जानै । दि० : प्र० । व० : जाने वे । च० : व० ।

३—प्र० : सुप्रवीन । दि० : प्र० । [ व० : परवीन ] । [ च० : सो प्रवीन ] ।

४—प्र० : अविद्यीन । दि० : प्र० । [ (५५) : अवद्यीन ] । [ व०, च० : अवद्यीन ]

५—प्र० : जाइ । दि० : प्र० । [ व०, च० : जात ] ।



पर सपदा बिनासि नसाहीं । जिमिससि हतिहिम उपल बिलाहीं ॥  
 दुष्ट उदय १ जग आरतिरे हेतू । जथा प्रसिद्ध अधम ग्रह केतू ॥  
 सत उदय सतत सुखकारी । बिस्व सुखद जिमि इदु तमारी ॥  
 परम धरम श्रुति विदित अहिंसा । पर निदा सम अध न गिरीसा ॥  
 हरि गुरु निदक दादुर होई । जनम सहस पाव तन सोई ॥  
 द्विज निदक बहु नरक भोग करि । जग जनमइ वायस सरीर धरि ॥  
 सुर श्रुति निंदक जे अभिमानी । रौरव नरक परहि ते प्रानी ॥  
 होहि उलूक सत निंदा रत । मोह निंसा प्रिय ज्ञान भानु गत ॥  
 सब कै निंदा जे जड़ करहीं । ते चमगादुर होइ अवतरहीं ॥  
 सुनहु तात अव मानस रोगा । जिन्ह तें दुख पावहिं सब लोगा ॥  
 मोह सकल व्याधिन्ह कर मूला । तिन्ह तें पुनि उपजहिं बहु सूला ॥  
 काम बात कफ लोभ अपारा । क्रोध पित्त नित धाती जारा ॥  
 प्रीति काहिं जौ तीनिउ भाई । उपजइ सन्यपात दुखदाई ॥  
 विषय मनोरथ दुर्गम नाना । ते सब सूल नाम को जाना ॥  
 ममता दादु कहु इरपाई । हरष विषाद गरह बहुताई ॥  
 पर सुख देखि जरनि सोइ छई । कुष्ट दुष्टता मन कुटिलई ॥  
 अहंकार अति दुखद डमरुआ ४ । दम कष्ट मद मान नहरुआ ॥  
 तृष्णा उदरवृद्धि अति भारी । त्रिविधि ईपना तरुन तिजारी ॥  
 जुग विधि उबर मत्सर अविवेका । कहँ लगि कहीं कुरोग अनेका ॥  
 दो०—एक व्याधि बस नर मरहिं ये असाधि बहु व्याधि ।

पीढ़हि सतत जीव कहँ सो किमि लहइ समाधि ॥



१—प्र० : उ०, य० । दि० : प्र० [ (४) ॥ इद० ] । १०, च० : प्र० ।

२—प्र० : आ० । दि० : प्र० [ (५) ] : धन० ] । [ ग० : अन० ] । { १० : आ० ] ।

३—प्र० : १० । दि० : प्र० । [ ग० : गते ] । [ च० : जेहि ] ।

४—प्र० : द० । दि० : प्र० । [ १०, च० : द० ] ।

होइ बुद्धि जो परम सयानी । तिन्हतनुचितवनअनहितजानी १ ॥  
 जौ तेहि विघन बुद्धि नहि बाधी । तौ बहोरि सुर करहि उपाधी ॥  
 इंद्रि द्वार झरोखा नाना । तहँ तहँ सुर बैठे करि थाना ॥  
 आवत देखहि विषय बग्यारी । ते हठि देहि कषाट उधारी ॥  
 जब सो प्रभंजन उर गृह जाई । तबहि दीप विज्ञान बुझाई ॥  
 प्रंधि न छूटि मिय सो प्रकासा । बुद्धि विकल भइ २ विषय बतासा ॥  
 इंद्रिन्ह सुरन्ह न ज्ञान सोहाई । विषय भोग पर प्रीति सदाई ॥  
 विषय समीर बुद्धि कृत भोरी । तेहि विधि दीप को बार बहोरी ॥  
 दो०—तव फिरि जीव विविध विधि पावइ संसृति बलैस ।

हरिमाया अति दुस्तर तरि न जाइ बिहँगेस ॥

कहत कठिन समुझत कठिन साधत कठिन विवेक ।

होइ घुनाच्छर न्याय जौ पुनि प्रसूह अनेक ॥ ११८ ॥  
 ज्ञानपंथ ३ कृपान कै धारा । परत खगेस होइ नहि धारा ॥  
 जौ निर्विघ्न पथ निर्यहई । सो कैवल्य परमपद लहई ॥  
 अति दुर्लभ कैवल्य परम पद । संत पुरान निगम आगम बद ॥  
 राम गजत ४ सोइ मुकुति गुंसाई । 'अनइच्छित आवइ यरिआई' ॥  
 जिमि थल बिनु जल रहि न सकाई । कोटि भौंति कोउ करइ उपाई ॥  
 तथा मोक्ष सुख सुनु खगराई । रहि न सकइ हरि भगति बिहाई ॥  
 अस विचारि हरि भगत सयाने । मुकुति निरादर भगति लुभाने ॥  
 भगति करत बिनु जतन प्रयासा । संसृति मूल अविद्या नासा ॥  
 भोजन करिअ रुसि हित लागी । जिमि सो असन पचइ ५ जठरागी ॥

१—प्र० : भयी । [ दि० : भय ] । प्र० : भइ । [ च० : ना ] ।

२—प्र० : साधन । दि० : प्र० [ (३) (४) (५) : साधन ] । [ वृ०, च० : साधन ] ।

३—प्र० : ज्ञानपथ । दि० : प्र० । [ वृ० : ज्ञानपथ ] । च० : प्र० ।

४—प्र० : भजत । दि० : प्र० [ (२) : भजन ] । [ वृ० : भगति ] । च० : प्र० ।

५—[ प्र० : पचई ] । दि० : पचइ । [ वृ०, च० : पचवै ] ।

गिरिजा सत समागम सम न नान कहु मान ।

बिनु हरि हृषा न होइ सो गारहि बेर गुमान ॥१२५॥

५हेउं पास पुनीन र्हाइस । मुनि सान गूढि भगमा ॥

प्रात कटवतठ करु ॥ पुं ॥ । उगइ नीति राम पर कमा ॥

मन क्रम अचन अनिन अप आई । गुहं जे कथा सन मन लाई ॥

लीधाइन साधन समुदाई । जोग बिगाग ध्यान निपुनाई ॥

नाना धर्म धर्म अत दाना । संजन दम जा तप मन नाना ॥

गूढ क्या द्विज गुर सेवदाई । विद्या विनय बिषेक बढ़ाई ॥

जहँ लागि साधन वेद ब्रह्मानी । सब कर फल हरि भगति भगानी ॥

सो रघुनाथ भगति ध्रुति गारि । राम हृषा काह एक पाई ॥

दो०—मुनि दुर्लभ हरि भगति नर पायहि चिन्हि प्रयास ।

जे यह कथा निरंतर सुनहि आनि बिस्वास ॥१२६॥

सोइ सर्वज्ञ गुनी सोई ज्ञाना । सोइ भहि मदन पंडित दाता ॥

धर्म परायन सोइ कुचाता । राम चरन जातर मन राता ॥

नीति निपुन सोइ परम सयाना । श्रुति सिद्धांत नीक तेहि जाना ॥

सोइ२ कनि कोविद सोइ२ रनधीरा । जो छल छाँड़ भजइ रघुवीरा ॥

धन्य सो देस जहाँ२ सुरसरी । धन्य नारि पतिव्रत अनुसारी ॥

धन्य सो भूप नीति जो करई । धन्य सो द्विज निज धर्म न टरई ॥

सो धन धन्य प्रथम गति जाही । धन्य पुन्य रत मति सोइ पाही ॥

धन्य घरी सोइ जब सतसगा । धन्य जन्म द्विज भगति अभगा ॥

दो०—सो कुल धन्य उमा सुनु जगत पूज्य सुपुनीत ।

श्री रघुवीर परायन जोहि नर उपज चिनीत ॥१२७॥

१—प्र० : मदन । [ दि०, वृ० : मदन ] । [ च० : मंडल ] ।

२—प्र० : सोइ, सोइ । [ दि०, वृ० : सो, सो ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : देस सो जहाँ । दि० : प्र० [ (५३) ] । सो देस जहाँ । वृ०, च० : सो देस जहाँ ।

नेम धर्म आचार तप जोग<sup>१</sup> जज्ञ जप दान ।

भेषज पुनि कोटिन्ह<sup>२</sup> नहीं रोग जाहि हरिजान ॥१२१॥

येहि विधि सरल जीव जग रोगी । सोक हरप भय प्रीति वियोगी ॥

मानम रोग कछुक मैं गाए<sup>३</sup> । हहि<sup>४</sup> सब के लखि बिरलेन्हि पाए ॥

जाने तैं छीजहि कछु पापी । नास न पावहि जन परितापी ॥

विषय कुपथ्य<sup>५</sup> पाइ अंकुरे । मुनिहु हृदयैं का नर थापुरे ॥

राम कृपा नासहि सब रोगा । जौं इहि भौंति बनइ संजोगा ॥

सदगुर वैद वचन बिस्वासा । संजम यह न विषय कै आसा ॥

रघुपति भगति सजीवनि मूरी । अनूपान धृद्धा मति पूरी<sup>६</sup> ॥

येहि विधि भलेहि कुरोग<sup>६</sup> नसाहीं । नाहि त जतन कोटि नहि जाहीं ॥

जानिय तब मन विरज गोसाईं । जय उर बल विराग अधिकारी ॥

सुमति छुधा बाढ़इ नित नई । विषय आस दुर्बलता गई ॥

बिमल ज्ञान जल जब सो नहाई । तब रह राम भगति उर छाई ॥

सिध अज सुक सनकादिक नारद । जे मुनि ब्रह्म बिचार बिसारद ॥

सब कर मत खगनायक येहा । करिय राम पद पंकज नेहा ॥

श्रुति पुरान सब ग्रंथ कहाहीं । रघुपति भगति बिना सुख नाही ॥

कमठ पीठि जामहि बरु वारा । बंध्यासुत बरु काहुहि मारा ॥

फूलहि नभ बरु बहु विधि फूला । जीव न लह सुख हरि प्रतिकूला ॥

तृषा जाइ बरु मृगजल पाना । बरु जामहि सस सोस विषाना ॥

अंधकार बरु रविहि नसावै । राम विमुख न जीव सुख पावै ॥

हिम तैं अनल प्रगट बरु होई । विमुख राम सुख पाव न कोई ॥

१—प्र० : ज्ञान । दि० : प्र० । ज० : जोग । च० : त० ।

२—प्र० : कोटिन्ह । दि० : प्र० । [ त० : कोटिन्ह ] । च० : प्र० ।

३—प्र० : गाए, पाए । दि० : प्र० । [ त० : गाई, पाई ] । [ च० : गावा, पावा ] ।

४—प्र० : हहि । दि० : प्र० । [ त०, च० : है ] ।

५—प्र० : मति पूरी । दि० : प्र० । [ त०, च० : अनि पूरी ] ।

६—प्र० : भलेहि रोग । दि० : प्र० । [ (अ) : भलेहि कुरोग ] । त० : भलेहि रोग । च० : त० ।

यह सुभ संभु उमा संवादा । सुख संवादन समन चित्त ॥  
 भव भंजन गंजन सदेहा । जन रंजन सज्जन भिम देहा ॥  
 राम उपासक जे जग माही । नेहि सम भिय तिन्हकें बहु नोही ॥  
 रघुपति कृपा जयाननि गाग । ने यह पावन चरित मुहावा ॥  
 येहि कलिघाल न साधन नृप । जोग नृप जग तः न नृप ॥  
 रामहि मुनिरिथ गाइथ रामहि । संतन मुनिअ राम मुन भामहि ॥  
 जामु पतितपावन बडू बाना । गावहि द्रवि धुति सं । पुगना ॥  
 ताहि भजिअ मन तजि कुटिलाई । राम भजे गति केहि नहि पाई ॥

छं०—पाई न केहि गति पतितपावन राम भजि मुनु सठ मना ।

गनिहा अजामिल व्याध गीध गज्जदि सल तारे पना ॥

आभीर जवन क्रिसत सस रघुनाति प्रति अधरूप जे ।

कहि नाम बारक तेऽपि पावन होहि राम नमामि ते ॥

रघुवंसमूपन चरित येह नर कहहि मुनिहि जे गावही ।

कलिमल मनोमल भोइ बिनु सम रामभाम सिधावही ॥

सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरे ।

दारुन अविद्या पंच जनित बिद्वार श्री रघुपतिर हरे ॥

सुंदर सुजान कृपनिघान अनाथ पर कर प्रीति जो ।

सो एक राम अकाम हित निर्वाणप्रद सम आन को ॥

जाकी कृपा लव लेव ते गतिमंद तुलसीदास हैं ।

पापउ परम विस्वामु राम समान प्रभु नाहीं कहैं ॥

दो०—मो सम दीन न दीनहित तुम्ह समान रघुबीर ।

अस विचारि रघुवंसमनि हरहु बिषम भवभीर ॥

कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम ।

तिमि रघुनाथ निरंतर भिय लागहु मोहि राम ॥ १३० ॥

मति अनुरूप कथा मै भापी । जद्यपि प्रथम गुप्त करि राखी ॥  
 तब मन प्रीति देखि अधिमाई । नौ मै रघुपति कथा सुनाई ॥  
 यह न कहिय सठही हठसीलहि । जो मन लाइन सुन हरि लीलहि ॥  
 रहिय न लोभिहि क्रोधिहि माभिहि । जो न भजइ सचराचर स्नामिहि ॥  
 द्विजद्रोहिहि न सुनाइय नरह । सुगपनि सरिस हाई नृप जनह ॥  
 राम कथा के तेइ<sup>१</sup> अधिकारी । जिन्ह के सतसगति अति प्यारी ॥  
 गुर पद प्रीति नोति रत जेई । द्विन सेनक, अधिकारी तेई ॥  
 ता कहु यह निमेषि सुखराई । जाहि प्रान प्रिय श्री रघुराई ॥  
 दो०—राम चरन रति जौ चहे<sup>२</sup> अथवा पद निर्गन ।

भाव सहित सो येहि कथा करी<sup>३</sup> सवन पुट पान ॥१२८॥

राम कथा गिरिजा मै बरनी । कलिमल समनि<sup>४</sup> मनोमल हरनी ॥  
 ससृति रोग सजीवन मूरो । राम कथा गावहि श्रुति सूरी ॥  
 येहि महे रहचिर सप्त सोपाना । रघुपति, भगति केर पथाना<sup>५</sup> ॥८॥  
 अति हरि कृपा जाहि पर होई । पाउँ देहि येहि मारग सोई ॥  
 मनकामना सिद्धि नर पावा<sup>६</sup> । जे येह कथा कपट तजि गावा<sup>६</sup> ॥  
 कहहि सुनहि अनुमोदन करहीं । ते गोपद इव भवनिधि तरहीं ॥  
 सुनि सब कथा हृदय अति भाई । गिरजा बोली गिरा सुहाई ॥  
 नाथकृपा मम गत सदेहा । राम चरन उज्जेउ नन नेहा ॥

दो०—मै कृतकृत्य भइउँ अत्र तब प्रसाद विस्वेष ।

उपजी राम भगति दृढ़ बीते सकल म्लेस<sup>७</sup> ॥१२९॥

१—प्र० : तेइ । द्वि० : प्र० [ (३) : ते ] । [ तु० : ते ] । [ च० : तुम्ह ] ।

२—प्र० : चह । द्वि० : प्र० [ (५) : चहै ] । तु० : चहै । च० : तु० ।

३—प्र० : नरो । द्वि० : प्र० । तु० : नरै । च० : न० ।

४—प्र० : समनि । द्वि० : प्र० । [ तु० : समन ] । च० : प्र० ।

५—प्र० : पथाना । द्वि० : प्र० । [ तु०, च० : पथाना ] ।

६—प्र० : पावा, गाव । द्वि० : प्र० । [ तु०, च० : पावे, गावे ] ।



श्लो० — यत्पूर्वं प्रमुखा कृतं मुक्ताविना श्रीशम्भुना दुर्गमं ।  
 श्रीमद्रामपदाब्जभक्तिमनिशं प्राप्स्ये तु रामायणं ॥  
 मत्वा तद्रघुनाथनामनिरतं स्वान्तस्तमःशान्तये ।  
 भाषावद्धमिदं चकार तुलसीदासस्तथा मानसं ॥  
 पुण्य पापहर सदा शिवकरं विज्ञानभक्तिप्रदं ।  
 गायामोहभवापहं<sup>१</sup> सुविमलं प्रेमाञ्जुपूरं शुभम् ॥  
 श्रीमद्रामचरित्रमानसमिदं भक्तयावगाहन्ति ये ।  
 ते संसारपतङ्गघोरकिरणैर्दहन्ति नो मानवाः ॥

इति श्रीरामचरितमानसे सकलकलिकल्पविध्वंसने अविरल हरि-  
 भक्तिसम्पादनो नाम सप्तमः सोपानः समाप्तः ।

—











